मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट
2004-05

भारतीय रिज़र्व बैंक

“इस रिपोर्ट में व्यक्त परिणाम, विचार तथा निष्कर्ष पूर्णतया आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग में योगदान देने वाले स्टाफ के हैं और यह ज़रूरी नहीं कि ये भारतीय रिज़र्व बैंक के अपने विचार हों।”

भारत में	-	200 रुपए (सामान्य)
	-	225 रुपए (डाक व्यय सहित)
	-	150 रुपए (रियायती)
विदेश में	-	25 अमरीकी डॉलर (एयरमेल कुरियर प्रभार सहित)

© भारतीय रिज़र्व बैंक 2005
सर्वाधिकार सुरक्षित। सामग्री के पुन:प्रयोग की अनुमति है, बशर्ते कि स्रोत का उल्लेख किया जाए।

आएसएसएन 0972-8759

श्रीमती गुणजीत कौर द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक, मुंबई - 400 001 के लिए प्रकाशित और उनके द्वारा एल्को कोर्पोरेशन, ए/2, 72, शाह एण्ड नाहर इंडस्ट्रियल इस्टेट, लोअर परेल, मुंबई - 400 013 में डिज़ाइन की गई और मुद्रित.

प्राक्कथन

रिज़र्व बैंक ने 2005 में अपने अस्तित्व के उल्लेखनीय सत्तर वर्ष पूरे किए। यह विकासशील देशों के कुछ सबसे पुराने केंद्रीय बैंकों में से एक है। इस अच्छी खासी लंबी अवधि में बैंक ने आकार और विविधता के दृष्टिकोण से बहुत विकास किया है और अपने संगठन तथा प्रबंध की कायापलट भी करता रहा है। इसी पृष्ठभूमि में, मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट, 2004-05 की थीम 'भारत में केंद्रीय बैंकिंग का विकास' रखना उचित समझा गया है। संयोगवश मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट का यह खंड उसी समय विमोचित किया जा रहा है जब कि 1967-1981 की अवधि से संबंधित भारतीय रिज़र्व बैंक के इतिहास के तीसरे खंड का विमोचन हो रहा है।

थीम आधारित रिपोर्ट प्रकाशित करने की वर्ष 1998-99 में की गई शुरुआत से लेकर अब तक आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग ने भारत से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण समकालीन मुद्दों को समाहित करते हुए छह रिपोर्टें जारी की हैं। तथापि, वर्तमान रिपोर्ट पिछली अन्य रिपोर्टों से इस मायने में अनोखी है कि इसमें विश्वभर में हुए केंद्रीय बैंकिंग के विकास के संदर्भ में पिछले सत्तर वर्ष से अधिक समय में रिज़र्व बैंक के विकास को विश्लेषित करते हुए प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यद्यपि सत्तर वर्ष से अधिक समय के रिज़र्व बैंक के विकास की अवधारणा को इस प्रकार के वार्षिक प्रकाशन में भली भांति विश्लेषित करना संभव नहीं है, फिर भी, रिजर्व बैंक के विस्तृत कार्य क्षेत्र के बहु आयामी फलक को समेटने का गंभीर प्रयास किया गया है।

उनकी संबंधित वित्तीय प्रणालियों तथा आर्थिक विकास के चरणों के विकास के साथ-साथ केंद्रीय बैंकों के कार्यों की उल्लेखनीय रूप से कायापलट हो गई है। केंद्रीय बैंकों ने विशेषज्ञता के भंडार के रूप में सेवा की है जिसका लाभ सामान्यतः सरकारों और संस्थाओं द्वारा, घरेलू और अंतरराष्ट्रीय दोनों क्षेत्रों में, लिया गया है। समझा जाता है कि सभी देशों में केंद्रीय बैंक का सदैव केंद्रीभूत स्थान रहा है। बदलते माहौल की पृष्ठभूमि में रिज़र्व बैंक भी 1935 में अपनी शुरुआत से ही मौद्रिक और वित्तीय नीतियां बनाने के साथ-साथ लगातार अपनी कायापलट करता रहा है। रिज़र्व बैंक के कार्य उसे सौंपे गए विविध प्रकार की भूमिकाओं का परिणाम हैं। इस संदर्भ में, इस रिपोर्ट में जिन प्रमुख कार्यों की जांच पड़ताल की गई है वे हैं- विनियमन और पर्यवेक्षण, वित्तीय बाज़ारों का विकास, मुद्रा संबंधी और राजकोषीय विचार विमर्श और तुलन पत्र के आयाम। पिछले साल की मुद्रा और वित्त की रिपोर्ट की थीम मौद्रिक नीति का विकास थी इसलिए इस रिपोर्ट में उस बारे में विस्तार पूर्व चर्चा नहीं की गई है।

भारतीय रिज़र्व बैंक के परिचालनों में, घरेलू ज़रूरतों और अनिवार्यताओं के अनुसार परिवर्तनशील रहने के लिए बहुत लचीलापन है और साथ ही अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम व्यवहारों के साथ उपयुक्त ढंग से तालमेल रखने हेतु विनियमन और पर्यवेक्षण में संशोधन के प्रयास किए जाते रहे। रिज़र्व बैंक विकासशील सुदृढ़ वित्तीय बाज़ारों और वित्तीय इन्फ्रास्ट्रक्चर की दिशा के अनुरूप अपनी परिचालन प्रक्रियाओं और लिखतों में निरंतर रूप से परिष्कार लाने के लिए प्रयासरत रहा है। रिज़र्व बैंक ने सरकारी प्रतिभूति बाज़ार और सरकार द्वारा ली गई उधार राशियों के प्रबंध में वर्षों से तकनीकी विशेषज्ञता अर्जित कर ली है। इससे इसे सरकार की उधार लेने की अपेक्षाओं और बाज़ार प्रत्याशा की पूर्ति के साथ-साथ ऋण और मुद्रा प्रबंध की दोहरी जिम्मेदारी दक्षतापूर्वक निभाने की क्षमता हासिल हुई है। भारतीय अर्थव्यवस्था की कायापलट के साथ ही रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र में पिछले सात दशकों में बुनियादी बदलाव आया है। हाल के वर्षों में, विदेशी आस्तियों का तुलनात्मक महत्व बढ़ गया है और घरेलू आस्तियों का महत्व घट गया है। बासेल बासल

रिपोर्ट में रिज़र्व बैंक के अस्तित्व में आने के बाद से अब तक सत्तर वर्ष में इसके संगठनात्मक और प्रबंधकीय विकास तथा बैंक की बदलती भूमिका और कार्यों की व्याख्या करने का भी प्रयास किया गया है।

रिपोर्ट का प्रारूप आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग के नरेंद्र जाधव, प्रधान परामर्शदाता और मुख्य अर्थशास्त्री के समग्र मार्गदर्शन में विभाग के कोर दल द्वारा तैयार किया गया। कोर दल में के. उदय भास्कर राव, बलबीर कौर, एस. एम. पिलै, आशा कन्नन, गुणजीत कौर, निशिता राजे और डी. बोस शामिल थे। रिपोर्ट का प्रारूप लिखने में ए. करुणागरन, जे. के. मलिक, सिद्धार्थ सान्याल, रमेश गोलैत, एल. लक्ष्मणन, दीपा राज, इंद्रनील भट्टाचार्य, एस. सूरज, एस. एम. लोके, स्नेहल हेरवाडकर, संगीता मिश्रा, सत्यानंद साहू, अमरनाथ यादव, जय चंदर, राजीव जैन, राज राजेश, ए. के. शुक्ला, पंकज कुमार, पी. के. भोइटे और एस. के. टकले द्वारा व्यापक रूप से सहायता की गई।

रिपोर्ट लिखने के दौरान विभिन्न चरणों में संबंधित जानकारी देने में विभाग के अंदर एम. आर. नायर, आर. के. पट्टनायक, जनक राज, चरण सिंह, पार्थ रे और सुनंदो रॉय एवं विभाग के बाहर, मानव संसाधन विकास विभाग के संदीप घोष और बाज़िल शेख; बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग के के. जी. गोपालकृष्ण, के. वी. सुब्बा राव, अमरेंद्र मोहन और पी. रविमोहन ने मूल्यवान एवं उल्लेखनीय योगदान दिया।

परिचालन संबंधी विभागों, नामतः, मानव संसाधन विकास विभाग, बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग, बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग, सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, विधि विभाग और सरकारी और बैंक लेखा विभाग योगदान के लिए प्रशंसा योग्य हैं। आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग का लगभग प्रत्येक अधिकारी रिपोर्ट के दूसरे अध्याय - 'नवीनतम आर्थिक गतिविधियां' को तैयार करने के काम से जुड़ा रहा।

कोर दल को श्री एस. एस. तारापोर, डॉ. ए. वासुदेवन और प्रो. दिलीप नाचाने के साथ चर्चा का भी लाभ मिला।

भारत में केंद्रीय बैंकिंग के विकास का पता लगाना कठिन काम रहा है। हमारा प्रयास रिज़र्व बैंक के अवधारणामूलक विकास की रूपरेखा प्रस्तुत करना रहा है क्योंकि देश की स्वतंत्रता और भारत में आर्थिक और वित्तीय विकास के विभिन्न चरणों में यह बदलता रहा है। इसके अस्तित्व के सत्तर वर्ष के दौरान के इसके कार्य की समीक्षा करना, एक विशेषता सदैव बरकरार रही है : वह है बदलती परिस्थितियों में भारतीय रिज़र्व बैंक के अनुभवों के अनुसरण में लगातार कायापलट करते रहना। अन्य केंद्रीय बैंकों में इधर कुछ वर्षों में बहुत भारी परिवर्तन हुए हैं। इस प्रकार, हम उम्मीद कर सकते हैं कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वित्तीय क्षेत्र में उल्लेखनीय रूप से होने वाली कायापलट के साथ, विशेष रूप से सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई क्रांति-प्रगति और अर्थव्यवस्थाओं के बढ़ते हुए खुलेपन के परिप्रेक्ष्य में, भविष्य में निरंतर परिवर्तन जारी रहेगा।

मैं इस अवसर पर रिज़र्व बैंक के अधिकारियों के प्रोफ़ेशनल कौशल और उनकी अत्यंत समर्पण की भावना की भूरि-भूरि प्रशंसा करता हूँ जिनके बिना इस रिपोर्ट को प्रकाशित करना संभव नहीं था।

राकेश मोहन

18 मार्च 2006 — उप गवर्नर

विषयवस्तु

पृष्ठ सं.

प्राक्कथन

I. रिपोर्ट का विषय .... 1 से 4

II. हाल की आर्थिक गतिविधियाँ .... 5 से 67

वास्तविक क्षेत्र 5

राजकोषीय स्थिति 17

मौद्रिक और ऋण स्थिति 26

वित्तीय बाजार 35

बाह्य क्षेत्र 55

निष्कर्ष 66

III. केंद्रीय बैंकिंग का कार्यात्मक विकास .... 68 से 94

केंद्रीय बैंकिंग का विकास 68

एक केंद्रीय बैंक के कार्य : 70

केंद्रीय बैंकिंग के समसामायिक विषय / मुद्दे 88

निष्कर्ष 93

IV. भारत में केंद्रीय बैंकिंग .... 95 से121

स्थापना का चरण (1935-1950) 96

विकास चरण (1951-1990) 100

सुधार का चरण (1991-2005) 106

सम सामयिक मुद्दे 117

निष्कर्ष 121

V. वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण .... 122 से 155

वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण की उत्पत्ति और विकास 123

भारत में बैंक विनियमन और पर्यवेक्षण का विकास 128

मौद्रिक नीति का संचालन तथा विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका के साथ उसकी संगति 142

उभरते मुद्दे 144

भारत में विनियमन और पर्यवेक्षण - एक आकलन 149

निष्कर्ष 155

(जारी)

		पृष्ठ सं.
VI.	**वित्तीय बाजार : विकास और वैश्वीकरण**	**156 से 189**
	वित्तीय बाजारों का विकास : भारतीय अनुभव	157
	उदारीकरण और वैश्वीकरण के संदर्भ में वित्तीय बाजारों में रिज़र्व बैंक की बदलती भूमिका	183
	निष्कर्ष	187
VII.	**मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों के पारस्परिक संबंध विषयक मामले**	**190 से 236**
	मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंध: विकास, सिद्धांत एवं विश्लेषणात्मक संरचना	191
	मौद्रिक एवं राजकोषीय परस्पर संबंध : विभिन्न देशों के अनुभव	195
	भारत में मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंधों का विकास	199
	सार्वजनिक ऋण प्रबंध का विकास	216
	राजकोषीय विधि निर्माण मुद्रा एवं ऋण प्रबंध (2003-2005)	221
	राजकोषीय उत्तरदायित्व और बजट प्रबंध अधिनियम (2005-09) एवं मुद्रा-राजकोष समन्वय	225
	मौद्रिक एवं राजकोषीय परस्पर संबंध : एक आकलन	230
	निष्कर्ष	232
VIII.	**रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र**	**237 से 270**
	केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र का विश्लेषण	237
	पार-देशों के अनुभव-शैलीगत तथ्य	242
	भारत में केंद्रीय बैंकिंग का विकास और रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र	248
	रिजर्व बैंक का लाभ हानि लेखा	258
	कुछ हाल के मुद्दे	261
	निष्कर्ष	266
	अनुबंध VIII.1 : लाभ वितरण से संबंधित चयनित देशों की प्रथाएं	268
	अनुबंध VIII.2 : सरकारी प्रतिभूतियों के चयनित केंद्रीय बैंकों के विदेशी मुद्रा नामित बांडस् के मूल्यांकन मापदंड	269
	अनुबंध VIII.3 : चयनित केंद्रीय बैंकों द्वारा अप्राप्त लाभों/हानियों का संसाधन	270
IX.	**संगठनात्मक विकास और कार्यनीतिपरक आयोजना**	**271 से 297**
	गठन और संचालन (1920 से 1940 का दशक)	271
	कार्यात्मक एवं संगठनात्मक विकास (1950 से 1970 का दशक)	275
	संरचनात्मक पुनर्गठन (1980 का दशक)	276

पृष्ठ सं.

हाल की घटनाएं (1990 के पश्चात) 279

मानव शक्ति प्रबंध 282

रणनीतिगत आयोजना 285

निष्कर्ष 289

परिशिष्ट 9.1 : भारतीय रिज़र्व बैंक का संगठनात्मक विकास 290

परिशिष्ट 9.2 : भारतीय रिज़र्व बैंक की रणनीति कार्य योजना (1993-2002) रिपोर्ट के मसौदे का सारांश 291

परिशिष्ट 9.3 : सुधारोत्तर काल में रिज़र्व बैंक के कार्य निष्पादन में गुणात्मक सुधार 294

परिशिष्ट 9.4 : रिज़र्व बैंक की तुलनपत्र कार्यात्मक संरचना 297

X. समापन टिप्पणियां .... 298 से 304

चुने गए संदर्भ .... I से XXIII

बॉक्स मदों की सूची

बॉक्स सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
II.1	मौद्रिक नीति पर रिज़र्व बैंक की तकनीकी सलाहकार समिति	42
IV.1	भारत में केंद्रीय बैंकिंग की उत्पत्ति का इतिहास	96
IV.2	विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999	109
IV.3	भारत में भुगतान और निपटान प्रणालियों का विकास	114
IV.4	भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) विधेयक, 2005	120
V.1	विनियमन के बारे में सोच का विकास	124
V.2	वित्तीय विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में केंद्रीय बैंकों की भूमिका की उत्पत्ति- वैश्विक इतिहास	125
V.3	भारत में वाणिज्यिक बैंकिंग का विकास	127
V.4	देश-देश में प्रथाएं : जोखिम आधारित पर्यवेक्षण	133
V.5	पर्यवेक्षी भूमिका तथा मौद्रिक नीति के बीच हितों का टकराव	143
V.6	समेकित लेखांकन तथा पर्यवेक्षण	146
V.7	ई-बैंकिंग विनियमन तथा पर्यवेक्षण - अंतरराष्ट्रीय अनुभव	148
VII.1	मौद्रिक आर राजकोषीय समन्वय के मुद्दे	193
VII.2	तदर्थ खजाना बिल	202
VII.3	सांविधिक चलनिधि अनुपात : उत्पत्ति और कार्य	205
VII.4	राजकोषीय अंतर की गणना - बजट घाटा, मौद्रीकृत घाटा और राजकोषीय घाटा	207
VII.5	स्वतः मौद्रीकरण से अर्थोपाय अग्रिम तक की यात्रा	212
VII.6	राजकोषीय जबाबदेही कानून बनाने की दिशा में प्रगति	222
VII.7	सकल राजकोषीय घाटा और केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को वित्तपोषण : भारतीय अनुभव	233
VIII.1	केंद्रीय बैंक स्टाक्स का बाज़ार निष्पादन	246
VIII.2	हिल्टन यंग कमीशन और रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र	248
VIII.3	अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक और केंद्रीय बैंक	262
VIII.4	भारत में स्वर्ण मूल्यांकन	263
VIII.5	केंद्रीय बैंकिंग में जोखिम प्रबंध	264
VIII.6	रिज़र्व बैंक द्वारा रखे गए रिज़र्व खाते	265
IX.1	भारतीय रिज़र्व बैंक में संचालन संरचना - वर्तमान व्यवस्थाएं	283

चार्ट की सूची

चार्ट सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
II.1	कारक लागत पर जीडीपी की वार्षिक वृद्धि दर	7
II.2	संस्थागत स्त्रोतों द्वारा बचत	9
II.3	संस्थागत स्त्रोतों द्वारा सकल पूंजी निर्माण	9
II.4	दक्षिण-पश्चिम मानसून-संचित वर्षा (जून से सितंबर)	10
II.5	आइआइपी की क्षेत्रीय वृद्धि	13
II.6	बुनियादी ढांचा उद्योगों की वृद्धि	15
II.7	राज्य सरकारों के बाजार उधारों पर भारित औसत ब्याज दर	25
II.8	राज्यों द्वारा डब्ल्यू एम ए और ओवर ड्राफ्ट का उपयोग (साप्ताहिक औसत)	25
II.9	राज्य सरकारों द्वारा मध्यवर्ती खज़ाना बिलों में निवेश (साप्ताहिक औसत)	26
II.10	खाद्येतर ऋण	30
II.11	अंतरराष्ट्रीय पण्य मूल्य	32
II.12	उपभोक्ता मूल्य मुद्रा स्फीति	32
II.13	वार्षिक थोक मूल्य मुद्रा स्फीति	33
II.14	खजाना बिलों की प्राथमिक आय में घट-बढ़ - 2005-06 (अप्रैल - फरवरी)	44
II.15	सरकारी प्रतिभूति आय वक्र	46
II.16	प्रमुख मुद्राओं की तुलना में रुपए में घट-बढ़	48
II.17	वायदा प्रीमियम में घट-बढ़	48
II.18	क्षेत्रीय स्टॉक संकेतकों की प्रवृत्ति	51
II.19	वैश्विक उत्पादन वृद्धि	55
II.20	विश्व व्यापार मात्रा तथा कीमतों में वृद्धि	56
II.21	अदृश्य अधिशेष	61
II.22	चालू खाता शेष	61
II.23	विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा निवल अंतर्वाह/बहिर्वाह	63
II.24	बकाया एन आर आइ जमाराशि	63
II.25	विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि	64
II.26	बाहरी ऋण की मुद्रा संरचना सितंबर 2005 के अंत की स्थिति	65
V.1	समग्र विनियमन सूचकांक	152
V.2	समग्र सूचकांक	153

(जारी)

चार्ट की सूची

चार्ट सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
VI.1	जमा प्रमाणपत्र	166
VI.2क	वाणिज्यिक पत्र	167
VI.2ख	जमा प्रमाणपत्र / मूल उधार दर का औसत बट्टा दर	167
VI.3क	खजाना बिलों का आय वक्र	172
VI.3ख	केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों का आय वक्र	172
VI.4	गिल्ट आय	173
VI.5	विदेशी मुद्रा बाजार में कुल कारोबार	178
VI.6	वायदा प्रीमियम में घटबढ़	178
VI.7	सांकेतिक प्रभावी विनिमय दर के मुकाबले भारतीय रुपए की घट-बढ़	179
VI.8	मांग दर, गिल्ट आय तथा वायदा प्रीमियम	180
VI.9	मांग दरों के लिए चलनिधि समायोजन सुविधा से पूर्व और बाद में अनौपचारिक मार्जिन	182
VII.1	केंद्र का दैनिक औसत नकदी शेष	223
VII.2	एलएएफ बनाम एसएसएस परिचालन	224
VII.3	राजकोषीय और बाह्य असंतुलन	231
VII.4	केंद्र और राज्य सरकार के राजस्व एवं राजकोषीय घाटे	231
VII.5	केंद्र तथा राज्य को संयुक्त ऋण	232
VII.6	केंद्र के जीएफडी को वित्तपोषण	232
VII.7	बैंकिंग क्षेत्र द्वारा राजकोषीय घाटे को संयुक्त रूप से वहन करना	234
VII.8	मौद्रीकृत घाटा और मौद्रिक समुच्चय	234
VII.9	केंद्र के सकल बाज़ार उधार में भारिबैंक का प्रारंभिक अभिदान	234
VII.10	रिज़र्व बैंक का खुला बाज़ार परिचालन	234
VII.11	केंद्र के प्राथमिक निर्गमों पर आय तथा परिपक्वता	235
VIII.1	निर्गम से बैंकिंग विभाग तुलन-पत्र का अनुपात	249
VIII.2	एन एफ ए - रिज़र्व मुद्रा अनुपात में गति	254
VIII.3	विदेशी मुद्रा आस्तियों (स्वर्ण सहित) का संयुक्त तुलन-पत्र	257
VIII.4	ब्याज व्यय	259
VIII.5	तुलन-पत्र आकार में अधिशेष (प्रावधानों को निकालकर) का प्रतिशत	260
VIII.6	दीर्घकालीन कोष : ऋण और अग्रिमों का बकाया शेष	261
VIII.7	कुल अधिशेष का वितरण	261

(जारी)

सारणियों की सूची

सारणी सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
2.1	वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद (आधार वर्ष : 1999-2000)	6
2.2	वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में विकास, 2005-06 : भारत के लिए पूर्वानुमान	7
2.3	सकल घरेलू उत्पाद की त्रैमासिक विकास दरें (1999-2000 कीमतों पर)	7
2.4	उत्पादन विकास : क्षेत्र-पार तुलना	8
2.5	सकल घरेलू बचत और निवेश	8
2.6	बचत-निवेश जमाशेष (आधार वर्ष : 1999-2000)	9
2.7	संचयी वर्षा	10
2.8	फसल-वार लक्ष्य / उपलब्धियाँ	11
2.9	मौसमवार कृषि संबंधी उत्पादन	11
2.10	खाद्य भंडार का प्रबंध	13
2.11	औद्योगिक उत्पादन का सूचकांक-मासिक वृद्धि	14
2.12	विनिर्माण उद्योगों का विकास (2-अंक स्तर वर्गीकरण)-अप्रैल-दिसंबर 2005	14
2.13	औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइ आइ पी) विकास के लिए क्षेत्रवार योगदान - प्रयोग-आधारित वर्गीकरण	15
2.14	औद्योगिक क्षेत्र का कार्यनिष्पादन-चयनात्मक संकेतक	17
2.15	केंद्र के घाटा संकेतक	18
2.16	केंद्र की प्राप्तियाँ	19
2.17	केंद्र की व्यय पद्धति	20
2.18	सकल राजकोषीय घाटे की वित्तपोषण पद्धति	20
2.19	राज्य सरकारों के प्रमुख घाटा संकेतक	22
2.20	राज्य सरकारों की व्यय पद्धति	22
2.21	राज्य सरकारों की कुल प्राप्तियाँ	23
2.22	राज्यों के जीएफडी का वियोजन और वित्तपोषण पद्धति	24
2.23	2005-06 के दौरान राज्य सरकारों की बाज़ार उधार राशियाँ	25
2.24	संयुक्त देय और ऋण-जीडीपी अनुपात	26
2.25	आरक्षित मुद्रा के प्रमुख घटकों और स्रोतों में भिन्नता	27
2.26	रिज़र्व बैंक के चलनिधि प्रबंध परिचालनों के चरण	28
2.27	केंद्र को निवल रिज़र्व बैंक ऋण- भिन्नताएँ	28
2.28	मौद्रिक संकेतक	29

(जारी)

सारणियों की सूची

सारणी सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
2.29	अनुसूचित वाणिज्य बैंक : चयनित बैंकिंग संकेतकों में भिन्नता	30
2.30	खाद्येतर बैंक ऋण का विनियोजन	31
2.31	उद्योग के निधियों का चयनित स्रोत	31
2.32	वार्षिक उपभोक्ता कीमत मुद्रास्फीति	32
2.33	केंद्रीय बैंक नीति दरें	33
2.34	अवयव द्वारा वार्षिक अंक-से-अंक थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति	34
2.35	भारत में उपभोक्ता कीमत मुद्रास्फीति (सी पी आई) (वर्ष-दर-वर्ष)	34
2.36	घरेलू वित्तीय बाज़ार-चयनित संकेतक	36
2.37	मुद्रा बाज़ारों में ब्याज दरें	37
2.38	जमाराशि और ऋण ब्याज दरों की गति	37
2.39	माँग / नोटिस मुद्रा बाज़ार में तुलनात्मक हिस्से	38
2.40	केंद्र सरकार का बाज़ार उधार	44
2.41	बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत बकाया	45
2.42	प्राथमिक बाज़ार से संसाधन संग्रहण	49
2.43	म्युचुअल फंडों द्वारा निवल संसाधन संग्रहण	49
2.44	शेयर बाजारों की प्रवृत्तियाँ	50
2.45	संस्थागत निवेश	51
2.46	राष्ट्रीय शेयर बाजार में नकदी के मुकाबले डेरिवेटिव्स बाज़ार में पण्यावर्त	51
2.47	चुनिंदा बैंक समूहों के महत्त्वपूर्ण मानक	53
2.48	शहरी सहकारी बैंक - चुनिंदा वित्तीय संकेतक	53
2.49	वित्तीय संस्थाएं - चुनिंदा निष्पादक संकेतक	54
2.50	एन बी एफ सी के समेकित तुलनपत्र	54
2.51	अवशिष्ट गैर बैंकिंग कंपनियों का प्रोफाइल	54
2.52	चुनिंदा देशों में जी डी पी की तिमाही वृद्धि दर	56
2.53	वैश्विक वणिक माल की निर्यात वृद्धि	57
2.54	भारत का विदेशी व्यापार	57
2.55	भारत के प्रमुख निर्यात	58
2.56	भारतीय निर्यात के प्रमुख गंतव्य देश	59
2.57	भारत के प्रमुख आयात	59

(जारी)

सारणियों की सूची

सारणी सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
2.58	भारतीय आयात के स्रोत	60
2.59	भारत का चालू खाता	61
2.60	पूंजी प्रवाह (निवल)	62
2.61	श्रेणी के अनुसार विदेशी निवेश प्रवाह	62
2.62	एन आर आइ जमाराशि योजना के अंतर्गत अंतर्वाह	63
2.63	बाहरी वाणिज्यिक उधार अनुमोदन	63
2.64	भारत का बाहरी ऋण	64
2.65	ऋण संकेतक	65
4.1	चुनिंदा देशों में मौद्रिक ढांचे की विशेषताओं के लिए संक्षिप्त अंक	118
5.1	2002 में एकल पर्यवेक्षक, अर्ध समन्वित पर्यवेक्षी एजेंसियों तथा बहु पर्यवेक्षक वाले देश	126
5.2	भारत में वित्तीय विनियमन संबंधी दृष्टिकोण, उपाय तथा उद्देश्य (1950 से 1980 के बाद के दशक तक)	139
5.3	भारत में वित्तीय विनियमन के दृष्टिकोण, उपाय तथा उद्देश्य - 1990 के बाद का दशक	140
5.4	भारत में वित्तीय विनियमन के दृष्टिकोण, उपाय और उद्देश्य - 2000 और उसके बाद	140
5.5	अंतरराष्ट्रीय मानकों तथा संहिताओं के अनुपालन पर चुनिंदा देशों का स्कोर	151
5.6	बैंक विनियमन - चुनिंदा संकेतक 1999-2000	151
5.7	बैंक पर्यवेक्षण चुनिंदा संकेतक - 1999-2000	152
6.1	मुद्रा बाजार की गतिविधि	166
6.2	भारत सरकार प्रतिभूति बाजार की संक्षिप्त झलक	171
6.3	भारत सरकार के बाजार ऋणों के लिए भारांकित औसत आय तथा मीयाद	172
6.4	सरकारी प्रतिभूति बाजार में द्वितीयक बाजार के लेनदेनों की मात्रा	172
6.5	केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों का स्वामित्व (कुल में अंश)	173
6.6	भारत में घरेलू वित्तीय बाजार का तुलनात्मक आकार (रुपया मूल्यवर्गित)	179
6.7	भारत में विदेशी मुद्रा बाज़ार तुलनात्मक आकार	180
6.8	भारतीय घरेलू (रुपए मूल्यांकित) वित्तीय बाज़ार एक नज़र में	180
6.9	प्रमुख वित्तीय बाजार की दरों में सह संबंध गुणांक	181
6.10	प्रमुख वित्तीय बाजार की दरों में सह संबंध गुणांक	182
7.1	सरकार को केंद्रीय बैंक का ऋण	196
7.2	ऋण प्रबंधन प्रथाओं का सर्वेक्षण	197

(जारी)

सारणियों की सूची

सारणी सं.	शीर्षक	पृष्ठ सं.
7.3	समष्टिगत आर्थिक और मौद्रिक संकेतक : 1930 और 1940 के दशक	200
7.4	रिज़र्व बैंक द्वारा बजट घाटे का वित्तपोषण	202
7.5	मौद्रिक नीति लिखत	211
7.6	91 दिवसीय तदर्थ खजाना बिलों के निवल निर्गम का पाक्षिक औसत	213
7.7	केंद्र सरकार की सरकारी प्रतिभूतियों की परिपक्वता स्थिति	219
7.8	केंद्र सरकार के लिए एफआरबीएम नियमावली	223
7.9	रिज़र्व बैंक में केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों का स्टॉक	224
8.1	केंद्रीय बैंक का एक शैलीकृत तुलन-पत्र	238
8.2	रिज़र्व मुद्रा का विघटन	238
8.3	विभिन्न मौद्रिक नीति लिखतों के अंतर्गत तुलन-पत्र में उतार चढ़ाव	239
8.4	केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र का आकार	242
8.5	चयनित केंद्रीय बैंकों की प्रमुख देयताएं	243
8.6	चयनित केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र में बैंक पेपर	243
8.7	चयनित केंद्रीय बैंकों की प्रमुख आस्तियाँ	244
8.8	केंद्रीय बैंकों का पूंजी खाता	246
8.9	नोट निर्गम	249
8.10	रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र पर, रिज़र्व बैंक के चुने हुए कार्यकलापों के विकास का प्रभाव : एक शैलीगत विकास ढाँचा	258
8.11	कुल व्यय का गठन (ब्याज व्यय को छोड़कर)	259
8.12	रिज़र्व बैंक उपदान और अधिवर्षिता कोष	260
8.13	रिज़र्व बैंक की वार्षिक वित्तीय विवरणियों में बढ़ती हुई पारदर्शिता और प्रकटीकरण	263
9.1	रणनीतिगत आयोजना प्रक्रिया के चुने हुए लक्षण	287

संक्षेपाक्षर

AACS	–	सहकारी समितियों को यथा लागू
ACD	–	कृषि ऋण विभाग
ACLF	–	अतिरिक्त ज़मानती उधार सुविधा
ACTI	–	व्यापार और उद्योग पर सलाहकार समिति
ACU	–	एशियाई समाशोधन संघ
ADB	–	एशियाई विकास बैंक
ADR	–	अमरीकी निक्षेपागार (डिपाजिटरी) रसीद
ADRs	–	अमरीकी डिपाजिटरी रसीद
ADs	–	प्राधिकृत व्यापारी
AIDBs	–	अखिल भारतीय विकास बैंक
AIFIs	–	अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाएँ
AIFRS	–	अंतरराष्ट्रीय वित्तीय मानकों की रिपोर्टिंग अपनाना
AL	–	कृषि श्रमिक
ALM	–	आस्ति देयता प्रबंधन
AMFI	–	भारतीय म्युचुअल फंड संघ
AML	–	धन शोधन निवारण
AMPIs	–	समुच्चयित व्यष्टि विवेकशीलता सूचक
AMS	–	समुच्चय समर्थन उपाय
APEC	–	एशिया प्रशांत आर्थिक सहयोग
APMC	–	कृषि उत्पाद विपणन समिति
APRA	–	आस्ट्रेलियाई विवेकशीलता विनियामक प्राधिकरण
ARC	–	आस्ति-पुनर्निर्माण कंपनी
ARDC	–	कृषि पुनर्वित्त और विकास निगम
ASEAN	–	आशियान (दक्षिण पूर्वी एशियाई राष्ट्रों का संघ)
ATMs	–	एटीएम (स्वचालित टेलर मशीन)
BBA	–	ब्रिटिश बैंकर संघ
BCBS	–	बैंक पर्यवेक्षण पर बासल समिति
BCI	–	कारोबार विश्वास सूचकांक
BCSBI	–	भारतीय बैंकिंग संहिता और मानक बोर्ड
BD	–	बजट घाटा
BE	–	बजट अनुमान
BFRS	–	वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण बोर्ड
BFS	–	वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड
BIFR	–	औद्योगिक और वित्तीय पुनर्निर्माण बोर्ड
BIS	–	अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक
BNBs	–	बैंक ऑफ़ नेगारा बिल्स
BNM	–	बैंक ऑफ़ नगारा मलेशिया
BoE	–	बैंक ऑफ़ इंग्लैंड
BoP	–	भुगतान संतुलन
BoT	–	बैंक ऑफ़ थाइलैंड
BOT	–	निर्माण-परिचालन-अंतरण
BPLR	–	बेंचमार्क मूल उधार दर
BPO	–	बाह्य कारोबारी प्रक्रिया
BPSS	–	भुगतान और निपटान प्रणाली बोर्ड
BR Act	–	बैंककारी/बैंकिंग विनियमन अधिनियम, 1949
BRBNMPL	–	भारतीय रिज़र्व बैंक नोट मुद्रण प्रा.लि.
BRSPSS	–	भुगतान और निपटान प्रणाली विनियमन और पर्यवेक्षण बोर्ड
BS	–	बैंकिंग अनुभाग

BSE – शेयर बाजार, मुंबई

BSR – मूलभूत सांख्यिकी विवरणी

BTC – बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय

CAAP – पूंजी पर्याप्तता निर्धारण कार्यक्रम

CAB – कृषि बैंकिंग महाविद्यालय

CAC – महाविद्यालय परामर्शी समिति

CACS – पूंजी-पर्याप्तता, आस्ति गुणवत्ता, अनुपालन प्रणाली और नियंत्रण

CALCS – पूंजी-पर्याप्तता, आस्ति गुणवत्ता, चलनिधि, अनुपालन और प्रणाली

CALL – माँग मुद्रा दर

CAMELS – पूंजी पर्याप्तता, परिसंपत्ति गुणवत्ता, प्रबंध, अर्जन,चलनिधि तथा प्रणालियां

CAR – संविदागत सभी जोखिम सुविधा

CAS – केंद्रीय लेखा अनुभाग

CAS – केंद्रीय खाता अनुभाग

CBLO – संपार्श्वीकृत उधार और ऋणदायी बाध्यता

CBM – केंद्रीय बैंक धन

CBs – समेकित बैंकिंग सांख्यिकी

CCFF – प्रतिपूरक और आकस्मिक वित्त पोषण सुविधा

CCI – भारतीय कपास निगम

CCIL – भारतीय समाशोधन निगम लि.

CCL – आकस्मिक ऋण व्यवस्था

CD – जमा प्रमाणपत्र

CDBMS – केंद्रीय डाटाबेस प्रबंध प्रणाली

CDOs – संपार्श्वीकृत ऋण देयता

CDR – कंपनी ऋण पुनः संरचना

CDR – पूँजी जमा अनुपात

CDs – अनिवार्य जमा योजना

CENVAT – केंद्रीय मूल्य वर्द्धित कर

CFMS – केंद्रीकृत निधि प्रबंध प्रणाली

CFSs – समेकित वित्तीय विवरणी

CFT – आतंकवाद के वित्तपोषण का विरोध

CG – पूँजी माल

CGRA – मुद्रा एवं स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाता

CIB – कैपिटल इंडेक्सड बांड

CIBIL – भारतीय ऋण सूचना ब्यूरो लि.

CII – भारतीय उद्योग संघ

CLDBs – केंद्रीय भूमि विकास बैंक

CLF – जमानती ऋण सुविधा

CMD – मासिक विचलन का गुणांक

CMIE – भारतीय अर्थव्यवस्था अनुप्रवर्तन केंद्र

COC – मुद्रा नियंत्रक

CPC – चेक संसाधन केंद्र

CPI – उपभोक्ता मूल्य सूचकांक

CPI-AL – कृषि श्रमिक संबंधी उपभोक्ता सूचकांक

CPI-IW – औद्योगिक कामगार संबंधी उपभोक्ता सूचकांक

CPI-UNME – शहरी नॉन मैनुअल कर्मचारी संबंधी उपभोक्ता सूचकांक

CPLG – प्रमुख सिद्धांत संपर्क समूह

CPPAPS – सार्वजनिक सेवाओं संबंधी प्रक्रिया और कार्यनिष्पादन लेखापरीक्षा पर समिति

CPR – समेकित विवेकसम्मत विवरणी

CP – वाणिज्यिक पत्र

CPSS – भुगतान और निपटान प्रणाली समिति

CPSUs – केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रम

CR – आकस्मिक आरक्षित निधि

CRAFICARD – कृषि और ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत ऋण व्यवस्था की पुनरीक्षण समिति

CRAR – जोखिम भारित आस्तियों के प्रति पूंजी अनुपात

CRDC – केंद्रीय अभिलेख और प्रलेखन केंद्र

CRISIL – भारतीय साख निर्धारण सूचना सेवा लिमिटेड

CRR – नकदी आरक्षित अनुपात

CSC – केंद्रीय सुरक्षा कक्ष

CSF – समेकित ऋण शोधन निधि

CSO – केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन

CST – केंद्रीय बिक्री कर

CVPS – मुद्रा सत्यापन और संसाधन प्रणाली

DA – प्रशासन विभाग

DAD – जमा लेखा विभाग

DAE – लेखा और व्यय विभाग

DAP – प्रशासन और कार्मिक विभाग

DAPM – प्रशासन और कार्मिक प्रबंध विभाग

DBD – बैंकिंग विकास विभाग

DBO – बैंकिंग परिचालन विभाग

DBOD – बैंकिंग परिचालन और विकास विभाग

DBS – बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग

DCA – कंपनी कार्य विभाग

DCCBs – जिला मध्यवर्ती सहकारी बैंक

DCM – मुद्रा प्रबंध विभाग

DEAP – आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग

DEBC – व्यय और बजट नियंत्रण विभाग

DEFTY – डेफ़्टी

DEIO – बाह्य निवेश और परिचालन विभाग

DESACS – सांख्यिकीय विश्लेषण और कंप्यूटर सेवा विभाग

DFC – वित्तीय कंपनी विभाग

DFHI – भारतीय मितीकाटा और वित्त गृह

DFID – अंतरराष्ट्रीय विकास विभाग

DFIs – वित्तीय विकास संस्थाएं

DFSR – वित्तीय क्षेत्र विनियमन विभाग

DGBA – सरकारी और बैंक लेखा विभाग

DGCI&S – वाणिज्यिक आसूचना और अंक संकलन महानिदेशालय

DGFT – विदेश व्यापार महानिदेशालय

DHRM – मानव संसाधन प्रबंध विभाग

DIC – जमा बीमा निगम

DICGC – निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम

DIO – अंतरराष्ट्रीय परिचालन विभाग

DIT – सूचना प्रौद्योगिकी विभाग

DITS – सूचना प्रौद्योगिकी सेवाएँ विभाग

DM – ड्यूश मार्क

DMCs – विकासशील सदस्य देश

DMO – ऋण प्रबंध कार्यालय

DNBC – गैर बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग

DNBS – गैर बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग

DoF – वित्त विभाग
DOPR – नीति अनुसंधान विभाग
DoS – पर्यवेक्षण विभाग
DPs – निक्षेपागार सहभागी
DPSS – भुगतान और निपटान प्रणाली विभाग
DRI – विभेदक ब्याज दर
DRS – आपदा से उबरने की प्रणाली
DRT – ऋण वसूली न्यायाधिकरण
DSB – विवाद निपटान निकाय
DSFR – वित्तीय प्रणाली विनियमन विभाग
DSIR – वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान विभाग
DSLF – राज्य और स्थानीय वित्त प्रभाग
DSR – ऋण चुकौती अनुपात
DSS – ऋण अदला-बदली योजना
DTL – मांग और मीयादी देयताएं
D*v*P – सुपुर्दगी बनाम भुगतान
EASIEST – उत्पाद और सेवा कर संबंधी इलेक्ट्रॉनिक लेखा प्रणाली
ECB – बाह्य वाणिज्यिक उधार
ECBs – बाह्य वाणिज्यिक उधार
ECD – विदेशी मुद्रा नियंत्रण विभाग
E-Commerce – इलेक्ट्रॉनिक व्यापार (ई-कामर्स)
ECR – निर्यात ऋण पुनर्वित्त
ECS – इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन प्रणाली
EDMU – बाह्य ऋण प्रबंध इकाई
EEA – विदेशी मुद्रा समतुल्यीकरण खाता
EEFC – विदेशी मुद्रा अर्जक विदेशी मुद्रा खाता
EFF – विस्तारित निधि सुविधा
EFR – विनिमय उतार चढ़ाव आरक्षित राशि
EFT – इलेक्ट्रानिक निधि अंतरण
ELRIC – बाह्य लेखा परीक्षा तंत्र, विधिक संरचना और स्वतंत्रता, वित्तीय रिपोर्टिंग अंतरिम
EMEAP – उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएँ आस्ट्रेलिया और फ़िलीपींस
EMEs – उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाएँ
E-Money – इलेक्ट्रॉनिक धन (ई-मनी)
EMU – यूरोपीय मौद्रिक संघ
ERM – विनिमय दर तंत्र
ESAF – संवर्द्धित संरचना समायोजन सुविधा
ESCB – केंद्रीय बैंकों की यूरोपीय प्रणाली
EXIM Bank – भरतीय निर्यात आयात बैंक
FAO – खाद्य और कृषि संगठन
FATF – वित्तीय कार्रवाई कार्य दल
FBT – अनुषंगी हित लाभ कर
FCs – वित्तीय समूह
FCA – विदेशी मुद्रा आस्तियाँ
FCCBs – विदेशी मुद्रा परिवर्तनीय बांड
FCI – भारतीय खाद्य निगम
FCNR(A) – विदेशी मुद्रा अनिवासी (खाता)
FCNR(B) – विदेशी मुद्रा अनिवासी (बैंक)
FDI – प्रत्यक्ष विदेशी निवेश
FED – विदेशी मुद्रा विभाग
FEDAI – भारतीय नियत आय मुद्रा बाजार और व्युत्पन्नी संघ
FEER – मौलिक संतुलन विनिमय दर

FEMA – विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999
FERA – विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम
FERs – विदेशी मुद्रा भंडार
FIC – वित्तीय संस्थाएँ कक्ष
FICCI – भारतीय वाणिज्य और उद्योग परिसंघ
FID – वित्तीय संस्थाएँ प्रभाग
FIIs – विदेशी संस्थागत निवेशक
FIMMDA – नियत आय मुद्रा बाजार और व्युत्पन्नी संघ
FIPB – विदेशी निवेश संवर्द्धन बोर्ड
FIs – वित्तीय संस्थाएं
FMC – वायदा बाजार कमीशन
FMCG – शीघ्र विक्रेय उपभोक्ता माल (एफएमसीजी)
FMD – वित्तीय बाजार विभाग
FMMU – वित्तीय बाजार और अनुप्रवर्तन प्रभाग
FOMC – वित्तीय बाजार और अनुप्रवर्तन इकाई
FP1 – एक-माह वायदा किस्त
FRAs – वायदा दर करार
FRBM – राजकोषीय जवाबदेही एवं बजट प्रबंध
FRL – राजकोषीय उत्तरदायित्व विधान
FRS – वित्तीय रिपोर्टिंग मानक
FSA – वित्तीय पर्यवेक्षण प्राधिकरण
FSAP – वित्तीय क्षेत्र मूल्यांकन कार्यक्रम
FSF – वित्तीय स्थायित्व मंच
FSIs – वित्तीय सुदृढ़ता सूचक
FSQ – मुक्त बिक्री कोटा
FTPL – कीमत स्तर का राजकोषीय सिद्धांत
GAAP – सामान्यतः स्वीकृत लेखांकन सिद्धांत
GCF – सकल पूंजी निर्माण
GD – सामान्य विभाग
GDCF – सकल देशी पूंजी निर्माण
GDP – सकल घरेलू उत्पाद
GDRs – जीडीआर
GDS – सकल देशी बचत
GFD – सकल राजकोषीय घाटा
GFDCG – केंद्र सरकार का सकल राजकोषीय घाटा
GIC – साधारण बीमा निगम
GII – सरकारी निवेश निर्गम
GLB – ग्राहम-लीच ब्लीली
GLC – ऋण की सामान्य व्यवस्था
GNP – सकल राष्ट्रीय उत्पाद
GoI – भारत सरकार
GPD – सकल प्राथमिक घाटा
GRA – सामान्य संसाधन खाता/लेखा
GRF – सामान्य पुनर्वित्त सुविधा
GSBR – सरकारी क्षेत्र उधार की वांछनीयता
G-Sec – भारत सरकार की प्रतिभूति
GTB – ग्लोबल ट्रस्ट बैंक
HDFC – आवास विकास वित्त निगम लि.
HFCs – आवास वित्त कंपनियाँ
HHEC – दस्तकारी और हैंडलूम निर्यात निगम
HICP – उपभोक्ता मूल्यों का सामंजस्य सूचकांक
HIPC – भारी ऋणी ग़रीब देश
HKMA – हांग कांग मुद्रा प्राधिकरण
HRDD – मानव संसाधन विकास विभाग

HRIS	–	मानव संसाधन सूचना प्रणाली
IAS	–	एकीकृत लेखांकन प्रणाली
IBA	–	भारतीय बैंक संघ
IBPCs	–	अंतर बैंक सहभागिता प्रमाणपत्र
IBRD	–	अंतरराष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास बैंक
ICAAP	–	आंतरिक पूंजी पर्याप्तता मूल्यांकन प्रक्रिया
ICAI	–	भारतीय सनदी लेखाकार संस्थान
ICCOMS	–	समन्वित कंप्यूटरीकृत मुद्रा परिचालन और प्रबंध प्रणाली
ICDs	–	अंतर कार्पोरेट जमा
ICICI	–	आइ सी आइ सी आइ
ID	–	पहचान संख्या
IDBI	–	भारतीय औद्योगिक विकास बैंक
IDBs	–	भारतीय विकास बांड
IDFC	–	बुनियादी सुविधा विकास वित्त कंपनी
IDMC	–	आंतरिक ऋण प्रबंध कक्ष
IDMD	–	आंतरिक ऋण प्रबंध विभाग
IDRBT	–	बैंकिंग प्रौद्योगिकी विकास और अनुसंधान संस्थान
IEBR	–	आंतरिक और अतिरिक्त बजटीय संसाधन
IECD	–	औद्योगिक और निर्यात ऋण विभाग
IES	–	समेकित स्थापना प्रणाली
IFC	–	औद्योगिक वित्त निगम
IFCI	–	भारतीय प्रौद्योगिक वित्त निगम
IFD	–	औद्योगिक वित्त विभाग
IGIDR	–	इंदिरा गांधी विकास अनुसंधान संस्थान
IIBI	–	भारतीय औद्योगिक निवेश बैंक लि.
IIP	–	औद्योगिक उत्पाद सूचकांक
IISCO	–	भारतीय लौह और स्पात कंपनी
IMD	–	इंडिया मिलेनियम डिपॉजिट
IMDs	–	इंडिया मिलेनियम डिपॉजिट्स
IMF	–	अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष
INFINET	–	इंडियन फाइनेंशियल नेटवर्क
INR	–	भारतीय रुपया
IOC	–	भारत कार्यालय समिति
IOSCO	–	अंतरराष्ट्रीय प्रतिभूति आयोग संगठन
IPAs	–	निवेश संवर्द्धन एजेंसीज़
IPAs	–	निर्गम और भुगतानकारी एजेंसीज़
IRB	–	आंतरिक दर आधारित
IRBI	–	भारतीय औद्योगिक पुनर्निर्माण बैंक
IRDA	–	बीमा विनियामक और विकास प्राधिकरण
IRDP	–	एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम
IRS	–	ब्याज दर स्वैप (अदला-बदली)
ISDA	–	अंतरराष्ट्रीय स्वैप (अदला-बदली) और डेरिवेटिव संघ
ISO	–	अंतरराष्ट्रीय चीनी संगठन
ISQ	–	आंतरिक बिक्री कोटा
IT	–	सूचना प्रौद्योगिकी
ITES	–	अंतःसमूह लेनदेन और जोखिम/निवेश
ITEs	–	सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाएँ
ITF	–	अंतरिम न्यासी निधि
IW	–	औद्योगिक कामगार
IWGEDS	–	बाह्य ऋण सांख्यिकी पर अंतरराष्ट्रीय समूह

JCI	–	भारतीय जूट निगम
JSC	–	संयुक्त चयन समिति
JVs	–	संयुक्त उद्यम
KVIC	–	खादी और ग्रामोद्योग आयोग
KYC	–	अपने ग्राहक को जानिए
LAF	–	चलनिधि समायोजन सुविधा
LAN	–	लैन/स्थानीय क्षेत्र नेटवर्क
LC	–	ऋण कंपनी
LD	–	विधि विभाग
LERMS	–	उदारीकृत विनिमय दर प्रबंध प्रणाली
LIBOR	–	लंदन अंतर बैंक प्रस्तावित दर
LIC	–	भारतीय जीवन बीमा
LPA	–	दीर्घावधि औसत
LTFP	–	दीर्घावधि राजकोषीय नीति
LTO	–	दीर्घावधि राजकोषीय नीति
MAS	–	सिंगापुर मुद्रा प्राधिकरण
MAT	–	न्यूनतम वैकल्पिक कर
MBP	–	बाज़ार उधार कार्यक्रम
MCA	–	कंपनी कार्य मंत्रालय
MCIR	–	मौद्रिक और ऋण सूचना समीक्षा
MEIs	–	समष्टि आर्थिक सूचक
MFs	–	म्युचुअल फ़ंड (पारस्परिक निधि)
MGS	–	मलेशिया सरकार की प्रतिभूति
MIBOR	–	मुंबई अंतर बैंक प्रस्तावित दर
MICR	–	चुंबकीय स्याही चिह्न पहचान
MIFOR	–	मुंबई अंतर बैंक वायदा प्रस्तावित दर
MMCB	–	माधवपुरा मर्केंटाइल बैंक लि.
MMMFs	–	मुद्रा बाज़ार पारस्परिक निधि
MNCs	–	बहु राष्ट्रीय कंपनियाँ
MOU	–	सहमति ज्ञापन
MPC	–	मौद्रिक नीति समिति
MPD	–	मौद्रिक नीति विभाग
MPIs	–	समष्टि विवेकशील सूचक
MSD	–	प्रबंध सेवा विभाग
MSP	–	बाज़ार समर्थन मूल्य
MSP	–	न्यूनतम समर्थन मूल्य
MSS	–	बाजार स्थिरीकरण योजना
NABARD	–	राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक
NAC	–	राष्ट्रीय कृषि ऋण
NASSCOM	–	नैस्कॉम
NBFCs	–	गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ
NBFIs	–	गैर बैंकिंग वित्तीय संस्थाएँ
NCAER	–	राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद
NCBs	–	राष्ट्रीय केंद्रीय बैंक
NCC	–	राष्ट्रीय ऋण परिषद
NCCF	–	राष्ट्रीय आपदा आकस्मिक निधि
NDA	–	निवल घरेलू परिसंपत्तियां
NDDTL	–	निवल घरेलू मांग और मीयादी देयताएँ
NDS	–	तयशुदा लेनदेन प्रणाली
NDTL	–	निवल मांग और मीयादी देयताएं
NEER	–	सांकेतिक प्रभावी विनिमय दर
NFA	–	निवल विदेशी मुद्रा परिसंपत्तियां

NFARB – भारतीय रिज़र्व बैंक की विदेशी मुद्रा आस्ति में निवल उपचय

NFEA – निवल विदेशी मुद्रा आस्तियां

NFO – निवल स्वाधिकृत निधि

NHB – राष्ट्रीय आवास बैंक

NHC (LTO) – राष्ट्रीय आवास ऋण(दीर्घावधि परिचालन)

NIBM – राष्ट्रीय बैंक प्रबंध संस्थान

NIC – राष्ट्रीय औद्योगिक वर्गीकरण

NIC (LTO) – राष्ट्रीय औद्योगिक वर्गीकरण (दीर्घावधि परिचालन)

NIF – राष्ट्रीय निवेश निधि

NLR – निवल चलनिधि अनुपात

NNML – निवल मुद्रेतर देयताएं

NOF – निवल स्वाधिकृत्त निधि

NPAs – अनर्जक आस्तियाँ

NRBCG – केंद्र सरकार को भारतीय रिज़र्व बैंक का निवल ऋण

NRIs – अनिवासी भारतीय

NSE – राष्ट्रीय शेयर बाजार

NSSF – राष्ट्रीय लघु बचत निधि

NSSO – राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन

OCBs – विदेशी निगमित निकाय

OCC – मुद्रा नियंत्रक का कार्यालय

ODA – सहायता विकास कार्यालय

ODs – ओवर ड्राफ़्ट

ODTL – अन्य मांग और मीयादी देयताएँ

OECD – आर्थिक सहयोग और विकास संगठन

OERS – स्वैच्छिक समयपूर्व निवृत्ति योजना

OGL – खुला सामान्य लाइसेंस

OLTAS – ऑन लाइन टैक्स लेखा प्रणाली

OMO – खुले बाजार में परिचालन

OMS – खुला बाजार परिचालन

ONGC – तेल और प्राकृतिक गैस निगम

OPEC – तेल उत्पादक देशों का संगठन

ORFS – ऑन लाइन विवरणी प्रस्तुत करने की प्रणाली

ORI – समग्र विनियमन सूचकांक

OSFI – वित्तीय संस्थाओं के अधीक्षक का कार्यालय

OSI – समग्र पर्यवेक्षण सूचकांक

OSS – अप्रत्यक्ष निगरानी प्रणाली

OSMOS – अप्रत्यक्ष निगरानी और चौकसी प्रणाली

OTC – ओवर द काउंटर

OWS – अन्य कल्याणकारी योजनाएं

PACS – प्राथमिक कृषि ऋण समिति

PAD – लोक लेखा विभाग

PCA – त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई

PCARDBs – प्राथमिक सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक

PD – प्राथमिक घाटा

PD – परिसर विभाग

PDO – लोक ऋण कार्यालय

PDs – प्राथमिक व्यापारी

PDS – सार्वजनिक वितरण प्रणाली

PLR – मूल उधार दर

POL – पेट्रोलियम, तेल और लुब्रिकेंट्स

PPD – कार्मिक नीति विभाग

PPP – क्रय शक्ति समानता

PRD – प्रेस संपर्क प्रभाग

PSBs – सरकारी क्षेत्र के बैंक

PSRS – विवेक-सम्मत पर्यवेक्षी रिपोर्टिंग प्रणाली

PSU – सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम

QIS – मात्रा संबंधी प्रभाव अध्ययन

RATE – जोखिम प्रबंध, पर्यवेक्षण और मूल्यांकन उपकरण

RBA – रिज़र्व बैंक ऑफ़ आस्ट्रेलिया

RBI Act – भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम

RBIA – जोखिम भारित आंतरिक लेखा परीक्षा

RBS – जोखिम आधारित पर्यवेक्षण

RBSC – रिज़र्व बैंक स्टाफ़ महाविद्यालय

RD – राजस्व घाटा

RDBMS – सापेक्षिक डाटाबेस प्रबंध प्रणाली

RE – संशोधित अनुमान

REER – वास्तविक प्रभावी विनिमय दर

REFT – राजस्व अर्जक भाड़ा ट्रैफ़िक

REPO – रेपो

RIDF – ग्रामीण बुनियादी ढाँचा विकास निधि

RIW – अनुसंधान और आसूचना स्कंध

RL – ग्रामीण श्रमिक

RM – आरक्षित धन

RMP – जोखिम कम करने का कार्यक्रम

RNBCs – शेष गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों

ROC – कंपनी रजिस्ट्रार

RPCC – ग्रामीण आयोजना और ऋण कक्ष

RPCD – ग्रामीण आयोजना और ऋण विभाग

RRBs – क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक

RTGS – तत्काल सकल भुगतान

RTP – आरक्षित धन हिस्सा

S&P CNX – स्टैंडर्ड ऐंड पूअर सीएनएक्स

Nifty – निफ़्टी

SAARC – सार्क

SAI – औद्योगिक सहायता सचिवालय

SAP – कार्यनीतिक कार्रवाई योजना

SARFAESI – वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतीकरण और पुनर्निर्माण तथा प्रतिभूति हित प्रवर्तन

SBI – भारतीय स्टेट बैंक

SBS – श्रेडिंग करने और ब्रिकेट बनाने की मशीन

SCALE – स्तर/मानदंड

SCARDBs – राज्य सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक

SCBs – अनुसूचित वाणिज्य बैंक

SCBs – राज्य सहकारी बैंक

SCICI – भारतीय जहाज़रानी ऋण और निवेश कंपनी लि.

SCRA – प्रतिभूति संविदा विनियमन अधिनियम, 1956

SD – सचिव विभाग

SDDS – विशेष आंकड़ा प्रसार मानक

SDRs – विशेष आहरण अधिकार

SEBI – सेबी / भारतीय प्रतिभूति और विनियमन बोर्ड

SFC – राज्य वित्त निगम

SFMS – संरचनागत वित्तीय संदेश समाधान

SGL – सहायक सामान्य खाता बही

SIDBI – भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक

SIFIs	–	प्रणाली के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण - वित्तीय मध्यस्थ
SLAF	–	द्वितीय चलनिधि समायोजन सुविधा
SLR	–	सांविधिक चलनिधि अनुपात
SRS	–	सांख्यिकी और अनुसंधान अनुभाग
SS	–	सचिव प्रभाग
SSIs	–	लघु स्तरीय उद्योग
STCI	–	भारतीय प्रतिभूति व्यापार निगम
STD	–	शेयर अंतरण विभाग
STRIPS	–	पंजीकृत प्रतिभूतियों के ब्याज और मूलधन का पृथक कारोबार
STT	–	प्रतिभूति लेनदेन कर
SWIFT	–	विश्वव्यापी वित्तीय दूरसंचार समिति
TAC	–	तकनीकी परामर्शदात्री समिति
TACMP	–	मौद्रिक नीति पर तकनीकी परामर्शदात्री समिति
TBs	–	खजाना बिल
T/CD	–	खज़ाना / नकदी विभाग
TDS	–	स्रोत पर कर की कटौती
TFC	–	बारहवां वित्त आयोग
TFCI	–	भारतीय पर्यटन वित्त निगम
TNQ Bank	–	त्रावणकोर नैशनल एंड क्विलॉन बैंक लि.
TPDS	–	लक्ष्यित सार्वजनिक वितरण प्रणाली
UAE	–	संयुक्त अरब अमीरात
UBD	–	शहरी बैंक विभाग
UCBs	–	शहरी सहकारी बैंक
UIA	–	यूनाइटेड इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमि.
UNME	–	शहरी नॉन मैनुअल कर्मचारी
URR	–	एकरूप विनियमावली और नियमावली
US-GAAP	–	अमरीकी सामान्यतः स्वीकृत लेखांकन सिद्धांत
US FED	–	संयुक्त राज्य फ़ेडरल आरक्षित राशि
UTI	–	भारतीय यूनिट ट्रस्ट
VaR	–	जोखिम में मूल्य
VAR	–	वेक्टर ऑटो रिग्रेशन
VAT	–	वैट
VSAT	–	वीसैट (वेरी स्माल अपर्चर टर्मिनल)
WADR	–	भारित औसत बट्टा दर
WAMU	–	पश्चिम अफ्रीकी मुद्रा संघ
WAN	–	व्यापक क्षेत्र नेटवर्क
WEO	–	वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक
WGC	–	विश्व स्वर्ण परिषद
WI	–	ह्वेन इश्यूड
WMA	–	अर्थोपाय अग्रिम
WPI	–	थोक मूल्य सूचकांक
YTM	–	परिपक्वता प्रतिफल

यह रिपोर्ट इंटरनेट पर भी देखी जा सकती है।
URL : www.rbi.org.in

I रिपोर्ट का विषय

1.1 केंद्रीय बैंकों का अपने चारों तरफ बदलती हुई राजनैतिक और आर्थिक शक्तियों के जवाब में लगातार विश्वव्यापी स्तर पर विकास हुआ है। सत्रहवीं सदी के अंत में, स्वीडन (1668) और इंगलैंड (1694) में शुरू होकर, केंद्रीय बैंकों का विस्तार विश्व की अलग-अलग जगहों पर अठारहवीं सदी में धीरे-धीरे हुआ (ब्रॉज़, 1998)। तथापि, उन्नीसवीं सदी में यूरोप के कई देशों ने जैसे फ्रांस (1800), फ़िनलैंड (1811), नीदरलैंड्स (1814), आस्ट्रिया (1816), नार्वे (1816), डेनमार्क (1818), पुर्तगाल (1846), बेल्जियम (1850), स्पेन (1874), जर्मनी (1876), इटली (1893) और एशिया में जापान (1882) ने केंद्रीय बैंकों की स्थापना की। तब से, केंद्रीय बैंकों के अधिदेश पूरी तरह से रूपांतरित हुए हैं। वित्तीय प्रणाली के विस्तार ने विनियामक और निरीक्षण ढांचे को परिष्कृत एवं समाशोधन प्रणालियों को विकसित किया है। मुद्रास्फीति के बारे में उभरती हुई चिंता से मौद्रिक नीति ने केंद्रीय बैंकिंग के संचालन में विवेचनात्मक महत्व धारण किया। इसी तरह, उपनिवेशवाद की बेड़ियों से मुक्त हुए विकासशील देशों ने अपने केंद्रीय बैंकों को मूल्य स्थिरता के साथ आर्थिक विकास का उद्देश्य सौंपा। बीसवीं सदी के अंत में, वैश्विक वित्तीय बाज़ारों के विकास और वित्तीय लिखतों की प्रचुरता के साथ वित्तीय संकटों की घटनाओं ने मूल्य स्थिरता, वित्तीय स्थायित्व और जोखिम प्रबंध के लिए केंद्रीय बैंकों की चिंता को सामने लाया। सचमुच, केंद्रीय बैंकिंग की यात्रा इतिहास के पन्नों पर देखकर बिलकुल ही उल्लेखनीय लगती है।

1.2 बीसवीं सदी में विश्व के अनेक भागों में केंद्रीय बैंकिंग की स्थापना और इसकी गतिविधियों को सुदृढ़ करने की प्रारंभिक प्रेरणा युद्ध वित्तपोषण की आवश्यकता से उत्पन्न हुई। आर्थिक इतिहासकारों ने युद्ध वित्तपोषण को अनेक प्रारंभिक केंद्रीय बैंकों के गठन का मूल कारण बताया है (क्लाफ़ैम,1944 और हैमिल्टन, 1945)। इसके अतिरिक्त, युद्ध के वित्तपोषण में लगे अनेक केंद्रीय बैंकों के जो कि तब तक निजी इकाई के रूप में काम कर रहे थे, राष्ट्रीकरण के सबब बने। ज्योंही युद्ध की काली छाया घटी, केंद्रीय बैंकिंग की भूमिका अधिकतर रूप से आयोजित विकास के लिए संसाधन जुटाने और उसी समय उच्च मुद्रास्फीति से जूझने मे केंद्रित हुई। उपनिवेशी व्यवस्था कमज़ोर पड़ने पर कई राष्ट्रों के प्रादुर्भाव के साथ, भारत समेत विकासशील देशों में, केंद्रीय बैंकों के अधिदेश, प्रारूपिक केंद्रीय बैंकिंग कार्यों से अधिक आगे गए ताकि व्यापक विकासात्मक लक्ष्यों को सम्मिलित किया जा सके। परिणामतः, विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों ने अपने अधिदेशों को, आर्थिक समुत्थान और विकास में मदद करने के लिए मुद्रा जारी करने एवं सरकारी ऋण का प्रबंध करने जैसे परंपरागत कार्यों से परे विस्तारित करने पर ध्यान दिया। इस तरह उभरते बाज़ारों में केंद्रीय बैंकिंग के जुड़वाँ एवं अक्सर भिन्न उद्देश्यों का बीजारोपण हुआ। जहाँ इस परिवर्तन ने केंद्रीय बैंकों को राष्ट्रीय विकास की खातिर अधिक दायित्व सौंपा, वहीं वे राजकोषीय प्राबल्य के डर से अनावृत्त हुए जहाँ विकासात्मक उद्देश्य ने वित्तीय बाज़ारों की वृद्धि को रोका है और परिणामतः मौद्रिक नीति के निपुण संचालन को।

1.3 वित्तीय बाज़ारों का विकास, वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण, सरकारी ऋणों का प्रबंध, भुगतान और निपटान प्रणाली का संचालन तथा मुद्रा के बाह्य मूल्य का अनुरक्षण भी आधुनिक केंद्रीय बैंकिंग के मुख्य भाग हैं। विभिन्न केंद्रीय बैंकों में लिखतों और लक्ष्यों के अनेक रूप उभरे हैं। यद्यपि अनेक केंद्रीय बैंकों ने मुद्रास्फीति लक्ष्य को प्रमुख उद्देश्य अपनाया है और बहुत अधिक सफलता दर्ज की है, मुद्रास्फीति लक्ष्य को केंद्रीय बैंकिंग के एकमात्र अधिदेश के रूप में आम सहमति नहीं मिली है। इसके अतिरिक्त, अपेक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु केंद्रीय बैंकिंग की परिचालन प्रक्रियाओं को सुदृढ़ करने के दृष्टिकोण से स्वायत्तता, पारदर्शिता, लेखा मानकों और जोखिम प्रबंध के मुद्दों का महत्व बढ़ा। परिचालन प्रक्रियाओं में बढ़ती हुई जटिलताओं से निपटने की दृष्टि से, अनुसंधान गतिविधियों को आर्थिक पर्यावरण विश्लेषित करने और उपयुक्त कार्यनीति बनाने के लिए पर्याप्त मात्रा में महत्व दिया गया। वैश्वीकरण की चुनौतियों से हुए सीमा पार पूंजी, व्यापार और सूचना के मुक्त प्रवाह ने, विकसित और विकासशील देश दोनों में, केंद्रीय बैंकिंग के विधान को पुनर्परिभाषित करना अनिवार्य बना दिया।

1.4 भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी वर्तमान में अपनी सत्तरवीं वर्षगाँठ के समय, एक चुनौतीपूर्ण यात्रा पार की है। भारत वर्ष में केंद्रीय बैंकिंग के विकास की रूपरेखा अंकित करने के लिए यह रिपोर्ट एक समयगत यात्रा का प्रयास और भारत में केंद्रीय बैंकिंग की कायापलट करने का प्रयत्न करती है। भारत में केंद्रीय बैंकिंग संस्था के निर्माण के प्रारंभिक प्रयत्न का संकेत 1773 में मिलता है कि जब वॉरेन हेस्टिंग्स ने, उस समय प्रचलित सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों में राजकोष की ज़रूरत की पृष्ठभूमि पर ''बंगाल और बिहार में सामान्य बैंक'' आरंभ करने की योजना बनाई। तथापि बहुत बाद में सिलसिलेवार पहल ने निश्चित

प्रस्ताव का रूप धारण किया। वह लगभग बीसवीं सदी की शुरुआत थी कि जब केंद्रीय बैंक के गठन की चर्चा प्रस्ताव के समर्थन में बदल गई। इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया ने, जो कि 1921 में बंगाल, बंबई और मद्रास के तीन प्रेसीडेंसी बैंकों के एकीकरण के परिणामस्वरूप बना था, मुद्रा प्रबंध के सिवाय निश्चित केंद्रीय बैंकिंग कार्य अपना लिया था। केंद्रीय बैंकिंग इकाई राजनीतिक सत्ता द्वारा दिए गए अधिदेश से अधिक अधिकार न धारण कर ले यह निश्चित करने के उद्देश्य से मुद्रा प्रबंध का नियंत्रण भारत सरकार के पास कायम रहा। केंद्रीय बैंक के संवैधानिक ढाँचे पर वर्षों तक विवाद के पार, 'मिश्रित' किस्म की संस्था के लिए आम समर्थन होने के बावजूद, 6 मार्च 1934 को भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम को संविधि-संग्रह में शामिल किया गया। रिज़र्व बैंक ने 1 अप्रैल 1935 को काम करना शुरू किया और 1 जनवरी 1949 को उसका राष्ट्रीकरण हुआ। विश्व में केंद्रीय बैंकिंग के विकास के संदर्भ में, ''भारत में केंद्रीय बैंकिंग का विकास'' इस विषय के साथ, यह रिपोर्ट भारतीय रिजर्व बैंक के गत सत्तर वर्ष के विकास का विश्लेषण करने का प्रयास करती है।

1.5 विषय-आधारित अध्यायों की प्रस्तावना स्वरूप, ''हाल की आर्थिक गतिविधियाँ'' शीर्षक वाला अध्याय II, 2004-05 और 2005-06, 28 फरवरी 2006 तक, भारतीय अर्थव्यवस्था में समष्टि आर्थिक माहौल, विश्लेषणात्मक समीक्षा प्रस्तुत करता है।

1.6 विषय आधारित चर्चा, ''केंद्रीय बैंकिंग का कार्यात्मक विकास'' नामक अध्याय III से शुरू होती है। यह अध्याय समकालीन कार्यों और कार्य प्रणाली के विकास के साथ केंद्रीय बैंकिंग की उत्पति का एक मीमांसात्मक विवरण प्रस्तुत करता है। यह वैश्विक घटनाओं पर आधारित, केंद्रीय बैंकों की एक झाँकी, उनके निगमन से, प्रस्तुत करता है। प्रमुख पारंपरिक कार्यों, मुख्यत: विनिमय माध्यम की नवोन्मेषी पद्धतियों के स्रष्टा के रूप में, मुद्रा के आंतरिक और बाह्य मूल्यों को कायम रखने, सरकार के बैंकर के रूप में काम करने, अंतिम उधार दाता और बैंकिंग प्रणाली के नियंत्रक तथा निरीक्षक, के बारे में विस्तृत विचार करते समय, केंद्रीय बैंकिंग कार्यों के ऐतिहासिक विकास को प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों द्वारा अनुष्ठित विकासात्मक कार्यों, जैसे बाज़ार निर्माण और वित्तीय क्षेत्र में सुधार, संस्था निर्माण, समन्वय और सहयोग, उभरती हुई आवश्यकताओं में आँकड़ों का विकीर्णन एवं संचारण की व्याख्या करने के अलावा वित्तीय स्थिरता को कायम रखने के कार्य को भी विश्लेषित किया गया है। इसके अलावा, यह सूचना संबंधी विषमता की खाई को भरने और नीति-अभिमुखी अनुसंधान कार्य के महत्व के लिए वित्तीय बाजारों के विकास में केंद्रीय बैंकों की भूमिका को अभिग्रहण करता है, क्योंकि आंतरिक शोध कार्य केंद्रीय बैंकिंग प्रक्रिया का मेरुदंड है। यह अध्याय कुछ समकालीन मुद्दों, जैसे स्वतंत्रता, जवाबदेही, पारदर्शिता और साख, जिस पर केंद्रीय बैंकिंग साहित्य में सक्रियता पूर्वक चर्चा की जा रही है, को रेखांकित करते हुए समाप्त होता है।

1.7 रिपोर्ट के अध्याय IV में, जिसका शीर्षक ''भारत में केंद्रीय बैंकिंग'' है, भारत में केंद्रीय बैंकिंग कार्यों के वैचारिक विकास को ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया गया है। रिज़र्व बैंक के कार्यात्मक परिवर्तन का, प्रमुख कार्यों के निष्पादन से बहुसंख्यक नए कार्यों को अपनाने तक, उभरते हुए समष्टि आर्थिक एवं सामाजिक-राजनैतिक परिस्थितियों के संदर्भ में विस्तार से विचार-विमर्श किया गया है। विवरण के लिए विश्लेषण को तीन चरणों, अर्थात् आधार चरण (1935 - 1950); विकास चरण (1951-1990); और सुधार चरण (1991 से आगे) में क्रमबद्ध किया गया है। यह अध्याय भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में लचीलेपन को भी, जिसने रिज़र्व बैंक को शीघ्रता से बदलते हुए बाह्य एवं आंतरिक आर्थिक वातावरण में ढालने योग्य बनाया, चित्रित करता है। ग्रामीण एवं औद्योगिक ऋण-प्रवाह की वृद्धि के अलावा योजना प्रक्रिया के पूरक के रूप में मौद्रिक नीति प्रसारण आवेग की क्षमता को सुधारने के लिए रिज़र्व बैंक के संस्था निर्माण में उत्साही प्रयत्नों का भी विस्तृत वर्णन है। इसके अतिरिक्त, अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम पद्धति के अनुसार रिज़र्व बैंक द्वारा वित्तीय प्रणाली के निर्माण के लिए किए गए उपायों को भी दर्शाया गया है। मौद्रिक नीति ढांचा और विदेशी मुद्रा प्रबंध और नियंत्रण के विकास की भी विस्तृत चर्चा की गई है।

1.8 सुधार चरण में यह अध्याय, वित्तीय क्षेत्र सुधारों, बैंकिंग क्षेत्र सुधारों और ऋण बाज़ार, बाह्य क्षेत्र और मौद्रिक नीति ढांचे के अनुपूरक सुधारों का विस्तारपूर्वक निरूपण करता है। इस पृष्ठभूमि में, रिज़र्व बैंक की नीतियों का आघात सहने के निष्पादन पर प्रकाश डाला गया है। उदारीकरण और सुधारों की प्रक्रिया की तरफ रिज़र्व बैंक के दृष्टिकोण की अनुत्क्रमणीयता को रेखांकित किया गया है। अध्याय, व्यापक रूप से रिज़र्व बैंक द्वारा नकदी प्रबंध पर मुद्रा नीति संचालन में उसके उपगमन को, ज्यादा पारदर्शी बाज़ार -अभिमुखी प्रक्रियाओं के संदर्भ में, प्रौद्योगिकी अभिमुख मुद्रा प्रबंध की ओर आधारभूत कार्यों में बदलाव, तत्काल सकल भुगतान (आरटीजीएस) प्रणाली का प्रारंभ, सूचना प्रौद्योगिकी में उन्नति और नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण में अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम पद्धतियों के साथ वित्तीय स्थायित्व के उद्देश्य का अनुसरण, दर्शाता है।

1.9 अध्याय V, जिसका शीर्षक ''वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण'' है, भारतीय रिज़र्व बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी कार्यों की उत्पत्ति एवं विकास को रेखांकित करता है। अध्याय, आरंभ से, नियंत्रण एवं पर्यवेक्षण क्षेत्र में, रिज़र्व बैंक के परिवर्तन की भिन्न अवस्थाओं को चित्रित करने का प्रयास और नियंत्रित एवं पर्यवेक्षी

नीतियों और योजनाओं के विकास को वर्णित करता है। वाणिज्यिक बैंकिंग के नियंत्रित ढाँचे के विकास का विवेचन 1950-1968; 1969-1991 और 1991 से आगे की कालावधि में किया गया है। यह, भारतीय बैंकिंग और वित्तीय प्रणालियों को, जरूरी संशोधनों के साथ सर्वोत्तम अंतरराष्ट्रीय विनियामक और पर्यवेक्षी मापदंडों को भारतीय प्रणाली को उपयुक्त बनाने में रिज़र्व बैंक के प्रयासों को दर्शाता है। बैंकिंग क्षेत्र का प्रतिपादन करने के अलावा, सहकारी बैंकों, गैर बैंकिंग वित्त कंपनियों (एनबीएफसी) एवं विकास वित्तीय संस्थाओं (डीएफआई) पर रिज़र्व बैंक के बहुरूपी आयामों को भी रेखांकित किया गया है। कहीं रिज़र्व बैंक के लिए विनियामक एवं पर्यवेक्षक के रूप में और वित्तीय प्राधिकारी के रूप में विरोधाभास तो नहीं है, इसकी भी चर्चा अध्याय में की गई है। वित्तीय स्थायित्व के लिए रिज़र्व बैंक का दृष्टिकोण, बासल II मानकों और उनका भारतीय बैंकिंग प्रणाली के लिए तात्पर्य, रिज़र्व बैंक की वित्तीय समूहों के प्रबंध की तैयारी और भारत में इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग का विनियमन एवं पर्यवेक्षण संबंधी मुद्दों पर इस अध्याय में चर्चा है। अंतत: यह अध्याय, विनियमन और पर्यवेक्षण की संभावित भावी भूमिका को, वित्तीय प्रणालियों को प्रभावित करते हुए विविध गतिविधियों के संदर्भ में, चित्रित करता है।

1.10 अध्याय VI, जिसका शीर्षक ''वित्तीय बाज़ार विकास और वैश्वीकरण'' है, वित्तीय बाज़ारों द्वारा आर्थिक प्रगति के संवर्द्धन में अदा की गई निर्णायक भूमिका को प्रदर्शित करता है। वित्तीय बाजारों की उन्नति में केंद्रीय बैंक की कार्यशीलता के मूलाधार को रेखांकित करते हुए, यह अध्याय वित्तीय बाज़ारों के विकास संबंधी मुद्दों का व्यापक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इस पृष्ठभूमि में यह, मुद्रा, सरकारी प्रतिभूतियों और भारत में विदेशी मुद्रा बाजारों के विकास में रिज़र्व बैंक की भूमिका को दर्शाता है। वृद्धि, विकास और भारत में वित्तीय बाजारों की विशेषताओं को दो चरणों, अर्थात् सुधार पूर्व (1990 से पहले) और सुधारोत्तर (1990 के प्रारंभ से) कालावधियाँ, में बताया गया है। इसके अतिरिक्त अध्याय, संस्थागत, कानूनी, प्रौद्योगिकीय और विनियामक ढाँचों और उपकरणों के अनुसंधानों के विकास को इन चरणों के माध्यम से प्रस्तुत करता है। यह बाज़ार एकीकरण और चंचलता के मुद्दों को विश्लेषित करता है तथा असमंजसता और चुनौतियों को रेखांकित करता है। अध्याय, वित्तीय बाजारों के विकास में रिज़र्व बैंक की बदलती भूमिका को, उदारीकरण और वैश्वीकरण, मौद्रिक नीति संचरण तंत्र के विकास, कानूनी और संस्थागत इंफ्रास्ट्रक्चर द्वारा प्रस्तुत अड़चनों के संदर्भ में उजागर करता है और अंत में भविष्य की चुनौतियों को रेखांकित करता है।

1.11 अध्याय VII, जिसका शीर्षक ''मौद्रिक और राजकोषीय विचार विमर्श के मुद्दे'' है, मौद्रिक और राजकोषीय विचार विमर्श की प्रमुख घटनाओं को, रिज़र्व बैंक की शुरुआत से विश्लेषित करता है और राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध (एफआरबीएम) अधिनियम, 2003 लागू करने के परिप्रेक्ष्य में भावी चुनौतियों की चर्चा करता है। यह अध्याय, वैश्विक परिप्रेक्ष्य में, विषय के विकास, सिद्धांत और विश्लेषणात्मक ढांचे को अनुरेखित करता है। यह मानते हुए कि मौद्रिक राजकोषीय विचार विमर्श रूपात्मकता देश विशिष्ट है, मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों की निरंतरता और अनुपूरकता, जो कि बाज़ार विश्वास और मुद्रा स्थायित्व के लिए पूर्वापेक्षित हैं, को रेखांकित किया है। भारत में मौद्रिक राजकोषीय विचार विमर्श की विकास प्रक्रिया को तीन चरणों में, अर्थात् रचनात्मक चरण (1935-1950); राजकोषीय दबदबा एवं मौद्रिक समायोजन चरण (1950-1991) और समष्टि आर्थिक संकट, सुधारों तथा उनके प्रभाव का चरण (1991-2003), अनुक्रमित किया गया है। चूँकि रिज़र्व बैंक द्वारा सार्वजनिक ऋण प्रबंध, भारत में मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी है, यह अध्याय इस क्षेत्र की घटनाओं का, नियम-आधारित राजकोषीय समेकन ढांचे में, निष्क्रिय से सक्रिय ऋण प्रबंध कार्यनीति बदलाव का (2003-2005) वर्णन करता है। राजकोषीय जवाबदेही एवं बजट प्रबंध अधिनियम के परिप्रेक्ष्य में, 2005-2009 की अवधि के लिए, राजकोषीय और मौद्रिक समन्वय का एक विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है। अंत में अध्याय समापन टिप्पणी के रूप में, भारत में मौद्रिक राजकोषीय विचार विमर्श का मूल्यांकन करते हुए, कतिपय मुद्दों को प्रमुखता से उजागर करता है।

1.12 किसी मुद्रा प्राधिकारी का तुलन-पत्र अनोखा होता है क्योंकि एक तरफ केंद्रीय बैंक मुद्रा सृजन का स्रोत है और दूसरी ओर वह सरकार, बैंकिंग और वित्तीय प्रणाली के साथ केंद्रीय बैंक के संबंधों को प्रतिबिंबित करता है। आठवाँ अध्याय जिसका शीर्षक 'रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र' है, केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के पहलुओं और भारतीय अर्थव्यवस्था के विकासगति के साथ उसके अनुबंधों को, मुद्रा प्राधिकारी, ऋण प्रबंधक और बैंकिंग क्षेत्र और वित्तीय बाज़ारों के विनियामक के रूप में केंद्रीय बैंक की जटिल भूमिका को दर्शाते हुए, रेखांकित करता है। चयनित देश-अनुभवों की पृष्ठभूमि में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का एक विश्लेषणात्मक खाता प्रस्तुत है। केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के विश्लेषणों का विहंगम रूप प्रस्तुत करते हुए, अध्याय, केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में, सुरक्षित मुद्रा के सृजन के अनुसार अंतर्निहित मूलभूत मौद्रीकरण का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है। और इसके अतिरिक्त, देश अनुभवों से केंद्रीय बैंक तुलन पत्र को बनाने और प्रस्तुत करने पर ध्यान केंद्रित करने के अलावा यह केंद्रीय बैंकों में आस्तियों और देयताओं की बनावट, पूंजी और संचय निधि की अवस्था को लेकर मतभेदों के साथ अनेक मुद्दों को, केंद्रीय बैंकों को सौंपी जिम्मेदारियों में मतभेदों को भी दर्शाते हुए, वर्णन करता है। सरकार और केंद्रीय

बैंक के बीच लाभ वितरण प्रक्रिया के संबंध में, पूंजी और संचय निधि की अवस्था तथा देश अनुभवों के मुद्दों का भी विचार किया गया है।

1.13 रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र का एक विस्तृत विश्लेषण, शासन बदलाव की पृष्ठभूमि में, मौद्रिक नीति विकास और बदलते हुए समष्टि आर्थिक पर्यावरण के अनुसार प्रस्तुत किया गया है। विश्लेषण चार चरणों, रचनात्मक चरण (1935-1949); आधार चरण (1950-1967); सामाजिक नियंत्रण चरण (1968-1990); और वित्तीय उदारीकरण चरण (1991 से आगे), में किया गया है। अध्याय, रिज़र्व बैंक के बदलते रूप पर, उसके सर्जन (घरेलू के मुकाबले अंतरराष्ट्रीय आस्तियाँ), सरकार को समर्थन, मात्रा और वित्तीय प्रणाली के वित्तपोषण की शर्तें, विदेशी मुद्रा भंडार का निर्माण और रिज़र्व बैंक के आय की रूपरेखा पर उसके प्रभाव के आकलन को, जैसा कि तुलन पत्र में प्रतिबिंबित होता है, व्यापक रूप से विचार करता है। वैश्विक घटनाओं की तरह रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र लेखांकन और प्रकटन मानकों में अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम प्रणालियों को अपनाने की ओर, एक स्पष्ट बदलाव दर्शाता है। लेखांकन प्रथाओं का विकास भी शामिल किया गया है। अध्याय इसके अतिरिक्त, रिज़र्व बैंक और उसके घटकों के लाभ-हानि खातों का विश्लेषण करता है। इसके अलावा, आय-व्यय की प्रवृत्तियों और लाभ का केंद्रीय सरकार को अंतरण संबंधी मुद्दों का भी विस्तृत विवरण दिया गया है। केंद्रीय बैंक लेखा में पारदर्शिता, केंद्रीय बैंकों में जोखिम प्रबंध और संभाव्यता संचयनिधि संबंधित मुद्दों पर विचार किया गया है। अंतत:, उभरते मुद्दों और रिज़र्व बैंक के नीति कार्यों पर उनके संभाव्य असर के निर्धारण का प्रयास किया गया है।

1.14 अध्याय IX जिसका शीर्षक ''संगठनात्मक विकास और कार्यनीतिक आयोजना'' है, रिज़र्व बैंक में उसकी संस्थापना से, संगठनात्मक विकास एवं व्यवस्था वृद्धि को रेखांकित करता है और उसकी बदलती भूमिका और वर्षों से अपनाए गए कार्यों को बताता है। अध्याय, रिज़र्व बैंक द्वारा, आर्थिक और वित्तीय प्रणाली में उभरते मुद्दों को भलीभांति जवाब देने के लिए, संगठनात्मक पुनर्रचना के लिए किए गए उल्लेखनीय उपायों के साथ मानवशक्ति प्रबंध को दर्शाता है। आजकल, केंद्रीय बैंकिंग पर किसी भी बहस में कार्यनीतिक आयोजना अग्रणी रहती है। इस पृष्ठभूमि में अध्याय, रिज़र्व बैंक की कार्यनीतिक आयोजना संबंधी पहलों का, ठोस उद्देश्यों को स्थापित करने और मध्यम अवधि में उनकी उपलब्धि के लिए, वर्णन करता है। अध्याय, इस क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) की कुछ पहलों को रेखांकित करता है और आंतरिक एवं बाह्य पर्यावरण के बदलते हुए माहौल में संगठनात्मक कायापलट के सफलतापूर्वक अंशांकन में रिज़र्व बैंक के प्रयत्नों को प्रमुखता से उजागर करता है।

1.15 अंतिम अध्याय X जिसका शीर्षक ''समापन टिप्पणियाँ'' है, भारत में केंद्रीय बैंकिंग से संबंधित विभिन्न मुद्दों पर कुछ अंतिम विचारों को परिभाषित करता है।

II हाल की आर्थिक गतिविधियाँ

प्रस्तावना

2.1 उद्योग के निर्माण उप-क्षेत्र में सतत सुधार और सेवा क्षेत्र में अधिक तेज़ी, उप-क्षेत्रों के निर्माण द्वारा पोषित; ''वित्तपोषण, बीमा, स्थावर संपत्ति और व्यवसाय सेवाएं''; ''व्यापार, होटलों, परिवहन और संप्रेषण''; और ''समुदाय, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं'', भारतीय अर्थव्यवस्था की जारी विकास वृद्धि संवेग की प्रभावशाली विशेषताएं हैं। वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद (जी डी पी) की वृद्धि में 2004-05 में कुछ नरमी आने के बावजूद, उभरते एशिया में, भारत तीव्रतम उभरती अर्थव्यवस्थाओं में से था। अनुकूल निवेश वातावरण द्वारा प्रोत्साहित, अनुकूल कंपनी परिणामों, बढ़ते हुए विनिर्माण निर्यात, घरेलू माँग में वृद्धि और उदारीकृत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफ डी आइ) व्यवस्था से औद्योगिक विकास फैला। यह, निवेशों में तेज़ी को रेखांकित करते हुए गैर खाद्य ऋण में सुदृढ़ सुधार, बढ़े हुए उत्पादन और पूंजी बाज़ारों द्वारा पुष्ट पूंजीगत माल के आयात द्वारा पूर्ण किया गया। व्यापार विश्वास सूचकांक उत्साही थे। वित्तीय 2005-06 में दक्षिण-पश्चिमी मानसून की देरी के बावजूद, गैर खाद्य ऋण में उछाल, अपेक्षित निवेश क्रियाओं में गति और सेवा क्षेत्रों में मजबूती आगामी वित्तीय वर्ष के लिए समष्टि आर्थिक दृष्टिकोण के उत्साह की पुष्टि करते हैं। रिज़र्व बैंक ने, वार्षिक नीति वक्तव्य (अक्तूबर 2005) की मध्यावधि समीक्षा में, वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद के वृद्धि अनुमानों को अप्रैल 2005 में लगभग 7.0 प्रतिशत से 7.0-7.5 प्रतिशत तक और जनवरी 2006 में वार्षिक नीति वक्तव्य की तीसरी तिमाही समीक्षा में 7.5-8.0 प्रतिशत तक, कृषि संबंधी उत्पादन में सुधार के मूल्यांकन के अलावा औद्योगिक और सेवा क्षेत्र में जारी उछाल के आधार पर, संशोधित कर दिया। केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (सी एस ओ) द्वारा जारी किए गए अग्रिम अनुमानों ने 2005-06 के लिए वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि 8.1 प्रतिशत (1999-2000 मूल्य) आंकी है जो कि रिज़र्व बैंक के अनुमानों के अनुरूप है। यह वृद्धि, कृषि क्षेत्र में तेज़ी उद्योग द्वारा दर्ज सुदृढ़ विकास और सेवा क्षेत्रों के प्रभावी कार्यनिष्पादन से समर्थित है।

2.2 कच्चे तेल की अंतरराष्ट्रीय कीमतों में तीव्र वृद्धि से मुद्रास्फीतीय दबाव ने, रिज़र्व बैंक द्वारा, अपेक्षित विकास संवेग को कायम रखते हुए, एक प्रगतिशील जवाबी नीति का प्रतिपादन आवश्यक बना दिया। यद्यपि मुद्रास्फीति बहुत नियंत्रित रही, अंतरराष्ट्रीय तेल कीमतों में जारी अनिश्चितता के कारण सावधानी उचित है विशेषतः चूँकि तेल कीमतों की अंतरराष्ट्रीय वृद्धि का घरेलू अर्थव्यवस्था में प्रचलन/पास-थ्रू अभी तक अधूरा है।

2.3 राजकोषीय वर्ष में वित्तीय बाज़ार स्थिर और व्यवस्थित रहे। माल एवं परोक्ष निर्यात सुदृढ़ रहे जबकि आयात विस्तार (तेल और पूंजीगत माल का आयात) उत्पादकता स्तरों और निर्यात विकास बढ़ा रहा है। 2001-02 से पहले तीन वर्षों में अधिशेष में रहने के बाद 2004-05 के दौरान चालू खाते ने घाटा दर्ज किया। शुद्ध परोक्ष अर्जन में उछाल चालू खाते की अधिशेष स्थिति को उक्त अवधि के दौरान रेखांकित करता है। फिर भी भुगतान संतुलन की स्थिति सतर्क निगरानी को जरूरी बनाता है। पूंजी अंतर्वाह की एक सकारात्मक विशेषता गैर-ऋण अंतर्वाह है; ऋण प्रवाह मध्यम दर्जे का रहा।

2.4 इस विहंगम रूपरेखा में,यह अध्याय, अब तक 2005-06 में समष्टि आर्थिक गतिविधियों का एक लेखा प्रस्तुत करता है। खंड I वास्तविक क्षेत्र की गतिविधियों पर प्रकाश डालता है.खंड II केंद्रीय और राज्य सरकार के अर्थ प्रबंध की झाँकी प्रस्तुत करता है। खंड III मौद्रिक एवं /ऋण गतिविधियों पर, मुद्रास्फीति की प्रवृत्तियों के साथ, ध्यान केंद्रित करता है। खंड IV वित्तीय बाज़ारों की गतिविधियों पर चर्चा करता है। खंड V बाह्य क्षेत्र और खंड VI समापन टिप्पणियों को रेखांकित करता है।

I. वास्तविक क्षेत्र

राष्ट्रीय आय

2.5 भारतीय अर्थव्यवस्था ने 2004-05 के दौरान एक सुदृढ़ वृद्धि कार्यनिष्पादन को प्रदर्शित किया। 2003-04 में 8.5 प्रतिशत वृद्धि की तुलना में 2004-05 (1999-00 कीमतें) के दौरान वास्तविक जीडीपी वृद्धि 7.5 प्रतिशत थी। ''कृषि और सहायक गतिविधियों'' से उत्पन्न वास्तविक जीडीपी की वृद्धि, 2004-05 के दौरान पिछले वर्ष के 10.0 प्रतिशत से 0.7 प्रतिशत तक तेजी से घटी। यह असमान और अपूर्ण दक्षिण-पश्चिम मानसून के अलावा 2003-04 के ऊंचे विकास के आधार प्रभाव के कारण हुआ (सारणी 2.1 और चार्ट II.1)। ''कृषि और सहायक गतिविधियों'' में वृद्धि ह्रास को कुछ हद तक उद्योग और सेवा क्षेत्र की गतिविधियों की मजबूती द्वारा सहारा मिला। तदनुसार, उद्योग से उत्पन्न वास्तविक जीडीपी वृद्धि 7.4 प्रतिशत तक बढ़ी क्योंकि 2004-05 के दौरान, विनिर्माण क्षेत्र की अगुआई में, औद्योगिक वसूली विस्तरित और मजबूत हुई। विनिर्माण उप क्षेत्र में उछाल, अनुकूल घरेलू निवेश

सारणी 2.1 : वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद
(आधार वर्ष : 1999-2000)

(प्रतिशत)

क्षेत्र	2001-02	2002-03	2003-04 अनं. अनु.	2004-05 शी.अनु.	2005-06 अग्रि.अनु.
1	2	3	4	5	6
विकास दर					
1. कृषि और सहायक गतिविधियाँ	**6.2**	**-6.9**	**10.0**	**0.7 (1.1)**	**2.3**
1.1 कृषि	6.5	-7.8	10.7	0.7	..
2. उद्योग	**2.4**	**6.8**	**6.6**	**7.4 (8.3)**	**8.0**
2.1 विनिर्माण	2.5	6.8	7.1	8.1 (8.9)	9.4
2.2 खनन और उत्खनन	1.8	8.7	5.3	5.8 (5.3)	1.0
2.3 विद्युत, गैस और जल आपूति	1.7	4.8	4.8	4.3 (6.3)	5.4
3. सेवाएं	**6.8**	**7.3**	**8.5**	**10.2 (8.6)**	**10.1**
3.1 व्यापार, होटेल और रेस्टोरेंट	9.6	6.7	10.2	8.1 (11.3) $	11.1$
3.2 परिवहन, भंडारण और संप्रेषण	8.3	13.7	15.2	14.8	..
3.3 वित्तपोषण, बीमा, वास्तविक संपत्ति और व्यापार सेवाएं	7.3	8.0	4.5	9.2 (7.1)	9.5
3.4 निर्माण	4.0	7.7	10.9	12.5 (5.7)	12.1
3.5 समुदाय, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं	3.9	3.8	5.4	9.2 (6.0)	7.9
4. सकल देशी उत्पाद लागत पर	**5.8**	**3.8**	**8.5**	**7.5 (6.9)**	**8.1**
क्षेत्र संबंधी संघटना					
1. कृषि और सहायक गतिविधियाँ	24.4	21.9	22.2	20.8	19.7
2. उद्योग	19.3	19.9	19.5	19.5	19.5
3. सेवाएं	56.3	58.3	58.3	59.7	60.9
4. कुल	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**
ज्ञापन : वास्तविक जीडीपी घटक लागत पर (करोड़ रुपए)	19,78,055	20,52,586	22,26,041	23,93,671	25,86,587

.. नहीं उपलब्ध. अनं. अनु. : अनंतिम अनुमान. शी.अनु. : शीघ्र अनुमान. अग्रि.अनु. : अग्रिम अनुमान.
$ 'व्यापार, होटेल और रेस्टोरेंट' और 'परिवहन, भंडारण और संप्रेषण' शामिल हैं। 2004-05 में 1999-00 कीमतों पर विकास दर 10.6 प्रतिशत थी।
सूचना : सी एस ओ द्वारा जून 2005 में जारी किए गए संशोधित अनुमानों के अनुसार (1993-94 कीमतों पर) कोष्ठक में दिए गए आँकड़े विकास के प्रतिशत हैं।
स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन

वातावरण, विश्व उत्पादन में सुधार, एक उदारीकृत प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफ डी आइ) व्यवस्था और बढ़ते हुए विनिर्माण निर्यात द्वारा प्रेरित हुआ। अपने सभी उप क्षेत्रों के सुदृढ़ विकास कार्यनिष्पादन से समर्थित, सेवा क्षेत्र ने वृद्धि प्रक्रिया को स्थिर रखा और प्रभावी विकास को दर्ज किया।

2.6 राजकोषीय वर्ष 2005-06 एक उत्साहजनक वातावरण में शुरू हुआ। भारतीय मौसमविज्ञान विभाग (आइ एम डी) ने वर्ष 2005 के लिए दक्षिण- पश्चिमी मानसूनी वर्षा का पूर्वानुमान सामान्य किया था (दीर्घावधि औसत [एल पी ए] 98 प्रतिशत +/- 4 प्रतिशत मॉडल त्रुटि के साथ)। औद्योगिक विकास निष्पादन में उछाल और कृषि उत्पादन में उन्नति के आकलन के साथ, जीडीपी विकास को समर्थन देने में सेवा क्षेत्र की क्षमता, की पृष्ठभूमि में भारतीय अर्थव्यवस्था 2005-06 में एक मजबूत विकास निष्पादन के लिए तैयार है। इस कारण रिजर्व बैंक ने अक्तूबर 2005 में, वर्ष 2005-06 के लिए वार्षिक नीति वक्तव्य की मध्यावधि समीक्षा में, जीडीपी विकास का पूर्वानुमान 7.0-7 .5 प्रतिशत से, जनवरी 2006 में वार्षिक नीति वक्तव्य की तीसरी तिमाही समीक्षा में, अप्रैल 2005 में अपने प्रारंभिक अनुमान लगभग 7.0 प्रतिशत के बदले 7.5-8.0 प्रतिशत कर दिया। अन्य राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय संगठनों ने भी वास्तविक जी डी पी विकास दरों का, इस परास (रेंज) के निकट पूर्वानुमान किया (सारणी 2.2)। 7 फरवरी 2006 को सीएसओ द्वारा प्रकाशित अग्रिम आकलनों के अनुसार, 2005-06 के लिए वास्तविक जीडीपी विकास दर का पूर्वानुमान 8.1 प्रतिशत है (आधार

चार्ट II.1: कारक लागत पर जीडीपी की वार्षिक वृद्धि दर (1999-2000 की कीमतों पर)

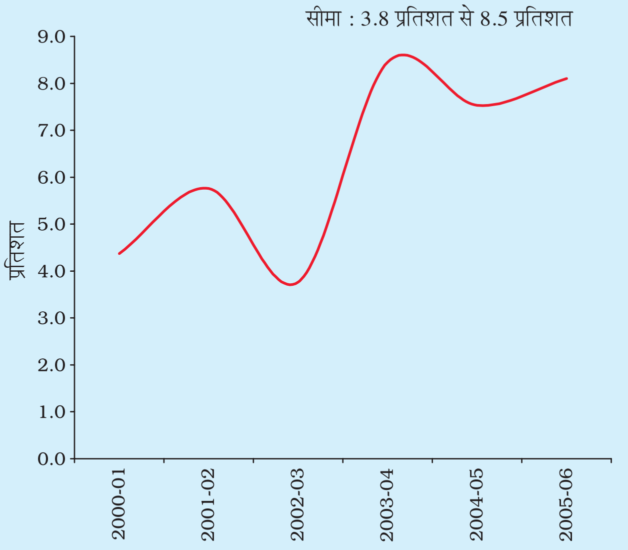

सारणी 2.2 : वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में विकास, 2005-06 : भारत के लिए पूर्वानुमान $

(प्रतिशत)

एजेंसी	प्रारंभिक	संशोधित / नवीनतम	अनुमान का महीना
1	2	3	4
एशियाई विकास बैंक	6.9	6.9	सितंबर 2005
निगरानी केंद्र भारतीय अर्थव्यवस्था	6.6	7.8	मध्य-फरवरी 2006
भारतीय उद्योग संघटन	7.2	8.0 से ऊपर	फरवरी 2006 की समालप्त
ऋण साखदर सूचना	7.0	7.0	सितंबर 2005 की समालप्त
राष्ट्रीय प्रायोगिक आर्थिक अनुसंधान परिषद	7.2	7.8	प्रारंभिक फरवरी 2006
अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष	6.7	7.1	सितंबर 2005
रिजर्व बैंक	लगभग 7.0	7.5-8.0	जनवरी 2006*
ज्ञापन :			
परास	6.6-7.2	6.9-8.0	

$ जीडीपी का पूर्वानुमान आधार वर्ष 1993-94 पर आधारित है, सिवाय सीएमआइ के और सीआइआइ के नवीनतम पूर्वानुमानों के जो आधार वर्ष 1999-2000 पर आधारित हैं।

* वर्ष 2005-06 के लिए वार्षिक नीति की तीसरी तिमाही समीक्षा।

वर्ष : 1999-2000) जो कि रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए विकास अनुमानों के निकट है। क्षेत्रवार स्तर पर, कृषि संबंधी और औद्योगिक क्षेत्रों के विकास त्वरित हुए, परवर्त्ती अपने दो उप-क्षेत्रों, अर्थात्, विनिर्माण और ''विद्युत, गैस और जल आपूर्ति'', के विकास में सुधार को दर्शाता है। तथापि, 2005-06 में सेवाओं में वृद्धि, 2004-05 की बनिस्बत, थोड़ी कम रही। यह, ''समुदाय, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं'', ''व्यापार, होटेलों, परिवहन और संप्रेषण'' और निर्माण के उप-क्षेत्रों में अवत्वरण, उप-क्षेत्र ''वित्तपोषण, बीमा, वास्तविक संपत्ति और कारोबार सेवाएं'' के विकास दर में सुधार के बावजूद, के कारण हुआ (सारणी 2.1)। वास्तविक जीडीपी के त्रैमासिक विकास दरों के नवीनतम उपलब्ध आंकड़े (1999-2000 कीमतों पर) दर्शाते हैं कि वास्तविक जीडीपी विकास की दरें, 2005-06 के पहले तीन तिमाहियों में, पिछले वर्ष की अनुरूप तिमाहियों की तुलना में, उच्चतर हैं। 2005-06 की तीसरी तिमाही में वास्तविक जीडीपी विकास दरों में वृद्धि, 2004-05 की अनुरूप तिमाही के मुकाबले, कृषि संबंधी क्षेत्र के विकास में एक तीव्र समुत्थान द्वारा प्रेरित थी। 2005-06 की तीसरी तिमाही के दौरान उद्योग और सेवा क्षेत्रों ने अपनी विकास दरों में मंदी दर्ज की (सारणी 2.3)।

2.7 इस दर से बढ़ता भारत, एशिया की उभरती बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में, एक तीव्रगति से विकसित अर्थव्यवस्था, बना रहेगा (सारणी 2.4)।

सारणी 2.3 : सकल घरेलू उत्पाद की त्रैमासिक विकास दरें (1999-2000 कीमतों पर)

(प्रतिशत)

उद्योग	2004-05			2005-06		
	पहली तिमाही	दूसरी तिमाही	तीसरी तिमाही	पहली तिमाही	दूसरी तिमाही	तीसरी तिमाही
1	2	3	4	5	6	7
1. कृषि और सहायक गतिविधियाँ	**3.5**	**-0.2**	**-1.2**	**1.4**	**2.4**	**3.4**
2. उद्योग	**6.6**	**8.0**	**8.1**	**9.9**	**6.7**	**7.1**
2.1 विनिर्माण	6.6	8.3	9.2	11.3	8.6	8.4
2.2 खनन और उत्खनन	8.2	6.0	5.7	3.7	-1.9	0.6
2.3 विद्युत, गैस और जल आपूर्ति	4.9	7.9	3.1	6.9	2.2	4.4
3. सेवाएं	**10.1**	**8.4**	**10.7**	**10.0**	**10.0**	**9.7**
3.1 व्यापार, होटल, परिवहन और संप्रेषण	10.6	11.2	9.7	11.7	11.2	10.3
3.2 वित्तपोषण, बीमा, वास्तविक संपत्ति और कारोबार सेवाएं	8.8	7.5	9.7	8.7	9.8	9.1
3.3 निर्माण	9.9	7.9	22.0	12.4	12.3	11.5
3.4 समुदाय, सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं	10.7	4.8	8.5	7.0	7.3	8.1
4. घटक लागत पर सकल घरेलू उत्पाद	**7.9**	**6.7**	**7.0**	**8.1**	**8.0**	**7.6**

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन।

सारणी 2.4 : उत्पादन विकास : क्षेत्र-पार तुलना

(प्रतिशत)

देश	औसत 1997-2005	1997	1998	1999	2000	2001	2002	2003	2004	2005 अ
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
विश्व	**3.8**	**4.2**	**2.8**	**3.7**	**4.7**	**2.4**	**3.0**	**4.0**	**5.1**	**4.3**
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**2.7**	**3.5**	**2.6**	**3.5**	**3.9**	**1.2**	**1.5**	**1.9**	**3.3**	**2.5**
अन्य उभरते बाज़ार और विकासशील देश	**5.2**	**5.2**	**3.0**	**4.0**	**5.8**	**4.1**	**4.8**	**6.5**	**7.3**	**6.4**
अर्जेंटीना	2.0	8.1	3.8	-3.4	-0.8	-4.4	-10.9	8.8	9.0	7.5
बांगलादेश	5.4	5.3	5.0	5.4	5.6	4.8	4.8	5.8	5.8	5.7
ब्राज़ील	2.3	3.3	0.1	0.8	4.4	1.3	1.9	0.5	4.9	3.3
चिली	3.9	6.6	3.2	-0.8	4.5	3.4	2.2	3.7	6.1	5.9
चीन	8.4	8.8	7.8	7.1	8.0	7.5	8.3	9.5	9.5	9.0
भारत	**5.9**	**5.0**	**5.8**	**6.7**	**5.4**	**3.9**	**4.7**	**7.4**	**7.3**	**7.1@**
इंडोनेशिया	2.3	4.5	-13.1	0.8	4.9	3.8	4.4	4.9	5.1	5.8
मलेशिया	4.2	7.3	-7.4	6.1	8.9	0.3	4.4	5.4	7.1	5.5
मैक्सिको	3.5	6.7	4.9	3.9	6.6	-0.2	0.8	1.4	4.4	3.0
पाकिस्तान	4.3	1.8	3.1	4.0	3.0	2.5	4.1	5.7	7.1	7.4
फ़िलीपीन्स	3.8	5.2	-0.6	3.4	4.4	1.8	4.4	4.5	6.0	4.7
श्री लंका	4.5	6.4	4.7	4.3	6.0	-1.5	4.0	6.0	5.4	5.3
थाइलैंड	2.4	-1.4	-10.5	4.4	4.8	2.2	5.3	6.9	6.1	3.5

अ : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष अनुमान।
@ जैसा कि वर्ष 2005-06 के लिए वार्षिक नीति वक्तव्य की तीसरी तिमाही समीक्षा में निर्दिष्ट किया गया, भरतीय रिज़र्व बैंक का वित्तीय वर्ष 2005-06 के लिए अनुमान 7.5-8.0 प्रतिशत है।
स्रोत : विश्व आर्थिक दृष्टिकोण, सितंबर 2005।

बचत और निवेश

2.8 सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा उच्चतर सकारात्मक बचत दर दर्ज करने और निजी कंपनी क्षेत्र के बचत दर में सुधारों के कारण, सकल घरेलू बचत (जीडीएस) की दर में, चालू बाज़ार मूल्यों पर जीडीपी के अनुपात में, भरपूर वृद्धि हुई, 2002-03 में 26.5 प्रतिशत से 2003-04 में 28.9 प्रतिशत और 2004- 05 में 29.1 प्रतिशत तक (सारणी 2.5 और चार्ट II.2)। 29.1 प्रतिशत जीडीएस की दर उच्चतम प्राप्त दर थी। घरेलू क्षेत्र 2004-05 में, अपने 22.0

सारणी 2.5 : सकल घरेलू बचत और निवेश
(आधार वर्ष : 1999-2000)

(चालू बाज़ार कीमतों पर जीडीपी का प्रतिशत)

परिवर्ती	1999-00	2000-01	2001-02	2002-03	2003-04 अनं.अनु.	2004-05 शी.अनु.
1	2	3	4	5	6	7
1. सकल घरेलू बचत(जीडीएस) (1.1+1.2+1.3)	**24.9**	**23.5**	**23.6**	**26.5**	**28.9 (28.1)**	**29.1**
1.1 घरेलू बचत	21.3	21.2	22.0	23.1	23.5 (24.3)	22.0
a) वित्तीय आस्तियाँ	10.5	10.2	10.8	10.3	11.5 (11.4)	10.3
b) शारीरिक आस्तियाँ	10.7	11.0	11.2	12.7	12.0 (13.1)	11.7
1.2 निजी कंपनी क्षेत्र	4.5	4.1	3.6	4.1	4.4 (4.1)	4.8
1.3 सार्वजनिक क्षेत्र	-0.9	-1.8	-2.0	-0.7	1.0 (-0.3)	2.2
2. सकल घरेलू पूंजी निर्माण (जीडीसीएफ) #	**26.0**	**24.2**	**23.0**	**25.3**	**27.2 (26.3)**	**30.1**
3. बचत-निवेश शेष (1-2)	**-1.1**	**-0.6**	**0.6**	**1.2**	**1.6**	**-1.0**
4. सकल पूंजी निर्माण (4.1+4.2+4.3+4.4)	**26.1**	**24.3**	**24.3**	**25.3**	**26.3 (23.0)**	**28.5**
4.1 घरेलू क्षेत्र	10.7	11.0	11.2	12.7	12.0 (13.0)	11.7
4.2 निजी कंपनी क्षेत्र	7.2	5.7	5.6	5.8	6.8 (4.5)	8.2
4.3 सार्वजनिक क्षेत्र	7.5	6.9	6.9	6.2	6.5 (5.6)	7.2
4.4 बहुमूल्य @	0.8	0.7	0.6	0.6	0.9	1.3

अनं. अनु. : अनंतिम अनुमान. शी.अनु. : शीघ्र अनुमान.
त्रुटियों और चूक के लिए समायोजित । @ कलाकृतियों और पुरातन वस्तुओं को छोड़कर मूल्यवान वस्तुओं के अभिग्रहण पर किए गए खर्च को बहुमूल्य प्रतिपादित करता है।
टिप्पणी : 1) कोष्ठक में दिए गए आँकड़े, सीएसओ द्वारा जनवरी 2005 में जारी किए गए शीघ्र अनुमानों से संबंधित हैं (आधार वर्ष : 1993-94)।
2) आँकडों का योग, पूर्ण करने के कारण, संभवत: जोड़ के बराबर न हो।
स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन.

चार्ट II.2: संस्थागत स्रोतों द्वारा बचत (आधार वर्ष: 1999-2000)

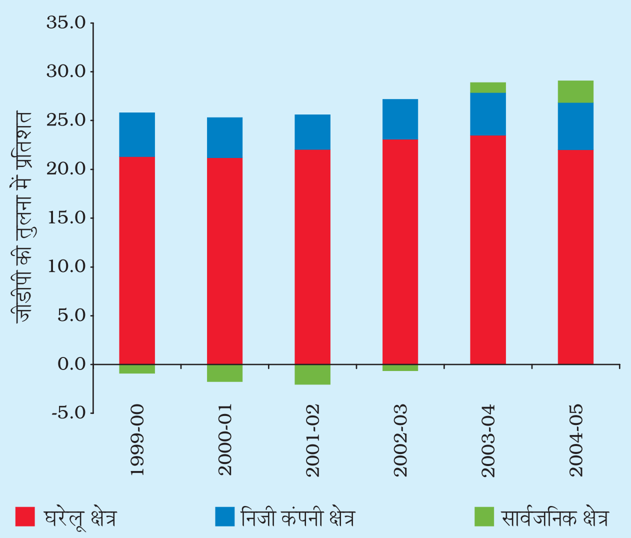

चार्ट II.3: संस्थागत स्रोतों द्वारा सकल पूंजी निर्माण (आधार वर्ष: 1999-2000)

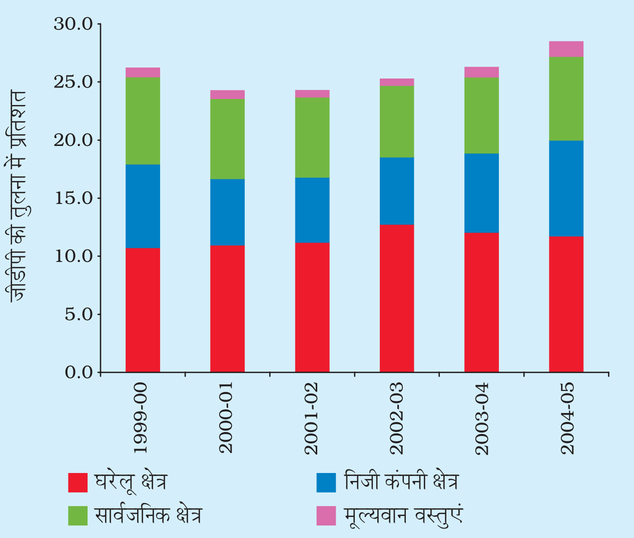

प्रतिशत बचत दर से, जीडीएस का प्रमुख अंशदाता कायम रहा। 1999-00 से, घरेलू क्षेत्र की बचत दर, स्थूल आस्तियों के रूप में, वित्तीय आस्तियों के दर से अधिक रही। 2002-03 से निजी निगमों की बचत लगातार बढ़ रही है जो कि लाभों की महत्त्वपूर्ण वृद्धि को दर्शाता है। सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के अच्छे कार्यनिष्पादन के कारण 2003-04 में 1.0 प्रतिशत से बढ़कर, सार्वजनिक क्षेत्र ने भी 2004-05 में 2.2 प्रतिशत के सकारात्मक बचत दर को दर्ज किया।

2.9 सकल पूंजी निर्माण (जीएसएफ) की दर ने, सार्वजनिक और निजी कंपनी निवेशों में सुधार के कारण 2004-05 में, 2003-04 की अपेक्षा, उल्लेखनीय रूप से सुधार दर्ज किया। निवेश दर में वृद्धि, बचत दर की वृद्धि से भी अधिक थी। इसका परिणाम, 2004-05 में समग्र बचत-निवेश शेष में 1.0 प्रतिशत घाटे में, 2003-04 में 1.6 प्रतिशत अधिशेष की तुलना में, हुआ। (सारणी 2.6 और चार्ट II.3)

2.10 उद्योग एवं सेवा क्षेत्रों द्वारा बताए गए उत्तम कार्यनिष्पादन, हाल की ऊंची विकास दर के महत्वपूर्ण लक्षण हैं। वास्तव में, चीन और अन्य उभरते एशियाई देशों की तुलना में जहाँ उच्च विकास विनिर्माण क्षेत्र द्वारा मार्गदर्शित है, सेवा क्षेत्र हाल के दिनों में भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास प्रेरक के रूप में उभरा है। भारत में विनिर्माण

सारणी 2.6 : बचत-निवेश जमाशेष (आधार वर्ष : 1999-2000)

(चालू बाज़ार कीमतों पर जीडीपी का प्रतिशत)

मद	1999-00	2000-01	2001-02	2002-03	2003-04 अनं. अनु.	2004-05 शी.अनु.
1	2	3	4	5	6	7
बचत-निवेश जमाशेष (जीडीपी-जीडीसीएफ)	-1.1	-0.6	0.6	1.2	1.6	-1.0
निजी क्षेत्र *	7.8	8.6	8.8	8.6	9.0	6.9
सार्वजनिक क्षेत्र *	-8.3	-8.7	-8.9	-6.8	-5.5	-5.0
चालू खाता जमाशेष	-1.0	-0.6	0.7	1.3	2.3	-0.8
ज्ञापन :						
बहुमूल्य@	0.8	0.7	0.6	0.6	0.9	1.3

* निजी और सार्वजनिक निवेश सकल पूंजी निर्माण (जीसीएफ) को बताते हैं, त्रुटियाँ और चूक समायोजित नहीं हैं ।

@ सकल पूंजी निर्माण में शामिल किए गए बहुमूल्य के अधिग्रहण पर किए गए खर्च को बहुमूल्य प्रतिपादित करता है।

जीडीएस : सकल घरेलू बचत, जीडीसीएफ : सकल घरेलू पूंजी निर्माण

अनं. अनु. : अनंतिम अनुमान, शी.अनु. : शीघ्र अनुमान.

टिप्पणी : सीएसओ और रिजर्व बैंक आंकड़ों से व्युत्पन्न त्रुटियों और चूक के कारण घटक जोड़ के बराबर नहीं हैं।

ने, उद्योग के अंदर, पिछले तीन वर्षों में प्रभावी कार्यनिष्पादन दर्ज किया। और इसके अतिरिक्त, 2004-05 के दौरान प्राप्त 29.1 जीडीएस की दर, जो कि 1950 से अबतक उच्चतम स्तर पर है, अत्यंत प्रोत्साहक है। 2004-05 के दौरान 28.5 प्रतिशत पर निवेश दर भी उल्लेखनीय है। तथापि, बचत और निवेश दरों को, ऊंची विकास गति को बरकरार रखने के लिए, ऐसे ऊंचे स्तरों पर बनाए रखना, एक चिंता का क्षेत्र है।

कृषि

2.11 2004-05 में प्राप्त बाधाओं के बाद, भारतीय कृषि 2005-06 में एक अनुकूल परिवर्तन के लिए तैयार है। वर्षा गतिविधि, यद्यपि मौसम की प्रारंभिक अवधि में मंद रही, बाद में आर्द्रता की मात्रा में सुधार के फलस्वरूप पुनर्जीवित हुई, जो कि खरीफ उत्पादन के लिए शुभ है। दूसरे अग्रिम अनुमानों के अनुसार, 2005-06 के दौरान खाद्यान्न का कुल उत्पादन 209.3 मिलियन टन आँका गया जो कि, पिछले वर्ष के 204.6 मिलियन टन की तुलना में, 2.3 प्रतिशत वृद्धि का द्योतक है। कृषि मंत्रालय ने, फसलों की उपज बढ़ाने के लिए एक फसल-विशिष्ट कार्यनीति, जैसे अवस्थिति विशिष्ट अति-उपजाऊ प्रकार के प्रमाणित/दर्जेदार बीजों की समय से और पर्याप्त उपलब्धता, अंतर फसल को बढ़ावा, जल बचत पद्धतियों का प्रोत्साहन, उर्वरकों का संतुलित प्रयोग और रोग प्रबंध प्रणाली, बनाई।

2.12 आइएमडी द्वारा 2005 के लिए सामान्य दक्षिण-पश्चिम मानसून का पूर्वानुमान करने की पृष्ठभूमि में, मानसून का प्रारंभ देर से हुआ। यद्यपि शुरू में वर्षा गतिविधि धीमी थी, वह बाद में पुनर्जीवित हुई। मानसून की कालिक प्रगति अनियमित थी लेकिन उसका आकाशीय विस्तार संतोषजनक रहा। मानसून पुनर्जीवन के परिणामस्वरूप मिट्टी के साथ जलाशयों की आर्द्रता-मात्रा का आपूरण हुआ।

2.13 2005 के दक्षिण-पश्चिम मानसून के दौरान वर्षा का आकाशीय वितरण, 36 में से 32 मौसमी उप-विभागों में अधिक/सामान्य वर्षा और सिर्फ 4 में अपूर्ण / कम वर्षा दर्ज करते हुए, संतोषजनक रहा (सारणी 2.7 और चार्ट II. 4)। मानसून की अस्थायी प्रगति, जून के पहले तीन सप्ताहों में, संपूर्ण अगस्त और सितंबर 2005 के पहले सप्ताह के दौरान, एक बड़े वृष्टि-अभाव से अंकित रही। तथापि, जून के अंतिम सप्ताह, अधिकांश जुलाई और सितंबर 2005 के दूसरे और तीसरे सप्ताह में, देश में अधिक वर्षा गतिविधि होने से, मानसून की परिस्थितियों में स्पष्ट सुधार हुआ। दक्षिण-पश्चिम मानसून ॠतु (जून 1 से सितंबर 30, 2005) के दौरान, संचयी क्षेत्र-भारित वर्षा, आइडीएम की भविष्यवाणी के साथ, दीर्घावधि औसत (एलपीए) से 1 प्रतिशत नीचे रही।

सारणी 2.7 : संचयी वर्षा

श्रेणी	उप विभागों की संख्या					
	दक्षिण-पश्चिम मानसून			उत्तर-पूर्व मानसून		
	2005	2004	2003	2005	2004	2003
	(जून 1 से सितंबर 30)			(अक्तूबर 1 से दिसंबर 31)		
1	2	3	4	5	6	7
आधिक्य	9	0	7	11	8	9
सामान्य	23	23	26	6	10	9
अपूर्ण	4	13	3	5	17	6
कम वर्षा/ नहीं वर्षा	0	0	0	14	1	12

स्रोत : भारतीय मौसमविज्ञान विभाग (आइ एम डी)।

2.14 जून महीने के दौरान वर्षा दीर्घावधि औसत (एलपीए) से 12 प्रतिशत नीचे थी। तथापि, जुलाई के दौरान, जो कि बुआई प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण है, अधिक वर्षा हुई, अर्थात् एलपीए से 14 प्रतिशत ऊपर, जिसने बुआई प्रक्रियाओं को सहायक पृष्ठभूमि प्रदान की। एलपीए से नीचे 28 प्रतिशत की बड़ी अपूर्णता के साथ अगस्त में मानसून फिर से मंद था। सितंबर में वर्षा एलपीए से 17 प्रतिशत ऊपर थी जिसने देर से बोई गई फसलों को नमी की कमी से राहत दी। चार क्षेत्रों में से, दक्षिण-पश्चिम मानसून वर्षा, मध्य भारत, उत्तर-पश्चिम भारत और दक्षिण प्रायद्वीप के ऊपर क्रमशः एलपीए की 110 प्रतिशत, 90 प्रतिशत और 112 प्रतिशत थी, जबकि उत्तर-

चार्ट II.4: दक्षिण-पश्चिम मानसून-संचित वर्षा (जून से सितंबर)

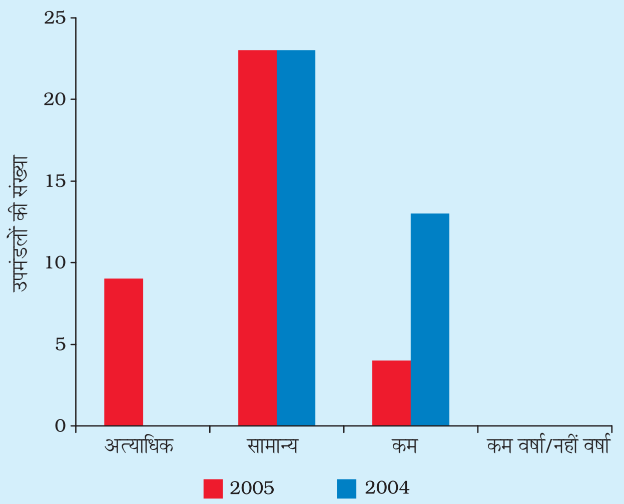

स्रोत: भारतीय मौसम विभाग

सारणी 2.8 : फसल-वार लक्ष्य / उपलब्धियाँ

(मिलियन टन)

फसल	2003-04		2004-05		2005-06	
	ल	उ	ल	अअ $	ल	अअ @
	1	2	3	4	5	6
चावल	93	88.3	93.5	85.3	87.8	87.9
गेहूँ	76	72.1	79.5	72	75.5	73.1
मोटे अनाज	34	38.1	36.8	33.9	36.5	34.0
दालें	16	14.9	15.3	13.4	15.2	14.4
कुल खाद्यान्न	**220**	**213.5**	**225.1**	**204.6**	**215.0**	**209.3**
तिलहन	24.7	25.3	24.7	26.1	26.6	26.4
गन्ना	320	237.3	270	232.3	237.5	266.9
कपास *	15	13.9	15	17	16.5	16.5
जूट और मेस्टा **	12	11.2	11.8	10.5	11.3	10.7

ल : लक्ष्य। उ : उपलब्धि ।
अअ$: चौथा अग्रिम अनुमान ।
अअ@ : दूसरा अग्रिम अनुमान ।
* मिलियन गट्ठों में, प्रत्येक 170 किलोग्राम का।
** मिलियन गट्ठों में, प्रत्येक 180 किलोग्राम का।
स्रोत : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ।

पूर्व भारत के ऊपर वह 20 प्रतिशत से अपूर्ण थी। उप-विभागों के स्तर पर, केवल एक उप-विभाग-झारखंड ने साधारण सूखे की स्थिति को दर्ज किया [1]। उत्तर-पूर्व मानसून (अक्तूबर 1 से दिसंबर 31, 2005) की प्रगति, एलपीए से ऊपर 10 प्रतिशत संचयी वर्षा से, पिछले वर्ष की अनुरूपी अवधि के दौरान एलपीए से नीचे 11 प्रतिशत के विपरीत, संतोषजनक थी। 36 मौसमी उप-विभागों में से, संचयी वर्षा, 17 उप-विभागों में(पिछले वर्ष 18) अधिक/सामान्य और 19 उप-विभागों में (पिछले वर्ष 18) अपूर्ण /कम वर्षा/वर्षा नहीं, थी। 2005-06 के लिए कुल खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य 215 मिलियन टन है (सारणी 2.8)।

खरीफ 2005

2.15 वर्ष 2004 के दौरान, खरीफ खाद्यान्नों के उत्पादन ने प्रतिकूल मानसून परिस्थितियों के कारण, पिछले वर्ष की अपेक्षा 12 प्रतिशत से अधिक की कमी दर्ज की। कृषि मंत्रालय द्वारा फरवरी 22, 2006 को प्रकाशित दूसरे अग्रिम अनुमानों के अनुसार, खरीफ 2005 के लिए खाद्यान्नों का उत्पादन, पिछले वर्ष की अपेक्षा 4.7 प्रतिशत वृद्धि को अंकित करते हुए, 108.2 मिलियन टन से अधिक अनुमानित किया गया। उच्चतर उत्पादन संभवतः चावल, अनाज और दालों के उत्पादन में वृद्धि के योगदान द्वारा है। वाणिज्यिक फसलों में, यद्यपि गन्ना, तिलहन, जूट और मेस्टा के उत्पादन उच्चतर होने की आशा है, कपास का उत्पादन, पिछले वर्ष प्राप्त स्तर से, संभवतः कुछ गिरावट बताएगा (सारणी 2.9)।

रबी 2005-06

2.16 दूसरे अग्रिम अनुमानों के अनुसार, रबी खाद्यान्नों कुल उत्पादन 101.2 मिलियन टन आँका गया है, जो कि पिछले वर्ष में प्राप्त स्तर के लगभग करीब है। यद्यपि गेहूँ, दालों और मोटे

सारणी 2.9 : मौसमवार कृषि संबंधी उत्पादन

(मिलियन टन)

फसलें	*खरीफ*			*रबी*		
	2003-04 उ	2004-05 अअ$	2005-06 अअ@	2003-04 उ	2004-05 अअ$	2005-06 अअ@
1	2	3	4	5	6	7
चावल	78.34	71.67	75.98	9.94	13.64	11.88
गेहूँ				72.11	72.00	73.06
मोटे अनाज	32.37	26.7	26.70	5.75	7.22	7.30
दालें	6.16	4.95	5.47	8.78	8.43	8.93
कुल खाद्यान्न	**116.88**	**103.32**	**108.15**	**96.58**	**101.29**	**101.17**
तिलहन	16.77	14.94	15.99	8.52	11.17	10.39
गन्ना	237.31	232.32	266.88	..	..	..
कपास*	13.87	17.00	16.45	..	..	..
जूट और मेस्टा**	11.23	10.49	10.65	..	..	..

.. नहीं उपलब्ध। * मिलियन गट्ठों में, प्रत्येक 170 किलोग्राम का। ** मिलियन गट्ठों में, प्रत्येक 180 किलोग्राम का।
उ : उपलब्ध। अअ$: चौथा अग्रिम अनुमान । अअ@ : दूसरा अग्रिम अनुमान ।
स्रोत : कृषि मंत्रालय, भारत सरकार ।

[1] आइएमडी के अनुसार सामान्य स्थिति से सूखे की स्थिति को प्रतिशत में व्यक्त किया गया है और तदनुसार सूखे की स्थिति को भयंकर (50 प्रतिशत से अधिक), मंद (26-50 प्रतिशत) तथा अल्प (25 प्रतिशत तक) सूखे की श्रेणियों में बांटा गया है।

अनाजों का उत्पादन उच्चतर होने की आशा है, पिछले वर्ष की तुलना में, संभवत: चावल का उत्पादन निम्नतर रहेगा। 2005-06 में कृषि मंत्रालय ने, रबी फसलों की उपज बढ़ाने के लिए, एक फसल-विशिष्ट कार्यनीति बनाई। कार्यनीति में शृंखलाबद्ध उपायों को शामिल किया गया जैसे, अवस्थिति विशिष्ट अति-उपजाऊ प्रकार के प्रमाणित/दर्जेदार बीजों की समय से और पर्याप्त उपलब्धता (विशेषरूप से दड़म गेहूँ के मामले में), समय से बुआई पर जोर, अंतर फसल को बढ़ावा और जल बचत उपकरणों को प्रोत्साहन, उर्वरकों का संतुलित प्रयोग, जमीन सुधारकों का प्रचार, बीज बोआई शून्य जोताई को प्रोत्साहन, बीज के साथ उर्वरक बोआई, उघड़ बोआई और उभरी क्यारी रोपक, एकीकृत अपतृण, कीट और रोग प्रबंध प्रणाली का संवर्द्धन, दर्जेदार रोपण सामग्री को सुनिश्चित करना और समयपूर्व परिपक्व किस्मों के अंतर्गत गन्नो के मामले में क्षेत्र बढ़ाना।

2.17 कृषि और सहयोग विभाग ने भी, शुष्क-भूमि पर खेती करने की समस्याओं को संबोधित करने के लिए, एक नई योजना की, '' शुष्क-भूमि वर्षा-पोषित खेती प्रणाली की निरंतरता को बढ़ाने'' के लिए, व्यवस्था की है। इस योजना के अंतर्गत प्रमुख जोर क्षेत्र हैं, कटाई, जल संरक्षण और उसका दक्ष उपयोग, मिट्टी आर्द्रता संरक्षण पर जोर, जैविक खादों का प्रयोग, सुधारी हुई शुष्क-भूमि खेती करने की प्रौद्योगिकी का वैकल्पिक प्रयोग और व्यवहार। अनाज केंद्रित फसल प्रणाली से विविधता को ज्यादा लाभदायक ऊंचे मूल्य और कम जल उपभोगी फसलें जैसे तिलहन, दालें, पुष्पात्पदन, औषधीय और सुरभित पौधों पर भी महत्व दिया गया। 2006-07 के लिए केंद्रीय बजट में, राष्ट्रीय उद्यानकृषि मिशन के अंतर्गत 150 करोड़ रुपए के आबंटन का, आदर्श अग्रस्थ मंडियों को देश के विभिन्न हिस्सों में, सार्वजनिक-निजी साझेदारी (पीपीपी) मॉडल का प्रयोग करके, स्थापित करने का प्रस्ताव है। कृषि और सहयोग विभाग ने, मई 2005 में केंद्र सरकार द्वारा प्रवर्तित, ''सुधारों के विस्तार के लिए राज्य विस्तार कार्यक्रमों को सहायता'' योजना, दसवीं योजना के दौरान कार्यान्वियन हेतु, प्रौद्योगिकी प्रसार को सरल बनाने के लिए जो किकृषक संचालित एवं कृषक केंद्रित है, शुरू की।

खाद्यान्न, प्रापण, निकास और स्टॉक

2.18 2005-06 के दौरान (फरवरी 28, 2006 तक) लगभग 40 मिलियन टन खाद्यान्नों (चावल और गेहूँ) का प्रापण, पिछले वर्ष की अनुरूपित अवधि में प्राप्त से थोड़ा निम्नतर था। 2005-06 (अप्रैल 1 से दिसंबर 31, 2005) के दौरान चावल और गेहू की निकासी वैसे ही थी कि जैसे पिछले वर्ष की तुलनीय अवधि में। तथापि, लक्ष्यित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टी पी डी एस) और अन्य कल्याणकारी योजनाओं (ओ डबल्यू एस) के अंतर्गत चावल और गेहूँ की निकासी उच्चतर थी। इसके विपरीत, खुला-बाज़ार बिक्री (ओ एम एस) के अंतर्गत निकासी में तीव्र गिरावट थी।

2.19 भारतीय खाद्य निगम (एफ सी आई) और अन्य सरकारी एजेंसियों के पास खाद्यान्नों का कुल स्टॉक, जनवरी 1, 2006 को पछले वर्ष की अनुरूपी अवधि में 21.7 मिलियन टन की तुलना में 11.2 प्रतिशत से गिरकर लगभग 19.3 मिलियन टन हुआ। (सारणी 2.10)

2.20 संतोषजनक दक्षिण-पश्चिम और उत्तर-पूर्व मानसून ॠतुओं के साथ बेहतर जलाशय स्थिति कृषि संबंधी उत्पादन के लिए शुभ संकेत है और कुल खाद्यान्न उत्पादन एक वर्ष पहले की बनिस्बत उच्चतर अपेक्षित है। जनवरी 1, 2006 को खाद्यान का स्टॉक, एक वर्ष पहले की अपेक्षा निम्नतर स्तर पर था।

उद्योग

2.21 वर्ष 2003-04 से अबतक औद्योगिक क्षेत्र का मजबूत कार्यनिष्पादन चालू वर्ष के दौरान, माँग के प्रवाह के कारण और समर्थ हुआ। औद्योगिक क्षेत्र की विकास गति को विनिर्माण उप-क्षेत्र से समर्थन मिला। यद्यपि वर्ष के दौरान, मूलभूत, पूंजीगत और उपभोक्ता माल क्षेत्र ने त्वरित वृद्धि दर्ज की, मध्यवर्ती माल क्षेत्र की कार्यनिष्पादन प्रोत्साहित नहीं रही। बढ़ता हुआ आयात घरेलू उद्योगों के कार्यनिष्पादन पर संभवत: अतिक्रमण करे क्योंकि बहुत से उद्योगों को अभी तक अर्थव्यवस्थाओं के मानदंड को प्राप्त करना है और वैश्वीकृत बाजार में उभरती स्पर्धा का सामना करने के लिए प्रतिस्पर्धात्मकता को पाना है।

2.22 औद्योगिक पुनरुत्थान, जो अप्रैल 2002 में शुरू हुआ था, बाद के वर्षों में मजबूत हुआ (चार्ट II.5)। औद्योगिक विकास में सुधार, 2005-06 के दौरान अब तक (अप्रैल-दिसंबर) जारी रहा, मुख्यत: विनिर्माण उप- क्षेत्र द्वारा, बाहरी और घरेलू माँग में विस्तार, क्षमता परिवर्द्धन, वित्त की सहज में उपलब्धता और बढ़े हुए पूंजीगत माल के आयात के कारण, अवप्रेरित रहा। दूसरी ओर, खनन क्षेत्र ने वर्ष के दौरान, जुलाई 2005 से नकारात्मक कार्यनिष्पादन के कारण, मंद विकास दर्ज किया (सारणी 2.11)। 2005-06 (अप्रैल-दिसंबर) के दौरान औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइ आइ पी) ने 7.8 प्रतिशत वृद्धि को दर्ज किया।

2.23 विनिर्माण उप-क्षेत्र औद्योगिक उत्पादन में लगातार प्रमुख विकास चालक रहा। अप्रैल-दिसंबर 2005 के दौरान, द्वि-अंक स्तर विनिर्माण समूहों में, 17 में से 12 उद्योग समूहों ने सकारात्मक

सारणी 2.10 : खाद्य भंडार का प्रबंध

(मिलियन टन)

वर्ष / माह	खाद्यान्न का प्रारंभिक स्टॉक	खाद्यान्न का प्रापण	खाद्यानों का निकास				अंतिम स्टॉक	अतिरिक्त भंडार स्टॉक मानक $
			पीडीएस	ओडबल्यूएस	ओएमएस-घरेलू	निर्यात		
1	2	3	4	5	6	7	8	9
2004								
अप्रैल	20.6	15.7	2.0	0.5	0.0	0.3	32.4	15.8
मई	32.4	3.0	2.3	0.6	0.0	0.1	32.3	
जून	32.3	1.4	2.3	1.0	0.0	0.1	30.6	
जुलाई	30.6	0.5	2.4	1.0	0.0	0.1	27.2	24.3
अगस्त	27.2	0.5	2.4	1.0	0.0	0.1	23.0	
सितंबर	23.0	0.2	2.5	1.0	0.0	0.1	20.3	
अक्तूबर	20.3	7.4	2.4	0.8	0.0	0.0	23.7	18.1
नवंबर	23.7	1.9	2.4	0.6	0.0	0.0	21.8	
दिसंबर	21.8	3.2	2.6	0.7	0.0	0.0	21.7	
2005								
जनवरी	21.7	3.9	2.7	0.8	0.0	0.0	21.5	16.8
फरवरी	21.5	2.3	2.7	0.9	0.0	0.0	20.0	
मार्च	20.0	1.7	2.7	1.7	0.0	0.0	18.0	
अप्रैल	18.0	14.0	2.4	1.0	0.0	0.0	28.5	16.2
मई	28.5	3.1	2.5	0.8	0.0	0.0	27.9	
जून	27.9	0.9	2.5	1.7	0.0	0.0	25.1	
जुलाई	25.1	0.4	2.8	0.8	0.1	0.0	21.4	26.9
अगस्त	21.4	0.9	2.6	0.8	0.1	0.0	18.4	
सितंबर	18.4	0.4	2.7	0.7	0.1	0.0	15.5	
अक्तूबर	15.5	7.6	2.2	0.5	0.0	0.0	19.8	16.2
नवंबर	19.8	2.7	1.8	0.5	0.1	0.0	19.0	
दिसंबर	19.0	3.4	2.3	0.7	0.2	0.0	19.3	
2006								
जनवरी	19.3	3.8	0.0	0.0	0.0	0.0	..	20.0
फरवरी	..	2.5	0.0	0.0	0.0	0.0	..	
ज्ञापन :								
2004-05 अप्रैल-दिसंबर		32.9	21.3	7.1	0.1	1.0		
2005-06 अप्रैल-दिसंबर		33.3	21.8	7.5	0.6	0.0		

.. नहीं उपलब्ध ।

$ अप्रैल, जुलाई, अक्तूबर और जनवरी में कायम रखे गए न्यूनतम अतिरिक्त भंडार स्टॉक मानकों को, मार्च 29, 2005 से, नई अतिरिक्त भंडार स्टॉक नीति के अंतर्गत, संशोधित किया गया।

पीडीएस : सार्वजनिक वितरण प्रणाली। ओडबल्यूएस : अन्य कल्याणकारी योजनाएँ। ओएमएस : खुला बाज़ार बिक्री।

टिप्पणी : अंतिम स्टॉक आँकड़े, प्रारंभिक स्टॉक और प्रापण किए गए स्टॉक जोड़ने और निकासी को घटाने से प्राप्त आँकड़ो से भिन्न हो सकते हैं क्योंकि स्टॉकों में मोटे अनाज भी शामिल हैं।

स्रोत : उपभोक्ता व्यवहार मंत्रालय, खाद्य और सार्वजनिक वितरण, भारत सरकार।

चार्ट II.5: आइआइपी की क्षेत्रीय वृद्धि

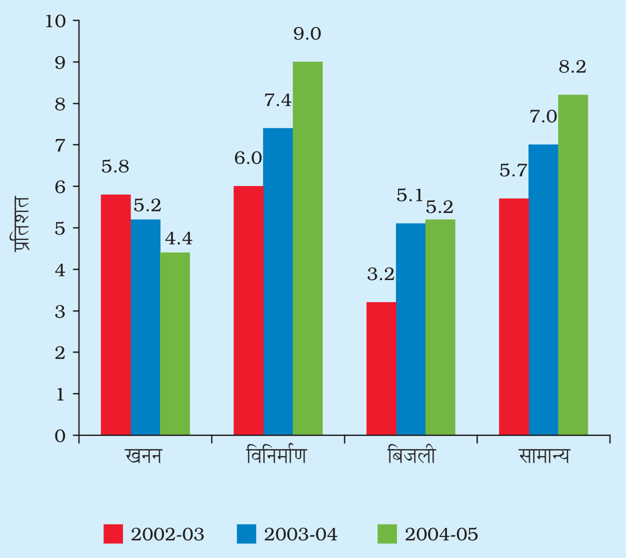

वृद्धि दर्ज की। अन्य विनिर्माण उद्योगों ने, विभिन्न विनिर्माण क्षेत्र समूहों के बीच, 23.8 प्रतिशत उच्चतम वृद्धि दर्ज की, यद्यपि वस्त्र उत्पादों ने अप्रैल-दिसंबर 2005-06 के दौरान, विकास में 18.6 प्रतिशत का एक विशिष्ट त्वरण, पिछले वर्ष की अनुरूपी अवधि में 14.8 प्रतिशत की तुलना में दर्ज किया (सारणी 2.12)। मादक पेय, तंबाकू और संबंधित उत्पादों; आधारभूत धातु और मिश्रधातु; परिवहन उपकरण और कल पुर्जे ; सूती कपड़े ; तथा मशीनरी और उपकरणों ने भी उस अवधि के दौरान द्वि-अंकी विकास दर्ज किया।

2.24 प्रयोग-आधारित वर्गीकरण के अनुसार, मध्यवर्ती माल क्षेत्र के सिवाय सभी क्षेत्रों ने, अप्रैल-दिसंबर 2005-06 के दौरान बेहतर विकास कार्यनिष्पादन, पिछले वर्ष के अनुरूपी अवधिकी तुलना में, दर्ज किया (सारणी 2.13)। फिनाइल, बेंजीन, उत्कृष्ट मिट्टी का तेल, रेल्वे माल, फेरो मैंगनीज, इत्यादि के नकारात्मक विकास के कारण आधारभूत माल ने मध्यम विकास दर्ज किया। उपभोज्य वस्तुओं ने,

सारणी 2.11: औद्योगिक उत्पादन का सूचकांक-मासिक वृद्धि

(प्रतिशत)

माह / भार	सामान्य (100.00)		विद्युत (10.17)		खनन और उत्खनन (10.47)		विनिर्माण (79.36)	
	2004-05	2005-06	2004-05	2005-06	2004-05	2005-06	2004-05	2005-06
1	2	3	4	5	6	7	8	9
अप्रैल	8.9	8.1	10.3	3.1	9.1	2.8	8.8	9.2
मई	6.8	10.8	3.1	10.5	5.3	5.2	7.5	11.3
जून	7.3	12.2	4.5	9.6	2.7	4.8	8.1	13.2
जुलाई	8.5	4.7	13.7	-0.9	4.2	-1.9	8.4	6.0
अगस्त	8.6	7.6	7.4	7.9	4.4	-2.5	9.1	8.5
सितंबर	9.8	7.2	7.7	-0.8	5.1	-1.9	10.5	8.9
अक्तूबर	10.6	9.1	3.5	7.7	6.2	-0.5	11.9	10.1
नवंबर	7.7	6.1	3.4	3.4	3.6	-0.6	8.6	7.0
दिसंबर	8.9	5.0	4.5	2.9	4.8	-1.8	9.8	5.9
जनवरी	7.5	..	2.4	..	2.6	..	8.6	..
फरवरी	5.9	..	-0.8	..	-1.6	..	7.4	..
मार्च	9.8	..	3.2	..	6.6	..	10.9	..
अप्रैल-दिसंबर	**8.6**	**7.8**	**6.4**	**4.8**	**5.1**	**0.4**	**9.2**	**8.9**

.. नहीं उपलब्ध।
स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन।

टिकाऊ और गैर टिकाऊ दोनों खंडों के मज़बूत कार्यनिष्पादन द्वारा सहायता प्राप्त, विश्वासोत्पादक विकास प्रदर्शित किया। उपभोज्य गैर टिकाऊ वस्तुओं में विकास अधिकांशतः, 'मादक पेय, तंबाकू और तंबाकू उत्पाद', वस्त्र उत्पाद, दूध पावडर, चाकलेट और चीनी मिष्टान्न,चीनी, सल्फा दवाइयाँ, केश तेल, इत्यादि द्वारा प्रेरित हुआ। मध्यवर्ती माल क्षेत्र ने, कुछ सूती मदों, तैयार चमड़ों,कच्चे विस्कोस रेशों, जिलेटिन, कच्चे विस्कोस रेशों, तंतु-पाइपों और पेट्रोलियम उत्पादों, इत्यादि के अधिकांशतःनकारात्मक विकास के कारण, मंद कार्यनिष्पादन की पुष्टि की।

2.25 हाल की औद्योगिक उछाल की एक उल्लेखनीय विशेषता सुदृढ़ पूंजीगत माल क्षेत्र का द्वि-अंकी विकास है कि जिसने सबसे अधिक उत्प्लावक खंड के रूप में अपनी स्थिति दोबारा प्राप्त कर ली है। इस क्षेत्र ने अप्रैल-दिसंबर 2005-06 के दौरान 15.7 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की जो 2004- 05 की उसी अवधि में दर्ज 13.8 प्रतिशत से अधिक थी। वस्त्र मशीनरी, जहाज निर्माण और मरम्मत, प्रयोगशाला और वैज्ञानिक उपकरण, इंजन, मशीन औज़ार, सामान संचालन के उपकरण, डम्पर, बॉयलर और बिजली वितरण ट्रांसफॉर्मर, इत्यादि के उच्चतर उत्पादन ने पूंजीगत माल क्षेत्र को सहारा दिया। पूंजीगत

सारणी 2.12 : विनिर्माण उद्योगों का विकास (2-अंक स्तर वर्गीकरण) - अप्रैल-दिसंबर 2005

20 प्रतिशत से ऊपर	10-20 प्रतिशत	0-10 प्रतिशत	नकारात्मक
1	2	3	4
1. अन्य विनिर्माण उद्योग (23.8)	1. वस्त्र उत्पाद (परिधान समेत) (18.6) 2. मादक पेय, तंबाकू और संबधित उत्पाद (16.4) 3. आधारभूत धातु और मिश्रधातु (15.0) 4. परिवहन उपकरण और कल पुर्जे (12.5) 5. मशीनरी और उपकरण परिवहन उपकरण के अलावा (10.5) 6. सूती वस्त्र (10.2)	1. रसायन और रासायनिक उत्पाद (9.7) 2. गैर धात्विक खनिज उत्पाद (9.4) 3. रबड़, प्लास्टिक, पेट्रोलियम और कोयला उत्पाद (3.8) 4. जूट और अन्य वनस्पति रेशे के कपड़े (2.7) 5. कागज और कागज उत्पाद (0.5)	1. ऊन, रेशम और मनुष्य-निर्मित रेशों के कपड़े (-0.1) 2. चमड़ा और चमड़ा और लोम उत्पाद (-1.5) 3. खाद्य उत्पाद (-2.2) 4. धातु उत्पाद और कल पुर्जे (-2.5) 5 लकड़ी और लकड़ी उत्पाद, फ़र्नीचर और जुड़नार (-3.7)

टिप्पणी : कोष्ठक में दिए गए अंक विकास दर के हैं।
स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन।

सारणी 2.13 : औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आइ आइ पी) विकास के लिए क्षेत्रवार योगदान -प्रयोग-आधारित वर्गीकरण (अप्रैल-दिसंबर)

(प्रतिशत)

उद्योग समूह	आइ आइ पी में भार	विकास			तुलनात्मक योगदान		
		2003-04	2004-05	2005-06P	2003-04	2004-05	2005-06 अनं.
1	2	3	4	5	6	7	8
आधारभूत माल	**35.57**	4.6	6.0	6.0	22.7	22.1	23.8
पूंजीगत माल	**9.26**	10.1	13.8	15.7	14.2	15.2	20.1
मध्यवर्ती माल	**26.51**	6.5	6.9	2.2	27.9	22.8	7.9
उपभोज्य वस्तुएँ (क +ख)	**28.66**	7.8	11.4	12.2	35.2	39.9	48.1
क) उपभोज्य टिकाऊ वस्तुएँ	**5.36**	9.2	15.3	13.6	10.2	13.5	13.9
ख)उपभोज्य गैर-टिकाऊ वस्तुएँ	**23.30**	7.3	10.0	11.7	24.9	26.4	34.2
आइ आइ पी	**100.00**	**6.6**	**8.6**	**7.8**	**100.0**	**100.0**	**100.0**

अनं. : अनंतिम

स्रोत : केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन ।

माल क्षेत्र के विकास में गतिवृद्धि, उद्योगों में घटित क्षमता परिवर्द्धन का निर्देशक है। साथ-साथ, पूंजीगत माल आयातों में एक बड़ी वृद्धि हुई है। गैर बिजली मशीनरी और परिवहन उपकरण ने पूंजीगत माल आयातों की वृद्धि में बहुत योगदान किया। अन्य पूंजीगत माल, जैसे व्यावसायिक उपकरण, प्रकाशिक माल, बिजली मशीनरी, मशीन औज़ार और परियोजना माल, का आयात भी उल्लेखनीय रूप से बढ़ा।

बुनियादी ढांचा

2.26 अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान, प्रमुख *बुनियादी ढांचा* उद्योगों का कुल विकास, पिछले वर्ष के अनुरूपी अवधि के दौरान 6.2 प्रतिशत की तुलना में, 4.3 प्रतिशत पर निम्नतर था (चार्ट II.6)। यह धीमापन प्रमुख रूप से कच्चे पेट्रोलियम में नकारात्मक वृद्धि दर्ज करने, निम्नतर विकास/वृद्धि में पेट्रोलियम तेलशोधन कारखानों के उत्पादो में निम्नतर वृद्धि और सीमेंट के सिवाय अन्य बुनियादी ढांचा उद्योगों के विकास में अवत्वरण के कारण था। प्रमुख क्षेत्र समूहों में सीमेंट क्षेत्र ने, उस अवधि के दौरान, 11.4 प्रतिशत का त्वरित विकास दर्ज किया।

चार्ट II.6: बुनियादी ढांचा उद्योगों की वृद्धि

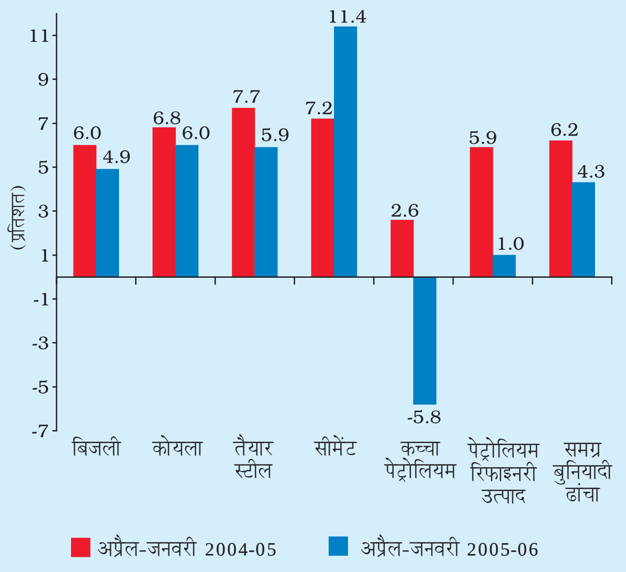

2.27 सुदृढ़ घरेलू माँग के बावजूद, देश से इस्पात निर्यात का धीमा होने के साथ निम्नतर आधार ने इस्पात उत्पादन में मध्यम दर्जे की वृद्धि में योगदान दिया। बढ़ती हुई घरेलू और बाह्य माँग ने सीमेंट क्षेत्र के सुदृढ़ विकास को सुविधाजनक बनाया। मानसून ऋतु के दौरान भारी वर्षा के कारण, कोल इंडिया लिमिटेड, टिस्को और इसको (आइ आइ एस सी ओ) खदानों में लक्ष्य से कम उत्पादन का परिणाम कोयला क्षेत्र में निम्नतर विकास में हुआ। जुलाई और सितंबर में बिजली उत्पादन में नकारात्मक वृद्धि और थर्मल पावर संयंत्रों के पास कोयला और गैस की अपर्याप्त उपलब्धता के कारण विद्युत क्षेत्र ने निम्नतर वृद्धि दर्ज की। जुलाई 27, 2005 को आग भड़कने से, तेल एवं प्राकृतिक गैस निगम (ओएनजीसी) के मुंबई हाई तेल कुओं के तेल पर्यवेक्षण में विघटन होने के कारण कच्चे पेट्रोलियम ने उत्पादन में गिरावट दर्ज की। एक निजी क्षेत्र तेलशोधन कारखाने और दो सार्वजनिक क्षेत्र के तेलशोधक कारखानों के उत्पादन में नकारात्मक वृद्धि का परिणाम पेट्रोलियम तेलशोधित उत्पादों में निम्नतर वृद्धि में हुआ।

सेवा क्षेत्र

2.28 सेवा क्षेत्र ने 2003-04 के दौरान प्राप्त संवेग को कायम रखा और 10 .2 प्रतिशत की एक मजबूत वृद्धि 2004-05 के दौरान दर्ज की। 2004-05 के दौरान सेवा वृद्धि में त्वरण द्वारा चालित था जो ‘‘व्यापार, होटलों, परिवहन और संप्रेषण’’ द्वारा अनुगमनित रहा। वास्तव में, सेवा क्षेत्र में सभी उप-क्षेत्रों ने उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज की। अग्रिम अनुमानों के अनुसार, 2005-06 के दौरान, सेवा क्षेत्रों में वृद्धि

उल्लेखनीय रही, यद्यपि 2004- 05 की तुलना में 10.1 प्रतिशत के रूप में थोड़ी निम्नतर रही। निर्माण और ''समुदाय सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं'' उप-क्षेत्रों में अवत्वरण का परिणाम, ''व्यापार, होटलों, परिवहन और संप्रेषण और वित्तपोषण, बीमा, वास्तविक संपत्ति और कारोबार सेवाएं'' में सुधार होने बावजूद, सेवा क्षेत्र के मंद कार्यनिष्पादन में हुआ। इसके अतिरिक्त, सेवा क्षेत्र ने हाल में, कृषि अगाड़ी में अनिश्चितता के बावजूद, विकास प्रक्रिया को नियंत्रित रखा।

2.29 आवासीय सदनों की माँग में वृद्धि और विविध उद्योगों में क्षमता परिवर्द्धन के कारण देश में निर्माण गतिविधि ने जोर पकड़ा। व्यापार क्षेत्र ने सुदृढ़ द्वि-अंकी विकास दर्ज किया क्योंकि निर्यात और आयात दोनों प्रभावशाली रूप से, अप्रैल-दिसंबर 2005-06 के दौरान, क्रमश: 18.1 प्रतिशत और 27. 3 प्रतिशत से बढ़े। निर्यात, मुख्यत: पेट्रोलियम उत्पादों, रत्न और आभूषण और परिवहन उपकरणों के कारण बढ़ा जबकि पेट्रोलियम, तेल और चिकनाई के पदार्थ (पीओएल), स्वर्ण, लोहा और इस्पात और अन्य पण्य पदार्थों ने आयात बढ़ाया क्योंकि औद्योगिक गतिविधियों में वृद्धि हुई। घरेलू और अंतरराष्ट्रीय पर्यटन, कारोबार और अवकाश दोनों, में वृद्धि ने होटल उद्योग के विकास में सहायता की। राजस्व आय बढ़ाता हुआ रेल्वे मालभाड़ा आवागमन, नागरिक विमानन और पत्तन आवागमन ने परिवहन क्षेत्र को सहारा दिया। मोबाइल फोन ग्राहकों के आधार में मज़बूत वृद्धि और ब्रॉडबैंड संयोगों (कनेक्शनों) में लगातार वृद्धि ने संप्रेषण क्षेत्र के सुदृढ़ विकास को समर्थन दिया। बैंक जमाराशियों और गैर खाद्य ॠण में स्वस्थ विकास के साथ कारोबार प्रक्रिया आउटसोर्सिंग में बढ़ोतरी-सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाओं के निर्यात ने ''वित्तपोषण, बीमा, वास्तविक संपत्ति और कारोबार सेवाएं'' को बढ़ाया। ''अन्य आर्थिक सेवाएं'' पर राजस्व खर्च में वृद्धि, ''रक्षा राजस्व खर्च'', केंद्रीय सरकार की ''सामाजिक सेवाएं'' का योजना राजस्व खर्च और पेंशन भुगतानों के कारण ''समुदाय सामाजिक और वैयक्तिक सेवाएं'' ने विकास में तेज़ी बताया।

सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाएं-कारोबार प्रक्रिया आउटसोर्सिंग

2.30 सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित सेवाएं (आइ टी ई एस) और कारोबार प्रक्रिया आउटसोर्सिंग (बी पी ओ) खंडों का योगदान सेवा क्षेत्रों के कायम विकास एक महत्त्वपूर्ण आयाम है। सॉफ्टवेयर और सेवा कंपनियों का राष्ट्रीय एसोसिएशन (नैस्कॉम) के अनुसार, 2004-05 में आइ टी ई एस- बी पी ओ की आय उल्लेखनीय रूप से, 28.2 बिलियन अमरीकी डॉलर तक, बढ़ी, जो कि सकल घरेलू उत्पाद (जी डी पी) की 4 .1 प्रतिशत थी। इसे, प्रौद्योगिकीय उन्नति द्वारा समर्थित विदेशी और घरेलू उपभोक्ताओं की माँग में तेजी से वृद्धि के अतिरिक्त अग्रसक्रिय (प्रोऐक्टिव) नीति सुधारों, जैसे, अविनियमन, प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को खोलना और इस क्षेत्र के लिए उदार कर प्रोत्साहन का, प्रतीक माना जा सकता है। आइ टी ई एस- बी पी ओ बाजार ने, क्षेत्र में बढ़े विलयन और अभिग्रहण के साथ परिपक्वता और समेकन के संकेत को देखा, जिसने सेवा प्रदाता, जो सेवाओं के संपूर्ण स्पेक्ट्रम को संगटित ढंग से उपलब्ध करा सके, के लिए कंपनियों की खोज के उपयुक्त बनाया। राजस्व आय के अतिरिक्त, 2004-05 में आइ टी ई एस- बी पी ओ क्षेत्र में भी रोजगार बढ़ा।

औद्योगिक दृष्टिकोण

2.31 उद्योग के कार्यनिष्पादन में चक्रीय सुधार, जो अप्रैल 2002 में शुरू हुआ था, को कायम रखा गया। उद्योगों में निवेश गतिविधि में वृद्धि को अंकित करते हुए, इसने समेकन को सहारा दिया। माँग परिस्थितियाँ भी अनुकूल रहीं। अंशदायी घटकों में, अनुकूल निवेश वातावरण, ॠण की पर्याप्त उपलब्धता, ठोस कंपनी परिणाम, उन्नत घरेलू और बाह्य माँग, उद्योगों में क्षमता परिवर्द्धन और प्रतिस्पर्धात्मकता में निरंतर सुधार, शामिल हैं। पूंजीगत माल क्षेत्र ने प्रभावशाली द्वि-अंकी वृद्धि दर्ज की और क्षमता प्रसार के समर्थन से पूंजीगत मालों का आयात बढ़ा। वर्ष के दौरान उपभोक्ता माल खंड का बढ़ना, फुटकर ॠण की आसान उपलब्धता की मदद से, खपत माँग के तेज़ी को प्रतिबिंबित करता है। गैर खाद्य ॠण के मजबूत विस्तार, जो 2004-05 के दौरान 27 .6 प्रतिशत से बढ़ा, की पृष्ठभूमि में, औद्योगिक क्षेत्र का दृष्टिकोण उत्साही है (सारणी 2.14)। इसके अतिरिक्त, 2005-06 (दिसंबर तक) के दौरान, गैर खाद्य ॠण, पिछले वर्ष के अनुरूपी अवधि के दौरान 18.2 प्रतिशत की तुलना में, 22.3 प्रतिशत से बढ़ा। 2005-06 के लिए अग्रिम अनुमानों ने (1999-00 कीमतों पर), विनिर्माण उप-क्षेत्र के 9.4 प्रतिशत सुदृढ़ विकास दर्ज करने के साथ और ''विद्युत, गैस और जल आपूर्ति'' के 5.4 प्रतिशत के अनुकरण में, उद्योग में विकास दर को 8.0 प्रतिशत पर रखा। उत्साहजनक औद्योगिक भावना से समर्थित आशाप्रद निवेश वातावरण और बढ़ते हुए कंपनी लाभों ने एक रिकार्ड तेज़ी बनाई जिसका परिणाम ऊँचे बाज़ार पूँजीकरण में हुआ। इंफ्रास्ट्रक्चर परियोजनाओं की वृद्धि के लिए सरकार का वादा, बाधाओं को संबोधित और विकास संभावनाओं को प्रवर्तित करे, यह अपेक्षित है। इसके अतिरिक्त, चालू राजकोषीय वर्ष में रोडवेजों और विमानन परियोजनाओं में पर्याप्त मात्रा में प्रगति की आशा है। कुल मिलाकर, मजबूत माँग संयोजनों से उत्पन्न, निवेश में बढ़ोतरी, उपभोग और निर्यात द्वारा सुदृढ़, उद्योग अपनी निरंतर चलने वाली गति को कायम रखेगा ऐसी आशा है। फिर भी, कच्चे तेल की ऊंची कीमतें, कुछ अलौह धातुओं की कीमतों में तेजी, ब्याज दर का बढ़ना और प्रमुख क्षेत्र के कार्यनिष्पादन में मंदी अधोमुखी खतरों को प्रस्तुत कर सकते हैं।

सारणी 2.14 : औद्योगिक क्षेत्र का कार्यनिष्पादन-चयनात्मक संकेतक

(विकास में प्रतिशत)

वर्ष	आइ आइ पी	विनिर्माण आइ आइ पी	पूंजीगत माल	उपभोक्ता माल	गैर खाद्य ऋण	पूंजीगत माल का आयात	विनिर्मित माल का आयात
1	2	3	4	5	6	7	8
1994-95	9.1	9.1	9.2	12.1	29.8	22.5	22.5
1995-96	13.0	14.1	5.3	12.8	22.5	44.1	16.4
1996-97	6.1	7.3	11.5	6.2	10.9	1.9	3.6
1997-98	6.7	6.7	5.8	5.5	15.1	3.4	7.9
1998-99	4.1	4.4	12.6	2.2	13.0	16.3	-2.8
1999-00	6.7	7.1	6.9	5.7	16.5	-8.2	15.2
2000-01	5.0	5.3	1.8	8.0	14.9	5.1	15.6
2001-02	2.7	2.9	-3.4	6.0	13.6	15.4	-2.8
2002-03	5.7	6.0	10.5	7.1	18.6	38.6	20.6
2003-04	7.0	7.4	13.6	7.1	18.4	28.6	14.4
2004-05	8.2	9.0	13.3	11.5	27.6	20.7	17.3
2004-05 #	8.6	9.2	13.8	11.4	18.2	31.4@	23.0@
2005-06 #	7.8	8.9	15.7	12.2	22.3	28.2@	14.3@

\# अप्रैल-दिसंबर अवधि से संबंधित। @ अप्रैल-नवंबर अवधि से संबंधित।

स्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक, केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन और डी जी सी आइ & एस, भारत सरकार.

2.32 विभिन्न कारोबार प्रत्याशा सर्वेक्षण सुझाव देते हैं कि औद्योगिक गतिविधि संभवतः उत्साहजनक बनी रहेगी। रिजर्व बैंक के ''औद्योगिक दृष्टिकोण सर्वेक्षण'' ने, अक्तूबर-दिसंबर 2005 की तिमाही के लिए, कुल कारोबार स्थिति की प्रत्याशा का सुझाव 51.3 प्रतिशत के उच्चतर स्तर विश्वास पर, पिछली तिमाही के 45.5 प्रतिशत की तुलना में, दिया। अक्तूबर-दिसंबर 2005 की तिमाही के लिए, डन और ब्रैडस्ट्रीट का मिश्रित कारोबार आशावाद सूचकांक 7.1 प्रतिशत से सुधरा, जो स्वस्थ आर्थिक परिदृश्य को दर्शाता है। भारतीय वाणिज्य और उद्योग परिसंघ (फिक्की) का कारोबार विश्वास सूचकांक सुधरा और पहली तिमाही के दौरान के 73.5 से, 2005-06 की दूसरी तिमाही में 75.2 तक बढ़ा। फिक्की के सर्वेक्षण ने प्रकट किया कि कंपनी घराने, मध्यम से दीर्घकालीन कारोबार दृष्टिकोण के बारे में उत्साही हैं। राष्ट्रीय अनुप्रयुक्त आर्थिक अनुसंधान परिषद (एन सी ए ई आर) कारोबार विश्वास सूचकांक (बी सी आइ) जुलाई-सितंबर 2005 के 146.0 से, धीरे-धीरे बढ़कर, अक्तूबर-दिसंबर 2005 के लिए 151.4 हुआ। यह उच्चतम स्तर है जिसे एन सी ए ई आर कारोबार विश्वास सूचकांक ने, नवंबर 1994 के बाद, प्राप्त किया।

2.33 2005-06 (अप्रैल-दिसंबर) के दौरान औद्योगिक क्षेत्र का कार्यनिष्पादन भलीभांति विविध था। विनिर्माण क्षेत्र के विकास की एक ध्यान देने योग्य विशेषता है कि यद्यपि 2004-05 के दौरान ऊँचे कार्यनिष्पादन करने वाले उद्योगों, जैसे, मशीनरी और उपकरण (भार 9.565) एवं रासायन और रासायनिक उत्पाद (भार 14.002), में चालू वर्ष के दौरान अबतक मंदी हुई, वस्त्र उत्पाद, मादक पेय, तंबाकू, आधारभूत धातु और मिश्रधातु उद्योगों, परिवहन उपकरण और कल पुर्जे, सूती कपड़े, गैर धातु खनिज उत्पादों, इत्यादि ने, जिसने 2004-05 के दौरान निम्नतर अथवा नकारात्मक वृद्धि दर्ज की, चालू वर्ष में सुदृढ़ विकास प्राप्त किया और विनिर्माण क्षेत्र विकास में 50 प्रतिशत से अधिक योगदान किया। कुल निर्यात में विनिर्माण निर्यातों के हिस्से ने भी, जो लगभग 75 प्रतिशत थी, विनिर्माण क्षेत्र कार्यनिष्पादन में मदद की। परिणामस्वरूप, कंपनी क्षेत्र की लाभप्रदता में सुधार के कारण, औद्योगिक क्षेत्र में निवेश गतिविधि में वृद्धि और क्षमता परिवर्द्धन वर्तमान समय में शुरू हैं। पूंजीगत माल आयातों में तेजी ने भी औद्योगिक क्षेत्र के चल रहे विस्तार को सुसाध्य बनाया।

II. राजकोषीय स्थिति

केंद्रीय सरकार की वित्त-व्यवथाएँ

2.34 प्रभावी विकास कार्यनिष्पादन, मध्यम दर्जे की मुद्रास्फीति, सुदृढ़ और समुस्थानशील बाह्य क्षेत्र, के साथ सुदृढ़ गैर खाद्य बैंक ऋण निकास, की पृष्ठभूमि में 2006-07 का केंद्रीय बजट प्रस्तुत किया गया था। बढ़ी आय और खर्च नियंत्रण, मौद्रिक स्थायित्व और बाह्य ऋण के प्रबंध के जरिए, बजट राजकोषीय विवेक पर अपने ''निरंतर जोर'' को, सुदृढ़ समष्टि आर्थिक कार्यनिष्पादन का प्रमुख कारक मानता है। आय घाटे और राजकोषीय घाटे में प्रस्तावित कटौतियों द्वारा, बजट राजकोषीय दायित्व और बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) नियमावली, 2004 में निर्दिष्ट राजकोषीय समेकन को पुन: आरंभ करने के लिए वचनबद्ध है।

2.35 बजट का प्रमुख जोर है आर्थिक विकास को प्रोत्साहन देना और समाज के पिछड़े वर्ग को न्याय दिलाना है। शिक्षा क्षेत्र, स्वास्थ्य और ग्रामीण रोजगार सम्मिलित सरकार के आठ अग्रणी कार्यक्रमों के लिए आबंटन में उल्लेखनीय रूप से वृद्धि हुई है। कृषि, रोजगार

प्रवर्तन करने, निवेश बढ़ाने और बुनियादी ढांचा संवर्धन पर अपना ध्यान केंद्रित करने को, बजट लगातार दोहराता है।

2.36 केंद्रीय बजट 2006-07, विकास गति को रोके बिना, कर/जीडीपी अनुपात को बढ़ाने की आवश्यकता पर जोर देता है। प्रत्यक्ष कराधान के संबंध में कार्यनीति है, एक तरफ कर आधार का विस्तार करके एवं कर दरों को कम करके कर ढाँचे के विकार को कम किया जाए और दूसरी ओर कर प्रशासन की निपुणता में सुधार करना और स्वैच्छिक अनुपालन को प्रोत्साहित करने के लिए भय-निवारण स्तर को बढ़ाना। परोक्ष कर के बारे में कार्यनीति है, शुल्क सुधार प्रक्रिया को सीमा शुल्क के औसत आशियान स्तरों की ओर जारी रखना, उत्पाद शुल्क के लिए सेनवैट दर की ओर अभिसरण, सेवा कर के आधार को प्रशस्त करना और अप्रैल 1, 2010 तक संपूर्ण एकीकृत माल और सेवा कर की ओर चरणबद्ध बढ़ना। यद्यपि बजट, वैयक्तिक आय कर और कंपनी आय कर की दरों को नहीं बदलता, उसने, दूसरों के साथ-साथ, न्यूनतम वैकल्पिक कर (एम ए टी), प्रतिभूतियाँ लेनदेन कर (एस टी टी) और सेवा कर की दरों को बढ़ा दिया।

संशोधित अनुमान 2005-06[2]

2.37 वर्ष 2005-06 के लिए संशोधित अनुमानों में मूल घाटा संकेतक, अर्थात् राजस्व घाटा और सकल राजकोषीय घाटा, जी डी पी से संबंधित, बजट में प्रावधान किए गए उनके स्तरों से निम्नतर रखा गया। इस संदर्भ में स्मरण रहे कि 2005-06 का बजट पेश करते समय, बारहवें वित्त आयोग (बारहवाँ वित्त आयोग (टी एफ सी)) के सुझावों को लागू करने के लिए अतिरिक्त संसाधन अपेक्षाओं हेतु, सरकार ने राजकोषीय जवाबदेही एवं बजट प्रबंध (एफ आर बी एम) नियमावली, 2004 के अंतर्गत निर्धारित लक्ष्यों के अनुसार, राजकोषीय सुधार में एक ''विराम बटन'' दबाया है। संशोधित अनुमानों में घाटा संकेतकों में, बजट में प्रावधान किए गए स्तरों से कटौती, मुख्यत: ब्याज भुगतानों, उपदानों, राज्यों को अनुदान और रक्षा व्यय के संबंध में गैर योजना खर्चों में कमी के कारण था। गैर योजना खर्चों में कटौती के अतिरिक्त, बजट संबंधी प्राप्ति की तरह विनिवेश आगम की उपलब्धता (यद्यपि 2005-06 के लिए केंद्रीय बजट ने विनिवेश आगमों को बजट संबंधी प्राप्ति के रूप में समझने की प्रथा को बंद करने की कोशिश की है) और निम्नतर गैर रक्षा पूँजी लागत ने भी राजकोषीय घाटे को कम करने योग्य बनाया।

2.38 संशोधित अनुमानों में राजस्व घाटा 3.7 प्रतिशत से निम्नतर था और जी डी पी का 2.6 प्रतिशत बना जो कि बजट में प्रावधान किए गए 2.7 प्रतिशत स्तर के विपरीत था (सारणी 2.15)। राजस्व घाटे में गिरावट राजस्व खर्च में 6,217 करोड़ रुपए (1.4 प्रतिशत) तक की कमी के कारण थी जिसने राजस्व आय में 2,726 करोड़ रुपए (0.8 प्रतिशत) की कमी का प्रतिकरण किया। राजस्व घाटे में कमी के साथ विनिवेश आगम की उपलब्धता और पूंजी लागत में ह्रास के परिणाम स्वरूप, बजट में प्रावधान किए गए स्तर (जी डी पी का 4.3 प्रतिशत) की अपेक्षा, एक निम्नतर सकल राजकोषीय घाटा (जी डी पी का 4.1 प्रतिशत) हुआ। 2005-06 के लिए संशोधित अनुमानों में, जी डी पी के 0.5 प्रतिशत पर प्राथमिक घाटा, बजट अनुमानों की अपेक्षा, 6.1 प्रतिशत से निम्नतर था। तथापि, जी डी पी के अनुसार, प्राथमिक घाटा बजट में प्रावधान किए गए 0.5 प्रतिशत के स्तर पर रहा (सारणी 2.15)।

2.39 वर्ष 2005-06 के लिए संशोधित अनुमानों में, राजस्व प्राप्तियाँ बजट में प्रावधान किए गए स्तर से थोड़ी, 0.8 प्रतिशत से, घटीं। राजस्व प्राप्तियों में कमी, बजट में प्रावधान किए गए स्तर की अपेक्षा, निम्नतर कर-रहित आय के कारण थी। कर-रहित आय में कमी मुख्यत: बजट अनुमानों की अपेक्षा निम्नतर ब्याज प्राप्तियों के कारण थी। 2005-06 के लिए संशोधित अनुमानों में सकल कर आय लगभग उसी स्तर पर रही जैसा कि बजट अनुमानों में था। संशोधित अनुमानों में, बजट में प्रावधान किए गए स्तर की अपेक्षा, निगम कर, वैयक्तिक आय कर और उत्पाद शुल्क का संग्रहण निम्नतर था जबकि सीमा शुल्क और सेवा कर द्वारा संग्रहण उल्लेखनीय रूप

सारणी 2. 15: केंद्र के घाटा संकेतक

(करोड़ रुपए)

	मद	2004-05	2005-06 (बअ)	2005-06 (संअ)	2006-07 (बअ)	भिन्नता (प्रतिशत) स्तंभ 4 का 3 पर	भिन्नता (प्रतिशत) स्तंभ 5 का 4 पर
1		2	3	4	5	6	7
1.	सकल राजकोषीय घाटा	1,25,202 *(4.0)*	1,51,144 *(4.3)*	1,46,175 *(4.1)*	1,48,686 *(3.8)*	-3.3	1.7
2.	राजस्व घाटा	78,338 *(2.5)*	95,312 *(2.7)*	91,821 *(2.6)*	84,727 *(2.1)*	-3.7	-7.7
3.	सकल प्राथमिक घाटा	-1,732 *(-0.1)*	17,199 *(0.5)*	16,143 *(0.5)*	8,863 *(0.2)*	-6.1	-45.1

बअ : बजट अनुमान । संअ : संशोधित अनुमान।
टिप्पणी : कोष्ठक में दिए गए आँकड़े सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत हैं।

2 इस खंड में 2005-06 की सभी तुलनाएँ बजट अनुमानों से हैं जबतक अन्यथा न घोषित किया जाए।

से बजट में प्रावधान किए गए स्तर से अधिक था। नए करों में, 2005-06 में प्रतिभूतियाँ लेनदेन कर द्वारा 2, 389 करोड़ रुपए और बैंकिंग नकदी लेनदेन कर से 350 करोड़ रुपए की आय अनुमानित है। निवल कर आय [सकल कर आय कम राज्यों का केंद्रीय करों में हिस्सा और राष्ट्रीय प्राकृतिक आपदा आकस्मिकता कोष (एन सी सी एफ) को अंतरित राशि] ने, बजट में प्रावधान किए गए स्तर से ऊपर, 0.2 प्रतिशत की वृद्धि दर्शायी (सारणी 2.16)।

2.40 ऋणों की वसूली में गिरावट होने के बावजूद, गैर ऋण पूंजीगत प्राप्तियाँ, 2, 356 करोड़ रुपए की राशि को विनिवेश आगमों में शामिल करने करने कारण, बजट अनुमानों से उच्चतर थीं, यद्यपि 2005-06 के लिए केंद्रीय बजट ने विनिवेश आगमों को बजट संबंधी प्राप्ति के रूप में समझने की प्रथा को बंद करने की कोशिश की है (सारणी 2.16)।

2.41 2005-06 के लिए संशोधित अनुमानों में राजस्व खर्च बजट अनुमानों से 1.4 प्रतिशत निम्नतर था जबकि पूंजीगत खर्च थोड़ा सा उच्चतर था (सारणी 2.17)। ब्याज भुगतानों, राज्यों को अनुदान एवं उपदानों के कारण राजस्व खर्च निम्नतर था। पूंजीगत खर्च में, यद्यपि पूंजी लागत निम्नतर थी, ऋण और उधार बजट में प्रावधान किए गए स्तर से उच्चतर थे।

बजट अनुमान 2006-07[3]

2.42 2006-07 के लिए केंद्रीय बजट, राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध, 2004 में निर्धारित राजकोषीय सुधार को, पिछले वर्ष में ''विराम'' के बाद, शुरू करने का प्रस्ताव करता है। तदनुसार, प्रमुख घाटा संकेतकों, अर्थात्, सकल राजकोषीय घाटा (जी एफ डी), राजस्व घाटा (आर डी) और प्राथमिक घाटा (पी डी) का, जी डी पी के प्रतिशत के रूप में, बजट में निम्नतर प्रावधान, 2006-07 में, पिछले वर्ष के स्तरों 3.8 प्रतिशत, 2.1 प्रतिशत और 0.2 प्रतिशत की तुलना में, 2005-06 में क्रमशः 4.1 प्रतिशत, 2.6 प्रतिशत और 0.5 प्रतिशत,किया गया (सारणी 2.15)।

2.43 2005-06 में 13.9 प्रतिशत विकास के विपरीत, 2006-07 में राजस्व प्राप्तियों का, मुख्य रूप से कर आय में जारी रहे उच्च विकास के आधार पर, 15.8 प्रतिशत से बढ़ाने का बजट में प्रावधान किया गया है। सकल कर आय का 2006-07 में 19.5 प्रतिशत से बढ़ने का बजट में प्रावधान किया गया है, परिणामतःबजट में प्रावधान किए गए कर जीडीपी अनुपात में, 2005-06 के 10.5 प्रतिशत से, 11. 2 प्रतिशत तक सुधार हुआ। बजट में सकल कर आय में ऊंची वृद्धि का प्रावधान प्रमुख रूप से निगम कर, सीमा शुल्क और सेवा कर के अंतर्गत उत्साहजनक संग्रहण के आधार पर किया गया। तथापि,

सारणी 2.16 : केंद्र की प्राप्तियाँ

(करोड़ रुपए)

मद	2004-05	2005-06 (बअ)	2005-06 (संअ)	2006-07 (बअ)	भिन्नता (प्रतिशत) स्तंभ 4 का 3 पर	स्तंभ 5 का 4 पर
1	2	3	4	5	6	7
कुल प्राप्तियाँ (1 + 2)	**4,97,682**	**5,14,344**	**5,08,705**	**5,63,991**	**-1.1**	**10.9**
1. राजस्व प्राप्तियाँ	3,06,013	3,51,200	3,48,474	4,03,465	-0.8	15.8
i. कर आय (निवल)	2,24,798	2,73,466	2,74,139	3,27,205	0.2	19.4
ii. कर-रहित आय	81,215	77,734	74,335	76,260	-4.4	2.6
2. पूंजीगत प्राप्तियाँ	1,91,669	1,63,144	1,60,231	1,60,526	-1.8	0.2
उसमें से :						
बाज़ार उधार	50,940	1,03,792	1,01,082	1,13,778	-2.6	12.6
ऋणों की वसूली	62,043	12,000	11,700	8,000	-2.5	-31.6
सार्वजनिक क्षेत्र उपक्रमों में ईक्विटी विनिवेश	4,424	0	2,356	3,840	–	63.0
ज्ञापन मदें:						
सकल कर राजस्व	3,04,958	3,70,025	3,70,141	4,42,153	0.0	19.5
उसमें से :	*(9.8)*	*(10.5)*	*(10.5)*	*(11.2)*		
i. निगम कर	82,680	1,10,573	1,03,573	1,33,010	-6.3	28.4
ii. आय पर कर निगम कर के आलावा	49,259	66,239	63,500	73,409	-4.1	15.6
iii. सीमा शुल्क	57,611	53,182	64,215	77,066	20.7	20.0
iv. केंद्रीय उत्पाद शुल्क	99,125	1,21,533	1,12,000	1,19,000	-7.8	6.3
v. सेवा कर	14,200	17,500	23,000	34,500	31.4	50.0
vi. प्रतिभूतियाँ लेनदेन कर	590	–	2,389	3,500	–	46.5
vii. बैंकिंग नकदी लेनदेन कर	–	–	350	500	–	42.9
viii. कर की संघ शासित क्षेत्रों का कर (स्थानीय निकाय को समनुदेशन के बाद निवल)	819	733	849	903	15.8	6.4
ix. अन्य कर और शुल्क	1,264	265	3,004	4,265	1,033.6	42.0

बअ : बजट अनुमान. संअ : संशोधित अनुमान. – कुछ नहीं / नाम मात्र का.
टिप्पणी : कोष्ठक में दिए गए आँकड़े सकल घरेलू उत्पाद (जी डी पी)के प्रतिशत हैं।

[3] इस खंड में, 2006-07 की सभी तुलनाएँ 2005-06 के लिए संशिधित अनुमानों से हैं, जबतक अन्यथा न घोषित किया जाए।

सारणी 2.17 : केंद्र की व्यय पद्धति

(करोड़ रुपए)

मद	2004-05	2005-06 (बअ)	2005-06 (संअ)	2006-07 (बअ)	प्रतिशत	
					स्तंभ 4 का 3 प	स्तंभ 5 का 4 पर
1	2	3	4	5	6	7
कुल व्यय (1+2)	4,97,682	5,14,344	5,08,705	5,63,991	-1.1	10.9
1. राजस्व व्यय	**3,84,351**	**4,46,512**	**4,40,295**	**4,88,192**	**-1.4**	**10.9**
ब्याज भुगतान	1,26,934	1,33,945	1,30,032	1,39,823	-2.9	7.5
उपदान	43,653	47,432	46,874	46,213	-1.2	-1.4
राज्यों को अनुदान	52,686	77,275	70,971	83,098	-8.2	17.1
रक्षा राजस्व	43,862	48,625	48,625	51,542	0.0	6.0
2. पूंजीगत व्यय	**1,13,331***	**67,832**	**68,410**	**75,799**	**0.9**	**10.8**
ऋण और अग्रिम	28,910	5,652	11,417	8,861	102.0	-22.4
रक्षा पूंजी	31,994	34,375	33,075	37,458	-3.8	13.3
गैर रक्षा पूंजी लागत	19,752	27,805	23,918	29,480	-14.0	23.3

बअ : बजट अनुमान. संअ: संशोधित अनुमान. *राष्ट्रीय लघु बचत कोष को चुकाए गए 32, 675 करोड़ रुपए शामिल हैं।

बजट में उत्पाद शुल्क संग्रहण में, पूर्ववर्ती वर्ष में 13.0 प्रतिशत की अपेक्षा, 6.3 प्रतिशत के निम्नतर विकास को दर्शाने का प्रावधान किया गया है। बजट, गैर कर राजस्व में गिरावट को, 2006-07 में थोड़ी वृद्धि से, प्रमुखरूप से लाभांश और लाभ के अंतर्गत उन्नत संग्रहण के आधार पर, रोकने का प्रस्ताव करता है। 2006-07 में राज्य सरकारों से ऋण और उधार की वसूली में थोड़ी गिरावट अनुमानित है। बजट, केंद्रीय सार्वजनिक उपक्रम क्षेत्रों (सी पी एस यू) में सरकारी ईक्विटी के आंशिक विनिवेश के कारण 3,840 करोड़ रुपए की अनुमानित प्राप्तियाँ दर्ज करता है परंतु इन प्राप्तियों को, 2006-07 में पूंजीगत लागतों के अंतर्गत, लेनदेन घाटे को तटस्थ बनाते हुए, राष्ट्रीय निवेश कोष (एन आइ एफ) के लिए अलग करता है (सारणी 2.16)।

2.44 राजस्व खर्च में नियंत्रण बजट अनुमानों का एक प्रमुख लक्षण है, विशेषरूप से गैर योजना घटकों में। 2006-07 में उपदानों पर खर्च में गिरावट का प्रावधान बजट में किया गया है जबकि ब्याज भुगतानों और रक्षा राजस्व खर्च का अपेक्षाकृत निम्नतर विकास दरों से बढ़ने का बजट में प्रावधान है। उपदानों में, खाद्य और पेट्रोलियम के सिवाय, सभी प्रमुख घटकों में, 2006-07 के दौरान, गिरावट का प्रावधान बजट में किया गया है। 2006 -07 में, पूंजीगत खर्च 10.8 प्रतिशत से बढ़ने का, 2005-06 के 39.6 प्रतिशत गिरावट के विपरीत, प्रमुख रूप से रक्षा और गैर रक्षा पूंजीगत लागतों दोनों में वृद्धि के कारण, बजट में प्रावधान किया गया (सारणी 2.17)।

2.45 सकल राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण नमूना संकेत देता है कि निवल बाजार उधार (बाजार स्थिरीकरण योजना [एम एस एस] के अंतर्गत बजट में प्रावधान किए गए शक्तिदायी आबंटन के सिवाय), 2006-07 में जी एफ डी का 76.5प्रतिशत, पिछले वर्ष की 69.2 प्रतिशत की तुलना मे, अर्थ-व्यवस्था करेगा। जमाराशियों और उधार जी एफ डी के उच्चतर हिस्से का वित्तपोषण करेंगे जबकि जी एफ डी के लिए, 2006-07 में, आरक्षित निधियों के हिस्से में गिरावट का बजट में प्रावधान किया गया है। बजट अनुमानों ने, नकदी शेष जमाराशि के आहरण के लिए, पूर्ववर्ती वर्ष के जी एफ डी के 10.3 प्रतिशत की तुलना में, कोई प्रावधान नहीं किया। लघु बचतों के बदले प्रतिभूतियाँ, जिसने 2005-06 में जी डी पी का केवल 0.9 प्रतिशत वित्तपोषण किया, 2006-07 में 2.00 प्रतिशत वित्तपोषण करेंगी ऐसी अपेक्षा है (सारणी 2.18)।

सारणी 2.18 : सकल राजकोषीय घाटे की वित्तपोषण पद्धति

(करोड़ रुपए)

मद	2005-06 (संअ)	2006-07 (बअ)
1	2	3
सकल राजकोषीय घाटा	1,46,175	1,48,686
द्वारा वित्त पोषित		
बाजार उधार राशियाँ	1,01,082	1,13,778
	(69.2)	(76.5)
लघु बचतों के बदले प्रतिभूतियाँ	1,350	3,010
	(0.9)	(2.0)
बाह्य सहायता	7,515	8,324
	(5.1)	(5.6)
राज्य भविष्यनिधि कोष	5,500	6,000
	(3.8)	(4.0)
राष्ट्रीय लघु बचत निधि	-7,332	648
	-(5.0)	(0.4)
आरक्षित निधियाँ	3,526	1,725
	(2.4)	(1.2)
जमाराशि और अग्रिम	4,654	11,013
	(3.2)	(7.4)
डाक बीमा और जीवन वार्षिकी निधियाँ	1,215	1,265
	(0.8)	(0.9)
नकदी शेष जमाराशि का आहरण	15,037	0
	(10.3)	(0.0)
अन्य #	13,627	2,923
	(9.3)	(2.0)

बअ : बजट अनुमान। संअ : संशोधित अनुमान।

बचत (कर युक्त) बंधपत्र 2003 और सेवानिवृत्त कर्मचारियों के लिए जमाराशियों की योजना शामिल हैं।

टिप्पणी : कोष्ठक में दिए गए आँकड़े सकल राजकोषीय घाटे (जी एफ डी) के प्रतिशत हैं।

राज्य सरकार के वित्तसाधन

2.46 राज्य सरकारों के लिए विकासशील नीति वातावरण तीन महत्त्वपूर्ण गतिविधियों से बना है, अर्थात्, (i) राज्य-स्तर पर चल रहे राजकोषीय और संस्थागत सुधार, जो केंद्रीय सरकार और रिज़र्व बैंक के उपक्रमणों द्वारा सुविधाजनक और अनुपूरित हैं, (ii) केंद्र सरकार द्वारा बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) के सिफ़ारिशों की सामान्य स्वीकृति, जो 2005-06 के प्रारंभ से पांच-वर्ष की अवधि में राजकोषीय संघीय संबंधों का आधार बनाएगा, और (iii) अप्रैल 1, 2005 से बाईस राज्यों द्वारा मूल्य वर्द्धित कर (वैट) का कार्यान्वयन, जो कि कर सुधारों के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। 2005- 06 में राज्य सरकारों के बजट में प्रावधान किए गए समेकित राजकोषीय स्थिति का परीक्षण, बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) की सिफ़ारिशों की पृष्ठभूमि में, किया जा सकेगा। 2004-05 (संशोधित अनुमान) के राजकोषीय परिदृश्य के विपरीत, 2005-06 के दौरान बड़े सुधारों का विचार है।

2.47 रिज़र्व बैंक ने अपनी ओर से, जनवरी 2005 में, ''राज्यस्तरीय मॉडेल राजकोषीय दायित्व विधिनिर्माण (एफ आर एल) का कार्यकारी समूह'' के रिपोर्ट को अंतिम रूप दिया और मार्च 2005 में प्रकाशित किया। रिपोर्ट एफ आर एल का एक ढांचा उपलब्ध कराता है और विविध मापदंडों के अनुसार विशिष्टता को हल करने के लिए राज्यों के विवेक पर छोड़ता है। सोलह राज्यों अर्थात् , कर्नाटक, केरल, पंजाब, तमिल नाडु, उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, महाराष्ट्र, गुजरात, असम, छत्तीसगढ़, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, मध्य प्रदेश, त्रिपुरा और आंध्र प्रदेश ने अब तक एफ आर एल अधिनियम बनाया। मणिपुर ने 2005-06 में एफ आर एल विधेयक पेश किया है। मेघालय और उत्तरांचल ने भी अपने 2005-06 के बजट में एफ आर एल पेश करने का प्रस्ताव दिया है।

2.48 बारहवाँ वित्त आयोग (टी एफ सी) रिपोर्ट, जो कि मध्य-अवधि में राजकोषीय संघवाद की एक रूपरेखा है, ने एक उच्चतर राशि का अंतरण करने की सिफ़ारिश की जिससे जी डी पी संबंधी अंतरण के परिमाण में गिरावट को उलटा किया जा सके और समस्तर असंतुलन (राज्यों के बीच) को सुधारते हुए न्यूनतम ऊर्ध्वाधर अंतरण (केंद्र और राज्यों के बीच) को सुनिश्चित किया जा सके। 2005-06 से 2009-10 की कालावधि के लिए, केंद्र से राज्यों को कुल संसाधन अंतरण को (हिस्सेदारी योग्य कर आय और अनुदान शामिल करते हुए) 7,55,752 करोड़ रुपए पर रखा गया है, जो कि 2000-01 से 2004-05 की कालावधि के लिए ग्यारहवें वित्त आयोग द्वारा सुझाए गए 4,34,905 करोड़ रुपए से लगभग 74 प्रतिशत उच्चतर है।

2.49 बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) ने केंद्र और राज्यों के लिए, संस्थागत राजकोषीय ढांचे और विभिन्न राजकोषीय मापदंडों के लिए लक्ष्यों को स्थापित करने के माध्यम के जरिए, राजकोषीय समेकन की आवश्यकता पर जोर दिया है। बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) की प्रमुख सिफ़ारिशों में शामिल हैं, राज्यों को अनुदानों का बढ़ा हुआ अंतरण, राज्य-विशिष्ट अनुदान, राज्यों को केंद्रीय प्लान सहायता बंद करना, करों और उत्पाद शुल्कों में बढ़ा हुआ हिस्सा, ऋण राहत माध्यम के जरिए पुनर्संरचना और बट्टे-खाते में डालना और स्थानीय निकायों को अंतरण पर जोर। बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) ने भी, ऋण राहत को उपलब्ध कराने के लिए, राज्यों द्वारा राजकोषीय विधान को अधिनियम बनाने को पूर्व-शर्त बना कर उसे प्रोत्साहित किया है। 2005-06 के दौरान अब तक 22 राज्यों में वैट लागू किया गया है। कराधान के सोपानी प्रभाव का परिहार और स्वयं-मूल्यांकन प्रणाली के जरिए कर अनुपालन का संवर्द्धन करना, जो वैट के अंतर्भूत है, न केवल आर्थिक निपुणता को बढ़ाने में प्रेरक होगा परंतु, कालावधि में, राज्यों के अपने कर-राजस्व के विकास के दर में तेज़ी में भी सहायता करेगा। 2005-06 के लिए केंद्रीय बजट में राज्यों को क्षतिपूर्ति के रूप में 5, 000 करोड़ रुपए का प्रावधान, राज्य-स्तरीय वैट लागू करने के कारण संभावित राजस्व में कमी के कारण, शामिल है। एक प्रमुख मुद्दा जिस पर 2005-06 के दौरान शक्ति-प्रदत्त समिति फिर से विचार करेगी वह है अंतर-राज्यीय अथवा केंद्रीय बिक्री कर (सी एस टी) को चरणबद्ध हटाना। इस स्रोत से राज्य लगभग 15,000 करोड़ रुपए का वार्षिक राजस्व इकट्ठा करते हैं।

2.50 2005-06 के लिए राज्य बजटों ने, अवांछित व्यय में कटौती के जरिए, राजकोषीय समेकन पर जोर देना जारी रखा। कुछ राज्यों ने समाज के कुछ वर्गों को मुफ्त बिजली देने की नीति की समीक्षा करने का और बड़े पेंशन दायित्व को संबोधित करने के लिए ''अंशदायी पेंशन निधियों'' को लागू करने का प्रस्ताव किया है। चूककर्ता सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों की बकाया राशि को चुकाने की पहल के अलावा बिजली-क्षेत्र सुधारों को ऊंची प्राथमिकता भी राज्य बजटों में सुस्पष्ट है। कुछ राज्यों ने भी, दिसंबर 2004 के सुनामी विनाश से प्रभावित लोगों के लिए पुनर्वास और कल्याण उपायों की पहल की है।

बजट अनुमान-2005-06[4]

2.51 2005-06 के लिए राज्य बजट राजकोषीय असंतुलनों के तीव्र सुधार का विचार करते हैं। सभी प्रमुख घाटा संकेतकों का, बजट में, पिछले वर्ष में उनके स्तर से बहुत निम्नतर प्रावधान किया गया है (सारणी 2.19)। राजस्व घाटे को और कम, पिछले वर्ष में उसके स्तर से लगभग आधा, किया जाएगा।

[4] 2005-06 बजट अनुमानों के लिए राज्यों की वित्त-व्यवस्था का विश्लेषण 29 राज्य सरकारों के बजट दस्तावेजों पर आधारित है, उसमें से एक *खाते पर वोट* है। सभी आंकडें अनंतिम हैं।

सारणी 2.19: राज्य सरकारों के प्रमुख घाटा संकेतक

(करोड़ रुपए)

मद	1990-95 (औ)	1995-00 (औ)	2000-03 (औ)	2003-04 (खातों)	2004-05 बअ	2004-05 संअ	2005-06 बअ	प्रतिशत भिन्नता स्तंभ 7 / 6	स्तंभ 8
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
सकल राजकोषीय घाटा				1,23,070	1,14,647	1,23,635	1,10,070	7.8	-11.0
	(2.8)	(3.4)	(4.2)	(4.5)	(3.7)	(4.0)	(3.1)		
राजस्व घाटा				61,145	45,425	44,302	24,770	-2.5	-44.1
	(0.7)	(1.6)	(2.5)	(2.2)	(1.5)	(1.4)	(0.7)		
प्राथमिक घाटा				41,306	23,789	35,737	16,772	50.2	-53.1
	(1.1)	(1.4)	(1.5)	(1.5)	(0.8)	(1.1)	(0.5)		

औ : औसत। बअ : बजट अनुमान। संअ : संशोधित अनुमान।

टिप्पणी : (1) कोष्ठक में दिए गए आँकड़े जी डी पी के प्रतिशत हैं।

(2) 1990-91 से 1998-99 तक जीडीपी पुराने आधार (1993-94) पर है जबकि 1999-2000 से आगे वह नए आधार (1999-2000)पर है।

स्रोत : (1) राजकोषीय परिवर्तन के आंकड़ें राज्य सरकारों के बजट दस्तावेज़ों से संकलित किए गए हैं।

(2) जीडीपी के लिए आंकड़ें केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (सीएसओ) के वेबसाइट से प्राप्त किए गए हैं।

2.52 2005-06 के दौरान, राजस्व खाते में सुधार, प्रमुख रूप से गैर ब्याज राजस्व खर्चे की वृद्धि को रोक कर लाया जाएगा। लगभग सभी राजस्व खर्च के अंतर्गत विकासात्मक मदों की विकास दरें संभवतःमंदी दर्ज करेंगे। गैर विकासात्मक राजस्व खर्च के अंदर, प्रशासनिक सेवाओं के विकास दर में तेज़ी अपेक्षित है जबकि ब्याज भुगतानों की वृद्धि-दर में संभवतः मंदी होगी। 2005-06 के दौरान पूंजीगत लागत बढ़ाई जाएगी, यद्यपि, जीडीपी के अनुपात के रूप में वह पिछले वर्ष के स्तर पर रहेगा। कुल मिलाकर, 2005-06 के दौरान विकासात्मक व्यय का जीडीपी से अनुपात, गैर विकासात्मक व्यय का जीडीपी के अनुपात से, एक वृहत्तर गिरावट दर्ज करेगा (सारणी 2.20)।

सारणी 2.20 : राज्य सरकारों की व्यय पद्धति

(करोड़ रुपए)

मद	1990-95 (औ)	1995-00 (औ)	2000-03 (औ)	2003-04 (खातों)	2004-05 बअ	2004-05 संअ	2005-06 बअ	प्रतिशत भिन्नता स्तंभ 7/6	स्तंभ 8/7
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
कुल खर्च				13,31,748	11,23,935	12,30,076	11,53,938	9.4	-6.2
(1+2=3+4+5)	(16.0)	(15.3)	(16.7)	(48.2)	(36.2)	(39.4)	(32.7)		
1. राजस्व खर्च				3,77,681	4,20,006	4,28,741	4,55,040	2.1	6.1
उसमें से	(12.8)	(12.6)	(13.8)	(13.7)	(13.5)	(13.7)	(12.9)		
ब्याज भुगतान				81,763	90,858	87,899	93,298	-3.3	6.1
	(1.7)	(2.0)	(2.7)	(3.0)	(2.9)	(2.8)	(2.6)		
2. पूंजीगत व्यय				9,54,068	7,03,929	8,01,335	6,98,898	13.8	-12.8
उसमें से	(3.2)	(2.7)	(2.9)	(34.6)	(22.7)	(25.7)	(19.8)		
पूंजी लागत				52,426	60,828	68,231	76,764	12.2	12.5
	(1.6)	(1.4)	(1.5)	(1.9)	(2.0)	(2.2)	(2.2)		
3. विकासात्मक खर्च				2,80,099	2,89,223	3,16,172	3,25,672	9.3	3.0
	(10.8)	(9.6)	(9.6)	(10.1)	(9.3)	(10.1)	(9.2)		
4. गैर विकासात्मक खर्च				1,69,021	1,99,770	1,93,602	2,11,368	-3.1	9.2
	(4.3)	(4.9)	(6.0)	(6.1)	(6.4)	(6.2)	(6.0)		
5. अन्य*				8,82,627	6,34,942	7,20,303	6,16,898	13.4	-14.4
	(0.9)	(0.7)	(1.2)	(32.0)	(20.4)	(23.1)	(17.5)		

औ : औसत। बअ : बजट अनुमानों। संअ : संशोधित अनुमानों।

* स्थानीय निकायों को क्षतिपूर्ति और आबंटन, सहायक अनुदान और योगदान, वित्त विभाग के पास रिजर्व, आंतरिक ऋण की अदायगी, केंद्र को ऋणों की चुकौती 2002-03 तक, शामिल हैं। 2003-04 से, अंतर-राज्यीय निपटान, आकस्मिकता कोष, लघु बचतें, भविष्य निधि कोष, इत्यादि, आरक्षित निधियाँ, जमाराशि और अग्रिम, उचंत और फुटकर , आकस्मिकता कोष को विनियोजन और प्रेषण भी शामिल हैं।

टिप्पणी :(1) कोष्ठक में दिए गए आँकड़े जी डी पी के प्रतिशत हैं।

(2) 2003-04 से शुरू, पूंजीगत खर्च में, सार्वजनिक खातों के अनुरूपी मद, जो कि अब तक निवल आधार पर पूंजीगत प्राप्तियों के अंतर्गत थे, शामिल हैं। आँकड़े, इसलिए, पूर्ववर्ती वर्ष के आँकड़ों के साथ तुलनीय नहीं हैं। कुल खर्च के तुलनीय आँकड़े, निवल आधार पर, वर्ष 2003-04 (खातों) , 2004-05 (बअ) , 2004-05 (संअ) और 2005-06 (बअ) के लिए क्रमशः 19.1 प्रतिशत,17.9 प्रतिशत, 19.0 प्रतिशत और 16.4 प्रतिशत, हैं। पूंजीगत खर्च के तुलनीय आँकड़े,निवल आधार पर, वर्ष 2003-04 (खातों) , 2004-05 (बअ) , 2004-05 (संअ) और 2005-06 (बअ) के लिए क्रमशः 5.4 प्रतिशत, 4.3 प्रतिशत, 5.3 प्रतिशत और 3.5 प्रतिशत, हैं।

(3) 1990-91 से 1998-99 तक जीडीपी पुराने आधार (1993-94) पर है जबकि 1999-2000 से आगे वह नए आधार (1999-2000)पर है।

स्रोत :(1) राजकोषीय परिवर्तन के आंकड़े राज्य सरकारों के बजट दस्तावेज़ों से संकलित किए गए हैं।

(2) जीडीपी के लिए आंकड़े केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (सीएसओ) की वेबसाइट से प्राप्त किए गए हैं।

2.53 प्राप्तियों के बारे में, राज्यों के अपने कर आय का जीडीपी से अनुपात और थोड़ी वृद्धि बताएगा (सारणी 2.21)। बाईस राज्य सरकारों द्वारा वैट का कार्यान्वियन, वर्ष के दौरान, राज्यों के अपने कर राजस्वों पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव होगा। तथापि, 2005-06 में, मुख्यत: ब्याज प्राप्तियों में तीव्र गिरावट के कारण, राज्यों के अपने गैर कर राजस्व, जीडीपी के अनुपात के रूप में कम होंगे। केंद्र से चालू अंतरण का, जीडीपी के अनुपात के रूप में, बजट में, 2004-05 (संशोधित अनुमान) की अपेक्षा, 4.8 प्रतिशत पर थोड़ा उच्चतर प्रावधान किया गया है। केंद्रीय बजट 2005-06 के अनुसार, बारहवें वित्त आयोग (टीएफसी) के सुझावों का, वर्ष 2005-06 के लिए, केंद्र पर पूरा प्रभाव (और प्रतिबिंब के रूप में, राज्यों पर) 26, 000 करोड़ रुपए का होगा। संभवत:, उच्चतर कर अंतरण, बढ़े हुए अनुदानों के अलावा ऋण राहत योजनाओं के कारण राज्यों को लाभ होगा। बजट 2005-06 के अनुसार, सकल अंतरण में वृद्धि और राज्यों को अंतरण (कर हिस्सा, अनुदान और ऋणों के जरिए), 2005-06 में, पिछले वर्ष के संशोधित अनुमानों से अधिक, लगभग 17,000 करोड़ रुपए है।

2.54 सकल राजकोषीय घाटा (जीएफडी) का वित्तपोषण दर्शाता है कि, राज्य सरकारों का लघु बचतों के हिस्से मे ंवृद्धि का प्रावधान, 2005-06 के दौरान बजट में, 2004-05 की तुलना में बाजार उधार राशियों के हिस्से में गिरावट के विरूद्ध, किया गया है (सारणी 2.22)।

2.55 केंद्र से कर्ज, जिसने पूर्ववर्ती तीन वर्षों (2002-03 से 2004-05 तक) के दौरान निवल चुकौती दर्शायी, का राज्यों के उधार की आवश्यकताओं के एक बहुत बड़े अनुपात की वित्त-व्यवस्था करने का बजट में प्रावधान किया गया क्योंकि राज्यों ने, केंद्र सरकार का राज्य सरकारों को कर्ज की समाप्ति की सिफारिश का टीएफसी के सुझावों को, ध्यान में नहीं लिया। 2005-06 के दौरान, राज्य सरकारों के लिए बाजार कर्ज कार्यक्रम के अंतर्गत अनंतिम निवल आबंटन को 16,112

सारणी 2.21 : राज्य सरकारों की कुल प्राप्तियाँ

(करोड़ रुपए)

मद	1990-95 (औ)	1995-00 (औ)	2000-03 (औ)	2003-04 (खातें)	2004-05 बअ	2004-05 संअ	2005-06 बअ	प्रतिशत भिन्नता स्तंभ 7 / 6	स्तंभ 8 / 7
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
कुल प्रालप्तियाँ (1+2)	(16.1)	(15.2)	(16.8)	13,30,584 (48.2)	11,18,716 (36.0)	12,23,312 (39.2)	11,55,807 (32.7)	9.3	-5.5
1. कुल राजस्व प्राप्तियाँ (क+ख)	(12.1)	(10.9)	(11.3)	3,16,536 (11.5)	3,74,581 (12.1)	3,84,438 (12.3)	4,30,270 (12.2)	2.6	11.9
(क)राज्यों का अपना राजस्व	(7.3)	(6.9)	(7.2)	1,98,109 (7.2)	2,35,217 (7.6)	2,36,596 (7.6)	2,61,795 (7.4)	0.6	10.7
राज्यों का अपना कर	(5.4)	(5.3)	(5.7)	1,59,921 (5.8)	1,85,605 (6.0)	1,87,415 (6.0)	2,15,243 (6.1)	1.0	14.8
राज्यों का अपना गैर कर	(1.8)	(1.6)	(1.5)	38,189 (1.4)	49,612 (1.6)	49,181 (1.6)	46,552 (1.3)	-0.9	-5.3
(ख)केंद्रीय अंतरण	(4.9)	(4.0)	(4.2)	1,18,426 (4.3)	1,39,364 (4.5)	1,47,843 (4.7)	1,68,475 (4.8)	6.1	14.0
हिस्सेदारी योग्य कर	(2.6)	(2.4)	(2.3)	67,079 (2.4)	77,952 (2.5)	80,755 (2.6)	90,003 (2.6)	3.6	11.5
केंद्रीय अनुदान	(2.3)	(1.6)	(1.9)	51,348 (1.9)	61,413 (2.0)	67,088 (2.1)	78,472 (2.2)	9.2	17.0
2. पूंजीगत प्राप्तियाँ (क+ख)	(4.0)	(4.2)	(5.5)	10,14,047 (36.7)	7,44,135 (24.0)	8,38,873 (26.9)	7,25,537 (20.6)	12.7	-13.5
(क)केंद्र से ऋण @	(1.2)	(1.0)	(1.0)	26,127 (0.9)	34,040 (1.1)	32,940 (1.1)	31,216 (0.9)	-3.2	-5.2
(ख)अन्य पूंजीगत प्राप्तियाँ	(2.9)	(3.2)	(4.4)	9,87,920 (35.8)	7,10,095 (22.9)	8,05,933 (25.8)	6,94,321 (19.7)	13.5	-13.8

औ : औसत। बअ : बजट अनुमान। संअ : संशोधित अनुमान।

@ लेखा प्रणाली में 1999-2000 प्रभाव से बदलाव के कारण, राज्यों का लघु बचतों में हिस्सा,जो पहले केंद्र से ऋण के अंतर्गत शामिल था, आंतरिक ऋणों में शामिल किया गया है और केंद्र सरकार के राष्ट्रीय लघु बचत कोष (एनएसएसएफ) को जारी विशेष प्रतिभूतियों के रूप में दर्शाया गया है। तथापि, 1999-2000 से पहले के वर्षों के आंकड़े, जैसा कि इस सारणी में बताया गया है, तुलना के लिए, लघु बचतों के बदले ऋण को अलग करता है।

टिप्पणी : (1) कोष्ठक में दिए गए आँकड़े जी डी पी के प्रतिशत हैं।

(2) 2003-04 से पूंजीगत प्राप्तियों के आँकड़े सकल आधार पर हैं , इसलिए, पूर्ववर्ती वर्ष के आँकड़ों साथ तुलनीय नहीं हैं। कुल प्राप्तियों के तुलनीय आँकड़े, निवल आधार पर, वर्ष 2003-04 (खातें), 2004-05 (बअ) , 2004-05 (संअ) और 2005-06 (बअ) के लिए क्रमश: 19.1 प्रतिशत,17.8 प्रतिशत, 18.9 प्रतिशत और 16. 5 प्रतिशत, हैं। पूंजीगत प्राप्तियों के तुलनीय आँकड़े,निवल आधार पर, वर्ष 2003-04 (खातें) , 2004-05 (बअ) , 2004-05 (संअ) और 2005-06 (बअ) के लिए क्रमश: 7.6 प्रतिशत, 5.7 प्रतिशत, 6.5 प्रतिशत और 4.3 प्रतिशत, हैं।

(3) 1990-91 से 1998-99 तक जीडीपी पुराने आधार (1993-94) पर है जबकि 1999-2000 से आगे वह नए आधार (1999-2000)पर है।

स्रोत : (1) राजकोषीय परिवर्तनता के आंकड़ें राज्य सरकारों के बजट दस्तावेजों से संकलित किए गए हैं।

(2) जीडीपी के लिए आंकड़ें केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (सीएसओ) के वेबसाइट से प्राप्त किए गए हैं।

सारणी 2.22 : राज्यों के जीएफडी का वियोजन और वित्तपोषण पद्धति

(प्रतिशत)

मद	1990-95 (औ)	1995-00 (औ)	2000-03 (औ)	2003-04 (खातों)	2004-05 बअ	2004-05 संअ	2005-06 बअ
1	2	3	4	5	6	7	8
वियोजन (1+2+3)	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**
1. राजस्व घाटा	24.7	44.7	58.5	49.7	39.6	35.8	22.5
2. पूंजीगत लागत	55.3	43.2	34.7	42.6	53.1	55.2	69.7
3. निवल दिए हुए ऋण	20.0	12.1	6.8	7.7	7.3	9.0	7.8
वित्तपोषण (1से11 तक)	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**	**100.0**
1. बाज़ार उधार राशियाँ	16.0	16.1	19.9	38.4	24.0	26.4	14.6
2. केंद्र से ऋण	49.0	40.6	6.6	11.5	13.8	4.7	15.8
3. एनएसएसएफ को जारी किए गए प्रतिभूतियों के बदले ऋण	–	28.9*	41.6	16.9	34.1	43.4	47.8
4. एलआइसी, नाबार्ड, एनसीडीसी, भारतीय स्टेट बैंक और अन्य बैंकों से लिए गए कर्ज	1.8	2.8	5.5	3.4	4.6	2.3	7.3
5. राज्य भविष्य निधि कोष	14.3	13.4	9.2	5.8	9.1	7.8	7.2
6. आरक्षित निधियाँ	6.8	5.5	4.3	5.2	5.2	5.0	3.8
7. जमाराशियाँ और अग्रिम	9.8	9.8	4.6	-0.3	0.1	-1.0	-2.5
8. उचंत और फुटकर	4.3	2.7	0.4	-4.4	-1.6	0.5	-1.3
9. प्रेषण	-1.4	-3.6	0.3	1.5	1.0	-0.8	1.5
10. कुल अधिशेष (+) / घाटा (-)	4.4	-2.6	1.2	-0.9	-4.6	-5.5	1.0
11. अन्य	-5.0	9.5	6.4	23.0	14.2	17.1	4.7

औ : औसत। बअ : बजट अनुमानों। संअ : संशोधित अनुमानों। - : नहीं लागू।

* 1999-2000 से संबंधित है क्योंकि उसे केवल उस वर्ष से ही लागू किया गया था।1995-2000 (औ) के लिए मदों का जोड़ 100 नहीं होगा।

टिप्पणी : (1) कुल अधिशेष / घाटे का मेल 2003-04 से नकद राशि के जमाशेष की वृद्धि/ कमी से होगा। यह, नकद राशि निवेश खाते को अब ''उचंत और फुटकर'' में शामिल करने के कारण हुआ जबकि अर्थोपाय अग्रिम / भारतीय रिज़र्व बैंक से ओवर ड्राफ़्ट ''आंतरिक ऋण'' के अंतर्गत शामिल है।

(2) 'अन्य' (मद संख्या 11) में फुटकर पूंजीगत प्राप्तियाँ, आकस्मिकता कोष, अंतर-राज्य निपटान, अर्थोपाय अग्रिम / भारतीय रिज़र्व बैंक से ओवर ड्राफ़्ट, इत्यादि शामिल हैं।

स्रोत : राज्य सरकारों के बजट दस्तावेज।

करोड़ रुपए पर रखा गया है। 6,274 करोड़ रुपए की चुकौतियों और 3,202 करोड़ रुपए के अतिरिक्त कर्ज आबंटन को ध्यान में रखते हुए, सकल आबंटन 25,589 करोड़ रुपए होता है। राज्यों ने, 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक) 19, 909 करोड़ रुपए की राशि उगाही है (सारणी 2.23)। बाज़ार ऋणों का भारित औसत ब्याज दर, 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक), पिछले वर्ष की अनुरूपी कालावधि के दौरान 6.44 प्रतिशत की तुलना में, 7.62 प्रतिशत तक मजबूत हुआ (चार्ट II. 7)।

2.56 राज्यों ने सामान्यत: टीएफसी की सिफ़ारिशों को ध्यान में नहीं लिया। राज्यों की योजनाओं के लिए निवल केंद्रीय ऋणों की गणना करते हुए, जैसा कि 2005-06 के केंद्रीय बजट में सूचित किया गया है, और मानकर कि राज्य योजनाएँ बजट स्तर पर कायम रखी हैं, 2005-06 के दौरान बाजार ऋण, उच्चतर कर और अनुदानों के अंतरण के कारण जैसा कि केंद्रीय बजट में टीएफसी की सिफ़ारिशों के कारण ध्यान दिया गया है और राष्ट्रीय लघु बचत कोष (एनएसएसएफ) से वृहत्तर प्राप्तियों के कारण, अनंतिम निवल आबंटन राशि से बहुत उच्चतर नहीं होगा।

2.57 वर्ष 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 2006 की समाप्ति तक) राज्यों द्वारा अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यू एम ए) का साप्ताहिक औसत उपयोग और ओवरड्राफ्ट 481 करोड़ रुपए हुआ जो कि पिछले वर्ष की अनुरूपी कालावधि के 2,914 करोड़ रुपए से उल्लेखनीय रूप से निम्नतर था (चार्ट II.8)।

2.58 राज्यों की कुल नकदी स्थिति 14-दिवसीय मध्यवर्ती ख़ज़ाना बिलों के निवेश में तेजी से प्रतिबिंबित होती है। 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 2006 की समाप्ति तक) राज्यों द्वारा 14-दिवसीय ख़ज़ाना बिलों में साप्ताहिक औसत निवेश 34, 045 करोड़ रुपए हुआ, जो पिछले वर्ष की अनुरूपी कालावधि के 9,945 करोड़ रुपए से बहुत ही उच्चतर थी (चार्ट II.9)। 2004-05 में संपूर्ण वर्ष के दौरान 13 राज्यों की तुलना में, 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक) नौ राज्यों ने ओवरड्राफ्ट का सहारा लिया।

दृष्टिकोण

2.59 वर्ष 2005-06 महत्त्वपूर्ण है, न सिर्फ इसलिए कि वह बारहवें वित्त आयोग (टीएफसी) के निर्णय का पहला वर्ष है बल्कि इसलिए कि उसने दीर्घकाल से लंबित राज्य-स्तरीय वैट का कार्यान्वयन देखा, जो कर सुधारों के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) ने राज्यों को अंतरण और अंतरित करने में एक भारी वृद्धि की सिफारिश की है जो उनके बजटों पर दबाव को हल्का करने में सहायक होगा। इसके साथ, बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) ने, ऋण राहत को उपलब्ध करने के लिए, राज्यों द्वारा राजकोषीय जवाबदेही विधिनिर्माण (एफ आर एल) को अधिनियम बनाने को पूर्व-शर्त बना कर उसे प्रोत्साहित किया है। इसके अतिरिक्त, बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) की सिफारिश कि राज्यों को, अपनी वार्षिक योजनाओं की वित्त-व्यवस्था के लिए, बाजार में पैठ करने की ज़रूरत है (केंद्र के बजाय), संभवत: राजकोषीय अनुशासन उत्पन्न करेगा

सारणी 2.23 : 2005-06 के दौरान राज्य सरकारों की बाज़ार उधार राशियाँ (फरवरी 28, 2006 को)

(करोड़ रुपए)

मद	तारीख	काट दर (%)	अवधि (वर्ष)	उगाही गई राशि
1	2	3	4	5
(क) तैयार निर्गम				
पहला भाग	मई 17-18, 2005	7.77	10	7,554
दूसरा भाग	सितंबर 13, 2005	7.53	10	2,931
तीसरा भाग	जनवरी 16, 2006	7.61	10	700
कुल (क)				**11,185**
(ख) नीलामियाँ				
i. पहली	अप्रैल 20, 2005	7.45	10	300
ii. दूसरी	जून 14, 2005	7.39	10	2,181
iii. दूसरी	जून 14, 2005	7.35	10	210
iv. तीसरी	अगस्त 4, 2005	7.32	10	250
v. चौथी	सितंबर 27, 2005	7.45	10	367
vi. चौथी	सितंबर 27, 2005	7.42	10	146
vii. चौथी	सितंबर 27, 2005	7.50	10	327
viii. पांचवीं	नवंबर 17, 2005	7.34	10	375
ix. छठी	दिसंबर 15, 2005	7.33	10	361
x. सातवीं	जनवरी 19, 2006	7.32	10	317
xi. सातवीं	जनवरी 19, 2006	7.33	10	166
xii. आठवीं	फरवरी 27, 2006	7.65	10	950
xiii. आठवीं	फरवरी 27, 2006	7.67	10	619
xiv. आठवीं	फरवरी 27, 2006	7.68	10	600
xv. आठवीं	फरवरी 27, 2006	7.70	10	628
xvi. आठवीं	फरवरी 27, 2006	7.75	10	328
xvii. आठवीं	फरवरी 27, 2006	7.85	10	599
कुल -ख(i से xvii तक)				**8,724**
कुल योग (क+ख)				**19,909**

और ज्यादा यथार्थपूर्ण राज्य योजना लागतों के सूत्रीकरण का मार्गदर्शन करेगा। आशा है कि ये उपाय राज्यों द्वारा राजकोषीय सुधारों के कार्यान्वयन को जल्दी पूरा करेंगे और इस तरह उन्हें वांछित दूरी तय करने में मदद करेंगे कि जैसा बारहवें वित्त आयोग (टी एफ सी) की पुनर्संरचना योजना में विचार किया गया है। राज्यों को तदनुसार,लक्ष्य प्राप्ति के लिए, ठोस और पारदर्शी कार्यनीतियों का सूत्रीकरण करना जरूरी होगा।

चार्ट II.7: राज्य सरकारों के बाजार उधारों पर भारित औसत ब्याज दर

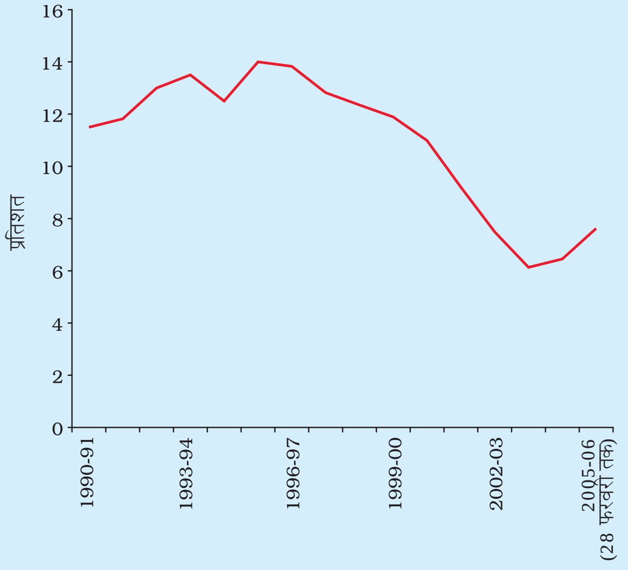

चार्ट II.8: राज्यों द्वारा डब्ल्यू एम ए और ओवर ड्राफ्ट का उपयोग (साप्ताहिक औसत)

चार्ट II.9: राज्य सरकारों द्वारा मध्यवर्ती खज़ाना बिलों में निवेश (साप्ताहिक औसत)

2.60 इस पृष्ठभूमि में, 2005-06 के लिए राज्यों के बजट, पिछले वर्ष के स्तर से पर्याप्त मात्रा में राजकोषीय सुधार दर्शाते हैं। तथापि, उभरते राजकोषीय परिदृश्य के मूल्यांकन को, टीएफसी द्वारा सिफ़ारिश किए गए और केंद्रीय बजट में बताए गए और वे जो राज्यों के बजट में दर्शाए गए, के बीच में अंतरण और अंतरित के आँकड़ों में अंतर का संभवत: संज्ञान लेना जरूरी है।

2.61 वर्ष 2005-06, बाईस राज्यों द्वारा,बिक्री कर की जगह, वैट अपनाने के कारण, विशिष्ट है। वैट के कार्यान्वयन में प्रारंभिक कठिनाइयों को प्रतिबिंबित करते हुए, कुछ राज्यों की राजस्व हानि की भारत सरकार द्वारा क्षतिपूर्ती की गई है। इसके अतिरिक्त, कई राज्यों ने एफआरएल अधिनियम बनाए जो टीएफ सी द्वारा प्रोत्साहित हैं। राजकोषीय सुधारों की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने की चेष्टा में, राज्य सरकारों ने अपने बजटों में नीति पहल पर विचार किया है जिसमें, नए करों का प्रस्ताव और विद्यमान का संशोधन, खर्चों का यौक्तिकरण, संस्थागत सुधारों और परिभाषित योगदानों पर आधारित नई पेंशन योजना का प्रारंभ, शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, चालू राजकोषीय वर्ष में राज्य सरकारों के अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यू एम ए) पर आश्रय में पर्याप्त मात्रा में गिरावट दर्ज करने के साथ-साथ रिज़र्व बैंक के पास, उनकेअधिशेष नकदी जमाशेष तुलन संपत्ति में तीव्र वृद्धि, जो कि 14 दिवसीय मध्यवर्ती खजाना बिलों में उनके निवेश से प्रतिबिंबित है, को देखा।

सार्वजनिक ऋण

2.62 केंद्रीय और राज्य सरकारों की संयुक्त बकाया देयताओं की गिरावट का, जी डी पी के अनुपात की तरह, मार्च 2005 के अंत में 82.1 प्रतिशत से मार्च 2006 के अंत में 80.7 प्रतिशत तक, बजट में प्रावधान है। बजट में प्रावधान किए गए ऋण-जीडीपी अनुपात में गिरावट प्रमुख रूप से राज्य स्तर पर विचार किए गए राजकोषीय समेकन के कारण है (सारणी 2.24)।

III. मौद्रिक और ऋण स्थिति

मौद्रिक परिस्थितियाँ

2.63 यह परिच्छेद, 2005-06 के दौरान मौद्रिक नीतियों का आकलन करता है और मौद्रिक गतिविधियों और ऋण समुच्चय को सम्मिलित करता है उसके बाद रिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि प्रबंध परिचालनों पर ऊंचे ऋण विकास के माहौल में एवं इंडिया मिलेनियम डिपॉजिट्स (आई एम डी) के विमोचन पर, मूल्य स्थिरता को सुनिश्चित करते हुए, चर्चा करता है। मुद्रास्फीति प्रबंध का भी, कच्चे तेल की कीमतों में व्यापक वृद्धि के संदर्भ में, परीक्षण किया है।

सारणी 2.24 : संयुक्त देय और ऋण-जीडीपी अनुपात

वर्ष (मार्च-अंत)	बकाया देय (करोड़ रुपए)			ऋण-जीडीपी अनुपात (प्रतिशत)		
	केंद्र	राज्यों	संयुक्त	केंद्र	राज्यों	संयुक्त
1	2	3	4	5	6	7
1990-91	3,14,558	1,28,095	3,68,764	55.3	22.5	64.8
1995-96	6,06,232	2,50,813	7,28,132	51.0	21.1	61.3
2002-03	15,59,201	7,97,684	19,82,061	63.6	32.6	80.9
2003-04	17,36,678	9,22,263	22,50,837	62.9	33.4	81.5
2004-05 संअ	19,81,514	10,40,834	25,62,822	63.5	33.3	82.1
2005-06 बअ	22,31,886	11,52,530	28,47,587	63.2	32.7	80.7

संअ : संशोधित अनुमान। बअ : बजट अनुमान ।

टिप्पणी : 2002-03 से आगे के वर्षों के लिए जीडीपी से अनुपात, आधार वर्ष 1999 -2000 के साथ, राष्ट्रीय खाता सांख्यिकी की नई शृंखला पर आधारित है।

स्रोत : केंद्र सरकार का बजट दस्तावेज़ और ''2005-06 के राज्य बजटों का एक अध्ययन'', भारतीय रिज़र्व बैंक, दिसंबर 2005।

2.64 अप्रैल 2005 में घोषित वार्षिक नीति वक्तव्य के रुझान के साथ, रिजर्व बैंक की वार्षिक नीति वक्तव्य की मध्यावधि समीक्षा (अक्तूबर 2005) ने संकेत दिया कि वह सुनिश्चित करना जारी रखेगी कि प्रणाली में यथोचित चलनिधि बनी रहे कि जिससे, मूल्य स्थिरता के उद्देश्य के अनुकूल, सभी ऋण की प्रामाणिक जरूरतें पूरी हों, एक ब्याज दर माहौल को सुनिश्चित करे, जो समष्टि आर्थिक एवं मूल्य स्थायित्व के लिए सहायक हो और विकास संवेग को बनाए रखे और इसके अतिरिक्त, उभरती हुई परिस्थितियों की प्रतिक्रिया स्वरूप, मुद्रास्फीतीय प्रत्याशाओं को स्थिर रखने के दृष्टिकोण से, नपे तुले अविलंब तौर से उपायों पर विचार करे।

2.65 2005-06 (जनवरी 24, 2006) के लिए रिज़र्व बैंक की वार्षिक नीति वक्तव्य की तीसरी तिमाही समीक्षा ने ध्यान दिया कि समष्टि आर्थिक गतिविधियों के सूचित मूल्यांकन पर आधारित, एक प्रगतिशील ढंग से विकास और मुद्रास्फीति पर दृष्टिकोण के साथ और अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में प्रतिकूल और अप्रत्याशित गतिविधियों के निर्गम को छोड़कर, वर्तमान समय पर मौद्रिक नीति का समग्र रुझान होगा :

- मुद्रास्फीतीय प्रत्याशायों को स्थिर रखने के दृष्टिकोण से मूल्य स्थिरता पर जोर को बनाए रखना।
- समष्टि आर्थिक, कीमत और वित्तीय स्थायित्व के लिए एक अनुकूल ब्याज दर माहौल सुनिश्चित करते हुए, विकास संवेग को बनाए रखने के लिए निर्यात और अर्थव्यवस्था में निवेश की मांग को सहायता जारी रखना।
- गुणवत्ता पर उचित ढंग से जोर देते हुए, अर्थव्यवस्था की प्रामाणिक ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए उपयुक्त चलनिधि उपलब्ध कराना।
- उत्पन्न हुई परिस्थितियों के उपयुक्त प्रतिक्रियाओं का विचार करना।

आरक्षित मुद्रा सर्वेक्षण

2.66 फरवरी 24, 2006 को 18.3 प्रतिशत पर आरक्षित मुद्रा का विस्तार, वर्ष-दर-वर्ष , एक वर्ष पहले के 15.3 प्रतिशत से उच्चतर था। वर्तमान राजकोषीय के अधिकांश हिस्से के लिए आरक्षित मुद्रा में उच्चतर विकास, अधिकांशत: चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) परिचालनों के माध्यम से चलनिधि के निवल अंत:क्षेप और बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) को मुक्त करने के कारण संचलित था (सारणी 2.25)।

2.67 वर्ष 2005-06 के दौरान (फरवरी 24, 2006 तक), माल व्यापार के घाटे में सुस्पष्ट वृद्धि और घरेलू ऋण की मांग में बढ़त के कारण रिज़र्व बैंक के बाजार परिचालनों ने प्रणाली में चलनिधि

सारणी 2.25 : आरक्षित मुद्रा के प्रमुख घटकों और स्रोतों में भिन्नता

(करोड़ रुपए)

मद	2004-05	2005-06 (फरवरी 24 तक)	2004-05				2005-06		
			ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
आरक्षित मुद्रा	**52,623**	**63,100**	**-6,812**	**-6,285**	**31,546**	**34,174**	**7,177**	**1,072**	**25,428**
घटक									
1. संचलन में करेंसी	41,633	54,808	14,317	-4,166	16,467	15,015	19,877	-9,479	29,130
2. रिज़र्व बैंक के पास बैंकर की जमा	9,631	9,615	-19,665	-2,874	14,769	17,401	-10,680	9,780	-2,967
3. रिज़र्व बैंक के पास ''अन्य'' जमा	1,359	-1,323	-1,463	755	310	1,757	-2,021	771	-736
स्रोत									
1. रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को दिया गया निवल ऋण	-62,882	51,593	-34,143	-6,179	184	-22,744	9,275	-25,251	19,879
उसमें से : केंद्र को	-60,177	56,904	-30,029	-4,499	203	-25,852	14,600	-25,251	19,812
2. बैंकों को और वाणिज्य क्षेत्र को रिज़र्व बैंक द्वारा दिया गया ऋण	-833	248	-2,985	-740	3,726	-835	1,155	-1,869	101
3. रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियाँ(एनएफ़ईए)	1,28,377	12,985	57,525	-5,260	31,462	44,651	-14,595	24,823	23,741
4. जनता के प्रति सरकार की करेंसी देयता	152	1,170	37	9	89	17	384	910	-124
5. रिज़र्व बैंक की निवल मुद्रेतर देयता	12,191	2,895	27,245	-5,885	3,916	-13,085	-10,957	-2,460	18,169
ज्ञापन मद :									
1. निवल घरेलू आस्तियाँ	-75,754	50,116	-64,336	-1,025	84	-10,477	21,771	-23,751	1,687
2. एफ सी ए, पुनर्मूल्यन के लिए समायोजित	1,15,044	25,598	33,160	-3,413	29,858	55,440	5,034	23,665	11,998
3. प्राधिकृत व्यापारियोंसे निवल खरीद	91,105	-4,812	30,032	-9,789	22,771	48,091	–	17,027	–
4. एनएफ़ईए/आरक्षित मुद्रा (प्रतिशत) (समाप्ति अवधि)	125.3	113.3	126.1	126.7	124.9	125.3	120.5	125.3	123.7
5. एनएफ़ईए/ मुद्रा (प्रतिशत)	166.2	147.8	158.8	159.2	160.7	166.2	154.0	164.4	158.4

एनएफ़ईए : निवल विदेशी मुद्रा आस्तियाँ। एफ़सीए : विदेशी मुद्रा आस्तियाँ ।

ध्यान दें : चौथी तिमाही के लिए (ति4) त्रैमासिक भिन्नता मार्च 31पर आधारित हैं और अंतिम रिपोर्टिंग शुक्रवार अन्य तिमाहियों के लिए ।

सारणी 2.26 : रिज़र्व बैंक के चलनिधि प्रबंध परिचालनों के चरण

(करोड़ रुपए)

मद	अप्रैल 1-जुलाई 22, 2005	जुलाई 23-अगस्त 12, 2005	अगस्त 13-अक्तूबर 28, 2005	अक्तूबर 29, 2005-फरवरी 24, 2006
1	2	3	4	5
क. चलनिधि के चालक (1+2+3)	**-6,737**	**27,792**	**-15,127**	**-60,036**
1. रिज़र्व बैंक की विदेशी मुद्रा आस्तियाँ (पुनर्मूल्यन के लिए समायोजित)	6,412	19,348	5,193	-5,355
2. जनता के पास मुद्रा	-15,274	-1,529	-7,940	-29,490
3. अन्य (अवशिष्ट)	2,125	9,973	-12,380	-25,191
3.1 रिज़र्व बैंक के पास केंद्र की अधिशेष नकदी शेष जमाराशि	6,053	5,972	-7,421	-15,515
ख.चलनिधि का प्रबंध (4+5+6+7)	**1,329**	**-24,567**	**16,187**	**71,349**
4. चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) रेपो का चलनिधि प्रभाव	8,845	-26,565	16,210	33,555
5. खुला बाजार परिचालन का चलनिधि प्रभाव (निवल)*	0	0	0	0
6. बाजार स्थिरीकरण योजना का चलनिधि प्रभाव	-7,516	1,998	-23	37,794
7. नकदी आरक्षित अनुपात (सी आर आर) बदलाव के कारण प्रथम दौर चलनिधि प्रभाव	0	0	0	0
ग.बैंक भंडार # (क+ख)	**-5,408**	**3,225**	**1,060**	**11,313**

\+ बैंकिंग प्रणाली में चलनिधि प्रवाहित करने का संकेत देता है।
\- बैंकिंग प्रणाली से चलनिधि के अवशोषण का संकेत देता है।
बैंकों के पास वॉल्ट नकदी और नकदी आरक्षित अनुपात (सी आर आर) बदलाव के कारण प्रथम दौर चलनिधि प्रभाव के लिए समायोजित, शामिल हैं।
* समेकित शोधन निधियाँ (सी एस एफ) और अन्य निवेश के लिए समायोजित ।

उपलब्ध कराई (सारणी 2.26)। दिसंबर 2005 के दौरान, बैंकिंग प्रणाली ने कुछ चलनिधि दबावों का, इंडिया मिलेनियम डिपॉज़िटों (आई एम डी) के विमोचन के संदर्भ में, सामना किया। तदनुसार, रिज़र्व बैंक ने रेपो परिचालनों के माध्यम से और बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) को मुक्त करके चलनिधि को प्रवाहित किया।

2.68 केंद्र को निवल रिज़र्व बैंक ऋण, चलनिधि परिस्थितियों को अनुकूल बनाने में अपने बाज़ार परिचालनों को दर्शाते हुए, 2005-06 के दौरान, पिछले वर्ष की तदनुरूपी कालावधि में 43,800 करोड़ रुपए की गिरावट के विपरीत, अब तक (फरवरी 24, 2006) 56,904 करोड़ रुपए से बढ़ा (सारणी 2.27)।

सारणी 2.27 : केंद्र को निवल रिज़र्व बैंक ऋण- भिन्नताएँ

(करोड़ रुपए)

परिवर्ती	2004-05	2005-06 (फरवरी 24 2006 तक)	2004-05				2005-06		
			ति1	ति2	ति3	ति4	ति1	ति2	ति3
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
केंद्र को निवल रिज़र्व बैंक ऋण (1+2+3+4-5)	**-60,177**	**56,904**	**-30,029**	**-4,499**	**203**	**-25,852**	**14,600**	**-25,251**	**19,812**
1. ऋण और अग्रिम	0	0	3,222	-3,222	0	0	0	0	0
2. रिज़र्व बैंक द्वारा धारित खजाना बिल	0	0	0	0	0	0	0	0	0
3. रिज़र्व बैंक द्वारा धारित दिनांकित प्रतिभूतियाँ	12,323	25,975	-2,900	22,176	14,095	-21,048	8,221	-17,243	19,378
4. रिज़र्व बैंक द्वारा धारित रुपए सिक्के	57	53	175	-10	-94	-14	-40	-33	157
5. केंद्र सरकार की जमाराशियाँ	72,558	-30,874	30,525	23,443	13,799	4,791	-6,419	7,974	-277
ज्ञापन मद*									
1. केंद्र द्वारा दिनांकित प्रतिभूतियों का बाज़ार उधार+	80,350	1,21,000	28,000	26,000	14,000	12,350	42,000	39,000	24,000
2. रिज़र्व बैंक का दिनांकित प्रतिभूतियों को प्राथमिक अंशदान	1,197	0	0	847	0	350	0	0	0
3. रेपो (+) / रिवर्स रेपो (-) (चलनिधि समायोजन सुविधा), निवल स्थिति	15,315	32,045	-26,720	34,205	27,600	-19,770	9,660	-14,835	18,635
4. निवल खुले बाजार बिक्री #	2,899	3,718	429	427	871	1,171	1,543	941	261
5. बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत संग्रहण	64,211	-32,253	37,812	14,444	353	11,602	7,469	-4,353	-19,713
6. प्राथमिक परिचालन $	-6,625	-12,237	37,353	-30,484	-36,984	23,490	18,205	-24,689	-38,715

* अंकित मूल्य पर। # खजाना बिलों को अलग करता है परंतु समेकित ऋण शोधन निधियों और अन्य निवेशों को सलम्मलित करके।
\+ खजाना बिलों को छोड़कर। $ बाजार स्थिरीकरण योजना के लिए समायोजित और केंद्र का अधिशेष निवेश।
ध्यान दें : चौथी तिमाही के लिए (ति4) त्रैमासिक भिन्नता मार्च 31पर आधारित हैं और अंतिम रिपोर्टिंग शुक्रवार अन्य तिमाहियों के लिए ।

मौद्रिक सर्वेक्षण

2.69 फरवरी 17, 2006 को व्यापक मुद्रा (एम$_3$) में वर्ष-दर-वर्ष विकास, एक वर्ष पहले के13.0 प्रतिशत की तुलना में, 16.3 प्रतिशत था (सारणी 2.28)। उच्चतर व्यापक मुद्रा विकास वाणिज्य क्षेत्र को उच्चतर ऋण के अलावा आधार प्रभाव को प्रतिबिंबित करता है। खाद्येतर ऋण में जारी बढ़त और एक उत्साहजनक प्राथमिक पूंजी बाजार के साथ, अस्थायी रूप से निधियों को माँग जमाराशियों में रखने से माँग जमाराशियों में वृद्धि ऊंची रही। 2005-06 के अधिकांश भाग के दौरान मीयादी जमाराशियों में वृद्धि उच्चतर थी, जो आधार प्रभाव को अंशत: दर्शाता है। तथापि, जनवरी 2006 में मीयादी जमाराशियों की वृद्धि में, इंडिया मिलेनियम डिपॉज़िट के विमोचन को दर्शाते हुए, मंदी हुई। फरवरी 17, 2006 के समय वाणिज्य क्षेत्र के बैंक ऋण में 28.5 प्रतिशत की वृद्धि (वर्ष-दर-वर्ष), एक वर्ष पहले की 22.00 वृद्धि के ऊपर, हुई। वाणिज्य ऋण की बढ़ती हुई मांग को बैंकों द्वारा, अधिकांशत:सरकारी प्रतिभूतियों में वृद्धिशील निवेश को घटाकर,पूरा किया गया।

बैंक ऋण

2.70 बैंक ऋण की माँग ने, कि जिसने 2004-05 के द्वितीय अर्ध में तीव्र गतिवृद्धि दर्शायी, 2005-06 में अपनी गति जारी रखी। फरवरी 17, 2006 के समय, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा दिए गए वर्ष-दर-वर्ष खाद्येतर ऋण, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि में 26.6 प्रतिशत (रूपांतरण का निवल) के विकास से ऊपर, 33.6 प्रतिशत से बढ़े (सारणी 2.29 और चार्ट II. 10)। ऋण की बढ़ती हुई मांग जारी रहने के कारण, बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों में अपने वृद्धिशील निवेश को सीमित रखा।

2.71 कृषि, उद्योग और आवास निर्माण क्षेत्रों द्वारा मार्गदर्शित बैंक ऋण की माँग विस्तार आधारित रही है। कृषि संबंधी क्षेत्र को ऋण ने सुदृढ़ विकास दर्ज करना जारी रखा जो क्षेत्र के ऋण प्रवाह में सुधार के लिए विभिन्न नीति पहलों को दर्शाता है (सारणी 2.30)। औद्योगिक गतिविधि में बढ़त के अनुसरण में औद्योगिक ऋण में वृद्धि, प्रमुख रूप से ऑटो मोबाइल, इंफ्रास्ट्रक्चर, निर्माण, पेट्रोलियम,

सारणी 2.28 : मौद्रिक संकेतक

(करोड़ रुपए)

परिवर्ती	फरवरी 17, 2006 के समय बकाया	भिन्नता (वर्ष-दर-वर्ष)			
		2004-05		2005-06	
		वास्तविक संख्या	प्रतिशत	वास्तविक संख्या	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6
I. आरक्षित मुद्रा*	5,52,235	62,004	15.3	85,577	18.3
II. व्यापक मुद्रा (एम$_3$)	25,80,002	2,55,294	13.0	3,61,783	16.3
क) जनता के पास मुद्रा	4,11,448	36,748	11.7	61,810	17.7
ख) कुल जमाराशियाँ	21,63,650	2,17,652	13.2	2,99,434	16.1
i) माँग जमाराशियाँ	3,53,867	42,255	18.2	79,737	29.1
ii) मीयादी जमाराशियाँ	18,09,783	1,75,397	12.4	2,19,696	13.8
उसमें से: अनिवासी विदेशी मुद्रा जमाराशियाँ	56,063	-255	-0.3	-19,499	-25.8
III. एनएम$_3$	25,96,791	2,62,210	13.7	3,86,563	17.5
उसमें से: वित्तीय संस्थाओं से माँग मुद्रा निधीयन	77,155	7,298	31.4	11,448	17.4
IV. क) एल$_1$	26,98,623	2,78,885	14.1	4,02,527	17.5
उसमें से: डाक जमाराशियाँ	1,01,832	16,675	24.1	15,964	18.6
ख) एल$_2$	27,00,274	2,73,674	13.8	4,02,527	17.5
उसमें से: विसं जमाराशियाँ	1,651	-5,211	-75.9	0	0.0
ग) एल$_3$	26,52,955	2,68,237	13.8	4,06,749	18.1
उसमें से: बैंकिंग जमाराशियाँ	21,694	-403	-2.0	1,796	9.0
V. व्यापक मुद्रा के प्रमुख स्रोत					
क) सरकार को निवल बैंक ऋण (i+ii)	7,77,319	12,342	1.7	18,337	2.4
i) सरकार को निवल रिज़र्व बैंक ऋण	24,754	-39,506		26,792	
उसमें से: केंद्र को	24,796	-35,030		29,313	
ii) सरकार को अन्य बैंक ऋण	7,52,565	51,848	7.4	-8,455	-1.1
ख) वाणिज्य क्षेत्र को बैंक ऋण	15,85,853	2,16,567	22.0	3,52,128	28.5
ग) बैंकिंग क्षेत्र की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियाँ	6,61,279	97,481	18.8	45,472	7.4

* आंकड़ें फरवरी 24, 2006 से संबंधित हैं। विसं : वित्तीय संस्थाएँ। गैबैंविकं : गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ:

टिप्पणी: 1. आंकड़े अनंतिम हैं।

2. चयनित समुच्चय की भिन्नताएँ, अक्तूबर 11, 2004 से गैर बैंकिंग इकाई को बैंकिंग इकाई में रूपांतरण के प्रभाव के लिए समायोजित की गई हैं।

3. एल$_3$ दिसंबर 2005 से संबंधित है।

सारणी 2.29 : अनुसूचित वाणिज्य बैंक : चयनित बैंकिंग संकेतकों में भिन्नता

(करोड़ रुपए)

मद	2003-04		2004-05		वर्ष-दर-वर्ष भिन्नता 2004-05 (फरवरी 18, 2005 तक)		वर्ष-दर-वर्ष भिन्नता 2005-06* (फरवरी 17, 2006 तक)	
	वास्तविक संख्या	प्रतिशत	वास्तविक संख्या	प्रतिशत	वास्तविक संख्या	प्रतिशत	वास्तविक संख्या	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8	9
कुल जमाराशियाँ	2,23,563	17.5	1,92,269	12.8	2,10,255	14.3	2,86,458	17.0
माँग जमाराशियाँ	54,733	32.1	23,005	10.2	39,462	19.5	75,804	31.4
मीयादी जमाराशियाँ	1,68,830	15.2	1,69,264	13.2	1,70,793	13.5	2,10,655	14.6
बैंक ऋण	1,11,570	15.3	2,26,761	27.0	2,12,987	26.2	3,40,709	32.2
खाद्य ऋण	-13,518	-27.3	5,159	14.4	6,214	17.6	-954	-2.3
खाद्येतर ऋण	1,25,088	18.4	2,21,602	27.5	2,06,772	26.6	3,41,663	33.6
निवेश	1,30,042	23.8	49,373	7.3	36,999	5.5	-8,679	-1.2
सरकारी प्रतिभूतियाँ	1,31,341	25.1	52,031	8.0	39,754	6.1	-11,421	-1.6
अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियाँ	-1,299	-5.4	-2,658	-11.6	-2,755	-11.9	2,743	13.4

* अनंतिम ।

ध्यान दें : 11 अक्तूबर 2004 से गैर बैंकिंग इकाई को बैंकिंग इकाई में रूपांतरण के प्रभाव को आंकड़े अलग करते हैं। आंकड़े दिसंबर 29, 2005 को इंडिया मिलेनियम डिपॉजिट के विमोचन के प्रभाव को भी दर्शाते हैं।

रत्न और आभूषण, अन्य धातु और धातु उत्पादों, कपड़े और रबड़ और प्लास्टिक उत्पादों के कारण थी। निम्न ब्याज दर एवं कर प्रोत्साहन से लाभान्वित होते हुए आवास निर्माण क्षेत्र का ऋण सुदृढ़ रहा।

2.72 बैंक ऋण के अतिरिक्त, कंपनी क्षेत्र भी, हाल के वर्षों में, निधियों के गैर बैंक स्रोतों पर अधिकतर निर्भर रहे। पूंजी बाज़ारों में उछाल से लाभान्वित होकर अप्रैल-दिसंबर 2005 के दौरान ईक्विटी प्रचालन बढ़ा। वाणिज्यिक पत्रों के प्रचालन द्वारा संग्रहण भी सुदृढ़ रहा, हालाँकि, कुछ हद तक एक वर्ष पहले की अपेक्षा निम्नतर था। बाह्य वाणिज्यिक उधार (ई सी बी) के अंतर्गत अप्रैल-सितंबर 2005 के दौरान निवल निकासी लगभग वैसी ही थी कि जैसा एक वर्ष पहले, जो कि उत्साहजनक आर्थिक गतिविधि दर्शाती है (सारणी 2.31)।

चार्ट II.10: खाद्येतर ऋण

मूल्य स्थिति

2.73 2005 की तीसरी तिमाही के दौरान कई अर्थव्यवस्थाओं में मुद्रास्फीति मज़बूत हुई, जो कि कच्चे तेल की अंतरराष्ट्रीय कीमतों में तीव्र वृद्धि के प्रभाव को दर्शाती है। पेट्रोलियम निर्यातक देशों के संगठन (ओ पी ई सी) द्वारा समय-समय पर आपूर्ति में वृद्धि करने के बावजूद, वैश्विक माँग में सुदृढ़ विकास विशेषतः अमरीका और चीन से, निम्न स्तरों की वैश्विक अतिरिक्त उत्पादन क्षमता और उच्चतर ऊर्जा लागतों को आर्थिक लचीलेपन ने, तेल की कीमतों को उच्च स्तरों पर समर्थन दिया। अमरीकी बाज़ार में अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतें, अगस्त 30, 2005 को हरीकेन कैटरीना के परिणाम के तुरंत बाद, अमरीका में उष्ण कटिबंधीय तूफ़ान, मध्य पूर्व से भू-राजनैतिक अनिश्चितता से आपूर्ति की अस्थिरता और सट्टेबाज़ी की प्रवृत्ति वाली खरीद के कारण आपूर्ति में विघटन की चिंता के बीच, प्रति बैरल अमरीकी डॉलर 70 को पार करके एक ऐतिहासिक ऊँचाई पर पहुँची (चार्ट II.11)। चौथी तिमाही के दौरान, यद्यपि ऊर्जा कीमतों में कुछ नरमी के कारण मुद्रास्फीति थोड़ी सामान्य हुई, वह उच्च स्तर पर सतत बनी रही।

2.74 कच्चे तेल की रिकार्ड ऊंची कीमत का वैश्विक आर्थिक गतिविधि और मुद्रास्फीति प्रत्याशा पर प्रभाव, पूर्ववर्ती तेल आघातों

सारणी 2.30 : खाद्येतर बैंक ऋण का विनियोजन

(करोड़ रुपए)

क्षेत्र / उद्योग	अक्तूबर 28, 2005 के समय बकाया	वित्तीय वर्ष भिन्नताएँ			
		अप्रैल-अक्तूबर 2004		अप्रैल-अक्तूबर 2005	
		वास्तविक संख्या	प्रतिशत	वास्तविक संख्या	प्रतिशत
1	2	3	4	5	6
सकल खाद्येतर बैंक ऋण	**11,57,769**	**92,054**	**12.6**	**1,57,981**	**15.8**
उसमें से					
कृषि और सहायक गतिविधियाँ	1,41,612	11,267	12.4	16,362	13.1
उद्योग (लघु, मध्यम और बड़े)	4,75,915	26,738	8.5	49,023	11.5
लघु उद्योग	78,780	1,322	2.0	4,192	5.6
व्यापार	69,315	7,580	30.5	11,367	19.6
गृह निर्माण	1,53,267	न.उ.	न.उ.	24,539	19.1
फिक्स्ड जमाराशियों के बदले अग्रिम	30,283	-651	-2.5	433	1.5
स्थावर संपदा ऋण	20,148	2,663	47.7	6,846	51.5
गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ	25,672	604	3.6	3,188	14.2
ज्ञापन :					
प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र	**4,33,422**	**26,181**	**9.9**	**51,946**	**13.6**
उद्योग (लघु,मध्यम और बड़े)	**4,75,915**	**26,738**	**8.5**	**49,023**	**11.5**
खाद्य प्रसंस्करण	26,259	-361	-1.7	1,826	7.5
कपड़े	48,229	-44	-0.1	4,252	9.7
कागज और कागज उत्पाद	7,910	181	3.0	1,028	14.9
पेट्रोलियम, कोयला उत्पाद और न्यूक्लियर ईंधन	20,549	3,533	28.8	4,980	32.0
रसायन और रासायनिक उत्पाद	40,723	-847	-2.8	1,231	3.1
रबड़, प्लास्टिक और उनके उत्पाद	5,596	249	9.6	1,930	52.6
लोहा और इस्पात	42,138	10	0	6,137	17.0
अन्य धातु और धातु उत्पाद	13,968	1,006	12.3	2,332	20.0
अभियांत्रिकी	32,694	-1,033	-3.9	3,298	11.2
वाहन, वाहन के पुर्जे और परिवहन उपकरण	15,825	262	4.9	3,963	33.4
रत्न और आभूषण	17,880	2,323	25.3	3,574	25.0
निर्माण	10,726	1,716	28.7	2,604	32.1
इन्फ्रास्ट्रक्चर	96,639	14,169	27.6	17,630	22.3

न.उ. : नहीं उपलब्ध।

ध्यान दें : 1. आंकड़ें अनंतिम हैं और चयनित अनुसूचित वाणिज्य बैंकों से संबंधित हैं जो सभी अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के ऋण का लगभग 90 प्रतिशत हैं।
2. क्षेत्रों / उद्योगों के वर्गीकरण में बदलाव और बैंकों के कार्यक्षेत्र के कारण, 2005-06 के लिए आंकड़े पूर्ववर्ती आंकड़ों से तुलनीय नहीं हैं।

की तुलना में, अब तक अधिकांशतः निष्प्रभावी प्रतीत होता है (चार्ट II.12 और सारणी 2.32)। इसका श्रेय, उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में तेल की घटती हुई तीव्रता, वैश्वीकरण द्वारा प्रोत्साहित बढ़ी हुई स्पर्धा, अंतिम उत्पादन में पण्य कीमतों की घटती हुई भूमिका, अंतरराष्ट्रीय तेल कीमतों का, सरकार द्वारा भार बाँटने के कारण, घरेलू तेल कीमतों को पास-थ्रू, विशेषतः कई उभरती अर्थव्यवस्थाओं में और प्रमुख

सारणी 2.31 : उद्योग के निधियों का चयनित स्रोत

(करोड़ रुपए)

मद	अप्रैल-सितंबर 2004	अप्रैल-सितंबर 2005
1	2	3
I. उद्योग को बैंक ऋण (लघु, मध्यम और बड़े) (अक्तूबर तक)	26,738	49,023
II. गैर बैंकों से कंपनियों को प्रवाह		
1. पूंजी निर्गम * (i+ ii) (दिसंबर तक)	7,971	11,628
i) गैर- सरकारी सार्वजनिक लिमिटेड कंपनियों (क + ख)	5,287	11,628
क) बंधपत्र / डिबेंचर	0	118
ख) शेयर	5,287	11,510
ii) सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम और सरकारी कंपनियाँ	2,684	0
2. अमरीकी निक्षेपागार (डिपाजिटरी) रसीद / वैश्विक निक्षेपागार (डिपाजिटरी) रसीद निर्गम + (दिसंबर तक)	1,642	5,165
3. बाह्य वाणिज्यिक उधार राशियाँ (ईसीबी) $	15,872	16,264
4. वाणिज्यिक पत्रों का निर्गम (दिसंबर तक)	4,141	2,946
III. करोत्तर लाभ £	23,400	34,895
IV. मूल्यह्रास प्रावधान £	11,340	14,754

* सकल प्रचालन सिवाय बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा निर्गम। लिए बैंकों के पूंजी निर्गमों के निवेश के लिए आँकड़े समायोजित नहीं हैं, जो कि उल्लेखनीय नहीं हैं ऐसी आशा है।
+ बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा निर्गमों को छोड़कर। $ अल्प-अवधि ऋण समेत।
£ आंकड़े, गैर-वित्तीय गैर सरकारी कंपनियों के चयनित नमूनों के लेखापरीक्षित / अलेखापरीक्षित संक्षिप्त परिणामों पर आधारित हैं।
टिप्पणी : आंकड़े अनंतिम हैं।

चार्ट II.11: अंतरराष्ट्रीय पण्य मूल्य

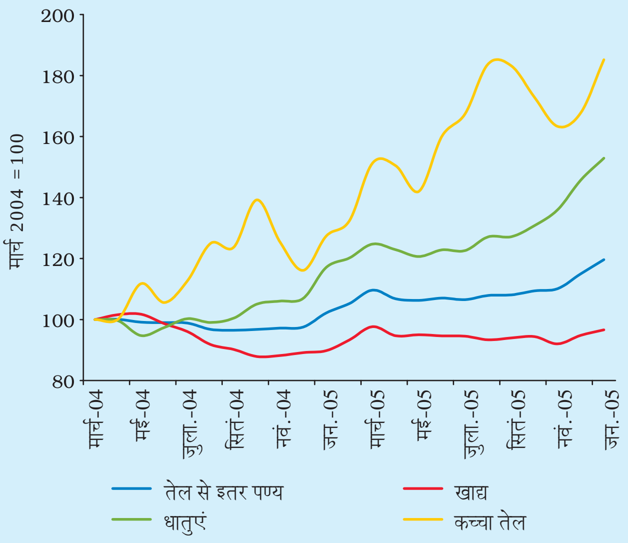

स्रोत : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष

केंद्रीय बैंकों द्वारा दूसरे-दौर के प्रभाव को नियंत्रित करने के लिए पूर्वक्रय मौद्रिक कठोरता, को दिया जा सकता है।

2.75 मुद्रास्फीति पर ऊर्ध्वमुखी दबावों को दर्शाते हुए, कई केंद्रीय बैंकों ने अपनी मौद्रिक नीतियों को कड़ा किया, विशेषत: उभरते एशिया में। अमरीका में, उपभोक्ता कीमत मुद्रास्फीति, जो सितंबर 2005 में ऊर्जा लागतों में तीव्र वृद्धि को दर्शाते हुए 4.7 प्रतिशत त्वरित हुई थी, जनवरी 2006 में 4.0 प्रतिशत तक सामान्य हुई। सुदृढ़ आर्थिक गतिविधि और आरंभिक मुद्रास्फीतीय दबावों के बल पर, अमरीकी फ़ेडरल खुला बाज़ार समिति (एफ ओ एम सी) अपनी मौद्रिक कड़ाई की नियत गति पर दृढ़ रहा, अपने लक्ष्य फेडरल फंड दर को 175 आधार अंकों से बढ़ाते हुए (25 आधार अंकों की वृद्धि प्रत्येक सात बैठकों में), मार्च 2005 की समाप्ति से जनवरी 31, 2006 को 4.50 प्रतिशत तक। यू.के. में, उपभोक्ता मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति जो सितंबर 2005 में, उच्चतर

सारणी 2.32 : वार्षिक उपभोक्ता कीमत मुद्रास्फीति

(प्रतिशत)

देश/क्षेत्र	2000	2001	2002	2003	2004	2005पी
1	2	3	4	5	6	7
उन्नत अर्थ व्यवस्थाएँ	**2.2**	**2.1**	**1.5**	**1.8**	**2.0**	**2.2**
अमरीका	3.4	2.8	1.6	2.3	2.7	3.1
जापान	-0.9	-0.7	-1.0	-0.2	0.0	-0.4
यूरो क्षेत्र	2.1	2.3	2.3	2.1	2.1	2.1
अन्य उभरते बाज़ार और विकासशील देश	**7.3**	**6.7**	**5.9**	**6.0**	**5.8**	**5.9**
विकासशील एशिया	1.9	2.7	2.1	2.6	4.2	4.2
चीन	0.4	0.7	-0.8	1.2	3.9	3.0
भारत	**4.0**	**3.8**	**4.3**	**3.8**	**3.8**	**3.9**

पी : अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष अनुमान।

स्रोत : विश्व आर्थिक दृष्टिकोण, सितंबर 2005, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष.

तेल कीमतों के कारण, 2.5 प्रतिशत तक बढ़ी (एक वर्ष पहले 1.1 प्रतिशत) जनवरी 2006 में 1.9 प्रतिशत तक सामान्य हो गई। बैंक ऑफ इंग्लैंड ने, जिसने अगस्त 4, 2005 को, आर्थिक गतिविधि के कमजोर होने की प्रतिक्रिया स्वरूप, नीति रेपो दर 25 आधार अंकों से काटा था, अब तक अपना नीति रुझान बनाए रखा है। यूरो क्षेत्र में, मुद्रास्फीति, जिसे समीकृत उपभोक्ता मूल्य सूचकांक (एच आई सी पी) द्वारा मापा जाता है, सितंबर 2005 में, लक्ष्य से अधिक, 2.5 प्रतिशत तक बढ़ी और जनवरी 2006 में 2.4 प्रतिशत थी। तेल मूल्यों में जारी वृद्धि के संभाव्य दूसरे दौर के प्रभाव और नियंत्रित कीमतों में अतिरिक्त वृद्धि तथा परोक्ष कर को ऊपरी सतह के जोखिमों की तरह देखने को ध्यान में रखते हुए, यूरोपीय केंद्रीय बैंक (ई सी बी) ने, दिसंबर 1, 2005 को यूरो क्षेत्र में मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को समर्थन देने के लिए प्रमुख नीति दर को 25 आधार अंकों से बढ़ा दिया।

2.76 उभरते एशिया में, इंडोनेशिया, थाइलैंड, फ़िलीपीन्स और मलेशिया में, उच्चतर तेल कीमतों के प्रभाव के अंतर्गत, मुद्रास्फीति ऊंची रही,यद्यपि हाल के महीने में कुछ आसान हुई। इसलिए, इन देशों

चार्ट II.12: उपभोक्ता मूल्य मुद्रा स्फीति

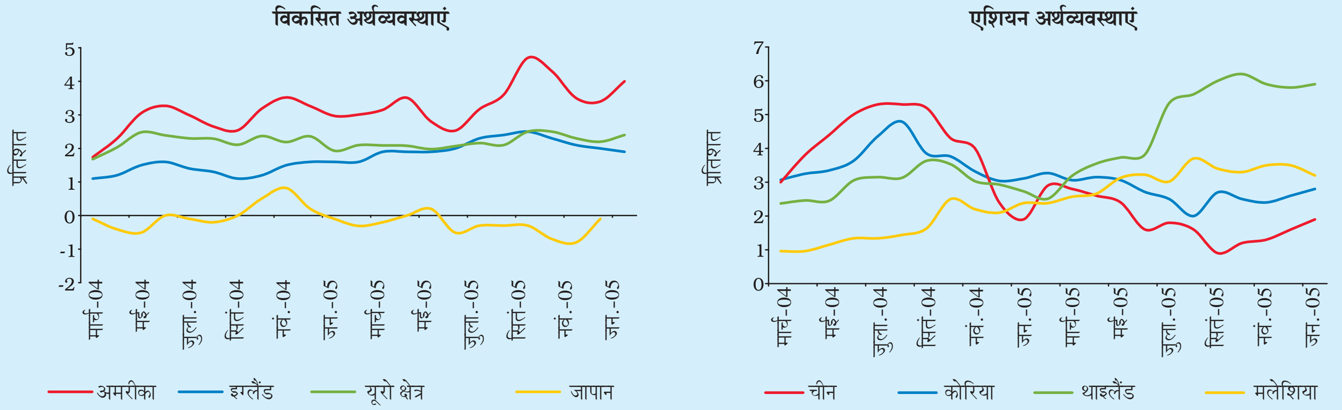

के केंद्रीय बैंकों ने 2005 के दौरान अपनी नीति दरों को बढ़ाया (सारणी 2.33)। दूसरी तरफ, चीन में उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति जनवरी 2006 में 1.9 प्रतिशत थी-पिछले वर्ष की ही तरह-जो कि उच्चतर तेल कीमतों का घरेलू तेल कीमतों का अपूर्ण अंतरण दर्शाता है।

2.77 भारत में, थोक मूल्य सूचकांक (डब्ल्यू पी आई) में वर्ष-दर-वर्ष परिवर्तनों द्वारा मापी गई हेडलाइन मुद्रास्फीति, मार्च 2005 की समाप्ति पर 5.1 प्रतिशत से (और एक वर्ष पहले 5.1 प्रतिशत) फरवरी 11, 2006 को 4.0 प्रतिशत पर सामान्य हुई। औसत थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति दर एक वर्ष पहले के 6.4 प्रतिशत से 4.6 प्रतिशत पर सामान्य हुई (चार्ट II.13)। पेट्रोल और डीज़ल कीमतों में वृद्धि (7-8 प्रतिशत प्रत्येक, जून और सितंबर 2005 में) और जून 2005 में विद्युत कीमतों में वृद्धि के बावजूद, हेडलाइन मुद्रास्फीति में संतुलन, नपे तुले मौद्रिक और राजकोषीय उपायों और आधार प्रभावों को दर्शाता है। तथापि, यह जानना जरूरी है कि ऊंची अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल कीमतों का घरेलू कीमतों को पास-थ्रू अधूरा है क्योंकि उसे केवल पेट्रोल और डीज़ल तक सीमित रखा गया है।

2.78 वर्ष 2005-06 के दौरान मुद्रास्फीति, खनिज तेल की कीमतों के प्रभुत्व में रही है कि जिसने अकेले एक तिहाई से अधिक हेडलाइन मुद्रास्फीति को योगदान दिया। वर्ष-दर-वर्ष थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति, ईंधन समूह को छोड़कर, फरवरी 11, 2006 को 3.0 प्रतिशत पर निम्नतर थी।

सारणी 2.33 : केंद्रीय बैंक नीति दरें

(प्रतिशत)

देश	जनवरी 1, 2003	जनवरी 1, 2004	जनवरी 1, 2005	जनवरी 28, 2006
1	2	3	4	5
आस्ट्रेलिया	4.75	5.25	5.25	5.50
ब्राज़ील	25.00	16.50	17.75	17.25
कनाडा	2.75	2.75	2.50	3.50
यूरो क्षेत्र	2.75	2.00	2.00	2.25
भारत*	**5.50**	**4.50**	**4.75**	**5.50**
इंडोनेशिया	12.93	8.31	7.43	12.75
इज्राइल	8.90	4.80	3.70	4.75
जापान	0.10	0.10	0.10	0.10
कोरिया	4.25	3.75	3.25	4.00
न्यूज़ीलैंड	5.75	5.00	6.50	7.25
पोलैंड	6.50	5.25	6.50	4.25
स्वीडन	3.75	2.75	2.00	2.00
स्विटज़रलैंड	0.25-1.25	0-0.75	0.25-1.25	0.50-1.50
थाइलैंड	1.75	1.25	2.00	4.25
यू. के.	4.00	3.75	4.75	4.50
यू.एस. ए.	1.25	1.00	2.25	4.50

* : रिवर्स रेपो दर।

स्रोत: केंद्रीय बैंक वेबसाइट

चार्ट II.13: वार्षिक थोक मूल्य मुद्रा स्फीति

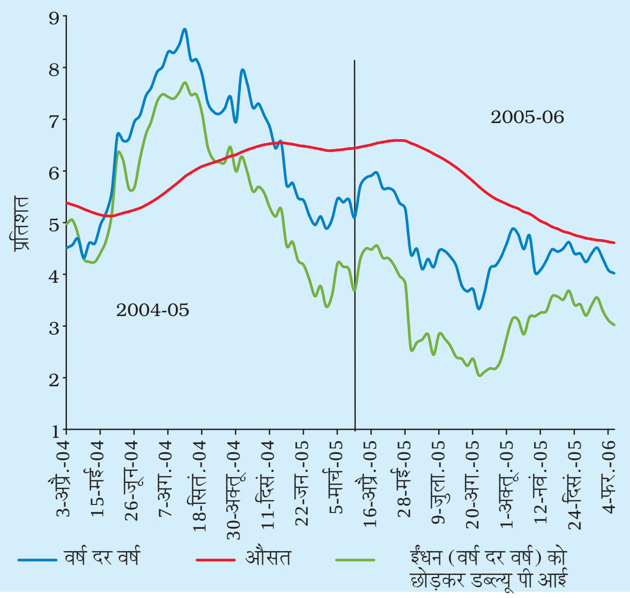

2.79 ईंधन समूह के अलावा, सब्ज़ियाँ, अंडे, मांस और मछली और चीनी कीमतों ने, घरेलू मुद्रास्फीति पर, कुछ ऊर्ध्वमुखी दबाब डाला। पिछले वर्ष की अपेक्षा उच्चतर खाद्यान्न उत्पादन की संभावना से प्राथमिक कृषि संबंधी पण्य की कीमतें संतुलित रहने की आशा है। उच्चतर गन्ना उत्पादन चीनी कीमतों को, जो अभी तक अंतरराष्ट्रीय प्रवृत्तियों की तरह ऊंची और अस्थिर रही हैं, नियंत्रित रखेगा ऐसी आशा है। कुल मिलाकर, ईंधन समूह (41.2 प्रतिशत) ने, फरवरी 11, 2006 के वर्ष-दर-वर्ष थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति को अधिकतम योगदान किया जिसका अनुरण निर्मित उत्पादों (31.9 प्रतिशत) और प्राथमिक वस्तुओं (27.5 प्रतिशत) ने किया (सारणी 2.34)।

2.80 दिसंबर 2005 के दौरान उपभोक्ता मूल्य मुद्रास्फीति अपने मार्च 2005 के स्तर से बढ़ी जो उच्चतर खाद्य और ईंधन कीमतों को दर्शाता है (सारणी 2.35)।

2.81 इस प्रकार, 2005-06 के दौरान मुद्रास्फीति परिणाम रिकार्ड ऊंची अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल कीमतों के प्रभुत्व में रहा। हालाँकि, ऊंची अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल कीमतों का घरेलू कीमतों को कुछ पास-थ्रू हुआ, उसके दूसरे दौर का प्रभाव अभी तक दिखाई नहीं देता। यद्यपि, सरकार ने कर ढांचे में संशोधन के माध्यम से घरेलू कीमतों पर प्रभाव को संतुलित किया, ऐसा राजकोषीय युक्तिचालन सीमित होता है। चलनिधि अधिकता का भलीभांति प्रबंध, चलनिधि प्रबंध परिचालनों (चलनिधि समायोजन सुविधा और बाजार स्थिरीकरण योजना) के माध्यम के अलावा, मौद्रिक क्रियाओं, जैसे नकदी आरक्षित अनुपात में वृद्धियाँ (50 आधार अंक सितंबर-अक्तूबर 2004 के दौरान) और रिवर्स रेपो दर (25 आधार अंक प्रत्येक अक्तूबर 2004, अप्रैल 2005, अक्तूबर 2005 और जनवरी 2006 में) जिसने मूल्य स्थिरता के लिए प्रमाण्य

सारणी 2.34 : अवयव द्वारा वार्षिक अंक-दर-अंक थोक मूल्य सूचकांक मुद्रास्फीति (आधार 1993-94=100)

(प्रतिशत)

समूह / मद	भार	वार्षिक भिन्नता 2002-03	वार्षिक भिन्नता 2003-04	वार्षिक भिन्नता 2004-05	भिन्नता 2004-05 (फरवरी 12)	भिन्नता 2005-06 (फरवरी 11)	भारित योगदान 2004-05 (फरवरी 12)	भारित योगदान 2005-06 (फरवरी 11)
1	2	3	4	5	6	7	8	9
सभी पण्य	**100.0**	**6.5**	**4.6**	**5.1**	**5.1**	**4.0**	**100.0**	**100.0**
I. प्राथमिक वस्तुएँ	**22.0**	**6.1**	**1.6**	**1.3**	**1.3**	**5.1**	**5.7**	**27.5**
i) अनाज	4.4	4.0	-0.3	2.9	1.7	5.6	1.4	5.9
ii) दालें	0.6	0.3	-2.6	-2.6	-3.1	20.7	-0.4	2.8
iii) फल और सब्जियाँ	2.9	-1.2	-4.9	11.6	4.0	9.5	2.3	7.0
iv) कच्चा सूत	1.4	34.3	12.3	-23.8	-26.9	3.1	-7.6	0.8
v) तिलहन	2.7	30.0	-1.2	-6.5	-5.8	-12.1	-3.1	-7.4
vi) गन्ना	1.3	11.5	6.5	-0.7	-0.7	0.7	-0.2	0.3
II. ईंधन,पावर, रोशनी और चिकनाई	14.2	10.8	2.5	10.5	10.2	7.6	41.6	41.2
i) खनिज तेल	7.0	18.4	0.0	16.0	14.9	11.9	32.7	36.1
ii) विद्युत	5.5	3.4	4.9	0.8	1.6	2.7	2.4	5.1
iii) कोयला खनन	1.8	0.0	9.2	17.1	17.1	0.0	6.4	0.0
III. निर्मित उत्पाद	**63.7**	**5.1**	**6.7**	**4.6**	**4.7**	**2.3**	**52.7**	**31.9**
i) चीनी	3.6	-15.0	16.9	19.7	20.7	6.6	10.9	5.1
ii) खाद्य तेल	2.8	27.4	6.6	-8.4	-8.2	-3.4	-4.0	-1.8
iii) तेल खली	1.4	40.3	5.0	-17.4	-8.4	-3.8	-2.7	-1.3
iv) सूती कपड़े	4.2	8.3	15.6	-12.7	-14.1	-0.2	-11.7	-0.2
v) मनुष्य निर्मित रेशे	4.4	17.4	-0.4	0.6	1.5	-4.1	0.7	-2.3
vi) उर्वरक	3.7	2.1	-0.1	3.3	3.3	0.2	2.2	0.1
vii) लोहा और इस्पात	3.6	9.2	34.6	21.3	19.8	-2.8	15.7	-3.2
viii) सीमेंट	1.7	1.1	1.3	10.2	5.5	7.0	1.6	2.6
ix) गैर बिजली मशीनरी	3.4	2.5	4.7	10.0	11.2	3.6	6.7	2.9
x) बिजली की मशीनरी	5.0	-1.3	1.7	4.1	4.2	1.6	2.6	1.2
xi) परिवहन उपकरण और कल पुर्जे	4.3	-0.9	1.4	6.2	6.2	1.8	4.3	1.6

वचनबद्धता द्वारा मुद्रास्फीतीय प्रत्याशाओं को संतुलित रखना चाहा, किया गया। अंतत, खाद्य स्टॉकों और विदेशी मुद्रा भंडार द्वारा उपलब्धि आराम ने अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को कायम रखने और स्थिर करने में योगदान दिया। संतुलन में, अंतर्निहित मुद्रास्फीतिकारी दबाव नियंत्रित प्रतीत होते हैं और मुद्रास्फीतीय प्रत्याशाएँ कायम हैं।

2.82 निष्कर्ष के लिए, वाणिज्यिक क्षेत्र से सतत और विस्तृत- आधार पर ऋण की माँग के बावजूद, मौद्रिक और चलनिधि परिस्थितियाँ 2005-06 के दौरान अब तक सुविधाजनक रहीं। ऋण की बढ़ी हुई माँग की वित्त-व्यवस्था करने में, अधिकांशतः सरकारी प्रतिभूतियों में अपने वृद्धिशील निवेशों को सीमित करके, बैंक सक्षम थे। रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी आस्तियों में निम्नतर क्रम की अभिवृद्धि, सतत ऋण की माँग और

सारणी 2.35 : भारत में उपभोक्ता कीमत मुद्रास्फीति (सी पी आई) (वर्ष-दर-वर्ष)

(प्रतिशत)

मुद्रा स्फीति	मार्च 2003	मार्च 2004	दिसंबर 2004	मार्च 2005	जून 2005	सितंबर 2005	अक्तूबर 2005	दिसंबर 2005
1	2	3	4	5	6	7	8	9
सीपीआई-आइ डब्ल्यू	4.1	3.5	3.8	4.2	3.3	3.6	4.2	5.6
सीपीआई-यूएनएमई	3.8	3.4	3.6	4.0	3.9	4.8	4.5	5.7
सीपीआई-एएल	4.9	2.5	3.0	2.4	2.7	3.2	3.2	4.7
सीपीआई-आरएल	4.8	2.5	3.0	2.4	2.7	3.2	3.2	4.9
ज्ञापन :								
डब्ल्यू पी आई मुद्रास्फीति (अवधि की समाप्ति)	6.5	4.6	5.7	5.1	4.3	4.3	4.8	4.4

आइ डब्ल्यू : औद्योगिक कामगार। यूएनएमई : शहरी गैर मैन्युअल कर्मचारी। एएल : कृषि श्रमिक । आरएल : ग्रामीण श्रमिक । डब्ल्यू पी आई : थोक मूल्य सूचकांक

इंडिया मिलेनियम डिपॉज़िट के विमोचन से दिसंबर 2005 में उत्पन्न कुछ दबाव की पृष्ठभूमि में, रिज़र्व बैंक ने रेपो परिचालनों के माध्यम के अलावा बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत खजाना बिलों की नीलामियों को रद्द करके चलनिधि उपलब्ध कराई। अधिकतर, ये सभी परिचालन घरेलू वित्तीय बाज़ारों को स्थिर रखने में सक्षम रहे।

2.83 वर्ष 2004 के उत्तरार्ध से घरेलू मुद्रास्फीति के अलावा मुद्रास्फीति प्रत्याशाएँ भलीभांति नियंत्रित रहीं जो समयबद्ध और नपे तुले मौद्रिक तथा राजकोषीय उपायों को दर्शाती है। 2005-06 के दौरान मुद्रास्फीति परिस्थितियाँ, भारत और अन्य जगहों दोनों में, अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल कीमतों का ऐतिहासिक ऊंचाई पर पहुँचने के द्वारा संचालित थीं। तेल कीमतों के प्रभाव के अंतर्गत, 2005 के उत्तरार्ध में कई अर्थव्यवस्थाओं में हेडलाइन मुद्रास्फीति तेज़ी से बढ़ी। फिर भी, उच्चतर तेल कीमतों का आर्थिक गतिविधि के अलावा मुद्रास्फीति प्रत्याशाओंपर प्रभाव, पूर्ववर्ती तेल आघातों के संबंध में निष्प्रभावी रहा। यद्यपि, हेडलाइन मुद्रास्फीति पर ऊंची तेल कीमतों के दूसरे दौर का प्रभाव अब तक नियंत्रित रहा, ऊंची और अस्थिर तेल कीमतों के संदर्भ में एक उच्चतर डिग्री का दूसरे दौर के प्रभाव की संभावना और उसका मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं के लिए निहितार्थ, केंद्रीय बैंकों की चिंता का कारण बना रहा है।

IV. वित्तीय बाज़ार

मुद्रा बाज़ार

2.84 मुद्रा बाज़ार अल्पावधि निधियों की माँग और आपूर्ति का संतुलन आसानी से निष्पादन करते रहे और अधिकतर बाजार अत्यधिक अस्थिरता के बिना मुक्त रहे। 2005-06 के दौरान मुद्रा बाज़ार ब्याज अधिकांशतः मौद्रिक नीति के रुझान के तालमेल में चला। चूँकि, मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को स्थिर करने के लिए नपेतुले उपायों के साथ मौद्रिक नीति ने प्रभाव दिखाया, मुद्रा बाज़ारों के विविध खंडों में ब्याज दरों ने मौद्रिक नीति कार्रवाइयों का प्रत्युत्तर दिया। चलनिधि समायोजन सुविधा (एल ए एफ) और बाजार स्थिरीकरण योजना (एम एस एस) के माध्यम से बाज़ार परिचालनों ने अधिशेष चलनिधि को पर्याप्त मात्रा में साफ किया और बदलते परिदृश्य के मद्देनज़र रिज़र्व बैंक, सितंबर 2005 से, अपने प्रगतिशील मूल्यांकन में, निष्क्रिय चलनिधि को, नपेतुले ढंग से मुक्त करने लगा। इससे दिसंबर 2005 में, अमरीकी डॉलर 7.1 बिलियन की आई एम डी देयता के विमोचन के दौरान चलनिधि प्रबंध में सहायता मिली, जब जारी रहे अधिशेष से प्रणाली सीमांत चलनिधि के रूप में निकट तटस्थ स्थिति में संचलित हुई।

2.85 वर्ष 2005-06 के वृहत्तर हिस्से में, मुद्रा बाज़ार, सुविधाजनक चलनिधि परिस्थितियों से विशिष्ट रहा, औसत दैनिक माँग मुद्रा दरें सामान्यतः रिवर्स रेपो दर से स्थिर रहने के साथ (सारणी 2.36)। माँग मुद्रा दरें लगभग 25 आधार अंकों से बढ़ीं, फिक्स्ड रिवर्स रेपो दर के आगे-पीछे, जिसे अप्रैल 29, 2005 को 25 आधार अंकों से बढ़ाकर 5.00 प्रतिशत कर दिया गया। जून 2005 के अंत में, माँग दरें रिवर्स रेपो दर से ऊपर बढ़ीं, जो कि, मुख्यतः बैंकों द्वारा रिपोर्टिंग पखवाड़ों की शुरुआत में जरूरत से ज्यादा भंडार रखने की चाह के कारण चलनिधि बेमेलता, बैंकिंग प्रणाली को अग्रिम कर भुगतान और केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों की नीलामी से उत्पन्न दबाव को दर्शाता है। मुंबई में अनवरत वर्षा से सामान्य वित्तीय गतिविधियों में बाधा पड़ने के कारण कुछ अनुसूचित खजाना बिलों की नीलामियों को निरस्त करने से और बैंकिंग प्रणाली को अग्रिम कर भुगतान की वापसी से जुलाई 2005 के उत्तरार्ध में चलनिधि परिस्थितियाँ सुधरीं। जुलाई-अगस्त 2005 के दौरान प्राधिकृत व्यापारियों से प्रचुर मात्रा में विदेशी मुद्रा की खरीद ने भी चलनिधि परिस्थितियों को सुधारा। परिणामतः, औसतन, चलनिधि समायोजन सुविधा रिवर्स रेपो के अंतर्गत शेष जमाराशियों ने, जुलाई में 10,754 करोड़ रुपए से अगस्त 2005 में 34,832 करोड़ रुपए तक छलाँग लगाई। इस तरह, माँग मुद्रा बाज़ार, अगस्त 2005 और सितंबर 2005 के पूर्वार्ध के दौरान, मोटे तौर पर, स्थिर रहा। सितंबर 2005 के उत्तरार्ध में, माँग मुद्रा बाज़ार ने हल्का दबाव दर्ज किया जो अग्रिम कर बाहिर्वाह और अनुसूचित नीलामियों को दर्शाता है। अक्तूबर 2005 में, चालू समष्टि आर्थिक और समग्र मौद्रिक परिस्थितियों के मद्देनज़र, रिज़र्व बैंक ने रिवर्स रेपो दर को 25 आधार अंकों से बढ़ाने का निर्णय लिया, जबकि रिवर्स रेपो दर और रेपो दर के बीच विस्तार को 100 आधार अंकों पर बनाए रखा। तदनुसार, 26 अक्तूबर 2005 से प्रभावी, रिवर्स रेपो और रेपो दर को क्रमशः 5.25 और 6.25 प्रतिशत पर अटल रखा गया। औसत चलनिधि समायोजन सुविधा रिवर्स रेपो स्तरों में गिरावट, सितंबर में 31, 570 करोड़ रुपए से नवंबर में 3,268 करोड़ रुपए, से प्रतिबिंबित अक्तूबर और नवंबर 2005 में अधिशेष चलनिधि में ह्रास से, माँग मुद्रा दरें मज़बूत हुईं। प्रगतिशील मूल्यांकन करते हुए, रिज़र्व बैंक ने सितंबर 2005 से बाजार स्थिरीकरण योजना को मुक्त करना शुरू किया। इसके अतिरिक्त, दिसंबर 2005 के बाद की छमाही में, अग्रिम कर बाहिर्वाह और इंडिया मिलेनियम डिपॉज़िट विमोचन के दबाव के कारण माँग मुद्रा दरें स्पष्ट रूप से मज़बूत हुईं। रिज़र्व बैंक द्वारा रेपो खिड़की के अंतर्गत चलनिधि का प्रवाह और बाजार स्थिरीकरण योजना को मुक्त करना, चलनिधि का उचित ढंग से प्रबंध करने में सहायक हुए। दिसंबर और जनवरी 2006 में चलनिधि में तुलनात्मक तंगी के बीच में, एस एल ए एफ के रूप में अतिरिक्त खिड़की ने भी बैंक के लिए विकल्प का विस्तार किया। जनवरी 2006 में, चालू समष्टि आर्थिक और समग्र मौद्रिक परिस्थितियों के दृष्टिकोण से, रिवर्स रेपो और रेपो दरों को 25 आधार अंकों से बढ़ाया गया जबकि दोनों के बीच के विस्तार को 100 आधार अंकों पर बनाए रखा। तदनुसार, जनवरी 24, 2006 से प्रभावी, रिवर्स रेपो और रेपो दरों को क्रमशः 5.50 और 6.50 प्रतिशत पर अटल रखा गया।

सारणी 2.36 : घरेलू वित्तीय बाज़ार-चयनित संकेतक

वर्ष/ महीना	माँग मुद्रा		सरकारी प्रतिभूतियां		विदेशी मुद्रा				चलनिधि प्रबंध		ईक्विटी			
	औसत दैनिक पण्यावर्त (करोड़ रुपए)	औसत माँग मुद्रा दरें * (प्रति शत)	औसत 10-वर्ष आय @ (प्रति शत)	औसत दैनिक पण्यावर्त (करोड़ रुपए) +	औसत दैनिक अंतर-बैंक पण्यावर्त (अमरीकी $ मिलियन)	औसत विनिमय दर (रुपए प्रति अमरीकी $)	रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी मुद्रा बिक्री (-)/ खरीद (+) (अमरीकी $ मिलियन)	औसत वायदा अधि मूल्यता 3- माह (प्रति शत)	औसत एमएसएस बकाया (करोड़ रुपए)	औसत दैनिक रिवर्स रेपो (एलएएफ) बकाया (करोड़ रुपए)	औसत दैनिक बीएसई पण्यावर्त (करोड़ रुपए)	औसत दैनिक एनएसई पण्यावर्त (करोड़ रुपए)	औसत बीएसई सेनसेक्स **	औसत एस एंड पी सी एन एक्स निफ्टी
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
2004-05														
अप्रैल	12,916	4.29	5.10	10,029	10,302	43.93	7,427	-0.36	14,296	75,006	2,243	5,048	5,809	1,848
मई	10,987	4.30	5.19	6,202	8,882	45.25	-220	-1.33	27,518	74,502	2,188	4,710	5,205	1,640
जून	10,973	4.35	5.50	5,860	7,847	45.51	-413	0.93	35,283	61,981	1,681	3,859	4,824	1,506
जुलाई	8,632	4.31	5.91	4,206	7,756	46.04	-1,180	2.25	43,739	59,594	1,793	4,265	4,973	1,568
अगस्त	11,562	4.41	6.38	4,173	5,974	46.34	-876	2.85	48,541	42,692	1,736	3,948	5,144	1,615
सितंबर	17,088	4.45	6.08	5,854	7,348	46.10	19	2.20	52,421	31,589	1,800	4,023	5,423	1,692
अक्तूबर	16,667	4.63	6.73	3,636	7,262	45.78	-99	2.87	53,660	10,805	1,730	3,785	5,702	1,795
नवंबर	13,820	5.62	7.14	2,607	9,929	45.13	3,792	2.16	54,157	-5,066	1,787	4,102	5,961	1,874
दिसंबर	19,527	5.28	6.73	4,305	9,447	43.98	1,393	2.03	52,085	7,570	2,184	5,026	6,394	2,022
जनवरी	16,534	4.72	6.68	3,566	9,114	43.75	0	2.50	53,790	18,721	2,310	5,249	6,307	1,978
फरवरी	16,041	4.76	6.58	4,640	11,583	43.68	4,974	1.99	58,141	19,895	2,484	4,999	6,595	2,067
मार्च	15,293	4.72	6.65	2,835	11,286	43.69	6,030	1.82	63,737	29,809	2,706	5,139	6,679	2,096
2005-06														
अप्रैल	17,213	4.77	7.02	3,001	9,880	43.74	0	1.96	65,638	30,675	1,890	4,136	6,379	1,987
मई	15,269	4.99	7.13	3,805	10,083	43.49	0	1.57	68,539	22,754	1,971	3,946	6,483	2,002
जून	20,134	5.10	6.88	6,807	10,871	43.58	-104	1.40	70,651	13,916	2,543	4,843	6,926	2,134
जुलाई	20,046	5.02	7.12	3,698	11,003	43.54	2,473	1.56	70,758	10,754	3,095	6,150	7,337	2,237
अगस्त	16,158	5.02	7.04	4,239	11,749	43.62	1,552	0.69	71,346	34,832	3,451	6,624	7,726	2,358
सितंबर	16,292	5.05	7.04	5,207	11,040	43.92	0	0.62	67,617	31,570	3,871	6,923	8,272	2,512
अक्तूबर	17,169	5.12	7.14	2,815	13,087 P	44.82	0	0.69	68,602	18,608	2,955	6,040	8,220	2,487
नवंबर	22,620	5.79	7.10	3,314	11,228 P	45.73	0	0.67	67,041	3,268	2,635	5,479	8,552	2,575
दिसंबर	21,149	6.00	7.13	2,948	13,632 P	45.64	6,541	1.51	52,040	1,452	3,516	6,814	9,162	2,773
जनवरी	17,911	6.79	7.16	3,094	16,365 P	44.40	..	2.60	40,219	-15,386	3,966	7,472	9,540	2,893
फरवरी	13,497	6.87	7.32	2,584	..	44.33	..	2.85	33,405	-13,532	3,688	7,125	10,090	3,019

.. नहीं उपलब्ध। * दैनिक भारित माँग मुद्रा उधार दरों का औसत । + केंद्रीय सरकार की दिनांकित प्रतिभूतियों का एकमुश्त पण्यावर्त।
साप्ताहिक बकाया बाजार स्थिरीकरण योजना का औसत । ** दैनिक लेखा बंदी सूचकांक का औसत। @ दैनिक लेखा बंदी दरों का औसत । पी : अनंतिम ।

2.86 मध्यावधि उद्देश्य के साथ मौद्रिक नीति रुझान को बनाए रखते हुए, इंडिया मिलेनियम डिपॉज़िट विमोचन के होते हुए, असंतुलन को नियंत्रित करने के लिए चलनिधि प्रबंध कार्यान्वित किया गया। विमोचन के कारण बहिर्वाह को इस संबंध में आसान व्यवस्थाओं द्वारा पूरा किया गया। दिसंबर के अंतिम सप्ताह में आई एम डी के विमोचन से मेल खाते हुए लगभग 23,000 करोड़ रुपए प्रतिदिन के औसत से, रेपो खिड़की (दूसरे एल ए एफ को मिलाकर) के माध्यम से। चलनिधि मुक्त करके, अग्रिम कर भुगतानों के कारण बहिर्वाह और ऋण के उठाव में जारी प्रवाह द्वारा चलनिधि में अस्थायी तंगी को, पूरा किया गया। जनवरी 2006 के प्रथम सप्ताह में अल्प-कालिक मुद्रा बाजार दरें आई एम डी के आसान विमोचन को प्रतिबिंबित करते हुए, असाधारण रूप से सामान्य हुईं जो वित्तीय बाजारों की बढ़ती हुई परिपक्वता को और चलनिधि प्रबंध प्रणाली, जिसे व्यवस्था में लगाया गया है, के सामर्थ्य को दर्शाते हैं। माँग मुद्रा दरें, हालाँकि, पुन: जनवरी 2006 के दूसरे सप्ताह से मजबूत हुईं, जो सरकारी प्रतिभूतियों की अनुसूचित नीलामियों से उत्पन्न माँग दबावों और मजबूत ऋण माँग को दर्शाते हैं।

2.87 वार्षिक नीति वक्तव्य (जनवरी 24, 2006) की तीसरी तिमाही समीक्षा में रिज़र्व बैंक ने अपनी सक्रिय माँग प्रबंध की नीति को, खुला बाजार परिचालन समेत बाजार स्थिरीकरण योजना, चलनिधि समायोजन सुविधा और नकदी आरक्षित अनुपात और अपने अधिकार में सभी नीति यंत्रों का, स्थिति की माँग के अनुसार, लोचपूर्ण ढंग से उपयोग, के माध्यम से जारी रखा। समष्टि आर्थिक गतिविधियों के सूचित मूल्यांकन पर आधारित, विकास और मुद्रास्फीति के बारे में प्रगतिशील ढंग के दृष्टिकोण समेत और अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में किसी प्रतिकूल और अप्रत्याशित गतिविधियों के उन्मज्जन को छोड़कर, मूल्य स्थायित्व पर जोर को कायम रखने के उद्देश्य से मुद्रास्फीतीय प्रत्याशाओं को स्थिर रखने के लिए, समष्टि आर्थिक, कीमत और वित्तीय स्थायित्व के लिए एक सहायक ब्याज दर माहौल सुनिश्चित कर के, बैंक दर को 6.0 प्रतिशत पर अपरिवर्तित रखा गया। यद्यपि, रिज़र्व बैंक, नकदी आरक्षित अनुपात को 3.0 प्रतिशत के सांविधिक न्यूनतम स्तर तक कम करने के अपने मध्यम-अवधि उद्देश्य को लगातार जारी रखता है, चालू चलनिधि स्थिति की समीक्षा करने पर यह निर्णय लिया गया कि नकदी आरक्षित अनुपात का 5.0 प्रतिशत पर वर्तमान स्तर अपरिवर्तित बना रहेगा।

सारणी 2.37 : मुद्रा बाज़ारों में ब्याज दरें

(प्रतिशत)

	मार्च-2002	मार्च-2003	मार्च-2004	मार्च-2005	सितंबर-2005	दिसंबर-2005	जनवरी-2006
1	2	3	4	5	6	7	8
माँग मुद्रा	6.97	5.86	4.37	4.72	5.05	6.00	6.79
वाणिज्यिक पत्र (61-90 दिन)	7.78	6.53	5.11	5.84	5.87	6.70	7.29
जमा प्रमाणपत्र	5.00-10.03	5.00-7.10	3.87-5.16	4.21-6.34	4.66-7.00	5.50-7.25	5.40-7.75

ब्याज दर परिदृश्य

2.88 निधियों की माँग और आपूर्ति में साथ-साथ वृद्धि का परिणाम ब्याज दरों का सामान्यतः 2004-05 के दौरान और अब तक चालू वर्ष में, स्थिर रहने में हुआ। इस अवधि के दौरान, ब्याज दर वातावरण, चलनिधि की पर्याप्त आपूर्ति के कारण, सुसाध्य रहा, यद्यपि, उद्योगों के अलावा अन्य क्षेत्रों से ऋण की माँग तेज़ी से बढ़ी। जमाराशियों पर प्रस्तााावित ब्याज दरों का परास, इस अवधि के दौरान, विस्तृत हुआ। वर्ष के दौरान उप-बेंचमार्क मूल उधार दर (सब-पीएलआर) ऋण का हिस्सा बढ़ा। तथापि, उप-बेंचमार्क मूल उधार दर ऋण दरों में, बाद में सख्ती होने के बावजूद, चालू वर्ष के दौरान दिसंबर तक, ऋण दरों में कुछ नरमी दर्ज की गई।

2.89 2004-05 के दौरान, वित्तीय बाजार सामान्यतः स्थिर रहे, यद्यपि ब्याज दरों ने वर्ष-भीतर कुछ ऊर्ध्वमुखी गति दिखाई। चालू वित्तीय वर्ष में अब तक ब्याज दरों में उसी प्रकार की प्रवृत्तियाँ जारी रहीं। बाजार के लघु सिरे पर, भारित औसत माँग मुद्रा दर 35 आधार अंकों से बढ़ी, मार्च 2004 में 4.37 प्रतिशत से मार्च 2005 तक 4.72 प्रतिशत और आगे फरवरी 2006 में 6.87 प्रतिशत तक। 61 से 90-दिवसीय परिपक्वता वाले वाणिज्यिक पत्र (सी पी) पर भारित औसत छूट दर 73 आधार अंकों से बढ़ी, मार्च 2005 तक 5.11 प्रतिशत से 5.84 प्रतिशत, सितंबर 2005 में लगभग उसी स्तर पर रही, दिसंबर 2005 में 6.70 प्रतिशत तक बढ़ी और आगे जनवरी 2006 में 7.29 प्रतिशत तक बढ़ी (सारणी 2.37)।

बैंक जमाराशि और ऋण दरें

2.90 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों द्वारा प्रस्तााावित मीयादी-जमाराशि दरें एक वर्ष तक की परिपक्वता के लिए, मार्च 2004 में 3.75-5.25 प्रतिशत से मार्च 2005 में 2.75-6.0 प्रतिशत और आगे फरवरी 2006 में 2.25-6.00 प्रतिशत केपरास में चलीं।एक वर्ष के ऊपर की मीयादी-जमाराशियों पर ब्याज दरें, मार्च 2004 में 5.00-6.00 प्रतिशत से मार्च 2005 में 4.75-7.00 प्रतिशत और आगे फरवरी 2006 में 5.50-7. 00 प्रतिशत के परास में चलीं। सरकारी क्षेत्र के बैंकों की बेंचमार्क मूल उधार दरें (बीपीएलआर) मार्च 2004 में 10.25-11.25 प्रतिशत से मार्च 2005 में 10.25- 11.50 प्रतिशत के परास में चलीं और फरवरी 2006 में उसी पर रहीं। विदेशी और निजी क्षेत्र के बैंकों की बीपीएलआर, क्रमशः मार्च 2004 में 11.00-14. 85 प्रतिशत और 10.50-13.00 प्रतिशत से मार्च 2005 में 10.00-14.50 प्रतिशत और 11.00-13.50 प्रतिशत के परास में चलीं (सारणी 2.38)। फरवरी 2006 मे ंनिजी और विदेशी

सारणी 2.38 : जमाराशि और ऋण ब्याज दरों की गति

(प्रतिशत)

ब्याज दरें	मार्च 2002	मार्च 2003	मार्च 2004	मार्च 2005	दिसंबर 2005	फरवरी 2006*
1	2	3	4	5	6	7
मीयादी जमाराशि दरें						
सरकारी क्षेत्र के बैंक						
क) 1 वर्ष तक	4.25 - 7.50	4.00 - 6.00	3.75 - 5.25	2.75 - 6.00	2.00 - 6.00	2.25 - 6.00
ख) 1 वर्ष से ऊपर 3 वर्ष तक	7.25 - 8.50	5.25 - 6.75	5.00 - 6.00	4.75 - 6.50	5.50 - 6.50	5.50 - 6.50
ग) 3 वर्ष से अधिक	8.00 - 8.75	5.50 - 7.00	5.75 - 6.00	5.25 - 7.00	5.80 - 7.00	5.80 - 7.00
निजी क्षेत्र के बैंक						
क) 1 वर्ष तक	5.00 - 9.00	3.50 - 7.50	3.50 - 7.50	3.00 - 6.25	3.00 - 6.25	3.00 - 6.25
ख) 1 वर्ष से ऊपर 3 वर्ष तक	8.00 - 9.50	6.00 - 8.00	5.75 - 7.75	5.25 - 7.25	5.50 - 7.00	5.50 - 7.00
ग) 3 वर्ष से अधिक	8.25 - 10.0	6.00 - 8.00	6.00 - 8.00	5.75 - 7.00	6.00 - 7.25	6.00 - 7.25
विदेशी बैंक						
क) 1 वर्ष तक	4.25 - 9.75	3.00 - 7.75	3.00 - 7.75	3.00 - 6.25	3.00 - 5.75	3.00 - 5.75
ख) 1 वर्ष से ऊपर 3 वर्ष तक	6.25 - 10.0	4.15 - 8.00	3.50 - 8.00	3.50 - 6.50	4.25 - 6.00	4.25 - 6.00
ग) 3 वर्ष से अधिक	6.25 - 10.0	5.00 - 9.00	4.75 - 8.00	3.50 - 7.00	5.00 - 7.00	5.00 - 7.00
बीपीएलआर						
सरकारी बैंक	10.00 - 12.50	9.00 - 12.25	10.25 - 11.50	10.25 - 11.25	10.25 - 11.25	10.25 - 11.25
निजी क्षेत्र के बैंक	10.00 - 15.50	7.00 - 15.50	10.50 - 13.00	11.00 - 13.50	11.00 - 13.50	11.00 - 13.50
विदेशी बैंक	9.00 - 17.50	6.75 - 17.50	11.00 - 14.85	10.00 - 14.50	10.00 - 14.50	10.00 - 14.50

* 3, फरवरी 2006 को।

बैंकों के लिए बीपीएलआर के परास अपरिवर्तित रहे। वर्ष 2004-05 के दौरान, ऋण बाजार में स्पर्धात्मक परिस्थितियों से, बैंकों के ऋण का एक बड़ा हिस्सा उप-बीपीएलआर दरों पर था। उप-बीपीएलआर ऋण का हिस्सा, वाणिज्यिक बैंकों के कुल ऋण में, 2 लाख रूपए से अधिक ऋण सीमा के साथ, निर्यात ऋण को छोड़कर, मार्च 2004 में लगभग 50 प्रतिशत से मार्च 2005 मे 60 प्रतिशत से ऊपर बढ़ा, जो कि दिसंबर 2005 में भी कायम रहा। दिसंबर 2005 की समालप्त पर, सरकारी क्षेत्रों के बैंकों के माध्य (प्रतिनिधि) ऋण दर ने, दोनों माँग और मीयादी ऋणों (जिस पर अधिकतम कारोबार अनुबंधित हो) के लिए, 8.00-11.63 प्रतिशत के परास में, मार्च 2005 में उनके तदनुरूपी स्तरों, 9.00-12.50 और 8.38 -12. 00 प्रतिशत प्रत्येक की तुलना में, नरमी दर्शाई। इस प्रकार, नवंबर 2003 की मध्यावधि समीक्षा में ऋण दरों की अधोमुखी गति में अवलोकित दृढ़ता के संबंध में व्यक्त चिंता को ध्यान में रखते हुए, ऋण दरों की गति अपेक्षित दिशा में थी।

निर्यात ऋण पर ब्याज दर

2.91 अप्रैल 2002 में, मौद्रिक एवं ऋण नीति वक्तव्य ने संकेत दिया कि निर्यात ऋण पर घरेलू ब्याज दरों को, वर्तमान परिस्थितियों में, मूल उधार दर (पीएलआर) से जोड़ना अनावश्यक हो गया है क्योंकि रुपए के अनुसार निर्यात ऋण पर प्रभावी ब्याज दरें पर्याप्त मात्रा में पीएलआर से निम्नतर थीं। अक्तूबर 29, 2002 को घोषित मध्यावधि समीक्षा में, रिज़र्व बैंक ने संकेत दिया कि पीएलआर-जुड़ी सीमा दर ने, बैंकों को विश्वसनीय कर्जदारों को उप-मूल उधार दरों पर ऋण देने की स्वतंत्रता देने के कारण, अपना महत्त्व खो दिया है। निर्यातक, मूल कर्जदार होने के कारण, सामान्यतया उप-मूल उधार दर पर निर्यात ऋण ले सकेंगे। इसलिए, बैंको में स्पर्धा को प्रोत्साहन देने के दृष्टिकोण से और निर्यात क्षेत्र में ऋण-प्रवाह की वृद्धि के लिए भी, रिज़र्व बैंक ने रुपए के अनुसार निर्यात ऋण पर ब्याज दरों को उदार बनाया। 180 दिनों से परे और 270 दिनों तक पूर्व-पोत लदान ऋण और 180 दिनों से परे और 270 दिनों तक पोतलदानोत्तर ऋण पर पीएलआर और 0.5 प्रतिशत अंकों की सीमा दर को प्रभावी मई 1, 2003 से अविनियमित किया गया। इससे अधिक उदारीकरण पर बाद की तारीख में विचार किया जाएगा और यह परीक्षण किया जाएगा कि क्या 180 दिनों तक के पूर्व-पोत लदान ऋण और 90 दिनों तक के पोतलदानोत्तर ऋण पर के सीमा दरों को भी, बैंकों के बीच निर्यात ऋण के लिए अधिक स्पर्धा को प्रोत्साहित करने के लिए, अविनियमित किया जाए। पूर्व-पोत लदान (180 दिनों तक) और पोतलदानोत्तर (90 दिनों तक) रुपए में निर्यात ऋण पर ब्याज की वर्तमान सीमा अप्रैल 30, 2006 तक वैध है। पीसीएफसी (विदेशी मुद्रा में पोतलदानोत्तर ऋण) पर सीमा दर, लिबोर +75 आधार अंकों से अनुरूपी मुद्राओं के लिए, अपरिवर्तित रही।

माँग मुद्रा बाज़ार : प्रमुख प्रवृत्तियाँ

2.92 वर्ष 2004-05 के दौरान मुद्रा बाजार में एक दिलचस्प घटनाक्रम था संपार्श्वीकृत खंड के तुलनीय आकार का असंपार्श्वीकृत खंड के मुकाबले बढ़ना। बाज़ार रेपो और संपार्श्वीकृत उधार और ऋणदायी बाध्यता (सीबीएलओ) का संयुक्त औसत दैनिक लेनदेन उनसे, जो असंपार्श्वीकृत माँग/नोटिस मुद्रा बाजार में थे, अनुपातिक उच्चतर था। यह ध्यान रखा जाए कि, प्राथमिक व्यापारियों के सिवाय गैर बैंक सहभागियों को माँग /नोटिस मुद्रा बाजार से चरणबद्ध बाहर करने के बाद, बीमा कंपनियों और म्युचुअल फंडों से संस्थागत निधियों की आपूर्ति, संपार्श्वीकृत बाजार में अंतरित हुई, जो सामान्यतः माँग मुद्रा बाजार से निम्नतर दर पर निधियाँ भी उपलब्ध कराते हैं। माँग/नोटिस मुद्रा पण्यावर्त, अगस्त 2004-दिसंबर 2005 के दौरान व्यापक रुप से बढ़ा, परंतु उसके बाद घट गया।

संबंधित बाजार शेयर

2.93 इस बाजार में विभिन्न घटकों के तुलनात्मक हिस्से उल्लेखनीय रूप से परिवर्तित हुए हैं (सारणी 2.39)। अर्थव्यवस्था में चलनिधि की अधिकता के फलस्वरूप उधार लेने की जरूरत में कुल मिलाकर कमी, नकदी आरक्षित अनुपात (सीआरआर) को पर्याप्त मात्रा में घटाना, और सामान्यतः, मुद्रा बाजार खंडों अर्थात् माँग मुद्रा बाजार, रेपो और सीबीएलओ के मुकाबले उच्चतर रिज़र्व बैंक रिवर्स रेपो दर के कारण माँग मुद्रा बाजार से लिए हुए उधार में बैंकों का हिस्सा धीरे-धीरे वर्षों में 2003-04 तक घटा। इस स्थिति का एक प्रत्यक्ष परिणाम, रिज़र्व बैंक के रिवर्स रेपो खिड़की में उच्चतर निधियों के नियोजन से हुआ। माँग मुद्रा बाज़ार में घटते हुए पण्यावर्त के परिदृश्य में, प्राथमिक व्यापारी, जिसकी माँग बाजार उधार कार्यक्रम के परिमाण से संचालित थी, 2003-04 में सबसे बड़े उधारकर्ता समूह के रूप में उभरा।

सारणी 2.39 : माँग / नोटिस मुद्रा बाज़ार में तुलनात्मक हिस्से

(प्रतिशत)

वर्ष	उधार लेना		ऋण देना		
	बैंक	प्राथमिक व्यापारी	बैंक	प्राथमिक व्यापारी	गैर-बैंक
1	2	3	4	5	6
2000-01	67	33	47	12	41
2001-02	62	38	65	10	25
2002-03	53	47	69	2	29
2003-04	36	64	57	2	41
2004-05	65	35	70	1	29
2005-06*	76	24	95	1	4

* फरवरी 2006 तक .

2.94 तथापि, ऋण माँग में वृद्धि, सीआरआर के रख रखाव में 50 आधार अंकों से, दो चरणों सितंबर और अक्तूबर 2004 में बढ़त और सरकार के बाज़ार उधार कार्यक्रम में कटौती जिसके बाद प्राथमिक व्यापारियों द्वारा उधार राशियाँ कम हुईं, के कारण 2004-05 के दौरान स्थिति बदली और बैंक एकबारगी पुनःसबसे बड़े उधारकर्ता समूह के रूप में उभरे।

2.95 ऋण देने की तरफ, गैर बैंक इकाइयों का हिस्सा, माँग / नोटिस बाज़ार से उनके चरणबद्ध बाहर निकलने की प्रक्रिया शुरू होने के बाद, 2001-02 और 2002-03 के दौरान कम हुआ।उसके बाद, 2003-04 के दौरान, माँग मुद्रा बाज़ार के कुल पण्यावर्त में स्पष्ट संकुचन की पृष्ठभूमि में, उनका हिस्सा तुलनात्मक आधार पर बढ़ा। सितंबर 2004 से, बैंकिंग क्षेत्र का हिस्सा बढ़ रहा है, और अगस्त 2005 से गैर बैंकों को चरणबद्ध बाहर करने के बाद केवल बैंक और प्राथमिक व्यापारी माँग मुद्रा बाज़ार में रह गए हैं।

नीति गतिविधियाँ

2.96 एनडीएस (तयशुदा लेनदेन प्रणाली) / सीसीआइएल (भारतीय समाशोधन निगम लि.) के कार्य में उत्साहवर्धक गतिविधियों के कारण, रेपो/मीयादी मुद्रा बाजार को और गहन बनाने को सुसाध्य करने के लिए शुद्ध अंतर-बैंक माँग मुद्रा /नोटिस मुद्रा बाज़ार की ओर चलने की प्रक्रिया त्वरित हुई। तदनुसार, प्रभावी जून 26, 2004 से शुरू पखवाड़े से, रिपोर्टिंग पखवाड़े में एक औसत में, 2000-01 के दौरान माँग/नोटिस मुद्रा बाजार में उनके औसत दैनिक ऋण देने के पिछले 60 प्रतिशत से 45 प्रतिशत तक गैर बैंक सहभागियों को उधार देने की अनुमति दी गई। इसके अतिरिक्त, प्रभावी जनवरी 8, 2005 से शुरू पखवाड़े से, इस सीमा को घटाकर, 2000-01 में माँग/नोटिस मुद्रा बाजार में उनके औसत दैनिक ऋण देने का 30 प्रतिशत कर दिया गया। उसके बाद, प्रभावी जून 11, 2005 से शुरू पखवाड़े से गैर बैंक सहभागियों को, रिपोर्टिंग पखवाड़े में एक औसत में, उनके 2000-01 के दौरान माँग/नोटिस मुद्रा बाजार में औसत दैनिक ऋण का 10 प्रतिशत तक उधार देने की अनुमति दी गई और उसके बाद प्रभावी अगस्त 6, 2005 से, गैर बैंक सहभागियों को, प्राथमिक व्यापारियों के सिवाय, माँग /नोटिस मुद्रा बाज़ार से पूर्णतः चरणबद्ध बाहर कर दिया गया।

2.97 इसके अतिरिक्त, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के मामले में, माँग/ नोटिस मुद्रा बाजार के एक्सपोजर पर विवेकपूर्ण सीमाओं को निर्धारित करने के लिए बेंचमार्क को अब उनकी पूंजी निधियों (टियर I और टियर II पूंजी का योग) से, अप्रैल 30, 2005 से शुरू के पखवाड़े से, जोड़ दिया गया है। पारदर्शिता में सुधार लाने के दृष्टिकोण से, वार्षिक नीति वक्तव्य 2005-06 में माँग /नोटिस और मीयादी मुद्रा लेनदेन के लिए एक स्क्रीन-आधारित तयशुदा उद्धरण-संचालित प्रणाली का प्रस्ताव किया गया।

2.98 चलनिधि प्रबंध के और अधिक उत्तम-तालमेल के लिए, बाज़ार सहभागियों को दूसरे चलनिधि समायोजन सुविधा (एसएलएएफ) के रूप में एक अतिरिक्त खिड़की उपलब्ध कराई गई है जो नवंबर 28, 2005 से, बाज़ार सहभागियों के सुझाव के प्रतिसाद में, चालू है। एसएलएएफ सभी कार्यदिवसों को, सिवाय शनिवार के, संचालित होता है और एसएलएएफ के लिए बोलियाँ सायंकाल 3.00 और 3.45 के बीच प्राप्त होती हैं। एसएलएएफ के प्रमुख लक्षण वही हैं जैसे की एलएएफ के। तथापि, एलएएफ और एसएलएएफ का निपटान अलग-अलग और सकल आधार पर किया जाता है। अनुभव पर आधारित, जरूरत पड़ने पर एसएलएएफ समीक्षा और संशोधन का विषय है।

जमा प्रमाणपत्र (सी डी)

2.99 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा जारी जमा प्रमाणपत्रों (सीडी) की बकाया राशि सुस्पष्ट रूप से मार्च 2004 में 4,461 करोड़ रुपए से मार्च 2005 में 12,078 करोड़ रुपए तक बढ़ी। सीडी पर विशिष्ट छूट दर (3-माह परिपक्वता के लिए) मार्च 2004 में 4.96 प्रतिशत से मार्च 2005 में 5.90 प्रतिशत से बढ़ी। मार्च 18, 2005 को कुल बकाया सीडी, सीडी जारी करने वाले बैंकों की समुच्चय बैंक जमाराशियों का 3.9 प्रतिशत बना। 2005-06 के दौरान अब तक, अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा जारी सीडी की बकाया राशि और बढ़ी, अप्रैल 2005 में 14,975 करोड़ रुपए से जनवरी 2006 में 34,521 करोड़ रुपए, और सीडी पर विशिष्ट छूट दर (3-माह परिपक्वता के लिए) 5.87 प्रतिशत से 7.21 प्रतिशत तक बढ़ी। प्रणाली स्तर पर, कुल बकाया सीडी, सीडी जारी करने वाले बैंकों की समग्र बैंक जमाराशियों का, जनवरी 20, 2006 को,3.1 प्रतिशत हुआ।

2.100 जारी करने वाले छोटे समूह, सुगम चलनिधि के वातावरण में, जब बैंक सामान्यत: सीडी जारी नहीं करते, दर्शाते हैं कि यह बैंक-विशिष्ट घटक है, जो हाल की अवधि में सीडी के विकास का संचालन कर रहे हैं। इस संदर्भ में यह पाया गया है कि, चुनिंदा विदेशी और निजी क्षेत्र के बैंक, केवल कम शाखाओं के कारण ही नहीं बल्कि उनके लागत-प्रभाव के कारण भी, सीडी जारी करने के माध्यम से संसाधन एकत्र कर रहे हैं। फिर भी, सीडी का नियमित जारी करना बहुत से समष्टि घटकों के कारण है, जिसमें बैंकों द्वारा गैर एसएलआर (सांविधिक चलनिधि अनुपात) ऋण प्रतिभूतियों में निवेश के बारे में रिज़र्व बैंक द्वारा संशोधित दिशानिदेश, प्रभावी मार्च 1, 2004 से सीडी पर स्टैंप शुल्क में कटौती, स्रोत पर कर कटौती नहीं, पूर्व अदायगी या अपरिपक्व समापन नहीं जैसा कि मीयादी जमाराशियों के मामले में होता है और द्वितीयक बाज़ार ट्रेडिंग के लिए बृहत्तर अवसर, शामिल हैं। माँग की तरफ, भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) का म्युचुअल फंडों (एमएफ) पर बैंक जमाराशियों में निधियों को रोकने पर अंकुश के साथ म्युचुअल फंडों में निधियों की सुधरी हुई स्थिति ने जमा प्रमाणपत्र बाज़ार को आवेग दिया। एक प्रोत्साहित घटनाक्रम जो घटा वह था कुछ उच्च-मूल्यांकित बैंकों द्वारा अपनी सीडी को, बाजार की बेहतर

पहुँच के लिए, मुल्यांकित करवाना हालाँकि ऐसा मूल्यांकन वर्तमान दिशानिदेश के अंतर्गत अनिवार्य नहीं है।

नीति गतिविधियाँ

2.101 मीयादी जमाराशियों और वाणिज्यिक पत्रों के लिए न्यूनतम अवधि की कटौती को ध्यान में रखते हुए, सीडी की न्यूनतम परिपक्वता अवधि, प्रभावी अप्रैल 28, 2005 से, 15 दिनों से घटाकर 7 दिनों की कर दी गई थी। इसने बैंकों को, सीडी के माध्यम से अल्प-कालिक संसाधन एकत्र करने का एक अतिरिक्त विकल्प दिया।

वाणिज्यिक पत्र (सीपी)

2.102 2004-05 के दौरान वाणिज्यिक पत्रों (सीपी) के लिए बाज़ार उत्साहजनक बना रहा। सीपी की बकाया राशि मार्च 2004 में 9, 131 करोड़ रुपए से मार्च 2005 में 14, 235 करोड़ रुपए बढ़ी। इस अवधि के दौरान सीपी पर छूट परास, 4.70-6.50 प्रतिशत के परास से 5.20-7.25 प्रतिशत तक चली और भारित औसत छूट दर (डब्ल्यू ए डी आर) 5.11 प्रतिशत से 5.84 प्रतिशत तक ऊपर ऊठी। सीपी की वरीयता प्राप्त परिपक्वता '' 61 से 90 दिनों''और ''181 दिनों और अधिक'' परास अवधियों की रही।

2.103 जारी करने वालों के प्रकार के संबंध में यह पाया गया कि, कालावधि में विनिर्माण कंपनियों द्वारा जारी सीपी में दीर्घ गिरावट हुई। इस प्रवृत्ति को दर्शाते हुए, 2004-05 के दौरान विनिर्माण और अन्य कंपनियों का हिस्सा सीपी की समग्र राशि में 31 प्रतिशत रहा (2003-04 के दौरान 44 प्रतिशत)। दूसरी ओर, वित्त / लीज़िंग कंपनियों ने 56 प्रतिशत का हिसाब रखा (2003-04 के दौरान 38 प्रतिशत) और वित्तीय संस्थाओं ने 13 प्रतिशत का हिसाब रखा (2003-04 के दौरान 18 प्रतिशत)।

2.104 2005- 06 के दौरान सीपी के लिए बाज़ार उत्साहजनक बना रहा। सीपी की बकाया राशि अप्रैल 2005 में 15,598 करोड़ रुपए से फरवरी 15, 2006 में 16,173 करोड़ रुपए बढ़ी। इस अवधि के दौरान सीपी पर छूट परास, 5.50-6.65 प्रतिशत के परास से 7.03-8.50 प्रतिशत तक चली। इस अवधि के दौरान भारित औसत छूट दर (डब्ल्यू ए डी आर) 5.84 प्रतिशत से 7.87 प्रतिशत तक बढ़ी। सीपी की वरीयता प्राप्त परिपक्वता ''61 से 90 दिनों'', ''91 से 180 दिनों'' और ''181 दिनों और अधिक'' परास अवधियों की रही।

2.105 जारी करने वालों के प्रकार के संबंध में, विनिर्माण और अन्य कंपनियों का हिस्सा सीपी द्वारा एकत्रित समग्र राशि का 19.1 प्रतिशत रहा जबकि वित्त / लीज़िंग कंपनियों ने, 2005-06 के दौरान फरवरी 15, 2006 तक, 80.9 प्रतिशत का हिसाब लिया।

2.106 बैंकों द्वारा गैर एसएलआर ऋण प्रतिभूतियों में निवेश पर रिज़र्व बैंक के दिशानिदेश के कारण म्युचुअल फंडो से बड़े निवेश की रुचि के बाद, इस अवधि के दौरान सीपी का जारी करना बढ़ा। इसके अतिरिक्त, प्रभावी मार्च 1, 2004 से सीपी पर स्टैंप शुल्क में कटौती भी उसके जारी करने में तेजी लाई। यद्यपि, सीपी बाज़ार प्रथम-वर्ग प्रधान-मूल्यांकित किए गए जारीकर्ताओं (अर्थात्, क्राईसिल या समतुल्य का P1 + और उससे ऊपर) से अत्यधिक प्रभावित रहा, यह पाया गया कि सीपी जारी करने में उनका हिस्सा, 2002-03 के दौरान 91.9 प्रतिशत से 2004-05 में 88.2 प्रतिशत तक घटा। तदनुरूपी, इस अवधि में माध्यम-मूल्यांकित किए गए जारीकर्ताओं का 8.1 प्रतिशत से 11.8 प्रतिशत तक बढ़ा।

2.107 यद्यपि कंपनियों को, जिनकी निवल मालियत 4 करोड़ रुपए अथवा अधिक है, सीपी के माध्यम से अल्प-अवधि संसाधन उगाहने की अनुमति है, यह देखा गया है कि 2005-06 के दौरान (अप्रैल-फरवरी 15, 2006) लगभग 92 प्रतिशत सीपी उन कंपनियों द्वारा जारी की गईं कि जिनकी निवल मालियत 50 करोड़ रुपए से ज्यादा है।

नीति संबंधी गतिविधियाँ

2.108 सीपी बाजार को और विकसित करने के लिए, एक सॉफ्टवेयर विकसित किया गया और सीपी जारी करने को तयशुदा लेनदेन प्रणाली (एनडीएस) प्लेटफार्म पर, जारीकर्ता और भुगतान कर्ता एजेंटों (आईपीए) द्वारा अप्रैल 16, 2005 के प्रभाव से रिपोर्ट करने के लिए लागू किया गया। इसके अतिरिक्त, सीपी जारी करने के बारे में सूचना,जैसे, जारी करने की तारीख, परिपक्वता तारीख, जारी राशि, छूट / ब्याज दर, बिना शर्त और अपरिवर्तनीय गारंटी और गारंटीकर्ता की साख दर, जैसा आईपीए द्वारा एनडीएस प्लेटफार्म पर सूचित हो, को जुलाई 1, 2005 के प्रभाव से रिज़र्व बैंक के वेबसाइट पर उपलब्ध किया गया है।

वायदा दर करार (एफआरए) / ब्याज दर स्वैप (आइआरएस)

2.109 वित्तीय वर्ष 2004-05 के दौरान एफआरए/ आइआरएस बाजार में मात्रा में तीव्र वृद्धि हुई। एफआरए/आइआरएस लेनदेन, संविदाओं की संख्याएँ तथा बकाया काल्पनिक मूलधन दोनों के अनुसार, बढ़ा, अप्रैल 2004 में 3,72,896 करोड़ रुपए की 13,960 संविदाओं से मार्च 2005 में 10,62,242 करोड़ रुपए की 37,864 संविदाएं। 2005-06 के दौरान अब तक, संविदाओं की संख्याएँ तथा बकाया काल्पनिक मूलधन बढ़ा, अप्रैल 2005 में 10,76,513 करोड़ रुपए की 38,386 संविदाओं से अक्तूबर 2005 के पहले पखवाड़े में 13,42,335 करोड़ रुपए की 37,864 संविदाएं।

2.110 इस संदर्भ में, डेरिवेटिव्स संविदाओं की कानूनी अस्पष्टता को दूर करने के लिए यथोचित कानूनी ढांचे की जरूरत है।रिज़र्व बैंक ने केंद्र सरकार को यथोचित वैधानिक परिवर्तनों के लिए सुझाव किया है। 2005-06 के केंद्रीय बजट ने भी, ओवर द काउंटर (ओटीसी) डेरिवेटिव्स संविदाओं की कानूनी अस्पष्टता को दूर करने का प्रस्ताव किया है।

संपार्श्वीकृत उधार और ऋणदायी बाध्यता (सीबीएलओ)

2.111 मार्च 2005 तक, 110 सदस्यों को भारतीय समाशोधन निगम लि.(सीसीआइएल) के सीबीएलओ खंड में प्रवेश दिया गया, जिसमें से 56 सक्रिय सदस्य थे। पिछले दो वर्षों में बाजार ने पर्याप्त विकास किया। सीबीएलओ में दैनिक औसत पण्यावर्त अप्रैल 2004 में 2,496 करोड़ रुपए से बढ़कर मार्च 2005 में 9, 625 करोड़ रुपए हुआ। फरवरी 2006 तक, 150 सदस्यों को सीसीआइएल के सीबीएलओ खंड में प्रवेश दिया गया, जिसमें से 78 सक्रिय सदस्य थे। सीबीएलओ में दैनिक औसत पण्यावर्त अप्रैल 2005 में 10,369 करोड़ रुपए से बढ़कर फरवरी 2006 में 34,162 करोड़ रुपए हुआ। म्यूचुअल फंड और बीमा कंपनियाँ, सीबीएलओ खंड में निधियों की सबसे बड़ी संभरक हैं जबकि माँग की तरफ, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, निजी क्षेत्र के बैंक, सहकारी बैंक और प्राथमिक व्यापारी निधियों के प्रमुख उधारकर्ता हैं।

स्थायी चलनिधि सुविधा

2.112 निर्यात ऋण पुनर्वित्त (ईसीआर) सुविधा अब बैंकों के पात्र बकाया रुपए में निर्यात ऋण, दोनो पूर्व-पोतलदान और पोतलदानोत्तर चरणों के आधार पर उपलब्ध कराई जाती है। प्रभावी अप्रैल 1, 2002, अनुसूचित बैंकों को बकाया निर्यात ऋण का 15 प्रतिशत तक, जो दूसरे पूर्ववर्ती पखवाड़े के अंत में पुनर्वित्त के लिए पात्र हो, ईसीआर सुविधा दी जा रही है। मार्च 29, 2004 के प्रभाव से सामान्य सुविधा (बैंक दर से जुड़े दर पर) और बैक-स्टॉप सुविधा एलएएफ परिचालनों अथवा राष्ट्रीय शेयर बाजार (एनएसई)-मुंबई अंतर बैंक प्रस्तावित दर (एमआइबीओआर) से जुड़े दर का विलय कर दिया गया और तदनुसार, ईसीआर एकल दर से, रिज़र्व बैंक के रेपो दर से, दिया जा रहा है। चूँकि प्रभावी अक्तूबर 26, 2005 से एलएएफ के अंतर्गत रेपो दर, पूर्ववर्ती 6.00 प्रतिशत से 6.25 प्रतिशत तक, संशोधित कर दिया गया है, उसी तारीख से ईसीआर 6.25 प्रतिशत पर दिया गया। प्रभावी जनवरी 24, 2006 से रेपो दर में 6.25 प्रतिशत से 6.50 प्रतिशत तक वृद्धि के परिणाम स्वरूप ईसीआर चालू रेपो दर पर दी जा रही है।

निर्यात ऋण पुनर्वित्त सुविधा के उपयोग में प्रवृत्तियाँ

2.113 कुल निर्यात ऋण मार्च 18, 2005 को 69, 059 करोड़ रुपए से फरवरी 3, 2006 को 83, 601 करोड़ रुपए तक बढ़ा। निर्यात ऋण पुनर्वित्त सीमा जो मार्च 18, 2005 को 4,928 करोड़ रुपए पर थी, फरवरी 3, 2006 को 5, 526 करोड़ रुपए तक बढ़ी। इस अवधि के दौरान, निर्यात ऋण पुनर्वित्त सुविधा, कभी-कभी, दिसंबर 2005 तक उपयोग में लाई गई। दिसंबर 2005 से माँग मुद्रा दरों में दृढ़ता और बाज़ार में चलनिधि परिस्थितियों में कड़ाई के कारण, ईसीआर का दैनिक औसत उपयोग जनवरी 6, 2006 को 1, 412 करोड़ रुपए से फरवरी 3, 2006 को 2, 469 करोड़ रुपए तक बढ़ा।

चयनित वित्तीय संस्थाओं (एफआइ) द्वारा संरक्षक सीमा के अंतर्गत संसाधन का संग्रहण

2.114 वर्ष 1990 तक वित्तीय संस्थाएं बाजार अनुशासन के अधीन नहीं थीं लेकिन प्रमुख रूप से भारत सरकार के प्लान प्राथमिकताओं और औद्योगिक लाइसेंस निर्धारण के मुताबिक पूंजी उपलब्ध कराने के यंत्र थे। उनका वित्तपोषण रियायती संसाधनों के माध्यम, सरकार द्वारा गारंटीशुदा बंधपत्रों और रिज़र्व बैंक के लंबी-अवधि परिचालन (एलटीओ) निधियों से अग्रिम, द्वारा हुआ। वर्तमान समय में, एक वित्तीय संस्था अल्प-अवधि के अलावा दीर्घ-अवधि के संसाधन उगाह सकती है कि जिससे ऐसी निधियों का कुल बकाया, किसी भी समय नवीनतम लेखापरीक्षित तुलन-पत्र के अनुसार उसके निवल स्वाधिकृत निधि (एनओएफ) निधियों के 10 गुने से अधिक न हो। इस समग्र सीमा के भीतर, नौ संस्थाओं अर्थात्, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (आइडीबीआइ), भारतीय प्रौद्योगिक वित्त निगम (आइएफसीआइ), निर्यात आयात बैंक (एलक्जम बैंक), भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी), भारतीय औद्योगिक निवेश बैंक लि. (आइआइबीआइ), भारतीय पर्यटन वित्त निगम (टीएफसीआइ), राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड), बुनियादी सुविधा विकास वित्त कंपनी (आइडीएफसी) और राष्ट्रीय आवास बैंक (एनएचबी) के पास, उनके नवीनतम लेखापरीक्षित तुलन-पत्र के अनुसार निवल स्वाधिकृत निधि के 100 प्रतिशत के बराबर संसाधन जुटाने के लिए, संरक्षक सीमाएँ थीं। तथापि, अक्तूबर 1, 2004 के प्रभाव से आइडीबीआइ का खुद को अनुसूचित बैंक, आइडीबीआइ लिमिटेड में परिवर्तित करने के कारण, चयनित वित्तीय संस्थाओं की संख्या आठ तक नीचे आई। प्रसंगवश, आइडीबीआइ लिमिटेड का प्रभावी अप्रैल 2, 2005 से आइडीबीआइ बैंक लि. के साथ विलय हुआ। इन चयनित वित्तीय संस्थाओं की, मीयादी मुद्रा, मीयादी जमाराशि, अंतर-कंपनी जमाराशियों (आइसीडी), जमाराशि प्रमाणपत्र और वाणिज्यिक पत्र के माध्यम से संसाधन जुटाने के लिए समुच्चय सीमाएँ अप्रैल 1, 2005 को 16,160 करोड़ रुपए से बढ़कर दिसंबर 23, 2005 को 17,046 करोड़ रुपए हुईं।

संसाधन संग्रहण की प्रवृत्तियाँ

2.115 इन यंत्रों से, वित्तीय संस्थाओं द्वारा उगाहे गए संसाधन की कुल बकाया राशि, अप्रैल 1, 2005 को 2, 862 करोड़ रुपए (सीमा का 17. 7 प्रतिशत) से थोड़ी घटकर फरवरी 3, 2006 को 2, 002 करोड़ रुपए (सीमा का 11.74 प्रतिशत) हुई। औसत के आधार पर, वाणिज्यिक पत्र सबसे अधिक वरीयता प्राप्त यंत्र था (1,900 करोड़ रुपए), अनुसरण में मीयादी उधार राशियों (50 करोड़ रुपए), जमा प्रमाणपत्र (26.66 करोड़ रुपए), मीयादी जमाराशियों (25 करोड़ रुपए) और आइसीडी (0.25 करोड़ रुपए)। उल्लेखनीय रूप से, केवल चार संस्थाएँ, अर्थात्, बुनियादी सुविधा विकास वित्त कंपनी, निर्यात आयात बैंक, राष्ट्रीय आवास बैंक और भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक, चालू वर्ष 2005-06 के दौरान अब तक (अप्रैल-फरवरी 3, 2006), इन यंत्रों के जरिए संसाधन जुटाने में सक्रिय थे।

2.116 मुद्रा बाज़ार,बहुत से यंत्रों की बढ़ती हुई मात्रा से, गहराई में बढ़ रहे हैं। हाल में, विभिन्न उद्देश्यों को पूरा करने के उद्देश्य से, इन बाजारों की निपुणता को बढ़ाने एवं स्थिरता के लिए, अनेक उल्लेखनीय गतिविधियाँ, मौद्रिक नीति संवेगों को प्रसारित करने समेत, घटित हुईं हैं (बॉक्स II.1)। ऐसी प्रमुख गतिविधियों में शामिल हैं माँग मुद्रा बाज़ार का शुद्ध अंतर-बैंक बाज़ार के रूप मे उभरने के साथ केवल बैंकों और प्राथमिक व्यापारियों के रूप मे पात्र ईकाइयाँ और गैर बैंक ईकाइयों को संपार्श्वीकृत उधार और ऋणदायी बाध्यता (सीबीएलओ) के नए ज़मानती यंत्र की ओर अंतरण और बाज़ार रेपो। द्वितीय चलनिधि समायोजन सुविधा के रूप में एक अतिरिक्त एलएएफ खिड़की के खोलने से भी चलनिधि प्रबंध मजबूत बना। प्रचुर मात्रा और अस्थिर विदेशी विदेशी मुद्रा प्रवाह ने, तथापि, चलनिधि प्रबंध के लिए सबसे बड़ी चुनौती प्रस्तुत करना जारी रखा। चूँकि, सरकारी नकद राशि-प्रवाह का भी निम्न आनुमानिकता है, चलनिधि प्रबंध कुछ अनिश्चितता से करना होता है। इस पृष्ठभूमि में, भारत में मौद्रिक नीति परिचालनों के लिए अल्प-अवधि ब्याज दरों में अस्थिरता को, हाल के समय में, नियंत्रित करना पर्याप्त मात्रा में सफलता का विषय है।

सरकारी प्रतिभूतियाँ बाज़ार

2.117 रिज़र्व बैंक, लागत को समय से कम करने और केंद्र और राज्यों दोनों के लिए ऋण की परिपक्वता रूपरेखा के संप्रसारण के जुड़वाँ उद्देश्यों की खोज में, ऊर्ध्वमुखी अंतरित उत्पन्न वक्र के परिदृश्य में, चालू वर्ष के दौरान अब तक कायम रहा। 2005-06 के दौरान केंद्र सरकार का बाजार उधार, पिछले वर्ष के तदनुरूपी अवधि की तुलना में,उल्लेखनीय रूप से उच्चतर था, जबकि राज्य सरकारों का निम्नतर, जो प्रमुखरूप से ऋण विनिमय योजना (डीएसएस) का 2004-05 में बंद होना दर्शाता है।वर्ष के दौरान जारी किए गए सरकारी प्रतिभूतियो का भारित औसत उत्पन्न कुछ हद तक मज़बूत हुआ जबकि, अधिक मात्रा में दीर्घ-अवधि बंधपत्रों के जारी करने के कारण भारित औसत परिपक्वता थोड़ी बढ़ी। प्रणाली में सुविधाजनक चलनिधि स्थिति के साथ कतिपय राज्य सरकारों की भावी वित्तीय स्वास्थ्यवर्धक बाजार संभावनाएँ-उनके राजकोषीय दायित्व विधिनिर्माण अधिनियमन द्वारा कुछ हद तक प्रेरित किया-ने संभवत: निम्नतर विस्तार की नीलामियों की सफलता में, ''टैप इस्यू'' की तुलना में, योगदान किया (तदनुरूपी सरकारी प्रतिभूतियों से ऊपर)। चलनिधि प्रबंध में तालमेल और बाज़ार सहभागियों के सुझावों के अनुसार, एक द्वितीय चलनिधि समायोजन सुविधा नवंबर 28, 2005 के प्रभाव से शुरू की गई। रिज़र्व बैंक ने वर्ष 2005-06 (जनवरी 24, 2006) के लिए वार्षिक नीति वक्तव्य की तीसरी तिमाही समीक्षा में घोषित किया कि वह प्रणाली में यथोचित चलनिधि बनाए रखने के लिए सुनिश्चित करना जारी रखेगा जिससे ऋण की वास्तविक जरूरतें, कीमत और वित्तीय स्थायित्व के उद्देश्यों के सामंजस्य के साथ, पूरी की जा सकें। तदनुसार, चालू समष्टि आर्थिक और समग्र मौद्रिक परिस्थितियों के दृष्टिकोण से, रिज़र्व बैंक की चलनिधि समायोजन सुविधा के अंतर्गत फिक्स्ड रिवर्स रेपो दर को, 25 आधार अंकों से, 5.25 प्रतिशत से 5.50 प्रतिशत तक बढ़ाया गया जबकि रिवर्स रेपो और रेपो दरों के बीच के विस्तार को फिलहाल 100 आधार अंकों पर बनाए रखा गया। एलएएफ के अंतर्गत फिक्स्ड रिवर्स रेपो दर, इसलिए, अविलंब प्रभाव से, अर्थात् जनवरी 24, 2006 को एसएलएफ के चालू होने से, 6.50 प्रतिशत पर रहेगा।

2.118 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक) केंद्र और राज्य सरकारों का बाजार उधार कार्यक्रम, प्रमुखरूप से सुविधाजनक चलनिधि परिस्थितियों के कारण सफलतापूर्वक प्रबंधित किया गया। चालू वर्ष के दौरान अब तक, बहुत से राज्यों ने बाज़ार उधार कार्यक्रम के अंतर्गत संसाधन उगाहने के लिए नीलामी मार्ग का विकल्प अपनाया। चालू वर्ष के दौरान अब तक, केंद्र के अलावा राज्यों के बाज़ार उधार राशियों की भारित औसत लागत का बढ़ना जारी रहा जो वैश्विक ब्याज दरों में उलटाव, घरेलू विकास में उछाल और नवंबर-फरवरी 2006 के दौरान चलनिधि परिस्थितियों में कड़ाई को दर्शाता

बॉक्स II.1
मौद्रिक नीति पर रिज़र्व बैंक की तकनीकी सलाहकार समिति

मौद्रिक नीति में परामर्शदात्री प्रक्रिया को और अधिक सुदृढ़ करने के दृष्टिकोण से रिजर्व बैंक ने जुलाई 2005 में एक मौद्रिक नीति पर तकनीकी सलाहकार समिति (टीएसी), मौद्रिक अर्थशास्त्र, केंद्रीय बैंकिंग, वित्तीय बाज़ार और सार्वजनिक वित्त क्षेत्र के चार बाह्य विशेषज्ञों के साथ बनाई। रिजर्व बैंक के गवर्नर टीएसी के अध्यक्ष हैं साथ में मौद्रिक नीति विभाग के प्रभारी उप गवर्नर आंतरिक सदस्य के रूप मे हैं। अन्य उप गवर्नर (रों) और कोई विशेषज्ञ, आवश्यकता के अनुसार, टीएसी की मीटिंगों में विशेष अतिथि रहेंगे साथ में आर्थिक विश्लेषण और नीति विभाग तथा मौद्रिक नीति विभाग के प्रमुख उपस्थित रहेंगे। मौद्रिक नीति विभाग को समिति के सचिवालय के रूप में नामित किया गया है।

समिति के अभिदेशन की शर्तें हैं समष्टि आर्थिक और मौद्रिक गतिविधियों की समीक्षा और मौद्रिक नीति के रुझान पर सलाह देना। समिति के लिए तिमाही में कम से कम एकबार मिलना अपेक्षित है और उसके विचारों पर चर्चा भारतीय रिजर्व बैंक के केंद्रीय बोर्ड की आगामी मीटिंग में की जाएगी। वर्तमान समिति का कार्यकाल जनवरी 31, 2007 तक है।

है। बाज़ार उधार कार्यक्रम के अंतर्गत केंद्र और राज्यों प्राथमिक प्रचालनों की भारित औसत परिपक्वता, वर्ष के दौरान, उच्चतर रही। चालू वर्ष के दौरान अब तक, केंद्र सरकार ने केवल दो अवसरों पर (मई 3, 2005 और जून 4, 2005) अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यूएमए) का लाभ उठाया जो सुविधाजनक चलनिधि स्थिति को दर्शाता है। राज्य सरकारों द्वारा भी अर्थोपाय अग्रिम का उपयोग,पिछले वर्ष की तुलना में, उल्लेखनीय रूप से घटा। तदनुरूपी, अधिकतर राज्यों और केंद्र बड़े अधिशेष नकदी शेष जमाराशि का संचय किया।

केंद्र सरकार के बाज़ार उधार 2005-06

2.119 2005-06 के लिए केंद्र सरकार के निवल बाज़ार उधार का केंद्रीय बजट अनुमान 1,10,291 करोड़ रुपए (समेत 182- दिवसीय खजाना बिलों का निवल प्रचालन) आँका गया। 68,282 करोड़ रुपए की चुकौतियों समेत, सकल बाज़ार उधार का अनुमान 1,78,573 करोड़ रुपए है। दिनांकित प्रतिभूतियोंके संबंध में एक सांकेतिक प्रचालन कैलेंडर, वर्ष 2005-06 के प्रथमार्ध के लिए, सरकार से परामर्श के बाद 83,000 करोड़ रुपए की एक समुच्चय राशि के लिए,जारी किया गया। तथापि, मई 3, 2005 को 29.27 वर्ष परिपक्वता के लिए हुई नीलामी में अधिसूचित राशि में कटौती होने के कारण, 4,000 करोड़ रुपए से 2,000 करोड़ रुपए तक, वास्तविक प्रचालन 81, 000 करोड़ रुपए का हुआ। सितंबर 19, 2005 को, केंद्र सरकार के बाजार उधार कार्यक्रम के अंतर्गत दिनांकित प्रतिभूतियों का प्रचालन-कैलेंडर, चालू वित्तीय वर्ष के द्वितीयार्ध के लिए (अक्तूबर-मार्च), जारी किया गया। कैलेंडर ने फरवरी 2006 के अंत तक 58, 000 करोड़ रुपए दिनांकित प्रतिभूतियों के माध्यम से उगाहने का प्रस्ताव किया। अवधि के दौरान वास्तविक प्रचालन 40, 000 करोड़ रुपए का हुआ क्योंकि 6,000 करोड़ रुपए के लिए 11.83 प्रतिशत सरकारी स्टॉक 2014 की अक्तूबर 6, 2005 को हुई नीलामी में सभी बोलियाँ, परिमित बोली के कारण निरस्त कर दी गईं थीं, जबकि 4, 000 करोड़ रुपए के लिए दूसरी अनुसूचित नीलामी, केंद्र सरकार के पास अधिशेष चलनिधि होने के कारण निरस्त की गई। इसके अतिरिक्त, फरवरी 7, 2006 को, 11.56 वर्ष अवधि की दिनांकित प्रतिभूति के प्रचालन के माध्यम से, कैलेंडर में घोषित 6, 000 करोड़ रुपए के बदले 3, 000 करोड़ रुपए की राशि, उगाही गई। फरवरी 20, 2006 को 5, 000 करोड़ रुपए के लिए, परास 10-14 वर्ष के बीच अवधि की दिनांकित प्रतिभूति की अनुसूचित नीलामी निरस्त की गई।

2.120 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक), केंद्र सरकार द्वारा उगाही गई सकल बाज़ार उधार राशियाँ (बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत प्रचालन के सिवाय), पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि के दौरान उगाही गई 1,04,491 करोड़ रुपए (निवल 46,044 करोड़ रुपए) के विरुद्ध 1, 58,339 करोड़ रुपए (निवल 95,589 करोड़ रुपए) थीं (सारणी 2.40)। सभी प्रचालन पुन: जारी किए गए थे सिवाय सितंबर 8, 2005 को जारी किए गए 30-वर्ष दिनांकित प्रतिभूति और फिक्स्ड कूपन प्रतिभूतियों के रूप में थे। 2005-06 के दौरान अब तक, पुन: जारी की गई कुल प्रतिभूतियों का हिस्सा, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि के दौरान 60 प्रतिशत हिस्से के विरुद्ध 97 प्रतिशत निकला। पिछले वर्ष के दौरान 847 करोड़ रुपए और 985 करोड़ रुपए का डिवॉल्वमेंट क्रमशः रिज़र्व बैंक और प्राथमिक व्यापारियों पर और निजी प्लेसमेंट के द्वारा जारी किए गए 350 करोड़ रुपए की तुलना में वर्ष के दौरान अब तक डिवॉल्वमेंट /निजी प्लेसमेंट नही हुआ।

दिनांकित प्रतिभूतियाँ

2.121 2004-05 की प्रवृत्ति को कायम रखते हुए, 2005-06 के दौरान जारी की गई दिनांकित प्रतिभूतियों की भारित औसत आय ऊर्ध्वमुखी रही। 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28,2006 तक) जारी की गई दिनांकित प्रतिभूतियों की भारित औसत आय 7.30 प्रतिशत पर, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि के दौरान 6.11 प्रतिशत के अलावा पूरे पिछले वर्ष की तुलना में, उच्चतर थी। 2005-06 के दौरान अब तक जारी की गई दिनांकित प्रतिभूतियों की भारित औसत परिपक्वता भी बढ़ी, जो दीर्घ-कालिक प्रतिभूतियों के बड़े प्रचालन को दर्शाता है। वर्ष के दौरान अब तक, जारी की गई दिनांकित प्रतिभूतियों की भारित औसत परिपक्वता, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि के अलावा पूरे पिछले वर्ष के लिए 14.13 वर्ष की तुलना में, 15.86 वर्ष निकली।

खजाना बिल

2.122 वर्ष 2005-06 के दौरान, 91-दिवसीय और 364-दिवसीय खजाना बिलों की अधिसूचित राशियाँ (सिवाय बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत), प्रत्येक नीलामी के लिए, क्रमशः500 करोड़ रुपए और 1, 000 करोड़ रुपए पर अपरिवर्तित रखी गईं। 182-दिवसीय खजाना बिलों की नीलामी को, 500 करोड़ रुपए की अधिसूचित राशि से, पुनःआरंभ किया गया। इसके अलावा, 91-दिवसीय खजाना बिलों की नीलामी के जरिए, बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत 1,500 करोड़ रुपए उगाहना था, जबकि 2005-06 के दौरान, 182-दिवसीय और 364-दिवसीय खजाना बिलों की नीलामियों के माध्यम से, 1, 000 करोड़ रुपए प्रत्येक, अवशोषित करना था। अगस्त 31, 2005 और सितंबर 28, 2005 के बीच पांच नीलामियों के लिए 91-दिवसीय खजाना बिलों के अंतर्गत अधिसूचित राशि को 4,000 करोड़ रुपए तक बढ़ाया गया (500 करोड़ रुपए नियमित नीलामी के लिए और 3,500 करोड़ रुपए बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत)। प्रणाली की समग्र चलनिधि स्थिति को ध्यान में रख कर, नवंबर 16, 2005 को की गई खजाना बिलों की नीलामियों से बाजार स्थिरीकरण योजना-अवयव के प्रचालन को बंद कर दिया गया।

सारणी 2.40 : केंद्र सरकार का बाज़ार उधार

(करोड़ रुपए)

मद	2004-05		2004-05 (अप्रैल-फरवरी)		2005-06 (अप्रैल-फरवरी)	
	सकल	निवल	सकल	निवल	सकल	निवल
1	2	3	4	5	6	7
1. बजट अनुमान *	1,50,817	90,365			1,78,573	1,10,291
उसमें से:						
(i) दिनांकित प्रतिभूतियाँ	1,24,817	90,501			1,39,573	1,03,942
(ii) 182-दिवसीय खजाना बिल	0	0			13,000	6,500
(iii) 364-दिवसीय खजाना बिल	26,000	-136			26,000	-151
2. अब तक पूर्ण किया गया @	1,06,501	46,050	1,04,491	46,044	1,58,339	95,589
उसमें से:						
(i) दिनांकित प्रतिभूतियाँ	80,350	46,034	80,350	46,034	1,21,000	88,370
(ii) 182-दिवसीय खजाना बिल	0	0	0	0	12,088	6,109
(iii) 364-दिवसीय खजाना बिल	26,151	16	24,141	10	25,251	1,110
3. निजी प्लेसमेंट	350		350		0	
4. डिवॉल्वमेंट	1,832		1,832		0	
(i) भारतीय रिज़र्व बैंक	847		847		0	
(ii) प्राथमिक व्यापारी	985		985		0	
5. दिनांकित प्रतिभूतियों पर भारित औसत आय (प्रतिशत)	6.11		6.11		7.30	
6. दिनांकित प्रतिभूतियों की भारित औसत परिपक्वता (वर्ष)	14.13		14.13		15.86	

* पूर्ण वित्तीय वर्ष के लिए।
@ 2004-05 के लिए वास्तविक।

2.123 91-दिवसीय और 364-दिवसीय खजाना बिलों की प्राथमिक बाज़ार कट-ऑफ आय 137 आधार अंकों और 115 आधार अंकों से बढ़ी, क्रमशः 6.69 प्रतिशत और 6.81 प्रतिशत तक, क्रमशः फरवरी 22, 2006 और फरवरी 15, 2006 की नीलामियों में अंत- मार्च 2005 की तुलना में (चार्ट II.14)। अप्रैल 6, 2005 को उसकी शुरुआत के बाद से, फरवरी 22, 2006 को ली गई नीलामी में, 182-दिवसीय खजाना बिलों की प्राथमिक बाज़ार कट-ऑफ आय भी 130 आधार अंकों से 6.74 प्रतिशत तक बढ़ी।

राज्य सरकारों के बाज़ार उधार

2.124 चालू राजकोषीय वर्ष के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक), राज्य सरकारों की सकल उधार राशियाँ 19,909 करोड़ रुपए [11,186 करोड़ रुपए (56.2 प्रतिशत) ''टैप'' प्रचालन के माध्यम से और 8,723 करोड़ रुपए (43.8 प्रतिशत) नीलामियों के जरिए], पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि में 38,668 करोड़ रुपए [37,783 करोड़ रुपए (97.7 प्रतिशत)डटैपड प्रचालन के माध्यम से और 885 करोड़ रुपए (2.3 प्रतिशत) नीलामियों के जरिए] की तुलना में, थीं।यह ध्यान रखा जाए कि, 2004-05 के दौरान 42, 058 करोड़ रुपए के सकल आबंटन में 18,805 करोड़ रुपए और 2,351 करोड़ रुपए क्रमशः ऋण अदला-बदली योजना (डीएसएस) और ग्रामीण मूलभूत सुविधा विकास निधि (आरआइडीएफ) के अंतर्गत सम्मिलित हैं जबकि, 2005-06 के लिए सकल आबंटन को 25, 589 करोड़ रुपए रखा गया है।

चार्ट II.14: खजाना बिलों की प्राथमिक आय में घट-बढ़ - 2005-06 (अप्रैल - फरवरी)

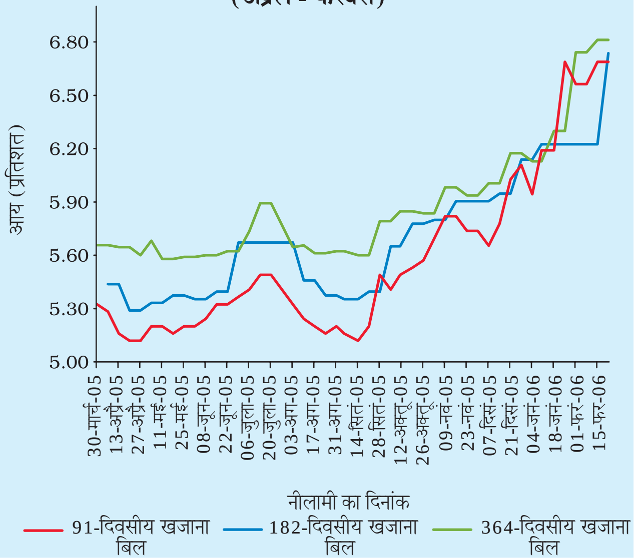

2.125 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक) जारी राज्य सरकार के प्रतिभूतियों की भारित औसत आय, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि के दौरान 6.44 प्रतिशत और संपूर्ण 2004-05 के दौरान 6.45 प्रतिशत की तुलना में, 7.62 निकली। चालू वित्तीय वर्ष के दौरान सभी प्रचालन 10-वर्ष की परिपक्वता के थे जबकि, पिछले वर्ष की

तदनुरूपी अवधि के दौरान जारी की गई राज्य सरकार की प्रतिभूतियों की भारित औसत परिपक्वता 9.99 वर्ष थी। चालू वर्ष में अब तक (फरवरी 28, 2006 तक) बीस राज्यों ने बाज़ार उधार कार्यक्रम के अंतर्गत संसाधन उगाहने के लिए नीलामी मार्ग का विकल्प चुना, पिछले वर्ष में तीन राज्यों की तुलना में। 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006), यद्यपि राज्य विकास ऋृणों की नीलामियों में कट-ऑफ आय 7.32-7.85 प्रतिशत के परास के बीच में रही, टैप प्रचालनों का कूपन 7.53-7.77 प्रतिशत परास के बीच में रहा।

खुले बाज़ार परिचालन

2.126 जनवरी 2004 से, रिज़र्व बैंक ने किसी एकमुश्त खुले बाजार परिचालन (ओएमओ) बिक्री का संचालन नहीं किया। 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 24, 2006 तक), ओएमओ बिक्री (अधिशेष निवेश /सरकारी प्रतिभूतियों की परिपक्वता आगम के पुनर्निवेश के लिए संपूर्ण रूप से राज्य सरकारों को बेची गईं प्रतिभूतियों की राशि के कारण और समेकित डूबंत कोष और गारंटी विमोचन कोष के निवेश के कारण), पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि के दौरान 2, 493 करोड़ रुपए की ओएमओ बिक्री की तुलना में, कुल 3, 718 करोड़ रुपए की हुई।

बाज़ार स्थिरीकरण योजना

2.127 बाज़ार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) के अंतर्गत अवशोषित कुल बकाया राशि फरवरी 28, 2006 को 31,958 करोड़ रुपए तक घटी, मार्च 31, 2005 को 64, 211 करोड़ रुपए की तुलना में (सारणी 2.41)। अगस्त 25, 2005 को, एमएसएस के अंतर्गत, 1.76 वर्ष की अवशिष्ट परिपक्वता वाली दिनांकित प्रतिभूति के पुन: प्रचालन के जरिए, 6, 000 करोड़ रुपए (अंकित मूल्य), अवशोषित किया गया। ध्यान रहे कि, 2004-05 में, दिनांकित प्रतिभूतियों के माध्यम से एमएसएस के अंतर्गत अवशोषित (अंकित मूल्य) 20, 000 करोड़ रुपए, सितंबर 3, 2005 को परिपक्व हुए।

2.128 अगस्त 27, 2005 को, एमएसएस के अंतर्गत खजाना बिलों और दिनांकित प्रतिभूतियों की नीलामियों की सांकेतिक अनुसूची, अगस्त 31, 2005 और सितंबर 28, 2005 के बीच पांच नीलामियों के लिए 91-दिवसीय खजाना बिलों की अधिसूचित राशि को 2, 000 करोड़ रुपए से 3, 500 करोड़ रुपए तक बढ़ाने के लिए, 10, 000 करोड़ रुपए की एक अतिरिक्त अधिशेष चलनिधि को ज़ब्त करने के निमित्त, दूसरी तिमाही (जुलाई-सितंबर) के लिए संशोधित की गई। 182-दिवसीय और 364-दिवसीय खजाना बिलों की अधिसूचित राशियाँ एमएसएस के अंतर्गत अपरिवर्तित रहीं। प्रणाली की समग्र चलनिधि स्थिति को ध्यान में रख कर, नवंबर 16, 2005 को की गई खजाना बिलों की नीलामियों से, बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत खजाना बिलों की नीलामियों के माध्यम से अवशोषण को बंद कर दिया गया।

चलनिधि समायोजन सुविधा

2.129 वित्तीय वर्ष के दौरान अक्तूबर 2005 तक चलनिधि परिस्थितियाँ सामान्यतः सुविधाजनक रहीं लेकिन उसके बाद, प्रमुख रूप से त्यौहार मौसम से मुद्रा प्रचलन में तीव्र वृद्धि के अलावा भारत सरकार अधिशेष नकदी शेष जमाराशि में वृद्धि के कारण, कठोर हुईं, जो अंशतः मध्य-दिसंबर में अग्रिम कर बाहिर्वाह और दिसंबर 29, 2005 को हुए इंडिया मिलेनियम डिपॉज़िट के विमोचन को दर्शाता है। अप्रैल 2005 के दौरान, निवल औसत दैनिक चलनिधि अवशोषण 30, 765 करोड़ रुपए पर था जो जुलाई 2005 के दौरान धीरे-धीरे 10, 754 करोड़ रुपए पर घटा। अगस्त 2005 के दौरान निवल औसत चलनिधि अवशोषण 34, 832 करोड़ रुपए पर बढ़ा परंतु नवंबर 2005 के दौरान तेजी से 3, 268 करोड़ रुपए पर घटा और आगे दिसंबर 2005 के दौरान 1, 452 करोड़ रुपए और ऋृणात्मक हुआ, जनवरी 2006 के दौरान (-) 15, 386 करोड़ रुपए पर तथा फरवरी 2006 के दौरान (-) 13, 532 करोड़ रुपए पर। परिणामतः, रेपो बोलियाँ प्राप्त हुईं और स्वीकार की गईं, नवंबर 9-18, 2005 के दौरान सात लगातार कार्यदिवसों के लिए परास 200 करोड़ रुपए और 5, 175 करोड़ रुपए के बीच में, दिसंबर 16-30, 2005 के दौरान 11 लगातार कार्यदिवसों के लिए परास 1,085 करोड़ रुपए-30,110 करोड़ रुपए के बीच में, जनवरी, 2006 के दौरान 18 कार्यदिवसों के लिए परास 50 करोड़ रुपए-33, 290 करोड़ रुपए के बीच में, और फरवरी, 2006 के दौरान 19 कार्यदिवसों के लिए परास 4,515 करोड़ रुपए-5, 175 करोड़ रुपए के बीच में।

सरकारी प्रतिभूतियों में द्वितीयक बाज़ार लेनदेन

2.130 द्वितीयक बाज़ार के लेनदेन की मात्रा अप्रैल 2005 में 1,75, 527 करोड़ रुपए (लेनदेन का 47.98 प्रतिशत एकमुश्त था और

सारणी 2.41 : बाजार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत बकाया

(करोड़ रुपए)

यंत्र	मार्च 31, 2005	जून 30, 2005	सितंबर 30, 2005	फरवरी 28, 2006
1	2	3	4	5
दिनांकित प्रतिभूतियाँ	25,000	25,000	11,000	11,000
91-दिवसीय खजाना बिल	19,248	19,251	23,557	0
182-दिवसीय खजाना बिल	–	5,844	9,815	3,919
364-दिवसीय खजाना बिल	19,963	21,585	21,777	17,039
कुल	**64,211**	**71,680**	**66,149**	**31,958**

बाकी रेपो के कारण) से फरवरी 2006 के दौरान 1,81, 854 करोड़ रुपए (लेनदेन का 23.8 प्रतिशत एकमुश्त था और बाकी रेपो के कारण) तक बढ़ी। यद्यपि, एकमुश्त लेनदेन की मात्रा, अप्रैल 2005 के दौरान 84, 225 करोड़ रुपए से फरवरी 2006 में 43, 306 करोड़ रुपए तक घटी, रेपो लेनदेन की मात्रा, अप्रैल 2005 के दौरान 91, 302 करोड़ रुपए से उसी अवधि के दौरान 1,38, 548 करोड़ रुपए तक उल्लेखनीय रूप से बढ़ी। फरवरी 2006 के दौरान पण्यावर्त (एकमुश्त लेनदेन का दुगुना और रेपो का चार गुना परिकलित) 6,40,805 करोड़ रुपए से अप्रैल 2005 के दौरान 5,33,658 करोड़ रुपए तक बढ़ा।

2.131 फरवरी 2006 के दौरान, तयशुदा लेनदेन प्रणाली (एनडीएस) में पांच सबसे अधिक लेनदेन की हुई प्रतिभूतियों ने, अप्रैल 2005 के दौरान 78.5 प्रतिशत की तुलना में, कुल लेनदेन के 68.3 प्रतिशत का हिसाब लिया, जिससे प्रतिभूतियों में चलनिधि के बढ़ते फैलाव का संकेत होता है।

आय गतिशीलता और आय वक्र

2.132 अप्रैल 2005 के दौरान, वैश्विक कच्चे तेल की बढ़ती हुई कीमतों की पृष्ठभूमि में और घरेलू ईंधन की कीमत वृद्धि की चिंताओं से, आय सुदृढ़ हुई। अप्रैल 28, 2005 को घोषित वार्षिक नीति वक्तव्य में 25 आधार अंकों से रिवर्स रेपो दर की वृद्धि ने विक्री को प्रेरित किया और दिन के दौरान 10-वर्ष आय 11 आधार अंकों से मज़बूत हुई। मार्च 2005 की समाप्ति से 66 आधार अंकों से उच्चतर, अप्रैल 30, 2005 को, 10-वर्ष आय 7.31 प्रतिशत पर बंद हुई।

2.133 तथापि, मई 2005 के दौरान सुविधाजनक चलनिधि स्थिति और कच्चे तेल की कीमतों में नरमी के बीच में आय की वापसी हुई। अमरीकी खजाना आय ने भी भावना को सहारा दिया। प्रतिभूतियों की कीमतें जून और जुलाई के दौरान सीमित रहीं। जुलाई में बाजार थोड़ा संभला, जब बाज़ार सहभागियों द्वारा अपेक्षित रिवर्स रेपो दर की वृद्धि, जुलाई 26, 2005 को वार्षिक नीति वक्तव्य की पहली तिमाही समीक्षा में, लागू नहीं की गई। वैश्विक कच्चे तेल की कीमतों की सख्ती, जुलाई और अगस्त 2005 में सहभागियों के लिए प्रमुख चिंता का कारण थी और व्यापार निस्तेज था। प्रभावी अगस्त 1, 2005 से शुरू स्क्रीन- आधारित मेलखाती हुई आदेश प्रणाली (एनडीएस-ओएम) ने द्वितीयक बाज़ारों में व्यापारिक गतिविधियों को बढ़ाया। अगस्त 31, 2005 को 10-वर्ष आय 7.09 प्रतिशत पर बंद हुई (चार्ट II.15)। वैश्विक कच्चे तेल की कीमतों में गिरावट के साथ 10-वर्ष आय का सितंबर 15, 2005 को 6.99 प्रतिशत पर बंद होने के कारण, सितंबर 2005 के प्रथमार्ध में कीमतें संभलीं। उसके बाद, कच्चे तेल की बढ़ती कीमतों के कारण और संभावित उच्चतर मुद्रास्फीति दर की चिंता से, सितंबर 30, 2005 को आय 7.11 प्रतिशत तक मज़बूत हुई जबकि, केंद्र सरकार के बाज़ार उधार कार्यक्रम के अंतर्गत चालू वर्ष के द्वितीयार्ध के लिए 58, 000 करोड़ रुपए के लिए दिनांकित प्रतिभूतियों का कैलेंडर जारी करने की घोषणा बाजार प्रत्याशाओं के अनुरूप थी।

2.134 अक्तूबर 2005 के दौरान,महीने की शुरुआत में कीमतें संभलीं लेकिन उसके बाद, तीव्र उतारचढ़ावों के बिना, सीमित रहीं क्योंकि वार्षिक नीति वक्तव्य की मध्यावधि समीक्षा बाजार प्रत्याशाओं के अनुसार थी। 10-वर्ष आय सितंबर 30, 2005 को 7.11 प्रतिशत से अक्तूबर 31, 2005 को 7.10 प्रतिशत तक थोड़ी घटी। मज़बूत चलनिधि परिस्थितियों और नवंबर 8, 2005 को भारत सरकार की दो प्रतिभूतियों की नीलामियों के कारण नवंबर 2005 की शुरुआत में कीमतें थोड़ी गिरीं। 7.49 प्रतिशत सरकारी स्टॉक 2017 की नीलामी में पहुँची कट-ऑफ आय बाज़ार प्रत्याशाओं के अनुसार थी, जबकि 7.40 प्रतिशत 2035 के लिए कट-ऑफ बाज़ार प्रत्याशाओं से उच्चतर था। 10-वर्ष आय, नवंबर 4, 2005 को 7.10 प्रतिशत से नवंबर 11, 2005 को 7.12 प्रतिशत तक बढ़ी। प्रतिभूति कीमतें सीमित रहीं क्योंकि बाज़ार भावना, बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) नीलामियों के निरस्त करने से और अनुसूचित नीलामी को निरस्त करने की प्रत्याशाओं से सकारात्मक रहीं। 10-वर्ष आय, नवंबर 18, 2005 को 7.11 प्रतिशत तक थोड़ी घटी। उसके बाद, घरेलू बाज़ार में मज़बूत चलनिधि परिस्थितियों के आसान होने, फेड रिज़र्व के कठिन चक्रों के रुकने की प्रत्याशाएँ और स्थिर तेल कीमतों से ''जी-सेक'' आय में थोड़ी नरमी आई। 10-वर्ष आय, नवंबर 30, 2005 को 7.08 प्रतिशत पर आसान हुई। दिसंबर

चार्ट II.15: सरकारी प्रतिभूति आय वक्र

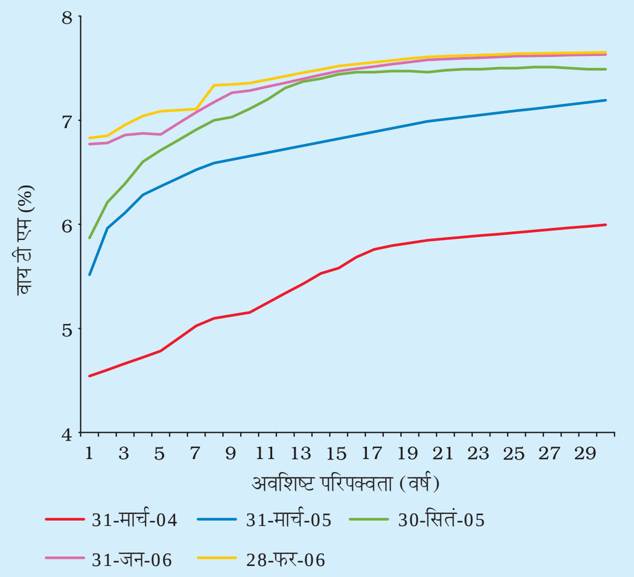

2005 के दौरान, ''जी-सेक'' आय,चलनिधि की कड़ी परिस्थितियों से अल्प-अवधि में मजबूत हुई, जबकि आय ने लंबे छोर पर, ईपीएफ दरों को कम करने के प्रस्ताव के बाद और अधिक परिपक्वता वाली ''जी-सेक'' नीलामी को अच्छे प्रतिसाद के कारण, एक आसान प्रवृत्ति दर्शाई। जनवरी 1 से 23, 2006 के दौरान, सरकारी प्रतिभूतियों की आय सामान्यतः सीमित रहीं। लंबे छोर पर आय के आसान होने के कारण आय वक्र थोड़ा सपाट हुआ। तथापि, रिवर्स रेपो और रेपो दरों, दोनों में क्रमशः 5.50 प्रतिशत और 6.50 प्रतिशत वृद्धि होने के कारण, जनवरी 24, 2006 को 10-वर्ष आय तेज़ी से 7.41 प्रतिशत तक बढ़ी। उसके बाद, प्रमुखरूप से चलनिधि में तंगी अर्जन और मूल्य खरीद से आय में नरमी आई। जनवरी 31, 2006 को 10-वर्ष 7.28 प्रतिशत पर बंद हुआ। फरवरी 2006 की शुरुआत में, वैश्विक कच्चे तेल कीमतों में आसानी और निम्नतर मुद्रास्फीति के कारण, प्रतिभूति कीमतें संभलीं। उसके बाद, फरवरी 8, 2006 को दिनांकित प्रतिभूति की अनुसूचित नीलामी में अधिसूचित राशि में कटौती, 6, 000 करोड़ रुपए से 3, 000 करोड़ रुपए तक, ने बाजार की चलनिधि चिंताओं को और आसान बनाया। फरवरी 3, 2006 को 10-वर्ष आय 7.30 प्रतिशत पर बंद हुई। उसके बाद, कठिन चलनिधि स्थिति के कारण प्रतिभूति कीमतें सीमित रहीं। तथापि, 5, 000 करोड़ रुपए के लिए दिनांकित प्रतिभूति की, फरवरी 14-22, 2006 के बीच में अनुसूचित, नीलामी के निरस्तीकरण ने एक छोटी हालाँकि अल्पकालीन प्रतिभूति कीमतों की रैली की अगुआई की। 3, 700 करोड़ रुपए के लिए राज्य सरकार प्रतिभूति की नीलामी की घोषणा से आय बढ़ी। फरवरी 28, 2006 को 10-वर्ष आय 7.37 प्रतिशत पर बंद हुई।

2.135 वर्ष के दौरान अब तक, केंद्र और राज्य सरकारों का बाजार उधार कार्यक्रम सफलतापूर्वक संचालित किया गया। राजकोषीय वर्ष 2006-07 के प्रभाव से, रिजर्व बैंक केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों के लिए प्राथमिक बाज़ार से अलग हो जाएगा। यद्यपि, यह मौद्रिक नीति के संचालन में अधिक लचीलापन और युक्तिचालना प्रदान करेगा, सरकारी प्रतिभूतियों के बाज़ार को, अनावश्यक अस्थिरता का निवारण करने के लिए, और विकसित करने की आवश्यकता है। राज्य सरकार की प्रतिभूतियों में चलनिधि के मामले को भी संबोधित करने की आवश्यकता है। बारहवें वित्त आयोग की सिफ़ारिशों को लागू करने के साथ, 2005-06 के लिए राज्य योजनाएँ हेतु केंद्रीय ऋणों के लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया था और राज्यों को अनुरूप संसाधन उगाहने के लिए बाज़ार में पैठ करने के लिए प्रोत्साहित किया गया। भविष्य में राज्यों के बाजार उधार कार्यक्रम की सतत सफलता, जारी राजकोषीय सुधार प्रक्रिया पर निर्भर रहेगी।राज्यों को इसलिए राजकोषीय समेकन के लिए, विधि-निर्माण के अधिकार के साथ, विवेकपूर्ण राजकोषीय नीति अपनाना जरूरी है।

विदेशी मुद्रा बाज़ार

2.136 विदेशी मुद्रा बाज़ार ने 2005-06 के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक) सामान्यतःव्यवस्थित परिस्थितियाँ दर्शाई हैं। वर्ष 2005-06 के दौरान (फरवरी 28, 2006 तक), भारतीय रुपए की विनिमय दर अमरीकी डॉलर के मुकाबले में 43.30-46.33 प्रति अमरीकी डॉलर के परास में रहीं। अप्रैल-मई 2005 के दौरान, विदेशी संस्थागत निवेशकर्ताओं द्वारा बहिर्वाह और उच्चतर माल व्यापार घाटा होने के बावजूद रुपया अमरीकी डॉलर के मुकाबले मज़बूत हुआ, मार्चांत 2005 के 43.76 रुपए से मई 12, 2005 को 43.30 रुपए प्रति अमरीकी डॉलर। बाद के सप्ताहों में, अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में अमरीकी डॉलर के सुदृढ़ होने से, भारतीय रुपए का ह्रास जून 2, 2005 को 43.76 रुपए प्रति अमरीकी डॉलर तक हुआ। जुलाई 21, 2005 को चीनी युआॅन का पुनर्मूल्यन होने से, अधिमूल्यन दबाव के अंतर्गत, रुपया, अगस्त 1, 2005 को, 43.46 रुपए प्रति अमरीकी डॉलर पर रहा। तथापि, उसके बाद उसका महीने भर ह्रास हुआ। रिज़र्व बैंक ने जुलाई-अगस्त 2005 के दौरान 4.0 बिलियन अमरीकी डॉलर की निवल बाजार खरीदी की। हरीकेन कैटरीना से तेल की कीमतों के अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में 70.8 अमरीकी डॉलर प्रति बैरल की ऊँचाई छूने के प्रभाव के अंतर्गत अगस्त 2005 के अंतिम सप्ताह में रुपया पुनः दबाव में आया और 44.12 रुपए प्रति अमरीकी डॉलर पहुँचा (सितंबर 1, 2005)। उसके बाद, रुपए में थोड़ा सुधार आया और 43.99 रुपए प्रति अमरीकी डॉलर (सितंबर 29, 2005) पर पहुँचा। अक्तूबर 2005 के पहले सप्ताह से, चालू खाते के घाटे में तीव्र वृद्धि और मजबूत अमरीकी डॉलर के संमुख, रुपया दबाव में आया। संपूर्ण अक्तूबर और नवंबर महीने में रुपए ने अपनी ह्रास होने की प्रवृत्ति जारी रखी, जो प्रमुख अंतरराष्ट्रीय मुद्राओं के, अमरीकी डॉलर के मुकाबले ह्रास के छलकने के प्रभाव और विदेशी संस्थागत निवेशकर्ताओं द्वारा बाहिर्वाह को दर्शाता है। विनिमय दर दिसंबर के दूसरे सप्ताह तक घटी और दिसंबर 8, 2005 को 46.33 रुपए प्रति अमरीकी डॉलर पर रही। उसके बाद, कुछ प्रमुख मुद्राओं की वैश्विक रैली विशेषतः जापानी येन के मूल्य में एक भारी उछाल और विदेशी संस्थागत निवेशकर्ता अंतर्वाह के साथ, रुपया अमरीकी डॉलर के मुकाबले मजबूत हुआ। उसमें बढ़ोत्तरी हुई और फरवरी 28, 2006 को वह 44.44 रुपए प्रति अमरीकी डॉलर पर पहुँचा। चालू वित्तीय वर्ष के दौरान (फरवरी 28, 2006 तक) भारतीय रुपए में 1.5 प्रतिशत से ह्रास हुआ। तथापि, उसी अवधि के दौरान रुपए में पाउंड स्टर्लिंग, यूरो और जापानी येन के मुकाबले क्रमश: 6.2 प्रतिशत, 7.4 प्रतिशत और 6.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई (चार्ट II. 16)। वित्तीय वर्ष के दौरान अब तक (फरवरी 28, 2006 तक), 6-मुद्रा (व्यापार-आधारित भार) मासिक औसत वास्तविक प्रभावी विनिमय दर (आरइइआर) 0.5 प्रतिशत से बढ़ी और नाममात्र प्रभावी विनिमय दर (एनइइआर) 0.6 प्रतिशत से बढ़ी।

चार्ट II.16: प्रमुख मुद्राओं की तुलना में रुपए में घट-बढ़

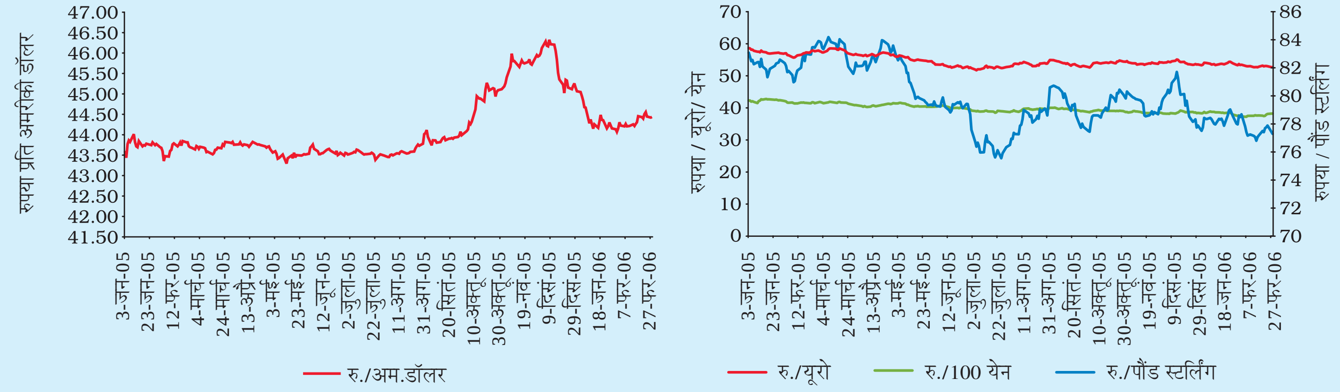

2.137 वायदा बाजारों ने विदेशी मुद्रा बाज़ार के तत्काल खंड की गतिविधियों को प्रतिबिंबित किया। 2005-06 की पहली तिमाही के दौरान तत्काल बाज़ार-परिस्थितियों ने वायदा किस्तों को निम्न रखा। गैर बैंकों की डेरिवेटिव सौदेबाजी के ब्याज दर का मूल्यनिर्धारण करने के लिए, बेंचमार्क की तरह मुंबई अंतर-बैंक वायदा प्रस्ताावित दर (मीफोर) को चरणबद्ध हटाने की घोषणा के कारण, मई 2005 में वायदा किस्त घटे। अमरीकी ब्याज दरों में वृद्धि के बाद ब्याज-दर विभेदक के संकुचन से वायदा किस्तों का घटना जारी रहा। तथापि, 1-माह वायदा दर ने, सितंबर 2005 से वृद्धि दर्शाई है (चार्ट II.17)।

पूंजी बाज़ार

2.138 सार्वजनिक निर्गम, निजी प्लेसमेंट और यूरो निर्गम द्वारा उगाहे गए संसाधन, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि की तुलना में चालू वित्तीय वर्ष के दौरान अब तक, उच्चतर बने रहे। घरेलू शेयर बाज़ार सुव्यवस्थित ढंग से काम करें यह सुनिश्चित करने के लिए और उन्हें अंतरराष्ट्रीय शेयर बाज़ारों के बराबर लाने के लिए, शेयर बाजारों का डीम्युचुअलाइजेशन और कॉर्पोरेटायजेशन, निगरानी प्रणाली को सुदृढ़ करना, प्रतिभूति बाजार का राष्ट्रीय संस्थान स्थापित करना और कंपनी ऋण बाज़ार का विकास समेत, वर्तमान समय में अनेक सुधारों को लागू किया जा रहा है। वर्तमान समय में, भारत में शेयर बाज़ार अपने ऐतिहासिक उच्च स्तरों पर हैं।

प्राथमिक बाज़ार

2.139 चालू वित्तीय वर्ष के दौरान अब तक (अप्रैल-जनवरी 2005-06), प्राथमिक बाजार ने, निर्गमों की संख्या और उगाहे गए संसाधन दोनों की वृद्धि से, एक प्रोत्साहित प्रवृत्ति को चित्रित किया। अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान, 101 सार्वजनिक निर्गमों द्वारा संसाधन उगाही, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि में 42 सार्वजनिक निर्गमों के माध्यम से उगाहे गए 14,799 करोड़ रुपए से, पर्याप्त मात्रा में, 53.2 प्रतिशत से 22,670 करोड़ रुपए तक बढ़ी। इसमें से, 5 सार्वजनिक निर्गम सार्वजनिक क्षेत्र में थे, जो कुल उगाहे गए संसाधनों का 23.3 प्रतिशत था और शेष 96 सार्वजनिक निर्गम, अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान, निजी क्षेत्र के थे (सारणी 2.42)। इसके अतिरिक्त, अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान जारी किए गए 101 सार्वजनिक निर्गमों में से 100 सार्वजनिक निर्गम ईक्विटी निर्गम थे जो कुल उगाहे गए संसाधनों के 99.5 प्रतिशत थे।

2.140 निजी प्लेसमेंट के अलावा यूरो निर्गमों के माध्यम से संसाधन उगाही ने पर्याप्त मात्रा में वृद्धि दर्ज की। निजी प्लेसमेंट के माध्यम से, अप्रैल-दिसंबर 2005 के दौरान 37.6 प्रतिशत से 67, 288 करोड़ रुपए तक बढ़ी, अप्रैल-दिसंबर 2004 के दौरान 48, 887 करोड़ रुपए की तुलना में। सार्वजनिक क्षेत्र की ईकाइयों का निजी प्लेसमेंट बाज़ार में प्रभुत्व रहा। अप्रैल-दिसंबर 2005 के दौरान, उन्होंने 37, 741 करोड़ रुपए उगाहे (निजी प्लेसमेंट द्वारा कुल उगाहे गए का 56.1

चार्ट II.17: वायदा प्रीमिया में घट-बढ़

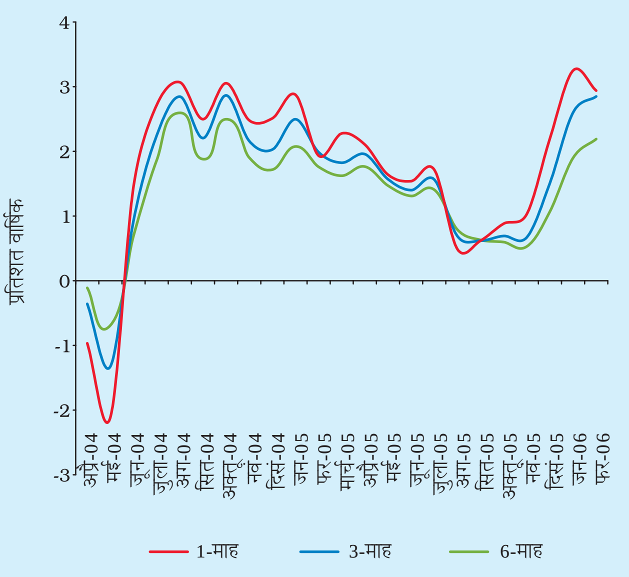

सारणी 2.42 : प्राथमिक बाज़ार * से संसाधन संग्रहण

(करोड़ रुपए)

मद	2003-04		2004-05		अप्रैल- जनवरी # 2004-05		अप्रैल- जनवरी # 2005-06	
	निर्गमों की संख्या	राशि	निर्गमों की संख्या	राशि	निर्गमों की संख्या	राशि	निर्गमों की संख्या	राशि
1	2	3	4	5	6	7	8	9
क. प्रॉस्पेक्टस और राइट निर्गम@	**47**	**7,851**	**59**	**21,892**	**42**	**14,799**	**101**	**22,670**
I. सार्वजनिक क्षेत्र	9	4,176	5	8,410	3	5,018	5	5,291
II. निजी क्षेत्र	38	3,675	54	13,482	39	9,781	96	17,379
ख. निजी प्लेसमेंट	**874**	**63,901**	**914**	**84,052**	**654**	**48,887**	**780**	**67,288**
I. सार्वजनिक क्षेत्र	234	45,141	198	48,308	121	23,345	108	37,741
II. निजी क्षेत्र	640	18,760	716	35,744	533	25,543	672	29,547
ग. यूरो निर्गम	**18**	**3,098**	**15**	**3,353**	**11**	**2,606**	**40**	**9,526**

* ऋण और ईक्विटी दोनों समेत। # निजी प्लेसमेंट के लिए, आंकड़े अप्रैल-दिसंबर से संबंधित हैं। @ बिक्री के लिए प्रस्ताव के सिवाय।
ध्यान दें : अनुमान व्यवस्था करने वाले, वित्तीय संस्थाओं और समाचार पत्र के रिपोर्टों की जानकारी पर आधारित हैं।

प्रतिशत), अप्रैल-दिसंबर 2004 में उगाहे गए 23, 345 करोड़ रुपए (कुल का 47. 8 प्रतिशत) की तुलना में (सारणी 2.42)।

2.141 यूरो निर्गम के माध्यम से संसाधन संग्रहण, जिसमें अमरीकी निक्षेपागार (डिपाजिटरी) रसीद (एडीआर), वैश्विक निक्षेपागार (डिपाजिटरी) रसीद (जीडीआर) और विदेशी मुद्रा परिवर्तनीय बांड (एफसीसीबी) शामिल हैं, अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान तीव्र गति से बढ़ा। अप्रैल-जनवरी 2004-05 के दौरान ग्यारह निर्गमों के कुल 2, 606 करोड़ रुपए की तुलना मे, अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान 9, 526 करोड़ रुपए के चालीस यूरो निर्गम थे (सारणी 2.42)। अधिकतर निर्गम जीडीआर द्वारा थे।

2.142 म्युचुअल फंडों द्वारा संसाधन संग्रहण (विमोचन का निवल) अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान 419.3 प्रतिशत से 35, 555 करोड़ रुपए तक, प्रमुख रूप से आय/ऋण अभिमुखी योजनाओं और विकास/ईक्विटी अभिमुखी योजनाओं दोनों के अंतर्गत संसाधन संग्रहण में वृद्धि के कारण, भारी मात्रा में बढ़ा। यूटीआइ म्युचुअल फंड और सार्वजनिक क्षेत्र के म्युचुअल फंडों ने अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान 545 करोड़ रुपए और 6, 646 करोड़ रुपए के निवल अंतर्वाह को, पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि में क्रमशः 3, 071 करोड़ रुपए और 529 करोड़ रुपए के निवल बहिर्वाह की तुलना में, दर्ज किया। निजी क्षेत्र के म्युचुअल फंडों ने अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान 28,364 करोड़ रुपए के निवल अंतर्वाह को, अप्रैल-जनवरी 2004-05 के दौरान 10, 447 करोड़ रुपए के निवल अंतर्वाह की तुलना में, दर्ज किया (सारणी 2. 43)।

द्वितीयक बाज़ार

2.143 शेयर बाज़ार, जो अप्रैल-मई 2005 के दौरान घटा था, अन्य उभरते बाज़ारों के साथ मुंबई शेयर बाजार सेंसेक्स और एस एंड पी सीएनएक्स निफ़्टी के उच्च शिखर छूने से, जून-सितंबर 2005 के दौरान तीव्र गति से संभला। अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ समष्टि आर्थिक मूल-सिद्धांत, प्रोत्साहक निवेश वातावरण, एफआइआइ द्वारा जारी अंतर्वाह और भारतीय कंपनियों द्वारा मज़बूत कार्यनिष्पादन ने घरेलू शेयर बाजारों की ऊर्ध्वमुखी प्रवृत्ति को योगदान दिया। रिलायंस इंडस्ट्रीज में विवादों का निपटारा, मानसून की संतोषजनक प्रगति, घरेलू मुद्रास्फीति दर में गिरावट, भारतीय एडीआर की कीमतों में उभार और घरेलू संस्थागत निवेशकों से सहारा ने भी बाजार भावना को उत्साही बनाया।

2.144 अक्तूबर 2005 महीने के दौरान, प्रमुख रूप से अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल की बढ़ती हुई कीमतें, कंपनियों के दूसरे तिमाही के वित्तीय परिणाम के पहले निवेशकों द्वारा अपनाए गए सतर्क दृष्टिकोण और विदेशी संस्थागत निवेशकर्ताओं (एफआइआइ) द्वारा निवेश में धीमापन के कारण बाज़ार भावना कमजोर हुई। तथापि, नवंबर 2005 के महीने में बाज़ारों में पुनःउछाल आरंभ हुआ जो अब तक जारी है। कंपनियों द्वारा दूसरी और तीसरी तिमाहियों के दौरान सुदृढ़ वित्तीय परिणामों की

सारणी 2.43 : म्युचुअल फंडों द्वारा निवल संसाधन संग्रहण

(करोड़ रुपए)

श्रेणी	2003-04	2004-05	अप्रैल-जनवरी 2004-05	अप्रैल-जनवरी 2005-06
1	2	3	4	5
I. भारतीय यूनिट ट्रस्ट*	1,667	-2,722	-3,071	545
II. निजी क्षेत्र	42,544	7,600	10,447	28,364
III. सार्वजनिक क्षेत्र	2,597	-2,677	-529	6,646
कुल (I+II+III)	**46,808**	**2,201**	**6,847**	**35,555**

* पहले के यूटीआइ को यूटीआइ म्युचुअल फंड (सेबी से पंजीकृत) और यूटीआइ के विनिर्दिष्ट उपक्रम (सेबी से पंजीकृत नहीं) में विभाजित किया गया है। उपर्युक्त आँकड़ों में केवल यूटीआइ म्युचुअल फंड संबंधी जानकारी समाहित है।

स्रोत : भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी)।

घोषणा, केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन (सीएसओ) द्वारा 2005-06 के लिए जीडीपी का उच्चतर विकास अनुमान (8.1 प्रतिशत), बैंकिंग क्षेत्र में नए सुधार उपायों की घोषणा जैसे, विदेशी निजी क्षेत्र के बैंकों को भारत में निजी क्षेत्र के कमजोर बैंकों के अधिग्रहण की अनुमति, भारतीय ईक्विटी बाजार में एफआइआइ निवेशों का जारी रहना और प्रमुख अंतरराष्ट्रीय और एशियाई ईक्विटी बाज़ारों में सुदृढ़ प्रवृत्तियों ने बाजार भावना में तेजी लाई। 2006-07 के केंद्रीय बजट में घोषित उपायों ने बाजार भावना को और उत्साही रखा।नीति घोषणाओं में शामिल हैं, सरकारी प्रतिभूतियों और कंपनी ऋृण में एफआइआइ निवेश सीमा को क्रमशः 2 बिलियन अमरीकी डॉलर तक (1.75 बिलियन अमरीकी डॉलर से) और 1.5 बिलियन अमरीकी डॉलर तक (0.50 बिलियन अमरीकी डॉलर से) बढ़ाना, विदेशी लिखतों में म्युचुअल फंडों द्वारा कुल निवेशों की सीमा को, 10 प्रतिशत पारस्परिक हिस्सा धारिता की वांछनीयता को हटाकर, 1 बिलियन अमरीकी डॉलर से 2 बिलियन अमरीकी डॉलर तक बढ़ाना, सीमित संख्या में योग्य भारतीय म्युचुअल फंडों को, विदेशी एक्सचेंज ट्रेडेड फंडों में, 1 बिलियन अमरीकी डॉलर के संचयी निवेश की अनुमति देना, सेबी के तत्वाधान में निवेशक रक्षा फंड की स्थापना, कंपनी बांडों के लिए एक एकीकृत एक्सचेंज ट्रेडेड बाजार के निर्माण के लिए उपाय करना, अनुसूचित बैंकों की फिक्स्ड जमाराशियों का, जिनकी अवधि 5 वर्ष से कम न हो, आय कर अधिनियम की धारा 80 सी में समावेशन, उच्च सीमा शुल्कों में कमी, चयनित क्षेत्रों में उत्पाद शुल्कों का यौक्तिकीकरण और अनुषंगी लाभ कर (एफबीटी) में छूट। परिणामस्वरूप, बीएसई सेंसेक्स और एस एंड पी सीएनएक्स निफ़्टी दोनों, फरवरी 28, 2006 को, अब तक के सबसे ऊँचे स्तरों, क्रमशः 10370.24 और 3074.70, पर बंद हुए। इस स्तर पर, बीएसई सेंसेक्स ने मार्चांत 2005 के ऊपर 59.7 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की।वर्ष-दर-वर्ष के आधार पर, बीएसई सेंसेक्स, फरवरी 28, 2006 को 54.5 प्रतिशत से बढ़ा। औसत आधार पर बीएसई सेंसेक्स वित्तीय वर्ष में अब तक (फरवरी 28, 2006 तक), पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि के ऊपर, 42.1 प्रतिशत से बढ़ा।

2.145 शेयर मूल्यों में वृद्धि के साथ, फरवरी 28, 2006 को बीएसई का बाज़ार पूँजीकरण जीडीपी के 76.7 प्रतिशत से बढ़ा, मार्चांत 2005 के जीडीपी के 54.6 प्रतिशत से, और नकदी खंड में दैनिक पण्यावर्त ने (बीएसई और एनएसई को मिलाकर) कई दिनों तक 11, 000 करोड़ रुपए पार किया। शेयर मूल्यों में उछाल विस्तृत-आधार के हैं, जिसमें सभी सूचकांक (बीएसई 500, बीएसई स्माल-कैप, बीएसई मिड कैप और बीएसई सेंसेक्स) और सभी क्षेत्र (ऑटो, बैंक, पूंजीगत माल, उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुएँ, सूचना प्रौद्योगिकी, तेल और गैस, औषध, इत्यादि) सम्मिलित हैं। पण्यावर्त, बाज़ार पूँजीकरण, कीमत / अर्जन अनुपात और बीएसई एवं एनएसई में अस्थिरता भी चालू वर्ष में अब तक, जितने पिछले वर्ष की तदनुरूपी अवधि में थे उनसे, उच्चतर रहे (सारणी 2.44)।

2.146 लगभग सभी क्षेत्रवार सूचकांकों ने, पूंजीगत माल, उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुएँ, शीघ्र विक्रेय उपभोक्ता माल (एफएमसीजी), सूचना प्रौद्योगिकी (आइटी), बैंकिंग और सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम समेत, वृद्धि दर्ज की। निवेश गतिविधि बढ़ने से और सुदृढ़ औद्योगिक कार्यनिष्पादन के कारण पूंजीगत माल के शेयर चढ़े। शेयर-विशिष्ट गतिविधियों जैसे, विलयन, बिक्री में सुदृढ़ वृद्धि और कुछ कंपनियों के अच्छे वित्तीय परिणाम के कारण उपभोक्ता टिकाऊ वस्तुओं के शेयरों में उछाल था। मानसून की संतोषजनक प्रगति के कारण, जिसने बदले में उपभोक्ता वस्तुओं की मांग में तेजी लाई, एफएमसीजी शेयरों ने उच्चतर वृद्धि दर्ज की। प्रमुखत: विदेशी बैंकों को भारत में निजी क्षेत्र के कमजोर बैंकों के 75 प्रतिशत हिस्से के अधिग्रहण की अनुमति,बैंकों के खाद्येतर ऋृण में जोर पकड़ना, बैंकों को चिरस्थायी बांडों और अन्य मिश्रित लिखितों को जारी करने के लिए रिजर्व बैंक की अनुमति और चालू वित्तीय वर्ष के दौरान अब तक निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों दोनों द्वारा नए ईक्विटी निर्गमों के माध्यम से निधियों की उगाही, के कारण बैंकिंग क्षेत्र के शेयरों ने वृद्धि दर्ज की। तेल कंपनियों को उनके तुलन पत्रों को सुदृढ़ करने के लिए विशेष बांडों को जारी करने की अनुमति के कारण सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों के शेयर भी लाभान्वित हुए (चार्ट II.18)।

सारणी 2.44 : शेयर बाजारों की प्रवृत्तियाँ

मद	बीएसई		एनएसई	
	अप्रैल-फरवरी 2005-06	अप्रैल-फरवरी 2004-05	अप्रैल-फरवरी 2005-06	अप्रैल-फरवरी 2004-05
1	2	3	4	5
औसत बीएसई सेंसेक्स /एस एंड पी सीएनएक्स निफ़्टी	8,033	5,652	2,444	1,778
अस्थिरता (भिन्नता का गुणांक)	14.66	10.54	13.70	10.72
पण्यावर्त (करोड़ रुपए)	6,97,307	4,59,188	13,60,160	10,27,016
बाजार पूँजीकरण (अवधि की समाप्ति) (करोड़ रुपए)	26,95,542	17,30,940	25,12,083	16,14,597
पी/ई अनुपात (अवधि की समाप्ति)	19.06	16.09	18.27	15.02

स्रोत : मुंबई शेयर बाजार (बीएसई) और राष्ट्रीय शेयर बाजार (एनएसई) ।

चार्ट II.18: क्षेत्रीय स्टॉक संकेतकों की प्रवृत्ति (31 मार्च 2005 = 100 पर सामान्य की गई)

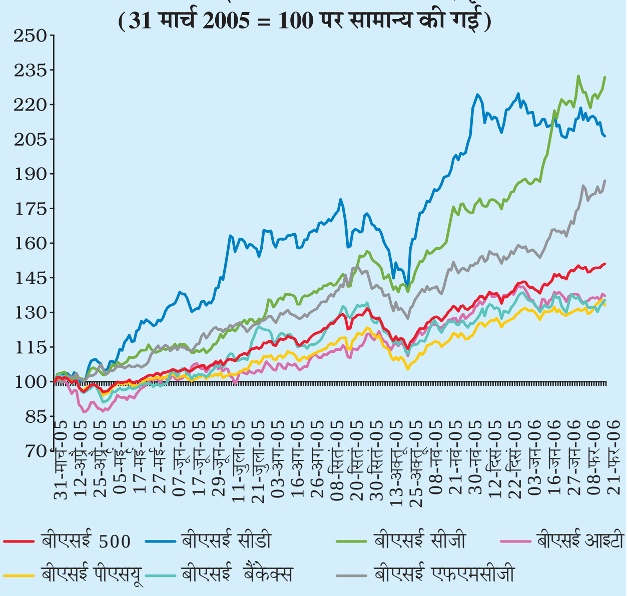

2.147 सेबी के आंकड़ों के अनुसार, चालू वित्तीय वर्ष के दौरान अब तक (अप्रैल-फरवरी 2006), भारतीय ईक्विटी में एफआइआइ का निवेश मजबूत बना रहा। तथापि, उसी अवधि के दौरान ऋण लिखतों में एफआइआइ निवेश ऋणात्मक हुआ। ईक्विटी-अभिमुखी योजनाओं के अंतर्गत संसाधन संग्रहण करने की प्रवृत्तियों के अनुरूप म्यूचुअल फंडों ने अप्रैल-फरवरी 2006 के दौरान ईक्विटी में पर्याप्त मात्रा में निवेश किया। उसी अवधि के दौरान म्युचुअल फंडों द्वारा ऋण लिखतों में निवेश भी उत्साहजनक रहा (सारणी 2.45)।

2.148 अप्रैल-फरवरी 2006 के दौरान एनएसई पर डेरिवेटिव्स खंड में कुल पण्यावर्त, उसी अवधि के दौरान नकदी खंड के पण्यावर्त की तुलना में, पर्याप्त मात्रा में उच्चतर बना रहा (सारणी 2.46)। डेरिवेटिव्स बाज़ार में फुटकर सहभागिता में उल्लेखनीय रूप से वृद्धि के कारण सेबी ने म्युचुअल फंडों को डेरिवेटिव्स बाज़ार में, एफआइआइ के बराबर, भाग लेने की अनुमति देने का निर्णय लिया।

सारणी 2.45 : संस्थागत निवेश

(करोड़ रुपए)

वर्ष	विदेशी संस्थागत निवेशकर्ता		म्युचुअल फंड	
	ईक्विटी	ऋण	ईक्विटी	ऋण
1	2	3	4	5
2001-02	8,067	685	-3,796	10,959
2002-03	2,528	60	-2,067	12,604
2003-04	39,959	5,805	1,308	22,701
2004-05	44,123	1,759	448	16,987
2005-06 (अप्रैल-फरवरी)	42,112	-7,075	9,825	33,836

स्रोत : भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड

सारणी 2.46 : राष्ट्रीय शेयर बाजार में नकदी के मुकाबले डेरिवेटिव्स बाज़ार में पण्यावर्त

(करोड़ रुपए)

वर्ष	डेरिवेटिव्स	नकदी
1	2	3
2001-02	1,01,925	5,13,167
2002-03	4,39,863	6,17,989
2003-04	21,30,612	10,99,535
2004-05	25,46,986	11,40,071
2005-06 (अप्रैल-फरवरी)	40,89,333	13,60,160

स्रोत : राष्ट्रीय शेयर बाजार

2.149 सुदृढ़ समष्टि आर्थिक मूल-सिद्धांतों, मज़बूत कंपनी अर्जन, अनुकूल निवेश वातावरण और सुदृढ़ कारोबार दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि में शेयर मूल्यों में तेजी-प्रवृत्ति अब एक वर्ष से अधिक समय से जारी है। वर्तमान रैली प्रमुख रूप से इक्विटी में सुदृढ़ एफआइआइ निवेश द्वारा संचालित है और घरेलू संस्थागत निवेशकों से समर्थित है। भारतीय शेयर बाजारों में तेजी अन्य उभरते बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में सुदृढ़ प्रवृत्तियों के समान है।

वित्तीय क्षेत्र

2.150 जोखिमों को कम करने, प्रकटन और शासन मानकों को सुदृढ़ करने और अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम व्यवहारों से तालमेल के लिए, हाल के वर्षों में बैंकिंग क्षेत्र ने सुदृढ़ विवेकपूर्ण विनियमन के अनुपालन को दर्ज किया। वर्ष 2004-05 ने ऋण वितरण में सुधार, ग्राहक सेवा और वित्तीय समावेशन पर नवीकृत बल के साथ इस प्रक्रिया को जारी रखा। बासल II मानदंडों को अपनाने के लिए और कमजोर ऋणों को नियंत्रित करने के लिए बैंकों ने उपाय किए। गैर बैंकिंग और सहकारी बैंकिंग क्षेत्रों के स्वास्थ्य को सुधार कर, उन्हें बैंकिंग क्षेत्र के समकक्ष लाने के लिए विविध उपायों को लागू किया गया। स्वामित्व और शासन मानकों में सुधार, स्पर्धा, समेकन और प्रौद्योगिकीय इंफ्रास्ट्रक्चर में सुधार के जरिए निपुणता में वृद्धि अन्य ध्यान केंद्रित करने वाले क्षेत्र रहे। फिर भी, बैंकिंग क्षेत्र को, नई प्रौद्योगिकियों को अपनाने, ऋण और जोखिम मूल्यांकन की सुदृढ़ प्रक्रियाओं को लागू करने, उत्पाद परास में विविधता उत्पन्न करने, मज़बूत आंतरिक नियंत्रण और कंपनी शासन और मानव संसाधन प्रबंध में सुधार लाने की जरूरत है।

2.151 वर्ष 2004-05 के दौरान समष्टिगत आर्थिक निष्पादन में बनी रही तेजी ने अनुसूचित वाणिज्य बैंकों के कारोबार और वित्तीय निष्पादन को संबल प्रदान किया है। वर्ष के दौरान बैंक ऋण में भी तेजी आई है जिसने पिछले वर्ष की घटती प्रवृत्ति को बढ़ती हुई बना दिया है। ऋण लेने का आधार भी व्यापक हुआ है जिसमें कृषि, उद्योग, आवास और फुटकर क्षेत्र ऋण की मांग के संचालक रहे हैं। शासकीय

आय कम होने के बावजूद सरकारी क्षेत्र और नए निजी क्षेत्र के बैंकों के लाभ अर्जन में वृद्धि हुई है। ऋण की मात्रा में तीव्र वृद्धि होने से निवल ब्याज आय में भारी वृद्धि हुई है, जिसने ब्याज से इतर आय में हुई तीव्र गिरावट के प्रभाव को काफी हद तक समाप्त कर दिया है। इस प्रकार बैंक, ब्याज दर के ऊर्ध्वमुखी चक्र के प्रभाव से होने वाले नुकसान से बचने में सामान्यतया सफल रहे हैं।

2.152 हाल के समय में अर्थव्यवस्था में अधिक से अधिक ऋण लेने की जो प्रवृत्ति बढ़ी है, वह उधारकर्ताओं और उधारदाताओं में पैदा हुए विश्वास का सबूत है। 2001 से लेकर सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) की तुलना में समस्त बैंक ऋण का अनुपात तेजी से बढ़ा है जिससे यह परिलक्षित होता है कि फुटकर तथा अन्य गैर परंपरागत सेवा क्षेत्र में ऋण की मांग का व्यापक आधार विकसित हुआ है। भारत में वर्ष-दर-वर्ष खाद्येतर ऋण में हुई वृद्धि में इस समय जो वृद्धि हुई है वह सबसे अधिक है।

2.153 वर्ष 2004-05 के दौरान अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की आस्ति गुणवत्ता में और अधिक सुधार हुआ जिससे लगातार तीसरे वर्ष भी सकल गैर निष्पादक आस्तियों में निरपेक्ष रूप से गिरावट हुई, इसके कि मार्च 2004 से 90 दिवसीय चूक मानदंड भी अपनाए गए। बैंकों के पूंजी आधार में उतनी ही वृद्धि हुई जितनी तीव्रता से जोखिम भारित आस्तियों में हुई है। अधिकांश बैंकों के शेयरों की कीमतों में तीव्र वृद्धि यह दर्शाती है कि बैंकों के कारोबार और वित्तीय निष्पादन में सुधार हुआ है।

2.154 अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की सकल जमाराशियों में वर्ष 2004-05 के दौरान 15.4 प्रतिशत की धीमी दर से वृद्धि हुई है, जबकि पिछले वर्ष यह दर 16.4 प्रतिशत थी, क्योंकि मांग तथा बचत जमाराशियों में धीमापन था। मांग जमाराशियों में यह फिसलन मुख्यतया आधारभूत कारणों से था क्योंकि मांग जमाराशियों में पिछले वर्ष अप्रत्याशित तौर पर ऊंची वृद्धि हुई थी। ब्याज आय जो आय का प्रमुख स्रोत है, उसमें पिछले वर्ष के 2.6 प्रतिशत की तुलना में 6.1 प्रतिशत तक की तीव्र वृद्धि हुई। बैंक, पूंजी की तुलना में जोखिम भारित आस्ति अनुपात कमोबेश पिछले वर्ष के स्तर पर बनाए रख सके, बावजूद इसके कि जोखिम भारित आस्तियों में तीव्र वृद्धि हुई है। जहां नए निजी क्षेत्र के बैंकों के संबंध में पूंजी की तुलना में जोखिम भारित आस्तियों में वृद्धि हुई, वहीं भी अन्य बैंक समूहों के संबंध में इसमें मामूली गिरावट हुई है (सारणी 2.47)।

2.155 अनुसूचित वणिज्य बैंकों के सकल निवल एनपीए में पिछले कुछ वर्ष जो कमी आई थी उससे कहीं अधिक कमी हुई है। लगभग सभी बैंक समूह के निवल एनपीए में कमी आई है। एनपीए में यह कमी अन्य बातों के साथ-साथ विभिन्न कारणों से हुई है जैसे जोखिम प्रबंधन प्रथाओं में सुधार, बेहतर वसूली प्रयास, एसएआर एफएईएसआई अधिनियम, 2002 तथा कंपनी ऋण पुनर्संरचना प्रणाली।

2.156 पिछले वर्ष की प्रवृत्ति को उलटते हुए अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों की आस्तियों में 2004-05 के दौरान वृद्धि हुई है। यह काफी हद तक जमाराशियों एकत्र करके उधारियां वापस लेकर तथा आंतरिक सृजन के माध्यम से अधिक से अधिक संसाधन जुटाने से हुआ है, और यह वर्ष 2004-05 के दौरान तेजी से हुआ है। आस्ति पक्ष को देखें तो दिए गए ऋण और अग्रिम काफी अच्छी दर से बढ़े हैं जबकि पिछले वर्ष इसमें गिरावट आई थी। निवेश भी तेजी से बढ़ा है। निवल ब्याज आय में सुधार के बावजूद, अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों की लाभप्रदता में कमी हुई हैं क्योंकि ब्याज से इतर आय में काफी गिरावट हुई है। वर्ष के दौरान शहरी सहकारी बैंकों की आस्ति गुणवत्ता में कोई खास परिवर्तन नहीं हुआ है (सारणी 2.48)। वर्ष 2003-04 के दौरान ग्रामीण सहकारी बैंकों ने विविध प्रवृत्तियां प्रदर्शित की है। परिचालनों को उच्च दर पर व्यापक बनाने के बावजूद, राज्य सहकारी बैंकों की लाभप्रदता में कमी हुई है। यह प्रवृत्ति केंद्रीय सहकारी बैंकों के लिए विपरीत थी। ग्रामीण सहकारी बैंकिंग संरचना के बुनियदी स्तर अर्थात प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों ने अपनी सदस्यता बढ़ाई है, हालांकि उनके उधार लेने वाले सदस्यों की संख्या में काफी कमी हुई है। तथापि प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों की जमाराशियों में गिरावट के बावजूद उनके समग्र परिचालनों में विस्तार हुआ है। यद्यपि, उनकी आस्तियों की गुणवत्ता में थोड़ा सुधार हुआ है, फिर भी उनकी अतिदेय राशियां अभी भी बहुत अधिक हैं। दीर्घकालिक ग्रामीण सहकारी संरचना अर्थात राज्य सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंक और प्राथमिक सहकारी कृषि और ग्रामीण विकास बैंकों के परिचालनों में संतुलित वृद्धि हुई है, फिर भी उनके वित्तीय निष्पादन असंतोषजनक रहे हैं। प्राथमिक कृषि सहकारी समितियों को छोड़कर सभी स्तर के ग्रामीण सहकारी बैंकों में आस्तियों की गुणवत्ता में कमी हुई है।

2.157 अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा मंजूर की गई वित्तीय सहायता में 2004-05 के दौरान गिरावट आई है। अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं द्वारा (उस समय के आइडीबीआइ को छोड़कर) जुटाए गए संसाधन की मात्रा बढ़ी है, जिसमें नाबार्ड ने सबसे अधिक रकम जुटाई है, उसके बाद एग्ज़िम बैंक, राष्ट्रीय आवास बैंक तथा आइडीएफसी ने जुटाया है। अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं के लिए बाण्ड्स /डिबेंचर निधि जुटाने के मुख्य साधन रहे हैं जिनके माध्यम से वे उधार लेते रहे हैं। अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं के लिए ऋण और अग्रिम देना उनकी निधियों को लगाने के मुख्य क्षेत्र हैं जिसमें उन्होंने काफी अच्छी वृद्धि दर्ज की है। स्प्रेड (निवल ब्याज आय) और परिचालनगत लाभ में निरपेक्ष रूप से तथा कुल आस्तियों की तुलना में अनुपात, दोनों तरह से वृद्धि हुई है। आइएफसीआइ तथा आइआइबीआइ को छोड़कर सभी अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं का पूंजी की तुलना में जोखिम भारित आस्ति अनुपात मार्च 2005 की समाप्ति पर 9 प्रतिशत के मानदंड से अधिक रहा है। वर्ष 2004-05 के दौरान आस्ति गुणवत्ता में अत्यधिक सुधार हुआ क्योंकि बकायों की काफी वसूली हुई है और प्रावधान भी अधिक किया गया है। (सारणी 2.49)।

सारणी 2.47: चुनिंदा बैंक समूहों के महत्त्वपूर्ण मानक

(प्रतिशत)

मद/बैंक समूह	1996-97	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05
1	2	3	4	5	6
परिचालन व्यय/कुल आस्तियां					
अनुसूचित वाणिज्य बैंक*	2.9	2.2	2.2	2.2	2.2
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक*	2.9	2.3	2.3	2.2	2.1
पुराने निजी क्षेत्र के नए बैंक	2.5	2.1	2.1	2.0	2.0
नए निजी क्षेत्र के नए बैंक	1.9	1.1	2.0	2.0	2.1
विदेशी बैंक	3.0	3.0	2.8	2.8	2.9
निवल ब्याज आय/कुल आस्तियां					
अनुसूचित वाणिज्य बैंक*	3.2	2.6	2.8	2.9	2.9
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक*	3.2	2.7	2.9	3.0	3.0
पुराने निजी क्षेत्र के नए बैंक	2.9	2.4	2.5	2.6	2.7
नए निजी क्षेत्र के नए बैंक	2.9	1.2	1.7	2.0	2.2
विदेशी बैंक	4.1	3.2	3.4	3.6	3.3
निवल लाभ/कुल आस्तियां					
अनुसूचित वाणिज्य बैंक*	0.7	0.8	1.0	1.1	0.9
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक*	0.6	0.7	1.0	1.1	0.9
पुराने निजी क्षेत्र के नए बैंक	0.9	1.1	1.2	1.2	0.3
नए निजी क्षेत्र के नए बैंक	1.7	0.4	0.9	0.8	1.1
विदेशी बैंक	1.2	1.3	1.6	1.7	1.3
सकल अग्रिमों की तुलना में सकल एनपीए					
अनुसूचित वाणिज्य बैंक*	15.7	10.4	8.8	7.2	5.2
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक*	17.8	11.1	9.4	7.8	5.5
पुराने निजी क्षेत्र के नए बैंक	10.7	11.0	8.9	7.6	6.0
नए निजी क्षेत्र के नए बैंक	2.6	8.9	7.6	5.0	3.6
विदेशी बैंक	4.3	5.4	5.3	4.6	2.8
निवल अग्रिमों की तुलना में निवल एनपीए					
अनुसूचित वाणिज्य बैंक*	8.1	5.5	4.4	2.9	2.0
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक*	9.2	5.8	4.5	3.0	2.1
पुराने निजी क्षेत्र के नए बैंक	6.6	7.1	5.5	3.8	2.7
नए निजी क्षेत्र के नए बैंक	2.0	4.9	4.6	2.4	1.9
विदेशी बैंक	1.9	1.9	1.8	1.5	0.9
सीआरएआर					
अनुसूचित वाणिज्य बैंक	10.4	12.0	12.7	12.9	12.8
सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक	10.0	11.8	12.6	13.2	12.9
पुराने निजी क्षेत्र के नए बैंक	11.7	12.5	12.8	13.7	12.5
नए निजी क्षेत्र के नए बैंक	15.3	12.3	11.3	10.2	12.1
विदेशी बैंक	..	12.9	15.2	15.0	14.0

.. अनुपलब्ध. * 2004-05 के लिए बैंकेतर संस्था के बैंकिंग संस्था में रूपांतरण का प्रभाव छोड़कर ।

स्रोत : बैंकों के तुलनपत्र और उनकी विवरणियां ।

सारणी 2.48 : शहरी सहकारी बैंक - चुनिंदा वित्तीय संकेतक

संकेतक	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05
1	2	3	4	5
प्रमुख समुच्चयों में वृद्धि (प्रतिशत)				
जमाराशि	15.1	9.1	1.7	0.7
ऋण	14.1	4.5	3.4	-1.5
वित्तीय संकेतक @ *(कुल आस्तियों की प्रतिशतता के रूप में)*				
परिचालन लाभ	1.5	1.5	1.4	0.9
निवल लाभ	-0.9	-1.1	0.4	0.3
दायरा	2.2	2.0	1.6	1.9
सकल अनर्जक आस्तियां *(अग्रिमों की प्रतिशतता के रूप में)*	21.9	19.0	22.7	23.0

@ अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों से संबंधित।

2.158 गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की संख्या में गिरावट जारी रही क्योंकि बड़े आकार वाली जमाराशि लेने वाली कंपनियां जमाराशि न लेने वाली कंपनियों में परिवर्तित होती रही हैं। गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (अवशिष्ट गैर-बैंकिंग कंपनियों को छोडकर) की आस्तियों में 2003-04 के दौरान तीव्र गिरावट हुई थी, किंतु 2004-05 के दौरान उसमें थोड़ा वृद्धि हुई (सारणी 2.50)। एनबीएफसी का वित्तीय निष्पादन वर्ष 2003-04 और 2004-05 इसलिए बढ़ा क्योंकि उन्होंने व्यय पर नियंत्रण रखा है। जहां 2003-04 तथा 2004-05 में सकल एनपीए कम हुआ है, वहीं 2004-05 में निवल एनपीए में थोड़ी-सी वृद्धि हुई है। एनबीएफसी के क्रार (सीआरएआर) काफी ठीक बने रहे क्योंकि अधिकांश एनबीएफसी ने क्रार को विनियामक रूप से निर्धारित स्तर से काफी ऊपर बनाए रखा है।

2.159 अवशिष्ट गैर बैंकिंग कंपनियों (आरएनबीसी) का वित्तीय निष्पादन वर्ष 2003-04 और 2004-05 क दौरान धीमा रहा है।

सारणी 2.49 : वित्तीय संस्थाएं - चुनिंदा निष्पादक संकेतक

संकेतक	2002-03	2003-04	2004-05
1	2	3	4
तुलनपत्र संकेतक			
(आस्तियों की प्रतिशतता के रूप में)			
परिचालन लाभ	1.4	1.7	2.5
निवल लाभ	0.9	1.2	2.0
दायरा	0.7	1.1	1.7
संसाधन प्रवाह (करोड़ रुपए)			
स्वीकृतियां	16,374	17,770	15,605
संवितरण	10,611	9,647	10,025

टिप्पणी: तुलनपत्र संकेतक पर डाटा में आठ वित्तीय संस्थाएं, यथा आइ एफ सी आइ, आइ आइ बी आइ, आइ डी एफ सी, एग्जिम बैंक, टी एफ सी आइ, सिडबी, नाबार्ड और एन एच बी और संसाधन प्रवाह में आइ एफ सी आइ, आइ डी एफ सी, आइ आइ बी आइ तक सिडबी शामिल है।

आरएनबीसी की आस्तियां 2002-03 से लेकर 2004-05 तक निरंतर कम होती रहीं। उनके परिचालनगत और निवल लाभ में भी उक्त अवधि

सारणी 2.50 : एन बी एफ सी के समेकित तुलनपत्र

(राशि करोड़ रुपए)

मद	(मार्च के अंत में) 2003	2004	2005
1	2	3	4
देयताएं			
1. प्रदत्त पूंजी	2,860	2,327	2,106
	(7.6)	(7.1)	(6.2)
2. रिज़र्व और अधिशेष	4,745	4,414	3,855
	(12.6)	(13.5)	(11.4)
3. जनता की जमाराशि	5,035	4,317	3,646
	(13.4)	(13.2)	(10.8)
4. उधार	24,480	20,852	21,842
	(64.9)	(63.7)	(64.5)
5. अन्य देयताएं	589	844	2,394
	(1.6)	(2.6)	(7.1)
कुल देयताएं / आस्तियाँ	**37,709**	**32,754**	**33,843**
आस्तियाँ			
1. निवेश			
i) सांविधिक चलनिधि अनुपात संबंधी निवेश	1,453	1,707	1,772
	(3.9)	(5.2)	(5.2)
ii) गैर सांविधिक चलनिधि संबंधी निवेश	2,885	2,110	1,736
	(7.7)	(6.4)	(5.1)
2. ऋण और अग्रिम	13,398	12,363	11,301
	(35.5)	(37.7)	(33.4)
3. किराया खरीद आस्तियां	13,031	11,649	14,200
	(34.6)	(35.6)	(42.0)
4. उपस्कर पट्टा आस्तियां	5,816	3,036	1,971
	(15.4)	(9.3)	(5.8)
5. बिल संबंधी कारोबार	450	436	464
	(1.2)	(1.3)	(1.4)
6. अन्य आस्तियां	676	1,453	2,398
	(1.8)	(4.4)	(7.1)

टिप्पणी: 1) सूचनादाता कंपनियों की संख्या 2003 के 875 से कम होकर 2004 में 777 रह गई।
2) कोष्ठकों के आंकड़े कुल देयता/आस्ति का प्रतिशत है।

में लगातार गिरावट मुख्यतया इसलिए होती रही क्योंकि उनके व्यय बढ़ गए (सारणी 2.51)।

2.160 विश्व में और घरेलू स्तर पर सुदृढ़ विकास दर तथा स्थिर वित्तीय बाजार स्थिति ने बैंकों को उन परिचालन बढ़ाने तथा आधार सतर में सुधार लाने को समर्थन प्रदान किया। औद्योगिक क्षेत्र में व्यापक सुधार की वजह से वर्ष 2004-05 के दौरान उद्योगों (मझोले और बड़े) को दिए गए ऋण में अत्यधिक वृद्धि दर्ज की गई। कृषि और उद्योग क्षेत्र के आवासीय तथा फुटकर क्षेत्र से जुड़ जाने से ऋण की मांग को बढ़ावा मिला और ऋण के उठाव का आधार व्यापक हुआ है। पिछले दो वर्षों में हो रही गिरावट की स्थिति को उलटते हुए वर्ष के दौरान खाद्य ऋण में वृद्धि हुई है क्योंकि सरकारी खरीद अधिक हुई है। थोक व्यापार तथा प्राथमिकता क्षेत्र में भी ऋण अत्यधिक मात्रा में दिया गया। हालांकि, शासकीय आय में कमी न बैंकों को इस बात के लिए उकसाया कि वे सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में बढ़ चढ़कर निवेश न करें, जिसका परिणाम यह हुआ कि वृद्धिशील निवेश जमा अनुपात में तीव्र गिरावट हुई। सामान्य रूप से बैंक, ब्याज दर चक्र के ऊर्ध्वमुखी प्रभाव को नियंत्रित करने में सफल रहे हैं, तथा सरकारी क्षेत्र एवं निजी क्षेत्र के बैंकों की लाभप्रदता में सुधार हुआ है।

सारणी 2.51 : अवशिष्ट गैर बैंकिंग कंपनियों का प्रोफाइल

(राशि करोड़ रुपए)

मद	(मार्च के अंत में) 2003	2004	2005
1	2	3	4
क. आस्ति (i से v)	**21,104**	**20,362**	**19,057**
(i) अभारित अनुमोदित प्रतिभूतियाँ	6,129	5,824	2,037
(ii) बैंकों में सावधि जमा	1,470	2,033	4,859
(iii) सरकारी कंपनी / सरकारी क्षेत्र बैंक / सरकारी वित्त संस्था/निगम के बांड या डिबेंचर या वाणिज्यिक पत्र	6,553	6,048	9,225
(iv) अन्य निवेश	912	2,059	1,639
(v) अन्य आस्तियाँ	6,040	4,398	1,297
ख. निवल स्वाधिकृत निधि	**809**	**1,002**	**1,065**
ग. कुल आय (i से ii)	**1,801**	**2,055**	**1,532**
(i) निधि आय	1,801	2,055	1,530
(ii) शुल्क आय	–	–	2
घ. कुल व्यय (i से iii)	**1,435**	**1,813**	**1,396**
(i) वित्तीय लागत	1,212	1,368	1,196
(ii) परिचालन लागत	105	129	146
(iii) अन्य लागत	118	316	74
ङ. कराधान	**134**	**32**	**48**
च. परिचालन लाभ (कर पूर्व लाभ)	**366**	**242**	**136**
छ. निवल लाभ (करोत्तर लाभ)	**232**	**210**	**88**

– शून्य / नगण्य।

बैंक अपनी आस्तियों की बढ़ती गुणवत्ता को बनाए रखने में भी सफल रहे हैं। उनके पूंजी आधार में वृद्धि जोखिम भारित आस्तियों में हुई वृद्धि के समान रही है। वित्तीय क्षेत्र के अन्य खंडों में मिला जुला निष्पादन रहा है। जहां शहरी सहकारी बैंकिंग क्षेत्र तथा ग्रामीण सहकारी बैंकों के कई खंडों ने अपने परिचालन बढ़ाए हैं, वहीं उनकी लाभप्रदता तथा आस्ति की गुणवत्ता कम संतोषजनक रही है। वहीं पर वित्तीय संस्थाओं की ऋण स्वीकृतियों एवं उनके वितरण में गिरावट आई है, किंतु उनकी लाभप्रदता और आस्ति की गुणवत्ता में सुधार हुआ है। एनबीएफसी ने अपने परिचालन बढ़ाए हैं, उनकी लाभप्रदता में सुधार हुआ है तथा उन्होंने आस्ति गुणवत्ता एवं पूंजी पर्याप्तता को भी बनाए रखा है। दूसरी ओर, आरएनबीसी की आस्तियों में गिरावट आई है और उनके वित्तीय निष्पादन धीमे रहे हैं।

V. बाह्य क्षेत्र

विश्व का आर्थिक परिदृश्य

2.161 वर्ष 2004 के दौरान विश्व की 5.1 प्रतिशत की विकास दर लगभग तीन दशक की सबसे उच्चतम दर थी क्योंकि इस दौरान उसे व्यापार की मात्रा में 10.3 प्रतिशत की प्रभावशाली वृद्धि का समर्थन प्राप्त हुआ था। जो भी विस्तार हुए वे सही दिशा में थे, और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की वर्ष 2005 के लिए 4.3 प्रतिशत की भविष्यवाणी के अनुरूप थे, हालांकि जोखिम अभी भी निचली सतह की ओर खिसकता जा रहा है (चार्ट II.19)। वर्ष 2004 के मध्य में थोड़ी-सी मंदी रही, उसके बाद वर्ष 2005 की पहली तिमाही तक विश्व के सकल देशी उत्पाद में वृद्धि होती गई, जिसमें सेवा क्षेत्र उत्पादन में इतनी तीव्र वृद्धि हुई है कि उसने विश्व के विनिर्माण क्षेत्र तथा हाल के व्यापार क्षेत्र में हुई मंदी को न केवल पूरा कर लिया है, बल्कि उससे कहीं आगे निकल गई है।

2.162 वर्ष 2005 के दौरान विश्व की अर्थव्यवस्था काफी तेज गति से बढ़ती जा रही है। हालांकि, वर्ष 2005 की पहली और दूसरी तिमाही में अमरीका सहित कुछ देशों में विकास की दर धीरे-धीरे संतुलित होने के संकेत पाए गए हैं, वहीं चीन में विकास की गति वर्ष 2004 जैसी ही रही है और वर्ष 2005 की चौथी तिमाही में वह 9.9 प्रतिशत थी। चीन में विकास की दर अत्यधिक तीव बने रहना यह दर्शाता है कि वहां निर्यात को बढ़ावा देने तथा घरेलू बाजार में गर्मी बनाए रखने के प्रयास हो रहे हैं। सार्वजनिक क्षेत्र में निवेश में गिरावट की प्रवृत्ति के बावजूद, जापान की अर्थव्यवस्था ने चौथी तिमाही में संभली रही है और तीसरी तिमाही के 2.9 प्रतिशत की तुलना में 4.2 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की है। इस वृद्धि में वहां के उपभोक्ता ने सहायता प्रदान की है। इसी प्रकार, यूरो क्षेत्र में दूसरी तिमाही में विकास की दर में 1.1 प्रतिशत की गिरावट हुई जो तीसरी और चौथी तिमाही में बढ़कर क्रमशः 1.5 प्रतिशत तथा 1.7 प्रतिशत हो गई (सारणी 2.52)। विश्व में लगातार बढ़ रही असंतुलन की स्थिति, साथ ही ऊंची एवं अनिश्चित तेल की कीमतें विश्व विकास के परिदृश्य के लिए मध्यकालिक जोखिम बनी रही हैं।

चार्ट II.19: वैश्विक उत्पादन वृद्धि

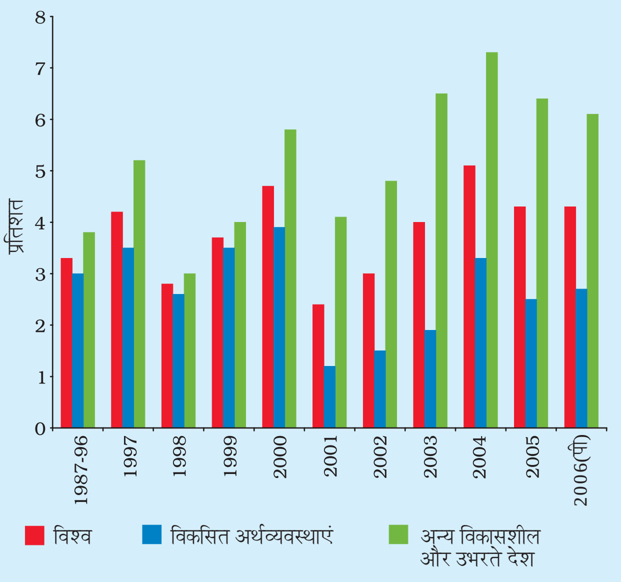

2.163 विश्व व्यापार की मात्रा, जिसमें वर्ष 2004 के दौरान 10.3 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई और जो वर्ष 2003 की मात्रा से लगभग दुगुनी थी, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुसार वर्ष 2005 के दौरान लगभग 7.0 प्रतिशत पर संतुलित रहने का अनुमान है। विनिर्माण क्षेत्र के विश्व व्यापार मूल्यों में भी वर्ष 2004 (चार्ट II.20) की 9.7 प्रतिशत वृद्धि की तुलना में वर्ष 2005 में 6.0 प्रतिशत तक गिरावट होने की संभावना थी। उभरते तथा विकासशील देशों में निजी निवल पूंजी प्रवाह वर्ष 2004 के 232.0 बिलियन अमरीकी डालर से गिरकर वर्ष 2005 के दौरान 132.9 बिलियन अमरीकी डालर होने का अनुमान है।

2.164 वित्तीय बाजार की स्थिति वर्ष 2005 से लेकर अब तक काफी हद तक सौम्य बनी रही है। पूरे विश्व में दीर्घकालिक ब्याज दरों का न्यूनतर स्तर पर बने रहना वित्तीय बाजार के लिए समस्या रही है जिससे स्फीतिकारी स्थिति कम एवं सुस्थिर बने रहने तथा विश्व में बचत एवं निवेश दोनों के वांछित तथा वास्तविक अंतर का पता चलता है। विश्व के ईक्विटी बाजार में उछाल की स्थिति रही क्योंकि कार्पोरेट जगत को अत्यधिक लाभ हुआ है और उनके तुलनपत्र सशक्त रहे हैं। अमरीका के चालू खाता घाटे में और अधिक वृद्धि हो जाने के बावजूद, वर्ष 2005 के दौरान कुल मिलाकर व्यापार भारित दृष्टि से अमरीकी डालर के मूल्य में अच्छी खासी वृद्धि हुई है।

2.165 अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतें मुख्यतया अल्पकालिक आपूर्ति के भय के कारण काफी ऊंची एवं अस्थिर बनी रही हैं। यद्यपि तेल की कीमतें अगस्त के अंत तक थोड़ा तेज होकर 70 अमरीकी डालर प्रति बैरल पहुंच गईं, किंतु उसके बाद कीमत सहज हुई। 1 अप्रैल 2005 तथा 3 मार्च 2006 के बीच डब्ल्यूटीआई,ब्रंट एंड दुबई फतह वरायटीज के अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल की कीमतें बढ़कर क्रमशः 6.4 अमरीकी डालर (प्रति बैरल 55.15 से बढ़कर 63.67 अमरीकी डालर), 7.5 अमरीकी डालर (प्रति

सारणी 2.52 : चुनिंदा देशों में जी डी पी की तिमाही वृद्धि दर

(प्रतिशत)

देश	2004	2004-ति1	2004-ति2	2004-ति3	2004-ति4	2005-ति1	2005-ति2	2005-ति3	2005-ति4
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
अमरीका	4.4	4.7	4.6	3.8	3.8	3.6	3.6	3.6	3.2
यूरो क्षेत्र	2.1	1.4	2.2	1.8	1.5	1.4	1.1	1.5	1.7
जापान	1.7	3.7	2.8	2.4	0.4	1.4	2.6	2.9	4.2
चीन	9.5	9.8	9.6	9.1	9.5	9.4	9.5	9.4	9.9
मलेशिया	7.1	7.6	8.0	6.8	5.6	5.7	4.1	5.3	5.2
इंडोनेशिया	5.1	4.4	4.3	5.0	6.7	6.4	5.5	5.3	4.9
दक्षिण कोरिया	4.6	5.3	5.5	4.7	3.3	2.7	3.3	4.4	5.2
थाइलंड	6.9	6.7	6.4	6.1	5.1	3.3	4.4	5.3	..
ब्राज़ील	5.2	4.0	4.7	5.3	4.2	2.6	3.9	1.0	1.4
अर्जेंटीना	9.0	11.3	7.1	8.7	9.1	8.0	10.1	9.2	..
भारत	6.9@	8.4	7.9	6.7	7.0	7.0	8.1	8.0	7.6

@ वित्तीय वर्ष 2004-05. .. अनुपलब्ध

स्रोत : दि इकोनॉमिस्ट, बैंक ऑफ जापान और केंद्रीय सांख्यिकी संगठन।

बैरल 55.15 से बढ़कर 62.69 अमरीकी डालर), और 11.1 अमरीकी डालर (प्रति बैरल 48.38 से बढ़कर 59.51 अमरीकी डालर) हो गईं। 17 जनवरी 2006 को तेल बाजार पर जारी रिपोर्ट में अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी ने संशोधित करते हुए लिखा है कि वर्ष 2005 में विश्व तेल की प्रति दिन मांग 83.3 मिलियन बैरल थी जो वर्ष 2006 में बढ़कर 83.3 मिलियन बैरल प्रति दिन हो गई है। अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष के अनुसार, यदि कच्चे तेल की कीमतों में स्थायी रूप से 10 प्रतिशत की वृद्धि रहती हो तो यह मानते हुए कि इसकी कीमतें मांग द्वारा संचालित हैं तथा मुद्रास्फीति पर इसका मामूली असर पड़ेगा, यह अनुमान लगाया गया है कि इससे विश्व के सकल घरेलू उत्पाद में आने वाले वर्षों में 0.1 से 0.15 प्रतिशतता बिंदु की कमी आएगी। तेल की ऊंची कीमतों की वजह से विश्व में मुदास्फीति की थोड़ी तेजी सुर्खियों में बनी रही है, किंतु मुख्य मुद्रास्फीति की दर प्रमुख औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं

चार्ट II.20 : विश्व व्यापार मात्रा तथा कीमतों में वृद्धि

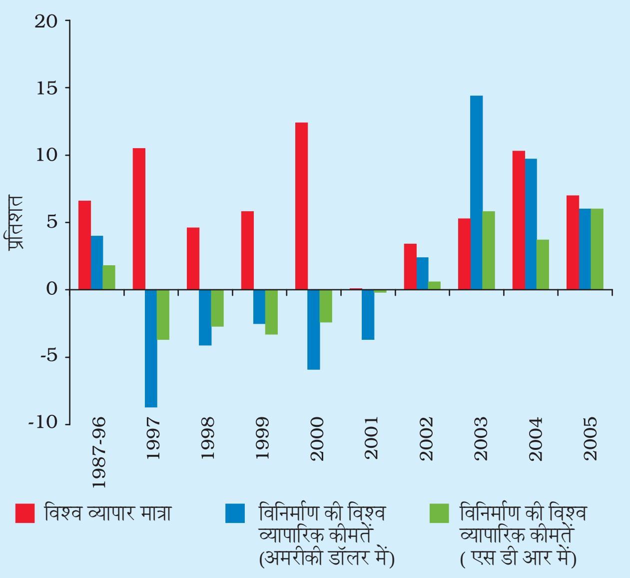

में सामान्यतया नियंत्रित रही है, जबकि उभरते हुए बाजारों में मुद्रास्फीति वृद्धि का थोड़ा दबाव बना रहा है।

भारत का वणिक व्यापार

2.166 हाल के वर्षों में विदेशी व्यापार ने महत्वपूर्ण तेजी प्रदर्शित की है। डीजीसीआइ एवं एस के अनुसार, वणिक निर्यात ने वर्ष 2004-05 के दौरान अमरीकी डालर में 26.2 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाई है तथा तीन वर्ष अर्थात् 2002-05 में औसत वार्षिक वृद्धि दर 22.5 प्रतिशत रही है। वणिक आयात में वृद्धि उच्च स्तर पर बनी रही है (2004-05 में 39.7 प्रतिशत और 2002-05 में 28.8 प्रतिशत)। 2004-05 में व्यापार घाटा बढ़कर 28.6 बिलियन अमरीकी डालर हो गया, जो पिछले वर्ष के स्तर से दुगुना था। वर्ष 2005-06 (अप्रैल-जनवरी) के दौरान निर्यात और आयात की संतुलित वृद्धि दर के वातावरण में व्यापार घाटा बढ़कर 48.4 प्रतिशत हो गया।

2.167 भारत में वणिक व्यापार में वर्ष 2004-05 में अत्यधिक वृद्धि हुई है, जिसकी वजह विनिर्माण क्षेत्र में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर बढ़ती प्रतिस्पर्धा है और जो बढ़ते हुए व्यापार एकीकरण के माहौल में है, समर्थनकारी घरेलू नीतिगत ढांचा, विश्व की मांग में निरंतर सुधार तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पण्यों की कीमतों में वृद्धि। वर्ष 2004 में चीन और कोरिया के बाद निर्यात क्षेत्र में सबसे तेजी से विकसित होनेवाला देश भारत है (सारणी 2.53)। भारत-चीन के बीच व्यापार में महत्वपूर्ण विस्तार होने से, चीन हाल के वर्षों में भारत का सबसे प्रमुख व्यापार भागीदार बन गया है। भारत के कुल निर्यात में चीन का हिस्सा 2002-03 के 3.7 प्रतिशत से बढ़कर आयात में चीन का हिस्सा 2002-03 के 4.5 प्रतिशत से बढ़कर 2004-05 में 6.2 प्रतिशत हो गया है।

2.168 वर्ष 2004-05 के दौरान वणिक निर्यात में 26.2 प्रतिशत की वृद्धि हुई है जो पिछले तीन दशक में सबसे अधिक थी और वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय द्वारा निर्धारित 16 प्रतिशत के लक्ष्य से कहीं अधिक

सारणी 2.53 : वैश्विक वणिक माल की निर्यात वृद्धि

(प्रतिशत)

देश/क्षेत्र	जनवरी-दिसंबर 2004	जनवरी-अक्तूबर 2004	जनवरी-अक्तूबर 2005
1	2	3	4
विश्व	**21.2**	**20.8**	**13.0**
उन्नत अर्थव्यवस्थाएँ	**17.9**	**17.4**	**9.1**
अमरीका	13.0	13.4	10.1
जर्मनी	21.3	21.1	9.3
जापान	19.9	20.9	5.8
विकासशील देश	**26.3**	**26.1**	**18.7**
चीन	35.4	34.5	31.1
भारत	**29.8**	**32.6**	**19.1**
कोरिया	31.0	33.2	12.3
सिंगापूर	24.6	24.9	14.6
इंडोनेशिया	12.6	10.3	20.8
मलेशिया	20.5	21.8	11.1
थाइलैंड	19.8	19.7	15.3

स्रोत : आइ एम एफ, आइ एफ एस।

थी। वर्ष 2005-06 (अप्रैल-नवंबर) के दौरान विश्व व्यापार में मंदी का माहौल होने से भारत के वणिक निर्यात में वृद्धि की जो गति थी वह थोड़ी कम हो गई। किंतु अप्रैल-जनवरी 2006 के दौरान निर्यात में हासिल की गई 18.9 प्रतिशत की वृद्धि भारत सरकार द्वारा निर्धारित वार्षिक निर्यात वृद्धि लक्ष्य के अनुसार रही है (सारणी 2.54)।

2.169 आयात में वर्ष 2004-05 में 39.7 प्रतिशत की तीव्र वृद्धि दर्ज की गई है-जो 1980-81 के बाद एक रिकॉड-2003-04 के 27.3 प्रतिशत से भी ऊपर, यह वृद्धि तेल और तेल से इतर पण्यों के आयात से हुई है। वर्ष 2004-05 में तेल का आयात बढ़कर 45.1 प्रतिशत हो गया, इसका कारण मुख्यतया अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतों में वृद्धि थी। मात्रा के हिसाब से तेल के आयात की वृद्धि दर 2003-04 में 10.6 प्रतिशत से घटकर 2004-05 में 5.5 प्रतिशत हो गई। 2004-05 में तेल से इतर आयातों ने वृद्धि की गति को बनाए रखा जो घरेलू विनिर्माण गतिविधियों में तेजी आने से हुआ है। 2005-06 (अप्रैल-जनवरी) के दौरान आयात में वृद्धि की दर मजबूत बनी रही (26.8 प्रतिशत)। अप्रैल-जनवरी 2005-06 में पेट्रोलियम, तेल और चिकनाई के आयात में वृद्धि, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतों में तीव्र वृद्धि से हुई है। तेल से इतर आयातों में वृद्धि कायम रही, और अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान 18.9 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई (एक वर्ष पहले 35.5 प्रतिशत थी)।

2.170 वर्ष 2004-05 के दौरान वणिक व्यापार घाटा 28.6 बिलयन अमरीकी डालर तक पहुंच गया जो ऐतिहासिक वृद्धि थी, जिसकी प्रमुख वजह तेल से इतर आयात (21.7 बिलियन अमरीकी डालर) में वृद्धि होना रहा है। तेल से इतर व्यापार का शेष जो वर्ष 2000-01 से 2003-04 तक अधिशेष की स्थिति में था, वह 2004-05 के दौरान 5.6 बिलियन अमरीकी डालर के घाटे में बदल गया (सारणी 2.54) वर्ष 2005-06 (अप्रैल-जनवरी) के दौरान व्यापार घाटा 33.8 बिलियन

सारणी 2.54 : भारत का विदेशी व्यापार

(मिलि. अम. डॉलर)

मद	अप्रैल-मार्च 2002-03	अप्रैल-मार्च 2003-04	अप्रैल-मार्च 2004-05	अप्रैल-जनवरी 2004-05	अप्रैल-जनवरी 2005-06
1	2	3	4	5	6
निर्यात	**52,719 (20.3)**	**63,843 (21.1)**	**80,540 (26.2)**	**63,042 (26.7)**	**74,981 (18.9)**
तेल	2,577 (21.6)	3,568 (38.5)	6,798 (90.5)	5,587 (94.4)	..
तेल से भिन्न	50,143 (20.2)	60,274 (20.2)	73,743 (22.3)	57,455 (22.6)	..
आयात	**61,412 (19.4)**	**78,149 (27.3)**	**1,09,173 (39.7)**	**85,816 (37.7)**	**1,08,784 (26.8)**
तेल	17,640 (26.0)	20,569 (16.6)	29,844 (45.1)	24,038 (43.8)	35,300 (46.8)
तेल से भिन्न	43,773 (17.0)	57,580 (31.5)	79,329 (37.8)	61,778 (35.5)	73,484 (18.9)
व्यापार संतुलन	**-8,693**	**-14,307**	**-28,633**	**-22,775**	**-33,803**
तेल	-15,063	-17,001	-23,047	-18,452	..
तेल से भिन्न	6,370	2,694	-5,586	-4,323	..

.. अनुपलब्ध
टिप्पणी : कोष्ठकों के आंकड़े वार्षिक वृद्धि दरें हैं।
स्रोत : डी जी सी आइ एंड एस।

अमरीकी डालर था, जो एक वर्ष पहले (22.8 बिलिन अमरीकी डालर) के घाटे से 48.4 प्रतिशत अधिक था, और ऐसा अप्रैल-जनवरी 2005-06 के दौरान तेल आयात (11.3 बिलियन अमरीकी डालर) और तेल से इतर आयात (11.7 बिलियन अमरीकी डालर) में विस्तार होने से हुआ है।

2.171 वर्ष 2004-05 के दौरान पण्यवार प्रवृत्ति यह दर्शाती है कि निर्यात में वृद्धि बड़े पैमाने पर हुई है और सभी प्रमुख उत्पाद समूहों में हुई है (सारणी 2.55)। प्राथमिक उत्पादों के निर्यात को, कच्चे एवं खनिज पदार्थों के निर्यात में भारी वृद्धि से बल मिला, खास तौर से चीन को किए गए कच्चे लोहे के निर्यात से। विनिर्मित वस्तुओं के निर्यात में वृद्धि की गति बनी रही क्योंकि पूर्वी एशिया, चीन तथा लैटिन अमरीका तथा अफ्रीका जैसे गैर पारंपरिक बाजारों में इंजीनियरिंग सामानों की मांग काफी तेज थी। प्रौद्योगिकी प्रधान मदें जैसे धातु, मशीनरी और औजार, परिवहन उपकरण, तथा लोहा एवं इस्पात निर्यात में वृद्धि के प्रमुख कारक थे। हीरे और जवाहरात के निर्यात में तीव्र वृद्धि हुई है, जिससे यह परिलक्षित होता है कि विभिन्न संवर्धन उपायों का तथा इसके प्रमुख बाजारों जैसे अमरीकी के बाजार में हुए सुधार का इसे फायदा मिला है। पेट्रोलियम उत्पाद के निर्यात में 90.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई जो यह दर्शाती है कि यह वृद्धि घरेलू परिष्करण क्षमता में विस्तार तथा परिष्कृत उत्पादों की अंतरराष्ट्रीय स्तर पर ऊंची कीमतों से हुई है। भारत 2004 में विश्व का छठा सबसे बड़ा पेट्रोलियम परिष्करण राष्ट्र बन गया है।

2.172 वर्ष 2005-06 (अप्रैल-नवंबर) में प्राथमिक उत्पादों के निर्यात में अत्यधिक वृद्धि (19.2 प्रतिशत) हुई है, जो कच्चे सूत, चावल तथा काफी में हुए निर्यात से हुई है। समुद्री उत्पाद में अप्रैल-नवंबर 2005 के दौरान काफी तेजी आई है जो एक वर्ष पहले ऋणात्मक थी, यह तेजी प्रमुख बाजार जैसे जापान में इसकी बढ़ती हुई मांग के कारण है। विनिर्मित वस्तुओं की निर्यात दर अप्रैल-नवंबर 2005 के दौरान 14.3 प्रतिशत रही जिसमें पिछले वर्ष (23.0 प्रतिशत) की तुलना में काफी नुकसान हुआ है। संतुलित वृद्धि के साथ-साथ, इंजीनियरिंग सामग्री और रसायन निर्यात वृद्धि के प्रमुख कारक की निर्यात वृद्धि (20.1 प्रतिशत) अप्रैल-नवंबर 2005 में काफी अधिक बनी रही है। वस्त्र क्षेत्र में तैयार कपड़े मुख्य आधार बने रहे और उनके निर्यात में वृद्धि प्रमुख बाजारों जैसे अमरीका और यूरोप में भारी मांग के कारण रही हैं। पेट्रोलियम उत्पाद के निर्यात में एक वर्ष पहले के अधिकतम 94.0 प्रतिशत की तुलना में अप्रैल-नवंबर 2005 के दौरान 51.4 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है।

2.173 वर्ष 2004-05 के दौरान निर्यात का कार्य गंतव्यवार, पूरे एशिया, यूरोप, उत्तरी अमरीका और लैटिन अमरीका में भलीभांति किया गया। दक्षिण कोरिया, सिंगापुर और मलेशिया सहित पूर्वी एशियाई देशों को किए गए निर्यात में भी वृद्धि हुई है। मांग में सुधार होने के कारण ओइसीडी देशों तथा अमरीका को किए गए निर्यात में वृद्धि हुई है (सारणी 2.56)। वर्ष 2005-06 (अप्रैल-नवंबर) में भारत के निर्यात के लिए सबसे अधिक विकसित क्षेत्र लैटिन अमरीका रहा, उसके बाद पूर्वी एशिया, अफ्रीका, यूरोपियन संघ तथा दक्षिण एशिया रहे हैं। भारत के निर्यात के लिए सिंगापुर, चीन, कोरिया, हांगकांग, नेदरलैंड, फ्रांस तथा ब्रिटेन प्रमुख बाजार रहे हैं।

2.174 जहां तक आयात का संबंध है, तेल से इतर सामग्री के आयात में वृद्धि मुख्यतया औद्योगिक इनपुट (स्वर्ण और चांदी को घटाकर तेल से इतर सामग्री का आयात, थोक उपभोक्ता वस्तुएं, विनिर्मित उर्वरक तथा व्यावसायिक उपकरण) के कारण हुई है, जिसमें एक वर्ष पहले के 29.1 प्रतिशत की तुलना में वर्ष 2004-05 के दौरान 37.0 प्रतिशत की ऊंची वृद्धि दर्ज की गई है। विशेषतः पूंजीगत वस्तुओं के आयात (मुख्यतः धातु, मशीन टूल्स, मशीनरी और इलेक्ट्रॉनिक वस्तुओं पर आधारित) में

सारणी 2.55 : भारत के प्रमुख निर्यात

मद	अप्रैल-मार्च				अप्रैल-नवंबर			
	मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत)		मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत)	
	2003-04	2004-05 पी	2003-04	2004-05 पी	2004-05	2005-06 पी	2004-05	2005-06 पी
1	2	3	4	5	6	7	8	9
प्राथमिक उत्पाद	**9,902**	**12,994**	**13.7**	**31.2**	**7,393**	**8,814**	**34.3**	**19.2**
कृषि और संबद्ध उत्पाद	7,533	8,158	12.3	8.3	5,002	5,669	16.9	13.3
अयस्क और खनिज धातुएं	2,369	4,836	18.7	104.2	2,391	3,146	94.6	31.5
विनिर्मित वस्तुएं	**48,492**	**58,596**	**20.5**	**20.8**	**36,305**	**41,514**	**23.0**	**14.3**
चमड़ा और विनिर्मित वस्तुएं	2,163	2,324	17.0	7.4	1,511	1,546	14.6	2.3
रसायन और संबंधित उत्पाद	9,446	11,897	26.7	25.9	7,281	8,080	29.9	11.0
अभियांत्रिकी सामान	12,405	16,685	37.3	34.5	10,026	12,028	37.4	20.0
कपड़ा और उत्पाद	12,792	12,788	10.1	-	8,296	8,851	8.8	6.7
रत्न और आभूषण	10,573	13,735	17.1	29.9	8,422	10,121	21.2	20.2
हस्तनिर्मित	500	368	-36.4	-26.4	257	272	-22.4	5.8
गालीचे	586	596	10.0	1.7	391	451	10.3	15.5
पेट्रोलियम उत्पाद	**3,568**	**6,798**	**38.5**	**90.5**	**4,387**	**6,643**	**94.0**	**51.4**
कुल निर्यात	**63,843**	**80,540**	**21.1**	**26.2**	**49,369**	**58,651**	**29.0**	**18.8**

स्रोत : डी जी सी आइ एंड एस।

सारणी 2.56 : भारतीय निर्यात के प्रमुख गंतव्य देश

देश	अप्रैल-मार्च				अप्रैल-नवंबर			
	मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत)		मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत)	
	2003-04	2004-05पी	2003-04	2004-05पी	2004-05	2005-06पी	2004-05	2005-06पी
अमरीका	11,490	13,272	5.5	15.5	8,748	10,065	21.1	15.1
यू ए इ	5,126	7,139	54.0	39.3	4,168	4,668	48.5	12.0
यू के	3,023	3,514	21.1	16.2	2,213	2,953	20.3	33.5
हांग कांग	3,262	3,660	24.8	12.2	2,245	2,815	6.8	25.4
जर्मनी	2,545	2,675	20.8	5.1	1,661	1,926	8.8	15.9
चीन	2,955	5,345	49.6	80.9	2,477	3,457	74.3	39.6
जापान	1,709	2,019	-8.3	18.1	1,227	1,369	11.7	11.6
बेल्जियम	1,806	2,453	8.7	35.8	1,531	1,672	33.0	9.3
सिंगापुर	2,125	3,825	49.5	80.0	2,229	3,545	107.3	59.0
इटली	1,729	2,181	27.4	26.1	1,282	1,318	25.2	2.8
बांग्लादेश	1,741	1,607	48.0	-7.7	962	919	-11.3	-4.4
श्रीलंका	1,319	1,355	43.2	2.7	891	1,258	10.9	41.3
फ्रांस	1,281	1,609	19.3	25.6	999	1,171	33.6	17.2

स्रोत : डी जी सी आइ एंड एस।

2003-04 के दौरान 33.8 प्रतिशत की महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है (सारणी 2.57)। वर्ष 2005-06 में जो वृद्धि हुई है उसकी प्रमुख कारक पूंजीगत वस्तुएं रही हैं। पूंजीगत वस्तुओं के आयात में विस्तार, तथा अप्रैल-नवंबर 2005 के दौरान पूंजीगत वस्तुओं की देश में अत्यधिक वृद्धि, औद्योगिक क्षेत्र की भारी क्षमता निर्माण को प्रदर्शित करती है।

2.175 स्रोतवार, 2004-05 में आयात में हुई वृद्धि का समस्त प्रमुख क्षेत्रों में समुचित वितरण किया गया। वर्ष 2005-06 (अप्रैल-नवंबर) में भारत के आयात का सबसे बड़ा स्रोत चीन था, उसके बाद अमरीका, स्विटजरलैंड, जर्मनी, बेल्जियम, संयुक्त अरब अमीरात और आस्ट्रेलिया रहे हैं (सारणी 2.58)।

2.176 जहां वर्ष 2005-06 (अप्रैल-जनवरी) के दौरान निर्यात की वृद्धि दर में नवंबर माह में दर्ज की गई गिरावट के कारण कमी हुई है, वहीं वृद्धिगत निष्पादन का आधार समस्त उत्पाद समूह एवं बाजारों में व्यापक स्तर पर रहा है। पूंजीगत वस्तुओं के आयात में संतुलित वृद्धि साथ ही घरेलू स्तर पर पूंजीगत वस्तुओं के उत्पादन में हुई तीव्र वृद्धि ने निवेश माहौल को आशावादी सिद्ध कर दिया है।

सारणी 2.57 : भारत के प्रमुख आयात

देश	अप्रैल-मार्च				अप्रैल-नवंबर			
	मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत) (प्रतिशत)		मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत) (प्रतिशत)	
	2003-04	2004-05	2003-04	2004-05	2004-05	2005-06	2004-05	2005-06
1	2	3	4	5	6	7	8	9
पेट्रोलियम, पेट्रोलियम उत्पाद और संबंधित सामग्री	20,569	29,844	16.6	45.1	19,362	27,752	51.4	43.3
खाद्य तेल	2,543	2,427	40.1	-4.6	1,625	1,323	-10.4	-18.6
अलौह धातुएं	949	1,262	42.3	33.0	810	1,028	53.1	26.9
धातु लौहीय अयस्क और धातु के टुकड़े	1,296	2,395	24.9	84.8	1,447	2,159	72.4	49.2
लोहा और इस्पात	1,506	2,595	59.6	72.3	1,529	2,833	65.8	85.2
पूंजीगत सामान	18,279	24,458	35.4	33.8	13,482	17,282	31.4	28.2
मोती, मूल्यवान व अर्ध मूल्यवान पत्थर	7,129	9,422	17.6	32.2	5,144	6,711	21.9	30.5
टेक्सटाइल यार्न, फैब्रिक आदि.	1,258	1,508	29.6	19.9	945	1,218	16.4	28.9
रसायन, जैविक और अजैविक	4,032	5,410	33.3	34.2	3,402	4,034	35.2	18.6
सोना और चांदी	6,856	10,940	59.9	59.6	6,242	7,352	37.4	17.8
कुल आयात	**78,149**	**1,09,173**	**27.3**	**39.7**	**66,166**	**86,403**	**37.6**	**30.6**

स्रोत : डी जी सी आइ एंड एस।

सारणी 2.58 : भारतीय आयात के स्रोत

देश	अप्रैल-मार्च				अप्रैल-नवंबर			
	मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत)		मिलि. अम. डॉलर		वृद्धि दर (प्रतिशत)	
	2003-04	2004-05	2003-04	2004-05	2004-05	2005-06पी	2004-05	2005-06पी
1	2	3	4	5	6	7	8	9
अमरीका	5,035	6,833	13.3	35.7	3,926	4,614	25.8	17.5
बेल्जियम	3,976	4,567	7.1	14.9	2,676	3,271	13.4	22.2
चीन	4,053	6,769	45.2	67.0	4,167	5,977	73.3	43.4
यू के	3,256	3,498	17.3	7.4	1,949	2,493	0.8	27.9
जर्मनी	2,919	3,892	21.4	33.3	2,339	3,353	32.2	43.3
स्वीटजरलैंड	3,313	5,818	42.2	75.6	3,304	4,294	37.0	30.0
द. अफ्रीका	1,899	2,163	-9.3	13.9	1,194	1,519	-17.9	27.2
जापान	2,668	3,142	45.3	17.8	1,906	2,036	17.8	6.8
द. कोरिया	2,829	3,429	85.9	21.2	1,983	2,509	26.8	26.5
मलेशिया	2,047	2,246	39.7	9.8	1,429	1,397	13.2	-2.2
ऑस्ट्रेलिया	2,649	3,583	98.2	35.2	2,249	2,832	59.0	25.9
इंडोनेशिया	2,122	2,537	53.7	19.5	1,602	1,673	17.6	4.4
यू ए इ	2,060	4,567	115.2	121.7	2,418	2,935	150.5	21.4

स्रोत : डी जी सी आइ एंड एस।

अदृश्य मदें और चालू खाता

2.177 वर्ष 2005-06 की पहली छमाही (अर्थात अप्रैल-सितंबर 2005) के दौरान बाह्य क्षेत्र की गतिविधियां मुख्यतया तेजी से बढ़ते व्यापार घाटे द्वारा संचालित थीं। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की ऊंची कीमतें और उनमें किसी भी तरह से कम न होना, पूंजीगत वस्तुओं के आयात तथा निर्यात संबंधी मदों की अत्यधिक मांग एवं स्वर्ण तथा चांदी के आयात में तेजी आना, ये ऐसे प्रमुख कारक रहे हैं जो पिछले वर्ष की तुलना में राजकोषीय वर्ष की पहली छमाही में व्यापार घाटे को दुगुने से अधिक करने के जिम्मेदार रहे हैं। यह अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि उच्च व्यापार घाटे को अदृश्य खाते में निरंतर दर्ज किए गए अधिशेष से पूरा किया गया। यह संबल विदेशी भारतीय कामगारों के निरंतर धन प्रेषण, सॉफ्टवेयर तथा यात्रा से होने वाली आय से प्राप्त हुआ है। इसके अलावा, औद्योगिक देशों में ब्याज दर चक्र बदले जाने के बावजूद वर्ष 2005-06 की पहली छमाही के दौरान पूंजी का अंतर्वाह (इनफ्लो) बढ़ा है। भारत में ईक्विटी निवेश के माध्यम से निरंतर अंतर्वाह बने रहना, स्टॉक बाजार में विदेशी संस्थागत निवेश के इनफ्लो की तेजी से वृद्धि, भारतीय कर्पोरेट द्वारा विदेश से उधार लेने में गति- ये सभी बातें घरेलू आर्थिक गतिविधियों की संतुलित प्रगति को दर्शाती हैं। चालू खाते के भारी घाटे (13 बिलियन अमरीकी डालर) के वित्तपोषण के बावजूद तीव्रतम पूंजी इनफ्लो ने विदेशी मुद्रा भंडार के संचय को कुछ हद तक बढ़ाया है।

2.178 वर्ष 2005-06 के प्रारंभिक संकेतों से पता चलता है कि हाल ही के बीते समय की तरह इस समय भी अदृश्य मदों में अधिशेष की स्थिति बहुत अधिक रहेगी (सारणी 2.59) और चार्ट II.21)। 2005-06 की पहली छमाही के दौरान निवल अदृश्य अधिशेष को प्रवासी भारतीयों के धन प्रेषण, सॉफ्टवेयर निर्यात तथा यात्रा आय से मजबूती मिली है। निवल निवेश आय ऋणात्मक बनी रही है। अप्रैल-सितंबर 2005 के दौरान सेवा क्षेत्र के भुगतान में 2004-05 की तुलना में तीव्र वृद्धि हुई है जो बाहरी पर्यटक की संख्या में वृद्धि, वणिक व्यापार से संबंधित परिवहन तथा बीमा भुगतान के प्रभाव तथा कारोबारी सेवाओं जैसे व्यवसाय एवं प्रबंधन परामर्श सेवा, इंजीनियरिंग एवं तकनीकी तथा वितरण सेवाओं के आयात के प्रति बढ़ती मांग को प्रदर्शित करती है। सॉफ्टवेयर निर्यात निरंतर अधिक रहा है जिससे सुरक्षा करने वालों के दबावों का भय बन गया है। अप्रैल-सितंबर 2005 के दौरान सॉफ्टवेयर निर्यात ने 32.0 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज की गई है।

2.179 सॉफ्टवेयर निर्यात में तेजी यह प्रदर्शित करती है कि उसे विभिन्न बाजारों की तरफ ले जाने की पहल की गई है, मूल्य शृंखला बढ़ती गई है, उच्चतम प्रोसेसिंग निष्पादन तथा दूरस्थ भागीदारों के लिए अनुसंधान और विकास केंद्रों की स्थापना पर ध्यान दिया गया ह। अभी हाल ही में इस बात के स्पष्ट संकेत मिलें हैं कि बीपीओ उद्योग समेकन की ओर बढ़ रहा है। विश्व की बड़ी फम द्वारा भारत की अग्रणी बीपीओं फर्मों का अधिग्रहण, भारत में बहुराष्ट्रीय फर्मों द्वारा कैप्टिव बीपीओ परिचालन की स्थापना, भारतीय कंपनियों द्वारा विदेशी फर्मों का अधिग्रहण तथा संयुक्त पूंजीगत निवेश में वृद्धि सॉफ्टवेयर उद्योग के बीपीओ खंड की बढ़ती हुई महारत को दर्शाती है। वित्त और लेखांकन में अधिकतम संयुक्त पूंजी लगाई गई है। समेकन की दिशा में यह कदम कई प्रकार से फायदेमंद होंगे जैसे- बड़ी स्थापना वाले ग्राहक /अर्जित ज्ञान तथा कारोबारी परंपरा तक पहुंच हो सकेगी, प्रतिस्पर्धियों की तुलना में इन्हें अधिक सहूलियत

सारणी 2.59 : भारत का चालू खाता

(मिलि. अम. डॉलर)

मद				अप्रैल-सितंबर	
	2002-03	2003-04	2004-05	2004-05	2005-06
1	2	3	4	5	6
I. वणिक माल शेष	-10,690	-13,718	-36,629	-14,768	-31,635
II. अदृश्य शेष (क + ख + ग)	17,035	27,801	31,229	14,283	18,679
क) सेवाएं	3,643	10,144	14,199	5,980	9,512
i) यात्रा	-29	1,435	985	-38	-1,073
ii) परिवहन	-736	879	259	251	-1,440
iii) बीमा	19	56	187	18	327
iv) जी एन आइ इ	65	28	67	66	-120
v) विविध	4,324	7,746	12,701	5,683	11,818
जिसमें से					
सॉफ्टवेयर सेवाएं	8,863	12,324	16,526	7,569	9,842
ख) अंतरण	16,838	22,162	20,844	10,220	12,245
i) सरकारी	451	554	591	252	202
ii) निजी	16,387	21,608	20,253	9,968	12,043
ग) आय	-3,446	-4,505	-3,814	-1,917	-3,078
i) निवेश आय	-3,544	-3,757	-2,669	-1,430	-2,417
ii) कर्मचारियों को क्षतिपूर्ति	98	-748	-1,145	-487	-661
कुल चालू खाता (I+II)	**6,345**	**14,083**	**-5,400**	**-485**	**-12,956**

जी एन आइ इ : सरकारी अन्यत्र शामिल नहीं।

होगी, जबकि विलय होनेवाली संस्थाओं को अपनी परामर्शी कौशल को उच्च स्तरीय बनाने का अवसर प्राप्त होगा।

2.180 विदेश में कार्यरत भारतीयों द्वारा भेजे गए धन की मात्रा निरंतर बढ़ रही है, और विश्व में धनप्रेषण प्राप्त करनेवाले में भारत की स्थिति अग्रणी बनी हुई है। अप्रैल-सितंबर 2005 के दौरान कामगारों द्वारा भेजे गए धन चालू खाता का मुख्य आधार बन रहे हैं, जिसका कुल अदृश्य प्राप्तियों में हिस्सा लगभग 26 प्रतिशत है। निवल अदृश्य अधिशेष में वृद्धि, व्यापार घाटे में हुई तीव्र वृद्धि को कुछ हद तक कम करती है। जुलाई-सितंबर 2005 के दौरान चालू खाते का घाटा पिछले वर्ष की इसी तिमाही की तुलना में दुगुने से भी अधिक हो गया था (चार्ट II.22)।

2.181 यदि पूरे वर्ष को देखें तो, जहां अदृश्य अधिशेष से बढ़ते हुए व्यापार घाटे के बड़े हिस्से का वित्तपोषण किया जा सकता है, वहीं चालू

चार्ट II.21: अदृश्य अधिशेष

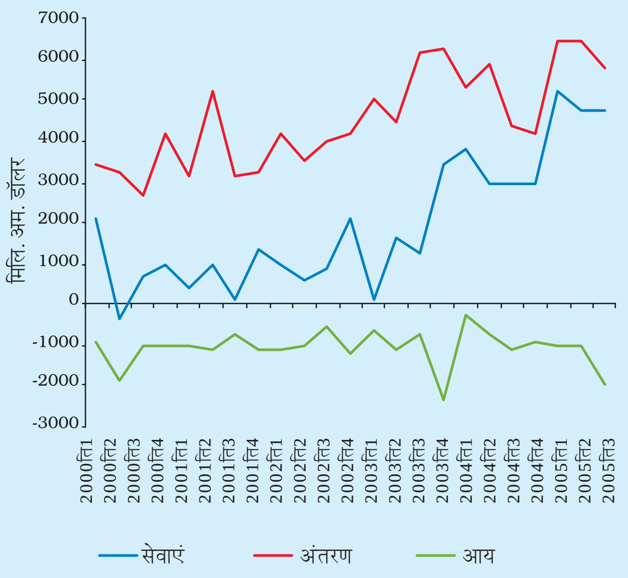

चार्ट II.22: चालू खाता शेष

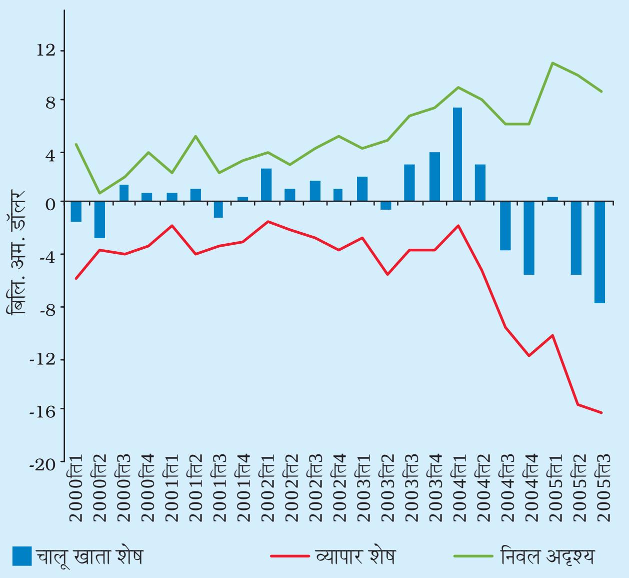

खाते का घाटा स्वीकार्य सीमा के भीतर रहने की उम्मीद है जिसका वित्तपोषण सामान्य पूंजी प्रवाहों से किया जा सकता है। अदृश्य अधिशेष में मामूली वृद्धि होते हुए भी, व्यापार घाटे में हुए तीव्र विस्तार से चालू खाते का घाटा अप्रैल-सितंबर 2005 में 13.0 बिलियन अमरीकी डालर हो गया। (2004 की इसी अवधि में घाटा 0.5 बिलियन अमरीकी डालर था)।

पूंजी खाता

2.182 वर्ष 2005-06 के दौरान अब तक निवल पूंजी अंतर्वाह (इनफ्लो) तीव्रतम बना रहा है। 2005-06 (अप्रैल-सितंबर) की पहली छमाही में 18.7 बिलियन अमरीका डालर का निवल पूंजी प्रवाह, मुख्यतया विदेशी प्रत्यक्ष निवेश, बाह्य वाणिज्यिक उधार, बैंकिंग पूंजी और विदेशी संस्थागत निवेश की वजह से था (सारणी 2.60)। प्रत्यक्ष विदेशी निवेशक इनफ्लों में अत्यधिक वृद्धि हुई है, यह वृद्धि मुख्यतया सीमेंट, चीनी, प्लास्टिक, सिंथेटिक और रबड़ उद्योगों में हुई है, तथा मारिशस के होटल एवं अमरीका ने सबसे बढ़ चढ़कर निवेश किया है। जून में भारी विदेशी संस्थागत निवेश दर्ज किया गया और इस महीने के दौरान निवल 1.3 बिलियन अमरीकी डालर का इनफ्लो हुआ है। अमरीकी डिपॉजिटरी रसीद/ग्लोबल डिपॉजिटरी रसीद के माध्यम से भी इनफ्लो काफी तेजी से हुआ है। भारत के बैंकों के विदेश में रखी विदेशी मुद्रा आस्तियों को कम किया है और अनिवासी भारतीयों की जमाराशियों में अल्प मात्रा में धनात्मक निवल इनफ्लों दर्ज किया गया है। निवल बहिर्वाह की तुलना में अल्पकालिक व्यापार ऋण में तेजी इसलिए रही कि तेल कंपनियों ने घरेलू स्तर पर अपने वित्तपोषण अधिक किए और चुकौती प्रक्रिया तेज रही। चालू वित्तीय वर्ष में अभी तक जो विदेशी निवेश आया है वह मुख्यतया भारतीय अर्थव्यवस्था में निवेशकों के विश्वास के कारण है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर चलनिधि की स्थिति तथा निदेशकों द्वारा संविभाग विविधीकरण की वजह से भी वर्ष के दौरान विदेशी निवेश आया है। (सारणी 2.61)।

सारणी 2.60 : पूंजी प्रवाह (निवल)

(मिलि. अम. डॉलर)

घटक	अप्रैल-मार्च		अप्रैल-सितंबर	
	2003-04	2004-05	2004-05	2005-06
1	2	3	4	5
विदेशी प्रत्यक्ष निवेश	2.4	3.2	2.0	2.3
संविभाग निवेश	11.4	8.9	0.5	5.1
बाहरी सहायता	-2.9	1.9	0.3	0.4
बाहरी वाणिज्यिक उधार	-2.9	5.0	1.5	2.8
एन आर आइ जमाराशि	3.6	-1.0	-1.3	0.2
अन्य बैंकिंग पूंजी	2.4	4.9	2.0	2.8
अल्पावधि ऋण	1.4	3.8	2.0	0.9
अन्य पूंजी	1.3	4.3	0.4	4.2
कुल	**16.7**	**31.0**	**7.4**	**18.7**

2.183 अब तक वर्ष 2005-06 (अप्रैल-सितंबर 2005) के दौरान प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का इनफ्लों काफी तेज था जो समर्थनकारी नीतियों तथा विभिन्न क्षेत्रों में बेहतर निवेश के अवसर की वजह से था। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश में सुधार यह दर्शाता है कि यह प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए सहज वातावरण का निर्माण करने और नई प्रौद्योगिकी एवं प्रबंधन परंपराओं का समावेश करने के उद्देश्य से हाल में की गई पहल का प्रभाव है। वर्ष 2005-06 के बजट वक्तव्य में यह उल्लेख किया गया है कि आटोमोबाइल सॉफ्टवेयर, दूरसंचार तथा इलेक्ट्रॉनिक क्षेत्र को प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से फायदा पहुंचा है और वे विश्व की उत्पादन श्रृंखला में शामिल हो गए हैं। अन्य क्षेत्र जैसे खनन, व्यापार और पेंशन के क्षेत्र में भी ऐसे अवसर उपलब्ध है।

2.184 अमरीकी डिपॉजिटरी रसीद/ग्लोबल डिपॉजिटरी रसीद जारी करके संविभाग निवेश का फ्लो एक वर्ष पहले की तुलना में अप्रैल-नवंबर 2005 के दौरान काफी तीव्र रहा है (सारणी 2.61)। अप्रैल-मई 2005 में मंद रहने के बाद, विदेशी संस्थागत निवेशकों ने बाद के महीनों में भारतीय स्टॉक बाजार में बड़ी-बड़ी खरीद की हैं (चार्ट II/23)। अप्रैल-दिसंबर 2005 के दौरान निवल संचयी विदेशी संस्थागत निवेश 5.1 बिलियन अमरीकी डालर था (पिछले वर्ष इसी अवधि में 4.7 बिलियन अमरीकी डालर था)। सेबी के साथ विदेशी संस्थागत निवेशकों के पंजीकरण की संख्या निरंतर बढ़ रही है और फरवरी के अंत तक यह संख्या बढ़कर

सारणी 2.61 : श्रेणी के अनुसार विदेशी निवेश प्रवाह

(मिलि. अम. डॉलर)

मद			अप्रैल-नवंबर	
	2004-05पी	2003-04आर	2005पी	2004
1	2	3	4	5
अ. प्रत्यक्ष निवेश (I+II+III)	**5,653**	**4,322**	**4,377**	**3,454**
I. इक्विटी (क+ख+ग+घ+ङ)	3,778	2,229	3,489	2,534
क.सरकारी (एस आइ ए/एफ आइ पी बी)	1,062	928	890	774
ख.भा. रि. बैंक	1,259	534	1,206	847
ग. एन आर आइ	–	–	–	–
घ. शेयर प्राप्ति*	930	735	1,253	649
ङ. अनिगमित निकायों की इक्विटी पूंजी	527	32	140	264
II. पुनर्निवेशित आय $	1,508	1,460	738	754
III.अन्य पूंजी $$	367	633	150	166
आ. संविभाग निवेश (क+ख+ग)	**9,313**	**11,377**	**5,771**	**4,519**
क.जी डी आर/ ए डी आर #	613	459	1,715	394
ख.एफ आइ आइ **	8,684	10,918	4,042	4,122
ग. अपतटीय निधि और अन्य	16	–	14	3
ग. कुल (अ+आ)	**14,966**	**15,699**	**10,148**	**7,973**

* अनिवासी द्वारा फेमा, 1999 की धारा 8 के अंतर्गत भारतीय कंपनी के शेयरों की प्राप्ति से संबंधित है। ऐसी प्राप्ति का डाटा जनवरी 1996 से विदेशी प्रत्यक्ष निवेश के भाग के रूप में शामिल किया गया है।

$ 2004-05 और 2005-06 के डाटा का अनुमान पिछले दो वर्षों के औसत के रूप में निकाला गया है।

$$ डाटा विदेशी प्रत्यक्ष निवेश संस्थाओं के अंतर - कंपनी ऋण लेनदेन से संबंधित है।

भारतीय कंपनियों द्वारा जी डी आर और ए डी आर के माध्यम से जुटाई गई राशि है।

** एफ आइ आइ के नए निधि आगम हैं।

सं : संशोधित अ : अनंतिम

चार्ट II.23: विदेशी संस्थागत निवेशकों द्वारा निवल अंतर्वाह/बहिर्वाह

चार्ट II.24: बकाया एन आर आइ जमाराशि

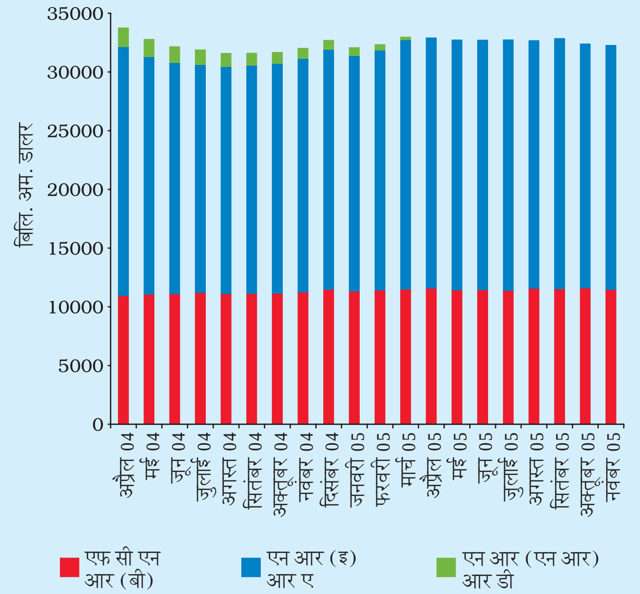

861 हो गई है (31 मार्च, 2005 में यह संख्या 685 थीं)। विदेशों में भारत उन्मुख निधियों की शृंखला जारी करने से यह संभावना है कि आनेवाले समय में विदेशी संस्थागत निवेशकों का इनफ्लो अत्यधिक तेज रहेगा।

2.185 अब तक 2005-06 (नवंबर 3005 तक) के दौरान अप्रैल-नवंबर 2005 के दौरान यहां से भजे गए धन की तुलना में अनिवासी भारतीयों द्वारा भेजा गया धन काफी संतुलित रहा है (सारणी 2.62 और चार्ट II.24)।

2.186 चालू वित्तीय वर्ष की पहली तिमाही के दौरान बाह्य वाणिज्यिक उधार की स्थिति स्थिर रही है। बाद के महीनों के लिए अनुमोदित आंकड़े बाह्य वणिज्यिक उधार की बढ़ती भूख को दर्शाते हैं (सारणी 2.63) आटोमैटिक मार्ग के अंतर्गत, कंपनियां ने बाह्य वाणिज्यिक उधार की ओर रुख किया है, खास तौर से पूंजीगत माल के आयात परियोजना वित्तपोषण पूंजीगत निवेश/संयंत्रों का आधुनिकीकरण करने और गतिविधियों को विस्तार देने के लिए जिसे क्षमता और निवेश में विस्तार का संकेत माना जा सकता है। अनुमोदन मार्ग के अंतर्गत,ईसीबी अनुमोदन प्रथमतया वित्तीय संस्थाओं (निर्यातकों को उधार देने के प्रयोजन से), विद्युत वित्त निगम (विद्युत परियोजना हेतु) और बैंकों (जिन्होंने इस्पात/वस्त्रोद्योग पुनर्संरचना पैकेज में हिस्सा लिया है) को प्रदान किया गया है।

2.187 विदेशों में भारतीय कंपनियों के प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को अत्यधिक महत्व मिल रहा है क्योंकि उन्होंने राष्ट्रीय सीमा से बाहर विस्तार के नए अवसर खोजना शुरू किया है जहां उन्हें उस क्षेत्र में स्पर्धा का लाभ मिल सके। बाजार तक पहुंच, प्राकृतिक संसाधन, वितरण नेटवर्क और विदेशी प्रौद्योगिकी कुछ ऐसे कारक हैं जिन्होंने अंतरराष्ट्रीय व्यवसाय भागीदारों के साथ भारतीय कंपनियों द्वारा रणनीति संबंधी गठबंधन के निर्माण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाया है। विलय और अधिग्रहण, और संयुक्त उद्यम मार्ग ऐसे हैं जो भारतीय कंपनियों द्वारा प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए आम तौर से अपनाए जाने वाले तरीके हैं। जिन क्षेत्रों का बाह्य प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के लिए प्राथमिकता दी जाती है वे हैं-सूचना प्रौद्योगिकी, इस्पात, दूरसंचार, तेल की खोज, विद्युत और फार्मास्युटिकल।

सारणी 2.62 : एन आर आइ जमाराशि योजना के अंतर्गत अंतर्वाह

(मिलि. अम. डॉलर)

योजना	अप्रैल-मार्च		अप्रैल-नवंबर	
	2004-05	2003-04	2004-05	2005-06पी
1	2	3	4	5
1. एफ सी एन आर (बी)	492	762	235	-23
2. एन आर (इ) आर ए	84	4,695	-693	271
3. एन आर (एन आर) आर डी @	-1,538	-1,816	-850	–
कुल	**-962**	**3,641**	**-1,308**	**248**

@ 1 अप्रैल 2002 से समाप्त।
पी : अनंतिम

सारणी 2.63 : बाहरी वाणिज्यिक उधार अनुमोदन

(मिलि. अम. डॉलर)

माह	स्वचलित मार्ग	अनुमोदित मार्ग	कुल
1	2	3	4
अप्रैल 2005	504	40	544
मई 2005	722	-	722
जून 2005	1,066	51	1,117
जुलाई 2005	609	-	609
अगस्त 2005	1,102	2	1,104
सितंबर 2005	2,035	512	2,547
अक्तूबर 2005	600	11	611
नवंबर 2005	951	16	967
कुल	**7,590**	**631**	**8,221**

विदेशी मुद्रा भंडार

2.188 भारत का विदशी मुद्रा भंडार, जो विदेशी करेंसी आस्तियों, स्वर्ण, विशेष आहरण अधिकार और निधि में आरक्षित खेप स्थिति (आरटीपी) पर आधारित है, 24 फरवरी, 2006 को 141.59 बिलियन अमरीकी डालर था (चार्टOO.25)। वर्ष 2005-06 की तीसरी तिमाही में अदृश्य खाते का अधिशेष और निवल पूंजी प्रवाह, व्यापार घाटे का वित्तपोषण करने के लिए पर्याप्त थे। इस तिमाही में भारत के विदेशी मुद्रा भंडार में 4.3 बिलियन अमरीकी डालर की कमी हुई। समग्र रूप से, 24 फरवरी 2006 तक चालू वित्तीय वर्ष में विदेशी मुद्रा भंडार में 0.7 बिलियन अमरीकी डालर की गिरावट हुई है जबकि इसकी तुलना में 2004-05 की इसी अवधि में 22.7 बिलियन अमरीकी डालर की वृद्धि हुई थी। भंडार में कमी का मुख्य कारण 29 दिसंबर, 2005 को इंडिया मिलेनियम डिपॉजिट का शोधन था।

2.189 भारत का सितंबर 2005 के अंत में कुल बाह्य ऋण 124.3 बिलियन अमरीकी डालर था जिसमें पिछली तिमाही में 2.2 बिलियन अमरीकी डालर की वृद्धि हुई थी (सारणी 2.64)। यह वृद्धि दर्शाती है कि बाह्य वाणिज्यिक उधार और निर्यात ऋण का अधिक इस्तेमाल किया गया है। अल्पकालिक ऋण भी बढ़े हैं क्योंकि अधिक आयात का वित्तपोषण करने के लिए व्यापार ऋण में वृद्धि हुई है। सितंबर 2005 के अंत में भारत के बाह्य ऋण के करेंसी कंपोजीशन में अमरीकी डालर हावी रहा है (चार्ट II.26)। इन वर्षों में बाह्य ऋण संकेतकों में प्रत्यक्ष सुधार हुआ है जो भारत के बाह्य ऋण लेने की बढ़ती हुई क्षमता को दर्शाते हैं। हालांकि, 2005-06 की दूसरी तिमाही में कुल ऋण की तुलना में अल्पकालिक ऋण के अनुपात और भंडार की तुलना में अल्पकालिक ऋण के अनुपात में वृद्धि हुई है, फिर भी वे काफी संतुलित रहे हैं (सारणी 2.65)। भारत का विदेशी मुद्रा भंडार, बाह्य ऋण से 18.7 बिलियन अमरीकी डालर अधिक था जो सितंबर 2005 के अंत में बाह्य ऋण के स्टॉक का 115.1 प्रतिशत तक को कवर कर सकता है। कुल बाह्य ऋण में रियायती ऋण का हिस्सा निरंतर कम होता जा रहा है जो यह दर्शाता है कि भारत के बाह्य ऋण स्टॉक में गैर रियायती निजी ऋण में धीरे-धीरे वृद्धि हो रही है। जो भी हो, रियायती ऋण कुल बाह्य ऋण का महत्वपूर्ण हिस्सा है, खास तौर से अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार।

चार्ट II.25: विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि

2.190 तेल के आयात में तीव्र वृद्धि होते हुए भी भुगतान संतुलन की स्थिति सहज रही है। वणिक निर्यात की वृद्धि को सेवाओं के निर्यात और तीव्र धन प्रेषण से समर्थन प्राप्त हुआ है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के इनफ्लो में महत्वपूर्ण वृद्धि दर्ज की गई है जो बेहतर विकास संभावनाओं तथा महत्वपूर्ण क्षेत्रों जैसे बुनियादी सुविधा क्षेत्र में अधिक प्रत्यक्ष विदेशी निवेश आकर्षित करने के लिए सतत आधार पर उदारीकृत उपाय की

सारणी 2.64 : भारत का बाहरी ऋण

मद	जून 2005 के अंत में		सितंबर 2005 के अंत में		तिमाही में अंतर	
	राशि (मिलि. अम. डॉलर)	कुल में प्रतिशत	राशि (मिलि. अम. डॉलर)	कुल में प्रतिशत	मिलि. अम. डॉलर	(प्रतिशत)
1	2	3	4	5	6	7
1. बहुपक्षीय	31,289	25.6	31,401	25.3	112	0.4
2. द्विपक्षीय	16,293	13.3	15,883	12.8	-410	-2.5
3. आइ एम एफ	0	0.0	0	0.0	0	0
4. निर्यात ऋण	5,212	4.3	5,290	4.2	78	1.5
5. वाणिज्यिक उधार #	27,173	22.2	28,527	22.9	1,354	5.0
6. एन आर आइ जमाराशि (दीर्घावधि)	32,730	26.8	32,802	26.4	72	0.2
7. रुपया ऋण	2,146	1.8	2,120	1.7	-26	-1.2
8. दीर्घावधि ऋण (1 से 7)	1,14,843	94.0	1,16,023	93.3	1,180	1.0
9. अल्पावधि ऋण	7,275	6.0	8,303	6.7	1,028	14.1
10. कुल ऋण (8+9)	**1,22,118**	**100.0**	**1,24,326**	**100.0**	**2,208**	**1.8**

100 प्रतिशत एफ आइ आइ ऋण निधि द्वारा निवल निवेश शामिल है।
स्रोत : भारिबैं. और वित्त मंत्रालय, भारत सरकार।

चार्ट II.26: बाहरी ऋण की मुद्रा संरचना सितंबर 2005 के अंत की स्थिति

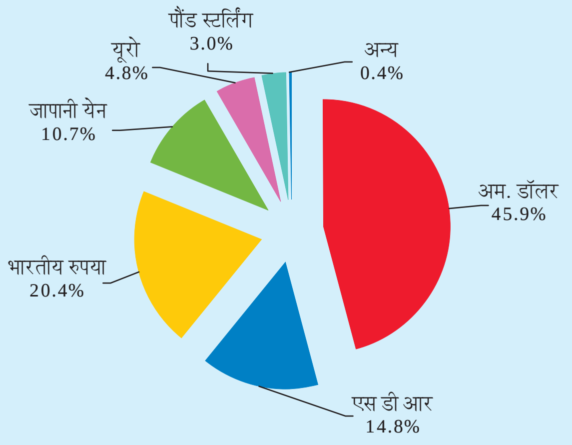

प्रतिक्रिया स्वरूप है। हाल के महीनों में संविभाग इनफ्लो बेहतर हुए हैं। समग्रतः भारत में सकारात्मक संवेदनशीलता के मद्देनजर पूंजी का फ्लो तीव्र रहने की उम्मीद है। हाल के वर्षों में भारत के विदेशी मुद्रा भंडार के प्रबंधन के लिए अपनाया गया समग्र दृष्टिकोण, भुगतान संतुलन के बदलते कम्पोजीशन को दर्शाता है, और विभिन्न प्रकार के फ्लो तथा अन्य अपेक्षाओं से जुड़े 'चलनिधि जोखिम' के प्रबंधन की नीति न्यायसंगत तरीके से कई निशानदेही किए जाने वाले कारकों एवं अन्य आकस्मिकताओं के आधार पर बनाई गई है। इन कारकों को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान में भारत का विदेशी मुद्रा भंडार पर्याप्त है और विकास दर, अर्थव्यवस्था में बाह्य क्षेत्र के हिस्से तथा जोखिम समायोजित पूंजी प्रवाहों के आकार के अनुरूप है।

2.191 हालांकि हाल के महीनों में निर्यात और आयात दोनों की गति थोड़ी धीमी रही है, किंतु चालू राजकोषीय वर्ष के दौरान बाह्य क्षेत्र की जो समुत्थान-शक्ति थी, उससे परिलक्षित होता है कि विदेशी मुद्रा भंडार से कोई सहायता लिए बिना चालू खाते के रिकॉर्ड स्तर के घाटे का वित्तपोषण सामान्य पूंजी प्रवाह से किया गया। चालू खाते में उच्चस्तरीय घाटे की स्थिति, वस्तुतः घरेलू आर्थिक गतिविधियों की तीव्र गति की तस्वीर प्रस्तुत करती है। चालू खाते के एक और महत्वपूर्ण पहलू गैर सॉफ्टवेयर सेवाओं के निर्यात में तीव्रता आना है जिसमें आंशिक योगदान कारोबारी एवं व्यावसायिक सेवाओं के निर्यात में निहित ऊर्जा का है। तथापि, इसकी महत्वपूर्ण वृद्धि में विभिन्न श्रेणियों का योगदान है जिनके लिए विशिष्ट सेवा शीर्ष ज्ञात नहीं हैं। 2005-06 की पहली छमाही में भुगतान संतुलन की गतिविधियां दर्शाती हैं कि उच्चस्तरीय व्यापार घाटे के बावजूद बाह्य वित्तपोषण को किसी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा है। चालू वित्तीय वर्ष की दूसरी छमाही में पूंजी इनफ्लो की जो गति रही है, वह विशेष रूप से यह दर्शाती है कि विदेशी संस्थागत निवेश के इनफ्लो पुनः बहाल हुए हैं और प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के इनफ्लो, एडीआर/जीडीआर तथा एफसीसीबी की गति बनी रही है, बड़े व्यापार घाटे के वित्तपोषण से कोई समस्या पैदा होने की संभावना नहीं है।

सारणी 2.65 : ऋण संकेतक

(प्रतिशत)

संकेतक	मार्च 2005	सितंबर 2005
1	2	3
रियायती ऋण/ कुल ऋण	33.3	31.6
अल्पावधि ऋण/ कुल ऋण	6.1	6.7
अल्पावधि ऋण/ आरक्षित ऋण	5.3	5.8
आरक्षित ऋण / कुल ऋण	114.8	115.1

स्रोत: भारिबैं. और वित्त मंत्रालय, भारत सरकार।

VI. निष्कर्ष

2.192 मौसम के प्रारंभ में दक्षिण-पश्चिम मानसून की खराब स्थिति से पैदा होने वाले जोखिमों तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तेल की कीमतों की निरंतर अनिश्चितता के होते हुए भी, भारतीय अर्थव्यवस्था ने 2005-06 के दौरान अब तक प्रभावशाली वृद्धि दर बनाए रखी है। 30 अगस्त, 2005 को 70.8 अमरीकी डालर प्रति बैरल की ऐतिहासिक ऊंचाई पर पहुंचने के बाद अंतरराष्ट्रीय तेल की कीमतें थोड़ी कम हुईं किंतु अत्यधिक अस्थिर बनी रही हैं। इस समय आम सहमति यह बन रही है कि तेल की कीमतें ढलते हुए स्तर पर बनी रहेंगी। अतः विश्व में विकास में सुधार के प्रति जोखिम तीन दशाओं से पैदा होते हैं जैसे- समष्टिगत आर्थिक असंतुलनों की अनवाइंडिंग, परिणामी करेंसी समायोजन तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तेल की भावी कीमतों की स्थिति। किंतु भारत में विकास की एक संतोषजनक विशेषता यह है कि घरेलू कारक विश्व कारकों पर हावी हैं। इसके अलावा, भारत सहित पूरे विश्व में विकास मुद्रास्फीति के तालमेल में महत्वपूर्ण सुधार इसलिए हुआ है कि घरेलू स्तर पर अत्यधिक स्पर्धा तथा अर्थव्यवस्थाओं के बढ़ते एकीकरण के फलस्वरूप उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई है।

2.193 भारतीय रिज़र्व बैंक के वार्षिक नीतिगत वक्तव्य अप्रैल, 2005 में यह अनुमान लगाया गया है कि वर्ष 2005-06 में वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि लगभग 7.0 प्रतिशत होगी, यह भी माना गया है कि मानसून सामान्य होगी और उद्योग तथा सेवा क्षेत्र में विकास की गति बनी रहेगी। उसके बाद, हालांकि समष्टिगत आर्थिक प्रवृत्तियों ने और भी आशावादी परिदृश्य प्रस्तुत किया है जिसका आधार है अपेक्षा से अधिक फसल का उत्पादन, उच्च कंपनी लाभ, तीव्र व्यावसायिक विश्वास, सौहार्दपूर्ण निवेश माहौल, खाद्येतर ऋण के तालमेल में स्थिरता, संतुलित मुदास्फीति, व्यापार में उत्थान,

आने वाले पर्यटकों की संख्या में वृद्धि, बंदरगाहों पर बढ़ता कार्गो, यातायात किराए से उच्च राजस्व आय (रेलव से), रेलवे और हवाई यातायात में यात्रियों की बढ़ती संख्या, सेल्यूलर ग्राहकों के आधार में वृद्धि, ब्रॉडबैंड कनेक्शन में वृद्धि, कम ब्याज दर द्वारा आवास ऋण की मांग में बढ़ोतरी तथा बीपीओ एवं सूचना प्रौद्यागिकी से संबंधित सेवाओं के निर्यात में वृद्धि आदि। ये कारक एकीकृत हो गए और 2005-06 के वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि का अनुमान ऊर्ध्वमुखी संशोधन के साथ अक्तूबर में 7.0-7.5 प्रतिशत रहा। तथापि, कृषि उत्पादन में वृद्धि और औद्योगिक एवं सेवा क्षेत्र में संतुलित गति के आधार पर किए मूल्यांकन से पता चलता है कि 2005-06 की जीडीपी वृद्धि को संशोधित किया गया और वर्ष 2005-06 की तीसरी तिमाही के वार्षिक नीतिगत वक्तव्य में जीडीपी वृद्धि दरको 7.5 -8.0 प्रतिशत के बीच रहने का अनुमान लगाया गया है। केंद्रीय सांख्यिकी संगठन (सीएसओ) ने वर्ष 2005-06 के लिए पूर्व अनुमति में वास्तविक जीडीपी वृद्धि को 8.1 प्रतिशत बताया है जो रिज़र्व बैंक के 7.5-8.0 प्रतिशत के अनुसार थोड़ा ही अधिक है।

2.194 वर्ष 2005-06 के दौरान कृषि क्षेत्र में सुधार तथा कृषि से इतर क्षेत्र में हुई प्रगति ने विकास दर की गति को मजबूती से पकड़ रखा है। मौसम के दौरान, दक्षिण-पश्चिम मानसून की अस्थायी इठखेलियों से हुई बारिश की मात्रा यहां तक कि आकाश से जो बारिश का वितरण हुआ है उससे हुई भरपाई से अधिक थी, और परिणामस्वरुप वर्ष 2005-06 में खरीफ फसल का उत्पादन पिछले वर्ष के 103.32 मिलियन टन के स्तर को पार कर जाने की संभावना है जो 108.15 मिलियन टन तक पहुंचने की उम्मीद है। वर्ष 2005-06 के दौरान औद्योगिक गतिविधियां और भी पुख्ता हुई हैं जिसे विनिर्माण क्षेत्र की निरंतर तेजी से सहायता मिली है। इसके अलावा, मूलभूत तथा पूंजीगत माल वाले क्षेत्रों ने लगातार वृद्धि दर्ज की है। दो अंकों में निर्यात में तीव्र वृद्धि, भारत की अंतरराष्ट्रीय बाजार में स्पर्धा करने की स्थिति तथा विश्व अर्थव्यवस्था में भारतीय निर्यात की बढ़ती मांग को दर्शाती है। पूंजीगत माल के उत्पादन में तीव्र वृद्धि, साथ ही पूंजीगत माल के आयात में वृद्धि औद्योगिक क्षेत्र में क्षमता निर्माण को प्रदर्शित करती है। उपभोक्ता वस्तुओं में भी प्रभावी वृद्धि हुई है जो गैर टिकाऊ वस्तु क्षेत्र के योगदान से है। इसी प्रकार की अवधारणा विभिन्न कारोबारी अनुमान सर्वेक्षण जैसे राष्ट्रीय व्यावहारिक अर्थशास्त्र अनुसंधान परिषद के कारोबारी विश्वसनीय सूचकांक, एफआइसीसीआइ के कारोबारी विश्वसनीयता सूचकांक तथा भारतीय रिज़र्व बैंक के औद्योगिक परिदृश्य सर्वेक्षण में दिखाई देती है जो आशावादी दृष्टिकोण रखते हैं। विकास के समक्ष जो बाध्यता है उस पर सावधानीपूर्वक निगाह रखने की जरूरत है, जैसे व्यापार घाटे में वृद्धि तथा बुनियादी सुविधाओं संबंधी बाध्यताएं।

2.195 अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतों में अत्यधिक वृद्धि होने के बावजूद सुर्खियों में आने वाली मुद्रास्फीति तथा सामान्य मुद्रास्फीति वर्ष 2005-06 के दौरान काफी संतुलित बनी रही। घरेलू मुद्रास्फीति पर आयातित मूल्य के दबाव के कम करने के लिए 2004 के मध्य से राजकोषीय तथा मौद्रिक उपाय किए गए तथा मुद्रास्फीति के अनुमान को स्थिर रखने में अब तक वित्तीय वर्ष के दौरान मुद्रास्फीति को अपेक्षित ट्रेजेक्टरी में रखने में सामान्यतया सफलता मिली है।

2.196 उभरते हुए बाजारों में वित्तपोषण की स्थिति अनुकूल की रही है जो यह दर्शाती है कि आर्थिक मूलभूत सिद्धांत बेहतर हुए हैं, दीर्घकालिक निवेशकों की मौजूदगी बढ़ी है तथा अर्जन के लिए निरंतर प्रयास जारी हैं। वित्तीय बाजार, यद्यपि तेल की कीमतों में अनिश्चितता के माहौल में कार्य कर रहे हैं, विश्व में ब्याज दर चक्र ऊर्ध्वमुखी होने तथा यूरोपियन संघ में राजनीतिक उहापोह की स्थिति रहने से भी काफी हद तक स्थिर रहे हैं। भारतीय स्टाक बाजार का प्रमुख अर्थव्यवस्थाओं के स्टॉक में उल्लेखनीय निष्पादन रहा है। चलनिधि की पर्याप्त आपूर्ति से ब्याज दर वातावरण सौम्य बना रहा है, हालांकि ऋण लेने की स्थिति मजबूत तथा व्यापक बनी रही है। विदेशी मुद्रा बाजार संयमित रहा, चीन के पुनर्मूल्यांकन के चलते विनिमय दर पर संतुलित रूप से उर्ध्वमुखी बने रहने का दबाव है। सरकारी प्रतिभूति बाजार में अप्रैल 2005 में आय कम रही, जो कच्चे तेल की ऊंची कीमतों और रिवर्स रेपो दर में वृद्धि का होना दर्शाती है, हालांकि अब यह रेंज के हिसाब से है। 2005-06 के दौरान विदेशी मुद्रा बाजार सामान्य रूप से संतुलित बना रहा। ईक्विटी बाजार के प्राइमरी बाजार में तेजी आई, साथ ही निर्गमों की संख्या में तथा द्वितीयक बाजार में तेजी तथा सुदृढ़ समष्टिगत आर्थिक मूल सिद्धांत के होते हुए अधिक संसाधन जुटाए जा सके। द्वितीयक बाजार ने एक दौड़ पैदा कर दी जिसने मुंबई स्टाक एक्सचेंज के सेंसेक्स को 28 फरवरी 23006 को नई ऊंचाइयों पर 10,370.24 अंक पर पहुंचा दिया।

2.197 वर्ष 2005-06 के संशोधित अनुमान में घाटे के सभी प्रमुख संकेतक बजट लक्ष्य से कम पाए गए, जिसका मुख्य कारण था व्यय को नियंत्रित रखना, विशेष रूप से गैर योजना कंपोनेंट में। बेहतर कर राजस्व तथा खर्च पर नियंत्रण विशेष रूप से सब्सिडी के संबंध में, के आधार पर वर्ष 2006-07 के बजट प्राक्कलन में जीडीपी की तुलना में, घाटे के सभी प्रमुख संकेतकों में गिरावट दर्शाई गई है। संघीय बजट 2006-07 में विवेकपूर्ण कर नीति अपनाए जाने का प्रस्ताव है जो संतुलित कर संरचना पर आधारित होगा तथा दरें उपयुक्त होंगी और कम से कम छूट होगी और एक बड़े करदाता समूह को कवर किया जाएगा। वह कर वसूली में वृद्धि लाने के लिए भी कटिबद्ध है तथा कर / जीडीपी अनुपात में सुधार लाया जाएगा, जिसका उद्देश्य अन्य बातों के साथ-साथ कर राजस्व के बकायों को समाप्त करना होगा तथा ऐसे स्टॉक का और संचय नहीं होने दिया जाएगा।

2.198 चालू राजकोषीय वर्ष के दौरान बाह्य क्षेत्र की सुदृढ़ता से यह परिलक्षित होता है कि चालू खाते के उच्चतम स्तर के घाटे का वित्तपोषण सामान्य पूंजी प्रवाह से किया गया और विदेशी मुद्रा भंडार की कोई सहायता नहीं ली गई। सॉफ्टवेयर निर्यात में तेजी बनी रही जिससे संरक्षणवादियों के दबाव का भय पैदा हो गया है। विश्व में धन प्रेषण प्राप्त करने में भारत की स्थिति अग्रणी रही है क्योंकि आवक धन प्रेषण में निरंतर वृद्धि हुई है। पूरे वर्ष में देखें तो, जहां अदृश्य अधिशेष से बढ़े हुए व्यापार घाटे के एक बड़े भाग का वित्तपोषण किया जा सकता है, वहीं चालू खातों का घाटा स्वीकार्य सीमा में रहने की उम्मीद है जिसका वित्तपोषण सामान्य पूंजी प्रवाहों से किया जाता रहेगा। यद्यपि अंतरराष्ट्रीय चलनिधि स्थिति तथा निवेशकों द्वारा संविभाग के विविधीकरण ने भी वर्ष के दौरान विदेशी निवेश इनफ्लों को बढ़ावा दिया है, वहीं निवेशकों का भारतीय अर्थव्यवस्था के प्रति विश्वास इस स्थिति को आगे बढ़ाए हुए है। विदेशों में इंडिया सेंट्रिक निधियों की शृंखला जारी की गई जिससे यह परिलक्षित होता है कि विदेशी संस्थागत निवेशकों का इनफ्लो आने वाले समय में काफी तीव्र रहने की संभावना है। इधर के वर्षों में बाह्य ऋण में प्रत्यक्ष सुधार हुआ है, जो यह दर्शाता है कि भारत का बाह्य ऋण लगातार बढ़ रहा है। वर्ष की पहली छमाही में पूंजी इनफ्लो में तेजी मुख्यतया प्रत्यक्ष विदेशी निवेश, बाह्य वाणिज्यिक उधार बैंकिंग पूंजी तथा विदेशी संस्थागत निवेश से हुई है, हालांकि औद्योगिक राष्ट्रों में ब्याज दर चक्र में बदलाव आया है।

2.199 इस पृष्ठभूमि में, अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में किसी प्रतिकूल एवं अप्रत्याशित घटना को छोड़कर तथा मुद्रास्फीति के परिदृश्य के साथ-साथ अर्थव्यवस्था के वर्तमान मूल्यांकन को ध्यान में रखते हुए, वर्ष 2005-06 की शेष अवधि के लिए मौद्रिक नीति का समग्र रुझान मुद्रास्फीति की प्रत्याशाओं को नियंत्रित करते हुए कीमतों की स्थिरता पर जोर देना, अर्थव्यवस्था में निर्यात तथा निवेश की मांग को समर्थन प्रदान करना और प्रेरक ब्याज दर वातावरण सुनिश्चित करते हुए विकास की गति बनाए रखना, अर्थव्यवस्था की वास्तविक ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपयुक्त मात्रा में चलनिधि उपलब्ध करवाना जिसमें उसकी गुणवत्ता पर अधिक ध्यान दिया जाएगा, तथा उत्पन्न परिस्थितियों के अनुरूप कार्रवाई करने पर विचार करना होगा।

III केंद्रीय बैंकिंग का कार्यात्मक विकास

3.1 केंद्रीय बैंक, जिनकी शुरुआत ऐसी संस्थाओं की आवश्यकता को देखते हुए की गई जो सरकार एवं बैंकों के लिए अंतिम ऋणदाता का कार्य कर सके, को बाद में मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य प्रबंध का उत्तरदायित्व सौंपा गया। विशिष्टतया आजकल केंद्रीय बैंकों की स्थापना ऐसे निकायों के तौर पर की जाती है जो वित्तीय संस्थानों का नियमन, निम्न मुद्रा स्फीति दर एवं स्थायी विदेशी मुद्रा विनिमय दर सुनिश्चित करते हैं तथा अर्थव्यवस्था के विकास को प्रोत्साहन देते हैं। उन्होंने कारोबार में उतार के दौरान अर्थव्यवस्थाओं को उससे निपटने में सहायता की, जमाकर्त्ताओं को विश्वास दिलाया एवं बैंकिंग संकट के निवारण में सहायता की; उन्होंने सूचना की कमियों के अंतर को भी पाटा, नीति अभिमुख अनुसंधान किया, डाटा बेस का निर्माण किया एवं मौद्रिकनीति तथा समग्र अर्थव्यवस्था से संबंधित आँकड़ों एवं सूचना का प्रसार किया। वास्तव में केंद्रीय बैंकों ने अनेक प्रकार के कार्य संभाल लिए हैं तथा वे बहु-कार्यकारी संस्थाएं बन गए हैं जो मौद्रिक नीति का संचालन करते हैं, बैंकिंग क्षेत्र के नियमन एवं पर्यवेक्षण तथा भुगतान प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं (जाधव, 2003)।

3.2 इस अध्याय की संरचना इस प्रकार है : खंड I में केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धांत एवं व्यवहार का विकास का वर्णन किया गया है। खंड II - केंद्रीय बैंक के मुख्य कार्यों यथा मूल्य स्थायित्व एवं विदेशी मुद्रा विनिमय दर के प्रबंध सहित मौद्रिक नीति कार्य, बैंकों का बैंकर, सरकार का बैंकर एवं वित्तीय स्थायित्व का प्रोत्साहन आदि के विकास का वर्णन करने का प्रयास करता है। इसमें विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों द्वारा संपन्न विकास कार्यों का सविस्तार वर्णन भी किया गया है। खंड III केंद्रीय बैंकिंग क्षेत्र के समसामयिक विषयों जैसे केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता, उत्तरदायित्व, पारदर्शिता एवं विश्वसनीयता पर प्रकाश डालता है। खंड IV अध्याय का परिसमापन करता है।

I. केंद्रीय बैंकिंग का विकास :

3.3 एक केंद्रीय बैंक के अस्तित्व की संगतता एवं आवश्यकता को भली व्यापक स्तर पर स्वीकार किया जाता है। तथापि दशकों से इस विषय पर पर्याप्त चर्चा हुई है कि क्या केंद्रीय बैंकों की स्थापना आवश्यक है। एक वैकल्पिक व्यवस्था के रूप में एक मुक्त बैंकिंग प्रणाली की परिकल्पना की गई जिसमें ऐसी व्यवस्था की ओर संकेत किया गया जिसमें केंद्रीय बैंक को नोट छापने के अनन्य अधिकार का अभाव होता है तथा सभी बैंक प्रति देय कागजी नोट छापने को समान रूप से स्वतंत्र होते हैं। इस व्यवस्था के ऐतिहासिक उदाहरणों में स्काटलैंड (1716 - 1844) तथा कनाडा (1817 - 1914) शामिल हैं जहाँ पण्य आधारित मुद्रा वाली मुक्त बैंकिंग का प्रचलन था। गृह युद्ध से पहले अमरीका में लगभग मुक्त बैंकिंग जैसी परिस्थितियां विद्यमान थीं। आस्ट्रेलिया, चीन, कोलंबिया, स्विटजरलैंड, फ्रांस, स्वीडन, स्पेन तथा आयरलैंड आदि कुछ अन्य देश है जहाँ उन्नीसवीं शताब्दी में अंशों में मुक्त व्यापार का प्रचलन था। केपी (1997) का तर्क हैं कि बैंकिंग प्रणाली की उपस्थिति में ही एक केंद्रीय बैंक की आवश्यकता महसूस की जाती है । उसका मत है कि बैंकिंग प्रणाली में आने वाली वास्तविक या संभावित समस्याओं के निपटान के लिए ही अधिकांश केंद्रीय बैंकों का विकास हुआ।

3.4 प्रारंभ में केंद्रीय बैंकिंग व्यवहार अनेक अनौपचारिक सिद्धांतों, परंपराओं एवं स्वयं आरोपित आचार-संहिता पर आधारित था। इनको बाद में सिद्धांतों के रूप में मान्यता दी गई तथा कानूनों के रूप में कूटबद्ध किया गया जो आज कल की केंद्रीय बैंकिंग संस्थाओं पर लागू होते हैं। अधिकांश देशों में परिवर्तनशील वित्तीय संरचनाओं से तालमेल बिठाने के लिए समय-समय पर इनमें संशोधन किया गया । केंद्रीय बैंकिंग व्यवहार केंद्रीय बैंकिंग परिचालन के आधारभूत नियमों एवं विवेकाधिकार पर आधारित है। इस प्रकार केंद्रीय बैंकिंग सिद्धांत समय के साथ उभरती हुई समस्याओं पर आधारित हैं। बदले में सिद्धांतों ने भी एक सर्वश्रेष्ठ व्यवहार समुच्चय के विकास को प्रभावित किया है जिन्होनें केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता की संरक्षा, राजनैतिक दबाव से अपना बचाव एवं सामान्यजन के प्रति अपने उत्तरदायित्व की सुनिश्चितता आदि से संबंधित दुविधाओं का समाधान किया है। सिद्धांत एवं व्यवहार का यह आपसी लेनदेन ही उनके संगामी विकास का आधार है।

3.5 प्रथम केंद्रीय बैंक, स्वेरिजिज रिक्सबैंक की स्थापना 1668 में हुई तथा द्वितीय केंद्रीय बैंक, बैंक आफ इंग्लैंड की स्थापना 1694 में रायल चार्टर के अधीन हुई। अधिकांश बड़े यूरोपीय केंद्रीय बैंक उन्नीसवीं शताब्दी में स्थापित किए गए जबकि जर्मन बुंडेस बैंक तथा अमेरिकी फ़ेडरल रिज़र्व प्रणाली की स्थापना बीसवीं शताब्दी में हुई। केपी (1997) ने चिह्नित किया है कि बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में केवल अठारह केंद्रीय बैंक थे। डे काक (1974) के अनुसार प्रारंभिक केंद्रीय बैंकों की स्थापना प्रमुखतया वाणिज्य के वित्तपोषण, वित्तीय प्रणाली के विकास

को प्रोत्साहन एवं नोट निर्गम में समानता लाने के लिए की गई थी। प्रारंभ में बैंक आफ इंग्लैंड सरकार के बैंकर एवं ऋण प्रबंधक के रूप में काम करता था। एक वाणिज्यिक बैंक के तौर पर बैंक आफ इंग्लैंड जमाराशियां स्वीकार करता तथा नोट जारी करता था। 1781 में बैंक आफ इंग्लैंड के चार्टर के नवीकरण के बाद इसका सार्वजनिक कोष के रूप में वर्णन किया गया तथा यह बैंकों का बैंक के रूप में भी कार्य करने लगा। उन्नीसवीं सदी में बैंक आफ इंग्लैंड ने अंतिम ऋणदाता की भूमिका भी अपना ली एवं कई वित्तीय संकटों के दौरान स्थिरता प्रदान की। सन् 1946 में बैंक आफ इंग्लैंड का राष्ट्रीकरण किया गया तथा वह कोष का सलाहकार, एजेंट एवं ऋण प्रबंधक की भूमिका निभा रहा है।

3.6 क्रांति काल में हुई वित्तीय उथल-पुथल के बाद फ्रांसीसी बैंकिंग प्रणाली में विश्वास पुनर्स्थापित करने के लिए सन् 1800 में बैंक डि फ्रांस की स्थापना की गई। बैंको डि पुर्तगाल की स्थापना एक सार्वजनिक लिमिटेड कंपनी के रूप में 1846 में हुई तथा यह नोट जारी करने वाला वाणिज्यिक बैंक था जिसका प्रमुख उद्देश्य अपने नोटों की परिवर्तनीयता बनाए रखना एवं अंश धारकों के लिए लाभ कमाना था (रीस 1999)।

3.7 सन् 1957 में बुंडेस बैंक अधिनियम के अधीन बुंडेस बैंक स्थापित किया गया। इसका एक पूर्ववर्ती भी था जिसका नाम रीकस बैंक था तथा जो 1876 से 1945 तक कार्यरत था। कुछ अन्य यूरोपीय देशों के विपरीत, जहाँ सत्रहवीं एवं प्रारंभिक अठारहवीं शताब्दी में केंद्रीय बैंकों की स्थापना हुई, जर्मनी में सही मायनों में केंद्रीय बैंकिंग का प्रादुर्भाव देर से हुआ क्योंकि एक स्थायी राज्य केवल सन् 1871 में अस्तित्व में आया। एक समान सिक्का, भार एवं मापन प्रणालियों की स्थापना करने की इच्छा केंद्रीय बैंक की स्थापना का एक कारण थी। बुंडेस बैंक एक संघीय बैंक था जिसने अपनी अलग-2 इकाइयों के शनैः शनैः समेकन में सहायता की। यह आशा की गई कि बुंडेस बैंक बहु प्रणाली व्यवस्था को समाप्त करेगा एवं जर्मनी मे वर्तमान नियमनों का समेकन करेगा। तदनुरूप बुंडेस बैंक ने एक पर्याप्त पारदर्शी मुद्रा व्यवस्था का सृजन किया, गत्यात्मक आर्थिक विकास में सहायक पर्याप्त आधार उपलब्ध किया एवं अलग-अलग निकायों का वित्तीय एकीकरण किया।

3.8 इतालवी बैंकिंग एवं मौद्रिक क्षेत्रों, जो 1890 दशक के प्रारंभ में ध्वस्त होने के कगार पर थे, के सुधारों के एक भाग के रूप में सन 1893 में बैंक ऑफ़ इटली की स्थापना की गई। बैंक का मूलभूत कर्त्तव्य, प्रमुखतया तुलन पत्र को स्वच्छ करके तथा पूंजी आधार के पुनर्निमाण द्वारा, विरासत में मिली समस्याओं से छुटकारा पाना था। इटालियन मुद्रा एवं ऋण प्रणाली में सुधारों का एक दूरगामी लक्ष्य एक एकसमान नियमों एवं संस्थाओं के समुच्चय का सृजन करना था जो इटली की मुद्रा को मजबूत आधार दे तथा संकटों की पुनरावृत्ति को रोके (जेलसोमिनो 1999) बैंक असफलताओं की लहर तथा अंतिम ऋणदाता की आवश्यकता ने अमरीकी फ़ेड की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया, जिससे पहले जनमत का भारी झुकाव मुक्त बैंकिंग की तरफ था।

3.9 जहां केंद्रीय बैंकिंग विकास का अनुभव अलग-अलग देशों में अलग रहा वहीं इसके कुछ सांझे लक्षण भी देखे गए : जहां-जहां समान समस्याओं के लिए केंद्रीय बैंक की स्थापना की गई वहां, यह देखा गया कि उनकी संस्था संरचना एक जैसी थी। विविधताओं के बावजूद कुछ विशिष्ट घटनाओं ने केंद्रीय बैंकों के कार्य, मुद्रा नीति के उपकरणों एवं लक्ष्यों पर विश्वव्यापी प्रभाव डाला। प्रथम विश्व युद्ध की शुरुआत में केंद्रीय बैंकों द्वारा जारी पेपर मुद्रा ने पूर्ण मूल्य धातु सिक्का मुद्रा का स्थान लिया।

3.10 नोटों के वैध मुद्रा बनने तथा उनकी स्वर्ण परिवर्तनीयता समाप्त होने से मुद्रा आपूर्ति पर केंद्रीय बैंकों का नियंत्रण बढ़ा तथा स्थायित्वकरण की नीतियों का पालन संभव हुआ। प्रथम विश्व युद्ध के बाद केंद्रीय बैंकों की भूमिका और महत्वपूर्ण बन गई। उनके वाणिज्यिक बैंकों के कारोबार के पर्यवेक्षण संबंधी भूमिका विस्तार हुआ तथा संकट की स्थिति में बैंकिंग क्षेत्र के स्थिरीकरण हेतु उनकी अंतिम ऋणदाता की भूमिका को सुदृढ़ किया गया। प्रथम विश्व युद्ध के कारण अपनी सरकारों को ऋण देने में उनके योगदान में निरंतर वृद्धि हुई। सार्वजनिक ऋण के प्रबंधक की उनकी नई भूमिका के वहन में उनको समर्थ बनाने के लिए उन्हें सरकारी प्रतिभूतियों का व्यापार करने की आज्ञा दी गई तथा उन्हें ब्याज दरों को न्यूनतम बनाने हेतु मुक्त बाज़ार नीति उपकरण विकसित करने एवं ऋण एवं मुद्रा आपूर्ति विस्तार के अधिकार दिए गए। इससे केंद्रीय बैंकों को अपने परिचालन में और विवेकाधिकार मिले। सन् 1932 से अमरीका में तथा द्वितीय विश्वयुद्ध के तुरंत बाद से जर्मनी में मुद्रा नीति के एक महत्वपूर्ण उपकरण न्यूनतम आरक्षी आवश्यकताओं में परिवर्तन की शक्तियाँ केंद्रीय बैंकों को दी गई।

3.11 ज्यों-ज्यों वित्तीय प्रणालियाँ विकसित हुईं, त्यों-त्यों नई चुनौतियों से मुकाबला करने के लिए केंद्रीय बैंकों द्वारा अपनी नीतियों का पुनर्विन्यास करने की जरुरत पड़ी। वैश्विक संकटों में, जैसे 1930 के दशक की महान मंदी, अधिकांश बैंकों के उत्तरदायित्वों में मौद्रिक स्थिरता, पूर्ण रोजगार को प्रोत्साहन एवं वृद्धि को इष्टतम करना भी शामिल थे। अतः प्रत्येक संकट के बाद केंद्रीय बैंकों की भूमिका का विस्तार हुआ।

3.12 विकसित एवं विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकिंग की उत्पत्ति में अंतर है। परिणामस्वरूप वर्तमान विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों

की भूमिका विकसित देशों की विकास यात्रा अवधि में उनके केंद्रीय बैंकों की तत्कालीन भूमिका से विशिष्ट रूप से अलग है (सेयर्स, 1961; चंदावरकर, 1996) । जहां औद्योगिक देशों में इसका उद्देश्य अंतिम ऋणदाता का अस्तित्व था वहीं विकासशील देशों जैसे भारत में केंद्रीय बैंकों की स्थापना ऐसे समय की गई जब बैंकिंग क्षेत्र अविकसित दशा में था। वास्तव में केंद्रीय बैंकों ने ही वाणिज्यि बैंक नेटवर्कों के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। अनेक विकासशील देशों में विकास समर्थक भूमिका निभाने के लिए ही केंद्रीय बैंक अस्तित्व में आए। ऐसे बैंकों ने एक फेसिलिटेटर की भूमिका निभाई। सेक्शन दो में केंद्रीय बैंकों के विकासपरक कार्यों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

3.13 भूतपूर्व विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों एवं वर्तमान संक्रमणकालीन देशों के केंद्रीय बैंकों में लक्षणीय अंतर है। जहां पुराने विकासशील देशों ने अपनी प्रणालियों एवं प्रक्रियाओं का विकास धीरे-धीरे किया था वहीं संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाएं देर से आने वालों को मिलने वाले लाभ ले सके तथा विभिन्न संरचना विकल्पों में से एक का चुनाव करने तथा अन्य देशों के अनुभव से शिक्षा ग्रहण करने में समर्थ रहे। इन देशों को आधुनिकतम संरचना अंगीकार करने का विकल्प मिला (महादेव और स्टर्न, 2000) । इन अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक स्वच्छ पट्टी से अपना कार्य शुरू करने में समर्थ हुए तथा विकसित देशों में उपलब्ध प्रणालियों का सफल आरोपण कर सके। जबकि दूसरी ओर पुराने विकासशील देशों को अपनी वर्तमान प्रणाली के अनुरूप संरचना की आवश्यकता पड़ी। नाचने (2005) सावधान करते हैं कि विकसित देशों से उधार लेकर प्रतिमानों का सीधा-सीधा आरोपण इन देशों के हितों के विपरीत हो सकता है।

3.14 जिन अर्थव्यवस्थाओं में वे विद्यमान हैं तथा उनसे की गई मांगों की अनुक्रिया के अनुरूप केंद्रीय बैंकों का विकास हुआ। परिस्थितियों में बदलाव के साथ-साथ उनकी भूमिकाओं का विस्तार हुआ तथा केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धांतों का विकास हुआ। जब वर्तमान विकसित देशों के विकास की प्रक्रिया जारी थी तब मुक्त बाज़ार सिद्धांतों का आधिपत्य था एवं उन सिद्धांतों के अनुरूप उनके बाज़ार एवं संस्थाओं का विकास हुआ। ज्यों-ज्यों वित्तीय बाज़ार जटिलतर होते गए एवं प्रणाली का विस्तार हुआ तदनुरूप अपनी प्रणाली में संशोधन करने की पर्याप्त क्षमता उनमें थी।

3.15 इसके विपरीत अविकसित बाज़ारों की बाध्यता से विवश रहते हुए भी विकास प्रक्रिया को सघन बनाने का कठिन कार्य करने की, जिम्मेदारी विकासशील देशों पर आई। वर्तमान विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों के समक्ष उत्पन्न ''बाध्यता इष्टतमीकरण समस्या'' ज्यादा कठिन है तथा वे प्राचेतस उपायों द्वारा इन बंधनों को ढीला करने का प्रयास कर रहे है। विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों को पिछले एवं खंडित बाज़ारों की समस्या से जूझना पड़ा तथा प्रायः बाज़ार असफलता एवं वित्तीय दमन का सामना करना पड़ा। इसके लिए इन केंद्रीय बैंकों को दो अलग-अलग स्तरों पर कार्यवाही करनी पड़ी। इनकी मुद्रा नीति का संचालन प्रत्यक्ष अथवा क्षेत्रीय उपकरणों की सहायता से किया जाता था। साथ ही अपने बाज़ारों के विकास के लिए निरंतर प्रयास करने की आवश्यकता थी। बाज़ारों के पर्याप्त विकास के बाद ही वे बाज़ार आधारित उपकरणों का प्रयोग करने की स्थिति में आए। विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों को स्वायत्तता अभाव से उत्पन्न होने वाली अनेक बाध्यताओं जैसे मुद्रानीति पर राजकोष नीति की प्रधानता का सामना करना पड़ा। उनकी भूमिका प्रायः एक फ़ैसिलिटेटर की रही है जो वित्तीय क्षेत्र के विकास को प्रोत्साहन देता है तथा इससे उनके वर्तमान संरचना एवं कार्यों का विकास हुआ। ''प्रत्येक केंद्रीय बैंक के जन्म के अलग-अलग ऐतिहासिक कारण रहे हैं'' तथा इन्होंने ''न सिर्फ केंद्रीय बैंकों के वर्तमान कार्यों पर प्रभाव डाला बल्कि उनकी परिचालन विधियों को भी प्रभावित किया'' (जाधव, 2003)। अतः केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धांत जैसी कोई वस्तु नहीं है; इसमें अधिकांश का विकास उनके परिचालन के दौरान हुआ। दूसरे शब्दों में, केंद्रीय बैंकिंग के व्यवहारों एवं सिद्धांतों का संगामी विकास हुआ।

II. एक केंद्रीय बैंक के कार्य :

3.16 समय के साथ, विशेष जब अर्थव्यवस्थाएं संकटों या कठिनाइयों के दौर से गुजर रही थीं, केंद्रीय बैंक कार्यों का विकास हुआ। जिस अर्थव्यवस्था में बैंक स्थित है उसके आर्थिक विकास स्तर, इसको प्रदत्त आदेश की प्रकृति एवं परिचालन स्वायत्तता के कारण इन कार्यों में विविधता आती है। केंद्रीय बैंक के कार्यों को चार प्रमुख वर्गों में विभाजित किया जा सकता है - मौद्रिक नीति संबंधित कार्य, बैंकों का बैंक, सरकार का बैंक एवं विकास संबंधी कार्य। नोट निर्गम, मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य का रखरखाव मौद्रिक नीति के प्रमुख उद्देश्य बने। बाद में वृद्धि को प्रोत्साहन देने का कार्य भी इसमें जो सौंपा गया। यह कार्य सम्मुचय मौद्रिक नीति कार्य बने। बाद में, वित्तीय क्षेत्र के विकास के साथ-साथ बैंक की अंतिम ऋणदाता भूमिका अधिक महत्वपूर्ण बनी एवं इसने नियामक एवं पर्यवेक्षी भूमिका को अपने अंदर समाहित कर लिया। हाल के वर्षों में इसने वित्तीय स्थिरता के वृहत्तर लक्ष्य को अपनाया तथा बैंकिंग में प्रौद्योगिकी के क्रियान्वयन संबंधी उद्देश्य भी इसमें शामिल हैं। अधिकांश केंद्रीय बैंकों की स्थापना अपनी सरकारों की गतिविधियों के वित्तपोषण के लिए हुई। इस कार्य की समीक्षा की गई है तथा हाल के वर्षों में कई केंद्रीय बैंकों ने अपनी सरकारों को उधार देना बंद कर दिया है। बाज़ार, संस्थाओं एवं संप्रेषण नीतियों के विकास हेतु केंद्रीय बैंकों ने कई नए कार्य अंगीकार किए हैं।

मौद्रिक नीति कार्य

3.17 मौद्रिक नीति कार्य केंद्रीय बैंकिंग परिचालन के केंद्र में स्थित हैं तथा लगभग सभी केंद्रीय बैंकों का प्रमुख कार्य है। इनमें से, केंद्रीय बैंकिंग के शुरुआती दौर में, मुद्रा प्रबंध एवं मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य की रक्षा केंद्रीय बैंकों के लिए अत्यंत महत्व के थे। मूल्य स्थायित्व का स्पष्ट महत्व का उदगम बाद में हुआ हालांकि बाह्य मूल्य की रक्षा एवं स्वर्ण मानक से संबद्धता का निहित तात्पर्य मूल्य स्थायित्व ही था।

करेंसी इश्यू और प्रबंध

3.18 अधिकांश देशों में मुद्रा प्रबंध केंद्रीय बैंकों के सबसे महत्वपूर्ण पारंपारिक कार्यों में से एक है। केंद्रीय बैंकों का विकास होने से पहले निजी बैंक अपनी स्वयं की मुद्रा जारी करते थे तथा प्रायः भिन्न-भिन्न मान्यता / स्वीकार्यता वाली अनेक मुद्राएं प्रचलित थीं। मुद्रा निर्गम में राष्ट्रव्यापी समरूपता लाने एवं विनिमय की सुगमता सुनिश्चित करने हेतु मुद्रा निर्गम का कार्य केंद्रीय बैंक को सौंपा गया। वर्षों से केंद्रीय बैंक यह कार्य संपन्न करते रहे हैं। कई देशों में मुद्रा निर्गम का राष्ट्रीकरण किया गया। इस भूमिका का विस्तार हुआ है तथा आजकल मुद्रा की मांग का पूर्वानुमान, मुद्रा डिजाइन, छपाई, भंडारण, वितरण एवं बेकार नोटों का नाश आदि कार्यों का इसमें समावेश हुआ है।

3.19 उदाहरणार्थ, बैंक आफ इग्लैंड सन् 1694 से नोटों का निर्गम करता रहा है। प्रारंभ मे ये नोट हस्तलिखित होते थे। हालांकि सन 1725 से नोटों को अंशतः छापना शुरू किया गया परंतु प्रत्येक नोट पर रोकड़िये के हस्ताक्षर एवं उसको किसी के प्रतिदेय बनाना आवश्यक था। पूर्णतः मुद्रित नोट सन् 1855 में प्रचलन में आए। बैंक डे फ्रांस को सन् 1803 में शुरू-शुरू में सिर्फ पेरिस में नोट निर्गम का अनन्य प्राधिकार दिया गया परंतु सन् 1848 में यह प्राधिकार समग्र फ्रांस में लागू किया गया। बैंकों डे पुर्तगाल सन् 1887 में राजकीय बैंक बना एवं उसे 1891 में सारे पुर्तगाल में नोट निर्गम का प्राधिकार दिया गया। जर्मनी में केंद्रीय बैंक की स्थापना के कारणों में एक समान मुद्रा का प्रचलन सुनिश्चित करना भी शामिल था। इसी प्रकार बैंक आफ इटली को इटली की मुद्रा का आधार सुदृढ़ करने की जिम्मेदारी सौंपी गई। अमरीका में क्रांति के पहले एवं बाद में ब्रिटेन, स्पेन एवं इटली की मुद्राओं का चलन था। सन् 1789 में फर्स्ट बैंक आफ युनाइटेड स्टेटस को कागजी मुद्रा जारी करने का प्राधिकार दिया गया। सन् 1792 में अमेरिकी टकसाल की स्थापना की गई। सभी चार्टर्ड बैंक मुद्रा जारी कर सकते थे तथा सन् 1836 में 1600 बैंकों द्वारा 30,000 प्रकार की मुद्राएं जारी की जाती थीं। अमरीकी कोष ने सन् 1862 में हरित पृष्ठ (ग्रीन बैकस्) जारी किए। फ़ेडरल रिज़र्व एक्ट के प्रावधानों के अंतर्गत, सन 1913 में फ़ेडरल रिज़र्व को नोट मुद्रण का कार्य सौंपा गया। वास्तव में दुनिया में कुछ ही ऐसे केंद्रीय बैंक हैं जो नोट मुद्रण का कार्य नहीं करते हैं। सिंगापुर मौद्रिक प्राधिकारी (एमएएस) इसका एक प्रमुख उदाहरण है।

3.20 मुद्रा निर्गम की अनन्य शक्ति एक केंद्रीय बैंक को अंशतः या पूर्णतया दी जा सकती है, इससे संबंधित व्यवहार किसी सिद्धांत की अपेक्षा परंपरा से ज्यादा शासित होता है। यह सुविख्यात है कि विनिमय सुविधा हेतु मुद्रा की मूल अवधारणा विकसित हुई। प्रागैतिहासिक मुद्रा नोट वास्तव में उसके धारक को मूल मूल्यवान धातु लौटाने का वचनपत्र था। जैसे - इन वचनों पत्रों की स्वीकार्यता बढ़ी, इन नोटों का चलन सारे देश में होने लगा तथा जल्दी ही जारी कर्त्ता बैंक को ज्ञान हो गया कि वे अपने स्वर्ण भंडार से ज्यादा मूल्य की रसीदें जारी कर सकते थे। इससे आंशिक आरक्षी प्रणाली का विकास हुआ। इससे बार -बार बैंकों के असफल होने की घटनाएं बढ़ीं तथा अंतिम ऋणदाता के रूप में एक स्वतंत्र प्राधिकारी की आवश्यकता उभर कर सामने आई। केंद्रीय बैंकों के विकास के बाद भी सिक्कों एवं नोटों के आधारभूत आस्तियों के परिमाण का फैसला संबंधित सरकारों द्वारा किया जाता था। स्वर्ण मुद्रा, बुलियन; विदेशी मुद्रा भंडार एवं विदेशी आस्तियां आदि आस्ति आधार में शामिल किए जाते हैं आंशिक रिज़र्व प्रणाली के प्रादुर्भाव के कारण यह आस्ति आधार (स्वर्ण, मुद्रा आस्तियां आदि) घट कर कुल प्रचलित मुद्रा का एक अंश भर रह गया है।

3.21 विकासशील अर्थव्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में मुद्रा प्रबंध विभिन्न रूप धारण करता है। अधिकांश विकसित देशों में अधिक सामाजिक समानता के कारण मुद्रा आवश्यकता का एक समान पैटर्न होता है जिससे सुचारु मुद्रा प्रबंध में सहायता मिलती है। इसके विपरीत विकासशील देशों में भिन्न क्षेत्रों में विद्यमान सामाजिक आर्थिक विकास की अधिक विषमता से जनता में एकदम अलग मुद्रा अधिमान का जन्म होता है। इस विविधता के कारण केंद्रीय बैंकों के मुद्रा प्रबंध कार्य की जटिलता बढ़ती है एवं उसमें अधिक गत्यात्मकता की आवश्यकता पड़ती है। प्रचलन में गंदे नोटों की उपस्थिति, नकदी आधारित लेनदेन की प्रधानता एवं निम्न स्वचालन स्तर से विकासशील देशों में दक्ष मुद्रा प्रबंध में आनेवाली कठिनाईयों में कई गुना वृद्धि हुई है। हालांकि हाल ही के वर्षों में विकसित प्रौद्योगिकी से मुद्रा प्रबंध में सुधार हुआ है (उदेशी, 2004)।

मुद्रा के आंतरिक मूल्य का संरक्षण

3.22 विनिमय माध्यम की स्थापना केंद्रीय बैंकों को सौंपी गई सबसे पुरानी जिम्मेदारियों में से एक है। इस मूल उत्तरदायित्व से कालांतर में मुद्रा के विनिमय मूल्य की रक्षा के लिए मुद्रास्फीति दर को कम रखने के

मुद्रा नीति कर्त्तव्य का जन्म हुआ। जैसा कि मुद्रास्फीति टारगेटिंग संरचना के व्यापक प्रचलन से देखा जा सकता है, यह कार्य आधुनिक केंद्रीय बैंकों के लिए आज भी बहुत प्रासंगिक है। मूल्य स्थायित्व की प्राप्ति एवं संरक्षण में कई सुस्पष्ट चरण आए। महान मंदी से पहले धातुवाह प्रवाह ने अर्थव्यवस्था को स्वचालन तरीके से चलाया। बीसवीं सदी में स्वर्ण मानक मुद्रा के स्थान पर शनैः शनैः कागजी मुद्रा के आरोपण से मुद्रानीति लक्ष्यों का पुनर्निधारण हुआ एवं मूल्य स्थिरता के लिए अलग से प्रयास करने की आवश्यकता पड़ी। स्वर्ण मानक के त्याग से मुद्रा के आंतरिक मूल्य (क्रय शक्ति) एवं बाहय मूल्य (विनिमय दर) संरक्षण के स्वचालित तंत्र का लोप हुआ। मुद्रा का आंतरिक मूल्य संरक्षण एवं बाह्य मूल्य संरक्षण दो अलग-अलग पहलू बन गए। यह विलगन इस अर्थ में लाभकारी या कि इससे राष्ट्रों को अपनी अलग नीतियाँ अपनाने की स्वतंत्रता मिली। परंतु स्वर्ण मानक के त्याग एवं आंशिक रिज़र्व प्रणाली के अंगीकार से मूल्य स्थायित्व का खतरा बढ़ा।

3.23 महान मंदी केंद्रीय बैंकों के इतिहास में कठिनतम दौर था। इस दौर में विश्व के सभी देशों की मुद्रा की सामान्य कीमत में एक चौथाई कमी आई। उत्पादन एवं रोजगार में भारी गिरावट आई जिससे सर्वत्र कठिनाइयां पैदा हुईं। इस पृष्ठभूमि में, सामान्य सिद्धांत में, केंस (1936) राजकोषीय नीति की भूमिका पर बल दिया। परंतु बाद में फ्रीडमैन एवं श्वार्ज (1963) ने उल्लेख किया कि महान मंदी से पहले मुद्रा प्रसार में वास्तविक कमी आई। उन्होने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि 1930 के दशक की महान मंदी सिद्धांततः मुद्रा नीति की असफलता का परिणाम नहीं थी बल्कि मुद्रा आपूर्ति में कमी इसका कारण थी - जो केंद्रीय बैंकों की संकुचनकारी कार्यवाही का प्रभाव थी। बैंक असफलताओं की लहर ने इस समस्या को और जटिल बनाया। अतः महान मंदी को मौद्रिक नीति की सीमा का प्रमाण नहीं माना गया बल्कि इसे मौद्रिक नीति निर्माताओं की सीमित दूर दृष्टि एवं कार्यवाही का परिणाम समझा गया। ऐसे दौर में, जब व्यय ही शायद मांग में कमी से उत्पन्न समस्या का एक मात्र उपाय था, अधिकांश सरकारों एवं केंद्रीय बैंकों ने लोगों को अपने खर्चे घटाने की अनुचित सलाह दी।

3.24 इसी बीच, महान मंदी एवं केंस के सामान्य सिद्धांत द्वारा निभाई गई महत्वपूर्ण भूमिका के कारण परिदृश्य में अप्रतिसंहरणीय बदलाव आया एवं निर्बाधता से जोर हटा कर हस्तक्षेप एवं राजकीय विवेकाधिकार पर केंद्रित किया गया। केंस के अध्ययन ने अर्थनीति के राजकोषीय पहलुओं पर दृष्टि केंद्रित की। केंस (1936) ने अपनी सामान्य थ्योरी में मूल्य स्थिरता के मुद्दों पर प्रकाश नहीं डाला जैसा कि उसने द ट्रीटाइज (केंस, 1930) में किया था, जिसमें उसने मूल्य स्तर टारगेटिंग की वकालत की। वास्तव में केंस के माडल में सैद्धान्तिक कमजोरी थी जिसको बाद में फिलिप्स कर्व को सम्मिलित कर दूर किया गया। फिलिप्स कर्व की यह मान्यता कि 'अतिरिक्त वृद्धि के लिए मुद्रास्फीति को सहन किया जा सकता है'ज्यादा दिन नहीं टिकी। कुछ विपरीत प्रमाणों ने यह साबित किया कि ऊंची मुद्रास्फीति दर वृद्धि के लिए घातक होती है (बर्रो, 1995; सरेल, 1996)..। तथापि कुछ समय तक फिलिप्स कर्व महत्वपूर्ण बनी रही (फिशर; 2005)।

3.25 मूल्य स्थायित्व लक्ष्य लंबे समय तक आंतरिक नीति के केंद्र बिंदु बने रहे और आज भी वे केंद्रीय बैंकों का मुख्य सरोकार हैं। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों का एक अतिरिक्त कार्य रहा है क्योंकि सरकारें उनसे यह अपेक्षा रखती थी कि वे तीव्रतर विकास के लिए जरुरी संसाधन जुटाने के लिए सिक्का- ढलाई लाभ का प्रयोग करें। केंद्रीय बैंकों के कार्यों में प्राय विरोधाभास होता है, उदाहरणार्थ इसकी मुद्रा के मूल्य-संरक्षण भूमिका का इसकी सरकार का बैंक होने की भूमिका से, विशेषकर विकासशील देशों में, टकराव होता है। ये केंद्रीय बैंक बहुत भारी सार्वजनिक ऋण का प्रबंध करते हैं तथा प्रायः मुद्रास्फीति कर का प्रयोग करते हैं जो उनके मूल्य-स्थायीकरण प्रयासों को हानि पहुँचाता है। राजकोष एवं मुद्रा नीति निर्माताओं की नीतियों में संगतता सुनिश्चितता करने हेतु उनके आपसी विचार-विमर्श की आवश्यकता को विकसित देशों में लक्षित किया गया। इसके विपरीत विकासशील देशों में ऐसे वार्तालाप की कमी थी तथा केंद्रीय बैंक ऋण प्रबंधक के तौर पर सार्वजनिक ऋण के प्रबंध हेतु ब्याज दरों को कृत्रिम रूप से कम रखते थे। इसके बाद अन्य अधिक सख्त उपायों, जिसमें प्रत्यक्ष उपकरणों जैसे आरक्षी आवश्यकताओं एवं चयनित ऋण नियंत्रण, द्वारा मुद्रास्फीति को नियंत्रित किया जाता था जिससे वित्तीय दमन होता था।

3.26 विकासशील देशों में विशिष्ट तौर पर केंद्रीय बैंकों पर यह उत्तरदायित्व होता है कि वे सरकार के बड़े उधार कार्यक्रमों की सफलता सुनिश्चित करें। इसके लिए वे बैंकिंग प्रणाली पर उच्च आरक्षी आवश्यकताएं लागू करते थे ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे आबद्ध क्रेता बने रहेंगे। भले ही उधारों पर बाज़ार से कम ब्याज मिले। विकास के कुछ प्रारंभिक स्तर को प्राप्त करने के बाद ये केंद्रीय बैंक यह सुनिश्चित करें कि सरकार के उधार कार्यक्रमों की बैंकिंग क्षेत्र पर निर्भरता घटे। इस दिशा में अनेक कदम यथा, सरकारी प्रतिभूतियों की ब्याज दर का उन्मुक्त बाज़ार द्वारा निर्धारण तथा मौद्रिकनीति की बाज़ार आधारित प्रक्रियाएं, उठाने की आवश्यकता पड़ती है।

3.27 सांकेतिक एंकर का निर्णय करके मुद्रा के आंतरिक एवं बाह्य मूल्य को सुरक्षित किया जाता है। एक सांकेतिक एंकर या एक अंतरिम मौद्रिक नीति लक्ष्य का चयन एक महत्वपूर्ण मामला है। 1970 के दशक के अंत एवं 1980 दशक में मौद्रिक लक्ष्य निर्धारण के प्रति सामान्य

रुझान रहा। उसके बाद एक मुद्रास्फीति बेधन सरंचना को अंगीकार करने की और वर्द्धमान प्रवृत्ति रही। केंस ने 1930 के दशक में मूल्य स्तर बेधन का समर्थन किया (केंस 1930)। स्वर्ण मानक व्यवस्था की समाप्ति के बाद स्वीडन ने सबसे पहले इसे अपनाया। तो भी मौद्रिक नीति की एक महत्वपूर्ण संरचना बनने में इसे पांच दशक से ज्यादा समय लग गया।

3.28 मुद्रास्फीति दर को कम रखने के लिए केंद्रीय बैंकों ने आर्थिक माध्यमों की प्रत्याशा को स्थिर रखने हेतु प्राय: बहुत प्रयास किए हैं। इसके लिए मुद्रास्फीति की प्रक्रिया को समझना अत्यावश्यक है। केंद्रीय बैंक को चाहिए कि वह अग्रणी संकेतकों का प्रयोग करके प्राचेतस् तरीके से मुद्रास्फीति का पूर्वानुमान लगाए ताकि इससे उन्हें प्रतिक्रिया के लिए ज्यादा समय मिल सके। आवश्यक अग्रिम कार्यवाही का परिमाण संप्रेषण अंतराल की लंबाई, जो भिन्न-भिन्न देशों में अलग-अलग होती है तथा एक देश में विभिन्न कालों में भिन्न-भिन्न हो सकती है, पर निर्भर करता है। मूल्य समायोजन अंतराल एवं प्रत्याशा अंतराल मूल्य स्तर के दो निर्धारक है । मूल्य समायोजन अंतराल की गणना के लिए उद्योग जगत में क्षमता उपयोग के स्तर, स्टाक का स्तर, उत्पादन कारकों की आपूर्ति तथा मजदूरी एवं कीमतों की नम्यता की जानकारी आवश्यक है। इसके विपरीत प्रत्याशा अंतराल उत्पाद एवं कारक मूल्य प्रत्याशा, अर्थव्यवस्था में मजदूरी करारों की प्रकृति, केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता तथा उसके मुद्रास्फीति संबंधी इतिहास पर निर्भर करता है। यदि केंद्रीय बैंक का इतिहास विश्वासजनक है तो वह मुद्रास्फीति प्रत्याशा के स्थिरीकरण में सफल हो सकता है। प्रणाली के अंतर्निहित स्थायित्व के बारे में राय तथा अभिकल्पित मुद्रास्फीति प्रक्रिया की प्रकृति से केंद्रीय बैंक की भूमिका निर्धारित होती है। मौद्रिक नीति के समर्थकों का यह विश्वास है कि हालांकि प्रणाली आंतरिक तौर पर स्थायी है परंतु इसमें लंबे, परिवर्तनीय एवं अप्रत्याशित अंतराल हैं। इसके कारण चक्रीय आवर्तन के मंदन की बजाय एम्पलीफिकेशन होता है। मौद्रिक नीति के समर्थकेतर यह विश्वास करते हैं कि चूंकि समायोजन प्रक्रिया में बहुत अधिक समय लगता है अतः केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप की आवश्यकता बढ़ जाती है (हम्फ्री 1986)

3.29 समय बीतने के साथ इस धारणा को बल मिलता है कि अधिक नोट छापने या ''अर्थव्यवस्था की पंप प्राइमिंग'' से वृद्धि दर में बढ़ोत्तरी नहीं होती। वास्तव में स्थिर मूल्य स्तर विकास एवं व्यापार की आवश्यक पूर्व शर्त बन गया है। तदनुसार मौद्रिक नीति के परिचालन द्वारा मूल्य स्थिरता का अनुरक्षण केंद्रीय बैंकों का प्रधान लक्ष्य बन गया है। हालांकि मुद्रास्फीति पर केंद्रीय बैंक का सीधा नियंत्रण नहीं होता तथापि वह अपने नियंत्रणाधीन अंतरिम कारकों के प्रयोग द्वारा मूल्य स्थिरता सुनिश्चित कर सकता है। बाज़ार अर्थव्यवस्था में केंद्रीय बैंक के पास मौद्रिक नीति के परिचालन के लिए बाज़ार आधारित उपकरण उपलब्ध हो सकते हैं। यह अंतरिम लक्ष्यों जैसे ब्याज दरों, विनिमय दरों एवं मौद्रिक सामग्री का चुनाव कर सकता है या अधिक बहुस्रोत पद्धति अपना कर उत्पादन एवं कीमतों ने परिवर्तन की पूर्वघोषणा करने में सक्षम अनेक संकेतकों पर विचार कर सकता है। परंतु 1990 के दशक में मूल्य स्थिरता के प्रति अपनी निष्ठा की घोषणा करते हुए अधिकांश देश मुद्रास्फीति बेधन की ओर बढ़े हैं। मौद्रिक नीति की सफलता के लिए मुद्रा मांग की स्थिरता या न्यूनतम उसकी पूर्वानुमानता आवश्यक शर्त है। 1980 के दशक में अनेक केंद्रीय बैंकों ने इस अंतरिम लक्ष्य को त्याग दिया क्योंकि मुद्रा मांग समीकरण अस्थिर, संभवतया तीव्र गति वित्तीय नवीकरण से, हो गया। परंतु कुछ केंद्रीय बैंकों यथा जर्मनी, ने पाया कि मुद्रा मांग स्थिर बनी हुई है तथा उन्होंने अनेक वर्षों तक मौद्रिक लक्ष्यों का प्रयोग जारी रखा। विभिन्न प्रकार की 94 विकासशील, संक्रमणशील एवं औद्योगिक अर्थव्यवस्थाओं के मौद्रिक सर्वेक्षण में आधे से ज्यादा उत्तरदाताओं ने मुद्रास्फीति में कमी या निम्न मुद्रास्फीति दर के अनुरक्षण के दीर्घावधि लक्ष्यों को महत्वपूर्ण माना तथा केंद्रीय बैंक के लिए इसे अन्य किसी भी औपचारिक या अनौपचारिक लक्ष्य से ज्यादा महत्वपूर्ण बताया (फ्राइ एवं अन्य, 2000)।

3.30 मुद्रास्फीति टारगेटिंग संरचना में केंद्रीय बैंक एक निश्चित अवधि में सार्वजनिक रूप से पूर्व घोषित आंकिक मुद्रास्फीति लक्ष्य की प्राप्ति मुद्रानीति परिचालन का एक स्पष्ट वचन देता है। कुछ देशों ने बिंदु लक्ष्य अंगीकार किए हैं तथा अन्य ने और नम्य दृष्टिकोण अपनाते हुए एक बेंड के अंतर्गत मुद्रास्फीति लक्ष्य रखते हैं। न्यूजीलैंड, कनाडा, दि युनाईटेड किंगडम, फिनलैंड, इजराईल, स्पेन एवं स्वीडन मुद्रास्फीति बेधन को अपनाने वाले पहले देश थे। विशिष्ट मुद्रास्फीति लक्ष्य से नीति को आंतरिक स्थिरण मिलता है मुद्रा नीति के परिचालन में विश्वास पैदा होता है। स्पष्ट लक्ष्यों के निर्धारण से उत्तरदायित्व को प्रोत्साहन मिलता है एवं इससे केंद्रीय बैंकों को लक्ष्य के निकट आने की संभावनाएं बढ़ती हैं। मुद्रा स्फीति लक्ष्य निर्धारण से मध्यावधि मुद्रास्फीति दृष्टिकोण का सुस्पष्ट मार्ग निर्धारण किया जा सकता है जिससे मुद्रास्फीति के झटकों एवं संबंधित लागतों / नुकसान को कम किया जा सकता है। चूंकि दीर्घावधि ब्याज दरों में मुद्रास्फीति प्रत्याशा में होने वाली घटबढ़ के अनुरूप परिवर्तन होता है, अतः निम्न मुद्रास्फीति दर का लक्ष्य रखने से अधिक स्थायी एवं निम्न ब्याज दरें सुनिश्चित की जा सकती हैं।

3.31 केंद्रीय बैंक के चार्टरों एवं अधिकारिक वक्तव्यों में, विशिष्टतया, मूल्य स्थिरता का मौद्रिक नीति के एक लक्ष्य के रूप में

वर्णन किया जाता है। मुद्रास्फीति लक्ष्य सुनिश्चित करने एवं मूल्य स्थिरता के लक्ष्यो मे , 1996) । परंतु केंद्रीय बैंकों की मुद्रास्फीति विरोधी नीतियों के परिचालन में अंतर है। कई केंद्रीय बैंकोें उदाहरणार्थ बैंक आफ कनाडा, बैंक आफ इग्लैंड एवं रिज़र्व बैंक आफ न्यूजीलैण्ड ने स्पष्ट मुद्रास्फीति लक्ष्य को हाल में अपनाया। अन्य, जिनकी मुद्रास्फीति नियंत्रण संबंधी विश्वसनीयता सुप्रतिष्ठित है, (उदाहरण हेतु पूर्व इसीबी बुंडेस बैंक एवं स्विस नेशनल बैंक, स्पष्ट मुद्रास्फीति लक्ष्य निर्धारित नहीं करते)।

3.32 मुद्रास्फीति टारगेटिंग नीति लागू करने से पहले किसी भी देश को कतिपय पूर्व शर्तों का पालन करना आवश्यक होता है। इनमें सर्वप्रमुख है - केंद्रीय बैंक पर सरकार के बजट के वित्त पोषण की बाध्यता न हो, उसके पास बाजार द्वारा निर्धारित प्रभावी मौद्रिक नीति उपकरण उपलब्ध हों, उसका व्यवहार पारदर्शी हो तथा वह मुद्रास्फीति प्रत्याशा का पूर्वानुमान लगाने में समर्थ हो एवं मुद्रास्फीति पर मौद्रिक नीति के प्रभावों का आकलन करने की स्थिति में हो। मुद्रास्फीति लक्ष्य नीति अपनाने वाले देश को प्रासंगिक मूल्य इंडेक्स, जिसको लक्षित किया जाना है, का चुनाव करना पड़ता है। कुछ देशों ने इस उद्देश्य के लिए उपभोक्ता मूल्य इंडेक्स (सीपीआइ) को चुना है। विकल्प के तौर पर वे कोर मुद्रास्फीति को लक्षित कर सकते हैं। विकासशील देशों में सामान्यतः मुद्रास्फीति की उंची दर होती है। इन देशों में भविष्य की मुद्रास्फीति का पूर्वानुमान अनिश्चितता भरा होता है। अतः विकसित देशों की अपेक्षा विकासशील देशों में मुद्रास्फीति लक्ष्य की प्राप्ति में ज्यादा चूक होने की संभावना रहती है। इसके अलावा सरकार के राजकोष घाटे के वित्तपोषण की आवश्यकता से कई देशों में केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता सीमित होती है ।

3.33 समय के साथ केंद्रीय बैंकों ने अपने उपकरणों को और धारदार बनाया है। चूंकि मौद्रिक नीति का परिचालन सर्वदा उत्पादन एवं कीमतों से संबंधित प्रतिफलों के पूर्वानुमान के आधार पर किया जाता है अतः केंद्रीय बैंकर के लिए इनकी पूर्वगणना अत्यावश्यक होती है। ये पूर्वगणनाएं विभिन्न प्रकार के माडलों के आधार पर की जाती हैं। अपने नीति निर्णयों में सुविधा के लिए कुछ केंद्रीय बैंक अपने अंतरिम लक्ष्यों जैसे मुद्रा वृद्धि या विनिमय दर की पूर्वगणना के लिए विशिष्ट उपकरणों या माडलों का प्रयोग करते हैं।

3.34 वित्तीय नवीकरणों एवं प्रौद्योगिकीय विकास के कारण केंद्रीय बैंकों के लिए यह आवश्यक हो गया कि वे मुद्रा की परिभाषाओं में निरंतर परिष्कार करें। विभिन्न वित्तीय उत्पादों द्वारा वाणिज्यिक बैंक जमा मुद्रा, प्लास्टिक मुद्रा तथा ई नकदी और ई मुद्रा का सृजन करते हैं। ग्राहकों द्वारा इलेक्ट्रोनिक रूप कार्ड पर धारित मुद्रा मूल्य इकाइयों को ई मुद्रा कहते है। चूंकि ई-मुद्रा में सामान्य प्रारूप वाली मुद्रा के सभी गुण होते हैं अतः यह चेक या डिमांड ड्राफ्ट जैसी लिखतों की तरह मुद्रा अंकित लेन देन को सुगम बनाता है। इससे मुद्रा प्रबंध एवं मूल्य स्थिरीकरण का कार्य उत्तरोत्तर कठिन हो गया है। बैंकों द्वारा यह कार्य प्रदत्त पूर्वानुमानित आय एवं ब्याज दर परिवर्तनों के आधार पर मुद्रा मांग के सक्रिय पूर्वानुमान द्वारा किया जाता है। इन समीकरणों में समय के साथ बदलाव आता है तथा वित्तीय क्षेत्र में तीव्रगति परिवर्तनों के दौर से गुजर रहे देशों में कभी-कभी ये संबंध अस्थिर हो जाते हैं जिससे केंद्रीय बैंकों की समस्याओं में वृद्धि होती है।

मुद्रा के बाह्य मूल्य का अनुरक्षण

3.35 कई अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक विनिमय दर प्रबंध को बहुत महत्वपूर्ण मानते हैं। पारंपरिक केंद्रीय बैंकों के लिए सत्रहवीं सदी में भी विनिमय दर प्रबंध बहुत महत्व रखता था। स्वर्ण मानक के प्रचलन काल में धातुवाह प्रवाह के माध्यम से लगभग स्वचालित तरीके से विनिमय दर का निर्धारण होता था। इससे यह सुनिश्चित होता था कि आरक्षित स्वर्ण भंडार में वृद्धि एवं कटौती के साथ-साथ विनिमय में क्रमशः वृद्धि एवं कमी आती थी। स्वर्ण भंडार एवं उसमें घटबढ़ आवश्यक रूप से उत्पादन वृद्धि में सहायक नहीं थे। सममूल्यता अनुरक्षण के लिए ही काफी प्रयास करने पड़ते थे। 'विनिमय दर का समुचित स्तर' एक विस्तृत चर्चा का विषय है। तथाकथित बाजार निर्धारित स्तर भी एक ऐसा स्तर हो सकता है जिससे क्रय शक्ति समानता की पुष्टि हो सकती है या नहीं भी हो सकती। क्रय शक्ति समानता का सिद्धान्त यह घोषणा करता है कि यदि मूल्यों की गणना एक ही मुद्रा में की जाए तो इससे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वस्तुओं के मूल्य में समानता आएगी। इसका कोई अनुभवजन्य आधार नहीं है क्योंकि वास्तविक विश्व में अनेक कारण विनिमय मुद्रा दर को प्रभावित करते हैं।

3.36 विनिमय दर प्रबंध में केंद्रीय बैंक की भूमिका को कम करके नहीं आंका जा सकता। समय के साथ केंद्रीय बैंकों द्वारा विनिमय दर प्रबंध की आधारभूत व्याख्या/कारणों में परिवर्तन हुआ है। मुद्रा के मर्केंटाइलिस्ट सिद्धान्त, जो आयात के मुकाबले निर्यात की अधिकता पर जोर देता है, से शुरू करके विनिमय प्रबंध के अनेक प्रतिमान हैं। कुछ केंद्रीय बैंक विनिमय दर को नीचा रखते है (निर्यात को प्रोत्साहित करने के लिए) तथा अन्य इसका बिंदु और बैंड लक्ष्य रखते हैं।

3.37 औपनिवेशिक शासन काल में अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक व्यवस्था का ध्यान व्यापार एवं निवेश पर केंद्रित था तथा विनिमय दर इस प्रकार निर्धारित की जाती थी ताकि औपनिवेशिक शक्तियों को लाभ मिले। सत्रहवीं एवं अठारहवी शताब्दियों में ब्रिटिश साम्राज्य का उदय एवं

विकास हुआ तथा उसके साथ बैंक आफ इग्लैंड का भी विकास हुआ। चूँकि पाउंड स्टर्लिंग सबसे मजबूत मुद्रा थी, अत: यह सर्वाधिक स्वीकार्य अंतरराष्ट्रीय मुद्रा बनी तथा अंशत स्वर्णाधारित होने के कारण प्रधान एंकर बनी रही । उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में अधिकांश बैंक स्वर्ण मानक का पालन करते थे तथा वह विश्व की प्रथम नियत दर प्रणाली थी। इस प्रणाली में दो मुद्राओं की पारस्परिक विनिमय दर का निर्धारण उनके द्वारा खरीदे जा सकने वाले स्वर्ण भार के अनुपात से होता था। इस मुद्रा विनिमय प्रणाली के कारण मुद्रा प्रबंध विनिमय दर प्रबंध की स्वतंत्रता का लोप होता था। तथापि इससे देश की विश्वनीयता में भारी वृद्धि होती थी।

3.38 प्रथम विश्व युद्ध एवं उसके कारण हुए भारी रक्षा खर्चों के कारण स्वर्णमानक प्रणाली बर्बाद हो गई। मित्र राष्ट्रों द्वारा जर्मनी पर हानिपूर्ति हर्जाना लगाने से अंतरराष्ट्रीय विनिमय दर प्रणाली को और विकृत किया। युद्धोत्तर आर्थिक वृद्धि ने अधिकांश केंद्रीय बैंकों के लिए सघन मुद्रास्फीति की समस्या खड़ी कर दी। युद्धोत्तर काल में युद्ध पूर्व स्तर पर स्वर्णमानक प्रणाली को पुनर्जीवित करने के प्रयासों में बड़ी कठिनाई आई। यह चर्चा कि 'क्या यूनाईटेड किंगडम द्वारा स्वर्णमानक प्रणाली दोबारा लागू करना ही महान मंदी की शुरुआत का कारण था'अब भी अपूर्ण है। अपने निर्यात को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से कई प्राथमिक उत्पादों के उत्पादक राष्ट्रों ने 1929-30 वर्षों में अपनी मुद्राओं का अवमूल्यन किया। अपने पड़ोसी को भिखारी बनाओ के उद्देश्य से किए गए विनिमय दर अवमूल्यन प्रायः असफल रहे। यू के के स्वर्ण भंडार में भारी गिरावट आई तथा बैंक आफ इंग्लैण्ड विश्व का बैंकर की भूमिका निभाने की स्थिति में नहीं रहा। वास्तव में सन 1931 में उसे स्वर्णमानक का त्याग करना पड़ा । अमेरिकी फेड ने भी सन 1933 में ऐसा ही किया। इस काल में मौद्रिक नीति अत्यंत अनम्य बन गई। उत्पादन एवं रोजगार में कमी आई तथा कई देशों ने व्यापार बाधाएं खड़ी कीं।

3.39 द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के समय अमरीकी डालर सबसे मजबूत मुद्रा बनकर उभरा । ब्रेटनवुड सम्मेलन तथा उसके बाद स्थापित अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष की स्थापना के साथ डालर अधिकारिक तौर पर एक धुरी बन गया। स्थिर विनिमय दर का अनुरक्षण ब्रेटन वुड प्रणाली का एक प्रमुख उद्देश्य था। सममूल्य की एक प्रतिशत सीमा में विनिमय दर को बनाए रखना, सदस्यों की जिम्मेदारी थी। केवल अपने भुगतान संतुलन में मूलभूत असंतुलन की स्थिति में ही कोई सदस्य अपनी मुद्रा के मूल्य परिवर्तन का सुझाव दे सकता था। यद्यपि स्वर्ण अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष का कील बिंदु था परंतु अधिकांश राष्ट्रों ने अपनी मुद्राओं का मूल्य डालर के मूल्य के साथ जोड़ा, जो स्वय स्वर्ण आधारित था। डालर अंतरराष्ट्रीय विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप का माध्यम बना तथा देशों ने अपने विदेशी मुद्रा भंडार स्वर्ण के साथ डालर में रखने शुरू किए।

3.40 सन् 1967 में पौंड स्टर्लिंग के अवमूल्यन तक इस प्रणाली ने संतोषजनक तरीके से काम किया। कोष का पुनरुद्धार करने एवं वैश्विक द्रवता के प्रबंध हेतु अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने सन् 1967 में विशेष आहरण अधिकार (एसडीआर) का प्रचलन शुरू किया जिसके द्वारा अभावग्रस्त राष्ट्र अधिशेष धारक राष्ट्रों से दुर्लभमुद्रा उधार ले सकते थे। कालांतर में जब अधिकारिक स्वर्ण मूल्य प्रणाली के प्रति अमेरिका की निष्ठा के बारे में आशंका व्यक्त की जाने लगीं, जो बाद में सही साबित हुई जब अमेरिका ने डालर-स्वर्ण संबंध को सन् 1971 में समाप्त कर दिया, उसके बाद ब्रेटन वुड प्रणाली का पतन प्रारंभ हुआ।

3.41 अमेरिका द्वारा स्वर्ण परिवर्तनीयता के निलंबन के बाद दस राष्ट्रों के दल बीच स्मिसोनियन समझौता किया गया जो सिर्फ 14 महीने चला तथा जून 1972 में खत्म हो गया। इस करार में विनिमय दर की घटबढ़ के लिए नई केंद्रीय दरों के ऊपर और नीचे घटबढ़ की सीमा 2.25 प्रतिशत नियत की और यह आशा की गई की इससे अभावग्रस्त देशों के आरक्षी भंडार पर दबाव कम होगा। इस नई प्रणाली की स्थापना के बावजूद यू के के समक्ष भुगतान असंतुलन की समस्या आई तथा अन्त में उसने स्टर्लिंग की विनिमय दर को जून 1972 में मुक्त कर दिया। स्वीडन और जापान ने इंग्लैंड का अनुकरण किया तथा अंततः प्रमुख राष्ट्रों की बीच यह मौन सहमति बनी कि ब्रेटन वुड प्रणाली को समाप्त होने दिया जाए। तदनुसार, मार्च 1973 तक विश्व ने 'अप्रणाली'को अपनाया।

3.42 सन् 1977 में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के सदस्यों ने एक नई लचीली विनिमय दर प्रणाली की शुरुआत करने हेतु प्रयास किए। इस काल में मौद्रिक नीति पहलों का पुनरोदय भी हुआ। व्यापार-बाधाओं की सहायता से विनिमय दर एवं घरेलू ब्याज दर नियत करने की सामर्थ्य प्राप्त हुई। परंतु इससे प्रायः मुद्रास्फीति में वृद्धि हुई क्योंकि इससे विनिमय दर द्वारा नियत आभासी स्थिरक की हानि हुई। तदुपरांत अलग-अलग देशों ने मौद्रिक एवं विनिमय दर लक्ष्यों के रूप में आभासी स्थिरक विकसित करने के प्रयास किए। फ्रांसीसी फ्रेंक तथा इटालियन लीरा को डयूश मार्क या पाउंड स्टर्लिंग के साथ कील बंद किया गया जिससे उनकी मुद्रास्फीति विरोधी विश्वसनीयता में वृद्धि हुई। खराब मूलभूत संकेतकों के कारण इस उधार मिली विश्वसनीयता का अनुरक्षण करना कठिन था। 1990 के दशक के प्रारंभ में विनिमय दर तंत्र के विनाश से यह पुनर्प्रमाणित हुआ। इन देशों के अनुभव से यह स्पष्ट हुआ विनिमय दर के सख्त नियंत्रण की नीति अपने आप में

विश्वासजनक नहीं है। जब अर्थव्यवस्था में अपस्फीति का संकट आया तो प्रायः केंद्रीय बैंकों विनिमय दर पेग का त्याग कर दिया तथा ब्याज दरों में कटौती की।

3.43 यह सुविदित है कि नियत मुद्रा दर से आंतरिक मौद्रिक नीति पर बाध्यता आरोपित होती है। यदि इसके रुझान एवं स्थिरक देश की मौद्रिक नीति के रुझान में ज्यादा अंतर हो तो इससे आवंछनीय पूंजी अंतरप्रवाह या पूंजी पलायन को प्रोत्साहन मिलता है; जिसका केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप से आंशिक समाधान संभव है। 1997 का पूर्व एशिया का आर्थिक संकट हाल के वर्षों में मुद्रा मूल्य अनुरक्षण की असफलता की बड़ी घटना है। सामान्यतया नियत विनिमय दर एवं व्यापक पूंजी गतिशीलता का संयोग संकटग्रस्त राष्ट्रों का साझा गुण था। इससे ऐसे राष्ट्रों की कठिनाइयों पर भी ध्यान गया जिन्होंने अपने वित्तीय क्षेत्र में सुधार किए बिना अपने वित्तीय बाजारों को उन्मुक्त बनाया । यह ज्ञात हुआ कि नियत विनिमय दर, पूर्ण परिवर्तनीयता एवं स्वतंत्र मौद्रिक नीति का संयोग स्थिर नहीं हो सकता तथा इसे साहित्य में ''असंभव त्रिमूर्ति'' के नाम से जाना जाता है।

3.44 वास्तव में विनिमय दर की भारी सुरक्षा की जाती है तथा पूर्णनम्य विनिमय दर अब भी एक मृग मरीचिका ही बनी हुई है। यह देखा गया है कि अधिकांश केंद्रीय बैंक हस्तक्षेप करते हैं भले ही उनका उद्देश्य किसी विशेष विनिमय दर की रक्षा करना नहीं होता। काल्वो एवं रीनहाई (2000) ने विधिक एवं वास्तविक विनिमय दरों का अंतर स्पष्ट किया यह भी सिद्ध किया ऐसे कई राष्ट्र जो मुक्त विनिमय दर का दावा करते हैं वास्तव में अपने विनिमय दर को कीलित करते रहे हैं। वे राष्ट्र, जो मुक्त विनिमय दर प्रणाली का पालन करते, भी विदेशी मुद्रा बाजार में अस्थिरता कम करने के लिए भारी हस्तक्षेप करते हैं। लेवी-ययाति और स्टर्नेनेगर (2001) ने राष्ट्रों की औपचारिक रूप से कील बंदी की घोषणा से बचने की प्रवृत्ति को सिद्ध किया है। ये राष्ट्र हर समय कीलित मुद्रा दर की रक्षा किए बगैर स्थायी विनिमय दर का लाभ उठाने की स्थिति में होते हैं।

3.45 1990 के दशक के दौरान सुधारों ने अनेक अर्थव्यवस्थाओं का कायापलट करके उन्हे स्पंदनशील एवं मुक्त बनाया। उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विनिमय दर का मुक्त निश्चय निरंतर जटिल होता जा रहा है। विश्व बाजारों के समेकन के परिणामस्वरूप पूंजी प्रवाह की संभावना से समस्या और उलझ जाती है। इनमें से अनेक देशों में लाए गए संरचनात्मक परिवर्तनों से विनिमय दर नम्यता या विनिमय दर लक्ष्यों या लक्ष्य सीमा पर विचार करना संभव हुआ है। 1990 के दशक में विश्व के अनेक भागों में कई मुद्रा संकट आए।

3.46 एक मुद्रा के प्रति विश्वास में व्यापक कमी को मुद्रा संकट कहते हैं। सिद्धान्ततः मुद्रा संकट का तात्पर्य उस स्थिति से है जब बाजार सहभागियों की इस प्रत्याशा, कि कील बंदित मुद्रा की वर्तमान विनिमय दर का अनुरक्षण नहीं किया जा सकता, से सट्टा खरीद गतिविधियों को प्रोत्साहन मिलता है जिससे दबाव बढ़ता है तथा वे मुद्रा के अधिकारिक अवमूल्यन या पुनर्मूल्यन के लिए विवश करते हैं। मुद्रा संकट ऐसे देशों में भी पैदा हो सकता है जहां विनिमय दर नियत नहीं है परंतु निश्चित बड़ी सीमा में स्वतंत्रता पूर्वक घटबढ़ सकती है। अतः कई अध्ययन मुद्रा के आभासी या वास्तविक भारी अवमूल्यन की स्थिति को मुद्रा संकट मानते हैं। इस प्रकार मूल संकेतकों से सुमेल करने के लिए किया गया अवमूल्यन इस परिभाषा में नहीं आता। अस्थिर विनिमय दरें मुद्रा संकटों का लक्षण है । मुद्रा के भारी अवमूल्यन अवांछनीय हैं क्योंकि वे विदेशी मुद्रा जोखिम में वृद्धि के साथ विनिमय दर संकेतकों की सूचना अंतर्वस्तु में कमी लाते हैं तथा निवेश को हतोत्साहित करते है। केंद्रीय बैंक द्वारा मुद्रा संकट के निवारण की संभावना केंद्रीय बैंक के पिछले कार्य निष्पादन रिकार्ड, जिससे उसकी विश्वसनीयता निर्धारित होती है, तथा संकटमोचन क्षमता पर आधारित होती है। मुद्रा संकट छूत द्वारा भी पैदा हो सकता है। आगामी संकट के पूर्वगामी संकेतों की पहचान के लिए केंद्रीय बैंक अपने व्यापार-सहभागियों एवं अपने जैसी अर्थव्यवस्थाओं के निष्पादन की निरंतर निगरानी करते हैं।

3.47 पूर्व एशियाई देशों के अनुभव, जहां एक अपेक्षतया नियत विनिमय दर प्रणाली एवं व्यापक पूंजी गतिशीलता के संयोग से मुद्रा संकट पैदा हुआ, इस बात को रेखांकित करता है कि कील बंद विनिमय प्रणालियाँ सट्टेबाजों को आकर्षित करती हैं। न्यून पूंजी गतिशीलता; लंगर मुद्रा देश के साथ उच्च व्यापार अंश; इन देशों में आने वाले संभावी संकटों की समानता तथा सुदृढ़ घरेलू मूल संकेतक सफल विनिमय दर कील की पूर्व शर्तें हैं।

3.48 क्रुगमैन (1979) और फ्लड एवं गार्बर (1984) द्वारा विकसित 'मुद्रा संकट के प्रथम पीढी नमूने' ऐसे परिदृश्य की अवधारणा प्रस्तुत करते हैं जिसमें बजट घाटे के अननुरक्षणीय उच्च स्तर के कारण उसका मुद्रीकरण होता है जिससे अति मुद्रास्फीति का जन्म होता है एवं विनिमय दर प्रणाली ढ़ह जाती है परिणामतः अधिकारिक विदेशी मुद्रा भंडार खाली हो जाता है। इसके विपरीत 'मुद्रा संकट के द्वितीय पीढी प्रतिमान' मुद्रा संकट के ऐसे परिदृश्यों का वर्णन करते हैं जहां मुद्रा संकट मूल संकेतकों के कारण पैदा नहीं होता। निवेशक अनाशावादिता से उत्पन्न स्वयं फलित संकट, निवेशकों की भेड़चाल या छूत, जहां एक देश में उपस्थित मुद्रा संकट दूसरे समान एवं अपने साथ आर्थिक

रूप से संबद्ध देश में मुद्रा संकट पैदा करता है, इनमें शामिल है। तृतीय पीढ़ी प्रतिमान यह दर्शाते हैं कि केवल विदेशी मुद्रा अद्रवता ही बैंकों से जमाराशि निकालने की होड़ की शुरुआत कर सकती है जिससे बाद में मुद्रा प्रणाली का नाश होता है (चांग एवं वेलास्को, 1999) कामिस्की एवं रिन्हार्ट (1999) ने यह सिद्ध किया कि बैंकिंग संकट मुद्रा संकट के पूर्वगामी संकेतक हैं। मुद्रा संकटों के कारणों एवं प्रभावों में विभिन्नताओं के बावजूद केंद्रीय बैंक की भूमिका महत्वपूर्ण है। यह राजकोषीय प्राधिकारी के साथ समन्वय स्थापित करके राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण में कमी करने में सहायता दे सकता है। वाणिज्यिक बैंकों के नियमन एवं पर्यवेक्षण के सशक्तिकरण बैंक सम्बंधित संकटों का निवारण किया सकता है तथा बासल-दो नार्म इस दिशा में सहायक सिद्ध होंगे।

3.49 मुद्रा संकट का एक हल मुद्रा बोर्ड है, जो नियत विनिमय दर प्रणाली का आधुनिक रूप है। मुद्रा बोर्ड प्रणाली में केंद्रीय बैंक एक पूर्व निर्धारित नियत विनिमय दर के अनुरक्षण का वचन देता है। विडंबना यह है कि यह प्रणाली तब स्थापित की जाती है जब मुद्रा में विश्वास की हानि होती है। मुद्रा बोर्ड नोट निर्गम में से विवेकाधिकार को समाप्त करके मुद्रा को अस्थिरता से बीमित करता है तथा आंतरिक मुद्रा स्फीति का निवारण करता है। हिक्स के अनुसार मुद्रा बोर्ड व्यवस्था का मूल डेविड रिकार्डों द्वारा विकसित शास्त्रीय मौद्रिक सिद्धान्त में पाया जाता हैं। ''रिकार्डियन सिद्धान्तों की शुद्ध व्याख्या के अनुसार केंद्रीय बैंकों की कोई जरूरत नहीं पड़नी चाहिए तथा एक नियमानुसार कार्य करने वाला मुद्रा बोर्ड इस कार्य को उतनी ही कुशलता से कर सकता है (हिक्स 1967)''। मारीशस में सन 1849 में पहले मुद्रा बोर्ड की स्थापना हुई (हांके, 2000) । तब से संसार के लगभग सभी भागों में सत्तर से अधिक मुद्रा बोर्ड कार्य कर चुके हैं। मुद्रा बोर्ड सुदृढ़ मूलभूत संकेतकों का स्थान नहीं ले सकते क्योंकि ''पर्याप्त रिजर्व, राजकोषीय अनुशासन एवं मजबूत तथा सुप्रबंधित वित्तीय प्रणाली तथा विधि का शासन'' आदि मूलभूतों के बिना मुद्रा बोर्ड का सफल होना असंभव है (आर्थिक परामर्शदाता परिषद, 1999)। परंतु विशेष परिस्थितियों में एवं निश्चित अवधि के लिए स्थापित मुद्रा बोर्ड एवं विनिमय दर लक्ष्य नीति पर्याप्त स्थिरता, पारदर्शिता एवं कम मुद्रास्फीति दर सुनिश्चित करते हैं।

3.50 एक प्रासंगिक प्रश्न यह है कि क्या केंद्रीय बैंक मुद्रा के बाह्य एवं आंतरिक दोनों मूल्य निर्धारित कर सकता है। पूर्ण परिवर्तनीय पूंजी एवं चालू खातों के कारण केंद्रीय बैंक एक स्वतंत्र घरेलू मौद्रिक नीति नहीं रख सकता। यदि केंद्रीय बैंक ब्याज दर का लक्ष्य निर्धारित करके, मुद्रा के आंतरिक मूल्य का लक्ष्य निर्धारित करता है (मुद्रास्फीति दर), तो उसे विनिमय दर को मुक्त करना पड़ेगा। परंतु, केंद्रीय बैंक विदेशियों द्वारा आंतरिक आस्तियों की खरीद की सीमित कर के या अवशोषण हस्तक्षेप से आंतरिक एवं बाह्य बाज़ारों के बीच सर्किट ब्रेकर स्थापित करके अस्थायी तौर पर मुद्रा की दोनों अर्थात आंतरिक एवं बाह्य मूल्य निर्धारित कर सकता है। परंतु दीर्घावधि में केंद्रीय बैंक को आंतरिक एवं बाह्य मूल्य में से किसी एक को ही चुनना पड़ेगा (होगार्थ, 1996)।

विकास को प्रोत्साहन

3.51 विकास का प्रोत्साहन सभी आर्थिक नीतियों का केंद्रीय बिंदु होता है। मोटे तौर पर हम कह सकते हैं कि सारे केंद्रीय बैंक यह कार्य करते हैं। महान मंदी के बाद रोजगार प्रोत्साहन के साथ यह कार्य भी केंद्रीय बैंकों के सुपुर्द किया गया। परंतु अधिकांश देशों में यह कार्य एक विकास समर्थक पर्यावरण के निर्माण तथा विकास में रुकावट डालने वाले कारकों यथा उच्च ब्याज दरों के निवारण तक सीमित था। भारत जैसे विकासशील राष्ट्रों में इसका क्षेत्र उचित दर पर ऋण की आपूर्ति सुनिश्चित करने से कहीं ज्यादा है। चूंकि बाज़ार तंत्र पूर्ण विकसित नहीं है अतः कई मामलों में वृद्धि उत्तेजक ऋण का प्रवाह, सामान्यतया, पिछड़े क्षेत्रों में नहीं होता। केंद्रीय बैंक को यह सुनिश्चित करना आवश्यक होता है कि सभी उत्पादक क्षेत्रों तथा अविकसित अंचलों को पर्याप्त ऋण आपूर्ति हो। कुछ क्षेत्रों, जिनको अन्य क्षेत्रों के बनिस्बत वरीयता दी जाती है, में वृद्धि को सहारा देने की आवश्यकता होती है। वास्तव में ऐसा बहुत सा साहित्य उपलब्ध है जो आरंभिक चरणों में अलग-अलग वृद्धि दर से विकासमान विभिन्न क्षेत्रों की समस्या से निपटने के लिए केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप का समर्थन करता है। कई देशों में नियंत्रण के अभाव में बैंकिंग प्रणाली गरीब क्षेत्रों से बचत का अवशोषण कर उसका प्रवाह तेजी से विकसित हो रहे क्षेत्रों की ओर कर देती है जहां ऊँची ब्याज दर तथा सुरक्षा निश्चित होती है। (मिर्डाल 1965)।

3.52 विशिष्ट नीतियों द्वारा क्षेत्रीय विकास के अलावा अर्थव्यवस्था को बिना अति उत्साहित किए उसके समग्र ऋण आवश्यकताओं में वृद्धि करना आवश्यक होता है। केंद्रीय बैंक वृद्धि को प्रोत्साहित करते हैं तथा इसकी दर को पूर्वानुमान के अनुरूप बनाए रखने की कोशिश करते हैं। इस संदर्भ में उत्पाद अभाव की अवधारणा महत्वपूर्ण है। उत्पाद अभाव को घटाकर न्यूनतम बनाने की दृष्टि से ब्याज दर या अन्य मौद्रिक नीति उपकरणों के प्रयोग द्वारा समग्र व्यय को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। फिलिप्स कर्व में निहित मुद्रास्फीति - विकास अदला-बदली का सिद्धांत लघु अवधि में ही प्रासंगिक रहता है। अनुसंधान कर्त्ताओं ने यह चिह्नित किया है कि मध्य से दीर्घावधि में यदि मुद्रास्फीति

एक निश्चित सीमा से ज्यादा हो जाती है तो विकास पर दुष्प्रभाव पड़ता है (बारो, 1995 एवं फिशर, 1994) । अतः केंद्रीय बैंकों को विकास एवं मुद्रास्फीति के बीच एक नाजुक संतुलन कायम करना पड़ता है।

संप्रेषण नीति

3.53 भूतकाल में केंद्रीय बैंकिंग संप्रेषण के संदर्भ में ''मौद्रिक रहस्य'' (गुडफ्रेंड, 1985) एवं ''सृजनात्मक अस्पष्टता'' जैसे शब्दों को बहुत महत्व दिया जाता था। केंद्रीय बैंकों को प्रदत्त अधिक स्वायत्तता से वर्तमान युग में उनकी जिम्मेदारी में वृद्धि हुई है तथा संप्रेषण में पारदर्शिता उनकी एक बड़ी जिम्मेदारियों में से एक है। इसके अलावा मुद्रास्फीति लक्ष्य नीति के कारण संप्रेषण नीति - निर्माण प्रक्रिया का अभिन्न अंग बन गया है। जहां भूतकाल में स्पष्ट संप्रेषण नीति के अभाव में बाज़ार सहभागी केंद्रीय बैंक के उद्देश्यों का अनुमान उनके कार्यों से लगाते थे वहीं हाल के वर्षों में केंद्रीय बैंक संप्रेषण ने बाज़ार प्रत्याशा का निर्धारण शुरू किया है। केंद्रीय बैंक को दृष्टिकोण, जोखिम का आकलन एवं अपने लक्ष्यों का जनता के बीच प्रसार करना पड़ता है। इनमें यह भी शामिल है कि जनता एवं बाजार सहभागी केंद्रीय बैंक के वक्तव्यों में निहित नाजुक गूढ़ार्थों को कितनी भली प्रकार समझते हैं क्योंकि उनकी समझ एवं व्याख्या पर मौद्रिक नीति की प्रभावकारिता निर्भर करती है। इस बात पर भी पर्याप्त चर्चा हो चुकी है कि क्या अलग-अलग एजेंटों के लिए संप्रेषण माध्यम अलग-अलग हों। हाल के वर्षों में सूचना एवं संप्रेषण प्रौद्योगिकी में हुए आविष्कारों ने केंद्रीय बैंकों के संप्रेषण को अधिक दक्ष बनाया है। परंतु इससे बाजारों एवं देशों में छूत फैलने की संभावना बढ़ी है। इन स्थितियों में यह आवश्यक हो जाता है कि बाज़ार को सम्यक संकेत दिए जाएं जो बाज़ार सहभागियों में विश्वास पैदा कर सकें।

सरकार का बैंकर

3.54 अपनी सरकारों के वित्त प्रबंध एवं उनको उधार देने या उनके सार्वजनिक ऋण का प्रबंध करने के उद्देश्य से अधिकांश बैंकों जैसे बैंक आफ इंग्लैंड का जन्म हुआ। इन केंद्रीय बैंकों को बहुविध राजकोषीय उत्तरदायित्व सौंपे गए तथा उनसे संबंधित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु उन्होने संस्था संरचना विकसित की। विकसित देशों में केंद्रीय बैंकिंग के शुरुआती वर्षों में तथा विकासशील देशों में वर्तमान में भी राजस्व एवं व्यय में अस्थायी असंतुलन से उत्पन्न धनाभाव) से निपटने के लिए सरकारी पेपर की प्रतिभूति पर तदर्थ ऋण सहायता देते हैं।

3.55 पारंपरिक रूप से, मौद्रिक नीति एवं सार्वजनिक ऋण प्रबंध की अनुपूरकता के कारण सरकारी ऋण का प्रबंध केंद्रीय बैंकों द्वारा किया जाता था। केंद्रीय बैंक को मुक्त बाज़ार परिचालन का उपकरण उपलब्ध कराने तथा इसके नोटों के लिए आस्ति आधार प्रदान करने की दृष्टि से सरकारी प्रतिभूतियां उपयोगी हैं। परंतु चूंकि सरकारी ऋण के मुद्रीकरण से आधार मुद्रा में वृद्धि होती है अतः मूल्य स्थिरता के लिए इसकी आपूर्ति का नियंत्रण महत्वपूर्ण है। इसके मूल्य अस्थिरता प्रभाव को समाप्त करने के लिए केंद्रीय बैंक राजकोषीय घाटे से उत्पन्न संयुक्त द्रवता को असार्वजनिक क्षेत्र को नया ऋण जारी करके निरस्त करने का प्रयास कर सकता है। इन परिस्थितियों में भी अनुभवजन्य साक्ष्य से यह ज्ञात होता है कि भारी राजकोषीय घाटा आभासी एवं वास्तविक ब्याज दरों पर उर्ध्व दिशा में दबाव बढ़ाता है एवं मौद्रिक नीति परिचालन की स्वायत्तता को सीमित करता है।

3.56 अविवेकी राजकोषीय परिस्थितियां अंतर्निहित स्फीतिकारक प्रवृत्तियों वाली मौद्रिक नीति को जन्म देती हैं। इसके राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति उपकरणों में भी पारस्परिक निर्भरता है। प्रायः मौद्रिक नीति परिचालनों में सरकारी ऋण उपकरणों एवं बाज़ारों का प्रयोग किया जाता है। अतः मौद्रिक नीति उपकरणों एवं परिचालन प्रक्रियाओं का चुनाव सरकारी ऋण बाज़ार के निष्पादन पर असर डाल सकता है। मुद्रा नीति के प्रभावी परिचालन के लिए सरकार के लघु एवं दीर्घकालिक वित्त प्रवाह की जानकारी आवश्यक है।

3.57 हाल के वर्षों में ऋण प्रबंध एवं मुद्रानीति कार्यों में टकराव पर निरंतर चर्चा हो रही है। इसके समाधान के लिए कई देशों ने विशेषीकृत ऋण प्रबंध कार्य नीति के क्रियान्वयन हेतु एक अलग ऋण कार्यालय की स्थापना की है। इस विकल्प के चयन द्वारा सरकारें ऋण प्रबंध को दी गई भूमिका को रेखांकित; ऋण प्रबंध को राजनैतिक दखल अंदाजी से बचाने की केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता एवं ईमानदारी की रक्षा एवं सार्वजनिक उधार में पारदर्शिता एवं जवाबदेही सुनिश्चित करना चाहती हैं। (कसार्ड एवं फाकेर्ट्स-लांडो, 1997)

3.58 दिलचस्प बात यह है कि समय के साथ सार्वजनिक ऋण प्रबंध में परिवर्तन आया है। उस परिस्थिति, जब शुरू में कुछ सरकारें निजी बैंकरों से ऋण लेती थीं, से प्रारंभ करके सार्वजनिक ऋण प्रबंध की जिम्मेदारी निभाने के लिए अनेक केंद्रीय बैंकों की स्थापना की गई। वर्तमान में उसके मुद्रास्फीति कारक प्रभावों की व्यापक जानकारी के प्रकाश में यह धारण जोर पकड़ रही है कि केंद्रीय बैंक सरकार का वित्तपोषण करने से बचें। इसमें अतिरिक्त सरकारी ऋण प्रबंध हेतु राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति के बीच घनिष्ठ तालमेल जरुरी है तथा केंद्रीय बैंक सरकार की अतिरिक्त ऋण की मांग को अस्वीकार करने में सक्षम होना चाहिए। अनेक देशों के अनुभव से इस धारणा को बल मिलता है कि ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति कार्यों को अलग कर देना चाहिए।

3.59 अधिक विशिष्टतापूर्वक यह कहा जा सकता है कि यदि ऋण प्रबंध की जिम्मेदारी केंद्रीय बैंक को दी जाती है तो उसके समक्ष विरोधाभासी लक्ष्य जैसे कि क्या मौद्रिक नीति के दृष्टिकोण से द्रवता कम की जाए या राजकीय ऋण कार्यक्रम की सफलता के लिए द्रवता में वृद्धि की जाए में से एक का चुनाव करने की समस्या उत्पन्न होती है। यह मुद्दा भी चिंता का विषय बन जाता है कि सरकारी ऋण पर ब्याज भुगतान को कम करने के लिए केंद्रीय बैंक पर ब्याज दरों को कृत्रिम ढंग से करने के लिए दबाव डाला जा सकता है। इसके अतिरिक्त, जैसा अलसीना एवं अन्य (1990) का तर्क है कि एक अलग ऋण प्रबंध प्राधिकारी बजट निर्माण प्रक्रिया से बांह भर की दूरी बनाए रखेगा तथा लघु अवधि बजट लक्ष्यों के कारण दीर्घावधि ऋण प्रबंध लक्ष्यों की बलि नहीं देगा।

3.60 संसार भर में ऋण प्रबंध को मुद्रा प्रबंध कार्यों से पृथक करने की प्रवृत्ति बढ़ रही है हालांकि विभिन्न देशों में इस की वास्तविक संरचना में अंतर है। आर्थिक सहकार एवं विकास संगठन (ओइसीडी) के कुछ सदस्य देशों जैसे जर्मनी एवं ब्रिटेन ने परिचालन दक्षता में सुधार लाने की दृष्टि से एक स्वायतः ऋण प्रबंध बोर्ड की स्थापना करने का फैसला किया, कुछ अन्य राष्ट्रों जैसे आस्ट्रेलिया, फ्रांस तथा अमरीका ने सार्वजनिक नीति एवं वित्तीय प्रबंध के बीच संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया तथा वित्त मंत्रालय के अधीन एक अलग बोर्ड की स्थापना की (सिंह, 2005)। विकासशील देशों के लिए आदर्श प्रतिमान के बारे में अलग-अलग मत हैं। कुछ विशेषज्ञ यह मानते हैं कि शुरू में यह बोर्ड वित्त मंत्रालय के नियंत्रणाधीन स्थापित किया जाए (करी एवं अन्य, 2003) जब कि कुछ अन्य यह मानते हैं कि ऐसे देशों, जिनमें राजकोषीय घाटे का स्तर ऊंचा है तथा वित्तीय बाज़ार अविकसित अवस्था में है, में ऋण प्रबंध नीति का समग्र प्रभावकारिता के लिए अलग बोर्ड की स्थापना उचित नहीं है। (काल्डरेन, 1997)

बैंकों का बैंक

3.61 कई देशों में केंद्रीय बेंकों की स्थापना वित्तीय स्थिरता के अनुरक्षण हेतु की गई। प्रारंभिक काल में वित्तीय प्रणाली में अनिवार्यतः बैंकों का वर्चस्व था; अतः वित्तीय स्थिरता बैंकों की स्थिरता पर निर्भर करती थी। वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय बैंकों को सबसे पहले अंतिम ऋणदाता की भूमिका दी गई। यह एक सीमित भूमिका थी तथा बैंक केवल संकट प्रबंध का कार्य करते थे।

3.62 केंद्रीय बैंकों की भूमिका का विस्तार हुआ है; तथा अब इसमें अन्य वित्तीय संस्थाओं तथा संपूर्ण भुगतान प्रणाली का पर्यवेक्षण भी शामिल है। संकट के फैलने की संभावनाएं कई गुना बढ़ गई हैं। उदाहरणार्थ एक बैंक स्तरीय समस्या बढ़ कर प्रणालीगत समय बन सकती है यदि कुछ बैंकों की असफलता के फलस्वरूप जमाकर्ताओं का सभी बैंकों से विश्वास डिग जाए एवं मजबूत संस्थाओं से भी अपनी जमा निकालने की होड़ लग जाए। बढ़ते वैश्वीकरण का अर्थ यह है कि ऐसे संकटों का प्रभाव राष्ट्रीय सीमाओं के आरपार भी फैल सकता है। समय के साथ-साथ केंद्रीय बैंक के कर्त्तव्य वाणिज्यिक बैंकों की मज़बूती सुनिश्चित करने तक ही सीमित नहीं रहे बल्कि सारी वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी भी उसमें समाहित हो गई।

अंतिम ऋणदाता

3.63 बैंकिंग संकटों के जन्म एवं संप्रेषण माध्यमों के बारे में अनेक सिद्धांत प्रचलित हैं। एक बैंकिंग संकट वह घटना है जब बैंकिंग प्रणाली के अनेक या सभी बैंक अपने ऋणदाताओं से आकस्मिक मांग का सामना करते हैं (कालोमिरिस एवं गोर्टन, 1991)। एकाधिक ऋण सृजन सिद्धांत के कारण बैंक ऐसी मांग का सामना नहीं कर सकते। ऐसे संकट काल में वाणिज्यिक बैंकों को बट्टीकरण के माध्यम से सामान्य द्रवता उपलब्ध करवाने के अलावा केंद्रीय बैंक, जिनका दिवाला न निकला हो ऐसे, द्रवताहीन बैंकों की भी मदद करता है। अंतिम ऋणदाता की भूमिका निर्वाह करने वाली संस्था के बिना बैंकिंग संकटों का निवारण अश्यक्य है।

3.64 वास्तव में कई केंद्रीय बैंकों की स्थापना बैंकिंग संकटों का सामना करने के लिए ही की गई। केंद्रीय बैंक का कार्य इतिहास 300 वर्ष से ज्यादा पुराना है। जैसा टेलर (1997) ने उल्लेख किया है, जब बैंक आफ इंग्लैंड की स्थापना हुई तब लाभ वृद्धि के दृष्टिकोण से प्रेरित होकर बैंक आवश्यकता से अधिक परिमाण में मुद्रा का निर्गम करते थे। अनेक बार ऐसी परिस्थितियां बनीं कि जब बैंक संयुक्त रूप से भी नकदी की मांग पूरी नहीं कर सकते थे तथा परिवर्तनीयता निलंबित कर देते थे। बैंक आफ इंग्लैंड प्रायः उनके ऋण के नकदीकरण में उनकी मदद करता था। इसी प्रकार तेजी मंदी के निरंतर चक्रों एवं कई बैंक असफलताओं की पृष्ठभूमि में सन 1913 में अमरीका में फ़ेडरल रिजर्व स्थापित किया गया। यद्यपि शुरू में केंद्रीय बैंक की आवश्यकता के बारे में आम सहमति नहीं थी परंतु 1907 के बैंक संकट के बाद अंततः केंद्रीय बैंकिंग की स्थापना के पक्ष में जनमत बना। आज के लिहाज से देखा जाए तो उस समय फंड की भूमिका अंतिम ऋणदाता तक ही सीमित थी।

3.65 केंद्रीय बैंक की अंतिम ऋणदाता भूमिका का मूल थोर्न टन (1802) के कार्यों में पाया जाता है, हालांकि यह शब्द बेरिंग (1797) ने गढ़ा था। बगहार (1873) ने इस अवधारणा को और जनप्रिय बनाया

तथा यह आज तक केंद्रीय बैंकिंग सिद्धांत का मुख्य आधार है। बगहार द्वारा प्रतिपादित अंतिम ऋणदाता भूमिका का निहितार्थ यह है कि केंद्रीय बैंक अद्रव परंतु समर्थ बैंकों को उच्च ब्याज दर पर द्रवता उपलब्ध करें ताकि प्रणालीगत संकट का निवारण हो और नैतिक जोखिम से बचा जा सके। यथा अपनी अंतिम ऋणदाता भूमिका के प्रयोग द्वारा केंद्रीय बैंक संकटप्रवण बैंकिंग क्षेत्र की स्थिरता की रक्षा करे ताकि वास्तविक क्षेत्र को उसके परिणामों से बचाया जा सके।

3.66 जहां तक नैतिक जोखिम की समस्या का प्रश्न है, इस संबंध में यह तर्क दिया जाता है कि यदि बैंकों को यह ज्ञात हो कि संकट के समय वे कम ब्याज दर पर ऋण ले सकते हैं तो वे अत्यधिक जोखिम उठाने को तत्पर हो सकते हैं। एक मत यह है कि उच्च ब्याज दर दंडात्मक दर है। एक मत यह है कि संकट के आरंभकाल में ही ब्याज दर में वृद्धि करनी चाहिए, ताकि दंड का भुगतान जल्दी किया जा सके। इससे बिना मूल्य सुरक्षात्मक ऋण लेने की प्रवृत्ति का निषेध होता है तथा बैंकिंग रिज़र्व की यथा संभव रक्षा होती है। व्हीलोक (2002) ने यह चिन्हित किया कि अमेरिकी फंड के बट्टा खिड़की परिचालनों की प्रत्यक्ष कार्यवाही (बाध्यकारी) से महान मंदी से पूर्व अमरीका में बट्टा खिड़की ऋण में विचारणीय कमी आई। गुडफ्रेंड एंड किंग (1988) की टिप्पणी के अनुसार बगहाट सिद्धांत के प्रतिपादन के समय वित्तीय बाज़ार अविकसित अवस्था में थे। वे तर्क देते हैं कि यद्यपि समग्र द्रवता (मौद्रिक नीति) की स्थिति में केंद्रीय बैंक का हस्तक्षेप महत्वपूर्ण है परंतु परिष्कृत अंतर बैंक बाज़ार के कारण व्यक्तिगत हस्तक्षेप (बैंकिंग नीति) की संभावना कम हुई है। यह तर्क इस बात पर जोर देता है कि मुक्त बाज़ार परिचालन से पर्याप्त द्रवता सुनिश्चित की जा सकती है तथा अंतर बैंक बाज़ार द्वारा उसका आबंटन किया जाता है। परंतु नवीन बैंकिंग सिद्धांत उपर वर्णित आलोचना को काटने वाला तर्क प्रस्तुत करते हैं। ब्रायंट एवं वालेस (1980) तथा डायमंड एवं डिबविग (1983) जमाकर्ताओं के बीच समन्वयाभाव के कारण बैंकों की कमजोरी की संभावना प्रदर्शित करते हैं। इसको देखते हुए अर्थव्यवस्था में वित्तीय स्थायित्व की अनुरक्षा के लिए अंतिम ऋणदाता की भूमिका का महत्व बना रहता है।

3.67 बैंकिंग संकट से संबंधित एक महत्वपूर्ण विषय यह है कि हानि को अंततःकिस प्रकार आबंटित किया या सहा जाता है। चूंकि अखिरकार केंद्रीय बैंक सरकार का ही हिस्सा है अतः प्रारंभिक तौर पर सरकार यह हानि सहन करती है परंतु कालांतर में इसे ऊंचे करों के रूपा में समाज से ही वसूला जाता है। अपनाए गए तकनीक संयोग से यह निश्चित होता है कि अंततः हानि का आबंटन किस प्रकार होता है।

3.68 बैंकों की हानि, जो प्रायः भारी अनिष्पादक आस्तियों के रूप में होती है, की समस्या के मूल कारणों का समाधान करना आवश्यक है। ये कारण प्रायः उद्योग क्षेत्र में विकृतियों, राजकोषीय असंतुलन या अर्थव्यवस्था के संरचनात्मक असंतुलन में देखे जा सकते हैं तथा इनके समाधान हेतु बड़े नीति परिवर्तनों की आवश्यकता पड़ती है। बैंकों के कामकाज के लिए सुदृढ़ एवं स्पर्धात्मक परिचालन पर्यावरण बनाने के साथ-साथ वास्तविक क्षेत्र में प्रतियोगिता एवं दक्षता को प्रोत्साहन देने के लिए सुदृढ़ एवं स्थिर समग्र आर्थिक पर्यावरण की रचना की जाए। वास्तविक क्षेत्र की विकृतियों को मिटाए बगैर बैंकिंग संकट का समाधान करने से बाद में संकट की पुनरावृत्ति की संभावना बनी रहती है। ज्यो-ज्यों बैंकिंग क्षेत्र का विस्तार हुआ एवं इसने अतिरिक्त कार्य शुरू किए, इसका जोखिम भी कई गुना बढ़ गया।

वित्तीय क्षेत्र विनियमन एवं पर्यवेक्षण

3.69 बैंकिंग कारोबार के कई गुण ऐसे हैं जिनसे अस्थिरता उत्पन्न हो सकती है। प्रथम उनकी मध्यस्थ की भूमिका से उत्तोलन का जन्म होता है। बैंकों की आस्तियों एवं देनदारियों में बेमेलता निहित होती क्योंकि आस्तियों की परिपक्वता अवधि प्राय: देनदारियों से अधिक होती है। चूंकि वाणिज्यिक बैंकों की शोध क्षमता बैंक की अपने जमाकर्त्ताओं एवं वित्तीय बाज़ारों का विश्वास बनाए रखने की क्षमता पर निर्भर होती है अतः बैंक का पारदर्शिता अभाव काउंटर पार्टी की बैंक सामर्थ्य एवं दुर्बलताओं का संगत आकलन करने की कोशिश को बेकार कर देता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि बैंक की तुलनपत्र एवं तुलनपत्रेतर स्थितियों में औद्योगिक एवं वाणिज्यिक कंपनियों की अपेक्षा तीव्र गति से परिवर्तन हो सकते हैं। (वेयर, 1996)

3.70 वित्तीय क्षेत्र स्थायित्व के अनुरक्षण हेतु केंद्रीय बैंक वित्तीय क्षेत्र के विनियमन एवं पर्यवेक्षण में लगातार अभिरुचि रखते हैं। वित्तीय क्षेत्र के प्रभावकारी प्रबंध एवं बाज़ार अनुशासन के लिए विनियमन एवं पर्यवेक्षण आवश्यक है क्योंकि ढीले ढाले, खराब तरीके से डिजाइन किए हुए या अपर्याप्त क्रियान्वयन से वित्तीय अस्थिरता बढ़ सकती है। इसके विपरीत पर्यवेक्षण स्तर पर प्रत्यक्ष तौर पर नरम नीति से विकृत प्रेरणा के आधार पर कार्यरत कमजोर बैंकों को कारोबार करने की छूट मिल सकती है या अप्रत्यक्ष तौर पर अंदर वालों के दुर्व्यवहार को प्रोत्साहन देता है जिससे कालांतर में बड़ी साफ सफाई की आवश्यकता पड़ती है (शेंग, 1991)

3.71 बैंकिंग पर्यवेक्षण का प्राथमिक औचित्य यह है कि इससे जमाकर्ताओं की हानि का जोखिम सीमित होता है तथा बैंकों के प्रति जनसामान्य के विश्वास की रक्षा होती है। जबकि पर्यवेक्षण स्वभावतः

एक बैंक पर ध्यान केंद्रित करता है परंतु पर्यवेक्षक को इस संभावना के प्रति सजग रहना चाहिए कि संस्था विशेष की समस्याओं का अन्य संस्थाओं पर व्यापकतर एवं प्रणालीगत दुष्प्रभाव एवं भुगतान प्रणालियों की मजबूती पर असर पड़ता है (वेयर, 1996)। पर्यवेक्षण कार्य का ध्यान प्रमुखतया जमाकर्ता रक्षा गतिविधियों, कारोबार परिचालन नियम एवं सूचना प्रकटीकरण, व्यष्टिगत - विवेक सम्मत पर्यवेक्षण (संस्थाओं की प्रत्यक्ष एवं परोक्ष निगरानी) एवं समष्टिगत विवेकसम्मत विश्लेषण पर केंद्रित होता है।

3.72 हाल के वर्षों में उदारीकरण एवं वैश्वीकरण से कई देशों के वित्तीय क्षेत्रों का अभूतपूर्व विकास हुआ है। बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थानों में अंतर का धूमिल होना एवं सार्वभौम बैंकिंग की बढ़ती प्रवृत्ति, वित्तीय लिखतों जैसे व्युत्पन्नों में लगातार तीव्र गति नवीकरण तथा राष्ट्रीय सीमाओं से पार वित्तीय बाज़ारों का एकीकरण इस क्षेत्र के उदीयमान लक्षण हैं। इन परिवर्तनों से वित्तीय क्षेत्र का पर्यवेक्षण अधिक जटिल एवं गतिशील बना है। तदनुसार संसार में पर्यवेक्षकों ने अपना ध्यान व्यष्टि विवेकी विश्लेषण से हटा कर समष्टि-विवेकी-विश्लेषण पर केंद्रित किया है।

3.73 बैंक पर्यवेक्षकों का यह प्रयास रहता है कि बैंक वित्तीय तौर पर मजबूत एवं सुप्रबंधित हों तथा अपने जमाकर्त्ताओं के लिए कोई जोखिम पैदा न करें। इन उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पर्यवेक्षक तीन प्रश्नों का उत्तर खोजने का प्रयास करते हैं : i) प्रत्येक बैंक कितना जोखिम उठा रहा है? ii) उस जोखिम के प्रबंध के लिए कौन-कौन से भौतिक (यथा पूंजी एवं द्रवता) या अभौतिक (प्रबंध की गुणवत्ता एवं नियंत्रण प्रणालियां) साधन उपलब्ध हैं? iii) क्या चिन्हित संसाधन स्तर जोखिम प्रबंध के लिए पर्याप्त है? (ग्रे, 1996)। हाल के वर्षों में परंपरागत पूँजी, आस्तियां, प्रबंध, आय, द्रवता एवं ब्याज दर संवेदनशीलता पर आधारित दृष्टिकोण से हटाकर अधिक जोखिम आधारित दृष्टिकोण पर केंद्रित किया जा रहा है। इस दृष्टिकोण का मूल बासल पूंजी समझौते की सिफारिशों (1988) में निहित है। बासल समिति बैंकिंग पर्यवेक्षण मामलों पर चर्चा के लिए एक मंच उपलब्ध करवाती है। हाल के वर्षों में यह बैंकिंग पर्यवेक्षण के सभी पहलुओं पर मानक स्थापित करने वाली संस्था के रूप में उभरी है। बासल समिति द्वारा विकसित संरचना में प्रमुख जोखिमों, उनका स्तर एवं उन क्षेत्रों जिनमें वह पैदा हो सकते हैं की पहचान का समावेश है। इन जोखिमों की पहचान के बाद इनमें कमी लाने के लिए समुचित संसाधनों सहित एक व्यापक पर्यवेक्षी संरचना का संयोजन किया जाना है। आवश्यक संसाधनों का परिमाण संभावित जोखिमों के स्तर एवं सघनता के आधार पर तय किया जाता है। निकटतर भूतकाल की घटना यह है कि ''अंतरराष्ट्रीय कन्वर्जेंस आफ कैपिटल मेजरमेन्ट एण्ड कैपिटल स्टैन्डर्ड्स'' नई संरचना जो बासल II के (नवंबर 2005) नाम से विख्यात है, में 'अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत बैंकों की पूंजी पर्याप्तता से संबंधित पर्यवेक्षी विनियम का प्रावधान किया गया है। बासल-II एक 'त्रिस्तंभ अवधारणा' - न्यूनतम पूँजी आवश्यकता, पर्यवेक्षी समीक्षा एवं बाज़ार अनुशासन का प्रयोग करता है। प्रथम स्तंभ के अनुसार परिष्कृत जोखिम संवेदनशीलता का विकास किया जाता है ताकि बैंकों के समक्ष आने वाले तीनों प्रकार के जोखिमों यथा साख जोखिम, परिचालन जोखिम एवं बाज़ार जोखिम के लिए पूंजी पर्याप्तता का आकलन किया जा सके। इसके साथ ही, यह व्यवस्था हो कि प्रत्येक संघटक की अलग-अलग परिष्कार स्तर पर दो या तीन तरीकों से गणना की जा सके। द्वितीय स्तंभ प्रथम स्तंभ के प्रति नियामक प्रतिक्रिया से संबंध रखता है तथा पहले से उपलब्ध उपकरणों की बजाय अधिक परिष्कृत उपकरण उपलब्ध करवाता है। यह बैंकों के समक्ष आने वाले अन्य जोखिमों यथा प्रमुखतया - प्रतिष्ठा हानि एवं विधिक जोखिमों के प्रबंध के लिए संरचना उपलब्ध करता है। तृतीय स्तंभ बैंकों के अनिवार्य प्रकटीकरणों के दायरे का विस्तार करता है। इसकी रूपरेखा इस प्रकार बनाई गई है कि बाज़ार को किसी बैंक के जोखिमों के बारे में सही जानकारी पाने एवं तदनुसार उसके साथ व्यवहार सक्षम बनाता है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पर्यवेक्षी प्रणालियों में सुधार के लिए किए जा रहे प्रयासों के बावजूद कुछ बाधाएं यथा पर्यवेक्षी स्वायत्तता का अभाव, राजनैतिक हस्तक्षेप, जो दुर्बल बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं को बंद नहीं होने देता, पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व का अभाव के अलावा विधिक चुनौती का डर प्रभावकारी पर्यवेक्षण में समस्याएं पैदा करते हैं।

3.74 केंद्रीय बैंक परंपरागत तौर पर बैंकों एवं अन्य वित्तीय संस्थाओं का पर्यवेक्षण करते रहे हैं। परंतु चूंकि केंद्रीय बैंक अपनी नियामक भूमिका में बाज़ार सहभागियों के व्यवहार को प्रभावित करने की स्थिति में होते हैं अतः केंद्रीय बैंकों द्वारा पर्यवेक्षण से नैतिक जोखिम की समस्या पैदा होती है। अतः आजकल अलग पर्यवेक्षक की अवधारणा को बल मिला है।

3.75 केंद्रीय बैंक ही पर्यवेक्षण का कार्य करे इसके पक्ष में अनेक तर्क दिए जा सकते हैं। प्रथमतः, केंद्रीय बैंक वित्तीय एवं वास्तविक क्षेत्र से संबधित खूब सारे आंकड़े एकत्रित करते हैं तथा बाज़ार एवं कार्यवाही के समय के बारे में वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण बना सकते हैं। दूसरे, अधिकांश केंद्रीय बैंक भुगतान एवं निपटान सेवाएं प्रदान करते हैं तथा प्रणाली की द्रवता स्थिति की शीघ्र निगरानी करने में सक्षम होते हैं। तीसरे, अपनी अंतिम ऋणदाता की भूमिका के कारण वह वित्तीय क्षेत्र की उधार जरुरतों की पूर्वसूचना पा सकता है जिससे उनकी द्रवता आवश्यकताओं का पूर्वाभास हो सकता है।

3.76 इसके विपरीत पर्यवेक्षण कार्यों को केंद्रीय बैंकों को नहीं सौंपने का मुख्य तर्क नैतिक जोखिम समस्या पर आधारित है। नैतिक जोखिम की समस्या तब पैदा होती है जब केंद्रीय बैंक द्वारा पर्यवेक्षित संस्थाओं के जमाकर्त्ताओं एवं ऋणदाताओं को यह विश्वास होता है कि असफलता की स्थिति में उनके हितों की सुरक्षा की जाएगी जिससे अवांछनीय जोखिम उठाने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है। ''नैतिक जोखिम'' की समस्या के अलावा ''क्रिसमस ट्री इफेक्ट'', ''अफसरशाही का दानव'' ''नियामक बंदी'' आदि से भी यह संकेत मिलता है कि मौद्रिक नीति एवं पर्यवेक्षी भूमिका का विलगन वांछनीय है (दिमास्त्री एवं गुनेरो, 2003)।

3.77 नैतिक जोखिम समस्या के समाधान की कोशिश में, कुछ देशों ने पर्यवेक्षी भूमिका को केंद्रीय बैंक से अलग किया है, यूनाइटेड किंगडम इसका उल्लेखनीय उदाहरण है जहां सन 1988 में वित्तीय पर्यवेक्षी प्राधिकारी का सृजन किया गया परंतु इस निकाय की स्थापना को अधिक समय नहीं हुआ है जिससे ऐसे विलगन का आकलन करना असामयिक होगा (वासुदेवन, 2003)

3.78 बैंक पर्यवेक्षण एवं मौद्रिक नीति के संयुक्त दृष्टिकोण के समर्थक ''बड़े पैमाने एवं विस्तृत विषय क्षेत्र के सुलाभ'', 'वित्तीय निकाय समूहों का अस्तित्व', ''प्रतिस्पर्धा निरपेक्षता'' एवं ''पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व'' आदि कारणों का उल्लेख करते हैं। ''प्रतिस्पर्धा निरपेक्षता'' के परिप्रेक्ष्य में यह उल्लेख किया जाता है कि वित्तीय उत्पादों के बीच मिटते अंतर के कारण यह संभव है एक समान उत्पाद उपलब्ध करने वाली वित्तीय संस्थाओं का पर्यवेक्षण अलग-अलग किया जाएगा। इसका परिणाम यह हो सकता है कि उन संस्थाओं पर अलग विनियम लागू होंगे, तथा उनकी सूचना आवश्यकताएं भिन्न-भिन्न होंगी जिससे उनके पर्यवेक्षी खर्चे असमान होंगें। इन भिन्नतापूर्ण नियामक व्यवहार एवं लागत से कुछ संस्थाओं को सापेक्ष प्रतिस्पर्धात्मक लाभ मिलेगा इनको पर्यवेक्षी अंतरपणन (अरबिट्रेज) उत्तरदायित्वों की स्पष्ट परिभाषा से वित्तीय नियामकों के परिचालन की पारदर्शिता एवं जवाबदेही न सिर्फ सांविधिक लक्ष्यों के सापेक्ष इसके निष्पादन बल्कि नियामक प्रणाली, विनियिमन लागत एवं इसकी अनुशासनात्मक नीतियों के क्रियान्वयन में उल्लेखनीय सुधार होगा।

3.79 पर्यवेक्षी कार्यों का विलगन एवं केंद्रीय बैंक के बाहर उनका प्रस्थापन संभव है, जैसा कि यूनाइटेड किंगडम के उदाहरण से स्पष्ट होता है। परंतु ऐसी स्थिति में नीतियों, कार्यवाहियों एवं सूचना के जबरदस्त समन्वय की जरूरत पड़ती है। वित्तीय स्थिरता के विषय में पारस्परिक सहयोग की संरचना स्थापित करने के लिए वित्तीय पर्यवेक्षी प्राधिकारी, केंद्रीय बैंक एवं राजकोष के मध्य स्पष्ट सहमति आवश्यक है। सब संस्थाओं की भूमिकाओं की स्पष्ट परिभाषा की आवश्यकता है ताकि हरेक की स्पष्ट एक सुपरिभाषित भूमिका हो तथा हरेक को उसके कार्यो के लिए जवाबदेह ठहराया जा सके । ''प्रत्येक संस्था एवं संसद के परिचालन में पारदर्शिता होना अनिवार्य है तथा जनता यह अवश्य जान सके कि कौन किस काम के लिए जिम्मेदार है'' (बैंक आफ इंग्लैंड, 1997) प्रत्येक संस्था अपने उत्तरदायित्वों को दक्षतापूर्वक निभा सके इसके लिए उनके बीच सूचना का नियमित आदान प्रदान होना चाहिए । समन्वय में असफलता से प्रणालीय विनाश का खतरा हो सकता है।

3.80 बैंकों एवं वित्तीय संस्थानों में घटती हुई सुस्पष्टताओं की पृष्ठभूमि में अतिनियामक (सुपर रेगुलेटर) की अवधारणा को बल मिला है। 'अतिनियामक'शब्द का तात्पर्य उस संरचना से है जिसमें बैंकों, प्रतिभूति फर्मों एवं बीमा कंपनियों के नियामकों की भूमिकाओं का संयोग होता है। अतिनियामक के पक्ष में ''बड़े पैमाने के सुलाभ'', ज्यादा जवाबदेही तथा प्रतिस्पर्धात्मक असमानता, इनकांसिस्टेंसी, नकल, अतिव्यापन (ओवरलेप) एवं कमियाँ आदि समस्याओं का निवारण तर्क दिए जाते हैं। परंतु आलोचक चिन्हित करते हैं कि उदाहरणार्थ, बैंकों एवं म्युच्युअल फंड के विनियमन में एक जैसे दृष्टिकोण से काम नहीं लिया जा सकता। एक और जहां बैंकों का नियमन विवेकसम्मत कारणों से किया जाता है वहीं म्युचुअल फंडों के विनियमन का उद्देश्य निवेशकों के लिए पर्याप्त सूचना का प्रकटीकरण सुनिश्चित करना हो सकता है। एक नियामक विभिन्न प्रकार के जोखिमों एवं पर्यवेक्षण लक्ष्यों में अंतर को समझने में असमर्थ हो सकता है (गुडहार्ट एवं अन्य, 1998)। इस विषय में प्रमुख प्रश्न यह है कि; बैंकिंग पर्यवेक्षण में केंद्रीय बैंक की महत्वपूर्ण भूमिका के मद्देनजर ऐसे अतिनियामक की स्थापना केंद्रीय बैंक के अंदर की जाए या बाहर की जाए। राज (2005) ने चिन्हित किया है कि उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं, जहां वित्तीय प्रणाली जटिल नहीं है वहा विशिष्ट नियामक द्वारा पर्यवेक्षण की वर्तमान प्रणाली सुचारु रूप से कार्य कर रही है। अतः केंद्रीय बैंक के अंदर या बाहर एक अतिनियामक की स्थापना का कोई औचित्य नही है। इस व्यापक बहस एवं निरंतर जारी अनुभवजन्य अध्ययन के बावजूद साहित्य का कोई अंतिम निर्णय नहीं आया है।

वित्तीय स्थिरता

3.81 वित्तीय स्थिरता की अवधारणा को अनेक प्रकार से परिभाषित किया गया है। मिश्किन (1991) के अनुसार वित्तीय स्थिरता वह स्थिति है जिसमें वित्तीय प्रणाली बिना किसी बड़ी बाधा के निरंतर दक्षता पूर्वक बचतों का निवेश अवसरों में आबंटन करती है। अपने इस दृष्टिकोण, कि एक बैंक विशेष की असफलता या आस्ति मूल्यों में भारी उतार चढ़ाव अनिवार्यतः बैंकिंग अस्थिरता का परिचायक नहीं हैं,

के कारण यह व्यापक स्थूल परिभाषा महत्वपूर्ण है। परंतु परिचालन की दृष्टि से अन्य परिभाषाएं ज्यादा संगत जान पड़ती है। उदाहरणार्थ रेड्डी (2004) के अनुसार अबाध वित्तीय लेनदेन की सुनिश्चितता, वित्तीय प्रणाली में सभी सहभागियों एवं जोखिम धारकों के विश्वास के एक न्यूनतम स्तर का अनुरक्षण, अत्यधिक अस्थिरता का अभाव, जिससे वास्तविक अर्थव्यवस्था पर अनावश्यक एवं बुरा असर पड़ता है, के तौर पर वित्तीय स्थिरता की परिभाषा है।

3.82 यद्यपि वित्तीय स्थिरता के विषय पर 1990 के दशक से नई दिलचस्पी के साथ चर्चा की जा रही है, परंतु इसकी चर्चा का एक लंबा इतिहास है। जैसा कि टयूमा (2005) ने नोट किया है स्वर्ण मानक के दौर में उपलबध स्वर्ण भंडार एवं बैंक नोटों के बीच समानता स्थापित करना मात्र केंद्रीय बैंक का उत्तरदायित्व था तथा इस प्रकार मुद्रा आपूर्ति का निर्णय बाह्य कारणों से किया जाता था। चूंकि स्वर्ण मानक प्रणाली के अंतर्गत स्वर्ण भंडार द्वारा केंद्रीय बैंक का मुद्रा जारी करने का सामर्थ्य सीमित था अतः समाशेधन गृहों की स्थापना की गई, जो किसी सहभागी बैंक से जमाकर्ताओं द्वारा धन निकालने की होड़ होने पर उसे मुद्रा उपलब्ध करवाते थे। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद कागजी मुद्रा के युग में, जैसा कि पहले चर्चा की गई, नीति का जोर मूल्य स्थिरता पर हुआ। 1980 दशक के उत्तरार्ध में मूल्य स्थिरता प्राप्त करने के बाद वित्तीय स्थिरता की ओर ध्यान दिया गया। हाल के वर्षों में वैश्वीकरण के बढ़ते स्तर के कारण वित्तीय अस्थिरता राष्ट्रीय से अंतरराष्ट्रीय बाजारों में फैल सकती है, जैसा कि सन 1997 के पूर्वी एशियाई संकट के समय हुआ था। प्रमुखतया तीव्रगति प्रौद्योगिकीय नवीकरण तथा क्षेत्रीय अंतर के धूमिल होने से, जिसने विभिन्न वित्तीय मध्यस्थों को गैर परंपरागत क्षेत्रों में भाग लेने की छूट दी, 1990 के दशक में वित्तीय अस्थिरता का खतरा कई गुना बढ़ गया है। जोखिमों के इस प्रकार अंतरराष्ट्रीय बाजार में फैलने की संभावना वित्तीय बिरादरी के लिए सीधी चिंता की बात है। वित्तीय संकट झेल रहे देशों की सहायता के लिए विभिन्न प्रयास किए गए हैं। इस सहायता से छूत के खतरे की रोकथाम तथा संकट की आर्थिक लागत का समय विस्तार करने में मदद मिलने की आशा की जाती है।

3.83 बैंकिंग क्षेत्र में अंतर्निहित खतरों के अलावा इसके समक्ष अन्य खतरे भी आ सकते हैं। ये खतरे निगम शासन के क्षेत्र में दुर्बलता एवं असफलता, बाजार अनुशासन का अभाव या एकाधिक नियमन एवं पर्यवेक्षण निकायों के मध्य पर्याप्त समन्वय के अभाव से पैदा होते हैं।

3.84 चूंकि वित्तीय अस्थिरता से अनुरक्षणीय उत्पादन वृद्धि एवं मूल्य स्थिरता जैसे महत्वपूर्ण समष्टि आर्थिक लक्ष्यों के प्रति खतरा पैदा होता है अतः केंद्रीय बैंक वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने में विशेष रुचि रखते हैं। यथावश्यक संकटकालीन द्रवता सहायता देने के लिए केंद्रीय बैंक राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों की लगातार निगरानी करते हैं। इसके अतिरिक्त मौद्रिक नीति का क्रियान्वयन वित्त बाजारों में परिचालन द्वारा ही किया जाता है तथा मौद्रिक नीति के वास्तविक क्षेत्र में संप्रेषण प्रमुख वित्त बाजारों एवं संस्थाओं के सुचारु क्रिया कलाप पर निर्भर करता है।

3.85 परंपरा से ऐसा विश्वास किया जाता है कि मौद्रिक स्थायित्व से वित्तीय स्थायित्व आता है। परंतु जैसा उदेशी (2005) ने वर्णन किया है, 1990 दशक की घटनाओं से आवश्यकतया ऐसा प्रतीत नहीं होता है। हालांकि, विशेषतः दीर्घावधि में इन दोनों में अनुपूरकता है परंतु लघु अवधि में ऐसा सत्य हो यह जरुरी नहीं है। एक स्थिर समष्टि आर्थिक पर्यावरण -निम्न एवं स्थिर मुद्रास्फीति दर, लगातार वृद्धि एवं निम्न ब्याज दर जिसके लक्षण हैं, से भविष्य के आर्थिक अवसरों के प्रति अत्यधिक आशावादी दृष्टिकोण पैदा होता है तथा जोखिमों की कम परवाह की जाती है। तदनुसार यह देखा गया कि प्राय समष्टि आर्थिक स्थैर्य अथवा उच्च वृद्धि के लंबे अंतराल के बाद वित्तीय अस्थिरता का जन्म होता है। परंतु केंद्रीय बैंक को हमेशा सतर्क रहना चाहिए।

3.86 वास्तव में केंद्रीय बैंक के लिए प्रासंगिक प्रश्न वित्तीय स्थायित्व का नहीं है बल्कि यह है कि वित्तीय स्थायित्व को कितना महत्वपूर्ण समझा जाए। विभिन्न देशों द्वारा लागू किया गया व्यवहार एक व्यापक इंद्रधनुष के रूप में कल्पित किया जा सकता है - जिसके एक छोर पर शुद्ध स्फीति लक्ष्य निर्धारक प्रणाली, जिसमें संकट के समय ही वित्तीय अस्थिरता संबंधी चिंताओं का समाधान किया जाता है (स्वेंसन, 2002) तथा दूसरे छोर पर वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने हेतु प्राचेतस दृष्टिकोण वाला सक्रिय केंद्रीय बैंक स्थित है (बोरियो एवं लोव, 2002)। अतः इष्टतम दृष्टिकोण द्वारा इन दो अतियों के मध्य संतुलन बनाकर चलने की आवश्यकता है इसके अलावा विवेकहीन उद्धमता की समस्या है जैसा ग्रीनस्पान (1996) ने संकेत दिया ''हमें यह कैसे ज्ञान होगा कि कब विवेकहीन उद्धमता के कारण आस्तियों के मूल्य अनावश्यक रूप से बढ़ रहे हैं जो बाद में अप्रत्याशित एवं दीर्घ संकुचन से ग्रस्त हो जाते हैं जैसा कि पिछले दशक में जापान में हुआ ? हम इस आकलन का मौद्रिक नीति में किस प्रकार समावेश करें।''

3.87 यह समझने, कि कब केंद्रीय बैंक द्वारा सक्रिय नीति की आवश्यकता है, में आने वाली कठिनाई के बावजूद कुछ सुविकसित एहतियाती उपाय हैं जो अर्थव्यवस्था में वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में मदद करते हैं। एक मानक एवं आचार समुच्चय, विवेकसम्मत विनिमय, शीघ्र चेतावनी संकेतो, बैंक पर्यवेक्षण, पूंजी पर्याप्तता के अंतरराष्ट्रीय मानदंडों का पालन, आस्ति वर्गीकरण प्रक्रिया एवं तरीकों,

आय अभिज्ञान सिद्धांत, आस्तियों का बाज़ार दर पर मूल्यन, एवं अनर्जक आस्तियों में कमी के लिए वसूली तंत्र आदि इनमें शामिल हैं।

भुगतान प्रणाली कार्य

3.88 किसी भी आधुनिक अर्थव्यवस्था में भुगतान एवं निपटान प्रणाली समस्त आर्थिक गतिविधियों की रीढ़ का कार्य करती है। हालांकि वस्तु विनिमय सहित भुगतान एवं निपटान माध्यमों का इतिहास सभ्यता की शुरुआती अवस्था से प्रारंभ होता है, परंतु ऐसी प्रणालियों जिनमें बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं, की शुरुआत सापेक्षतया निकट भूतकाल की घटना है।

3.89 सर्व प्राचीन निपटान प्रणाली का इतिहास आधुनिक समाशोधन गृह के पूर्ववर्ती संस्था के विकास तक चिह्नित किया जा सकता है। समाशोधन गृह वास्तव में बैंक के ग्राहकों द्वारा अन्य बैंकों पर आहरित चेकों के आदान-प्रदान के लिए निर्धारित मिलन स्थल-उदाहरणार्थ कुछ सदियों पहले ब्रिटेन में काफी हाउस, था। सरल लिखत विनिमय सुविधा के रूप में प्रारंभ हुए इस व्यवहार का रूपांतरण होकर यह शीघ्र ही निधि निपटान में सहायक प्रमुख केंद्र के रूप में विकसित हुआ। शीघ्र निपटान की बढ़ती हुई आवश्यकता से केंद्रीय बैंक की भूमिका के महत्व में वृद्धि हुई तथा उन्होंने समाशोधन एवं निपटान संचालन कार्य अपने ऊपर ले लिया।

3.90 सुविकसित प्रक्रियाओं द्वारा समाशोधन एवं निपटान के प्राचीनतम प्रारूप यूरोप के देशों तथा अमरीका में, जहां केंद्रीय बैंकों ने यह जिम्मेदारी स्वीकार की, पाए जाते थे। बैंक आफ इंग्लैंड, बैंक डे फ्रांस, रिक्स बैंक तथा फ़ेडरल रिज़र्व भी कागजी चेकों का समाशोधन करते थे तथा सदस्य बैंकों के निपटान का लेखा रखते थे। अन्य राष्ट्रों ने भी इसका अनुकरण किया तथा उन्होंने भी समान दृष्टिकोण अपना कर केंद्रीय बैंक को समाशोधन गृह का प्रबंधक नियुक्त किया तथा कुछ नियमों का पालन करने का वचन देकर अन्य बैंक इसकी गतितिविधियों में भाग ले सकते थे। कुछ देशों में उनके बृहत्तर भौगोलिक विस्तार के कारण डाक कार्यालयों की महत्वपूर्ण भूमिका के मद्देनजर उनको भी समाशोधन प्रक्रिया में भाग लेने की अनुमति दी गई। वास्तव में प्रत्यय निधि स्थानांतरण के सर्वप्रथम प्रारूप - जाइरो प्रणाली यूरोप में बीसवीं सदी के प्रारंभ में डाक प्रणाली से ही विकसित हुई, जबकि जाइरो आधारित बैंक निधि अंतरण व्यवहार 1960 के दशक के मध्य में शुरू हुए।

3.91 भुगतान प्रणाली के परिचालनों के प्रति केंद्रीय बैंकों ने अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाए हैं। उदाहरण के लिए अमरीका में फ़ेडरल रिज़र्व बैंक समाशोधन कार्यों की निगरानी के अलावा चेकों के प्रसंस्करण की सुविधा भी मुहैया करवाता है। यद्यपि यह सेवा फ़ेडरल रिज़र्व प्रणाली द्वारा उपलब्ध की जाती है परंतु कागजी चेकों एवं इलेक्ट्रॉनिक लेनदेन दोनों के लिए निजी निकाय भी ये सेवाएं उपलब्ध कराते हैं, जिससे प्रतिस्पर्धा का जन्म होता है। कुछ अन्य विकसित अर्थव्यवस्थाओं जैसे यूनाइटेड किंगडम एवं कनाडा में केंद्रीय बैंक समाशोधन एवं भुगतान लिखतों के प्रसंस्करण संबधी सेवाएं नहीं देते; इसके स्थान पर यह कार्य निजी संस्थाओं को सौंपा गया है। यद्यपि बैंकरों का संघ या प्रतिनिधि इन संस्थाओं का शासन करते हैं। कुछ स्केडिनेवियन देशों, जैसे स्वीडन में भी एक सदी से भी ज्यादा समय से इसी दृष्टिकोण का पालन किया जाता है। एशिया में सिंगापुर, मलेशिया एवं हांगकांग की विशेषता यह कि इनके केंद्रीय बैंक या मौद्रिक प्राधिकारी इन प्रणालियों का परिचालन नहीं करते। सबसे महत्वपूर्ण कारण यह है कि खुदरा एवं सामान्यतः निम्न मूल्य लेनदेन के संबंध में यह दृष्टिकोण अच्छा सिद्ध होता है। केंद्रीय बैंक द्रवता का सबसे बड़ा स्रोत होने तथा मौद्रिक नीति के दृष्टिकोण से उच्च मूल्य भुगतान प्रणाली के महत्व को देखते हुए उच्च मूल्य भुगतान प्रणालियों, जैसे, तत्काल सकल भुगतान प्रणाली का परिचालन एवं प्रबंध विशिष्टतया केंद्रीय बैंकों द्वारा किया जाता है। निपटान की अंतिमता सुनिश्चित करने तथा बड़ी सीमा तक निपटान जोखिम में कमी के लिए सभी समाशोधन गतिविधियों के निपटान का कार्य सामान्यतः अनिवार्य रूप से केंद्रीय बैंक द्वारा निष्पादित किया जाता है।

3.92 कालांतर में केंद्रीय बैंकों ने समाशोधन कार्यों के आयोजन का त्याग करके निधि स्थानांतरण प्रक्रियाओं द्वारा स्थूल आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति का काम अपने हाथ में लिया; उनमें से कुछ ने समाशोधन कार्यों का त्याग कर दिया है परंतु निपटान कार्यों को अपने पास रखा है। ऐसी स्थितियों में केंद्रीय बैंकेतर निकाय समाशोधन कार्यों का निष्पादन करते हैं तथा केंद्रीय बैंक निपटान कार्यों के अलावा समाशोधनगृह या प्रसंस्करण केंद्रों का नियमन भी करता है।

विकास कार्य

3.93 विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों पर भारी जिम्मेदारियाँ होती है; प्रथम, उन पर वर्तमान बाज़ार हालातों का बंधन होता है। दूसरे, वित्तीय क्षेत्र का नेता होने के कारण उन्हें लगातार अर्थव्यवस्था की परिवर्तनशील संरचना के अनुरूप अपनी नीतियों का अनुकूलन करना पड़ता है तथा विकास को प्रोत्साहित करने के लिए वित्तीय संरचना में भी परिवर्तन करना पड़ता है (सेयर्स 1961; चंदावरकर, 1996)। परंपरागत कार्यों की उपेक्षा न करते हुए केंद्रीय बैंक को ये कार्य करने चाहिए (ब्रिमर, 1971)। यह केंद्रीय बैंक के कार्यों एवं लक्ष्यों को अधिक विस्तृत एवं चुनौतीपूर्ण बनाता है।

क्षेत्रीय नीतियां

3.94 जब विकासशील देशों ने अपनी विकास यात्रा शुरू की तब उनके समक्ष अनेक बाधाएं आईं। उनके बाज़ार अविकसित एवं उनके उपकरण भोथरे थे; तथा उनकी सरकारों के पास संसाधनों की कमी थी परंतु वे शीघ्र विकास के आकांक्षी थे। इन देशों के केंद्रीय बैंक भी मौद्रिक नीति के परिचालन के संप्रेषण माध्यमों के अभाव या दुर्बलता के कारण अपने कार्यों निष्पादन में विवश थे। इसे उन्हें वित्तीय प्रणाली के अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग परिचालन करने पड़ते थे। विकासशील देशों को सार्वजनिक ऋण, सिक्का ढलाई लाभ राजस्व एवं स्फीति कर के माध्यम से अपनी संसाधनाभाव ग्रस्त सरकारों की सहायता करनी पड़ती थी। प्रतिभूतियों के संस्थागत धारण के सांविधिक प्रावधानों द्वारा सार्वजनिक ऋण प्रायः आबद्ध बाज़ार में बेचा जाता है। इन प्रणालियों में केंद्रीय बैंकों द्वारा प्राय: विभिन्न उद्देश्यों एवं उधारकर्ता की आवश्यकताओं एवं सरकारी नीतियों के अनुरूप विभेदक ब्याज दरें निश्चित की जाती हैं। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंक की नीतियों का सरकार के विकास लक्ष्यों के साथ ताल-मेल बिठाना अत्यावश्यक है। इस उद्देश्य के लिए बैंक प्राय: कुछ राजकोषवत् विकास एवं प्रोत्साहन कार्य करते हैं। उदाहरणार्थ सरकार के विकास प्रयासों में सहायता देने के लिए केंद्रीय बैंक चयनित ऋण नीतियों यथा - ऋण का सूक्ष्म आबंटन, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को ऋणानुदान का क्रियान्वयन करता है। परंतु सब अनुदान आधारित राजकोषवत् नियमन बाज़ार को विकृत करते हैं तथा वित्तीय दमन के बीज बोते हैं। केंद्रीय बैंकों द्वारा ऐसी विवेकाधिकार सहायता प्राय: पुनर्वित्त के माध्यम से दी जाती है परंतु इससे मुद्रा आधार में वृद्धि एवं ऋण गुणक की समस्या पैदा होती है तथा ये मुद्रा प्रबंध के कार्य को जटिल बनाते हैं। इस राज्य निदेशित आर्थिक प्रबंधन द्वारा सरकार एवं सार्वजनिक उपक्रम लगातार ऋण प्रवाह के बड़े हिस्से को समेट निजी उद्यम को ऋण बाज़ार से बाहर धकेल देते हैं (मीक,1991)। इसके अलावा अनर्जक आस्तियों में वृद्धि करके ये राजकोषवत नीतियां वाणिज्यिक बैंकों के तुलन पत्रों पर दुष्प्रभाव डाल सकती हैं।

वित्तीय बाज़ारों का विकास

3.95 वित्तीय बाज़ारों में प्राय: मुद्रा बाज़ार, बाँड बाज़ार, विदेशी मुद्रा बाज़ार एवं पूंजी बाज़ार का समावेश होता है। मुद्रा नीति परिचालन की अपनी भूमिका के निर्वहन में केंद्रीय बैंक एक उपकरण श्रृंखला का प्रयोग करता है जो बाज़ार को प्रभावित करते हैं। अपने संप्रेषण के लिए मौद्रिक नीति वित्त बाज़ारों पर निर्भर करती है अतः उनका विकास एक अच्छी मौद्रिक नीति का समर्थनकारी कारक है। बदले में, मौद्रिक नीति उपकरण (मुख्यतः ब्याज दरें) वित्तीय बाज़ारों पर भारी प्रभाव डालते हैं।

3.96 अर्थव्यवस्था की वित्तीय संरचना पर मौद्रिक नीति की निर्भरता के कारण विकासशील देशों के केंद्रीय बैंक मुद्रा एवं ऋण की आपूर्ति एवं लागत के स्थूल प्रबंध के बारे में चिंतित रहते हैं। वित्तीय क्षेत्र की समस्याओं के समाधान हेतु विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों को अनौपचारिक ऋण प्रणाली का निर्मूलन कर संगठित ऋण प्रणाली के प्रसार हेतु विशिष्ट प्रयास करने पड़ते हैं। बचतों के संग्रहण एवं वर्तमान सूदखोर ऋणों की जगह पर्याप्त औपचारिक ऋण उपलब्धता सुनिश्चित करने में वाणिज्यिक बैंकों के नेटवर्क का विस्तार बहुत सहायक सिद्ध होता है। विकासशील देशों में प्राय: घटित होने वाली बाज़ार असफलता के समाधान के लिए निक्षेप बीमा एवं प्रत्यय गारंटी योजना चालू करनी पड़ी। ऐसी योजनाओं से नैतिक जोखिम की समस्या उत्पन्न होती है क्योंकि इसके कारण बैंकों में अनावश्यक जोखिम लेने की प्रवृति को प्रोत्साहन मिल सकता था तथा वे समुचित समीक्षा के बगैर ऋण दे सकते हैं। केंद्रीय बैंक विकासशील देशों में वित्तीय क्षेत्र की दक्षता सुनिश्चित करने हेतु कठिन प्रयास करते हैं। वित्तीय आधारभूत संरचना की रूपरेखा निर्माण एवं बाज़ार अनुशासन के लिए समुचित विनियम बनाने में भी प्रायः केंद्रीय बैंकों की भूमिका होती है। उनको 'खेल के नियम' अथवा संगत विनियामक एवं पर्यवेक्षी संरचना स्थापित करने एवं वित्तीय क्षेत्र में विकास के अनुसार उसमें सुधार करते रहने की जरुरत पड़ती है।

3.97 हाल के वर्षों में मौद्रिक नीति के कार्यान्वयन के लिए मौद्रिक प्राधिकारी उत्तरोत्तर बाज़ार आधारित उपकरणों का प्रयोग करते हैं। इससे वित्तीय बाज़ारों के विकास को प्रोत्साहन मिलता है। वित्तीय बाजारों को अंतरराष्ट्रीय सर्वश्रेष्ठ मानकों के अनुरूप बनाने का लक्ष्य उनके सुधार एवं विकास में उत्प्रेरक होता है। जैसा कि पूर्व एशियाई संकट से ज्ञात हुआ, संकट के समय व्यवधानों एवं झटकों को सहन करने के लिए सुविकसित वित्तीय बाज़ारों का अस्तित्व आवश्यक है।

3.98 सूचना, लेनदेन एवं निगरानी लागतों में कमी करके मध्यस्थता दक्षता को बढ़ाने के लिए केंद्रीय बैंक वित्तीय बाज़ारों के विकास को प्रोत्साहन देते हैं। दक्ष एवं सुविकसित वित्तीय प्रणाली बाज़ार आधारित उत्प्रेरणों के माध्यम से निम्नतर समष्टिगत अस्थिरता, ज्यादा स्थायी निवेश वित्त, उच्चतर आर्थिक वृद्धि एवं ज्यादा वित्तीय स्थिरता में योगदान देती हैं (कराचाडाग एवं अन्य, 2003)। वित्तीय विकास से नए उद्योगों के लिए निधि उपलब्धता बढ़ती है जिससे बचतों में वृद्धि होती है तथा विवेकाधिकार ऋणाबंटन की आवश्यकता में कमी होती है (चो, 1986; मैक्किन्नन, 1993; फ्राई, 1995)। स्थानीय वित्तीय बाज़ारों के विकास से मुद्रा एवं परिपक्वता अवधि की बेमेलता से उत्पन्न खतरे सहित, विदेशी मुद्रा पर अत्यधिक निर्भरता से उत्पन्न खतरे कम होते हैं (प्रसाद एवं अन्य, 2003)।

उदीयमान बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में स्थानीय मुद्रांकित लिखतों के माध्यम से विदेशी निवेश आकर्षित करके मजबूत बाज़ार बाह्य वित्त पोषण का एक वैकल्पिक स्रोत उपलब्ध करते हैं (बीआइएस 2001)।

3.99 घरेलू वित्तीय बाजार के विकास से वित्तीय स्थिरता को प्रोत्साहन मिलता है। घरेलू बाजार के विकास से स्थानीय मुद्रांकित दीर्घावधि ऋण जारी करने में सुविधा मिल सकती है, तथा इस संरचना से बाह्य झटकों की तीव्रता में कमी आती है। एक गहनतर वित्तीय बाजार से हेजिंग उपकरणों, जो जोखिम के प्रभाव को कर सकते हैं, के विकास को प्रोत्साहन मिलता है।

3.100 नियंत्रण के युग से विरासत में मिली संस्था संरचनाएं प्रायः बाजार चालित पर्यावरण के अनुकूल नहीं होती। इसके अलावा, संरचना शीघ्र सुधार के लायक नहीं होती (टर्नर एवं टी डेक, 1996)। बाजार विकास में बाधक संस्था संरचना के चार चिह्नित सामान्य तत्व ये हैंः नियमन पर अत्यधिक निर्भरता, क्षीण एवं अल्पाधिकारी वित्तीय बाजार, अस्वस्थ बैंकिंग प्रणाली एवं अत्यधिक कर। कई देशों में वर्तमान वित्तीय बाजारों का सापेक्ष लघु आकार केंद्रीय बैंकों को गहनता (लेनदेन का परिमाण) एवं विस्तार (वित्तीय बाजारों की विविधता) में एक को चुनने को विवश करता है। मौद्रिक प्राधिकारी बाजार निर्माण के लिए सक्रिय प्रयास करती है जो उनके मौद्रिक नीति लक्ष्यों के विपरीत भी हो सकता है। अल्पाधिकारी प्रवृत्तियों ने बाजार निर्माण में बाधा डाली है। जोर्डन, आइस लैण्ड, फिनलैण्ड, जमैका एवं माल्टा आदि देशों ने मुद्रा बाजार की स्थापना के समय ऐसी समस्याओं का सामना किया। (टर्नर एवं टी डैक 1996)। अनर्जक आस्तियों का उच्चस्तर, आस्तियों एवं देनदारियों में मुद्रा परिपक्वता अवधि की बेमेलता एवं हानिकारक संरचना के दुर्लक्षणों से ग्रस्त बैंकिंग प्रणाली मौद्रिक नीति निर्माण के कार्य को कठिन बना सकते हैं क्यों कि बैंक मुद्रा बाजार के प्रमुख सहभागी हैं तथा ब्याज दरों में परिवर्तन उनके तुलन पत्रों पर भारी प्रभाव डालते हैं।

3.101 विकासशील बाजारों में, जहाँ वाणिज्यिक बैंकों का आधिपत्य होता है, प्रतिस्पर्धात्मक बैंकिंग संरचना के साथ-साथ विवेकसम्मत एवं नियामक संरचना के सृजन हेतु बैंकिंग प्रणाली में सुधार करने पड़ते हैं। पूर्व एशियाई वित्तीय संकट, जिसकी शुरूआत आवश्यक रुप से सुदृढ़ बैंकिंग संरचना एवं गहन प्रतिभूति बाजार के प्रभाव से हुई, वित्तीय बाजार विकास, विशेषतया, प्रतिभूति बाजार के महत्व का आभास बढा है। अब उदीयमान बाजार अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय बाजार स्थिरता के सृजन हेतु सर्वानुकूल नीतियों एवं संरचनाओं की बेहतर समझ है एवं अंतरराष्ट्रीय संस्था पर्यावरण में से ऐसी नीति के क्रियान्वयन को सहायता मिली है (मेयर 2001)।

3.102 चूंकि केंद्रीय बैंक शीर्ष वित्तीय संस्था होते हैं अतः वे प्रायः वित्तीय बाजार विकास को प्रोत्साहन देते हैं, वित्तीय क्षेत्र सुधारों का निदेशन करते हैं तथा अंतरराष्ट्रीय मानकों का पालन सुनिश्चित करते हैं।विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों के समक्ष ज्यादा व्यापक लक्ष्य होते हैं तथा वे अपनी जिम्मेदारियों के निर्वाह हेतु, विशेषकर शुरू में, प्रायः दखल अंदाजी पूर्ण एवं चयनित नीतियों का पालन करते हैं। विकसित देशों के विपरीत, जहां वित्तीय क्षेत्र सुधार मुख्य धारा के प्रयासों से हुए, अनेक विकासशील देशों में ये सुधार विशिष्टतया केंद्रीय बैंकों द्वारा प्रारंभ किए गए। अधिकांश विकासशील देशों में सुधार एक घटना न होकर क्रमिक प्रक्रिया होते हैं; उनका दशकों में विस्तार होता है तथा कई कदमों, जिनमें विनियमन एवं सख्त अनुशासन से उत्पन्न वित्तीय दमन का अर्थव्यवस्था से लोपन सबसे महत्वपूर्ण कदम है, का समावेश होता है। बाजार निर्माण के सतत प्रयासों एवं व्यवहार्य स्पर्धात्मक वित्तीय प्रणाली को प्रोत्साहित करने की लगातार कोशिशों से ही उदारीकरण एवं बाजार अभिमुख प्रणाली की ओर गति संभव है। विकासशील देशों में सुधारों की, प्रत्येक कदम के समेकन के बाद,निगरानी की आवश्यकता होती है।

3.103 विकासशील देशों में विकास ऋण आबंटित करने वाली वित्तीय संस्थाओं के सृजन में केंद्रीय बैंकों ने अग्रणी भूमिका निभाई है। पहले बैंकिंग प्रणाली का विकास एवं तदुपरांत उसका विनियमन इन बैंकों का सर्वप्रमुख कार्य रहा (सेयर्स, 1961)। इस विकासपरक भूमिका के कारण यह आवश्यकता होती थी कि केंद्रीय बैंक संस्थाओं एवं लिखतों के प्रोत्साहन के लिए भी प्रयास करें। विकासशील देशों के केंद्रीय बैंकों द्वारा संस्था निर्माण के विशिष्ट उदाहरण मौजूद हैं। उदाहरण के तौर पर, बैंक आफ इंग्लैंड ने दमित उद्योगों के पुनर्वास हेतु दीर्घावधि ऋण उपलब्ध कराने हेतु पुनर्निर्माण वित्त निगम (आरइसी) जैसी विशेषीकृत संस्थाओं के सृजन में पहल की। भारतीय रिज़र्व बैंक ने भी ऐसी कई संस्थाओं जैसे निवर्तमान भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (आइडीबीआइ) एवं राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की स्थापना के लिए पहल की (अध्याय IV एवं VI देखें)। अतिरिक्त कार्य करने के लिए केंद्रीय बैंकों को समर्थकारी सांविधिक प्रावधानों की आवश्यकता होती है। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि सन 1970 एवं 1980 के दशक में अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष की तकनीकी सहायता से भूटान, बोत्स्वाना, फीजी, मालदीव एवं स्वाजीलैण्ड में नव स्थापित केंद्रीय बैंकों तथा मौद्रिक प्राधिकारियों से संबंधित कानूनों में प्रोत्साहन भूमिका के लिए कई सक्षमकारी प्रावधान थे।

नीति उन्मुख अनुसंधान

3.104 विश्व के प्रत्येक प्रमुख बैंक में एक अनुसंधान विभाग होता है। वास्तव में कुकिरमेन (1992) के शब्दों में ''राजकोष एवं सरकार

की अन्य शाखाओं की अपेक्षा निरपेक्ष एवं सापेक्ष तौर पर सुदृढ़ अनुसंधान विभाग की सहायता प्राप्त गवर्नर की बातों में ज्यादा वजन होता है''। इसका प्रमुख कारण यह है कि गवर्नर को अर्थव्यवस्था के बारे में सूचना देनेवाला सापेक्षतया निरपेक्ष स्रोत माना जाता है। बैंक के अनुसंधान विभाग द्वारा प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट की गुणवत्ता शायद विभाग की गुणवत्ता का संकेतक हो सकती है।

3.105 आंतरिक अनुसंधान का कार्य केंद्रीय बैंक परिचालनों की रीढ़ की हड्डी है। क्योंकि अनुसंधान विभाग द्वारा माडलिंग अभ्यासों, भूतकाल प्रवृत्तियों एवं भविष्य की प्रत्याशाओं, विश्लेषण एवं निष्कर्षों संबंधी अध्ययन के परिणामों के आधार पर ही मौद्रिक एवं बाह्य क्षेत्र परिचालनों के समय दिशा एवं सघनता का निर्धारण किया जाता है। जैसा कि गुडफ्रेंड एवं अन्य (2004) ने उल्लेख किया है ''नीति आकलन के लिए माडलों का सर्वश्रेष्ठ सृजन आंतरिक तौर पर ही किया जा सकता है क्योंकि अर्थशास्त्रीय स्टाफ नीति निर्माण प्रक्रिया से परिचित होता है, उनके पास प्रासंगिक संस्थागत ज्ञान होता है एवं उनको कार्य को विश्वसनीयता एवं पूर्णतया करने की उत्प्रेरणा होती है।''

सूचना का प्रसार

3.106 विकासशील देशों के पास प्राय: खराब डाटा बेस होता है। तदनुसार स्थूल आर्थिक अनुसंधान को सुगम बनाने के लिए केंद्रीय बैंक प्राय: डाटा बेस निर्माण का कार्य स्वयं करते हैं। क्रेडिट कार्ड कंपनियों, औपचारिक एवं अनौपचारिक वित्त संस्थाओं सहित बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्र की निगरानी, तथा बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्र के उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करने के अलावा विकासशील देशों के केंद्रीय बैंक देशी वाणिज्यिक बैंकों को आंकड़ों के प्रसार एवं सूचना के आदान-प्रदान के बेहतर व्यवहार को लागू करने में सहायता करते हैं।

3.107 इन विशिष्ट मामलों के परे, संस्थाओं के रुप में केंद्रीय बैंकों के अपने देशों के वित्तीय प्रणालियों, आर्थिक माध्यमों तथा सामान्यजन के प्रति बृहत्तर उत्तरदायित्व हैं। जब कुछ आर्थिक माध्यम अन्य की अपेक्षा ज्यादा सूचना रखते हों तो उनके मध्य समतल क्रीड़ा क्षेत्र का अभाव होता है। सूचना तक पहुंच एवं उसकी व्याख्या करने की विशेषज्ञता के असमान स्तरों से उत्पन्न होने वाली सूचना विषमता की स्थिति के निवारण हेतु केंद्रीय बैंक अपने प्रकाशनों एवं वेबसाइट द्वारा सूचना का प्रसार करता है। सूचना की उपलब्धता द्वारा यह एक सार्वजनिक माल की आपूर्ति करता है। कई देशों में ग्राहकों की धोखे से रक्षा हेतु बैंकिंग एवं गैर-बैंकिंग संस्थाओं से संबंधित विस्तृत सूचना एवं अर्थव्यवस्था की स्थिति के विश्लेषण के प्रचार के लिए विशेष प्रयास किए जाते हैं। इस संदर्भ में वित्तीय समावेशन में केंद्रीय बैंक की संगत भूमिका होती है। लीलाधर (2005) ने वित्तीय समावेशन को इस प्रकार परिभाषित किया है ''प्रतिकूल परिस्थितियों से ग्रस्त एवं कम आमदनी वाले बृहत् जनसमुदाय को कम कीमत पर बैंकिंग सेवाएं उपलब्ध कराना। सार्वजनिक माल की अबाधित उपलब्धता एक मुक्त एवं सक्षम समाज की आवश्यक शर्त है।''

समन्वय एवं सहयोग

3.108 विकासशील देशों में केंद्रीय बैंक प्रायः देश का बाह्य वित्तीय संबंधों का माध्यम होता है। देश की ओर से अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष (आइएमएफ), अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) एशियाई विकास बैंक (एडीबी) जैसी संस्थाओं के साथ वार्ता एवं व्यवहार में, सरकार के साथ-साथ केंद्रीय बैंक भी शामिल होता है। इसके अलावा केंद्रीय बैंक वाणिज्यिक बैंकों में निगम सुशासन को प्रोत्साहित करने तथा देश की बैंकिंग प्रणाली द्वारा अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं जैसे बीआइएस द्वारा निर्धारित अंतरराष्ट्रीय नियमों का पालन सुनिश्चित करने का प्रयास करता है। इस विषय पर बासल समिति ने भी कुछ अति महत्वपूर्ण सिद्धांत स्थापित किए हैं। केंद्रीय बैंकर सरकारी अधिकारियों के साथ घनिष्ठतापूर्वक कार्य करते हैं तथा सक्रिय सुधार लाने या अपनी सरकार को सलाह देने की स्थिति में होते हें (चंदावरकर 1996)।

3.109 हाल के वर्षों में वित्तीय बाजारों के वैश्वीकरण एवं तदनुरुपी समेकन से छूत के फैलने की नई राहें खुली है एवं सीमित एकपक्षीय निर्णय की दृष्टि से प्रणालीगत जोखिमों का प्रबंध लगातार कठिन होता जा रहा है। इसके लिए एक प्रभावकारी पर्यवेक्षण प्रणाली तथा नियमों के बीच लगातार ज्यादा समन्वय की आवश्यकता है। केंद्रीय बैंकों के बीच अंतरराष्ट्रीय समन्वय स्थापना के प्रथम औपचारिक प्रयास 17 मई 1930 को अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक की स्थापना के साथ किए गए। अ.नि. बैंक एक अंतरराष्ट्रीय संस्था हैं जो अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मौद्रिक एवं वित्तीय सहकार को प्रोत्साहन देता है तथा केंद्रीय बैंकरों के बैंकर की भूमिका निभाता है। केंद्रीय बैंकों के बीच एवं अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बिरादरी में चर्चा एवं विश्लेषण को प्रोत्साहन देने वाले मंच के रूप में कार्य करना, आर्थिक एवं मौद्रिक अनुसंधान केंद्र की भूमिका निभाना, केंद्रीय बैंकों के वित्तीय लेनदेन में प्रतिपक्षी की भूमिका निभाना तथा अंतरराष्ट्रीय परिचालनों में एक माध्यम या ट्रस्टी की भूमिका निभाना अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक के मुख्य उद्देश्य हैं। मौद्रिक एवं वित्तीय स्थिरता को प्रोत्साहन देना अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक के प्रमुख लक्ष्यों में से एक है। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक में स्थापित समितियां जैसे - बैंकिंग पर्यवेक्षण पर बासल समिति, वैश्विक वित्तीय प्रणाली समिति, भुगतान एवं निपटान समिति एवं बाजार समिति

- पृष्ठभूमि विश्लेषण एवं नीति संबंधी अनुशंसा द्वारा केंद्रीय बैंकों की मदद करती है।

3.110 केंद्रीय बैंकों के बीच सहयोग के दूसरे उल्लेखनीय प्रयासों में ब्रेटन वुड्स व्यवस्था (1944) शामिल है। अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक की स्थापना सन् 1945 में प्रमुखतया एक स्थिर अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली के अनुरक्षण एवं अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक सहयोग के उद्देश्यों से की गई थी। इन अंतरराष्ट्रीय प्रयासों के अतिरिक्त केंद्रीय बैंकों में क्षेत्रीय आधार पर भी सहयोग स्थापित करने के प्रयास किए गए। सन् 1998 में यूरोपीय केंद्रीय बैंक (इसीबी) की स्थापना इसका बड़ा उदाहरण है। यू. के. बैंक यूरो क्षेत्र का केंद्रीय बैंक है तथा वह यूरो मुद्रा के प्रचलन वाले बारह राष्ट्रों की मुद्रा नीति का प्रभारी है।

3.111 दक्षिण एशिया में प्रशिक्षण सहित मत एवं अनुभव विनिमय के मंच के रुप में सन् 1998 में सार्क फाइनेंस की स्थापना की गई। एशिया के केंद्रीय बैंक गवर्नरों के बीच घनिष्ठ एवं नियमित वार्तालाप से सहयोग प्रक्रिया को बल मिलना चाहिए (रेड्डी, 2005)।

III. केंद्रीय बैंकिंग के समसामायिक विषय / मुद्दे

केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता

3.112 विकास यात्रा में जहां केंद्रीय बैंकों की गतिविधियों का दायरा बढ़ा है वहीं उनकी स्वायत्तता के प्रति दृष्टिकोण में भी दिलचस्प मोड़ आए हैं। प्रथम विश्वयुद्ध से पहले अधिकांश देशों के केंद्रीय बैंक निजी निकाय थे तथा औपचारिक तौर पर सरकार के अधीन नहीं थे। लगभग द्वितीय विश्व युद्ध के समय स्थिति बदली एवं कई देशों (उदाहरणार्थ - जर्मनी, फ्रांस, इग्लैंड, जापान, इटली एवं स्वीडन) में केंद्रीय बैंकों को सरकार के नियंत्रणाधीन लाया गया। हाल के वर्षों में इस प्रवृत्ति का उलट हो रहा है। सरकारें अपने केंद्रीय बैंकों को विशेषकर इस अनुभवजन्य प्रमाण कि यदि केंद्रीय बैंक स्वतंत्र हो तो मुद्रास्फीति की दर कम रहती है, अधिक स्वायत्तता देना शुरू किया है (होल्ट फ्रेरिक एवं रीस - 1999)।

3.113 बीसवीं सदी के अंतिम दशक में केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता में भारी वृद्धि देखी गई तथा केंद्रीय बैंक मौद्रिक नीति के निर्माण के लिए पूरी तरह स्वतंत्र बनाए गए। ये परिवर्तन शनैःशनैः आए तथा प्रत्येक संकट के पश्चात् अपनी स्वतंत्रता की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए बैंकों ने अपनी भूमिका का विस्तार किया। इस संबंध में वर्ष 1998 अति महत्वपूर्ण है। बैंक आफ इग्लैंड, जो अठारहवीं एवं उन्नीसवीं शताब्दी में भी काफी हद तक स्वतंत्र था, को जून 1998 में वैधानिक तौर पर स्वतंत्र निकाय बनाया गया। बैंक आफ जापान को अप्रैल 1998 में परिचालन की स्वतंत्रता मिली हालांकि उसे वैधानिक स्वतंत्रता नहीं दी गई। अपने अति राष्ट्रीय प्रकृति के कारण जून 1998 में स्थापित यू.के. बैंक दुनिया का सबसे स्वतंत्र केंद्रीय बैंक है।

3.114 साहित्य में केंद्रीय बैंक स्वायत्तता के औचित्य पर विषद चर्चा की गई है। प्रथम - एक केंद्रीय बैंक दीर्घ समय क्षितिज के आधार पर कार्य करता है तथा उसके ज्यादा विवेक सम्मत दीर्घावधि दृष्टिकोण अपनाने की संभावना ज्यादा है। दूसरे, राजकोषीय नीति के प्राथमिक लक्ष्यों एवं मौद्रिक नीति लक्ष्यों में टकराव हो सकता है। उदाहरण के तौर पर सरकार की यह इच्छा हो सकती है कि ब्याज भुगतान कम रहें जबकि मौद्रिक प्राधिकारी मूल्य स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए ब्याज दर में परिवर्तन चाहे। एक स्वायत्त केंद्रीय बैंक इस समस्या का हल निकालने की बेहत्तर स्थिति में होगा। तीसरे, अविकसित ऋण बाजार वाले देशों में पर्याप्त स्वायत्तता के अभाव में नये नोट छापकर बजट घाटे को पूरा करने के लिए केंद्रीय बैंकों को विवश किया जा सकता है (मेयर, 2000)।

3.115 केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता के समर्थक तर्क कम वांछनीय हैं,जहां राजनैतिक प्रणाली लघु अवधि दृष्टिकोण से कार्य करती है तथा दीर्घावधि लागत को कम आंक कर लघु अवधि लाभ के लिए स्फीतिकारक नीतियां अपनाती है। मूल्य स्थिरता के लिए उत्तरदायी स्वतंत्र केंद्रीय बैंक इस स्फीति समर्थक प्रवृत्ति का निवारण कर सकता है (फिशर, 1996)। सामान्यतः यह विश्वास किया जाता है कि यह दृष्टिकोण कि मोटे तौर पर केंद्रीय बैंक राजनैतिक शक्ति से आज़ाद रहे, का उद्भव बीसवीं सदी में ही हुआ प्रथम विश्व युद्ध के दौरान उत्पन्न घाटे के वित्तपोषण के संकट, जिसने कई राष्ट्रों को अपने शिकंजे में लिया, के अनुभव के प्रकाश में, लीग आफ नेशंस द्वारा आयोजित एक सम्मेलन शृंखला में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बिरादरी ने इस सिद्धान्त को पहचाना कि केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता से मूल्य स्थिरता में सहयोग मिलता है। केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता में दिलचस्पी के पुनर्जागरण से कई कारकों पर ध्यान जाता है जैसे :- केंद्रित योजना अर्थव्यवस्थाएं, नई यूरोपीय केंद्रीय बैंकिंग व्यवस्थाओं की स्थापना एवं भारी सीमा पार वित्तीय प्रवाह की सुविधा वाले विश्व में मूल्य स्थिरता का महत्व।

3.116 केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता तीन प्रमुख कारणों पर निर्भर करती है : कार्मिक मामलों में स्वायत्तता, वित्तीय मामलों में स्वायत्तता एवं नीति परिचालन में स्वायत्तता। कार्मिक स्वायत्तता का आशय वरिष्ठ पदाधिकारियों की नियुक्ति, उनकी कार्यावधि, तथा शीर्ष केंद्रीय बैंक अधिकारियों एवं शासक बोर्ड की बर्खास्तगी प्रक्रिया में सरकारी हस्तक्षेप के अभाव से है। पूर्व निश्चित एवं पारदर्शी नियोजन एवं पदच्युति प्रक्रियाओं से केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता में वृद्धि होती है। कुछ देशों में

ऐसे तंत्र वर्तमान हैं जो नियुक्ति प्रक्रिया में बृहद् राजनैतिक हितों की रक्षा का ध्यान रखते हैं। अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक द्वारा किए गए सर्वेक्षण में यह पाया गया कि कम से कम दो तिहाई केंद्रीय बैंकों के मामले में प्रत्याशी के नामांकन एवं नियुक्ति प्रक्रिया में न्यूनतम दो या उससे अधिक राजनैतिक निकाय शामिल थे जिससे यह प्रक्रिया कम विवेकाधिकार आधारित बनी एवं केंद्रीय बैंक अधिक स्वायत्त उदाहरण के तौर पर राष्ट्रपति द्वारा फेडरल रिज़र्व प्रणाली के अध्यक्ष के लिए नाम प्रस्तावित करने के बाद उसे अमेरिकी कांग्रेस की स्वीकृति भी मिलनी चाहिए।

3.117 वित्तीय स्वायत्तता का मतलब है कि केंद्रीय बैंक के पास यह निर्णयाधिकार होना चाहिए कि सरकारी खर्च के किस अंश का वित्तपोषण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से केंद्रीय बैंक द्वारा किया जाएगा (रेड्डी 2001)। घाटे के स्वतः मुद्रीकरण से मौद्रिक नीति राजकोषीय नीति के अधीन आ जाती है। इस परिदृश्य में यह देखा गया है कि यदि केंद्रीय बैंक का अलग बजट हो तो वह अधिक स्वतंत्र होता है। इस स्थिति में केंद्रीय बैंक के पास अपने कारोबार को चलाने के लिए पर्याप्त संसाधन होते हैं तथा उसे सरकारी स्वीकृति की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती।

3.118 नीति स्वायत्तता का आशय, मौद्रिक नीति के निर्माण एवं परिचालन में केंद्रीय बैंक को दी गई स्वतंत्रता से है। परिचालन स्वतंत्रता के दो भेद यानि लक्ष्य स्वतंत्रता एवं उपकरण स्वतंत्रता हैं। लक्ष्य स्वतंत्रता का अर्थ यह है कि बैंक परस्पर विरोधी लक्ष्यों जैसे - पूर्ण रोजगार एवं निम्न मुद्रास्फीति में से किसी भी समय किसी को भी चुन सकता है। उपकरण स्वाधीनता का आशय यह कि केंद्रीय बैंक पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कोई भी उपकरण प्रयोग करने की स्वतंत्रता रखता है। अधिकांश केंद्रीय बैंक सांविधिक आदेशों के अधीन कार्य करते हैं अतः उनके पास लक्ष्य स्वतंत्रता नहीं होती क्योंकि लक्ष्यों का निर्धारण विधि द्वारा किया जाता है। विभिन्न देशों में केंद्रीय बैंकों को आदेशित लक्ष्यों की स्पष्टता में अंतर होता है अतः मौद्रिक नीति के परिचालन का स्वतंत्रता स्तर भी अलग-अलग होता है।

3.119 एक संस्था के स्वामित्व का अत्यधिक महत्व है क्योंकि यह उसका परिचालन निर्धारित करता है। यह देखा गया है कि यदि केंद्रीय बैंक को परिचालन स्वतंत्रता प्राप्त है तो उसके स्वामित्व से उसके परिचालन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। सारी दुनिया में केंद्रीय बैंक समय के साथ अधिक परिचालन स्वतंत्रता की ओर बढ़ रहे हैं। कुछ केंद्रीय बैंकों, जैसे बुंडेस बैंक, की रूपरेखा में ही स्वतंत्रता निहित थी। विशेष प्रावधानों से बुंडेस बैंक की स्वतंत्रता सुनिश्चित की गई परंतु बैंक को यह उत्तरदायित्व भी दिया गया कि वह सरकार की आर्थिक नीतियों का समर्थन करें। यह आशा की जा सकती है कि ऐसे केंद्रीय बैंक अपनी भूमिका बेहतर ढ़ंग से निभाएंगे क्योंकि उनको राजनैतिक दबावों से बेहतर सुरक्षा मिली है।

3.120 केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता के आर्थिक प्रभावों के मूल्यांकन के लिए कई अध्ययन किए गए हैं। ये अध्ययन आर्थिक प्रभावों के अनुमान का आकलन करने से पहले केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता के मात्रात्मक मापक परिभाषित करते हैं तदुपरांत इन मापकों एवं औसत मुद्रास्फीति, मुद्रास्फीति परिवर्तनशीलता एवं वास्तविक आर्थिक विकास के पारस्परिक संबंधों का अनुमान लगाते हैं। परंतु उन कारकों, जिन पर विचार किया गया, सहित सूचकांक की रूपरेखा, उनका भार एवं उन्हें नियमबद्ध करने की प्रक्रिया परिणामों को प्रभावित करते हैं (मंगानो, 1998)। इसके बावजूद सन 1970 के दशक के शुरू में नियत सममूल्य की ब्रेटन वुड प्रणाली के बिखर जाने के बाद की अवधि में जिन देशों ने अपने केंद्रीय बैंकों को अधिक विधिक स्वतंत्रता दी उनको निम्नतर मुद्रास्फीति दर का सामना करना पड़ा (ग्रिली एवं अन्य, 1991)। इन देशों से प्राप्त प्रमाण से केंद्रीय बैंकों को ज्यादा स्वायत्तता देने के तर्क को बल मिला क्योंकि यह पाया गया कि ज्यादा स्वाधीनता से औसत वास्तविक विकास को कोई नुकसान नहीं होता (एलसीना एवं समर्स, 1993)। परंतु 1990 के दशक में निम्न मुद्रास्फीति दर एवं मुद्रास्फीति को निचले स्तर पर बनाए रखने हेतु बढ़ते हुए राजनैतिक दबाव की पृष्ठभूमि में केंद्रीय बैंक की अधिक स्वायत्तता एवं निम्न मुद्रास्फीति के बीच कोई सम्बंध स्थापित करना कठिन हो गया (लेबेक, 2004)।

3.121 हैयो एवं हैफकर का यह तर्क है कि मौद्रिक स्थिरता के लिए केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता न तो आवश्यक तथा ना ही पर्याप्त शर्त है। प्रथम, स्वतंत्रता मुद्रा नीति की संभावित उपयोगी रूप रेखाओं में से एक है। दूसरे स्वतंत्रता को एक बाह्य परिवर्तनीय कारक के तौर पर नहीं लेना चाहिए बल्कि इस प्रश्न, कि केंद्रीय बैंकों को स्वतंत्रता क्यों दी जाती है, पर ध्यान देने की जरूरत है। केंद्रीय बैंकों को स्वतंत्रता विशिष्ट परिस्थितियों में दी जाती है, जिनका संबंध उनकी विधि, राजनैतिक एवं आर्थिक प्रणालियों से होता है। इस अध्ययन में भी स्वतंत्रता एवं निम्न मुद्रास्फीति दर में पारस्परिक संबंध पाया गया। परंतु लेखकों का यह मत है कि यदि केंद्रीय बैंकों की स्वतंत्रता पर एक आंतरिक कारक के रूप में विचार किया जाए तो स्वाधीनता एवं निम्न मुद्रास्फीति दर के पारस्परिक संबंध के कारणों के बारे में कोई सूचना नहीं मिलती।

3.122 एक प्रभावशाली मत यह है कि देश का इतिहास एवं प्राथमिकताएं मुद्रास्फीति का निर्धारण करते हैं तथा कारणत्व का प्रवाह मुद्रास्फीति से संस्था संरचना की ओर होता है। इस मत के अनुसार एक मुद्रास्फीति के प्रति क्षमावान देश में सख्त मुद्रास्फीति विरोधी नीतियों सहित स्वतंत्र केंद्रीय बैंक के आरोपण के प्रयास असफल होने को शापित हैं। परन्तु न्यूजीलैण्ड जैसे देशों के अनुभव से इस मत की पुष्टि नहीं होती। सन 1988 से पूर्व रिज़र्व बैंक आफ न्यूजीलैण्ड आर्थिक सहयोग

एवं विकास संगठन के देशों के केंद्रीय बैंकों में सबसे कम स्वायत बैंकों में से एक था। सन् 1988 में इसको मुद्रास्फीति का मुकाबला करने का स्पष्ट आदेश एवं उच्च स्तर की स्वायत्तता मिली तो न्यूजीलैण्ड में मुद्रास्फीति की दर दहाई के आँकड़ों से गिरकर दो प्रतिशत के नीचे आ गई। इससे यह प्रतीत होता है कि मुद्रास्फीति के नियंत्रण के लिए मौद्रिक संस्थाओं की संरचना तथा मुद्रास्फीति का सामना करने का निश्चय होना चाहिए (म्बोवेनी, 2000)।

3.123 एक स्वतंत्र केंद्रीय बैंक ऐसी नीतियां लागू कर सकता है जो सरकारी नीतियों की विरोधी हैं। नीतिगत लक्ष्यों में ऐसी प्रतिकूलता से अर्थव्यवस्था-स्तर की समस्याएं पैदा हो सकती हैं। इससे समन्वित नीति दृष्टिकोण की वांछनीयता का बोध होता है। इसके विपरीत यह तर्क दिया जा सकता है कि जब तक केंद्रीय बैंक का लक्ष्य मुद्रास्फीति का नियंत्रण करना है - लघु अवधि में ऐसे टकराव अनिवार्य हैं। परंतु दीर्घावधि में, स्थायी वित्तीय परिस्थितियों से अंततः उच्चतर आर्थिक विकास दर, ज्यादा रोजगार एवं ज्यादा कल्याण की उपलब्धि होती है।

3.124 प्रजातांत्रिक औचित्य का अभाव केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता के विरुद्ध एक प्रमुख तर्क है, क्योंकि इससे ब्याज दर, विनिमय दर, वित्तीय प्रणाली की दक्षता तथा अन्य मौद्रिक मामलों से संबंधित निर्णयाधिकार अनिर्वाचित अधिकारियों के निकाय में निहित होते हैं। परंतु यह ध्यान में रखना चाहिए कि सबसे अधिक स्वायतः बैंक भी विधायिका के प्रति जवाबदेह होते हैं। इसके अलावा स्वतंत्रता का अर्थ संप्रेषण का अभाव नहीं है तथा अपनी नीतियों की सफलता के लिए बैंक पूर्ण स्वतंत्रता की बजाय सरकार के साथ संप्रेषण एवं समन्वय की नियमित प्रक्रिया को अधिमान दे सकता है।

3.125 केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता स्वयं में व्यापक समष्टिगत आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु एक उपकरण मात्र है। लक्ष्यों की पारदर्शिता, विधायिका के प्रति उत्तरदायित्व की कोई रूपरेखा एवं समय प्रतिकूलता समस्या के निवारण हेतु विश्वसनीयता आदि वास्तविक स्वतंत्रता की पूर्व शर्तें हैं।

एक केंद्रीय बैंक की जवाबदेही

3.126 उत्तरदायित्व का अर्थ मौद्रिक नीति कार्यों की जिम्मेदारी लेना है। स्वायत्तता एवं पारदर्शिता केंद्रीय बैंक के उत्तरदायित्व के साथ मिलकर अनुरक्षणीय आर्थिक विकास में सहायक मूल्य एवं वित्तीय क्षेत्र स्थिरता की प्राप्ति में सहायता देते हैं। मौद्रिक नीति के उत्तरदायित्व के कुछ मापक हैं। संसदीय निगरानी, मौद्रिक नीति समिति की बैठकों की कार्यवाही का प्रकाशन, मौद्रिक नीति रिपोर्टों का प्रकाशन एवं अभिभावी तंत्र की उपस्थिति के आधार पर ब्रायल्ट, हलदान एवं किंग (1996) ने चौदह राष्ट्रों के लिए उत्तरदायित्व सूचकांक का निर्माण किया। फाई एवं अन्य (2000) द्वारा सूचित उत्तरदायित्व सूचकांक विशिष्ट लक्ष्य एवं जनसामान्य के प्रति जवाबदेही के परिप्रेक्ष्य में उत्तरदायित्व पर ध्यान केंद्रित करता है। इन सभी उत्तरदायित्व सूचकांकों में पारदर्शिता एवं जिम्मेदारी का समावेश है।

3.127 एक मत यह है कि उत्तरदायित्व का अर्थ केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता के साथ समझौता करना है। केंद्रीय बैंक का उत्तरदायित्व एक ऐसा तंत्र है जिसके द्वारा जनतांत्रिक प्रणाली में जांच एवं संतुलन प्रणाली का सृजन किया जाता है। नोलन एवं स्केलिंग (1996) का मत है कि केंद्रीय बैंक के उत्तरदायित्व एवं स्वतंत्रता में महत्वपूर्ण ऋणात्मक संबंध है। परंतु डे हान (1997) इसकी काट करते हुए कहते हैं कि यह तर्क सार्वभौम रूप से लागू नहीं होता तथा उत्तरदायित्व के अंश पर आधारित है। यह तर्क भी दिया गया कि स्वतंत्रता एवं उत्तरदायित्व का अदला-बदली का लाभ ज्यादा दिन तक नहीं मिलता (एजाफिंजर एवं डि हान 1996)। लगातार व्यापक राजनैतिक समर्थन के बगैर अपनी नीति का परिचालन करने वाला केंद्रीय बैंक देर सबेर अभिभावित किया जाएगा। अमेरिकी फेड सबसे स्वतंत्र केंद्रीय बैंकों में से एक है परंतु इसकी स्वतंत्रता उत्तरदायित्व से सीमित होती है - इसके अध्यक्ष को समय-समय पर कांग्रेस के समक्ष वक्तव्य देना पड़ता है।

3.128 कभी-कभी यह तर्क दिया जाता है कि अंक रूप में स्पष्टतः वर्णित एकल लक्ष्य (सामान्यतः मूल्य स्थिरता) की स्थापना से केंद्रीय बैंक के उत्तरदायित्व निर्धारण में सहायता मिलती है। परंतु यह नोट करने लायक बात है कि अन्य महत्वपूर्ण लक्ष्यों यथा उत्पादन वृद्धि की कीमत पर मुद्रास्फीति लक्ष्य का निर्धारण करना शायद अवांछनीय हो। अन्य विचारणीय बात यह है कि अर्थव्यवस्था में अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ आ सकती हैं अतः गतिशील परिस्थितियों से उत्पन्न समस्याओं के समाधान हेतु नम्यता एक महत्वपूर्ण सहायक सिद्ध हो सकती है। केंद्रीय बैंकर की पुनर्नियुक्ति प्रक्रिया भी उत्तरदायित्व निश्चित करने का एक माध्यम हो सकता है। लघु कार्यावधि की स्थिति में सरकार पुनर्नियुक्ति प्रक्रिया द्वारा अधिक मात्रा में नियंत्रण कर सकती है।

3.129 बिटर (1998) का मत है कि बैंक आज इंग्लैंड अधिनियम में स्वाधीनता एवं उत्तरदायित्व का सबसे अधिक प्रभावी संयोग किया गया है। यदि मुद्रास्फीति लक्ष्य की प्राप्ति में एक प्रतिशत से ज्यादा घटबढ़ हो जाती है तो मौद्रिक नीति समिति की ओर से गवर्नर वित्तमंत्री को पत्र लिखता है। पत्र में लक्ष्यांक से विपथन के कारणों, प्रस्तावित नीति प्रयासों तथा इन प्रयासों के प्रभाव दिखने तथा मुद्रास्फीति के बाधित स्तर पर आने में लगने वाले समय का वर्णन करना आवश्यक होता है।

सांझी जवाबदेही के अतिरिक्त मौद्रिक नीति समिति के सदस्य व्यक्तिगत तौर पर भी बैंक आफ इंग्लैंड के निदेशक मंडल के प्रति जवाबदेह एवं उत्तरदायी होते हैं। मौद्रिक नीति समिति नियमित रूप से त्रैमासिक आधार पर मुद्रास्फीति रिपोर्ट एवं मुद्रास्फीति भविष्यवाणी प्रकाशित करती है जिनसे मौद्रिक नीति संप्रेषण तंत्र एवं उभरती हुई आर्थिक परिस्थितियों के बारे में उसकी सोच एवं दृष्टिकोण का संकेत मिलता है।

3.130 उत्तरदायित्व निश्चित करने वाले तंत्रों के लिए केंद्रीय बैंक के निर्णयों, बजट एवं व्यय की समीक्षा की आवश्यकता होती है। बैंक के परिचालन एवं मौद्रिक नीति निर्माण प्रक्रिया में पारदर्शिता से इसकी जवाबदेही सुनिश्चित होती है। जितनी ज्यादा केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता होगी उतनी ज्यादा इस बात की आवश्यकता होगी केंद्रीय बैंक समुचित प्राधिकारी से अपने निर्णयों एवं नीतियों की समीक्षा करवाएं। जैसा कि पहले वर्णन किया गया - कई देशों में गवर्नर कांग्रेस या संसद के समक्ष वक्तव्य देता है। कई देशों में सरकार की बजाय सार्वजनिक तौर पर नियुक्त पर्यवेक्षी बोर्ड केंद्रीय बैंक के परिचालन बजट को स्वीकृति देता है परंतु कई देशों में सरकार बजट मामलों में हस्तक्षेप नहीं करती है। पर्यवेक्षी बोर्ड केंद्रीय बैंक के खातों की समीक्षा एवं केंद्रीय बैंक तथा इसके प्रबंध के कार्यनिष्पादन का मूल्यांकन करता है।

3.131 अपने महत्त्वपूर्ण लक्ष्यों, मूल्यस्थिरता एवं वृद्धि की प्राप्ति में वर्तमान केंद्रीय बैंक स्वायतः एवं उत्तरदायी दोनों है। आजकल केंद्रीय बैंक ज्यादा मुक्त हैं तथा वे अपनी नीतियों एवं निर्णय प्रक्रिया का औचित्य प्रकट करते हैं। डाटा प्रसार संबंधित बीआइएस एवं आइएमएफ नियम भी केंद्रीय बैंकों की जिम्मेदारी बढ़ाने में योगदान देते हैं। केंद्रीय बैंक की वार्षिक रिपोर्टें मुद्रास्फीति रिपोर्ट, मुद्रानीति समिति की बैठकों के वृत्त का प्रकाशन उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने के महत्वपूर्ण तरीके हैं।

3.132 नाइट (2005) पारदर्शिता में वृद्धि के लिए तीन प्रकार के सर्वश्रेष्ठ व्यवहारों का हवाला देते है। अधिकारिक रिपोर्ट, जिसमें आर्थिक स्थितियों की विवेचना की गई हो; महत्वपूर्ण परिवर्तनशील कारकों के पूर्वानुमान एवं उनका केंद्रीय पूर्वानुमान एवं जोखिम तथा विचाराधीन आपात स्थितियों एवं केंद्रीय बैंक के निर्णयों की व्याख्या संबंधी रिपोर्ट का प्रकाशन। बाजार सहभागियों की प्रत्याशा को आधार देने, मौद्रिक नीति संकेतों के संप्रेषण एवं बाजार को मुद्रा नीति निर्णयों के अनुकूल बनाने के लिए ऐसे प्रयास आवश्यक है।

केंद्रीय बैंक के परिचालनों में पारदर्शिता

3.133 केंद्रीय बैंक पारदर्शिता को अनिश्चितता के निवारणार्थ मुद्रा नीति निर्माताओं एवं अन्य बाजार सहभागियों के बीच सूचना विषमता के अभाव के रूप में देखा जा सकता है। हाल की अनेक घटनाओं से पारदर्शिता की आवश्यकता का जन्म हुआ है। सूचना विषमता से उत्पन्न संकट, वित्तीय बाजारों का बढ़ता एकीकरण, केंद्रीय बैंकों की अधिक स्वायत्तता एवं उत्तरदायित्व की आवश्यकता तथा वित्तीय स्थिरता पर जोर आदि कारणों से केंद्रीय बैंकोंएवं बाजार सहभागियों द्वारा अधिक पारदर्शिता की आवश्यकता हुई है। बढ़ती हुए वैश्विक समष्टिगत आर्थिक विषमताओं से बाजार माध्यमों एवं नीति निर्माताओं के समक्ष अनिश्चितता बढ़ रही है। इस परिदृश्य में केंद्रीय बैंक अनिश्चितता से और वृद्धि नहीं कर सकते। इससे अधिक पारदर्शिता एवं बेहतर संप्रेषण की आवश्यकता पैदा होती है। मुद्रा नीति अर्थव्यवस्था एवं अंतरराष्ट्रीय संबंधों के विभिन्न दृष्टिकोणों से सुरक्षित सूचना के विश्लेषण की नाना प्रकार की दृष्टियों पर आधारित होनी चाहिए।

3.134 इस परिदृश्य में यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि पारदर्शिता नाना प्रकार से उत्तरदायित्व की ही उपशाखा है। चूंकि केंद्रीय बैंक एक ‘स्वामी-सेवक संबंध’ व्यवस्था में समाज के सेवक की भूमिका में है अतः निर्णयों एवं मुद्रानीति पर विशद चर्चा जरूरी है तथा कई मामलों में यह देखा गया कि उनको प्रदत्त आदेश की बेहतर अनुपालन के लिए उनको स्वायत्त हैसियत प्रदान की गई। पारदर्शिता केंद्रीय बैंक का द्वितीयक परन्तु महत्वपूर्ण लक्ष्य है। इसका कारण यह है कि केन्द्रीय बैंक का उत्तरदायित्व मुद्रानीति संबंधी उसके प्राथमिक लक्ष्यों की प्राप्ति पर केंद्रित है जिससे पारदर्शिता उनके मुख्य कार्य एवं लक्ष्यों की अनुषंगी बन जाती है (इसिंग, 2005)।

3.135 जब संस्थाएं एवं बाजार सहभागी सुविज्ञ निर्णय लेते हैं तब ही वित्तीय प्रणाली की स्थिरता सुनिश्चित की जा सकती है। पर्याप्त सूचना प्रकटीकरण मनमानी मुद्रा नीति, असामयिकता एवं अत्यधिक जोखिम उठाने की प्रवृत्ति की रोकथाम करता है। इससे बाजार भागीदारों को वित्तीय करारों की लागत एवं निष्ठा के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में मदद मिलती है। पारदर्शिता अनेक दृष्टिकोणों से महत्वपूर्ण है। प्रथम, यदि सामान्यजन नीति के लक्ष्यों एवं उपकरणों को समझें तथा केंद्रीय बैंक एवं वित्तीय संस्थाएं उन लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु विश्वसनीय वचन दें तो मुद्रा नीति अधिक प्रभावकारी बनेगी। दूसरे, सुशासन की दृष्टि से, विशेषकर जब केंद्रीय बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं को उच्च स्तरीय स्वायत्तता दी गई है, इनका पारदर्शी एवं उत्तरदायी होना आवश्यक है। इस समय नीति निर्माताओं की यह आम राय है कि न सिर्फ जनता के प्रति जवाबदेही के तौर पर बल्कि उनके द्वारा चुनी गई नीतयों की सफलता के लिए भी अच्छा संप्रेषण एवं पारदर्शिता लाभकारी है।

3.136 मुद्रा नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए भी केंद्रीय बैंक की पारदर्शिता आवश्यक है। केंद्रीय बैंक के लक्ष्यों के बारे में सूचना एवं मुद्रानीति के परिचालन का ब्यौरा यथा ब्याज दरों में परिवर्तन आदि की

सूचना आवश्यक है क्यों कि इससे जन प्रत्याशा को संदर्भ मिलना है। तर्कसंगत प्रत्याशा के परिप्रेक्ष्य में मुद्रा नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति में इन प्रत्याशाओं की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है (किडलैण्ड एवं प्रेस्काट, 1977)। मूल्य स्थिरता के प्रति निष्ठा एवं विश्वसनीय मुद्रा नीति से प्रत्याशाओं को संदर्भ मिलता है (प्यानाल्टो, 2005)। आधुनिक साहित्य भी यह संकेत देता है कि पारदर्शिता वित्तीय बाजार सहभागियों की अनिश्चितता घटाती है (ब्लाइंडर एवं अन्य, 2001)।

3.137 परिचालन में पारदर्शिता बढ़ाने के लिए सर्व श्रेष्ठ व्यवहारों एवं नियमों को लागू करके अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संरचना को मजबूत करने के लिए अनेक उपाय किए गए हैं। इन प्रयासों को पहली बार 1995 में जी-7 के हेलिफेक्स शिखर सम्मेलन में महत्व दिया गया। पूर्व एशिया संकट के बाद इन प्रयासों पर ज्यादा ध्यान दिया गया। अप्रैल 1998 में वाशिंग्टन में वित्त मंत्रियों एवं केंद्रीय बैंक गवर्नरों का सम्मेलन हुआ तथा उसमें तीन क्षेत्रों : पारदर्शिता एवं जवाबदेही में वृद्धि, घरेलू वित्तीय प्रणालियों का मजबूतीकरण एवं अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संकटों का सामना के लिए कार्यदल गठित किए गए।

3.138 केंद्रीय बैंकों के वांछनीय पारदर्शिता व्यवहार को और मजबूत आधार प्रदान करने हेतु अं. मु. कोष ने मार्च 2000 में एलरिक संरचना के नाम से प्रसिद्ध एक मुद्रा एवं वित्तीय नीतियों में पारदर्शिता संबंधी श्रेष्ठ व्यवहार संहिता का निर्माण किया। केन्द्रीय बैंक शासन के परिप्रेक्ष्य में एलरिक (इएलआरआइसी) संक्षिप्ताक्षर का संदर्भ पांच क्षेत्रों से है : बाह्य लेखा परीक्षा तंत्र, विधायी संरचना एवं स्वायत्तता, वित्तीय सूचना प्रेषण, आंतरिक लेखा परीक्षा प्रणाली एवं आंतरिक नियंत्रण तंत्र। एलरिक संरचना अंतरराष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानकों, अंतरराष्ट्रीय लेखा परीक्षा मानकों, आंतरिक लेखा परीक्षक संस्थान द्वारा जारी मार्गदर्शी सिद्धांतों एवं अं.मु.के. के डाटा प्रसार मानकों को संदर्भ के रूप में प्रयोग करती है। इस संरचना के अनुसार अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा की गई संरक्षा प्रक्रिया के अंतर्गत केंद्रीय बैंक के नियंत्रण एवं शासन पहलुओं का आकलन एक निदान प्रक्रिया है। एलरिक संरचना के अंतर्गत संरक्षा आकलन प्रक्रिया केंद्रीय बैंक के परिचालनों में दोषों की पहचान कर उसके बारे में रिपोर्ट बनाती है तथा उनके प्रभावों को कम करने के लिए सुझाव देती है। सिफारिशों में क्रियान्वयन की समय सीमा भी प्रस्तावित की जाती है।

3.139 मुद्रा नीति के निर्माण में प्रयुक्त विवेकाधिकार स्तर के अनुरूप पारदर्शिता एवं संप्रेषण की आवश्यकता बढ़ जाती है। साहित्य में जिस प्रश्न पर चर्चा हो रही है वह यह नहीं है कि क्या पारदर्शिता हो या नहीं बल्कि यह है कि पारदर्शिता का स्तर कितना ऊंचा हो। पारदर्शिता का अर्थ आंकड़ों एवं सूचना का प्रसार है। वस्तुनिष्ठ आंकड़ों के प्रकाशन को अत्यन्त वांछनीय समझा जाता है क्योंकि यह सामान्य जन को विश्लेषण एवं स्वतंत्र मत निर्माण में समर्थ बनाता है। हालांकि प्रदत्त सूचना के आधार पर व्यकलन करने तथा मत निर्माण की सामान्य जन की क्षमता के बारे आंशका व्यक्त की जाती हैं; परंतु अधिक गंभीर प्रश्न का संबंध आंकड़ों की बाढ़ से है जिससे सामान्य जन की मति भ्रमित होती है तथा नीति निर्माण में महत्वपूर्ण आंकड़े उनकी दृष्टि से ओझल हो जाते हैं (इंसिंग, 2005)।

केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता

3.140 केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता का निहितार्थ यह है कि वह केंद्रीय बैंक मूल्य स्थिरता एवं वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए निरंतर अथक प्रयास करने वाले निकाय के रूप में विख्यात हो। काल्वो (1978) एवं किडलैण्ड तथा प्रेस्कोट (1977) द्वारा वर्णित काल असातत्य समस्या के प्रसंग में बैंक की विश्वसनीयता महत्वपूर्ण है। अपने वचन का पालन करने तथा वचन पालन में असफल होने की स्थितियों उनको देय क्रमशः पारितोषिक एवं दंड विधान के लिए विभिन्न संस्थागत व्यवस्थाएं स्थापित की जा सकती हैं। दूसरे, केंद्रीय बैंकों को दिए गए उपकरणों की रूपरेखा इस प्रकार की हो कि केंद्रीय बैंकों की विस्मयकारक कार्यवाही करने की क्षमता सीमित हो। इन दोनो व्यवस्थाओं के क्रियान्वयन के लिए केंद्रीय बैंक को स्वायत्तता देना आवश्यक है। संस्थागत बाध्यताओं के अभाव के बावजूद सामाजिक दृष्टि से इष्टतम परिणामों की उपलब्धता सुनिश्चित करना अपने आप में एक शक्तिशाली उत्प्रेरक हो सकता है (चांग, 1998)। यदि केंद्रीय बैंक की निम्न मुद्रास्फीति के प्रति वचनबद्ध एवं उसके अनुरक्षण में सक्षम, दोनों रूपों में अच्छी प्रतिष्ठा है तो मुद्रास्फीति प्रत्याशा का स्तर निम्न रहता है जिसके फलस्वरूप मूल्यों एवं मेहनताने में वृद्धि निम्न एवं स्थिर मुद्रास्फीति दर के अनुरूप होती है। इसके विपरीत विश्वसनीयता के अभाव में मुद्रास्फीति प्रत्याशाएं स्वयं - फलित बन जाती हैं।

3.141 यह नोट करने योग्य बात है कि चूंकि केंद्रीय बैंक की विश्सनीयता का मापन कठिन है अतः इसका एवं केंद्रीय बैंक स्वायत्तता एवं निम्नतर मुद्रास्फीति दर से अनुभवजन्य संबंध स्थापित करना मुश्किल है। परन्तु, मूल्य स्थिरता के प्रति सशक्त निष्ठा से अधिक मूल्य स्थिरता प्राप्य है (गैगनन एवं इहरिग, 2004)। केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता मुद्रास्फीति प्रत्याशा को संदर्भ प्रदान करने में सहायता करती है जो, जैसा कि लेक्सटन एवं एनदियाय (2002) ने प्रमाणित किया, मुद्रास्फीति के वर्तमान स्तर के लिए महत्वपूर्ण है।

IV. निष्कर्ष

3.142 समय के साथ केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धान्तों एवं व्यवहार में भारी परिवर्तन हुआ है। इस अध्याय में उसका वर्णन एवं प्रमुख सहयोगी कारकों के बारे में चर्चा की गई। चूंकि केंद्रीय बैंकिंग व्यवस्थाओं ने अपनी अर्थव्यवस्थाओं की आवश्यकताओं के अनुरूप अपना अनुकूलन किया है, अतः केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धान्त एवं व्यवहार में पारस्परिक लाभप्रद संबंध रहा है। आर्थिक वास्तविकताओं के अनुरूप दुनिया में संस्थागत व्यवस्थाओं में भिन्नताएं थीं। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में पहले से विद्यमान बैंकिंग प्रणाली को सहारा देने एवं पर्यवेक्षण के लिए केंद्रीय बैंकों की स्थापना हुई जबकि विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों को पहले बैंकिंग प्रणाली एवं वित्तीय बाजारों का विकास करना पड़ा तथा तदुपरान्त उनकी प्रभावी निगरानी एवं पर्यवेक्षण के लिए नियामक संरचना की स्थापना करनी पड़ी।

3.143 महान मंदी एवं केंस के सामान्य सिद्धान्त के प्रतिपादन समय तक सारे संसार में केंद्रीय बैंकिंग एवं मौद्रिक नीति पर ध्यान केंद्रित था; इसके बाद दो दशक तक राजकोषीय नीति के उत्कर्ष से मौद्रिक नीति संबंधी पृष्ठभूमि में चले गए। 1960 के दशक में मुद्रास्फीति एवं विकास अदलाबदली सिद्धान्त में रुचि बढ़ी - फिलिप्स कर्व मुद्रास्फीति एवं बेरोजगारी के बीच विपरीत संबंध को प्रदर्शित करती थी। मुद्रास्फीति दबाव की आशंकाओं के कारण मौद्रिक नीति पुनः आर्थिक नीति का प्रमुख अंश बनी। 1970 के दशक में मूल्य स्थिरता लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अधिकांश देशों ने मुद्रा लक्ष्य दृष्टिकोण को अपनाया। कुछ छोटी मुक्त अर्थव्यवस्थाओं ने निम्न-स्फीति विश्वसनीयता उधार लेने हेतु अपनी मुद्राओं को अधिक शक्तिशाली मुद्राओं के साथ कील बंद किया।

3.144 प्रत्येक संकट के बाद केंद्रीय बैंकिंग गतिविधियों के दायरे का विस्तार हुआ है। केंद्रीय बैंक कार्यों में परिचालन क्षेत्र का विस्तार हुआ तथा उनकी अंतर्निहित वस्तु में सुधार हुआ है। लघु अवधि आर्थिक उतार-चढ़ाव के स्थिरण तथा विकास एवं मुद्रास्फीति के वांछित रास्ते से विपथन के निवारण में मुद्रानीति एवं केंद्रीय बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बैंकिंग परिचालनों के तरीकों एवं ब्यौरे में समय के साथ बदलाव आए हैं, उन्होने प्रत्यक्ष उपकरणों का त्याग कर अप्रत्यक्ष उपकरण अपना लिए हैं। पीछे हटने की आवश्यकता से बचने एवं लाभों को समेकित करने हेतु इस संक्रमण की गति क्रमिक एवं सावधानीपूर्ण होनी जरूरी थी।

3.145 केंद्रीय बैंक के कई कार्य संबंधित क्षेत्रों में अग्रणी बने हैं। उदाहरणार्थ, विनिमय के माध्यम की स्थापना का कार्य आगे चलकर विभिन्न भूमिकाओं, यथा मुद्रा प्रबंध तथा मुद्रा के बाह्य एवं आंतरिक मूल्य का अनुरक्षण में बंट गया है। अंतिम ऋणदाता की भूमिका का विकास हुआ तथा विस्तार के बाद यह बैंकिंग क्षेत्र के नियामक एवं पर्यवेक्षी तथा वित्तीय स्थायित्व के पहरेदार की भूमिका में बंट गया है। चूंकि विभिन्न बाजार विश्व स्तर पर लगातार अधिक समेकित हो रहे हैं तथा वित्तीय संकट अत्यधिक तीव्र गति से फैल सकते हैं अतः वित्तीय क्षेत्र का पर्यवेक्षण बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। छूत ने प्रभावकारी पर्यवेक्षण एवं अंतरराष्ट्रीय मानकों एवं संहिताओं के पालन की आवश्यकता को रेखांकित किया है। यह बाजार सहभागियों की प्रत्याशा को कीलल बंद करने तथा अधिक स्थिरता के लिए मुद्रानीति में अधिक पारदर्शिता की आवश्यकता को रेखांकित करता है। केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता अपने आप में स्थिरता लाने वाला कारण है जो बाजार प्रत्याशा का निरुपण करता है।

3.146 अनेक केंद्रीय बैंकों का जन्म सरकार के वित्त के प्रबंध के लिए एक संस्था की आवश्यकता से हुआ। सरकारी ऋण का प्रबंध एक ऐसा कार्य था जिसमें केंद्रीय बैंक को विभिन्न प्रकार के राजकोषीय लेन-देन करने पड़ते थे तथा जिससे अनुषंगी कार्यों के निष्पादन हेतु एक संस्था-संरचना का विकास हुआ। संबंधित सरकारों की राजस्व एवं व्यय बेमेलता की कठिनाई के हल के लिए उनको द्रवता आपूर्ति की कुछ व्यवस्था की गई है तथापि लगातार घाटे के वित्तपोषण से बचा जाता है। कुछ देशों ने सरकार को ऋण देने का व्यवहार बंद करने एवं अपनी मौद्रिक नीति की प्रभाकारिता बढ़ाने हेतु अधिनियम पारित किए हैं। अतः निजी क्षेत्र सरकार को उत्तरोत्तर ज्यादा ऋण देता है।

3.147 अनेक विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों ने वित्तीय क्षेत्र सुधार हेतु प्रयास शुरू किए हैं। यह भूमिका इसलिए धारण की गई कि उत्तरोत्तर रूप से यह स्पष्ट होता जा रहा है कि संसाधनों के दक्ष आबंटन के लिए प्रतिस्पर्धी वित्तीय बाजारों की आवश्यकता है तथा वित्तीय बाजार की असफलता से उत्पादन की गंभीर हानि होती है। विकासशील देशों में केंद्रीय बैंकों ने बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्रों के विकास में योगदान दिया है तथा उनको विकसित देशों में उनके समस्थानकों के स्तर तक विकसित होने में मदद की। इसके लिए उन्होंने अपने बाजारों एवं संस्थाओं के विकास को प्रोत्साहन दिया। प्रणाली एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति कर संक्रमणशील अर्थव्यवस्थाएं एवं विकासशील देश अग्रणी बने तथा इस प्रकार अपने एवं विकसित देशों में अपने समस्थानकों के बीच के अंतर को कम किया। उन्होंने अपने वित्तीय क्षेत्रों का समेकन किया तथा अब उन्हें अपने वित्तीय बाजारों के भिन्न क्षेत्रों में अलग परिचालन की आवश्यकता नहीं पड़ती। संप्रति अधिकांश केंद्रीय बैंक लघु अवधि ब्याज दर का प्रमुख उपकरण के तौर पर प्रयोग करते हैं। वित्तीय बाजारों के विकास ने केंद्रीय बैंकों को मुद्रानीति दक्षता प्राप्त करने में समर्थ

बनाया। एकल दर परिवर्तन या एक घोषणा बाजारों को अनुशासित करने के लिये पर्याप्त होती है। चूंकि आर्थिक गतिविधियाँ महत्वपूर्ण तरीके से मुद्रानीति कार्यवाही पर निर्भर करती हैं अतः उनका प्रारंभ बहुत सावधानी पूर्वक किया जाता है। जैसे-जैसे वित्तीय प्रणाली का विकास होता है वह उत्तरोत्तर जटिल होती जाती है तथा यह आशा की जाती है कि वह केंद्रीय बैंक की वास्तविक आभासी कार्यवाही के प्रति तुरंत प्रतिक्रिया करे। वैश्विक बाजारों के एकीकरण से केंद्रीय बैंकिंग लगातार अधिक चुनौतीपूर्ण होती जा रही है।

3.148 मुद्रास्फीति की दर को कम बनाए रखना अधिकांश केंद्रीय बैंकों को प्रदत्त मूलभूत जिम्मेदारी है। इस भूमिका के निर्वाह हेतु केंद्रीय बैंक को समुचित लक्ष्यों, उपकरणों एवं संरचनाओं का चयन करना पड़ता है। इस चयन से संबंधित कठिनाइयों का अलग-अलग देशों एवं एक ही देश में अलग-अलग कालों में विभिन्न तरीकों से समाधान किया जाता है। अनुभवजन्य साक्ष्य से प्रतीत होता है कि पर्याप्त स्वायत्तता एवं उत्तरदायित्व युक्त केंद्रीय बैंकों ने मौद्रिक नीति की विभिन्न संरचनाओं में अच्छा कार्य किया है। केंद्रीय बैंक के परिचालन के दो महत्वपूर्ण पहलू देखे गए हैं। दीर्घावधि क्षितिज पर केंद्रित ध्यान एवं नीति परिचालनों की पारदर्शिता हैं।

3.149 वर्तमान समय में केंद्रीय बैंक वित्तीय प्रणाली के केंद्र में स्थित है। इस बात पर विचार करते हुए कि बीसवीं सदी की शुरुआत में मुक्त बैंकिंग को पर्याप्त समर्थन प्राप्त था, केंद्रीय बैंकों ने बहुत विकास किया है। केंद्रीय बैंक का मौद्रिक नीति के मुद्रास्फीति एवं विकास संबंधी पहलुओं पर सघन ध्यान रहा है। केंद्रीय बैंक द्वारा संपादित कार्यों के दायरे एवं गुणवत्ता में पर्याप्त वृद्धि हुई है। एक ओर इनमें से कुछ को सफलतापूर्वक पृथक किया गया वहीं दूसरी ओर कुछ कार्यों जैसे वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करना एवं वित्तीय क्षेत्र का विकास को आगे बढ़ कर अपनाया गया। केंद्रीय बैंक बहु कार्य संस्थाओं के रूप में स्थूल आर्थिक नीति निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते रहेंगे। अपनी वित्तीय संरचनाओं का आवश्यकता के अनुसार वे शायद एक प्रतिमान छोड़ कर दूसरा प्रतिमान अपनाते रहेंगे पर अभी यह संभव नहीं लगता है कि वे मंच केंद्र का त्याग करेंगे।

IV भारत में केंद्रीय बैंकिंग

4.1 हाल ही का वृद्धि-मूलक साहित्य संस्थाओं के प्रभुत्व पर केंद्रित है क्योंकि ये संस्थाएं ही उस रूप में आर्थिक विकास की निर्धारक होती हैं जो कार्य, बचत, निवेश, नवोन्मेष, उत्पादन और विनिमय से संबंधित निर्णयों को प्रभावित करती हैं। संस्थाओं पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित किए जाने के कारण कंपनी संचालन संबंधी सुधारों की महत्वाकांक्षी कार्यसूची की ओर ध्यान दिया जाने लगा है जिसका उद्देश्य है - भ्रष्टाचार में कमी लाना, विनियामक उपकरणों को सुधारना, मौद्रिक और राजकोषीय संस्थाओं को स्वतंत्र बनाना, कंपनी संचालन को सुदृढ़ करना आदि - जिन्हें सुधारों का दूसरा चरण कहा गया है। यह तर्क दिया गया है कि नीतिगत परिवर्तन तब तक अप्रभावी रहेंगे जबतक कि उन्हें संस्थागत सुधारों के रूप में दृढ़तापूर्वक आत्मसात नहीं किया जाता है। तथापि, अनुभवजन्य विश्लेषण में यह कठिनाई आती है कि संस्थागत गुणवत्ता आय के स्तरों से उत्पन्न होती है और अभी भी इस बारे में काफी कुछ सीखना बाकी है कि आधारभूत रूप में संस्थागत गुणवत्ता में सुधार करने से क्या तात्पर्य है (रोड्रिक आदि, 2004)। इसी के संदर्भ में देश विशेष की परिस्थितियों में संस्थाओं के विकास का अध्ययन करना महत्वपूर्ण हो जाता है।

4.2 किसी अर्थव्यवस्था के संस्थागत ताने-बाने में केंद्रीय बैंकों की महत्वपूर्ण स्थिति होती है। जैसा कि अध्ययन III में चर्चा की गई है किसी आधुनिक केंद्रीय बैंक के कार्य सत्रहवीं सदी में यूरोप में स्थापित प्रारंभिक केंद्रीय बैंकों से अपेक्षित कार्यों से काफी भिन्न हैं। भारतीय संदर्भ में केंद्रीय बैंकिंग के विकास की अपनी विशिष्टता है। भारतीय रिज़र्व बैंक ने अपने सांविधिक उत्तरदायित्वों को निवाहते हुए, राष्ट्रनिर्माण की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, विशेषकर वित्तीय क्षेत्र के विकास में। वस्तुतः संस्थाओं का निर्माण करना भारत में केंद्रीय बैंकिंग का एक विशिष्ट उल्लेखनीय पहलू है।

4.3 इस अध्याय में 1935 में भारतीय रिज़र्व बैंक के गठन से लेकर अबतक सत्तर वर्षों की अवधि के दौरान भारत में केंद्रीय बैंकिंग के विकास का वर्णन किया गया है। विश्लेषण की सुविधा के लिए, 1935-2005 तक की सम्पूर्ण अवधि को मौटे तौर पर तीन चरणों में बांटा गया है : स्थापना का चरण (1935-1950), विकास का चरण (1951-1990), तथा सुधार का चरण (1991 से)। भारत में 1951 में आर्थिक योजना बनाए जाने तथा 1991 में भारतीय अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक सुधारों की शुरुआत वे मील के पत्थर रहे हैं, जिनके रिज़र्व बैंक की कार्य-प्रणाली पर गहरे प्रभाव पड़े हैं। इन अवधियों में रिज़र्व बैंक ने विशिष्ट रूप से भिन्न-भिन्न शासन व्यवस्थाओं में कार्य किया है। स्थापना के चरण के अधिकांश वर्षों में यह एक निजी बैंक था, हालांकि इसका गठन एक संविधान के अंतर्गत हुआ था तथा इस पर तत्कालीन उपनिवेशवादी सरकार की निगरानी रहती थी। इस अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक के कार्य अनिवार्य रूप से परंपरागत केंद्रीय बैंकिंग के कार्यों तक सीमित थे जैसे - नोट जारी करने वाली प्राधिकारी संस्था तथा सरकार का बैंकर। युद्ध की अवधि तथा उसके बाद की अवधि के वर्षों के दौरान इसका मुख्य कार्य था युद्ध के लिए वित्तपोषण को सुविधाजनक बनाना, स्टर्लिंग ऋण का प्रत्यावर्तन करना तथा विदेशी मुद्रा के नियंत्रण के लिए आयोजना तथा उसका प्रशासन करना। भारतीय रिज़र्व बैंक (सार्वजनिक/सरकारी स्वामित्व में अंतरण) अधिनियम 1948 के अनुसार 1949 में भारतीय रिज़र्व बैंक का राष्ट्रीकरण कर दिए जाने तथा बैंककारी विनियमन अधिनियम 1949 को बनाए जाने पर बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण पर मुख्य रूप से ध्यान केंद्रित किया गया। रिज़र्व बैंक की पहल पर देश में बैंकिंग की सुविधाओं के विस्तार से संबंधित महत्वपूर्ण नीतिगत मुद्दों पर विचार करने के लिए सरकार ने ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति का गठन किया। पंचवर्षीय योजनाएं शुरू किए जाने पर योजना के वित्तपोषण तथा भारतीय अर्थव्यवस्था में बचतों और निवेश को बढ़ाने के लिए विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना करने तथा प्राथमिकता-प्राप्त क्षेत्र की ऋण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक के कार्य और अधिक विशाखीकृत हो गए। साठोत्तर दशक में हुई दो महत्वपूर्ण घटनाओं - जून 1966 में भारतीय रुपए के अवमूल्यन तथा जुलाई 1969 में 14 निजी वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीकरण ने - बाद के वर्षों में रिज़र्व बैंक के कार्यों को काफी सीमा तक प्रभावित किया, बाह्य क्षेत्र की दृष्टि से। स्थायी विनिमय दरों की ब्रिटेन वुड प्रणाली के टूट जाने तथा 1973-74 के तेल संबंधी आघातों से बढ़ी हुई (फ्लोटिंग)(सचल) विनिमय दर व्यवस्थाओं के उभरने के बाद वैश्विक अर्थव्यवस्था में आई अनिश्चितताओं ने विनिमय दर प्रबंधन के लिए गंभीर चुनौतियाँ खड़ी कर दीं तथा भारत एवं अन्य कई विकासशील देशों में भुगतान संतुलन की कठिनाइयों को बढ़ा दिया। सरकार ने विदेशी पूंजी के आगम को विनियमित करने की अपेक्षा विदेशी मुद्रा के संरक्षण के लिए विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम (फेरा) 1947 पर अपना ध्यान पुनः केंद्रित किया। सरकारी नीतियों के प्रभावी अनुपालन तथा विद्यमान विधान (कानून) की कार्यप्रणाली में आई कठिनाइयों को दूर करने के लिए आवश्यक परिवर्तनों को समाहित करते हुए फेरा 1973 का मसौदा तैयार किया गया। सत्तर के बाद के दशक में रिज़र्व बैंक पर आए मुख्य उत्तरदायित्व देश के दुर्लभ विदेशी मुद्रा भंडार के विनियमन तथा प्रबंधन एवं कृषि और ग्रामीण विकास के लिए अपनी वित्त पोषण संबंधी सुविधाओं की मात्रा तथा क्षेत्रगत व्याप्ति को बढ़ाने का था। अस्सी के बाद के दशक में, मौद्रिक नीति को नया महत्व मिला। कुल मिलाकर

विकास का यह चरण भारतीय अर्थव्यवस्था में अनेक नियंत्रणों और विनियमनों से भरा रहा। 1991 से शुरु हुई अवधि में, जिसमें भारतीय अर्थव्यवस्था में प्रणालीगत परिवर्तन देखा गया। देशी और वैश्विक गतिविधियों के संदर्भ में रिज़र्व बैंक के कार्यों में एक विशेष अभिमुखीकरण (बदलाव) देखा गया। वित्तीय क्षेत्र में सुधार के उपाय तथा मौद्रिक नीति की धड़कनों के प्रभावी रूप से संचरण (संप्रेषण) को सुनिश्चित करने के लिए वित्तीय बाजारों के विकास के वास्ते रिज़र्व बैंक द्वारा की गई पहलें इस चरण की प्रमुख विशेषताएं रहीं।

4.4 इस अध्याय का शेष भाग इस प्रकार है - भाग I, II और III में इन तीन चरणों में भारत में केंद्रीय बैंक के कार्यों के रूपांतरण का संक्षिप्त विहगावलोकन है। भाग IV में भारत में केंद्रीय बैंकिंग से प्रासंगिक समसामायिक मुद्दों पर विचार किया गया है; विशेष रूप से, मौद्रिक ढांचे से संबंधित मुद्दों पर, जबकि भाग V में निष्कर्षात्मक टिप्पणियां दी गई हैं।

I स्थापना का चरण (1935-1950)

4.5 रिज़र्व बैंक का गठन अप्रैल 1935 में शेयरधारकों की संस्था के रूप में किया गया था, तथापि भारत में केंद्रीय बैंकिंग संस्थान के रूप में उसकी उत्पत्ति के इतिहास की खोज अठारवीं शताब्दी में की जा सकती है (बाक्स IV.1)।। रिज़र्व बैंक का निर्माण उसी प्रकार हुआ जैसे यूरोप में प्रारंभिक केंद्रीय बैंकों का हुआ था। तथापि, इनमें महत्त्वपूर्ण अंतर यह रहा कि रिज़र्व बैंक ने उप-निवेशवादी शासन के अंतर्गत कार्य किया, जबकि यूरोपीय देशों में केंद्रीय बैंक का स्वामित्व अधिकांशतः राष्ट्रीय सरकारों के पास रहा।

4.6 जैसा कि भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 के प्रस्तावना में कहा गया है रिज़र्व बैंक की स्थापना का उद्देश्य ''बैंक नोटों के निर्गम को विनियमित करना तथा भारत में मौद्रिक स्थिरता बनाए रखने की दृष्टि से प्रारक्षित निधियां रखना और आमतौर पर देश की मुद्रा और ऋण प्रणाली का संचालन इसके हित में करना" था। इसके विधान में यथानिर्दिष्ट रिज़र्व बैंक के कार्य थे : (क) मुद्रा का निर्गम; (ख) सरकार के लिए बैंक का कार्य करना; तथा (ग) अन्य बैंकों के लिए बैंकर का कार्य करना। कृषि के क्षेत्र अलावा, रिज़र्व बैंक के अन्य कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं सौंपी गई थी और वह भी सीमित मात्रा में (भारतीय रिज़र्व बैंक 1970)।

4.7 स्थापना के चरण में युद्ध संबंधी तथा युद्धोपरांत अनेक गतिविधियां हुईं जिनमें 1937 में बर्मा (आधुनिक म्यांमार) का अलग होना, 1947 में देश का विभाजन तथा रिज़र्व बैंक का राष्ट्रीकरण भी शामिल है, जिन्होंने रिज़र्व बैंक के कार्यों के क्षेत्र को ही बदल दिया। बर्मा के अलग होने के बाद, रिज़र्व बैंक ने 1942 तक उस देश के मुद्रा प्राधिकरण के रूप में तथा मार्च 1947 तक बर्मी सरकार के लिए बैंकर के रूप में कार्य किया।

1947 में देश का विभाजन होने पर, रिज़र्व बैंक ने जून 1948 तक पाकिस्तान सरकार को केंद्रीय बैंकिंग की सेवाएं प्रदान कीं। पाकिस्तान मौद्रिक प्रणाली

बाक्स IV.1
भारत में केंद्रीय बैंकिंग की उत्पत्ति का इतिहास

केंद्रीय बैंक के लक्षणों वाली किसी बैंकिंग संस्था की स्थापना के प्रयासों की खोज हमें दूर 1773 में ले जाती है। ब्रिटिश इंडिया के अंतर्गत बंगाल के गवर्नर ने 'बंगाल और बिहार में एक सामान्य बैंक' की स्थापना करने की सिफारिश की थी। 1773 में इस बैंक की स्थापना हुई भी, परंतु यह कुछ समय तक ही चला। 1914 में चेंबरलेन आयोग ने अपनी रिपोर्ट में (अपने एक सदस्य) जॉन मेनार्ड कीन्स द्वारा तैयार एक व्यापक ज्ञापन को भी शामिल किया, जिसमें तीन प्रेसिडेंसी बैंकों का समामेलन एक केंद्रीय बैंक, जिसका नाम 'इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया' होगा, में करने का प्रस्ताव किया गया था। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद के चरणों में केंद्रीय बैंक जैसी संस्था की आवश्यकता अधिक प्रखर रूप से महसूस की गई और 1920 में इम्पीरियल बैंक अधिनियम पारित किया गया। यह समामेलन अंततः 1921 में लागू किया गया जिसके फलस्वरूप इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया का गठन हुआ। अनिवार्यतः एक वाणिज्यिक बैंक होते हुए भी इम्पीरियल बैंक ने कुछ केंद्रीय बैंकिंग के कार्य किए जैसे सरकार के लिए बैंक तथा बैंकों में लिए बैंक तथापि, करेंसी नोटों के निर्गम तथा विदेशी मुद्रा के प्रबंधन संबंधी केंद्रीय बैंकिंग के बुनियादी कार्य करने का उत्तरदायित्व केंद्रीय सरकार का बना रहा।

इस बीच, इन विचारों के साथ केंद्रीय बैंकिंग की धारणा विकसित होती रही कि किसी संस्था के लिए यह उचित नहीं होगा कि वह वाणिज्यिक बैंकिंग के कार्य भी करे और देश केंद्रीय बैंक के कार्य भी । 1920 में भारतीय मुद्रा और वित्त पर रॉयल कमीशन (हिल्टन यंग कमीशन) ने यह सिफारिश की कि कार्यों का विभाजन तथा मुद्रा के नियंत्रण तथा ऋण के उत्तरदायित्वों का विभाजन समाप्त किया जाना चाहिए। उक्त कमीशन ने यह सुझाव दिया कि एक केंद्रीय बैंक की स्थापना की जाए जिसे भारतीय रिज़र्व बैंक का नाम दिया जाए। जिसका पृथक आस्तित्व सारे देश में बैंकिंग सुविधाओं का बढ़ाने के लिए जरूरी समझा गया।

भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना करने के लिए विधेयक विधान सभा में जनवरी 1927 को प्रस्तुत किया गया। परंतु इसके स्वामित्व, गठन, तथा निदेशक मण्डल की संरचना संबंधी विचारों में मतभेद होने के कारण इसे छोड़ दिया गया। भारतीय संविधान संबंधी सुधारों पर श्वेत पत्र (1933) में राजनैतिक प्रभावों से मुक्त भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना करने का प्रस्ताव किया गया। भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जांच समिति (1931) ने भी रिज़र्व बैंक की स्थापना करने की पुरज़ोर सिफारिश की थी। इन घटनाओं ने 1933 में एक नया विधेयक लाने के लिए प्रेरित किया। यह बिल 1934 में पारित किया गया तथा भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934, 1 जनवरी 1935 से प्रभावी हो गया। रिज़र्व बैंक का उद्घाटन 1 अप्रैल 1935 को किया गया।

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक (1970)

तथा रिज़र्व बैंक (संशोधन) आदेश 1948 के अनुसार रिज़र्व बैंक ने 1 जुलाई 1948 से पाकिस्तान के लिए केंद्रीय बैंक के रूप में कार्य करना बंद कर दिया । भारतीय रिज़र्व बैंक (सार्वजनिक स्वामित्व का अंतरण) अधिनियम 1948 के अनुसार भारतीय रिज़र्व बैंक का 1 जनवरी 1949 को राष्ट्रीकरण कर दिया गया।

4.8 इनमें से प्रत्येक घटना का असर रिज़र्व बैंक की कार्य-पद्धति पर पड़ा है, यद्यपि यह प्रभाव मुख्यतः परंपरागत कार्यों तक सीमित रहा। इस अवधि के दौरान बैंक के कार्य का सर्वाधिक सक्रिय भाग मुद्रा (करेंसी) के प्रबंधन तथा सरकार के लिए बैंकर के कार्यों से संबंधित रहा। विदेशी मुद्रा विनिमय दर की स्थिरता को बनाए रखने के अलावा, मौद्रिक नीति के क्षेत्र में, मुद्रा आपूर्ति या मुद्रास्फीति के प्रबंधन की आवश्यकता नहीं हुई, क्योंकि आर्थिक गतिविधियों का स्तर मुख्यतः उप-निदेश वादी शासन के दौरान निम्न बना रहा।

मुद्रा प्रबंधन

4.9 भारत में आधुनिक अर्थ में कागजी मुद्रा के प्रचलन का मूल अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में निजी बैंकों और अर्द्ध सरकारी बैंकों (दि बैंक ऑफ बंगाल, दि बैंक ऑफ बोम्बे तथा दि बैंक ऑफ मद्रास - प्रेसीडेंसी बैंकों द्वारा नोटों के निर्गम में खोजा जा सकता है। 1861 के कागजी मुद्रा अधिनियम ने भारत सरकार को नोट-निर्गम का एकाधिकार प्रदान किया जिससे निजी और प्रेसीडेंसी बैंकों द्वारा नोट जारी करने की प्रथा समाप्त हो गई। सिक्कों को जारी करने को संचालित करने संबंधी सांविधिक प्रावधान भारतीय सिक्का ढलाई अधिनियम 1906 में निर्धारित किए गए हैं। 31 मार्च 1935 तक मुद्रा प्रबंधन का कार्य मुद्रा नियंत्रक के माध्यम से केंद्र सरकार द्वारा अपने विभाग में ही किया गया। अपनी स्थापना होने पर रिज़र्व बैंक ने भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 की धारा 3 के अंतर्गत इस कार्य को अपने पास ले लिया । उपनिवेशवादी अवधि से स्वतंत्र भारत में मुद्रा प्रबंधन के कार्य का रूपांतरण काफी सुचारु रहा। जब तक कि इसके अपने नोट तैयार नहीं हो गए, तब तक रिज़र्व बैंक ने भारत सरकार द्वारा जारी नोटों का ही परिचालन करना जारी रखा। रुपए 5 और रुपए 10 के मूल्यवर्ग में रिज़र्व बैंक द्वारा नोटों का प्रथम निर्गम जनवरी 1938 में किया गया, जबकि उच्च मूल्यवर्ग के नोटों (रु.100, रु.1000 तथा रु.10,000/-) को उसी वर्ष बाद में जारी किया गया।

4.10 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के अनुसार नोट निर्गम तथा सामान्य बैंकिंग कारोबार से संबंधित रिज़र्व बैंक के कार्य दो अलग-अलग अर्थात निर्गम और बैंकिंग विभागों द्वारा किए जाते हैं। निर्गम विभाग समय-समय पर जारी प्रचलन में करेंसी नोटों के कुल मूल्य के लिए उत्तरदायी है और उसके समकक्ष मूल्य के लिए पात्र आस्तियों को रखता है। करेंसी को प्रचलन में लाने तथा उसे प्रचलन से वापस लेने (मुद्रा का प्रसार तथा संकुचन) की प्रक्रिया बैंकिंग विभाग द्वारा की जाती है।

4.11 निर्गम विभाग की आस्तियों में जिनके प्रति भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 33 के अंतर्गत करेंसी नोट जारी किए जाते हैं । स्वर्ण के सिक्के, सोना-चांदी, विदेशी प्रतिभूतियां, रुपए के सिक्के, भारत सरकार की किसी भी मीयाद वाली रुपया प्रतिभूतियां तथा भारत में देय विनिमय बिल और प्रोमेज़री नोट जो रिज़र्व बैंक द्वारा खरीदे जाने योग्य हैं, शामिल होते हैं। मूल अधिनियम में जारी किए जाने वाले नोटों के प्रति अनुपातिक रूप में स्वर्ण तथा स्टर्लिंग (बाद में विदेशी) प्रतिभूतियों को रखने का प्रावधान था, जिसमें कुल आस्तियों का कम से कम 40 प्रतिशत भाग सोने के सिक्के, सोना-चांदी और स्टर्लिंग (बाद में विदेशी) प्रतिभूतियां होनी चाहिए। इसमें आगे यह भी निर्धारण किया गया है कि स्वर्ण के सिक्के और सोना-चांदी किसी भी समय, 40 करोड़ रुपए से कम के न हों। इस आनुपातिक आरक्षित निधि प्रणाली के स्थान पर भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) अधिनियम, 1956 द्वारा 1956 में न्यूनतम प्रारक्षित प्रणाली की शुरुआत की गई। न्यूनतम आरक्षित प्रणाली में समग्र दृष्टि से 400 करोड़ रुपए तथा 115 करोड़ रुपए के सोने के सिक्के रखने और इस प्रकार कुल 515 करोड़ रुपए कि न्यूनतम आस्तियां रखने का निर्धारण किया गया है।

4.12 वर्ष 1935 में आस्तियों में करेंसी के लिए यह समर्थन सोने के सिक्के, सोने-चांदी तथा स्टर्लिंग प्रतिभूतियों की दृष्टि से काफी उच्च था। भारत सरकार की रुपया प्रतिभूतियां निर्गम विभाग की कुल प्रतिभूतियों का 27 प्रतिशत बनती हैं । 1935 में प्रचलन में कम करेंसी का होना उस समय न केवल व्यापार के लिए अपेक्षित मुद्रा की कम मात्रा को निर्दिष्ट करता है, बल्कि उस न्यूनतर आधार को भी दर्शाती है जिस पर अर्थव्यवस्था टिकी हुई थी। कुछ सीमा तक, इसने अर्थव्यवस्था में मौद्रीकरण की कमी को भी प्रदर्शित किया । आजादी के बाद, रिज़र्व बैंक के उत्तरदायित्व एकल राष्ट्रीय करेंसी तक सीमित रहे तथा भारतीय मुद्रा का विदेशों में कोई संपर्क नहीं था।

4.13 ब्रिटिश इंडिया में बैंक नोटों का निर्गम प्रारंभिक दिनों में रिज़र्व बैंक का सबसे महत्वपूर्ण कार्य था। करेंसी चेस्ट में विद्यमान धन का लेखांकन रिज़र्व बैंक के दैनिक नेमी कार्यकलाप प्रमुख भाग बन गया जिसमें बैंक के कुल स्टाफ का एक तिहाई कर्मचारी लगा रहता था। करेंसी नोटों को जारी करने का कार्य जिसमें भारत सरकार द्वारा जारी एक रुपए के सिक्के तथा छोटे (पूरक) सिक्के तथा भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा जारी नोट शामिल होते हैं - निर्गम विभाग की शाखाओं द्वारा किया जाता था। रिज़र्व बैंक सरकार के कोषागार कारोबार में संलग्न

इम्पीरियल बैंक की शाखाओं में तथा सरकारी कोषागारों और उप-कोषागारों में करेंसी चेस्टों को भी बनाए रखता था। यद्यपि करेंसी मुद्रा के प्रबंधन में किसी नवोन्मेष की या तकनीकी सुधार की कोई खास संभावना नहीं थी, फिर भी रिज़र्व बैंक ने अपने ऋण तथा खुले बाजार के परिचालनों द्वारा करेंसी प्रणाली में लचीलेपन का उपाय किया।

बैंकरों का बैंक

4.14 रिजर्व बैंक का गठन होने से पहले (1921 में गठित) इम्पीरियल बैंक कुछ सीमा तक बैंकों के लिए बैंकर के रूप में भी कार्य करता था। अधिकांश अन्य बैंक इसके पास शेष राशियां रखते थे और आर्थिक निभाव प्राप्त करते थे। यह समाशोधन गृह भी चलाता था और अपनी सभी शाखाओं, अन्य बैंकों तथा जनता को विप्रेषण सुविधाएं भी प्रदान करता था। बैंक वित्त का प्रमुख भाग विदेश व्यापार के वित्त पोषण के लिए होता था, जबकि आंतरिक व्यापार का अंश महत्वपूर्ण नहीं था।

4.15 बैंकरों के लिए बैंक के रूप में रिजर्व बैंक का दायित्व अनिवार्यतः दोहरा था। पहला, इसने बैंकिंग प्रणाली के लिए प्रारक्षित निधियों के लिए विशेषकर आपात कालों में अंतिम उधारदाता के रूप में कार्य करने के अलावा मौसमी आवश्यकताओं को पूरा करने में स्रोत के रूप में कार्य किया। दूसरा उत्तरदायित्व यह सुनिश्चित करना था कि बैंकों की स्थापना की जाए तथा उन्हें सुदृढ़ आधारों पर चलाया जाए। उस दिनों में मुख्य बल ऋण के विनियमनों के बजाए जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करने पर रहता था। बैंकिंग क्षेत्र के विनियमन और पर्यवेक्षण का कार्य बैंकिंग विभाग को 1945 में सौंपा गया। तथापि, 1949 में बैंककारी कंपनी अधिनियम (जिसे मार्च 1966 से बैंककारी विनियमन अधिनियम का नया नाम दिया गया) बनने से पहले रिज़र्व बैंक के पास काफी शक्तियां नहीं थीं। इसके अलावा, वह 1949 के विधान द्वारा इसे प्रदत्त शक्तियों का युद्धोत्तर बैंकिंग संकट के कारण तत्काल प्रयोग करना भी शुरू नहीं कर सका। अपने परिचालनों के लिए देशी बैंकों के पास सीमित मात्रा में तथा महाजनों के पास व्यापक क्षेत्र और व्याप्ति प्राप्त थी (भारतीय रिज़र्व बैंक 1985)।

सरकार का बैंकर

4.16 रिजर्व बैंक के निर्माण से पहले इम्पीरियल बैंक ने सरकार के बैंकर के रूप में अनेक कार्य किए। रिज़र्व बैंक की स्थापना होने पर, इम्पीरियल बैंक ने सरकार के बैंकर के रूप में कार्य करना बंद कर दिया, परंतु इसने रिज़र्व बैंक के साथ एक करार किया कि वह इसके एक मात्र एजेंट के रूप में उन स्थानों पर अपनी सेवाएं प्रदान करेगा जहाँ उसकी कोई शाखा है, परंतु रिज़र्व बैंक के बैंकिंग विभाग की कोई शाखा नहीं है। केंद्र सरकार के बैंकर के रूप में तथा राज्य सरकारों के साथ करार किए जाने के आधार पर उनके बैंकर के रूप में रिज़र्व बैंक इन सरकारों को अनेक प्रकार की सेवाएं प्रदान करता है जैसे सरकारी खाते में धन स्वीकार करना, विभिन्न माध्यमों से निधियों का भुगतान/ आहरण तथा निधियों की वसूली और अंतरण। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की 20,21 और 21ए धाराएं इन कार्यों के लिए सांविधिक आधार प्रदान करती हैं। वे शर्तें जिनके आधार पर रिज़र्व बैंक केंद्र और राज्य सरकारों के लिए बैंकर का कार्य करता है, अलग-अलग करारों में दी गई हैं, जिनके द्वारा रिज़र्व बैंक ने इन सरकारों के साथ करार किया था । ऐसा पहला करार अप्रैल 1935 में भारत सरकार के सचिव के साथ किया गया था जिसके द्वारा यह अपेक्षा की गई थी कि रिज़र्व बैंक केंद्र सरकार की सामान्य बैंकिंग का कारोबार करेगा। इस करार की अनुपूर्ति समय-समय पर ऐसे पत्रों के आदान-प्रदान द्वारा की गई जिनमें इसके कार्यक्षेत्र में जैसे न्यूनतम शेषराशियां रखना, अर्थोपाय अग्रिमों के रूप में अस्थायी वित्तीय निभाव के प्रावधान तथा कुछ मूल शर्तों में संशोधन शामिल किए गए थे। प्राप्तियों और व्ययों में आई विसंगतियों को पूरा करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 17(5) के अंतर्गत रिज़र्व बैंक सरकार को अस्थायी अग्रिम प्रदान करता है।

4.17 केंद्र सरकार ने 1935 तक इम्पीरियल बैंक से और उसके बाद रिज़र्व बैंक से अर्थोपाय अग्रिम प्राप्त किए हैं। युद्ध के वर्षों के दौरान संचित भारी नकदी शेषराशि के रहते 1943-44 से लगभग एक दशक तक भारत सरकार ने कोई अर्थोपाय अग्रिम नहीं लिए। आर्थिक मंदी के परिणाम स्वरूप तथा भारी अग्रिमों की आवश्यकता के न होने के कारण भी सरकार को भारतीय रिज़र्व बैंक से कम स्तर की आर्थिक सहायता की जरूरत पड़ी। तथापि, सरकार के बैंकर के रूप उस अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक के परिचालनों का सर्वाधिक सक्रिय भाग रहा - केंद्र और प्रादेशिक सरकारों के ऋणों के निर्गम तथा उनके खज़ाना बिलों के निर्गम से संबंधित रहा। 1935 से 1939 की अवधि के दौरान भारत सरकार ने लंदन में एक स्टर्लिंग ऋण जारी किया तथा चार नए रुपए ऋण जारी किए जो मुख्यतः पुराने ऋणों की चुकौती संबंधी देयताओं को पूरा करने के लिए थे। दूसरे विश्व युद्ध के दौरान देश ने जो स्टर्लिंग का भारी अधिग्रहण किया था उसने स्टर्लिंग ऋण के प्रत्यावर्तन का एक अवसर प्रदान किया और इस बारे में काफी पहल रिज़र्व बैंक की ओर से हुई जिसमें प्रत्यावर्तन को क्रियान्वित भी किया गया। जहाँ स्टर्लिंग ऋण का प्रत्यावर्तन युद्ध से पहले भी कुछ सीमित स्तर पर शुरू हो चुका था, परंतु युद्ध के दौरान इसे भारी स्तर पर किया गया। प्रारंभ में यह स्वैच्छिक आधार पर रहा और 1941 से अनिवार्य प्रत्यावर्तन की योजनाओं के माध्यम से। प्रत्यावर्तन के अन्य माध्यमों में शामिल थे - रेलवे वार्षिकियों का निधियन, रेलवे डिबेंचर स्टॉकों की प्राप्ति तथा चेटफील्ड ऋण का परिसमापन। 1937-38 से लेकर 1945-

46 तक 323 मिलियन पौंड के स्टर्लिंग ऋण का प्रत्यावर्तन कर दिया गया था जिसमें से अधिकांश (289 मिलियन पौंड) का प्रत्यावर्तन 1940-43 के दौरान किया गया (भारतीय रिज़र्व बैंक, 1970)।

मौद्रिक नीति

4.18 अन्य केंद्रीय बैंकों की तरह रिज़र्व बैंक का मूल (स्थायी) कार्य रुपए की स्थिरता को बनाए रखने के लिए मौद्रिक नीति का निर्माण तथा उसको लागू करना है। तथापि, इसकी स्थापना के वर्षों के दौरान अर्थव्यवस्था में ऋण मांग और आपूर्ति को संचालित करने के अलावा कोई औपचारिक मौद्रिक नीति नहीं बनाई गई। बैंक दर (वह मानक दर जिस पर रिज़र्व बैंक तथा भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 49 के अंतर्गत खरीदने के लिए विनिमय बिलों पात्र अथवा अन्य वाणिज्यिक पत्रों को खरीदने या बट्टाकृत करने के लिए तैयार होता है)। आरक्षित निधियों संबंधी अपेक्षाएं तथा खुले बाजार के परिचालन (प्रतिभूति बाजार में सुव्यवस्थित समन्वय बनाए रखने के लिए नीति के एक भाग के रूप में विशेषकर अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों को/से प्रतिभूतियां खरीदने / बेचने के कार्य) ऋण की उपलब्धता को विनियमित करने के मुख्य तंत्र थे । इस अवधि के दौरान केवल एक बार नवंबर 1935 को छोड़कर जब दर को 3.5 प्रतिशत से घटाकर 3.0 प्रतिशत किया गया था, कभी भी बैंक दर को नियंत्रण के साधन के रूप में प्रयुक्त नहीं किया गया। इसके बाद नवंबर 1951 तक यह दर अपरिवर्तित बनी रही। तथापि रिज़र्व बैंक ने खुले बाजार के परिचालनों की लिखतों का काफी महत्वपूर्ण रूप में प्रयोग किया। हालांकि बैंक के पास गुणात्मक लिखतों अर्थात चयनात्मक ऋण नियंत्रण को अपनाने की पर्याप्त शक्तियां थीं, परंतु मूल्य स्थिरता के बने रहते, बैंक परिचालनों के प्रारंभिक चरणों में इसकी कोई जरूरत नहीं समझी गई ।

4.19 दूसरे विश्व युद्ध की अवधि के दौरान, 'सस्ती मुद्रा' संबंधी नीति के विद्यमान विचारों की अपेक्षा स्थिर ब्याज दरों की नीति को वरीयता दी गई। इस संबंध में बैंक की नीति संबंधी दृष्टिकोण गवर्नर सर जेम्स टेलर ने फरवरी 1940 में अपने सार्वजनिक भाषण में स्पष्ट रूप से व्यक्त किया था। उनके भाषण से उद्धरण हैं :-

> लोग समस्याओं को अत्यधिक सरल करके देखने के बहुत ज्यादा आदी हैं। बहुत ज्यादा मौद्रिक नियंत्रण का तात्पर्य है सस्ती मुद्रा, तथा इस देश में और अन्यत्र भी, दोनों जगह अक्सर यह तर्क दिया जाता है कि जितना ही नियंत्रण बेहतर होगा उतना ही वह मुद्रा को सस्ती बनाएगा। यह निश्चित रूप से भ्रामक है। नियंत्रक-प्राधिकारी का कार्य - जहाँ तक संभव हो, उतना करना है जितना कि मुक्त रूप से परिचालन करने वाले बाजारों ने यदि उन पर उनके नियंत्रण से बाहर असामान्य दबावों के न रहते या भविष्य में देख सकने की उनकी योग्यता के आधार उन्होंने स्वयं अपने लिए किया होता । नियंत्रण न रहने की स्थिति में, ये ऊर्ध्वमुखी और निम्नमुखी भारी उतार-चढ़ाव के रूप में प्रदर्शित होते । स्पष्टतः यह बेहतर है कि इन उतार चढ़ावों को नियंत्रित करने तथा उन्हें दूर करने के लिए प्रक्रिया-तंत्र विद्यमान है। यदि थोड़ा और आगे जाकर देखा जाए और इन सैद्धांतिक नीतियों को लागू करने के इस प्रक्रिया-तंत्र का प्रयोग करने का प्रयास करें और वह कार्य करें, जो बाजार यदि उस पर छोड़ दिया जाए तो सामान्य परिस्थितियों में करें।। प्रभावी ब्याज दर में काफी ज्यादा कटौती से निवेश की आदत को मिटा देने की ओर ले जाएगी, इस स्थिति में एक ही विकल्प उपलब्ध है और वह है - मुद्रास्फीति। नियंत्रक प्राधिकारी को इन कारकों पर विचार करना होगा। इसे मुद्रा (धन) को समतल स्तर पर रखना पड़ता है। अंततः, कोई उच्च स्तर की तकनीक अपेक्षित नहीं है, यदि संपूर्ण मौद्रिक नीति को मुद्रण प्रेसों के लिए पूर्णतः स्पष्ट कर दिया जाए। (भारतीय रिज़र्व बैंक 1970)।

4.20 स्थिर ब्याज दरों की नीति सरकार द्वारा उधार लेने की शर्तों में निश्चित दर के निर्धारण में भी झलकती थी। सरकारी बांडों की बिक्री की रणनीति समय-समय पर अलग-अलग रही है जो नई प्रतिभूति जारी करने तथा किसी विद्यमान ऋण के पुनः जारी करने, उसकी मीयाद निर्गम-मूल्य, जारी करने के समय तथा इस निर्णय पर कि ऋण को एक निश्चित अवधि तक ही खुला रखा जाए या उसकी समय-सीमा को खुला रखा जाए के बीच विकल्पों पर निर्भर रही है। मौटे तौर पर युद्ध का वित्त पोषण 3 प्रतिशत की कूपन दर पर किया गया था, दीर्घावधि ऋणों के लिए निर्गम मूल्य को क्रमिक रूप से बढ़ाया जाता था जिससे इसे 3 प्रतिशत की प्रभावी आय के आधार के नजदीक रखा जा सके।

4.21 रोचक रूप में, गवर्नर टेलर (ऊपर उद्धृत) ने जहाँ 1942-43 के लिए ऋण-कार्यक्रम पर विचार करते हुए 3 प्रतिशत 1951-54 ऋण को सममूल्य पर पुनः जारी करने तथा 3 प्रतिशत 1967-69 के दीर्घावधि ऋण को 31/3 प्रतिशत की प्रभावी ब्याज दर से लगभग 95 रुपए पर जारी करने का सुझाव दिया था, वह भी ऐसे समय में, जब सरकार ब्याज आय के आधार को 3 प्रतिशत से नीचे लाने पर विचार कर रही थी, वह 12 वर्षीय 21/2 प्रतिशत के मीयादी ऋण के लिए 98 रुपए पर और 25 वर्षीय 3 प्रतिशत ऋण को 98 रुपए पर जारी करने पर विचार कर रही थी, जिसमें प्रभावी ब्याज दर क्रमशः लगभग 2 ¾ प्रतिशत और 3 1/8 प्रतिशत बैठती है। उक्त गवर्नर ने जो ''संभवतः इस कटौती के मुद्रास्फीतिकारी प्रभाव के बारे में चिंतित थे'' इस मामले में बहुत धीरे चलने को वरीयता दी (भारतीय रिज़र्व बैंक 1970)।

4.22 1943 में, बढ़ती हुई मुद्रास्फीति को देखते हुए, विभिन्न क्षेत्रों से ऐसे सुझाव दिए गए कि सरकारी बांडों में निवेश को प्रेरित करने की दृष्टि से ब्याज दर को बढ़ा दिया जाए, परंतु रिज़र्व बैंक ने इसका विरोध

किया । बैंक के इस दृष्टिकोण से सरकार को अप्रैल 1943 के पत्र में बताया गया था। ''इस स्तर पर ब्याज दरों को बढ़ाने के प्रयासों के परिणाम उन लोगों के लिए, जिन्होंने अब तक सरकारी ऋणों में निवेश किया है, परेशानी का कारण बन सकता है,। इस तथ्य के अलावा, कि उच्च ब्याज दर बाद की पीढ़ियों पर भार को बढ़ा देती है, इस बात की भी सदा संभावना रहती है, कि ऐसी कोई वृद्धि अपने तात्कालिक प्रभाव में असफल हो जाए और अपने स्वयं के प्रयोजन को ही निष्फल कर दे।'' रिज़र्व बैंक के इस आशय को दर्शाते हुए कि वह सस्ती दर पर मुद्रा (धन) लेने का भी पक्षधर नहीं है। उक्त पत्र में यह उल्लेख किया गया था - ब्याज दर को बढ़ाने के लिए दिए गए तर्क की अकाट्यता को इस सीमा तक स्वीकृत किया जा सकता है कि वर्तमान स्थितियों में धन उधार लेने को और सस्ता करने की दिशा में आगे बढ़ना संभव नहीं लगता है और यह कि सरकार दीर्घावधि ब्याज दरों को वर्तमान स्तर पर ही रखने के लिए अपने आपको सीमित रखे (भारतीय रिज़र्व बैंक 1970)।

II विकास चरण - (1951 - 1990)

4.23 देश में पंचवर्षीय योजनाओं के शुरू होने के साथ ही रिज़र्व बैंक ने अनेक महत्वपूर्ण विकासात्मक और संवर्धनात्मक भूमिकाएं अपने हाथ में ले लीं। प्रथम पंचवर्षीय योजना में मूल्य स्थिरता बनाए रखने तथा निवेश और कारोबारी गतिविधियों के विनियमन के लिए मौद्रिक और ऋण नीति की भूमिका पर जोर दिया गया। तदनुसार, रिज़र्व बैंक से यह अपेक्षा की गई कि वह योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के अनुरूप बैंकिंग प्रणाली को ढालकर आर्थिक विकास के संवर्धन में अपनी भूमिका अदा करे। अतः रिज़र्व बैंक के समक्ष यह बुनियादी कार्यक्रम था कि वह वित्तीय मध्यस्थन संस्थाओं का संवर्धन करके संभावित बचतों को जुटाने के लिए एक उपयुक्त संस्थागत ढांचा स्थापित करे तथा व्यापक क्षेत्र वाली वित्तीय आस्तियों का सृजन करके, एक ऐसी ऋण संरचना को अपनाए जो इन संसाधनों का प्रभावी रूप से निवेश करके विकास की आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक हो।

4.24 इस समय तक, रिज़र्व बैंक ने परंपरागत केंद्रीय बैंकिंग के कार्यों को करने में पर्याप्त अनुभव और दक्षता हासिल कर ली थी। इसने मुद्रा बाजार के ऊपर अच्छा खासा नियंत्रण प्राप्त कर लिया था (भारतीय रिज़र्व बैंक 1985)। इस प्रकार संगठनात्मक रूप से देश की आर्थिक वृद्धि को संवर्धित करने में अपनी उचित भूमिका का निर्वाह करने में रिज़र्व बैंक पर्याप्त रूप से सक्षम था।

4.25 आयोजना की अवधि ने ऐसी नई विकासात्मक और संवर्धनात्मक गतिविधियों की दिशा में रिज़र्व बैंक के उत्तरदायित्वों में उल्लेखनीय वृद्धि देखी जो कि सामान्यतः किसी केंद्रीय बैंकिंग की गतिविधियों के क्षेत्र से बाहर थी। बैंक के समक्ष सबसे महत्वपूर्ण कार्य था एक स्वस्थ वित्तीय संरचना विकसित करने के लिए एक स्थिर वित्तीय परिवेश बनाए रखने के अलावा बचतों का संवर्धन करने और योजना की प्राथमिकताओं के अनुरूप विभिन्न खंडों में उनके नियोजन के लिए संस्थाओं का निर्माण करना। 1950 में भारतीय संविधान के अपनाए जाने तथा 1956 में राज्य पुनर्गठन अधिनियम के बनने से जिसने मुद्रा और बैंकिंग परिचालनों में समन्वय को प्रौन्नत किया, सरकार के लिए बैंकर के रूप में रिज़र्व बैंक की भूमिका के क्षेत्र को बढ़ाने का काम किया। इस विकास के चरण में बैंक के कार्यों के क्षेत्र में परिवर्तन लाने वाली महत्त्वपूर्ण घटनाओं में सामाजिक नियंत्रण तथा निजी वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीकरण की घटनाएं शामिल थीं। इस अवधि की एक उल्लेखनीय विशेषता विकासात्मक कार्यों तथा वित्तीय स्थिरता के बीच संतुलन बनाए रखने की आवश्यकता को भरने वाले एक औपचारिक मौद्रिक नीति के ढांचे की शुरुआत भी रही।

सरकार के लिए बैंक

4.26 योजना अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक के लिए एक महत्वपूर्ण विकासात्मक लक्ष्य था - योजना-प्रक्रिया में सरकार के संसाधनों के अंतराल की भरपाई करना - यह सरकार के लिए बैंकर के रूप में इसकी भूमिका में वृद्धि थी । 1951 में भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में एक नई धारा 21(क) जोड़कर संशोधन किया गया जो रिज़र्व बैंक को प्राधिकृत करती है कि वह भाग 'ख' वाले राज्यों (पूर्ववर्ती राजशाही वाले राज्यों) की सरकारों के साथ करार करके उन सरकारों के लिए बैंकर के रूप में कार्य करे और उनके लोक ऋणों और ऋणों को जारी करने के कार्य का प्रबंधन करे। 1 नवंबर 1956 को राज्यों के पुनर्गठन अधिनियम के बन जाने पर भाग 'क' के राज्यों (पूर्ववर्ती ब्रिटिश इंडिया वाले राज्यों और भाग 'ख' वाले राज्यों के वर्गीकरण को समाप्त करके उनके स्थायी रूप में समेकन को चरम सीमा तक बढ़ा दिया गया (भारतीय रिज़र्व बैंक 1985)।

4.27 योजना के वित्त पोषण में रिज़र्व बैंक की भूमिका घाटे के वित्त पोषण के रूप में विकसित हुई। जनवरी 1955 में, केंद्र सरकार के साथ पत्राचार करके, रिज़र्व बैंक इसके लिए सहमत हुआ कि जब कभी भी किसी सप्ताह की समाप्ति पर केंद्र सरकार की शेष राशि 50 करोड़ रुपए से कम रह जाएगी तो रिज़र्व बैंक उसकी पूर्ति करेगा। इस करार ने वस्तुतः भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 17(5) में समर्थनकारी प्रावधान करके उसे आगे बढ़ने की राह बनाई जिसने रिज़र्व बैंक को प्राधिकृत किया कि वह केंद्र और राज्य सरकारों को अग्रिम प्रदान कर सकेगा जिसे अधिकतम तीन माहों में उन्हें वापस चुकाना होगा। इन अग्रिमों के बराबर की राशि के तदर्थ खज़ाना बिल केंद्र सरकार द्वारा रिज़र्व बैंक के लिए जारी किए गए जो निर्गम विभाग में रखे गए । जबकि किसी केंद्रीय बैंक के लिए यह परंपरागत बात है कि वह सरकार की प्राप्तियों और व्ययों के बीच आई विसंगतियों को दूर करने के लिए सरकार को अल्पावधिक अग्रिम प्रदान

करे, परंतु 1955 से इस परंपरा को नेमी स्वरूप का बना दिया गया, जबसे केंद्र सरकार को रिज़र्व बैंक से असीमित रूप में उधार लेने का अधिकार प्रदान कर दिया (बालचंद्रन 1998)। वर्षों से तदर्थ खज़ाना बिल निर्मित करके सरकार की ओर बकाया राशियों की प्रतिपूर्ति करने की परंपरा स्थायी स्वरूप की हो गई तथा यह सरकार के खर्चों को वित्तपोषित करने का एक वैकल्पिक साधन बन गया । इसी प्रकार राज्य सरकारों ने भी रिज़र्व बैंक से अनधिकृत रूप से ओवरड्राफ्ट लेने शुरू कर दिए। इस प्रकार रिज़र्व बैंक न केवल केंद्र सरकार के लिए वरन अप्रत्यक्ष रूप से राज्य सरकारों के लिए भी सस्ते ऋण का एक स्रोत बन गया । योजना के वित्तपोषण से भी रिज़र्व बैंक के पास रखे विदेशी मुद्रा को भारी मात्रा में आहरण करने को आवश्यक बना दिया। इसके परिणामस्वरूप रिज़र्व बैंक को उपयुक्त कानूनी उपाय करने पड़े जिनसे कि इस प्रकार के आहरणों के दुष्प्रभाव को रोका जा सके तथा रिज़र्व बैंक इसके लिए कोई कार्रवाई करने में सक्षम हो सके । भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) अधिनियम, 1956 के अंतर्गत आनुपातिक प्रारक्षित प्रणाली के स्थान पर विदेशी मुद्रा की न्यूनतम राशि रखने की प्रणाली ने बढ़ती हुई करेंसी अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए नोट जारी करने की पद्धति को अधिक लचीलापन प्रदान किया। साथ ही साथ, व्यापार और उद्योग को ऋण मंजूर करने के लिए बैंकिंग प्रणाली की सामर्थ्य पर भारी जन-अपेक्षाओं के प्रभाव को विनियमित करने के लिए प्रारक्षित निधियों की मात्रा को घटाने-बढ़ाने की अतिरिक्त शक्तियां भी रिज़र्व बैंक ने प्राप्त कर ली थीं। इन भागों के लिए पुनर्वित्त की उपलब्धता को जनवरी और मार्च 1963 में और उदार बना दिया गया। 1960 की अवधि से वाणिज्यिक बैंकों का (उधार तथा जमाराशियों दोनों की) ब्याज दरों को रिज़र्व बैंक द्वारा विनियमित करने की भी शुरुआत हुई।

4.28 बैंकिंग कंपनी अधिनियम 1949 के बन जाने से इसने यह सुनिश्चित करने के लिए कि वाणिज्यिक बैंकों की स्थापना और उनकी कार्यप्रणाली दृढ़ आधारों पर चल रही है, रिज़र्व बैंक को वाणिज्यिक बैंकों के परिचालनों का पर्यवेक्षण करने का विशेष अधिकार प्रदान किया। 1951 तक, वाणिज्यिक बैंकों और सहकारी बैंकों के लिए यह सुस्थापित परंपरा बन चुकी थी कि वे आर्थिक निभाव (सहायता) के लिए रिज़र्व बैंक के पास आएं। इस रूप में, रिज़र्व बैंक इस स्थिति में था कि वह एक ऐसी ऋण नीति अपनाए जो विस्तारकारी तथा विनियामक दोनों प्रकार की हो, जो मौटे तौर पर योजनाओं में निर्दिष्ट निवेश की प्राथमिकताओं के अनुरूप हो। 1956 में, रिज़र्व बैंक को ये शक्तियां दी गईं कि वह व्यापक सीमा के भीतर, सांविधिक प्रारक्षित राशियों की अपेक्षाओं को जो कि वाणिज्यिक बैंक इसके पास रखेंगे, घटा-बढ़े सके। रिज़र्व बैंक ने ये प्रयास भी किए कि वह ऋण की आयोजना करे, कुल ऋण की मात्रा के सृजन के संबंध में वाणिज्यिक बैंकों का ऋण का मौसमवार और क्षेत्र वार वितरण करने तथा ब्याज दर संरचना में प्रोत्साहन और दंडों को लागू करने की प्रणाली में मार्गदर्शन करे। इसके अलावा, रिज़र्व बैंक ने बैंकों को उनकी प्रारक्षित अपेक्षाओं की ऋण के विस्तार और संकुचन में मौसमी घट-बढ़ के माध्यम से मौसमी मांग को पूरा करने के लिए, बैंकों को अस्थायी आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने के लिए प्रणाली - तंत्र भी स्थापित किया। इस प्रयोजन के लिए , रिज़र्व बैंक ने बहुत पहले अर्थात् जनवरी 1952 में बिल मार्केट योजना बनाई जिसने वाणिज्यिक बैंकों को अपने अग्रिमों को मीयादी बिलों में परिवर्तित अपनी प्रतिभूतियों पर रिज़र्व बैंक से उधार लेने में समर्थ बनाया।

संस्था-निर्माण

4.29 एक प्रमुख कार्य जो रिज़र्व बैंक को सौंपा गया वह था । आयोजना के प्रयासों को पूरा करने के लिए आवश्यक संस्थागत प्रणाली-तंत्र स्थापित करना। यह बहुत महत्वपूर्ण था, विशेषकर दुर्बल वित्तीय प्रणाली के संदर्भ में, जबकि वाणिज्यिक बैंकिंग की संरचना अविकसित और विकासशील हो। ग्रामीण भारत में संगठित ऋण संस्थाओं की उपस्थिति नाम-मात्र की है। इस पृष्ठभूमि में, ग्रामीण बैंकिंग और ऋण के लिए एक सुदृढ़ तथा पर्याप्त संस्थागत संरचना खड़ी करना अत्यधिक महत्वपूर्ण था।

4.30 संस्थागत निर्माण के कार्य की कमी को पूरा करने के लिए रिज़र्व बैंक ने ग्रामीण ऋण के प्रवाह को बढ़ाने के लिए विशेष उत्तरदायित्व को भी संभाला। 1951 से शुरू हुई, कृषि ऋण की नीति का निर्माण कृषि ऋण के लिए रिज़र्व बैंक के उत्तरदायित्वों में एक प्रमुख मील का पत्थर था। रिज़र्व बैंक ने 1951 में गठित समिति (अध्यक्ष : ए.डी.गोरवाला) के मार्गदर्शन में एक व्यापक अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण कराया। उक्त निर्देशन समिति, जिसने अपनी रिपोर्ट 1954 में प्रस्तुत की थी, की सिफारिशों ने बाद के वर्षों के लिए न केवल रिज़र्व बैंक की कृषि ऋण नीति के निर्माण के लिए, बल्कि केंद्र और राज्य सरकारों की नीतियों के संबंध में भी गति और दिशा निदेश निश्चित किए । उक्त समिति की सिफारिशों ने इम्पीरियल बैंक ऑफ इंडिया तथा पूर्ववर्ती राजसी सरकारों से संबद्ध बैंकों का राष्ट्रीकरण करने, अल्पावधिक सहकारी ऋण संरचना का पुनर्विन्यास करने तथा कृषि विकास के लिए दीर्घावधिक ऋणों की विशेषज्ञता वाली संस्थाओं के पुनर्गठन की ओर बढ़ाया (भारतीय रिज़र्व बैंक,1955 तथा बालचन्द्रन,1998)। कृषि ऋण विभाग की स्थापना मुख्यतः बैंक के परिचालनों और कृषि ऋण के कार्य में संलग्न अन्य संस्थाओं के परिचालनों के बीच समन्वय करने के उद्देश्य के साथ की गई। 1955 में भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में संशोधन किया गया ताकि बैंक दो निधियां राष्ट्रीय कृषि ऋण (दीर्घावधिक परिचालन) निधि तथा राष्ट्रीय कृषि ऋण (स्थिरीकरण) निधि-गठित कर सके। कृषि के लिए मध्यावधिक और दीर्घावधिक ऋण उपलब्ध कराने के लिए रिज़र्व बैंक ने 1963 में कृषि पुनर्वित्त निगम की स्थापना की। 12 जुलाई 1982 को राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के स्थापित हो जाने से ग्रामीण ऋण के संबंध में रिज़र्व बैंक का ध्यान समन्वय पर अधिक रहा है। इस संबंध में रिज़र्व बैंक की भूमिका 1982 के बाद बढ़ी जिसमें ग्रामीण आयोजना और ऋण विभाग का गठन हुआ।

4.31 एक सुविकसित पूंजी बाजार के न होने की स्थिति में, रिज़र्व बैंक ने राष्ट्रीय और क्षेत्रीय स्तर पर उद्योग को मीयादी ऋण जुटाने के लिए सुविधाओं को और व्यापक बनाने के लिए तथा बचतों को संस्थागत रूप प्रदान करने के लिए अनेक विशिष्ट वित्तीय संस्थाएं स्थापित करने के लिए सक्रिय भूमिका निभाई। इनके उदाहरण हैं - 1964 में स्थापित भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (आइडीबीआई), और 1964 में ही स्थापित भारतीय यूनिट ट्रस्ट (यूटीआई) । यूटीआई का अस्तित्व औद्योगिक निवेश के लिए अल्प बचतों को जुटाने तथा औद्योगिक शेयर के स्वामित्व का लोकतंत्रीकरण करने के प्रयासों में सहायता करने के लिए रिज़र्व बैंक की प्रशाखाओं के रूप में हुआ।

4.32 संस्थागत आधार तैयार करने की पहलों के अलावा, रिज़र्व बैंक ने विकास बैंकिंग के लिए उपयोग में लाने हेतु राष्ट्रीय औद्योगिक ऋण (दीर्घावधिक परिचालन) निधि के नाम से एक निधि का गठन अपने लाभ से वार्षिक आबंटन के प्रावधान के साथ किया । रिज़र्व बैंक ने केंद्र सरकार के एजेंट के रूप में लघु उद्योग क्षेत्र (एसएसआई) के लिए विभिन्न गारंटी योजनाएं भी चलाईं जिसकी संरचना ऐसे लघु क्षेत्र की इकाइयों के लिए उधार देने वाले बैंकों तथा अन्य संस्थाओं को संरक्षण प्रदान करने के लिए की गई है। भारतीय निर्यात-आयात बैंक (एग्ज़िम बैंक) जनवरी 1982 में स्थापित किया गया जिसे भारतीय औद्योगिक एवं विकास बैंक के निर्यात-वित्त संबंधी कार्य अंतरित कर दिए गए। एग्ज़िम बैंक भी रिज़र्व बैंक द्वारा परिचालित राष्ट्रीय औद्योगिक ऋण (दीर्घावधि-परिचालन) निधि से ऋण और अग्रिम लेने का पात्र बनाया गया।

4.33 जमा बीमा निगम (डीआइसी) जो पूर्णतः रिज़र्व बैंक की अपनी पूर्णतः स्वाधिकृत सहायक संस्था है, 1962 में अपने परिचालन शुरू किए। उस वर्ष 287 बैंक इसके पास बीमाकृत बैंकों के रूप में पंजीकृत थे। 1967 की समाप्ति तक बीमाकृत बैंकों की संख्या घटकर 100 रह गई। व्यापक रूप में यह बैंकिंग क्षेत्र को अधिक अर्थ सक्षम बनाने के लिए छोटे और वित्तीय रूप से कमजोर बैंकों के पुनर्गठन और समामेलन की रिज़र्व बैंक की नीति के कारण हुआ । 1967 तक, उक्त निगम की देयता ग्यारह बैंकों के मामले में माँगी गई। [बैंक ऑफ चाइना, कलकत्ता (1963), बैंक ऑफ अलगापुरी लि. अलगापुरी (1963), यूनिटी बैंक लि. मद्रास (1963), मैट्रोपोलिटन बैंक लि., कलकत्ता (1064), उन्नाव कमर्शियल बैंक लि. उन्नाव (1964), कोचिन नायर बैंक लि., त्रिचूर (1964), लेटिन क्रिश्चियन बैंक लिं एर्नाकुलम (1964)खदिसाउदर्न बैंक लि., कलकत्ता (1964), श्री जादेया शंकरलिंग बैंक लि., बीजापुर (1965), नेशनल बैंक ऑफ पाकिस्तान, कलकत्ता (1966), हबीब बैंक, लि बॉम्बे (1966)]। इनमें से तीन बैंकों के लाइसेंस (अर्थात हबीब बैंक, नेशनल बैंक ऑफ पाकिस्तान तथा बैंक ऑफ चाइना) के लासेंस वित्तीय अर्थसक्षमता से इतर अन्य कारणों से रद्द कर दिए गए। 1966 के अंत में, इन ग्यारह बैंकों को अदा की गई राशि रुपए 56.83 लाख बैठती है, जिसमें से रुपए 39.85 लाख डीआइसी द्वारा वसूल की गई थी और उक्त निगम का समग्रतः जोखिम संबंधी अनुभव 'अनुकूल' रहा।

4.34 जमा बीमा से संबंधित अनेक महत्वपूर्ण गतिविधियां 1967-81 के दौरान हुईं। 1968 में डीआईसी अधिनियम को संशोधित कर इसकी बीमा योजना को बढ़ाकर सहकारी बैंकों के पास रखी जमाराशियों पर भी लागू कर दिया गया। इस चरण में बैंक जमाराशियों में विस्तार तथा बीमाकृत जमाराशियों की व्याप्ति में क्रमिक वृद्धि के फलस्वरूप जमा बीमा निधियों में सुदृढ़ वृद्धि और समेकन देखा गया । रिज़र्व बैंक ने 1971 में ऋण गारंटी निगम के नाम से एक पब्लिक लि. कंपनी का गठन किया। ऋण गारंटी निगम द्वारा शुरू की गई ऋण गारंटी योजनाओं का मुख्य जोर वाणिज्यिक बैंकों को अब तक उपेक्षित क्षेत्रों, विशेषकर, गैर औद्योगिक गतिविधियों में लगी समाज के कमजोर तबको की ऋण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रोत्साहित करना था। इन दोनों संगठनों अर्थात डीआईसी और भारतीय ऋण गारंटी निगम लि. का 1978 में विलियन करके भारतीय निक्षेप बीमा और प्रत्यय गारंटी निगम (डीआइसीजीसी) का गठन किया गया जिसके ''दोहरे और सजातीय'' उद्देश्य थे - छोटे बैंक जमाकर्ताओं को संरक्षण प्रदान करना तथा समाज के कमजोर तबके के छोटे उधारकर्ताओं की कुछ श्रेणियों को दी गई ऋण सुविधाओं को गारंटी की सुरक्षा प्रदान करना।

4.35 बैंकिंग तथा अन्य विशिष्ट संस्थाओं की स्थापना का रिज़र्व बैंक की कार्यप्रणाली के लिए उल्लेखनीय निहितार्थ थे। इस रूप में इसने वित्तीय क्षेत्र की व्याप्ति को बढ़ा दिया तथा रिजर्व बैंक की पर्यवेक्षी भूमिका को भी बढ़ा दिया। संस्थाओं की स्थापना मुख्य रूप से निम्नलिखित दृष्टियों से मौद्रिक नीति की काफी सीमा तक अनुपूरक रही। पहली, अपनी अंतःप्रेरणाओं या आवेगों को संप्रेषित करने के लिए प्रभावी सरणियां प्रदान करके एक सुविकसित वित्तीय प्रणाली ने रिज़र्व बैंक को अपनी सामान्य और चुनिंदा ऋण नीतियों को कार्यान्वित करने में सहायता की। दूसरी, जितनी सीमा तक बचतों की वृद्धि करने में तथा उन्हें जुटाने में बैंकों की योग्यता में वृद्धि हुई, उतनी ही सीमा तक आर्थिक निभाव के लिए रिज़र्व बैंक पर उनकी निर्भरता में कमी आई। एक बार बैंकिंग प्रणाली अपने ही संसाधनों से ऋण की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने में बेहतर रूप से समर्थ हो गई तो मौद्रिक नीति के परंपरागत साधनों के पूरी तरह से खुलकर खेलने की अपेक्षा की जा सकती है। तीसरी, संस्थागत एजेंसियों द्वारा बचतों के संग्रहण से अर्थव्यवस्था में विद्यमान निवेश-योग्य निधियों की मांग तथा उनकी आपूर्ति के बीच बेहतर एकाभिमुखता प्राप्त हुई।

सामाजिक नियंत्रण और राष्ट्रीकरण

4.36 संस्थागत ऋण सुपुर्दगी प्रणाली-तंत्र को सुदृढ़ करने में जो घटनाएं महत्त्वपूर्ण थीं, वे थीं, - 1967 में शुरू की गई 'सामाजिक नियंत्रण'

तथा 1969 में 14 निजी वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीकरण की नीति जिसने विकास आयोजना की प्रक्रिया में रिज़र्व बैंक के उत्तरदायित्वों को अपना लिया। बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण की परिकल्पना ''बैंकिंग विधि (संशोधन) विधेयक 1967'' द्वारा की गई जिसने बैंककारी विनियमन अधिनियम 1949, भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934, तथा भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम, 1955 के कुछ प्रावधानों में संशोधन करना चाहा था। इसके लिए आवश्यकता को उस प्रमुख खामी के संदर्भ में महसूस की गई जिसमें अनेक ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में अभी भी बैंकिंग की सुविधाएं अपर्याप्त बनी हुई थीं। भले ही योजना-अवधि के दौरान भारतीय बैंकिंग प्रणाली ने कार्यमूलक और भौगोलिक व्याप्ति इन दोनों ही दृष्टियों से काफी प्रगति कर ली थी। साथ ही, भारी उद्योग और बड़े तथा स्थापित कारोबारों को ऋण सुविधाओं का प्रमुख भाग प्राप्त करते हुए देखा गया जो कि वरीयता प्राप्त क्षेत्रों जैसे कृषि, लघु उद्योग, और निर्यातों के हितों के प्रतिकूल था। तदनुसार अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों से बैंक ऋण की मांग का आकलन करने, उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप तथा प्राथमिकता-प्राप्त क्षेत्रों की अपेक्षाओं के अनुरूप ऋण और अग्रिमों की स्वीकृति के लिए प्राथमिकताएं निर्धारित करने तथा समग्र संसाधनों के दक्षतापूर्वक उपयोग को सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न संस्थागत एजेंसियों की उधार और निवेश की नीतियों में समन्वय लाने के लिए दिसंबर 1967 में एक राष्ट्रीय ऋण परिषद (एनसीसी) स्थापित की गई ।

4.37 भारत सरकारने बैंकिंग कंपनी (उपक्रमों का अधिग्रहण और अंतरण) अधिनियम,1969 के माध्यम से 50 करोड़ रुपए और उससे अधिक की जमाराशियों वाले 14 प्रमुख भारतीय वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीकरण कर दिया। बैंक राष्ट्रीकरण के उद्देश्य सामाजिक नियंत्रण के उद्देश्य से भी काफी आगे तक गए जैसा कि अधिनियम के प्रस्तावना में कहा गया है इस ''अधिग्रहण का उद्देश्य था'' अर्थव्यवस्था की ऊचाइयों को नियंत्रित करना तथा राष्ट्रीय नीति और उद्देश्यों के अनुरूप अर्थव्यवस्था की विकास की आवश्यकताओं को प्रणाली रूप से पूरा करना तथा बेहतर रूप में सेवाएं प्रदान करना । सार रूप में, बैंकों के राष्ट्रीकरण का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं के विस्तार की गति को तेज करना तथा कृषि एवं समाज के कमजोर तबकों को बैंक ऋण के प्रवाह को बढ़ाना थी (भारतीय रिज़र्व बैंक, 1985)।

4.38 राष्ट्रीकरण से बैंकों का स्वामित्व केंद्र सरकार के पास आ गया जबकि बैंकों के परिचालनात्मक पहलुओं पर रिज़र्व बैंक का नियंत्रण जारी रहा। इससे बैंकिंग प्रणाली पर 'केंद्रीकृत नियंत्रण और दिशा निदेश' बनाए रखने का मार्ग खुला। जहाँ राष्ट्रीकरण का मुख्य उद्देश्य था कि ऋण पहले की अपेक्षा अधिक व्यापक दायरे में लोगों को प्राप्त हो, वहाँ रिज़र्व बैंक का मुख्य कार्य था राष्ट्रीयकृत बैंकों द्वारा इसकी नीतियों का अनुपालन सुनिश्चित किया जाना। इसके लिए संस्थागत व्यवस्थाओं में उल्लेखनीय परिवर्तनों तथा बैंकिंग प्रणाली पर और अधिक कठोर नियंत्रण तथा पर्यवेक्षण की जरूरत थी।

4.39 परिणामों की दृष्टि से, राष्ट्रीकरण का यह चरण बैंकों के माध्यम से निजी बचतों का संग्रहण करने में काफी सफल रहा। इस प्रकार संग्रहीत बचत राशियां सार्वजनिक उधार की मांगों की पूर्ति करने के लिए तथा अब तक उपेक्षित वास्तविक ऋण संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए उपयोग में लाई गई। इस सफलता ने 1980 में बैंकिंग कंपनी (उपक्रमों का अभिग्रहण तथा अंतरण) अध्यादेश 1980 के द्वारा 6 और निजी वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीकरण की ओर प्रेरित किया। राष्ट्रीकरण के इस दूसरे चरण के साथ, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के पास सभी अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की कुल जमाराशियों की 90 प्रतिशत से अधिक की जमाराशियां थीं । जहाँ 1969 में बैंकों के राष्ट्रीकरण के पीछे वह पक्षकार नहीं था, वहीं, 1980 में राष्ट्रीकरण के दूसरे चरण के लिए उसने पहल की थी। इसका कारण था - निजी बैंकों पर पर्यवेक्षण की आवश्यकता का होना - यह सुनिश्चित करने के लिए वे सामाजिक नियंत्रण के मानदंडों का अनुपालन कर रहे हैं, इस सच्चाई के होते हुए कि उसके छोटे-छोटे निजी बैंक बढ़कर काफी बड़े हो गए हैं और व्यवहार में उनकी गतिविधियों पर नियंत्रण रखना आसान नहीं रख गया था (भारतीय रिज़र्व बैंक 2005 क) ।

ऋण नियंत्रण

4.40 1970 के दशक से, रिज़र्व बैंक के समक्ष दोहरी समस्याएं थीं - आर्थिक वृद्धि के लिए वित्तपोषण के लिए प्रावधान करना तथा ऋण की तीव्र वृद्धि के कारण उभरने वाली मुद्रा आपूर्ति में तीव्र मांग के चलते मूल्य स्थिरता को बनाए रखना । बढ़ा हुआ सार्वजनिक (सरकारी) खर्च तथा साथ ही साथ आकस्मिक रूप से बैंकों की जमाराशियों में आई वृद्धि ने मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता पर भारी दबाव डालना शुरू कर दिया । रिज़र्व बैंक को इस दुधारी तेज समस्या से निपटने के लिए एक संतुलनकारी दृष्टिकोण को अपनाना पड़ा तथा आर्थिक वृद्धि की तेज दर को प्राप्त करने के लिए ऋण के लिए प्रावधान करने और मूल्य स्थिरता सुनिश्चित करने के दोहरे उद्देश्यों को पूरा करने के लिए ऋण के नियंत्रित विस्तार की नीति को अपनाना पड़ा।

4.41 इस संदर्भ में मुख्य मुद्दा था कि ऋण नियंत्रण के परंपरागत साधन अर्थात् बैंक दर और खुले बाजार के परिचालन विस्तारित ऋण सृजन में बैंकों की शक्तियों को नियंत्रित करने के लिए अपर्याप्त पाए गए। यह तथ्य कि वाणिज्यिक बैंकों की जमाराशियां घाटे के वित्तपोषण के प्रभाव के अंतर्गत तेजी से बढ़ रहीं थीं तथा वाणिज्यिक बैंकों को आर्थिक सहायता के लिए केंद्रीय बैंक के पास आने की जरूरत नहीं थी, अतः मौद्रिक नीति के एक साधन के रूप में बैंक दर कम प्रभावी रह गई थी। इसके अलावा, सरकारी प्रतिभूतियों के लिए एक मुख्य और व्यापक

आधार वाले बाजार की अनुपस्थिति में, मौद्रिक नीति के परिचालन के एक साधन के रूप में खुले बाजार के परिचालन की व्याप्ति भी अपेक्षाकृत सीमित रह गई थी। इस स्थिति ने ऋण नियंत्रण के अतिरिक्त साधनों की शुरुआत करने की आवश्यकता पैदा कर दी ।

4.42 एक महत्वपूर्ण आवश्यकता थी कि वाणिज्यिक बैंकों की प्रारक्षित निधि संबंधी अपेक्षाओं में बदलाव किए जाने का लचीलापन लाया जाए। 1962 में भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम (धारा 42 जो अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की आरक्षित अपेक्षाओं को निर्धारित करती है) तथा बैंककारी विनियमन अधिनियम (धारा 18 जो गैर अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के लिए नकदी आरक्षित अपेक्षाओं का निर्धारण करती है) में किए गए संशोधनों ने इस संबंध में लचीलापन प्रदान किया। मूलतः भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के अंतर्गत अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों से यह अपेक्षित था कि वे किसी भी दिन कारोबार की समाप्ति पर भारत में अपनी मांग देयताओं के कम से कम 5 प्रतिशत तक तथा अपनी मीयादी देयताओं के 2 प्रतिशत तक की नकदी प्रारक्षित राशि रिज़र्व बैंक के पास बनाए रखें। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में 1956 में किए गए संशोधन ने बैंक को यह शक्ति दी कि वह बैंकों की प्रारक्षित निधि संबंधी अपेक्षाओं को घटा-बढ़ा कर बैंकों की भारत में मांग देयताओं के 5 प्रतिशत और 20 प्रतिशत के बीच और भारत में उनकी मीयादी देयताओं के 2 प्रतिशत और 8 प्रतिशत के बीच कर सकता है। 1962 के संशोधन ने आरक्षित निधि संबंधी अपेक्षाओं को एक समान रूप से बैंकों की मांग और मीयादी देयताओं के 3 प्रतिशत पर निश्चित कर दिया (अर्थात् इसमें इस प्रयोजन के लिए मांग और मीयादी देयताओं के अंतर को समाप्त कर दिया) गया, तथा नकदी आरक्षित अपेक्षाएं 3 प्रतिशत से 15 प्रतिशत के बीच कम ज्यादा की जा सकती है। इन वैधानिक उपायों ने वाणिज्यिक बैंकों के ऋण विस्तार को नियंत्रित करने के लिए रिज़र्व बैंक के विवेक पर और अधिक साधन उपलब्ध कराए।

4.43 एक अन्य उपाय था चुनिंदा ऋण नियंत्रण को सक्रिय करना। बैंकों के अग्रिमों की बहुविधिता के संदर्भ में मई 1956 में पहली बार चुनिंदा ऋण नियंत्रण को रिज़र्व बैंक ने लागू किया। योजना के वित्त पोषण के लिए विदेशी मुद्रा भंडार में लगातार होनेवाली हानि ने पुनः रिज़र्व बैंक को मजबूर किया कि वह और अधिक ऋण नियंत्रण संबंधी उपायों को लागू करें - जैसे अक्तूबर 1960 में लागू की गई - 'कोटा-स्लैव' प्रणाली। यह एक प्रकार से मूल्य लिखत के माध्यम से ऋण की राशनिंग करना था। इस लिखत का लाभ यह था कि यह उसी समय सरकार की उधार राशियों की लागत में प्रत्यक्ष वृद्धि नहीं करेगी, या तत्काल श्रेष्ठ प्रतिभूति बाजार को प्रभावित नहीं करेगी। इस प्रणाली के अंतर्गत प्रत्येक अनुसूचित बैंक को एक तिमाही कोटा दिया गया था जो उसकी उन औसत आरक्षित निधियों की आधी मात्रा के बराबर होता था, जो उसे पहले वर्ष के प्रत्येक सप्ताह के दौरान भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 42(1) के अंतर्गत बनाए रखना होता था। इस 'कोटा-स्लेव' प्रणाली को ऋण के विस्तार पर प्रभावी रूप से मात्रात्मक नियंत्रण के लिए यथा आवश्यक रूप में उदार या कठोर बनाया जा सकता था।

4.44 कोटा-स्लेव प्रणाली, जो ऋण की उपलब्धता प्रमुख नियंत्रणकारी उपादान था, के स्थान पर 1964 में बैंकों की निवल तरलता अनुपात (एनएलआर) के आधार पर आर्थिक निभाव की योजना शुरू की गई जिसे कोटा-स्लेव प्रणाली की तुलना में वाणिज्यिक बैंक के ऋण-विस्तार पर केंद्रीय बैंक के नियंत्रण के स्वरूप को कम विभेदकारी माना गया। सांविधिक चलनिधि अनुपात के परिवर्तन को अपना कर इस एनएलआर फार्मूला की परिकल्पना अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों को रिज़र्व बैंक के ऋणों की लागत को नियंत्रित करने के लिए की गयी थी। निवल चलनिधि रिज़र्व बैंक के पास रखी बैंक की नकदी शेषराशियों, अधिसूचित बैंकों में चालू खाता जमाराशियों तथा सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में निवेश के अनुपातों, जिनमें से रिज़र्व बैंक, भारतीय स्टेट बैंक तथा आइडीबीआई से ली गई कुल उधार राशियों का इसकी कुल मांग और मीयादी देयताओं के प्रति अनुपात को दर्शाती थी, एनएलआर सामान्यतः वर्तमान समग्र चलनिधि अनुपात (एसएलआर + सीआरआर) के बराबर होती थी।

4.45 ऋण नीतियों को पंचवर्षीय योजना के और अनुरूप बनाने के लिए नवंबर 1966 में ऋण नियंत्रण के एक साधन के रूप में ऋण प्राधिकरण योजना (सीएएस) की शुरुआत की गई। इस योजना के अंतर्गत अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों से यह अपेक्षा की गई थी कि वे किसी एक उधारकर्ता को 1 करोड़ रुपए या उससे अधिक का कोई नई ऋण स्वीकृत करने से पहले या कोई नया ऐसी ऋण सीमा स्वीकृत करने से पहले, जिससे संपूर्ण बैंकिंग प्रणाली से उस उधारकर्ता द्वारा ली गई कुल उधार राशि की सीमाएं 1 करोड़ रू. तक पहुँच जाएं, रिज़र्व बैंक का प्राधिकरण प्राप्त करें। इस योजना ने भी कुछ बड़े उधारकर्ताओं द्वारा बैंकों के दुलभ संसाधनों को पहले से ही खाली करने की समस्या को रोकने में तथा उन पर वित्तीय अनुशासन के उपाय लागू करने में सहायता की।

विदेशी मुद्रा प्रबंधन तथा नियंत्रण

4.46 दूसरे विश्व युद्ध की अवधि के दौरान भारत के स्टर्लिंग ऋण के प्रत्यावर्तन में रिज़र्व बैंक की भूमिका के बारे में पूर्ववर्ती भाग में उल्लेख किया गया था। जहाँ वह ''प्रचुरता'' की समस्या से संबंधित था, परंतु बाद के वर्षों में भारतीय अर्थ व्यवस्था के बाह्य क्षेत्र से संबंधित समस्या जिसने सरकार और रिज़र्व बैंक का ध्यान आकर्षित किया, वह थी - विदेशी मुद्रा की ''कमी'' जिसने 1970 के बाद के दशक में गंभीर रूप धारण कर लिया।

4.47 दूसरे विश्वयुद्ध से पहले भारत एक निवल ऋणी देश था जिसके पास व्यापार खाते में भारी अधिशेष राशि थी। तत्कालीन ब्रिटिश सरकार ने भारत सुरक्षा नियमावली के अंतर्गत आपातकालीन शक्तियों का प्रयोग

करते हुए भारत में विदेशी मुद्रा नियंत्रण लागू किया। विदेशी मुद्रा विनिमयन अधिनियम (फेरा), 1947 जिसे ब्रिटिश शासन के अंतर्गत एक अस्थायी उपाय के रूप में लागू किया गया था, बाद में 1957 में उसे एक स्थायी अधिनियम बना दिया गया और यह जनवरी 1974 तक लागू रहा। इस अधिनियम का सीमित उद्देश्य था - भारी अनिवासी हितों और विदेशियों के नियोजन को देखते हुए विदेशी मुद्रा के आगम को विनियमित करना। स्वतंत्र भारत में विद्यमान भावना आजादी को सुरक्षित रखना तथा उसे और सुदृढ़ करना तथा एकबार फिर किसी भी प्रकार की विदेशी सत्ता को चाहे वह राजनैतिक हो या आर्थिक भारत में आने नहीं देना। नियंत्रण का यह ढांचा अनिवार्यतः लेनदेन पर आधारित था - विदेशी मुद्रा के सभी लेनदेनों पर जिनमें निवासी और अनिवासियों के लेनदेन भी शामिल हैं, पाबंदी थी, जब तक कि उनके लिए विशेष रूप से अनुमति नहीं दी गई हो। दूसरी पंचवर्षीय योजना ने जिसमें औद्योगीकीरण पर निवेश में भारी बल दिया गया था, विदेशी मुद्रा के संसाधनों पर भारी दबाव ला दिया। निर्यातों में वृद्धि नहीं हो रही थी, जबकि आयात तेजी से बढ़ रहे थे : जो भुगतान संतुलन की समस्या को और जटिल बना रहे थे।

4.48 1950-51 से दिसंबर 1973 की अवधि के दौरान भारत ने विनिमय दर व्यवस्था का अनुसरण किया जिसमें 1966 और 1971 में अवमूल्यन को छोड़कर रुपए को पौंड-स्टर्लिंग से संबद्ध कर दिया गया था। इस परिस्थिति में अनेक अनिश्चितताएं थीं जिनका भुगतान संतुलन पर प्रभाव पड़ा। भारी मात्रा में खाद्यान्न और अनिवार्य वस्तुएं आयातित करनी पड़ीं। इससे पूंजी के बर्हिगम की चिंताएं होने लगीं। सूखा, युद्ध और तेल संबंधी आयातों के कारण भुगतान संतुलन पर बार-बार पड़ने वाले दबावों से यह स्थिति और भी बढ़ती चली गई। इस संदर्भ में तथा विकासात्मक आयोजना को अपनाने से घरेलू बचतों को घरेलू निवेश के लिए उपयोग करने पर जोर दिया गया।

4.49 इस पृष्ठभूमि में बीजकांकन में हेराफेरी के माध्यम से विदेशी मुद्रा के क्षरण (बाहर जाने) की चिंता से संबंधित लोक लेखा समिति की सिफारिशें (जून 1971) तथा ''सामाजिक और आर्थिक अपराधों की जांच और दंड'' पर विधि आयोग की रिपोर्ट (अप्रैल 1972) ने भारत सरकार को इस बात के लिए प्रेरित किया कि वह विदेशी पूंजी के आगमन को विनियमित करने के बजाए विदेशी मुद्रा के संरक्षण के लिए फेरा, 1947 पर पुनः अपना ध्यान केंद्रित करे। सरकारी नीति को प्रभावी रूप से लागू करने तथा पहले अधिनियम की कार्यपद्धति में विद्यमान कठिनाइयों को दूर करने के लिए आवश्यक परिवर्तन जोड़ने के उद्देश्य से फेरा 1973 का मसौदा तैयार किया गया। संकट से प्रेरित विधान के रूप में, फेरा 1973 में स्वभावतः अनेक कठोर प्रावधान थे। फेरा के अंतर्गत किया गया कोई भी अपराध फौजदारी अपराध माना गया था जिसमें कारावास की सजा हो सकती थी। चालू खाता लेनदेनों पर कठोर प्रतिबंध 1990 के बाद के दशक के मध्य तक जारी रहे, जब चालू खाते में परिवर्तनीयता को संभव बनाने के लिए 1973 के विधान में कुछ रियायतें दी गईं।

4.50 यह नियंत्रक ढांचा पूंजी खाते के लिए भी इतना ही वैध था, हालांकि 1999 के बाद के दशक तक पूंजी खाता नगण्य था। पूंजी खाते पर अधिकांश प्राप्तियां सरकारी खाते में थीं, और वे पूर्ववर्ती रूस के साथ द्विपक्षीय व्यवस्थाओं के अतिरिक्त बाध्य सहायता के रूप में प्राप्त विदेशी प्राप्तियां थीं। 1980 के बाद के दशक में, बाह्य वाणिज्यिक उधारों (ईसीबी) तथा अनिवासी भारतीयों से प्राप्त जमाराशियों के रूप में काफी निजी पूंजी प्रवाह का आगम हुआ। पूंजी खाते को क्रमिक रूप से उदार बनाते जाने से 1990 के बाद के दशक में इस स्थिति में परिवर्तन आया।

4.51 फेरा ने केंद्र सरकार को ये शक्तियां प्रदान की थीं कि वह रिज़र्व बैंक को ऐसे सामान्य या विशेष निदेश दे सकती है जिन्हें वह उचित समझे तथा रिज़र्व बैंक उक्त अधिनियम के अंतर्गत अपने कार्य करते हुए इन निदेशों का पालन करने के लिए बाध्य था। काफी सीमा तक विदेशी मुद्रा का नियंत्रण भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय में मुख्य नियंत्रक - आयात-निर्यात द्वारा संचालन से संबधित और उसका पूरक होता था। विदेशी मुद्रा नियंत्रण का व्यापार नियंत्रणों की तुलना में व्यापक क्षेत्र है क्योंकि इसमें सभी निर्यातों और आयातों के संबंध में किए गए सभी वित्तीय लेनदेनों तथा अदृश्य और पूंजीगत लेनदेनों के किए गए निपटान पर पर्यवेक्षण करना शामिल है, जबकि व्यापार नियंत्रण का संबंध माल के भौतिक अंतरण से (अधिकांशतः आयातों तक सीमित) था। विदेशी मुद्रा नियंत्रण से संबंधित रिज़र्व बैंक के प्रमुख कार्यों में कुछ अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों (प्राधिकृत व्यापारियों) को विदेशी मुद्रा में लेनदेन करने का लाइसेंस देने तथा प्राधिकृत व्यापारियों और अन्य संस्थाओं (एयर लाइनें, शिपिंग कंपनियों, यात्रा एजेंटों तथा बीमा कंपनियों) को उन मामलों में जिनमें उनके परिचालनों का विदेशी मुद्रा विनिमय पर प्रभाव पड़ता हो, को निदेश जारी करना था।

1980 के बाद के दशक में मौद्रिक ढांचा तथा नीति संबंधी पहल

4.52 1970 के बाद के दशक में सारे विश्व में उच्च मुद्रास्फीति तथा ब्रिटेन वुड्स प्रणाली के टूट जाने से मौद्रिक नीति में भारी बदलाव आया और वह कीन्स के सिद्धांतों से हटकर मुद्रावादी दृष्टिकोण की ओर बढ़ गई। मुद्रास्फीति के कारणों और स्रोतों के कारकों को खोजते हुए विकसित देशों ने या तो मुद्रास्फीति को या मौद्रिक (या प्रारक्षित निधियों) नियंत्रण को साधने का लक्ष्य बनाया। इसने भारतीय संदर्भ में भी नीति निर्याताओं की सोच को प्रभावित किया। सरकार के भारी घाटे तथा रिज़र्व बैंक द्वारा इसके वित्त पोषण से उत्पादन की तुलना में मुद्रा आपूर्ति में भारी वृद्धि हुई जिससे समग्र मुद्रा आपूर्ति के आकार तथा वृद्धि के आकलन में व्यापक दृष्टिकोण को बनाने के लिए नई सोच को प्रेरित किया। मौद्रिक प्रणाली की

कार्यपद्धति पर समीक्षा करने के लिए गठित समिति (अध्यक्ष : सुखमय चक्रवर्ती) ने यह सुझाव दिया कि मौद्रिक प्राधिकारी को एक अधिक औपचारिक तथा सुरक्षित तरीके से मौद्रिक लक्ष्य की ओर बढ़ना चाहिए। मौद्रिक लक्ष्य के स्तर का निर्धारण उत्पादन में अपेक्षित वृद्धि तथा मुद्रास्फीति के सहनीय स्तर के आधार पर किए जाने की जरूरत है। अबतक मौद्रिक बजट बनाने के लिए किए गए अभ्यासों ने मौद्रिक प्राधिकारी को औपचारिक मौद्रिक लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में उपयोगी अंतर्दृष्टियां प्रदान की हैं।

4.53 चक्रवर्ती समिति ने मुद्रा आपूर्ति के व्यापक उपायों को प्रतिसूचना के आधार पर लक्ष्यित करने का सुझाव दिया था। उक्त समिति ने एक व्यवस्थित परिचालनात्मक प्रक्रिया की रूपरेखा प्रस्तुत की, विशेषकर मौद्रिक और ऋण बजट की आयोजना करने में, मौद्रिक बजट में वास्तविक वृद्धि तथा मुद्रास्फीति के बुनियादी मापदंडों का उपयोग करते हुए अनुमान लगाया गया तथा मुद्रा आपूर्ति के संसाधनों अर्थात् : निवल घरेलू ऋण (सरकार तथा वाणिज्यिक क्षेत्र को रिज़र्व बैंक का निवल ऋण), रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी आस्तियां तथा निवल गैर मौद्रिक देयताएं, में अनुमानित घटबढ़ के साथ सुसंगति की जांच करते हुए उसका अनुसरण किया गया। जहाँ निवल विदेशी आस्तियों तथा निवल गैर मौद्रिक देयताओं में घटबढ़ का निर्धारण पिछली प्रवृत्तियों के आधार पर किया जाता है, वहीं सरकार तथा वाणिज्यिक क्षेत्र को रिज़र्व बैंक के ऋण का पूर्व अनुमान अनुमानित मौद्रिक बजट के समग्र आकार के अनुरूप प्रस्तुत किया गया। उक्त समिति ने यह भी सुझाव दिया कि ऋण के मौसमी मांग के लिए भी स्वतंत्र रूप से अनुमान लगाया जाए और यह सिफारिश की कि यदि उसमें कमी पड़ती है तो रिज़र्व बैंक को पुनर्वित्त के रूप में उसको सहायता करनी चाहिए । अंततः इस प्रकार अनुमानित बैंक ऋण के अपेक्षित स्तर का उपयोग योजना की प्राथमिकताओं के संदर्भ में उपयुक्त क्षेत्रीय आबंटन विकसित करने के लिए किया जाना चाहिए। इस प्रकार मौद्रिक नीति का निर्माण पुनःसंरचित मौद्रिक नीति कार्यक्रम का एक औपचारिक प्रक्रिया-तंत्र बन गया। 1980 के बाद के दशक के मध्य तक रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक नीति के लिए एक औपचारिक ढ़ांचे को विकसित कर लिया था जिसमें एम3 को एक सामान्य लंगर (आश्रय) के रूप में लक्ष्य-बद्ध करना था जो कि मोटे तौर पर चक्रवर्ती समिति के सिफारिशों पर आधारित था।

4.54 मुद्रा बाजार पर कार्यदल (अध्यक्ष : एन. वागुल), जिसने मुद्रा बाजार के विकास के संबंध में चक्रवर्ती समिति की सिफारिशों की जांच की थी, ने अपनी रिपोर्ट जनवरी 1987 में प्रस्तुत कर दी थी। इस रिपोर्ट की अनुसरण में, मुद्रा बाजार के अनेक लिखतें शुरू की गईं: 182 दिवसीय खज़ाना बिल, अंतर बैंक सहभागिता प्रमाण पत्र, जमा प्रमाण पत्र (सीडी) तथा वाणिज्यिक पत्र (सी.पी.) । मुद्रा बाजार की विभिन्न लिखतों में द्वितीयक बाजार के संवर्धन के लिए 1988 में भारतीय मितीकाटा और वित्तगृह लि. का गठन किया गया।

4.55 भौगौलिक व्याप्ति की दृष्टि ने बैंकिंग नेटवर्क में विस्तार की प्रक्रिया को तथा कठोर नियंत्रणों ने बैंकों की आस्तियों की गुणवत्ता को प्रभावित किया और उनकी लाभप्रदता को विकृत कर दिया । इन गतिविधियों के परिणामस्वरूप वित्तीय क्षेत्र को कुछ सीमा तक अविनियमित करने तथा उसके समेकन और विशाखीकरण के लिए 1980 के बाद के दशक के मध्य में अनेक उपाय किए गए। समेकन के उपाय करने का उद्देश्य था - बैंक की संरचनाओं को सुदृढ़ करना, हाउसकीपिंग का प्रशिक्षण देना, ग्राहक सेवा, आन्तरिक प्रक्रियाएं और प्रणालियां, ऋण प्रबंधन, ऋण की वसूली, स्टाफ की उत्पादकता तथा लाभप्रदता। बैंकों के लिए एक स्वास्थ्य कूट की प्रणाली 1985 में शुरू की गई। बैंकों को अधिक परिचालनगत नमनीयता प्रदान करने के लिए भी कुछ पहलें की गईं। इनमें शामिल हैं - बैंकों को उपकरण पट्टादायी तथा पारस्परिक निधियों के कारोबार में प्रवेश करने की अनुमति प्रदान करना, अनिवार्य प्राधिकरण योजना के अंतर्गत पूर्व प्राधिकरण की अपेक्षा को समाप्त करना, सरकारी प्रतिभूतियों पर कूपन दरों को बढ़ाकर बैंक की जमा और उधार की दरों को औचित्यपूर्ण बनाना, तथा मांग/नोटिस मुद्रा पर भारतीय बैंक संघ द्वारा निर्धारित 10 प्रतिशत की उच्चतम सीमा को हटाना (जाधव, 2003)।

III सुधार का चरण (1991-2005)

4.56 भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण और वैश्वीकरण की जो प्रक्रिया 1991 से प्रारंभ हुई थी, उसने रिज़र्व बैंक के उत्तरदायित्वों में कई नए आयामों को जोड़ दिया । वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के साथ-साथ मौद्रिक नीति के ढांचों को भी बेहतर बनाया गया तथा परंपरागत केंद्रीय बैंकिंग के कार्यों को जिनमें मुद्रा प्रबंधन तथा भुगतान और निपटान प्रणालियां भी शामिल हैं, वैश्विक प्रवृत्तियों तथा घरेलू अपेक्षाओं के अनुरूप ढाला गया।

वित्तीय क्षेत्र के सुधार

4.57 1980 के बाद के दशक के दौरान वित्तीय बाजार अत्यधिक विभाजित तथा नियंत्रित थे और सरकारी प्रतिभूति बाजार एवं ऋण बाजार में ब्याज दरें कठोरतापूर्वक नियंत्रित की जाती थीं। बैंकिंग क्षेत्र में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का प्रभुत्व था जिनकी गैर निष्पादक आस्तियों (एनपीए) की मात्रा काफी ज्यादा थी। न्यूनतम एसएलआर बनाए रखने के आदेशानुसार जमाराशियां सरकार को दे दी जाती थीं, जिनमें वाणिज्यिक बैंकों ने अपनी देयताओं के काफी बड़े भाग को बाजार की ब्याज दर से नीची दरों पर सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश कर रखा था। वित्तीय बाजारों के विकास की स्थिति एक दूसरी बड़ी बाधा बन चुकी थी। नीतिगत संकेतों के प्रभावी अंतर के लिए वित्तीय बाजारों की स्वस्थ वृद्धि के लिए संस्थागत,प्रौद्योगिकीगत तथा कानूनी अड़चनों को दूर करने का कार्य 1991 के मध्य से वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के लिए प्रमुख कार्य सूची बन गई।

4.58 भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते हुए वैश्वीकरण ने इसके पूरे लाभ उठाने के लिए घरेलू बाजारों को अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों को साथ

समन्वय को आवश्यक बना दिया। वित्तीय मध्यस्थन की प्रक्रिया में दक्षता को सुधारने, मौद्रिक नीति के संचालन में प्रभावशीलता को बढ़ाने तथा घरेलू वित्तीय क्षेत्र का वैश्विक प्रणाली के साथ समन्वय करने के लिए परिस्थितियां निर्मित करने की दृष्टि से 1992 में भारत में वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की शुरुआत की गई। सुधारों के पहले चरण जिसे वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति (नरसिहंम समिति I) की सिफारिशों से मार्गदर्शन मिला,का उद्देश्य था - दक्षता,उत्पादकता और लाभप्रदता बढ़ाने की दृष्टि से वित्तीय क्षेत्र की परिचालनगत नमनीयता और कार्यमूलक स्वायत्तता को बढ़ाना। दूसरे चरण ने, जो बैंकिंग क्षेत्र के सुधार संबंधी समिति (नरसिंहम समिति II) की सिफारिशों पर आधारित था, बैंकिंग प्रणाली की नीवों को सुदृढ़ करने तथा उसमें संरचनागत सुधार लाने पर अपना ध्यान केंद्रित रखा (मोहन, 2003) ।

बैंकिंग क्षेत्र में सुधार

4.59 वित्तीय क्षेत्र के सुधारों के पहले चरण ने बैंकिंग उद्योग का अपविनियमन करने पर अपना ध्यान केंद्रित किया जिसमें नए निजी क्षेत्र के बैंकों को प्रवेश की अनुमति देना भी शामिल था। इसके साथ ही साथ, बैंकिंग, गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, वित्तीय संस्थाओं तथा पूंजी बाजारों के संस्थागत ढांचे को विवेक-सम्मत मानदंडों, पूंजी पर्याप्तता संबंधी अपेक्षाओं तथा भुगतान और निपटान प्रणालियों में सुधार लाकर सुदृढ़ करने के उपाय किए गए तथा पर्यवेक्षी ढांचे को मजबूत बनाया गया। संस्थागत उपायों में बैंक के पर्यवेक्षी प्रक्रिया तंत्रों को सुदृढ़ करने के लिए बैंकों को पुनः पूंजीकरण करने तथा ऋण वसूली में सुधारों के लिए वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड का गठन भी शामिल था।

4.60 सुधारों के दूसरे चरण ने अपना ध्यान बैंकिंग क्षेत्र पर केंद्रित रखा जिसमें विवेकसम्मत मानदंडों पर जोर दिया गया। अंतरराष्ट्रीय मानकों को पूरा करने के लिए विवेक-सम्मत मानदंडों को क्रमिक रूप से लागू किया गया। पूंजी - पर्याप्तता अनुपात को बढ़ाने के लिए कार्रवाई प्रारंभ की गई। बाजार जोखिमों से निपटने के लिए सरकार द्वारा अनुमोदित प्रतिभूतियों पर जोखिम भारांक दिए गए, विदेशी मुद्रा और स्वर्ण की खुली स्थिति पर जोखिम भारांक दिए गए। नरसिंहम समिति II की सिफारिशों को लागू किए जाने के पश्चात पूंजी-पर्याप्तता का अपेक्षित अनुपात बनाए रखने के लिए बैंकिंग प्रणाली में भारी पूंजी निवेश की जरूरत समझी गई। इसी प्रकार, आय की पहचान के लिए अंतरराष्ट्रीय रूप से स्वीकृत मानदंडों को लागू किया गया, जिसमें यह अपवाद रखा गया कि आस्तियों पर आय को तब तक नहीं माना जाएगा जब तक कि वह देय अवधि के बाद दो तिमाहियों के भीतर प्राप्त नहीं हो जाती है (अर्थात देय तारीख + 30 दिन और)। एक महत्वपूर्ण निर्णय उन आस्तियों को, जिन्हें राज्य सरकार द्वारा गारंटी प्राप्त है, कुछ परिस्थितियों में गैर निष्पादक आस्ति मानने से संबंधित भी है।

वित्तीय क्षेत्र के अन्य घटकों में सुधार

4.61 प्रतिस्पर्धा को बढ़ाने वाले तथा विवेक सम्मत विनियमन और पर्यवेक्षण स्थापित करने के उद्देश्य वाले उपाय गैर बैंकिंग वित्तीय मध्यस्थ संस्थाओं पर भी लागू किए गए । गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एबीएफसी), विशेषकर उन कंपनियों को, जो जन्म से जमाराशियां स्वीकार करने की गतिविधियों में लगी हुई हैं, विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआई), विशिष्ट मीयादी ऋणदात्री संस्थाओं, शहरी सहकारी बैंकों सभी को रिज़र्व बैंक के अधिकार क्षेत्र में ले आया गया है । एक ही प्रकार की गतिविधियों में लगी संस्थाओं के विनियामक एकाकीमुखता, विवेक-सम्मत विनियमन तथा पर्यवेक्षण मानदंडों को डीएफआई, एनबीएफसी तथा सहकारी बैंकों पर लागू किया गया है।

4.62 1990 के दशक के बाद के वर्षों तक बीमा कारोबार सरकारी स्वामित्व तक सीमित रहा। 1999 में बीमा विनियमन और विकास प्राधिकरण (आइआरडीएएडी) अधिनियम के पारित हो जाने पर अनेक उपाय किए गए जिनमें नए खिलाडियों (सहभागियों) संयुक्त (उद्यमों बेंचरों) को जोखिम भागीदारी /कमीशन आधार पर बीमा कारोबार शुरू करने की अनुमति देना भी शामिल है।

4.63 बाजार की दक्षता में सुधार लाने, पारदर्शिता बढ़ाने, राष्ट्रीय बाजारों का एकीकरण करने तथा अनुचित कारोबारी संव्यवहारों को रोकने के लिए पूंजी बाजार को उदार बनाने, उसे विनियमित करने तथा उसका विकास करने हेतु सुधार के उपायों को लागू किया गया। इनमें से एक महत्वपूर्ण कदम था - इक्विटी बाजारों के विनियामक के रूप में कार्य करने के लिए फरवरी 1992 में भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) का गठन 1992 से इक्विटी बाजार में सुधारों के उपायों का उद्देश्य मुख्य रूप से विनियमन की प्रभावशीलनता, प्रतिस्पर्धी परिस्थितियों को बढ़ाने, अनौपचारिक असमानताओं को कम करने, आधुनिक प्रौद्योगिकीय बुनियादी संरचना का विकास करने , अंतरण लागत को कम से कम करने तथा प्रतिभूति बाजार में सट्टेबाजी को नियंत्रित करने पर ध्यान केंद्रित करना था। सुधारों की प्रक्रिया में दूसरा महत्वपूर्ण विकास 1992 में निजी क्षेत्र में पारस्परिक निधियों का खोलना रहा है जिसने भारतीय यूनिट ट्रस्ट के एकाधिकार को समाप्त कर दिया।

4.64 भारतीय पूंजी बाजार को विदेशी संस्थागत निवेशकों (एफआइआइ) के लिए 1992 में खोल दिया गया। भारतीय कंपनी जगत को अमरीकी डिपोजिटरी रसीद (एडीआर), ग्लोबल डिपोजिटरी रसीद (जीडीआर) विदेशी मुद्रा परिवर्तनीय बांड (एफसीसीबी) तथा बाह्य वाणिज्यिक उधार (ईसीबी) के माध्यमों से अंतरराष्ट्रीय पूंजी बाजारों से पूंजी जुटाने की अनुमति दी गई। इसी प्रकार विदेशी कंपनी निकाय (ओसीबी) तथा अनिवासी भारतीयों (एनआरआई) को यह अनुमति दी गई है कि वे

भारतीय कंपनियों में निवेश कर सकते हैं। एफआइआई को सरकारी प्रतिभूति सहित सभी प्रकार की प्रतिभूतियों में निवेश करने की अनुमति दी गई है और उन्हें पूर्ण पूंजी की परिवर्तनीयता प्राप्त है। पारस्परिक निधियों को अनुमति दी गई है कि वे विदेशों में इक्विटियों में निवेश करने के लिए अपतटीय शाखाएं खोल सकते हैं।

अनुपूरक नीतिगत परिवर्तन

4.65 सभी क्षेत्रों में तथा प्रत्येक क्षेत्र के भीतर (जिनमें प्रमुख हैं, मौद्रिक, राजकोषीय, तथा बाह्य) सुधारों के उपायों को योजनाबद्ध और क्रमिक रूप से इस तरह लागू किया गया ताकि वे एक दूसरे को ताकत दे सकें। इस प्रकार के अनुपूरक सुधार के उपायों के प्रमुख पहलुओं को निम्नलिखित अनुच्छेदों में दर्शाया गया है।

ऋणबाजार के सुधार

4.66 सरकारी प्रतिभूति बाजार के क्षेत्र में अनेक महत्वपूर्ण सुधार के उपाय किए गए हैं । रिज़र्व बैंक ने सितंबर 1994 में भारत सरकार के साथ एक ऐतिहासिक करार किया जिसके अंतर्गत तदर्थ खज़ाना बिलों को क्रमिक चरणों में समाप्त कर दिया जाएगा। तदनुसार तदर्थ खज़ाना बिल 1 अप्रैल 1997 से बंद कर दिए गए।

4.67 लोक ऋण का प्रबंधन तथा सरकारी प्रतिभूति बाजार के परिचालन लोक ऋण अधिनियम, 1944 द्वारा संचालित होते हैं। निर्धारित प्रक्रियाएं अत्यधिक पुरानी हैं तथा कुछ प्रावधान वर्तमान संदर्भ में अप्रासंगिक हो गये हैं। लोक ऋण अधिनियम को निरस्त कर उसके स्थान पर सरकारी प्रतिभूति अधिनियम नाम से एक नया विधान केंद्रीय मंत्रिपरिषद द्वारा अनुमोदित कर दिया है और अब इसे संसद की मंजूरी की प्रतीक्षा है। तथापि, लोक ऋण अधिनियम 1944 चूंकि केंद्र और राज्य सरकार दोनों की ओर से रिज़र्व बैंक द्वारा जुटाए गए बिक्री योग्य ऋणों के लिए लागू है, अतः इस प्रस्ताव पर सभी राज्य सरकारों की सहमति भी अपेक्षित है। नए विधान के अधिनियम बन जाने पर रिज़र्व बैंक के पास खासी शक्तियां होंगी कि वह इलैक्ट्रोनिक परिवेश के लिए उपयुक्त किसी अंतरण लिखत को शुरू कर सके। ऋण प्रबंधक के रूप में रिज़र्व बैंक का यह दायित्व है कि वह सरकार के लिए उधार लेने की लागत को न्यूनतम रखे। सामान्यतः, ऊर्ध्वमुखी झुकाव वाले आय वक्र के साथ प्रतिभूति की परिपक्वता अवधि जितनी ही लंबी होगी, उतनी ही लागत उच्चतर होगी । इस प्रकार उधार की अवधि (मीयाद) तथा उसकी लागत के बीच परस्पर संबंध है (मोहन 2004 क)।

4.68 सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज दर को बाजार से संबद्ध बनाया गया है और परिपक्वता अवधि में किए गए परिवर्तन बाजार की वरीयताओं को दर्शाते हैं। अप्रैल 1992 से, केंद्र सरकार का उधार कार्यक्रम मौटे तौर पर नीलामियों द्वारा चलाया गया है ताकि बाजार आधारित मूल्य की खोज की जा सके। सरकारी उधार पर बाजार से संबद्ध ब्याज दरों के होने के परिणाम स्वरूप, इधर खुले बाजार के परिचालन जो अप्रभावी हो गए थे, अब उन्हें पर्याप्त गति प्राप्त हुई है। नीति के प्रत्यक्ष लिखतों से अप्रत्यक्ष लिखतों की ओर बल दिए जाने के लिए क्रमिक बदलाव आया है- बैंकों के पास उपलब्ध प्रारक्षित निधियों के स्तरों को प्रभावित करने के लिए खुले बाजार के परिचालनों और रेपो का सक्रिय रूप से प्रयोग होने लगा है। इस लिखत की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए मुद्रा, विदेशी मुद्रा और श्रेष्ठ प्रतिभूति बाजारों को व्यापक तथा गहन करने के लिए तथा बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए महत्तर प्रयास किए जा रहे हैं।

4.69 चलनिधि का प्रबंधन चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) के माध्यम से चलनिधि को प्रणाली में बढ़ाकर या वापस खींचकर किया जाता है । प्रारंभ में 1999 में शुरू की गई अंतरिम समायोजन सुविधा के अंतर्गत चलनिधि को बढ़ाने का कार्य वाणिज्यिक बैंकों को निर्यात पुनर्वित्त तथा संपार्श्विक (प्रतिभूति समर्थित) ऋण सुविधा (सीएलएफ) और अतिरिक्त प्रतिभूति समर्थित ऋण सुविधा (एलसीएलएफ) तथा दो स्तरों पर चलनिधि समर्थन अर्थात स्तर 1 तथा स्तर 2 प्राथमिक व्यापारियों (पीडी) को समर्थक खज़ाना बिलों और सरकारी प्रतिभूतियों के प्रति उधार देने के रूप में किया जाता था । सीएलएफ और स्तर 1 के ऋण बैंक दर पर दिए जाते थे तथा एसीएलएफ तथा स्तर 2 के ऋण बैंक दर + 2 प्रतिशत ऊपर की दर पर । नरसिंहम समिति II की सिफारिशों का अनुसरण करते हुए स्तर I तथा पूर्ण चलनिधि समायोजन सुविधा के स्तर II के चरण I को क्रमशः 5 जून 2000 तथा 5 मई 2001 से लागू किया गया।

4.70 प्रतिभूति समर्थित उधार लेने और उधार देने के दायित्व (सीबीएलओ) 20 जनवरी 2003 को भारतीय समाशोधन निगम लि. (सीसीआइएल) के माध्यम से मुद्रा बाजार के लिखत के रूप में परिचालित किए गए। इस लिखत के लिए बाजार का विकास करने के लिए रिज़र्व बैंक ने 2004-05 के दौरान बाजार सहभागियों तथा सीसीआइएल के बीच प्रतिभूतियों के स्वचालित निशुल्क अंतरण की शुरुआत की। मांग/नोटिस मुद्रा बाजार के पूर्णतः अंतर-बैंक बाजार के रूप में परिवर्तन के बाद व्यापार-निधियों को बैंक तथा गैर बैंक सहभागियों के लिए एक मार्ग प्रदान करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक द्वारा एलएएफ सुविधा से अलग एक रेपो बाजार परिश्रम पूर्वक विकसित किया गया। बाजार को व्यापक बनाने की दृष्टि से गैर अनुसूचित सहकारी बैंक (यूसीबी) तथा अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के पास खुले गिल्ट खाते वाली सूचीबद्ध कंपनियों को, पात्रता मानदंड और सुरक्षोपायों के अंतर्गत रिज़र्व बैंक से बाहर रेपो बाजार में भाग लेने के लिए अनुमति दी गई। 29 अप्रैल 2005 से जमापत्रों (सीडी) की मीयाद को 15 दिनों से घटाकर 7 दिन कर दिया गया ताकि

उन्हें वाणिज्यिक पत्रों (सीबी) और बैंकों के पास मीयादी जामाराशियों के समान बनाया जा सके। 1990 के बाद के दशक से वित्तीय उदारीकरण की प्रक्रिया के शुरू किए जाने से वित्तीय बाजार क्रमिक (प्रगामी) रूप से समन्वित हो गए हैं जैसा कि ब्याज दरों में अधिकाधिक समनुरूपता से देखा जा सकता है। बाजार के समन्वयन का यह भी तात्पर्य है कि मौद्रिक संचरण की ब्याज दर सरणी ने हाल के वर्षों में कुछ शक्ति प्राप्त कर ली है।

बाह्य क्षेत्र के सुधार

4.71 बाह्य क्षेत्र के सुधारों का व्यापक दृष्टिकोण भुगतान संतुलन पर उच्च स्तरीय समिति (अध्यक्ष : सी. रंगराजन) की रिपोर्ट में बना दिया गया था । उक्त समिति ने अन्य बातों के अलावा ये सिफारिशें की थीं, कुछ सीमाओं के साथ बाजार-निर्धारित विनिमय-दर व्यवस्था की शुरुआत, चालू खाते की परिवर्तनीयता की ओर बढ़ते हुए, चालू खाते के लेन देनों को उदार बनाना, ऋण सर्जक आगमों की बजाए गैर ऋण सर्जक पूंजी आगमों पर जोर देते हुए विन्यासगत बदलाव, बाह्य वाणिज्यिक उधार राशियों पर कठोर विनियमन, विशेषकर अल्पावधिक ऋणों पर, अनिवासी भारतीयों से आने वाली विदेशी मुद्रा आगमों के उद्वेगशील तत्वों को निरुत्साहित करना, आगमों से संबद्ध बहिर्गमों, अर्थात् मूलधन, ब्याज, लाभांश, लाभ और बिक्रीगत आय के बहिर्गमों को पूरी छूट तथा अन्य बहिर्गमों का क्रमिक उदारीकरण, तथा बाह्य सहायता के आगम के अंतरमध्यस्थन से सरकार का दूर रहना।

4.72 बाद के वर्ष में हुई गतिविधियों में आम तौर पर इन सिफारिशों का अनुपालन किया गया। उदारीकृत विनिमय दर प्रणाली (लर्म्स) जिसमें दोहरी विनिमय दर प्रणाली निहित थी, व्यापार,उद्योग तथा विदेशी निवेश के अन्य क्षेत्रों में उदारीकरण के उपायों के साथ-साथ मार्च 1992 में शुरू की गई। दोहरी विनिमय दर प्रणाली अनिवार्यतः एक संक्रमणकालीन चरण था, जो बाद में 1 मार्च 1993 से एकल विनिमय दर में बदल गई। इसने रुपए की बाजार से निर्धारित विनिमय दर व्यवस्था का युग शुरू कर दिया। इसे चालू खाते की परिवर्तनीयता की दिशा में बढ़ने का एक महत्वपूर्ण कदम माना गया जिसे बाद में अगस्त 1994 में अंततः प्राप्त कर लिया गया जब भारत ने अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के करार की अनुच्छेद VIII को स्वीकार कर लिया।

4.73 भारत में विदेशी मुद्रा बाजार के विकास के लिए अनुवर्ती उपाय के रूप में एक विशेषज्ञ दल (अध्यक्ष : ओ.पी.सोढ़ानी) का गठन नवंबर 1994 में किया गया, जिसने अपनी रिपोर्ट जून 1995 में प्रस्तुत कर दी थी। इस समूह ने विदेशी मुद्रा बाजार को विकसित, गहन तथा व्यापक बनाने, जोखिम प्रबंधन को सुनिश्चित करने,बाधाओं को हटाकर बाजार में दक्षताओं को बढ़ाने, नए उत्पादों को शुरू करने, तथा आंतरिक नियंत्रणों को मजबूत बनाने के लिए अनेक सिफारिशें कीं। अनेक बाद की कार्रवाईयां इस रिपोर्ट पर आधारित हैं।

4.74 रिज़र्व बैंक द्वारा 1997 में गठित पूंजी खाते की परिवर्तनीयता संबंधी समिति (सीएसी) (अध्यक्ष : एस.एस.तारापोर) ने पूंजी खाते की परिवर्तनीयता के आगे का रास्ता सुझाया -जिसमें यदि तीन महत्वपूर्ण

बाक्स IV.2
विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम, 1999

1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में औद्योगिक और व्यापार नीतियों में सुधारों ने, जो बदलते अंतरराष्ट्रीय आर्थिक और व्यापार संबंधों के अनुरूप थे, औद्योगिक वृद्धि और निर्यात संवर्धन की गति को बढ़ाने के लिए बढ़े हुए विदेशी निवेश और पूंजी के आगमों के लिए अधिक अनुकूल परिवेश की आवश्यकता को बढ़ा दिया। एक व्यापक नए विधान - विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम 1999 में बनाया गया -जिसने वास्तव में विदेशी क्षेत्र की नीतियों में किए गए उन बदलावों पर जो 1990-91 में शुरू किए गए थे, कानूनी मोहर लगा दी । इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण है, फेमा में कठोर अनुप्रवर्तन संबंधी प्रावधानों को, जो फेरा में थे, हलका कर दिया गया, अभियोजन पक्ष को अभियोगी व्यक्ति के अपराध को सिद्ध करना होगा। इसके अलावा, फेमा ने फेमा के प्रावधानोंके उल्लंघन पर केवल मौद्रिक दंड देने का ही प्रावधान है, फेमा के प्रावधानों का उल्लंघन करने पर दीवानी प्रक्रिया के अंतर्गत निपटा जाएगा जिसके लिए मिले जुले (मिश्रित) नियमों, अधिनिर्णायक प्राधिकरण, विशेष निदेशक (अपील) तथा अपीलीय न्यायाधिकरण के रूप में अलग से प्रशासनिक प्रक्रिया-तंत्र स्थापित किया गया। इसके अलावा, विधि की प्रत्येक प्रक्रिया के लिए उक्त अधिनियम में एक समय-सीमा निश्चित की गई है। संमिश्रण की संकल्पना .फेमा का दूसरा उल्लेखनीय पहलू है। फेरा के अंतर्गत सभी उल्लंघनों पर प्रवर्तन निदेशालय के पृथक जांच और अधिनिर्णय के अधीन आते थे। फेमा में इन उल्लंघनों को संमिश्रित करने का अवसर प्रदान किया गया है, जिसके अनुसार, उल्लंघनकर्ता को स्वतः यह अवसर प्राप्त होता है कि वह संमिश्रण प्राधिकारी के समक्ष उल्लंघनों को एक साथ मिलाने का अनुरोध कर सकता है। संमिश्रण प्राधिकारी को इस आवेदन को 180 दिनों के भीतर निपटाना होता है।

भारत सरकार ने, हालही की एक अधिसूचना में रिज़र्व बैंक को फेमा के अंतर्गत सभी उल्लंघनों के लिए संमिश्रण प्राधिकारी के रूप में अधिसूचित किया है। केवल उन मामलों को छोड़कर जो हवाला लेनदेनों से संबंधित हैं, उनके लिए संमिश्रण प्राधिकारी अनुप्रवर्तन निदेशालय होगा। नई प्रक्रिया फेमा के उल्लंघनों के मामलों को शीघ्र तथा निर्बाध रूप से निपटा सकेगा।

पूर्व-शर्तें - राजकोषीय समेकन, निर्दिष्ट मुद्रास्फीतिगत लक्ष्य तथा वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ बनाना- रखी गई थीं, उसने उदारीकरण के अनेक उपायों की सिफारिशें की थीं, जिसमें विदेशी मुद्रा के सभी लेनदेनों को संचालित करने वाले वैधानिक ढांचे में परिवर्तन भी शामिल हैं। उदारीकरण के ये उपाय विदेशी प्रत्यक्ष निवेश, संविभागीय निवेश, संयुक्त उद्यमों / पूर्णतः स्वाधिकृत सहायक संस्थाओं में भारतीयों द्वारा विदेशी निवेश, परियोजना निर्यात, विदेशों में भारतीय कंपनी कार्यालय खोलने, विदेशी मुद्रा अर्जकों की विदेशी मुद्रा हकधारिता (इइएफसी) को बढ़ाकर 50 प्रतिशत तक करने,जब्त करने,निर्यातों के लिए ऋण स्वीकृत करने की अनुमति देने तथा ऋण और इक्विटी बाजारों में उनके निवेश जोखिमों के एक भाग के रूप में उनके फारवर्ड को सुरक्षित करने के लिए विदेशी संस्थागत निवेशों को अनुमति देने से संबंधित थे।

4.75 फेरा 1973 को निरस्त किया गया और उसके स्थान पर एक नया विधान - विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम (फेमा),1999, जून 2000 से लागू किया गया जैसा कि इस अधिनियम की उद्देश्यिका में कहा गया है, इस अधिनियम का उद्देश्य था - विदेश व्यापार तथा भुगतानों को सुविधाजनक बनाना तथा भारत में विदेशी मुद्रा बाजार का सुव्यवस्थित विकास करना और उसे बनाए रखना "जो कि पुराने अधिनियम के अंतर्गत देश की विदेशी मुद्रा को संसाधनों को सुरक्षित रखने तथा उसके उचित उपयोग" के दृष्टिकोण में स्पष्ट बदलाव था दर्शाता है। नीतिगत दृष्टिकोण में इस बदलाव का रिज़र्व बैंक के परिचालनों के लिए उल्लेखनीय निहितार्थ को अनिवार्य बना दिया (बाक्स IV.2)। नई प्रणाली के अंतर्गत सभी चालू खाता के भुगतान, सरकार द्वारा अधिसूचित भुगतानों के अलावा, वास्तविक लेनदेनों के संबंध में उचित विदेशी मुद्रा के लिए बिना किसी प्रतिबंधों के प्राधिकृत व्यापारियों से प्राप्त करने के पात्र हैं। वस्तुओं और सेवाओं के निर्यातों के संबंध में प्रत्यर्पण संबंधी अपेक्षाएं बनी रहेंगी। तथापि पूंजी खाते के लेनदेनों पर रिज़र्व बैंक का आवश्यक विनियामक अधिकार क्षेत्र बना रहेगा।

4.76 रिज़र्व बैंक ने अनेक प्रयोजनों के लिए विदेशी मुद्रा जारी करने के लिए प्राधिकृत व्यापारियों को पर्याप्त शक्तियां प्रदान की हैं तथा वह विदेशी मुद्रा बाजार के विकास पर अपना ध्यान केंद्रित करता रहा है। विदेशी मुद्रा बाजार को गहन बनाने के लिए काफी संख्या में उत्पाद शुरू किए गए हैं तथा नए-नए खिलाड़ियों की प्रविष्टि की अनुमति दी गई है। अतिरिक्त सुरक्षा लिखतें जैसे विदेशी मुद्रा रुपया विकल्प शुरू किए गए हैं तथा प्राधिकृत व्यापारियों को अनुमति दी गई है कि वे नवोन्मेषी उत्पाद जैसे-क्रॉस करेंसी विकल्प, ब्याज दर और करेंसी स्वैप (अदलाबदली) केप्स एवं कॉर्ल्स तथा वायदा दर करार (एफआरए) का अंतरराष्ट्रीय विदेशी मुद्रा बाजार में प्रयोग कर सकते हैं।

मौद्रिक नीति ढांचे में परिवर्तन

4.77 वैश्विक स्तर पर 1990 के बाद के दशक की अवधि से इसके साधनों, जिन्हें मौद्रिक प्राधिकारी व्यापक आर्थिक गतिविधियों के आकलन के लिए प्रयोग में लाते हैं, लिखतों के विकल्प तथा परिचालन प्रक्रियाओं में भारी समानता देखी गई है। चलनिधि के प्रबंधन में तथा घरेलू तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों के बढ़ते हुए समेकन से बाजार के व्यापक परिवेश में पनपी अल्पावधि पर ध्यान को केंद्रित करने में अधिक सक्रियता रही है। केंद्रीय बैंकों, राजकोषीय प्राधिकारियों और वित्तीय बाजारों को संचालित करनेवाले विनियामक निकायों के बीच अब बेहतर समन्वय है। मौद्रिक नीति के संचालन में बेहतर उन्नयन हुआ है तथा केंद्रीय बैंकर वित्तीय बाजारों की जटिलताओं से निपटने के लिए अपनी तकनीकी और प्रबंधकीय दक्षताओं को सुधारने में निरंतर लगे हुए हैं। मौटे तौर पर वैश्विक प्रवृत्तियों के अनुरूप भारत में मौद्रिक नीति के निर्माण का जोर वित्तीय क्षेत्र को क्रमिक रूप से अपविनियमित करने, बाजार के विकास के लिए प्रोत्साहन तथा मौद्रिक नियंत्रण के लिए अप्रत्यक्ष लिखतों के बढ़ते हुए उपयोग के लिए अवसर प्रदान पर रहा है।

ब्याज दरों का अपविनियमन

4.78 नियंत्रित ब्याज दर संरचना में सरलीकरण की प्रक्रिया सितंबर 1990 में शुरू हुई जिसमें उधार दरों के लिए निर्धारित स्लेबों को कम किया गया था। एक प्रमुख प्रयास के रूप में न्यूनतम उधार की दर को समाप्त कर दिया गया तथा रुपए 2 लाख से ऊपर की उधार के लिए उधार की दरों को अक्तूबर 1994 में मुक्त कर दिया गया था। इस अपविनियमन तथा ब्याज दरों के सरलीकरण के परिणामस्वरूप अब बैंकों को अपनी जमा और उधार की दरों को निर्धारित करने में काफी नमनीयता प्राप्त है । वर्तमान में, 2 लाख रुपए तक के निर्यात ऋण और लघु ऋणों पर ब्याज दरों की निर्धारित उच्चतम सीमा के सिवाय, अन्य सभी उधार की दरों को अपविनियमित कर दिया गया है। जमाराशियों की दृष्टि से केवल बचत जमा दरों तथा एनआरआइ जमा दरों का निर्धारण रिज़र्व बैंक द्वारा किया जाता है। वर्तमान प्रथा के अनुसार बैंक अपनी उधार देने की दरें जोखिम प्रीमियम तथा/ अथवा मीयाद सम्बंधी प्रीमियमों को हिसाब में लेते हुए पूर्व घोषित आधारभूत मुख्य उधार दरों (बीपीएलआर) के संदर्भ में अपनी उधार दरें निर्धारित करते हैं। 'बीपीएलआर' का निर्धारण अनेक कारकों जैसे विनियामक अपेक्षाओं को सुरक्षित करने के लिए निधियों की वास्तविक लागत, परिचालन गत खर्चे, प्रावधानीकरण /पूंजी प्रभार और लाभ-मार्जिन को ध्यान में रखते हुए किया जाता है। बीपीएल रुपए 2 लाख तक के लघु ऋणों के लिए उच्चतम ब्याज दर का काम भी करती है।

बैंक दरों का पुनः सक्रियकरण

4.79 संदर्भ दर के रूप में तथा मौद्रिक नीति के जोर को दर्शाने के लिए संकेतात्मक तंत्र के रूप बैंक दर को अप्रैल 1997 में पुनः सक्रिय किया गया। रिज़र्व बैंक से विभिन्न प्रकार के आर्थिक निभावों, जिनमें पुनर्वित्त भी शामिल है, पर ब्याज दरों को बैंक दर से जोड़ दिया गया। बैंक दर के सक्रिय किए जाने से रिज़र्व बैंक को एक अतिरिक्त साधन (लिखत) मिल गया।

नए मौद्रिक समुच्चय

4.80 मुद्रा स्टॉक के स्वरूप,गुणवत्ता और आयाम में उभरती गतिविधियों के संदर्भ में मौद्रिक सर्वेक्षण के विश्लेषणात्मक पहलुओं की पुनः जांच करने के लिए दिसंबर 1997 में गठित मौद्रिक आपूर्ति : संकलन का विश्लेषण सिद्धांत तथा पद्धति संबंधी कार्यदल (अध्यक्ष : डॉ. वाइ.वी. रेड्डी) ने अपनी रिपोर्ट जून 1998 में प्रस्तुत कर दी थी। उक्त कार्यदल की प्रमुख सिफारिशें में शामिल हैं - नियमित अंतरालों पर रिज़र्व बैंक, वाणिज्यिक और सहकारी बैंकों तथा संगठित वित्तीय क्षेत्र के व्यापक विश्लेषणात्मक सर्वेक्षण, चार मौद्रिक समुच्चयों का संकलन [एम. (मौद्रिक आधार), एम$_1$ (संकीर्ण मुद्रा), एम$_2$ तथा एम $_3$ (व्यापक मुद्रा)], तीन चलनिधि समुच्चयों की शुरुआत (एल$_1$, एल$_2$ तथा एल$_3$), परंपरागत बैंक ऋण में न झलकने वाली मदों को भी शामिल करके ऋण की परिभाषा को व्यापक बनाना,बैंकिंग प्रणाली की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों की पुनः परिभाषा करना जिसमें बैंकों की (क) अपनी एफसीएमआर(बी) जमाराशियां तथा (ख) विदेशी मुद्रा उधार राशियों को घटाकर उनकी निवल विदेशी मुद्रा आस्तियों को भी शामिल किया जाए।

नीति का मुख्य बल - विविध संकेतक दृष्टिकोण की ओर बदलाव

4.81 नमनीय मौद्रिक लक्ष्य बद्धीकरण दृष्टिकोण के अंतर्गत, जिसका भारत ने 1980 के बाद के मध्य दशक से अनुसरण करना शुरू किया था, व्यापक मुद्रा (एम$_3$) में वृद्धि को इस रूप में प्रक्षेपित किया गया था जो कि प्रत्याशित सघउ वृद्धि तथा मुद्रास्फीति के सहनीय स्तर के अनुरूप हो। इस प्रकार एम$_3$ ने नीति के सांकेतिक लंगर के रूप में कार्य किया। आरक्षित मुद्रा (आरएम) को परिचालनगत लक्ष्य के रूप में तथा बैंक आरक्षित निधियों को परिचालनगत लिखत के रूप में प्रयुक्त किया गया। जैसे-जैसे अपविनियमन ने विनिमय दर और ब्याज दरों के निर्धारण में बाजारी शक्तियों की भूमिका बढ़ाई, मुख्यतः पूजी के आगम के कारण चलनिधि में हुई वृद्धि की वजह से मौद्रिक लक्ष्यबद्ध करने का ढांचा दबाव में आ गया। मात्रात्मक परिवर्तियों की तुलना में ब्याजदरों और विनिमय दरों के बढ़ते हुए महत्व के साथ-साथ मौद्रिक नीति को अंतवर्ती संप्रेषण प्रक्रिया-तंत्र में बदलाव आने के बढ़ते हुए प्रमाण भी देखे गए। इन गतिविधियों के कारण मौद्रिक नीति के ढांचे की समीक्षा करना आवश्यक हो गया और रिज़र्व बैंक ने 1998-99 से एक अधिक व्यापक ''बहुविधि संकेतक दृष्टिकोण'' को अपना लिया। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत, नीति के सापेक्ष महत्व को विभिन्न बाजारों में (जैसे मुद्रा बाजार, पूंजी बाजार और सरकारी प्रतिभूति बाजार) ब्याज दरों या प्रतिलाभ की दरों, मुद्रा पर उच्च बारंबारता के आंकड़े तथा बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिए गए ऋणों, राजकोषीय स्थिति, व्यापार और पूंजी प्रवाहों, मुद्रास्फीति की दर,विनिमय दर, विदेशी मुद्रा पुनर्वित्त पोषण तथा लेनदेनों एवं उत्पादन आंकड़ों से प्राप्त किया जाता है।

4.82 इन बहुविधि संकेतकों की निगरानी करने के लिए अनेक संस्थागत व्यवस्थाएं स्थापित की गई हैं। वित्तीय बाजार समिति दैनिक आधार पर वित्तीय बाजारों की गतिविधियों की निगरानी करती है। उक्त समिति मौद्रिक दरों, विदेशी मुद्रा विनिमय, हानि और वायदा दरों, मुद्रा तथा विदेशी मुद्रा दोनों बाजारों में निधि के आवागमन की मात्रा, सरकारी प्रतिभूति बाजार में आय की दरों तथा परिमाणों, तथा मौद्रिक तथा विदेशी मुद्रा बाजारों में अन्य गतिविधियों और बैंकिंग तथा अन्य बाजार संकेतकों की समीक्षा करती है। उक्त समिति चलनिधि की स्थितियों का त्वरित आकलन करती है तथा मुद्रा और प्रतिभूति बाजारों में हस्तक्षेप के लिए कार्य नीतियों की सिफारिशें करती है।

4.83 अनौपचारिक मौद्रिक नीति की रणनीति संबंधी बैठकों में मौद्रिक और चलनिधि संबंधी स्थितियों तथा संबंधित संकेतकों की समीक्षा की जाती है, तथा संबंधित मुद्दों पर तकनीकी अध्ययनों के निष्कर्षों पर आधारित नीतिगत रणनीतियों पर चर्चा तथा मौद्रिक नीति से संबंधित विभिन्न समितियों की सिफारिशों पर अनुवर्ती कार्रवाइयों की समीक्षा की जाती है। बैंकों के साथ संसाधन प्रबंध की चर्चाओं में बैंकों के प्रमुख स्रोतों और निधियों के उपयोग संबंधी अनुमानों को प्राप्त करने, उनकी समीक्षा करने, अनुमानित लक्ष्यों पर गणात्मक सूचना के संग्रहण तथा इन लक्ष्यों को प्राप्त करने में बैंकों द्वारा अपनाई जाने के लिए प्रस्तावित रणनीतियों के बारे में जानकारी प्राप्त करने,नीति पर की गई घोषणाओं पर प्रतिसूचना तथा नीति की भावी दिशा पर सुझावों को प्राप्त करने, एवं चलनिधि और बाजार की स्थितियों पर बैंकों के अनुभव प्राप्त करने पर ध्यान केंद्रित किया जाता है। मुद्रा और सरकारी प्रतिभूतियों तथा विदेशी मुद्रा बाजारों पर तकनीकी सलाहकार समिति मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजारों की गतिविधियों पर निरंतर आधार पर रिज़र्व बैंक को परामर्श देती रहती है। मौद्रिक नीति के अपेक्षित उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्राप्त विचारों और लिए गए निर्णयों को नीति संबंधी कार्रवाई में परिणत किया जाता है।

अल्पावधिक चलनिधि प्रबंधन

4.84 जैसे - जैसे मौद्रिक नीति की प्रत्यक्ष लिखतों पर निर्भरता में कमी आई, तो प्रणाली में विद्यमान चलनिधि का प्रबंधन सरकारी प्रतिभूतियों

की सीधी खरीद / बिक्रियों तथा दैनिक रेपो तथा रिवर्स रेपो परिचालनों के रूप में खुले बाजार परिचालनों के माध्यम से अधिकाधिक रूप में किया जाने लगा। खुले बाजार के परिचालनों की अनुपूर्ति बैंक दर / रेपों दर में परिवर्तनों के माध्यम से रिज़र्व बैंक की स्थायी सुविधाओं तथा प्रत्यक्ष ब्याज दर संकेतकों द्वारा की गई। अल्पावधिक चलनिधि प्रबंधन में सहायता नियमित आधार पर रेपो संचालन द्वारा की गई। रेपो और रिवर्स रेपो के नाम अंतरराष्ट्रीय प्रयोगों के अनुसार (रेपो / रिवर्स रेपो रिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि को बढ़ाने / खपाने को दर्शाते हैं) 9 अक्तूबर 2004 से आपस में अदले -बदले गए।

4.85 दिसंबर 1992 और मार्च 1995 की अवधि के बीच रिज़र्व बैंक ने प्रारंभ में एक दिन, दो या तीन दिनों के माध्यम से साप्ताहिक चक्र में पांचों दिनों को कवर किया जिसे बाद में 14 दिवसीय चक्र में बदल दिया गया जिसने कि रिज़र्व राशि को पूरा करने की अवधि को समाहित कर लिया। तंग चलनिधि की परिस्थिति के अंतर्गत मांग में कमी होने के कारण मार्च 1995 के बाद से रेपो के प्रचलन को बंद कर दिया गया। और 1997 के प्रारंभिक अवधि में उसे पुनः शुरू किया गया। 3-4 दिनों के चक्र वाले रेपो पुनः शुरू किए गए। चूँकि अल्पावधि के रेपो खपायी जानेवाली चलनिधि की मात्रा का निर्णय करने में रिज़र्व बैंक को अधिक प्रबंधन - सुविधा प्रदान करते है, जो आपूर्ति और मांग की स्थितियों पर निर्भर करती है। रेपो-दरें चलनिधि की स्थितियों को दर्शाने के अलावा, पाक्षिक मांग मुद्रा दरों के लिए आधार प्रदान करती हैं। तंग चलनिधि की स्थितियों में, प्राथमिक व्यापारियों को रिज़र्व बैंक की चलनिधि सहायता रिज़र्व बैंक को बाजार में प्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करने में और उसके द्वारा पाक्षिक मांग मुद्रा दरों पर दबाबों को कुछ कम या संतुलित कर पाने में समर्थ बनाती है। चलनिधि समायोजन सुविधा मुद्रा नीति की मुख्य परिचालन लिखत के रूप में उभरी है। जो रिज़र्व बैंक को वित्तीय बाजार की विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों के अंतर्गत अल्पावधिक चलनिधि को नियंत्रित करने में रिज़र्व बैंक की मदद करती है। चलनिधि समायोजन सुविधा दैनिक रेपो और रिवर्स रेपो की नीलामियों के माध्यम से परिचालित होती है जो नीतिगत उद्दश्यों के अनुरूप अल्पावधिक ब्याजदरों के लिए मार्जिन निर्धारित करती है। चलनिधि के प्रबंधन को बेहतर बनाने की दृष्टि से तथा बाजार सहभगियों से प्राप्त सुझावों के फलस्वरूप रिज़र्व बैंक ने 28 नवंबर 2005 से एक दूसरी चलनिधि समायोजन सुविधा शुरू की है। इस प्रकार वर्तमान में रेपो और रिवर्स रेपो दिन में दो बार संचालित किए जाते है। हालांकि शनिवार के लिए ब्याज दरों का कोई औपचारिक लक्ष्य नहीं है, फिर भी चलनिधि समायोजन सुविधा ने रिज़र्व बैंक को बैंकों की आरक्षित निधियों पर लक्ष्य बद्ध रहने पर जोर कम किया है, उत्तरोत्तर ब्याज दरों पर ध्यान केंद्रित करने में समर्थ बनाया है, इसने चलनिधिगत दबाब को खतरे में डाले बिना नकदी आरक्षित अपेक्षाओं को कम करने में भी सहायता की है।

पूंजीगत आगमों के अंतर्गत मौद्रिक प्रबंधन

4.86 1990 के बाद के दशक के प्रारंभ में संरचनागत सुधारों को अपनाए जाने तथा बाह्य क्षेत्र के उदार बनाए जाने के कारण, भारतीय अर्थ व्यवस्था ने पूंजीगत आगमों में तीव्र वृद्धि का अनुभव किया। जहाँ पूंजीगत आगमों ने बाह्य क्षेत्र के वित्त पोषण संबंधी बाधाओं को कम किया, उन्होंने मौद्रिक नीति के संचालन के लिए भी द्विविधा उत्पन्न की। इन परिस्थितियों में विदेशी मुद्रा विनिमय दर में तीव्र उतार-चढ़ाव को सीमित रखने तथा विदेशी मुद्रा बाजार में स्थितियों को सुव्यवस्थित एवं नियंत्रित बनाए रखने के उद्देश्यों को प्राप्त करना कठिन हो गया। खासकर, यदि पूंजीगत आगम विदेशी मुद्रा की मांग से भी ज्यादा हो गया हो। देशी मुद्रा में वृद्धि होने से यह अवसर विदेशी मुद्रा की अधिक आपूर्ति को बाहर निकालने के लिए केंद्रीय बैंक से हस्तक्षेप की आवश्यकता की मांग करती है। ऐसा करते हुए, अधिकारिक आरक्षित मुद्रा के बढ़ जाने का अर्थ होता है प्राथमिक मुद्रा आपूर्ति का तत्काल बढ़ जाना जिससे मूल्य स्थिरता को बनाए रखने के लिए प्रयास किए जाने की आवश्यकता जुड़ी होती है।

4.87 चलनिधि समायोजन सुविधा के अलावा, जो अनिवार्यता, चलनिधि के दैनिक प्रावधान का साधन है, अन्य अनेक तरीकों से निष्प्रभावीकरण के कार्य भी किए जाते हैं। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के अंतर्गत रिज़र्व बैंक को संपार्श्विक प्रतिभूतियों के बिना 5 करोड़ रु. की असली प्रदत्त पूंजी से ज्यादा की राशि उधार लेने की अनुमति नहीं है। गत अवधि में रिज़र्व बैंक ने गैर विपणनयोग्य विशेष प्रतिभूतियों को (जो मुख्यतः तदर्थ खजाना बिलों द्वारा खरीदी गई थी) विपणन योग्य प्रतिभूतियों के रूप में बदलकर खुले बाजार के परिचालन करने में अपनी योग्यता में वृद्धि की है। ऐसी सारी प्रतिभूतियाँ के स्टॉक को सितंबर 2003 में पूर्णतः बदल लिए जाने पर रिज़र्व बैंक ऐसे परिचालन चलाने में समर्थ हो गया। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के वर्तमान प्रावधानों के अंतर्गत रिज़र्व बैंक अपनी प्रतिभूतियां जारी नहीं कर सकता तथा ऐसे विकल्प को सामान्यतः भारत में समर्थन भी नहीं मिलता है। इसके अलावा, केंद्रीय बैंक के बिल /बांड निष्प्रभावीकरण की संपूर्ण लागत रिज़र्व बैंक के तुलन पत्रों पर पड़ेगी। इसके अतिरिक्त, जोखिम-मुक्त दो प्रकार की प्रतिभूतियाँ की विद्यमानता - श्रेष्ठ प्रतिभूति और केंद्रीय बैंक की प्रतिभूतियां - बाजार को विखंडन की ओर ले जाती हैं। और अंतिम चूंकि सरकार रिज़र्व के पास अपने अधिशेषों पर सांविधिक रूप से ब्याज अर्जित नहीं कर सकती, अतः इसकी अधिशेष निष्क्रिय पड़ी आस्तियों के रूप में सरकार की लागतों को बढ़ने से बचाने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक द्वारा प्राप्त इसकी अपनी प्रतिभूतियों में निविष्ट कर दिये जाते हैं। तथापि, यह व्यवस्था, निष्प्रभावीकरण के परिचालनों के लिए और समग्रतः चलनिधि प्रबंधन के लिए सरकारी प्रतिभूतियों के स्टॉक की उपलब्धता को समाप्त कर देती है।

4.88 बाजार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) रिज़र्व बैंक को चलनिधि प्रबंधन के लिए एक अतिरिक्त लिखत उपलब्ध कराने की दृष्टि से तथा चलनिधि समायोजन सुविधा को निष्प्रभावीकरण के परिचालनों के भार से मुक्त करने के लिए अप्रैल 2004 में शुरू की गई थी। रिज़र्व बैंक की विदेशी मुद्रा आस्तियों की अर्जन के कारण उत्पन्न हुई अल्पाधिक चलनिधि को खींचने तथा पूंजी प्रवाहों के मौद्रिक प्रभाव को निष्क्रिय करने के लिए एमएसएस भारत सरकार तथा रिज़र्व बैंक के बीच एक व्यवस्था है। इस योजना के अंतर्गत रिज़र्व बैंक नीलामियों के द्वारा खजाना बिल दिनांकित सरकारी प्रतिभूतियां जारी करता है तथा इस निष्प्रभावीकरण की लागत सरकार द्वारा वहन की जाती है।

बुनियादी कार्यों में बदलाव

करेंसी (मुद्रा) प्रबंधन

4.89 वर्तमान में मुद्रा प्रबंधन एक रोचक चरण से गुजर रहा है। इस क्षेत्र में अनेक उल्लेखनीय कदम उठाए गए हैं, जिनमें निम्नलिखित शामिल हैं- नोट मुद्रण प्रेसों की क्षमता को बढ़ाना; नोट-वितरण के नेटवर्क सहित निर्गम विभाग के परिचालनों में सुधार, नए सुरक्षा फीचर्स लागू करना तथा उच्चतर मूल्यवर्ग के नोट जारी करने की ओर झुकाव।

4.90 1990 के दशक की अवधि मुद्रा (करेंसी) की आपूर्ति में बाधाओं के रूप में देखी गई थी, चूंकि नोट मुद्रण प्रेस की क्षमता नए नोटों की मांग की तुलना में काफी कम हो गई थी। इस दशक के केवल अंतिम वर्ग में जाकर ही भारतीय रिज़र्व बैंक नोट मुद्रण प्रा.लि. (बीआरबीएनएमपीएन) की मैसूर (कर्नाटक) तथा सालबनी (पश्चिम बंगाल) में रिज़र्व बैंक की पूर्णतः स्वाधिकृत सहायक संस्था के रूप में दो प्रिंटिंग प्रेस स्थापित करके, पर्याप्त क्षमता स्थापित की जा सकी, जो क्रमशः 1999 और 2000 में पूर्णतः परिचालन में आईं। एक सुरक्षित परिवेश में मुद्रण प्रसंस्करण नियंत्रण, लेखांकन तथा गुणवत्ता जांच के लिए आधुनिक सुविधाओं से सुसज्जित ये प्रेस सभी मूल्यवर्ग के नोट मुद्रित करने में सक्षम हैं। इन प्रेसों की संयुक्त क्षमता तीन-शिफ्टों के आधार पर प्रतिवर्ष 19.8 बिलियन नोट छापने की है। बीआरबीएनएमपीएल की प्रेसें विश्व में पहली ऐंसी बैंक नोट प्रेसें हैं जिन्हें मैसर्स रीन्सिक वोस्ट फेलिस्टर, टीयूवी जर्मनी द्वारा मार्च 2001 में आइएसओ 9001:2000 का प्रमाणपत्र प्रदान किया गया।

4.91 बीआरबीएनएमपीएल की प्रिंटिंग प्रेस के परिचालन में आने से रिज़र्व बैंक 1999 में ''क्लीन नोट पालिसी'' को अपना सका। क्लीन नोट पालिसी का उद्देश्य है - गैर निर्गम -योग्य नोटों को समय रहते प्रचलन से वापस ले लेना और उनके स्थान पर नए नोट जारी करना। यह अभ्यास रिज़र्व बैंक की इस प्रक्रिया की आवश्यकता और वापस आहरित नोटों को निपटाने की क्षमता पर निर्भर है। जहाँ गंदे नोटों को करेंसी चेस्टो से निर्गम कार्यालयों को ले जाने की गति को कई तरीकों से तेज किया जा सकता है, परंतु, वास्तविक मुद्दा यह है कि उसका स्वरूप क्या हो जिसमें प्रसंस्करण की क्षमता निर्गम विभागों में बढ़ाई जा सके ताकि उसकी गति उतनी हो जाए जितनी कि चेस्टों से भारी मात्रा में नोटों के आने की है। इस क्षमता को लक्ष्य से बढ़ाए जाने की सीमा को देखते हुए यह अनिवार्य हो गया कि हाथ से की जानेवाली कार्रवाई को मशीनों के जरिए किए जानेवाले प्रसंस्करण से समर्थन मिले। अतः रिज़र्व बैंक ने नोट प्रसंस्करण गतिविधियां के मशीनीकरण को सभी मात्रा में अपनाया और 48 करेंसी सत्यापन तथा प्रसंस्करण प्रणालियों (सीवीपीएस) तथा 27 थ्रेडिंग और ब्रिकेटिंग प्रणालियों (एसबीएए) को 18 निर्गम कार्यालयों में लगाया। सीवीपीएस उच्चगति वाली पूर्णतः स्वचालित मशीनें हैं, जिन्हें करेंसी नोटों को सही और उचित श्रेणी के नोटों के छाँटने के लिए बनाया गया है, जिनकी 50,000 से 60,000 गंदे नोटों को प्रति घंटे छांटने की क्षमता है। फिर नोटों को गिनकर उनके बंडल बना दिए जाते हैं ताकि 100-100 नोटों के पैकेट बनाये जा सकें और अनफिट नोट स्वतः ही ऑन लाइन श्रेडिंग यूनिट में चले जाते हैं जहाँ उनको बहुत छोटे छोटे टुकड़ों में बांटा जाता है। काटे गए टुकड़ों को फिर एसबीएए के ब्रेकेटिंग यूनिट में सोख लिया जाता है जहाँ इन्हें तीव्र और उच्च हवाई दबाव में पूरी ईंट का रूप दे दिया जाता है तथा वातावरण के लिए अनुरूप तरीके से निपटा दिया जाता है। नकदी को संभालने के कार्य का आधुनिकीकरण वाणिज्यिक बैंकों ने भी शुरू कर दिया गया है। संवितरण सरणियों पर आए दबाव को कम करने के लिए प्रथम उपाय के रूप में सिक्कों के संवितरण के कार्य को निजी परिवहन परिचलनों को दे दिया गया है। तथा रिज़र्व बैंक स्टाफ तथा पुलिस कार्मिकों की सिक्कों के विप्रेषण के साथ जाने की प्रैक्टिस को बंद कर दिया गया है।

4.92 बैंक नोटों की सिक्योरिटी फीचरों की समीक्षा की गई है और उसे समय - समय पर अद्यतन बनाया गया है। जिसमें इस क्षेत्र में अनुसंधान और औद्योगिकी के लाभ लिए गए है। दृष्टिकोण यह रहा है कि विद्यमान डिजाइन पर ही सिक्योरिटी फीचर्स में सुधार किया जाए ताकि जाली नोंटों की समस्या से निपटा जा सके तथा पूर्णतः नई श्रृंखला के नोटों पर सिक्योरिटी फीचर्स का संयुक्त रुप बनाया जा सके। रेप्रो ग्राफिक तकनी कों के उन्नयन के साथ ही परंपरागत सिक्योरिटी फीचर्स अपर्याप्त पाए गए। नोटों की नई श्रृंखला जिसे ''महात्मा गांधी श्रृंखला'' का नाम दिया गया हैं, 1996 में शुरू की । एक बदला हुआ वाटर मार्क, विडों वाले (सिक्योरिटी थ्रेड (धागा), अमूर्त छाया तथा दृष्टि से विकलांग लोगों के लिए उत्कीर्ण फीचर्स, कुछ नए फीचर्स हैं। सिक्यूरिटी फीचर्स में अंतरराष्ट्रीय प्रवृत्तियों के अनुरूप रिज़र्व बैंक ने अब 2005 की श्रृंखला निकाली है जिनमें मशीन की सहायता से पढ़े जाने वाली सिक्योरिटी फीचर्स हैं। उच्चतर मूल्यवर्ग के बैंक नोटों में जोखिम की संभावना अधिक होने को देखते हुए रु.100, रु.500 तथा रु.1000 के बैंक नोटों में सिक्योरिटी फीचर्स को बढ़ाया गया

है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि रिज़र्व बैंक द्वारा जारी किसी भी डिजाइन के सभी नोट बैंक नोट बने रहेंगे हालांकि कुछ समय बाद एक विशेष डिजाइन के नोट आगे और न देखें जा सकेंगे क्योंकि उस डिजाइन में नए निर्गमों की कमी हो जाएगी।

4.93 तकनीकी नवोन्मेषों के अनुरूप रिज़र्व बैंक ने बेहतर परिचलनगत दक्षता को प्रारंभ करने, बेहतर ग्राहक सेवा प्रदान करने तथा करेंसी प्रबंधन के क्षेत्र में नीति बनाने के लिए निर्णय लेने में समर्थक उपाय प्रदान करने की दृष्टि से एक समन्वित कंप्युटरीकृत करेंसी परिचालन तथा प्रबंध - प्रणाली

बाक्स IV.3

भारत में भुगतान और निपटान प्रणालियों का विकास

भारत में सबसे पहले सिक्के भुगतान के साधनों के रूप प्रयुक्त किए गए बताए जाते हैं, जो या तो पंच मार्का के होते थे या चांदी और तांबे में गढ़े जाते थे। जहाँ सिक्के भौतिक रूप से जितनी मूल्य की धातु के होते थे वे उसका ही प्रतिनिधित्व करते थे, वहीं ऋण प्रणालियों ने जिनमें विनिमय बिल होते थे, अंतर स्थानीय अंतरणों को सुविधाजनक बनाया। भारत में विकसित ऋण लिखतो में सबसे महत्वपूर्ण थी ''हुंडी''। उनका बारहवीं शताब्दी में व्यापक रूप से प्रयोग होता था। और वह आज तक जारी है। हुंडियों को या तो विप्रेषण लिखतों के रूप में (निधियों को एक स्थान से दूसरे स्थान अंतरण के लिए) या ऋण लिखतों के रूप में (उधार के लिए (आइओयू) या व्यापार लेन देन के लिए (जैसे विनिमय बिल) किया जाता था।

व्यापार और वाणिज्य की मात्रा में निरंतर आई वृद्धि होने के साथ-साथ तथा चेक आदि के प्रयोग में जनता के बढ़ते हुए विश्वास के कारण इन भुगतान लिखतों के माध्यम से लेनदेन तेजी से बढ़े। बैंक कर्मचारियों को बारंबार दूसरे बैंकों के पास जाना पड़ता था, वे चेकों और ड्राफ्टों को इक्ट्ठा करते थे, उन्हें आहर्ता बैंकों के पास प्रस्तुत करते थे तथा काउंटर पर नकदी लेते थे, जिसके रास्ते में खो जाने का डर रहता था। बैंकिंग प्रणाली के विकास के साथ-साथ, तथा चेकों की मात्रा बढ़ जाने से, एक संगठित चेक समाशोधन प्रणाली की आवश्यकता उभरी। प्रेसिडेंसी कस्बों में समाशोधन यूनियनें बनाई गईं तथा सदस्य बैंकों के बीच अंतिम निपटान प्रेसिडेंसी बैंकों पर आहरित चेकों के द्वारा किया जाता था। 1921 में इम्पीरियल बैंक की स्थापना के साथ, यह निपटान उस बैंक पर आधारित चेक द्वारा किया जाता था।

भुगतानों के निपटान के लिए साधन के रूप में जहाँ भारी रूप में नकदी का प्रयोग किया जाता था, ऐसे देश में गैर नकदी आधारित तरीके के रूप में बढ़ने की गति हालांकि क्रमिक रही है, परंतु उसकी प्रवृत्ति निश्चयात्मक रही। इनमें सबसे प्रमुख है - गैर नकदी आधारित पेपर आधारित चेक आधारित प्रणाली का उपयोग जिसमें बैंक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह सुनिश्चित करने के लिए कि जारी चेक नकदी में रूपांतरित हो जाएं, इन चेकों के निपटान की प्रक्रिया जो उस बैंक के बीच जिसके ग्राहक ने चेक जमा कराया है, और उस बैंक के बीच जिसके ऊपर चेक आहरित किया गया है, विनिमय शुरू हुआ। बैंकिंग प्रणाली के विकास तथा चेकों की मात्रा में भारी वृद्धि ने एक संगठित चेक समाशोधन प्रक्रिया की आवश्यकता को बढ़ा दिया। बैंकों द्वारा प्रेसीडेंसी शहरों में समाशोधन संघ बनाए गए। तथा सदस्य बैंकों के बीच अंतिम निपटान प्रेसीडेंसी बैंकों के ऊपर चेक काटकर किया जाता था।

कलकत्ता समाशोधन बैंक संघ, जो कि उस समय सबसे बड़ी बैंकों की एशोसिएशन थी, ने 1938 में समाशोधन गृह के नियमों को अपनाया। इस एसोसिएशन में 25 बड़े बैंक इसके सदस्य थे और 8 उप-सदस्य थे। तथापि उक्त एसोसिएशन में कलकत्ता में कार्यरत कई बैंकों को शामिल नहीं किया गया। ऐसे गैर समाशोधन सदस्य बैंकों के चेक, ड्राफ्ट आदि के समाशोधन बैंकों द्वारा प्रभारों की अदायगी पर किया जाता था। इसने उनके कारोबार को प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया, क्योंकि जनता उन बैंको के साथ अपने खाते रखना पसंद नहीं करती थी जिनके चेकों को बाजार की स्वीकार्यता के लिए गंभीर अड़चनें होती थीं। इस समस्या से निपटने के लिए इन बैंकों ने आपस में मिलकर एक समूह बनाया जिसे मेट्रोपोलिटन बैंकिंग एसोसिएशन नाम दिया गया। इसके 50 सदस्य थे,, इस समूह ने 1939 में मेट्रोपोलिटन समाशोधन गृह का संचालन किया। इस संघ ने कलकत्ता समाशोधन गृह के साथ 1940 में एक समझौता किया। इसके अलावा दो और समाशोधन गृह कलकत्ता में चलाए गए। दि पाइनियर क्लीयरिंग तथा बाक्स क्लीयरिंग। बम्बई में समाशोधन चलाने वाला एक मात्र संघ था - बोम्बे क्लीयरिंग हाऊस। इसकी कोई समानांतर प्रणालियां/संस्थाएं नहीं थीं जैसा कि कलकत्ता का मेट्रोपोलिटन समाशोधन गृह, गैर समाशोधन बैंकों के चेकों, ड्राफ्टों, लाभांश, वारंटों आदि की उगाही के लिए 1941-42 में बोम्बे समाशोधन गृह द्वारा एक समान प्रक्रियाएं एवं प्रभार अपनाए गए।

1935 में रिज़र्व बैंक की स्थापना के बाद, प्रेसीडेंसी नगरों में स्थित समाशोधन गृहों का अधिग्रहण रिज़र्व बैंक द्वारा कर लिया गया। बैंकों के चालू खाता रखने की सुविधा के फलस्वरूप रिज़र्व बैंक समाशोधन प्रक्रिया से होनेवाले निपटान पर पहुँचने का कार्य आसान बना सका। इस प्रकार केंद्रीय बैंक द्वारा उपलब्ध कराई गई सुविधा के साथ समाशोधन सुविधाओं की प्रारंभिक प्रक्रियाएं शुरू हुईं। ऐसे विभिन्न स्थानों पर जहाँ रिज़र्व बैंक का अपना कोई कार्यालय नहीं होता था, इन स्थानों पर भी समाशोधन गृहों के प्रबंधन का कार्य रिज़र्व बैंक की समीक्षाधीन हो गया।

रिज़र्व बैंक ने लगभग पांच दशकों तक परंपरागत कार्य के रूप में समाशोधन गृह के कार्य करना जारी रखा। रिज़र्व बैंक द्वारा अदा की जाने वाली विनियामक भूमिका की दृष्टि से, और चूंकि समाशोधन गृहों के सदस्य केंद्रीय बैंक द्वारा विनियमित वाणिज्यिक बैंक थे, अतः रिज़र्व बैंक ने समाशोधन कार्यों के विनियमन की भूमिका अपने ऊपर ले ली। इस संबंध में की गई कुछ पहलों में बैंकर्स समाशोधन गृहों के लिए एक समान विनियमन और नियमों को बनाना तथा बड़े - बड़े समाशोधन गृहों के माध्यम से भुगतानों के प्रवाहों की निगरानी करना शामिल है।

(**स्रोत** : भारतीय रिज़र्व बैंक (1998)।

(आइसीसी और ए एस) स्थापित करने का कार्य शुरू कर दिया है। इस परियोजना में करेंसी चेस्टों का रिज़र्व बैंक के कार्यालयों के साथ नेटवर्किंग और कंप्यूटरीकरण किया जा रहा है ताकि सुरक्षित रूप में करेंसी चेस्टों के लेन देनों को त्वरित, दक्ष और त्रुटि-रहित रिपोर्टिंग और लेखांकन को सुविधाजनक बनाया जा सकें। यह प्रणाली सभी क्षेत्रीय कार्यालयों में एक समान कंप्यूटिंग प्लेटफार्म करेंसी से संबंधित लेनदेनों के प्रसंस्करण, लेखांकन और प्रबंध-सूचना प्रणालियाँ उपलब्ध कराएगी।

4.94 भारत में मुद्रा का प्रचलन, परिमाण और मूल्य दोनों ही दृष्टि से कई गुना बढ़ गया है। 1935 में रिज़र्व बैंक की स्थापना के समय परिचालन में नोटों की संख्या लगभग 100 मिलियन नोटों की थी। 31 मार्च 2005 को परिचालन में नोटों की संख्या बढ़कर 36,985 मिलियन नोटों (मूल्य की दृष्टि से रु.3,61,229 करोड़) की हो गई। करेंसी के लिए मांग के प्रबंधन के एक भाग के रूप में रिज़र्व बैंक का यह प्रयास रहा है कि निम्न मूल्यवर्ग के नोटों का सिक्काकरण करके तथा प्रचलन में उच्च मूल्य वर्ग के नोटों की ओर सचेत रूप में बढ़कर परिचालन में नोटों की मात्रा को सीमित रखा जाए।

4.95 रिज़र्व बैंक अच्छी गुणवत्ता वाले और सुरक्षापूर्ण नोटों और सिक्कों की देश में पर्याप्त आपूर्ति करके अभीष्टतम ग्राहक सेवा सुनिश्चित करने की दृष्टि में अपने करेंसी प्रबंध संबंधी अपने परिचालन करना जारी रखे हुए है। स्वच्छ नोट जारी करने, जाली नोटों को रोकने संबंधी गहन उपाय समवर्ती उद्देश्य बने हुए हैं, साथ ही सिक्योरिटी फीचर्स के उन्नयन का कार्य करना जारी है। बुनियादी संरचना के आधुनिकीकरण के साथ-साथ बैंक संस्थाओं के परिचालनों के कंप्यूटरो में सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) की पहलों को शुरू किए जाने तथा संचार सुविधाओं में हुए उन्नयन से ग्राहकों की संतुष्टि में और सुधार आने से करेंसी प्रबंधन में चल रहे सुधारों के लिए आवश्यक परिवेश निर्मित करने की आशा है।

भुगतान और निपटान प्रणालियां

4.96 किसी भी आधुनिक समाज में भुगतान और निपटान प्रणालियाँ आर्थिक गतिविधियों की रीढ़ की हड्डी मानी जाती हैं। भारतीय अर्थ व्यवस्था की एक मुख्य विशेषता अधिकांश वित्तीय लेन देनों में अधिकांश निपटान में नकदी का व्यापक उपयोग का होना है। जहाँ कई वर्षों से यह प्रवृत्ति बनी हुई है, यह उल्लेखनीय है कि भारत ने बहुत पहले ही गैर नकदी आधारित भुगतान प्रणालियों के उपयोग की शुरुआत करने में पहल की है जो न केवल समय की कसौटी पर खरी उतरी है, बल्कि उन्होंने व्यापार और कारोबार के संचालन के लिए एक मजबूत लिखत के रूप में अपने आपको स्थापित भी किया है (बाक्स IV.3)। वैश्वीकरण की बढ़ती हुई रफ्तार तथा प्रौद्योगिकीकरण में उन्नयन द्वारा सुरक्षित, सुदृढ़ तथा दक्ष भुगतान और निपटान प्रणालियाँ सारे विश्व में बैंकों द्वारा मान्य की गई हैं। इसी संदर्भ में अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) की सुव्यवस्थित महत्वपूर्ण भुगतान प्रणालियों के लिए बुनियादी सिध्दांत महत्वपूर्ण हो गए हैं।

4.97 भुगतान और निपटान प्रणालियों की महत्ता को मानते हुए रिज़र्व बैंक ने अबसे एक दशक पहले देश के लिए एक सुरक्षित, दक्ष, उन्नत भुगतान और निपटान प्रणाली स्थापित करने का कार्य अपने ऊपर लिया था। चूंकि समाशोधन परिचालन दक्ष भुगतान और निपटान प्रणालियों के केंद्र बिंदु में हैं, अतः इन प्रणालियों पर मुख्य ध्यान दिया गया। विद्यमान प्रणालियों को सुधारने के उद्देश्य से सुधारों में मुख्य प्रेरक कारक था - प्रौद्योगिकी। प्रौद्योगिकीय गतिविधियों के साथ जिनका बैंकिंग क्षेत्र पर महत्वपूर्ण प्रभाव था, सुधारों की प्रक्रिया को तेज कर दिया गया जिससे अत्याधुनिक भुगतान और निपटान प्रणालियों में उपयोग के लिए प्रौद्योगिकी द्वारा बढ़ावा मिला। हाल ही की गतावधि में रिज़र्व बैंक भुगतान और निपटान प्रणालियों के क्षेत्र में सुधारों पर जोर देता रहा है। रिज़र्व बैंक के प्रयास बीआइएस के (ऊपर वर्णित) बुनियादी सिद्धान्तों के पूर्ण अनुपालन को सुनिश्चित करने पर रहा है। और उनमें से एक प्रयास का उद्देश्य जोखिमों को कम करने-विशेषकर निपटान और प्रणालीगत जोखिमों को घटाने के लिए तत्काल सकल निपटान प्रणाली (आरटीजीएस) की शुरुआत करने का रहा है।

4.98 रिजर्व बैंक की प्रमुख चिंताएं जोखिम प्रबंध तथा जोखिम को कम करने से संबंधित हैं। विशेषकर प्रणालीगत जोखिमों से ये ऐसे जोखिम हैं जो किसी भुगतान और निपटान प्रणाली के समूह के सभी सहभागियों पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकते हैं। इसी उद्देश्य से तत्काल सकल निपटान प्रणाली (आरटीजीएस) की आयोजना की गई जो कि अब वास्तविकता बन गई है। अपने वर्तमान स्वरूप में यह प्रणाली सभी अंतरबैंक लेनदेनों की संभाल लेगी तथा इसमें अभी जल्दी ही कुछ और फीचर्स जोड़े जाने हैं। बैंक एक ऐसी प्रणाली का उपयोग करने के लिए प्रस्तुत हो गए हैं जो नवीनतम प्रौद्योगिकी का प्रयोग करती है और काफी सीमा तक नेट-वर्क आधारित सूचना के प्रवाह पर निर्भर करती है।

4.99 यह देखते हुए कि वित्तीय क्षेत्र ने रिज़र्व की पहलों के प्रति सकारात्मक प्रतिक्रिया की है और बैंकिंग क्षेत्र भी समय के साथ कदम बढ़ा रहा है, अब रिज़र्व बैंक ने ऐसेही नीतिगत निर्णय लिए हैं कि वह खुद भुगतान और निपटान प्रणालियों के वास्तविक प्रबंधन से अलग निकल रहा है। इस प्रकार अबसे कुछ वर्षों के लिए नए माइकर आधारित चेक प्रसंस्करण केंद्रों की स्थापना करने का कार्य वाणिज्यिक बैंकों को सौंप दिया गया है। इस दृष्टिकोण के अच्छे परिणाम आए हैं और रिज़र्व बैंक अब ऐसे सामान्य प्रसंस्करण कार्यों की परिकल्पना करने लगा है जिनका प्रबन्धन और परिचालन पेशेवर संगठनों द्वारा किया जाएगा जिनका गठन बैंकों की सहभागिता से किया जा सकेगा। यह समाशोधन गृहों पर भी लागू होगा,

जो समाशोधन गतिविधियां करेंगे, परंतु निपटान का कार्य रिज़र्व बैंक के पास ही बना रहेगा जो यह सुनिश्चित करेगा कि यह निपटान केंद्रीय बैंक की मुद्रा में किया जाए जैसा कि बीआइएस के बुनियादी सिद्धांतों (ऊपर उद्धृत) के अनुसार अपेक्षित है, इसके साथ रिज़र्व बैंक ऐसे कार्यों पर विनियामक निगरानी रखना जारी रखेगा, जबकि वह स्वयं सेवा प्रदाता के रूप में कार्य नहीं करेगा। इसका अपवाद होगा, आर टी जी एस जो इसकी प्रणालीगत महत्त्व के कारण सारे विश्व में केंद्रीय बैंक के पास रखा गया है। आरटीजीएस, जो सभी सहभागियों को इलैक्ट्रॉनिक तरीके से कम जोखिम के साथ निधियों का अंतरण सुलभ कराता है, का परिचालन रिज़र्व बैंक द्वारा किया जायेगा। इस प्रणाली को प्रणालीगत दक्षता को सुनिश्चित करने के अलावा मौद्रिक नीति के सिद्धांत के भी अनुकूल बनाया जाएगा।

सूचना प्रौद्योगिकी

4.100 सूचना प्रौद्योगिकी ने सारे विश्व में कारोबारों के कार्य कलापों का रूपांतरण कर दिया है। इसने प्रणालियों की पहुँच और व्याप्तियों के बीच के अंतराल को पाट दिया है तथा उन्हें नवीनतम तथा सही सूचना के आधार पर बेहतर निर्णय लेने में समर्थ बना दिया है। उनकी लागत को कम कर दिया है तथा दक्षता में समग्र सुधार ला दिया है। भारतीय संदर्भ में, वित्तीय क्षेत्र विशेषकर बैंकिंग क्षेत्र सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा बनाई गई राह का प्रमुख हिताधिकारी रहा है।बैंकों और अन्य वित्तीय मध्यस्थक संस्थाओं द्वारा उपलब्ध कराए जा रहे उत्पादों एवं सेवाओं के केंद्र में सूचना प्रौद्योगिकी है। प्रौद्योगिकी का प्रभावी समेकन तथा सुदृढ़ कारोबारी प्रथाएं (संव्यवहार) कारोबारी प्रसंस्करण के पुनर्विन्यास की अपेक्षा रखती हैं तथा भारत में बैंकों को इस संबंध में की गई शुरुआत का अनुसरण करने की आवश्यकता है, ग्राहकों को अपेक्षाकृत नवीन सुपुर्दगी सरणियाँ - ओटोमेटिड टेलर मशीन (एटीएम) तथा अंशदायी (शेयर्ड) पेमेंट नेटवर्क के रूप में एटीएम की नेट वर्किंग, इन्टरनेट बैंकिंग तथा अधिकांश बैंकों द्वारा कोर बैंकिंग सोल्यूशन को लागू करना कुछ ऐसे ही उदाहरण हैं।

4.101 बैंकिंग क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के कार्यान्वयन में रिजर्व बैंक ने सक्रिय भूमिका निभाई है। सूचना प्रौद्योगिकी आधारित पहल तीन दूरगामी उद्देश्यों को पूरा करने पर ध्यान केंद्रित करेंगी-वे हैं- बेहतर हाउस कीपिंग, बेहतर ग्राहक सेवा, तथा समग्र प्रणालीगत दक्षता। रिज़र्व बैंक के अंदर 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक प्रयासों का उद्देश्य - गतिविधियों के यंत्रीकरण को 1995 के बाद के दशक के दौरान परिचालनों के महत्वपूर्ण क्षेत्रों के कंप्यूटरीकरण के रूप में फैला दिया गया।रिज़र्व बैंक ने वित्तीय क्षेत्र के लिए प्रौद्योगिक बिज़न दस्तावेज तैयार किया है जिसमें लगभग तीन वर्षों की मध्यम अवधि के दौरान सूचना प्रौद्योगिकी को लागू करने के लिए दृष्टिकोणगत रूपरेखा बनाई गई है। यह दस्तावेज बैंकों को अपनी आईटी योजनाओं को रिज़र्व बैंक द्वारा परिकल्पित बैंकिंग क्षेत्र के लिए समग्र दृष्टिकोण के अनुरूप बनाने में सहायता करेगा।

4.102 हाल के वर्षों में रिज़र्व बैंक में जैनेटिक आर्किटेक्चर का अनुसरण करने वाली व्यापक प्रणालियां स्थापित करने तथा भारत में भुगतान और निपटान प्रणालियों की दक्षता बढ़ाने पर नए सिरे से बल दिया जाने लगा है। इसमें भुगतान और निपटान प्रणालियों के विनियमन और पर्यवेक्षण के लिए संस्थागत ढ़ांचे को सुदृढ करने को प्राथमिकता दी जा रही है। इस पहल के एक भाग के रूप में, रिज़र्व बैंक ने अपने केंद्रीय बोर्ड की एक समिति के रूप में भुगतान एवं निपटान प्रणाली विनियमन एवं पर्यवेक्षण बोर्ड (वीपीएसएस) का गठन किया है। इस बीपीएसएस के कार्यों और शक्तियों में सभी प्रकार की भुगतान और निपटान प्रणालियों के लिए मानक स्थापित करना, भुगतान और निपटान प्रणालियों को प्राधिकृत करना तथा इन प्रणालियों की लिए सदस्यता के लिए पात्रता मानदंड निर्धारित करना शामिल है। रिज़र्व बैंक में भुगतान और निपटान प्रणाली विभाग (डीपीएसएस) के नाम से एक नए विभाग का भी गठन किया गया है। 1999 से कार्यरत राष्ट्रीय भुगतान परिषद ने बीपीएसएस की तकनीकी परामर्श समिति की मान्यता प्राप्त कर ली है। इस विज़न दस्तावेज में दिए गए निदेश मध्यावधि में भुगतान प्रणालियों को चुस्त - दुरुस्त और उन्नत बनाने में भी पथ का निर्माण करेंगे।

विनियमन और पर्यवेक्षण

4.103 वित्तीय क्षेत्रो में भारी मात्रा में विस्तार वित्तीय उत्पादों में प्रौद्योगिकी-समर्थ नवोन्मेष तथा वैश्विक समेकन की बढ़ती गहनता के संदर्भ में हाल के वर्षो में वित्तीय प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित किया गया है। वित्तीय प्रणाली में बैंकों की कार्यनीतिगत महत्ता ने केंद्रीय बैंकों के लिए, जो कि ऐतिहासिक रूप से अंतिम उधारदाता तथा बैंकिंग प्रणाली का पर्यवेक्षक है, यह आवश्यक बना दिया है कि वह एक व्यापक आर्थिक महत्वपूर्ण उद्देश्य के रूप में वित्तीय स्थिरता को बनाए रखने के लिए कार्य करे। हालांकि भारत में वित्तीय प्रणाली के अलग-अलग घटकों की कार्य - प्रणाली की निगरानी करने के अलग-अलग संस्थाएं (जैसे सेबी,इर्डा) हैं। पर्यवेक्षण और विनियामक ढांचे का पुनर्विन्यास करने के लिए तथा इन्हें अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों के अनुरूप बनाने के लिए तथा साथ ही, बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा से निपटने के लिए वित्तीय संस्थाओं को पर्याप्त लचीलापन प्रदान करने के लिए तथा प्रौद्योगिकीय उन्नयन के फलस्वरूप उभरे कारोबारी अवसरों का लाभ उठाने के लिए रिज़र्व बैंक ने अनेक पहलें की हैं।

4.104 बैंकिंग प्रणाली की ताकत को सुधारने तथा पर्यवेक्षण प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए नरसिंहम समिति II ने अनेक सिफारिशों (पूंजी पर्याप्तता, आस्तिगुणवत्ता, गैर निष्पादक आस्तियों के संबंध में) की

हैं। उक्त समिति ने यह देखा कि शिखर बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी कार्यों को अलग-अलग करने के लिए रिज़र्व बैंक के वित्तीय पर्यवेक्षी बोर्ड (बीएफएस) के लिए स्वायत्त हैसियत पर विचार किया जाना चाहिए। उक्त समिति ने बीएफएस की पुनर्संरचना के लिए तथा वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण बोर्ड (बीएफआरएस) के गठन के लिए विशेष सिफारिशों की हैं। समिति ने ये भी सिफारिशें की थीं कि विनियामक तथा पर्यवेक्षी प्राधिकारियों को इस क्षेत्र में अन्यत्र हो रही गतिविधियों को ध्यान में रखना चाहिए ताकि प्रभावी विनियामक मानदंड बनाए जा सकें तथा भारत की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उन्हें यहाँ लागू करना चाहिए परंतु, किसी भी रूप में इन मानदंडों की कठोरता को हल्का नहीं करना चाहिए ताकि ये निर्धारण विदेशों के सर्वोत्तम संव्यवहारों के समान हों। उक्त समिति ने बैंकिंग क्षेत्र की विधियों की समीक्षा की आवश्यकता को रेखांकित किया था, जैसे भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, बैंककारी विनियमन अधिनियम, राष्ट्रीकरण अधिनियम तथा भारतीय स्टेट बैंक अधिनियम उक्त समिति द्वारा की गई सिफारिशों को प्रगामीरूप से लागू किया जा रहा है।

4.105 नरसिंहम समिति ।। और अभी हाल ही की बेसिल ।। सिफारिशों का अनुसरण करते हुए रिज़र्व बैंक ने देश में एक सुदृढ, दक्ष और ऊर्जस्वित वित्तीय प्रणाली सुनिश्चित करने की दृष्टि से अपने विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे को सुदृढ करने के लिए अनेक उपाय किए हैं। गैर निष्पादक आपत्तियों (एनपीए) के स्तर सीमित करने के उपायों में बैकों और वित्तीय संस्थाओं के बकाया ऋण शीघ्र अधिनिर्णय तथा उनको वसूली के लिए ऋण वसूली न्यायाधिकरणों, लोक अदालत (जनता के दरबार) तथा आस्ति पुनर्निमाण कंपनियां तथा कंपनी ऋण पुनर्विन्यास प्रणाली-तंत्र की स्थापना शामिल है। संस्थाएं और बाजार सूचना के आधार पर लिए गए निर्णयों के अनुसार कार्य करें, यह सुनिश्चित करने के लिए रिज़र्व बैंक ने बैंकों को अपनी वित्तीय स्थिति के संबंध में पारदर्शिता और प्रकटीकरण के स्तर को बढ़ाने के लिए मार्गदर्शी दिशा निदेश जारी किए हैं। (भारिबैं 2005)।

4.106 हाल के वर्षों में केंद्रीय बैंक अपना ध्यान अधिकाधिक रूप में न केवल अलग-अलग बैंकों पर, बल्कि वित्तीय स्थिरता के मुद्दों पर भी केंद्रित कर रहे हैं। बैंकों की अपनी विशिष्ट विशिष्टताओं को देखते हुए, गैर वित्तीय फर्मों की तुलना में बैंकों पर अधिक गहन विनियमन लागू हैं। जनता की जमा राशियां जुटाने की अपनी क्षमता के कारण बैंक अन्य फर्मों की अपेक्षा अधिक शक्ति संपन्न हैं। बैंकों की आस्ति देयता संरचना अन्य वित्तीय फर्मों से भिन्न है। जमा राशियां जो बैंकों की देयताओं का काफी बड़ा भाग होता है, मांग पर प्रतिदेय हैं, गैर जमानती हैं तथा उनके मूल धन का मूल्य नहीं बदलता है, जबकि किसी बैंक के ऋण तरल नहीं है, तथा ऋणों तथा अन्य आस्तियों के मूल्य में क्षरण हो सकता है।

4.107 यह अनुभव करते हुए कि परंपरागत पर्यवेक्षी संव्यवहार (प्रथाएं) उन्नत जोखिम प्रबंध तकनीकों के मुकाबले बासी पड़ गए हैं, बैंक विनियमन उत्तरोत्तर रूप से जोखिम - आधारित होता जा रहा है। पूंजी के मापन तथा पूंजी मानकों के अंतरराष्ट्रीय एकाभिमुखीकरण : एक संशोधित ढांचे (जो बासल ।। के नाम से प्रसिद्ध है) ने विनियमन और जोखिम प्रबंधन को केंद्र-बिंदु में रख दिया है। बासल-।। तीन स्तंभों पर खड़ा है: न्यूनतम पूंजीगत अपेक्षाएं; पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रिया तथा बाजार अनुशासन। भारत ने यह निर्णय लिया है कि सभी वाणिज्यिक बैंक बासल-।। के मानदंडों को अनुपालन करेंगे: जिसमें न्यूनतम स्तंभ 1 के अंतर्गत ऋण जोखिम के लिए मानकीकृत दृष्टिकोण तथा परिचालन गत जोखिम के लिए बुनियादी संकेतक दृष्टिकोण को 31 मार्च 2007 से अपनाया जाएगा। जहाँ तक पर्यवेक्षी समीक्षा प्रक्रिया (स्तंभ।।) का संबंध है, पर्यवेक्षकों की भूमिका यह आकलन करने की है, कि क्या बैंक अपने जोखिमों के संबध में अपनी पूंजीगत अपेक्षाओं का उचित रूप से अनुमान लगा रहे हैं या नहीं और यदि आवश्यक हो तो पर्यवेक्षक उच्चतर पूंजी गत अपेक्षाएं बनाए रखने के लिए निर्णय देते हुए हस्तक्षेप कर सकते हैं। जहाँ तक स्तंभ 3 का संबंध है रिज़र्व बैंक बैंकों को सूचित करता रहा है कि वे बाजार अनुशासन को बनाए रखने के लिए प्रकटीकरण करें।

4.108 बासल ।। के अनुपालन के लिए प्रारंभ में भारत में बैंकों के लिए और अधिक पूंजी की आवश्यकता होगी। वह इस तथ्य के कारण है कि बासल 1 के अंतर्गत परिचालनगत जोखिम को ध्यान में नहीं रखा गया था तथा बाजारगत जोखिम के लिए पूंजीगत प्रकार का अभी हाल ही तक निर्धारण नहीं किया गया था। चूंकि वाणिज्यिक बैंक मार्च 2007 की समाप्ति से बासल ।। मानदंडों का अनुपालन शुरू करनेवाले हैं, तो इनकें अनुपालन में रह गई कमियों को पहचानने के लिए तथा अतिरिक्त पूंजी की आवश्यकता का अनुमान लगाने तथा उसकी मात्रा निश्चित करने के लिए, जिसे कि इन बैंकों को बनाए रखना है, रिज़र्व बैंक पर्यवेक्षण - क्षमता निर्माण के उपायों पर ध्यान केंद्रित करेगा। अंततः भावी बैंकिंग के लिए समेकन, प्रतिस्पर्धा और जोखिम प्रबंधन के महत्व को मानते हुए रिज़र्व बैंक बेहतर कंपनी संचालन और वित्तीय समावेश पर बल देना जारी रखेगा।

IV. सम सामयिक मुद्दे

4.109 पिछले तीन वर्णनात्मक भागों में 1935 से लेकर अब तक की अवधि में केंद्रीय बैंक के कार्यों में उल्लेखनीय विस्तार तथा रूपांतरण के बारे में बताया गया है। वित्तीय संस्थाओं और बाजारों के विकास के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा की गई पहलें अर्थव्यवस्था की, विशेषकर वित्तीय क्षेत्र की, संरचानागत विशेषताओं तथा उभरती हुई परिस्थितियों में रिज़र्व बैंक के प्रतिसाद को भी दर्शाती है। तथापि, मौद्रिक नीति किसी भी केंद्रीय बैंक की तरह रिज़र्व बैंक की केंद्रीय गतिविधि रही है। अनेक मुद्दे -

सारणी 4.1 : चुनिंदा देशों में मौद्रिक ढांचे की विशेषताओं के लिए संक्षिप्त अंक

(अधिकतम का प्रतिशत)

देश	विशिष्ट उद्देश्यों पर अल्प और मध्यावधिक नीतिगतबल				संस्थागत विशेधताएं			मौद्रिक विश्लेषण के विभिन्न प्रकार के उपयोग और महत्व			संरचनागत विशेषताएं
	विदेशी मुद्रा विनिमय दर पर बल	मुद्रा पर बल	मुद्रा स्फीति पर बल	स्व-विवेक*	स्वतंत्र	केंद्रीय बैंक की सरकार के प्रति जवाबदेही	नीति संबंधी स्पष्टीकरण	मुद्रा स्थिति की सम्भावनाएं	मॉडलों और पूर्वानुमानों का प्रयोग करते हुए विश्लेषण	मुद्रा और बैंकिंग क्षेत्र के विश्लेषण का महत्व	लिखतों का निर्धारण करने में वित्तीय स्थिरता संबंधी मुद्दों का महत्व
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
बांगला देश	31	75	44	63	56	83	39	25	6	56	17
चीन	25	88	31	41	68	100	63	83	72	78	33
भारत	6	50	44	75	83	67	75	0	11	89	67
इंडोनोशिया	6	63	50	66	56	83	83	50	100	89	83
मलेशिया	38	0	44	75	85	83	71	67	17	56	67
श्रीलंका	6	19	19	94	54	58	48	17	11	56	33
थाईलैंड	6	6	31	75	82	50	67	0	83	67	83
जर्मनी	13	88	19	28	96	17	70	50	56	56	33
जापान	0	0	50	50	93	…	89	75	72	78	50
कोरिया	6	75	63	59	73	83	88	17	78	100	58
स्वीडन	13	0	100	6	97	83	95	100	78	33	42
स्विटजरलैंड	19	75	19	44	90	17	86	33	50	56	8
यू के	0	0	100	0	77	100	94	100	94	56	16
यू एस ए	0	25	19	84	92	83	95	83	89	33	33

* यह विवेक केवल विनिमय दर को लक्ष्यित करने, मुद्रा को लक्ष्य बद्ध करने तथा मुद्रा स्फीति को लक्ष्यित करने पर निर्भर करता है। इस विवेक की गणनों इन अंकों के अधिनिकतम को दुगना करके इसमें से अन्य दो को घटाकर निकाला जाएगा। फिर इसे जीरो से 100 के बीच एक इन्डेंस में बदल दिया जाता है। जहाँ उच्च अंक का अर्थ होगा अधिक विवेक।

स्रोत : फ्राइ आदि (2000)

पारदर्शिता, नीतिगत बल, तथा केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता - ये ऐसे विषय रहे हैं जिनपर सघन चर्चा हुई है। विशेषकर अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों को ही अपनाने के मुद्दे पर । इसी से संबंधित प्रश्न यह है कि एक स्पष्ट उद्देश्य के रूप में वित्तीय स्थिरता को प्राप्त करने का प्रयास मौद्रिक नीति के प्रबंधन को कम कर देती है (नाचने, 2005)। यह उल्लेखनीय है कि ये मुद्दे परस्पर संबद्ध हैं। पारदर्शिता केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता के साथ-साथ चलती है। यदि मौद्रिक नीति के निर्णय स्वतंत्र रूप से लिए जाने हैं तो आम जनता तथा विधानपालिका के लिए इसका औचित्य स्पष्ट नीतिगत उद्देश्यों की घोषणा मौद्रिक नीति के निर्माण में पारदर्शिता का एक महत्वपूर्ण अंग है तथा रिज़र्व बैंक की परिचलनगत स्वायत्तता पारदर्शिता की ओर बढ़ने की पूर्व-शर्त के रूप में देखी जाती है।

4.110 विश्व के परिवेश में भारत के मौद्रिक ढांचे की तुलना करना ठीक होगा। भारतीय संदर्भ में, विशिष्ट रूप से अल्पावधिक और मध्यावधिक मौद्रिक के प्रमुख उद्देश्यों (विनिमय दर पर ध्यान केंद्रित करना हो या मुद्रा पर ध्यान देना या मुद्रा स्थिति को लक्ष्यित करना) के मुकाबले विवेक या सावधानी को उच्चतर महत्व प्राप्त होता है। केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता को जबावदेही और पारदर्शिता के मुकाबले अधिक महत्व प्राप्त होता है। वस्तुतः स्वायत्तता पर जोर अधिकांश देशों में केंद्रीय बैंकों के मौद्रिक ढांचे में सर्वोच्च स्थान प्राप्त होता है। हालांकि अनेक विकासशील अर्थ व्यवस्थाओं में स्वतंत्रता के मुकाबले सरकार के प्रति जबावदेही ऊपर रहती है। वित्तीय स्थिरता के मुद्दे को भारत में उच्च स्थान प्राप्त है जो कि संकट से प्रभावित एशियाई अर्थव्यवस्थाओं (इंडोनेशिया, कोरिया, मलेशिया तथा थाईलैंड) से तुलनीय है। नीति विश्लेषण के मामले में भारत का ध्यान मुद्रा और बैंकिंग पर केंद्रित रहा है। मुद्रा स्थितिगत संभावनाओं के विश्लेषण के क्षेत्रों में तथा माडलों और पूर्व - अनुमानों के क्षेत्र में भारत की स्थिति की तुलना अबांछनीय है (सारणी 4.1)।

मौद्रिक नीति के निर्माण में पारदर्शिता

4.111 केंद्रीय बैंकिंग का नीति निर्माण संबंधी परंपरागत दृष्टिकोण 'गोपनीयता' का रहा है या ''अप्रत्याशित मौद्रिक नीति'' कठोरतापूर्वक विनियमित प्रणाली में प्रासंगिक थी जहाँ वित्तीय बाजार दिशा निदेशों के लिए केंद्रीय बैंकों की ओर देखा करते थे और केंद्रीय बैंकों को सरकार के हाथ माना जाता था । केंद्रीय बैंक जनता के प्रति जवाब देह नहीं होते थे। मुक्त उद्यमी बाजारों के संदर्भ में यह उत्तरोत्तर रूप में स्वीकार किया जा रहा है कि वित्तीय संस्थान तर्कसम्मत निर्णय लेने में तभी समर्थ होंगे जब उनके पास नीतियों की पूरी पृष्ठभूमि उपलब्ध होगी। इस प्रकार पारदर्शिता

को न केवल बेहतर कंपनी संचालन के एक पहलू के रूप में, बल्कि वित्तीय संस्थाओं की सुदृढता की पूर्व-शर्त के रूप में भी देखा जा रहा है। इस संबंध में विचारों की बढ़ती हुई एकाभिमुखता को देखते हुए, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने सदस्य देशों को मौद्रिक और वित्तीय नीतियों में पारदर्शिता या अच्छे संव्यवहार की एक संहिता को अपनाने की सिफारिश की है (सितंबर 1999)। अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष की संहिता के अनुसार प्रभावी पारदर्शिता मौद्रिक और वित्तीय नीतियों पर पर्याप्त सूचना जारी किए जाने मात्र से अधिक अपेक्षा करती है - इसमें भूमिकाओं की स्पष्टता, केंद्रीय बैंकों के उत्तरदायित्व तथा उद्देश्य तथा इसकी नीतिगत कार्रवाई के पीछे विश्लेषणात्मक आधारों की अंतर्दृष्टि भी शामिल है।

4.112 इस पृष्ठभूमि में रिज़र्व बैंक ने अंतरराष्ट्रीय वित्तीय मानकों और संहिता संबंधी स्थायी समिति तथा विशिष्ट पहलुओं की जांच करने के लिए अनेक परामर्शी दल गठित किए। मौद्रिक और वित्तीय नीतियों में पारदर्शिता पर बने परामर्शी दल (अध्यक्ष : एम. नरसिंहम) ने भारत में मौद्रिक और वित्तीय नीतियों की पारदर्शिता की वर्तमान स्थिति का बारीकी से मूल्यांकन किया तथा उन क्षेत्रों की पहचान की जहाँ सुधार की आवश्यकता थी। एक अधिक पारदर्शी प्रणाली की ओर बढ़ने के प्रयास के साथ परामर्शी दल ने पाया कि यह सबसे अच्छा होगा यदि रिज़र्व बैंक को केवल एक ही उद्देश्य दिया जाए ,जबकि सरकार अपने लिए ऐसे उद्देश्यों के समूह का स्पष्ट निर्धारण करे जिसके लिए वह नीति के अपने अन्य लिखतों का उपयोग कर सके, इस तथ्य को मानते हुए कि पारदर्शिता विधायी ढांचे के साथ जटिलतापूर्वक जुड़ी हुई है। अतः इसने मौद्रिक नीति के उद्देश्यों पर और अधिक बल देने तथा वैधानिक संशोधनों द्वारा रिज़र्व बैंक अधिनियम में संशोधन करने की जरूरत को रेखांकित किया। इस परामर्शी दल की सिफारिशों में निम्नलिखित शामिल हैं: ऋण प्रबंधन तथा मौद्रिक नीति संबंधी कार्यों को अलग-अलग करना ताकि रिज़र्व बैंक को मौद्रिक नीति के परिचालन के लिए पृथक रूपसे चिंतन का अवसर (हेडरूम) मिल सके, भा.रि.बैंक के केंद्रीय बोर्ड की समिति के रूप में एक मौद्रिक नीति समिति (एमपीसी) की स्थापना करना; तथा रिजर्व बैंक को मौद्रिक नीति के लिए एकल उद्देश्य देना अर्थात् : मुद्रास्फीति की दर और फिर रिज़र्व बैंक को असीमित लिखतों की आजादी देना।

4.113 भाग ।।। में अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों को विकसित करने तथा अपनाने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए उपायों के बारे में उल्लेख किया गया है। यहाँ यह जोड़ा जा सकता है कि शिक्षाविदों और बाजार के विशेषज्ञों को लेकर, जो विभिन्न नीतिगत मुद्दों पर विचार कर सकें एक व्यापक सहभागिता के साथ कार्य दल और समितियां स्थापित करके रिज़र्व बैंक एक परामर्शी दृष्टिकोण अपना रहा है। रिपोर्टों के मसौदो को अक्सर जनता की और विशेषकर उद्योग संघों तथा स्वतः विनियामक निकायों की राय जानने के लिए सार्वजनिक डोमेन में रखा जाता है। अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों के अनुरूप तथा मौद्रिक नीति के निर्माण में परामर्शी प्रक्रिया को सुदृढ़ करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक ने जुलाई 2005 में, मौद्रिक नीति पर एक तकनीकी परामर्शी समिति (टीएसीएपी) गठित की, जिसमें मौद्रिक अर्थशास्त्र, केंद्रीय बैंकिंग, वित्तीय बाजारों और सार्वजनिक वित्त के क्षेत्रों के विशेषज्ञ शमिल किए गए। उक्त समिति व्यापक आर्थिक तथा मौद्रिक गतिविधियों की समीक्षा करने तथा मौद्रिक नीति के मुद्दों पर रिज़र्व बैंक को परामर्श देने के लिए कम से कम तिमाही में एक बार अवश्य मिलेगी। टीएसीएपी के विचारों पर रिज़र्व बैंक के केंद्रीय बोर्ड की समिति में उसके बाद होने वाली बैठक में चर्चा की जाएगी। मौद्रिक नीति के निर्माण से ऋण प्रबंधन को अलग करने की दिशा में दो पहलुओं - सरकारी ऋण बाजार को सुदृढ करने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा की गई पहलें (जिनको विस्तार से भाग III में दर्शाया गया है।) तथा रिज़र्व बैंक में जुलाई 2005 में वित्तीय बाजार विभाग के नाम से एक अलग विभाग की स्थापना उल्लेखनीय है।

नियम बनाम विवेक

4.114 मौद्रिक प्रबंध के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण मुद्दा नीतिगत बल अर्थात विशिष्ट अल्पावधिक और मध्यावधिक नीतिसंबंधी मुख्य उद्देश्यों की घोषणा से संबंधित है। 1990 के बाद के दशक से स्पष्ट लक्ष्यों को अपनाया है (फ्राई आदि 2000)। तथापि भारत में, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, ''बहु संकेतक दृष्टिकोण'' का अनुसरण किया जा रहा है इस संबंध में मौद्रिक और वित्तीय नीतियों में पारदर्शिता संबंधी समूह (ऊपर उल्लिखित) ने यह राय दी है : ''बहु उद्देश्यीय दृष्टिकोण'' में भारी सुविधा यह है कि इस सुस्पष्टता में उद्देश्यों को पारिभाषित करने की अपेक्षा नहीं होती और इसके परिणाम-स्वरूप रिज़र्व बैंक की काफी जबाबदारी नहीं होती है, क्योंकि इसे विरोधी उद्देश्यों को पूरा करने का लगभग असंभव-सा कार्य करने की बाजीगरी करनी पड़ती है और इस प्रकार जबाबदेही धूमिल हो जाती है (भा.रि.बैं.2000)।

4.115 क्या विवेक पर बल देना या बहु संकेतक दृष्टिकोण बनाम एकल उद्देश्य के प्रति वैश्विक एकाभिमुखता अप्रासंगिक है? ऐतिहासिक दृष्टि से देखें तो भारत में मौद्रिक नीति का जोर विशिष्ट परिस्थितियों से प्रेषित होता रहा है, कभी-कभी यह विद्यमान समझ बूझ (विवेक) से हटा भी है (भाग ।)। वर्तमान मामले में विवेक पर जोर देना कई कारकों को दर्शाता है। मूर्त स्तर पर, केंद्रीय बैंकों की नीति संबंधी लिखतों के उपयोग में विवेकाधिकार का प्रयोग करने को वरीयता देना निम्नलिखित तर्क पर आधारित है। नई सूचना का निरंतर आगमन तथा अर्थव्यवस्था की चालू स्थिति के बारे में आधार-स्तर की सूचना में अपेक्षा निर्णय की प्रक्रिया का जुड़ाव रुढ़िवादी नियमों को - जो कि पुरानी सूचना या अमूर्त परिकल्पना पर आधारित है, लागू (क्रियान्वित) करना उभरती हुई समस्याओं से

बाक्स IV.4

भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) विधेयक, 2005

केंद्रीय वित्तमंत्री ने फरवरी 2000 में अपने बजट भाषण में यह राय व्यक्त की थी कि आधुनिक वित्त के तेजी से बदलते विश्व ने यह आवश्यक बना दिया गया है कि मौद्रिक नीति के संचालन में तथा वित्तीय प्रणाली के विनियमन में रिज़र्व बैंक को महत्तर परिचालनात्मक नमनीयता प्रदान की जाए और यह कि संबंधित विधान के संशोधन के लिए संसद के समक्ष प्रस्ताव लाने के उसकी मंशा है। लोकसभा में प्रस्तुत भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) विधेयक 2005 का उद्देश्य है - इस समय प्रचलित वित्तीय लिखतों से अधिक प्रकार की वित्तीय लिखतों का उपयोग करने तथा नकदी प्रारक्षित अनुपात निर्धारित करने की अधिक नमनीयता प्रदान करने वाली शक्तियां प्रदान करना। भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) विधेयक के प्रमुख प्रावधान निम्न लिखित हैं -

उक्त बिल में अधिनियम की धारा 17 में अनुच्छेद 6 को जोड़कर तथा केंद्रीय बोर्ड की अनुमति से किसी अन्य वित्तीय लिखत में व्युत्पन्नी लिखतों (डेरिवेटिब्स)' लेनदेन करने की अनुमति देने का प्रस्ताव किया गया है। इसमें उन व्युत्पन्नी लिखतों को विनिर्दिष्ट करने का प्रयास किया गया है जिनमें रिज़र्व बैंक की शक्तियां सीमित न कर दी जाएं जैसा कि उन व्युत्पन्नी लिखतों के मामले में है जिनपर इसको विनियामक शक्तियां प्राप्त हैं। रिज़र्व बैंक द्वारा चलनिधि प्रावधान के लिए रेपो और रिवर्स रेपो के प्रयोग के बारे में भ्रम को दूर करने के लिए यह प्रस्ताव किया गया है कि रिज़र्व बैंक को प्रतिभूतियों को, चाहे वे केंद्र सरकार की हो, या राज्य सरकारों अथवा किसी स्थानीय प्राधिकरण की या विदेशी प्रतिभूतियां हो, उधार देने या लेने के लिए विशेष रूप से प्राधिकृत किया जाए। यह प्रस्ताव किया गया है कि अनुच्छेद (12 कक) जोड़कर केंद्र सरकार अथवा किसी राज्य सरकार अथवा किसी ऐसे स्थानीय प्रधिकरणों की, जैसा कि इसमें केंद्र सरकार की ओर से विनिर्दिष्ट किया जाए, अथवा विदेशी प्रतिभूतियों को उधार लेने या देने की अनुमति दी जाए। तथा अनुच्छेद (12 कख) रेपो और रिवर्स रेपो लेनदेनों से संबंधित है।

उक्त विधेयक में एक नया अध्याय IIIद जोड़ने का प्रस्ताव किया गया है, जिसमें संकल्पनाओं (डेरिवेटिब्स, रेपो, रिवर्स रेपो) की परिभाषाएं तथा मौद्रिक बाजार को विनियमित करने में रिज़र्व बैंक की शक्तियों को शामिल किया गया है। रिज़र्व बैंक को मेहत्तर परिचालनगत नमनीयता प्रदान करने के लिए विधेयक में भा.रि.बैं. अधिनियम की धारा 42 के अंतर्गत नक़दी प्रारक्षित अनुपात (सीआरआर) की न्यूनतम तथा अधिकतम सीमाओं को हटाने का प्रस्ताव किया गया है। इसके अलावा, यह प्रस्ताव किया गया है कि बैंकों द्वारा रखी गई अतिरिक्त सीआरआर पर बैंकों को ब्याज के भुगतान का प्रावधान हटा दिया जाए क्योंकि यह मौद्रिक नीति के एक साधन के रूप में सीआर आर की प्रभावशीलता को घटा देता है।

निपटने के लिए अप्रभावी बना देता है। (वासुदेव 2003)। स्पष्ट मुद्रा की स्थिति गत लक्ष्य जैसे एकल उद्देश्य को लेकर चलने में और भी अनेक व्यावहारिक कठिनाइयाँ हैं। संरचनागत कारक और आपूर्तिगत आवात ये दोनों ही अर्थव्यवस्था के अंदर और बाहर से मुद्रा स्थिति को मौद्रिक और गैर मौद्रिक कारकों पर निर्भर बना देते हैं। मुद्रा स्थिति को लक्ष्य-बद्ध करने के लिए, मुद्रा स्फीति के पूर्णतः विश्वसनीय (निर्भर करने योग्य) उपाय को विकसित करने की जरूरत है। औद्योगिक विशेषताओं के चलते राजकोषीय प्रमुख के निरंतर बने रहने के कारण) यह व्याज-दरों को संभालते-संभालते ऋण-प्रबंधन के कार्य को अनिवार्य रूप से मौद्रिक प्रबंधन के कार्य से जोड़ देती है। पूर्णतः समन्वित वित्तीय बाजारों के अभाव में, नीति को संप्रेषण सरणि की प्रभावशीलता को अभी स्थापित करना बाकी है। इन परिस्थितियों में, यह आवश्यक है, कि विविध मौद्रिक तथा अन्य संकेतओं में होनेवाली गतिविधियों को ध्यान में रखते हुए संभावित परिणामों को सावधानीपूर्वक मांपे और उनमें संतुलन बनाएँ।

केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता

4.116 भारत में केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता पर वाद-विवाद उतना ही पुराना है जितना कि स्वयं यह संस्था। रिज़र्व बैंक की स्थापना के समय भारत में जन-भावना एक स्वतंत्र केंद्रीय बैंक के पक्ष में काफी ज्यादा थी। ''लंदन समिति'' (जिसे भारतीय रिज़र्व बैंक 1933 का मसौदा तैयार करने के लिए नियुक्त किया गया था) ने यह दृष्टिकोण लिया कि भारतीय रिज़र्व बैंक किसी भी राजनैतिक प्रभाव के मुक्त होना चाहिए और इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए निजी शेयर मामले को सर्वोत्तम मार्ग के रूप में माना। जबकि उन दिनों यह अनिवार्यतः रिज़र्व बैंक के स्वामित्व का प्रश्न था, वहीं केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता संबंधी तत्कालीन चर्चा प्रायः उसके परिचानात्मक पहलुओं अर्थात राजकोषीय प्रभुत्व या जिसे मौद्रिक नीति के उपयोग को राजकोषीय नीति की ''परिचारका'' कहा गया है (नाचने 2005) और विधायी प्रावधानों जो रिज़र्व बैंक की परिचालनगत नमनीयता को बाधित करते हैं, पर केंद्रित थी (भा.रि.बैं.2000)।

4.117 विकास के चरण में सरकार के उधार कार्यक्रम तथा रिज़र्व बैंक द्वारा इसके मौद्रीकरण ने राजकोषीय नीति और मौद्रिक नीति की परस्पर भूमिकाओं के सम्बंध में प्रश्न खड़े किए हैं। मौद्रिक नीति को स्वयं विशेषकर 1980 के बाद के दशक में बढ़े हुए राजकोषीय घाटों के मुद्रा स्फीतिकारी प्रभाव को निष्क्रिय करने का कार्यकर्म करना पड़ा। चक्रवर्ती समितिने दृढतापूर्वक एक ऐसे मौद्रिक लक्ष्य बनाए जाने की प्रणाली की सिफारिशों की हैं जो सरकार तथा रिज़र्व बैंक को परस्पर-सहमत स्तर तक ही सरकार को रिज़र्व बैंक निवल ऋण लेना बाध्यकारी करेगा। मौद्रिक नीति के संचालन में तथा वित्तीय प्रणाली के विनियमन में रिज़र्व बैंक को महत्तर परिचालन गत नमनीयता प्रदान करने का मुद्दा 1990 के बाद के दशक से अधिक प्रबल हो गया है, विशेषकर भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते हुए वैश्विक समेकन के संदर्भ में। रंगराजन (1993) ने केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता की परिभाषा मौद्रिक नीति के संचालन में संस्थागत व्यवस्थाओं के रूप में की

है तथा तदर्थ खजाना बिल जारी करके सरकार के राजकोषीय घाटे के स्वतः मौद्रीकरण की प्रथा की भारतीय संदर्भ में मौद्रिक नीति के प्रभावी संचालन पर प्रभाव डालनेवालें प्रधान कारक मानकर आलोचना की है।

4.118 तदर्थ खज़ाना बिलों का चरणबद्ध रूप में समाप्त हो जाना तथा राजकोषीय जवाबदेही एवं बजट प्रबंध (एफआरबीएम) विधान का अधिनियम बन जाना ये दो ऐसे महत्वपूर्ण मील के पत्थर हैं, जो मौद्रिक नीति को राजकाषीय विस्तार के परिणामों से सुरक्षा प्रदान करते हैं तथा बेहतर मौद्रिक - राजकोषीय समन्वय को सुनिश्चित करते हैं। एफआर बीएम अधिनियम, 2003 जो 5 जुलाई 2004 से प्रभावी हो गया था, केंद्र सरकार को यह आदेश देता है कि वह राजस्व घाटे को मार्च 2009 तक समाप्त कर दे और राजकोषीय घाटे को घटाकर मार्च 2008 तक सघउ के 3 प्रतिशत तक ले आए। भा.रि.बैं. अधिनियम को संशोधित करने के लिए प्रस्तावित विधान (कानून) मौद्रिक नीति के संचालन में, वित्तीय क्षेत्र के विकास के लिए मार्गदर्शन करने में तथा वित्तीय क्षेत्र की स्थिरता प्राप्त करने में रिज़र्व बैंक को और अधिक परिचालनात्मक नमनीयता प्रदान करता है (बाक्स IV.4)।

V. निष्कर्ष

4.119 आर्थिक विकास के निर्धारक के रूप में संस्थाओं पर बढ़ती हुई शोध के प्रति रुचि के संदर्भ में यह अध्याय 1935 से, जब भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना हुई थी, भारत में केंद्रीय बैंकिंग विकास का एक संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करता है। रिज़र्व बैंक की स्थापना यूरोप के केंद्रीय बैंकों की पद्धति पर हुई थी, परन्तु इसके कार्यों का विकास काफी कुछ बदलकर इसके निर्माण के वर्षों में केंद्रीय बैंकिंग के परंपरागत स्वरूप से विकास के चरण में संस्थागत बुनियादी संरचना के निर्माण के रूप में तथा सुधार के चरण में वित्तीय क्षेत्र की सुदृढता को सुनिश्चित करने वाली संस्था के रूप में हो गया है।

4.120 आर्थिक आयोजना शुरु होने तथा भारतीय अर्थ-व्यवस्था का संरचानात्मक रूपांतरण होने के साथ ही रिज़र्व बैंक के कार्य कई गुना बढ़ गए। शताब्दियों पुराने उपनिवेशवादी शासन से मुक्त हुए एक विकासशील देश के केंद्रीय बैंक के रूप में, रिज़र्व बैंक को योजना के वित्त पोषण में सरकार के संसाधनों के अंतराल को भरने तथा आवश्यक वित्तीय बुनियादी संरचना का निर्माण करने के रूप में राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका निभानी पड़ी। ''संस्थाओं की जननी'' के रूप में रिज़र्व बैंक ने भारत में वित्तीय क्षेत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। प्रारंभिक वर्षों में विकासात्मक आयोजना को समर्थन प्रदान करने के लिए संस्थागत मशीनरी की स्थापना करने पर जोर रहा, जबकि सुधारों के चरण में जोर वित्तीय बाजारों के विकास और उनके पोषण पर हो गया है।

4.121 वैश्विक गतिविधियों (जैसे द्वितीय विश्व युद्ध, ब्रिटेन वुड्स प्रणाली का असफल हो जाना) ने रिज़र्व बैंक के कार्य-कलाप को प्रभावित किया। परंतु भारत में केंद्रीय बैंकिंग के विकास में प्रमुख मील का पत्थर तब उभरा जब रिज़र्व बैंक को महत्वपूर्ण भूमिका निभाने का भार आ पड़ा। भारत में मौद्रिक नीति के ढ़ांचे में केंद्रीय बैंकिंग के कौशल में हुए वैश्विक विकास के साथ-साथ परिवर्तन हुए हैं। वास्तव में, भारत विकासशील देशों में पहला ऐसा देश था जिसने 1985 में मौद्रिक लक्ष्य को अपनाया था। 1990 के बाद के दशक में विशेषकर, नियंत्रण के प्रत्यक्ष साधनों की बजाय अप्रत्यक्ष साधनों को अपनाने का जो बदलाव आया - वह वैश्विक प्रवृत्ति के अनुरूप रहा। साथ ही भारत में मौद्रिक प्रबंध में वित्तीय स्थिरता संबंधी मुद्दे अत्यधिक महत्वपूर्ण रहे हैं, जैसा कि अन्य अर्थ व्यवस्थाओं में रहा है (जाधव, 2005)। रिज़र्व बैंक ने नीति के निर्माण में परामर्शी दृष्टिकोण अपनाया है तथा अनेक संस्थागत व्यवस्थाएं की है। तथापि वैश्विक वित्तीय प्रणाली के साथ भारतीय वित्तीय बाजारों को समेकित करने के मुद्दे पर भारत ने इस दिशा में सावधानीपूर्वक तथा क्रमिक रूप से एवं उदारीकरण की गति को अंतर्निहित व्यापक आर्थिक गतिविधियों , घरेलू वित्तीय प्रणाली की तैयारी की स्थिति तथा अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाजारों की गतिविधियों के साथ समायोजित करते हुए बढ़ने का रास्ता चुना है। रिज़र्व बैंक ने पर्यवेक्षी और विनियामक ढ़ांचे को सुदृढ़ करने के लिए तथा साथ ही बढती हुई प्रतिस्पर्धा के अनुरूप प्रतिक्रिया करने और प्रौद्योगिकीगत उन्नयन से उत्पन्न कारोबारी अवसरों का लाभ उठाने के लिए वित्तीय संस्थाओं को पर्याप्त लचीलापन प्रदान करने हेतु अनेक पहलें की हैं। सुधारों को आगे बढ़ाते हुए रिज़र्व बैंक ने मुद्रा - प्रबंध, भुगतान एवं निपटान प्रणालियों के विनियमन सहित, परंपरागत कार्यों का यथोचित रूप से पुनर्विन्यास करके समग्र प्रणालीगत दक्षता को बढ़ाने का सद्विवेक पूर्वक प्रयास भी किए हैं। इन सभी पहलों ने भारत में वित्तीय क्षेत्र को सुदृढ़ करने तथा इसे अपने आप को उभरते हुए परिवेश को अपनाने में समर्थ बनाने का कार्य किया है। और इसकी पुष्टि विश्व समुदाय को अपनी धारणा बदल कर भारत को एक उभरती हुई आर्थिक शक्ति मानने के रूप में हुई है।

V वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण

5.1 आर्थिक कार्य-निष्पादन में वित्तीय क्षेत्र के योगदान को देखते हुए इस क्षेत्र का स्वास्थ्य सार्वजनिक नीतिगत चिंता का मुद्दा है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि वित्तीय प्रणाली सुदृढ़ आधारों पर कार्य करे, वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण महत्वपूर्ण हो जाता है। जैसा कि अध्याय।।। में चर्चा की गई है, अनेक देशों में केंद्रीय बैंक द्वारा वित्तीय प्रणालियों के विनियमन की एक लंबी परंपरा रही है।

5.2 बैंकों का विनियमन और पर्यवेक्षण वित्तीय सुरक्षा नेट के लिए मुख्य घटक हैं क्योंकि बैंकों को अक्सर व्यवस्थागत वित्तीय संकटों के केंद्र में पाया जाता है (डायमंड एंड रानन 2005)। प्राधिकारियों द्वारा वित्तीय विनियमन के लिए मुख्य औचित्य व्यवस्था संबंधी जोखिम को रोकने, वित्तीय संकटों से बचने तथा जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करने तथा जमाकर्ताओं और बैंकों के बीच सूचना की असमानता को कम करने का रहा है। चूंकि वित्तीय संकट का मूल्य बहुत अधिक माना जाता है, अतः प्राधिकारियों ने यह महसूस किया कि उन (संकटों) से हर कीमत पर बचा जाए। इसके फलस्वरूप बैंकों पर सभी जगह विनियमन किया जाता है। इसके अलावा, वित्तीय विनियमन वित्तीय प्रणाली की दक्षता बढ़ाने तथा व्यापक सामाजिक उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। अनेक देशों में हुए अनुभवों के आधार पर प्रभावी विनियमन सभी संबंधितों के हित में है। हालांकि इसे सभी के लिए एक समान दृष्टिकोण पर आधारित नहीं किया जा सकता। (मिस्त्री 2003)। तथापि, यह ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि जहाँ वित्तीय संस्थाएं एक उपयुक्त विनियामक व्यवस्था से लाभान्वित होती हैं, फिर भी इस बात का ऐसा कोई बहुत अधिक साशय नहीं है कि विनियामक व्यवस्था की विद्यमानता से संस्थाएं सुदृढ़ बनती हैं तथा आघातों का उन पर कम वार होता है (फी बिग 2001)। वित्तीय प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण के लिए न तो कोई अद्वितीय सैद्धान्तिक मॉडल है, और न ही कोई एकाकी व्यावहारिक दृष्टिकोण । वित्तीय प्रणाली के विभिन्न प्रकार के विनियामक मॉडलों की विद्यमानता से आदर्श मॉडल का चयन कठिन अभ्यास बन जाता है।

5.3 भारतीय वित्तीय प्रणाली में वाणिज्यिक बैंक, सहकारी बैंक, वित्तीय संस्थाएं(एफ़आइ) गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां (गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ(एनबीएफसी) शामिल हैं। वाणिज्यिक बैंकों को उनके स्वामित्व के स्वरूप के आधार पर कुछ श्रेणियों में बाँटा जा सकता है, जैसे सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, निजी क्षेत्र के बैंक तथा विदेशी बैंक जबकि भारतीय स्टेट बैंक और उसके सहायक बैंक, राष्ट्रीकृत बैंक और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का गठन संसद के संबंधित अधिनियम के अंतर्गत किया गया है। निजी क्षेत्र के बैंक और विदेशी बैंकों को बैंकिंग कंपनियां कहा जाता है जैसा कि बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 में परिभाषित किया गया है। देश में सहकारी ऋण संस्थाओं को मौटे तौर पर शहरी ऋण सहकारी संस्था तथा ग्रामीण ऋण सहकारी संस्था के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। ग्रामीण ऋण सहकारी संस्थाओं को अल्पावधिक और दीर्घावधिक सहकारी संस्था के रूप में विभाजित किया जा सकता है। तथापि, कुछ राज्यों में सहकारी बैंकों की एकात्मक संरचना है जिसमें राज्य स्तरीय सहकारी बैंक अपनी शाखाओं के माध्यम से परिचालन करते हैं।

5.4 भारत में वित्तीय प्रणाली का विनियमन और पर्यवेक्षण विभिन्न विनियामक प्राधिकारियों द्वारा किया जाता है। रिज़र्व बैंक वित्तीय प्रणाली के प्रमुख भाग का विनियमन और पर्यवेक्षण करता है। रिज़र्व बैंक की पर्यवेक्षी भूमिका के अंतर्गत वाणिज्यिक बैंक, शहरी सहकारी बैंक (यूसीबी), कुछ वित्तीय संस्थाएं(एफ़आइ) और गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियाँ(एनबीएफसी) आते हैं। कुछ वित्तीय संस्थाएं(एफ़आइ) इस के बदले में वित्तीय क्षेत्र की अन्य संस्थाओं का विनियमन तथा / अथवा पर्यवेक्षण करती है, जैसे - आरआरबी और केंद्रीय और राज्य सहकारी बैंक का पर्यवेक्षण राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) द्वारा किया जाता है तथा आवास वित्त कंपनियों का पर्यवेक्षण राष्ट्रीय आवास बैंक (एनएचबी) द्वारा किया जाता है। कंपनी कार्य विभाग (डीसीए), भारत सरकार गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों के अलावा, कंपनी अधिनियम के अंतर्गत पंजीकृत परंतु उनको नहीं जो अन्य विधानों के अंतर्गत आती हैं, कंपनियों की जमा राशियों के संग्रहण संबंधी गतिविधियों का विनियमन करता है। किसी एकल राज्य की सहकारी कंपनियों का विनियमन अलग-अलग राज्यों के रजिस्ट्रार सहकारी संस्था तथा विभिन्न राज्यों में स्थित सहकारी कंपनियों का केंद्र सरकार शहरी सहकारी बैंकों के लिए रिज़र्व बैंक के साथ मिलकर तथा ग्रामीण सहकारी संस्थाओं के लिए नाबार्ड के साथ मिलकर संयुक्त रूप से विनियमन करती है। जहाँ भारतीय रिज़र्व बैंक तथा नाबार्ड सहकारी संस्थाओं के बैंकिंग कार्यों के लिए विनियमन करते हैं, वहीं उनका प्रबंध - नियंत्रण राज्य / केंद्र सरकारों के पास रहता है। यह दोहरा नियंत्रण सहकारी बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण को प्रभावित करता है। बीमा विनियमन तथा विकास प्राधिकरण (इर्डा) बीमा क्षेत्र का विनियमन करता है तथा पूंजी बाज़ार, क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों आदि का विनियमन भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) द्वारा किया जाता है।

5.5 गत पांच दशकों में भारतीय बैंकिंग प्रणाली एक कठिन पथ से होकर गुजरी है तथा अनेक प्रतिस्पर्धी तथा एक दूसरे से टकराने वाली मांगों को संगठित और गैर संगठित क्षेत्रों के भारी, मध्यम, लघु

और अत्यंत लघु उधारकर्ताओं के बीच संतुलन बनाए रखने का प्रयास करती है। बैंकिंग प्रणाली की गतिविधियाँ प्रारंभ में कठोरतापूर्वक विनियमित की जाती थीं और उनकी आजादी सीमित थी। इसे अनेक घरेलू दबावों और बाह्य आघातों को सहना पड़ा। तथापि, यह सुनिश्चित करने के लिए बैंकिंग प्रणाली प्रतिबंधित परिचालन गत परिवेश से बाहर निकल आई है तथा ऐसे परिवेश में कार्य कर रही है जिसे नवोन्मेष के लिए आजादी प्राप्त है तथा एक प्रतिस्पर्धी परिवेश में कार्य करती है जिसमें समय के साथ-साथ विनियमनों में भी परिवर्तन आया है।

5.6 हाल के वर्षों में घरेलू और सीमा पार के समेकनों के संयुक्त प्रभाव के अंतर्गत वित्तीय मध्यस्थों के बीच धूमिल होता हुआ विभेद, लिखतों और प्रक्रियाओं में नवोन्मोषों, प्रौद्यागिकी में उन्नयन तथा वित्तीय प्रणाली द्वारा मध्यस्थित पूंजी की बढ़ी हुई मात्राओं ने विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे को सक्रिय रूप से सुदृढ़ करने को आवश्यक बना दिया है। वित्तीय क्षेत्र में विशाखीकृत और उल्लेखनीय उपस्थितिवाले अनेक खिलाड़ियों के उभरने से यह आवश्यक हो गया है कि विनियमन और पर्यवेक्षण वित्तीय प्रणाली के विभिन्न घटकों तक फैल जाए।

5.7 संगठन के स्वरूप, स्वामित्व की सीमा, प्रमुख शेयर धारकों द्वारा प्रबंध पर नियंत्रण, तथा कंपनी संचालन की प्रणाली से संबंधित बुनियादी मुद्दों पर अभी भी काफी चर्चा के विषय हैं (रेड्डी - 2000)। हाल के वर्षों में व्यष्टि विनियमन से हटकर समष्टि- प्रबंधन पर जोर बढ़ा है, जिसे विवेक संमत-मानदंडों से तथा वित्तीय प्रणाली की कार्य पद्धति में सुधारों से समर्थन मिला है।

5.8 इस अध्ययन में उस व्यापक रूपांतरण के मूल ढूंढ़ने की कोशिश की गई है जो बैंकिंग प्रणाली पर विशेष ध्यान देते हुए भारतीय वित्तीय प्रणाली के विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में भारतीय रिज़र्व बैंक की भूमिका में आया है। इस अध्ययन को छह भागों में बाँटा गया है। भाग I में भारत में वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण की उत्पत्ति और विकास को खोजा गया है। भाग II में विनियमन और पर्यवेक्षण की नीतियों के संकल्पनात्मक इतिहास तथा भारत में बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण की नीतियों को रेखांकित किया गया है। भाग II में मौद्रिक नीति के कार्यों तथा भारतीय परिदृश्य में विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका के संबंध में इसकी संगतता (उपयुक्तता) की संक्षेप में जांच की गई है। भाग IV में वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण में भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा अदा की गई भूमिका का आकलन किया गया है तथा इससे अपेक्षित भावी भूमिका का खाका तैयार किया गया है। अंतिम भाग IV में निष्कर्षात्मक टिप्पणियां दी गई हैं।

I. वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण की उत्पत्ति और विकास

5.9 ऐसा कोई सुसंगत सिद्धांत नहीं है जो विनियामक परिवर्तनों को नियंत्रित करने की मांग करता हो, उसका पूर्वानुमान लगाता हो और उसमें सहायता करता हो। किसी अर्थ-व्यवस्था में वित्तीय विनियमन की आदर्श संरचना वित्तीय प्रणाली की संरचना और उसके विकास के स्तर पर निर्भर करती है। वित्तीय विनियमन की आवश्यकता किसी अर्थव्यवस्था में वित्तीय संस्थाओं की भूमिका के संबंध में धारणाओं पर आधारित होती है। [बाक्स V.1]

5.10 विभिन्न देशों में वित्तीय प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण में केंद्रीय बैंकों का संलग्न होना ठीक इसी प्रकार क्रमिक रूप से विकसित हुआ है, जैसे कि बैंकिंग संकट की घटनाएं भी क्रमिक रूप से बढ़ी हैं। प्रारंभ में बैंकों का सांविधिक विनियमन जमाकर्ताओं के संरक्षण, सूचनाओं की असमानता में कमी लाने तथा बैंकिंग का सुदृढ़ रूप में विकास सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक समझा गया था। बाद में जब बैंकों का संकट व्यापक रूप में फैल गया, तो व्यवस्थागत समग्र जोखिम को रोकने तथा वित्तीय संकट से बचने के लिए वित्तीय विनियमन को प्राधिकारियों द्वारा आवश्यक समझा गया।

5.11 बैंक असफलताओं के भारी निहितार्थों को देखते हुए विनियमन और पर्यवेक्षण का कार्य केंद्रीय बैंकों को सौंपना पर्याप्त रूप से मान्य है। बैंकों के मालिक या शेयर धारकों का केवल अल्प स्वत्व ही होता है, तथा बैंकों की शक्तिवर्धन क्षमता को देखते हुए (एक की तुलना में दस से ज्यादा) यह भारी सार्वजनिक निधियों को उनके नियंत्रण में ले आती हैं जिसमें उनका अपना स्वत्व नगण्य होता है। अतः एक रूप में, वे न्यासी के रूप में कार्य करते हैं और इस प्रकार वे उन्हें सौंपी गई निधियों को विनियोजित करने के लिए ''सही और उपयुक्त'' होने चाहिए। सतत, स्थायी और निरंतर परिचालन अलग-अलग बैंक और बैंकिंग प्रणाली पर जनता के विश्वास पर निर्भर करता है। वह गति जिससे कोई बैंक जिस पर जमाकर्ताओं की 'दौड़' हो गई हो, धराशायी हो जाता है, वह किसी अन्य संगठन से अतुलनीय है। एक विकासशील अर्थ व्यवस्था में बैंकों के धराशायी होने के खतरे की सहनशक्ति जमाकर्ताओं में बहुत का है जिनमें से अनेक तो अपने जीवन भर की बचत बैंकों में जमा कर देते हैं। अतः नैतिक, सामाजिक, राजनैतिक और मानवीय दृष्टि से विनियामक पर बहुत भारी उत्तरदायित्व है। लाखों जमाकर्ता जिनकी निधियां बैंकों को सौंपी गई हैं, वे प्रबंध - तंत्र के नियंत्रण में नहीं हैं (मोहन 2004 क)।

बुनियादी केंद्रीय बैंकिंग के कार्य बनाम बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण के कार्य

5.12 अनेक देशों में यह मान्य था कि बुनियादी कार्यों को प्रभावी रूप से करने में केंद्रीय बैंक की योग्यता सीमित रहेगी जब तक कि वित्तीय प्रणाली दक्षतापूर्वक विनियमित नहीं की जाती है। परंपरागत केंद्रीय बैंक के कार्यों का अर्थात् मौद्रिक नीति बनााना, नोटों का निर्गम, समाशोधन सुविधाएं उपलब्ध कराना, वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के कार्य के साथ संमिश्र संबंध हैं। वित्तीय विनियमन का कार्य केंद्रीय बैंक को देने का एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता दोनों से

बाक्स V.1
विनियमन के बारे में सोच का विकास

यह मान्य है कि विनियमन के कोई विकसित सिद्धांत नहीं हैं। ''नवोन्मेष का सिद्धांत'' यह मानता है कि विनियामक परिवर्तनों को उनके विनियामक कार्यों के मात्रात्मक तथा गुणात्मक उपायों पर उनके प्रभावों द्वारा मापा जा सकता है। (काणे, 1981)। ''विविदात्मकता का सिद्धांत (बोमोल आदि 1983) यह मानता है कि बाज़ार संरचना न्यूनतम लागत पर ग्राहकों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्रविष्टि और निर्गम का माध्यम अपनाता है। फ्रेनकेस आदि (1991) इन दो मॉडलों के बीच उनके संरक्षणात्मक उपायों दिवालियापन की प्रक्रियाओं तथा बैंकों और ग्राहकों के बीच संविदागत संबंधों के आधार पर विभेद करते हैं। सिन्के (1992) छिपे कार्यों (नैतिक जोखिम) तथा छिपी सूचना (प्रतिकूल चयन) पर केंद्रित एजेंसी सिद्धांत को ''विनियामक तथा वित्तीय सेवाओं के उत्पादन सिद्धांत'' के साथ मिलाकर ''विनियमन के आम सिद्धांत'' को विकसित करने का प्रयास किया है।

लेवेलिन (1996) तथा गुडहर्ट आदि (1998) द्वारा बनाए गए मॉडलों ''संस्थागत ओर प्रयोजनपरक विनियमन'' में विभेद करते हैं। संस्था पर आधारित विनियमन ''संस्था या फर्म के प्रकार'' पर ध्यान केंद्रित करता है, जब कि कार्य मूलक विनियमन ''गतिविधि के अनुसार'' विनियमन है। वित्तीय प्रणालियों को विनियमित करने वाले विनियामक मॉडलों में अंतर मुख्यतः विवेक-संमत पर्यवेक्षी पद्धतियों और संरक्षणात्मक नियमों के बीच का अंतर है। ''विवेक-संमत या प्रतिरोधी पद्धतियां'' वे हैं जिनका उद्देश्य बैंक के फेल होने की संभावना को कम करने की दृष्टि से बैंकों द्वारा अनुमानित जोखिम के स्तरों को नियंत्रित करना है। दूसरी ओर 'संरक्षणात्मक उपाय' वित्तीय संस्थाओं के ग्राहकों को वास्तविक या आसन्न बैंक की असफलता के मामले में सुरक्षण प्रदान करना है तथा इसे फर्म या उद्योग के स्तर पर लागू किया जा सकता है (कूरी 2003)।

बैंकिंग क्षेत्र के विनियमन, मौटे तौर पर दो बुनियादी रूप लेते हैं अर्थात प्रतिरोधात्मक, विनियमन और संरक्षणात्मक विनियमन। ''प्रतिरोधात्मक विनियमन'' प्रवेश - संबंधी अपेक्षाएं न्यूनतम पूंजीगत अपेक्षाओं, स्वामित्व संबंधी अपेक्षाओं तथा शाखा लाइसेंसिंग के रूप में निर्धारण करती है। यह सतत बनी रहने वाली अपेक्षाएं और आस्ति के अनुपातों में पूंजी ऋण का दस्तावेजीकरण, ऋण जोखिम प्रबंधन, प्रावधानीकरण और बट्टे खाते में डालने संबंधी नीतियां, आंतारिक नियंत्रण आदि। संरक्षणात्मक विनियमन में जमा बीमा और अंतिम उधारदाता के कार्य शामिल हैं जों केंद्रीय बैंक द्वारा किए जाते हैं।

संबंधित नीतियां परस्पर गुंथी हुई हैं। मौद्रिक नीति की संप्रेषण प्रणाली - तंत्र को भारी क्षति होगी यदि किसी दोषपूर्ण अथवा अस्थिर वित्तीय प्रणाली की वजह से ऋण के प्रवाह विकृत हो जाते हैं। मुद्रा आपूर्ति के नियंत्रित करने के लिए एक सुस्थिर परिवेश सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय बैंक तदर्थ आधार पर बैंकिंग प्रणाली को चलनिधि उपलब्ध कराते हैं। 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों से 'अंतिम उधारदाता' का कार्य उनके बुनियादी उत्तरदायित्व के रूप में विकसित हुआ। विभिन्न कार्यों के बीच इस परस्पर संबंध के फलस्वरूप अनेक केंद्रीय बैंकों ने स्वेच्छा से बैंकिंग क्षेत्र के पर्यवेक्षण और विनियमन के लिए औपचारिक दायित्व स्वीकार किया।

वैश्विक इतिहास

5.13 उन्नीसवीं शताब्दी में केंद्रीय बैंकों ने अपना ध्यान वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने पर केंद्रित करना शुरू कर दिया था और उनकी भूमिका उत्तरोत्तर रूप में वित्तीय संकटों को दूर करने के रूप में उभर कर आई। बैंक ऑफ़ इंग्लैंड संकट के प्रभावों को दूर करने के लिए बट्टा दर को समायोजित किया करता था तथा यह तकनीक अन्य यूरोपीय केंद्रीय बैंकों द्वारा भी अपनाई गई। अमेरिका में 1836 से 1914 के बीच आई बैंकिंग संकटों की शृंखला ने फ़ेडरल रिज़र्व प्रणाली की स्थापना कराई। महा मंदी के अनुभव का अनेक देशों में बैंकिंग विनियमन पर भारी प्रभाव पड़ा है और वाणिज्यिक बैंकों को क्रमिक रूप से केंद्रीय बैंकों के विनियमन के अंतर्गत ले आया गया (बॉक्स V.2)। अधिक हाल के वर्षों में अनेक देशों में वित्तीय उदारीकरण, प्रतिस्पर्धा तथा बाज़ार की शक्तियों ने वापस व्यवस्थागत को जोखिम और वित्तीय संकटों की ओर मोड़ दिया है। 1980 और 1995 के बीच अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के तीन चौथाई सदस्य देशों ने कम से कम एक संकट का सामना किया है। ऊपर उल्लिखित कारक यह दर्शाते हैं कि संकटों के रूप में उभरे व्यवस्थागत जोखिम वह मूलकारण बना गया कि केंद्रीय बैंक वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण से जुड़ गए। केंद्रीय बैंकों ने जमाकर्ताओं के हितों की सुरक्षा करने, वित्तीय प्रणाली की दक्षता को बढ़ाने तथा कुछ सामाजिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए उत्तरोत्तर रूप से बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण के साधनों से जुड़ गए। अनेक देशों का वित्तीय इतिहास इस प्रकार के उदाहरणों से भरा पड़ा है।

5.14 मौटे तौर पर, यह देखा गया है कि प्रारंभ में केंद्रीय बैंकों के अन्य बुनियादी केंद्रीय बैंकिंग के कार्यों में पहले से ही व्यस्त होने के कारण वित्तीय विनियमन के उत्तरदायित्व उन्हें नहीं दिए गए थे। बाद में, बैंकिंग संकट के मुद्दों से निपटने की आवश्यकता को मानते हुए अनेक देशों ने यह उचित समझा कि वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण का कार्य अपने-अपने केंद्रीय बैंक को सौंप दिया। अभी हाल के वर्षों में, कुछ देश इस पर पुनर्विचार कर रहे हैं कि विनियामक और पर्यवेक्षण का कार्य केंद्रीय बैंकों से लेकर देश विशेष के अनेक कारणों से नई निर्मित संस्थाओं को सौंप दिया जाए (सारणी 5.1)।

भारत में बैंक विनियमन और पर्यवेक्षण की उत्पत्ति

5.15 बैंकिंग की देशी प्रणाली भारत में शताब्दियों से विद्यमान रही है जो प्राचीन अर्थव्यवस्था की ज़रूरतों को पूरा करती थी (राव,1960) भारत में वाणिज्यिक बैंकिंग की जड़ें अट्ठारहवीं शताब्दी के प्रारंभिक वर्षों तक जाती हैं । (बाक्स V.3)

बाक्स V.2
वित्तीय विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में केंद्रीय बैंकों की भूमिका की उत्पत्ति- वैश्विक इतिहास

बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में विभिन्न देशों में बैंक के असफल होने की घटनाएं इतनी बार हुईं तथा उसके प्रभावों को जमाकर्ताओं और संपूर्ण अर्थव्यवस्थाओं दोनों द्वारा अनुभव किया गया। बैंकिंग प्रणाली को उपयुक्त विनियामक और पर्यवेक्षक को पहचानने तथा विनियमन का उत्तरदायित्व सौंपने का मुद्दा महत्वपूर्ण हो गया। जब 1694 में बैंक ऑफ़ इंग्लैंड की स्थापना की गई उसका प्रमुख उद्देश्य था - सरकार का वित्त पोषण करने के लिए धन जुटाना। ब्रिटेन में बैंकिंग विनियमन की कोई औपचारिक प्रणाली नहीं की और न ही किसी एजेंसी को कानूनन 1970 के दशक तक बैंकिंग के विनियमन के लिए शक्ति प्रदान की गई थी सिवाय कंपनी अधिनियम के प्रावधानों के। उन्नीसवीं शताब्दी की प्रारंभिक उन्नति के दौरान अनेक बैंक धराशायी हो गए। बैंकों की असफलताओं की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई घटनाओं के प्रभावों ने सरकार को 1826 से संयुक्त स्टॉक बैंक का निर्माण करने की अनुमति देने को विवश कर दिया जिसने जोखिमों को अनेक प्रोपराइटरों के बीच बांटने की अनुमति दी। 1866 में बिल ब्रोकर्स - ओवरएंड गुर्ने तथा कंपनी के अपूर्व रूप से धराशायी हो जाने और 1970 में सिटी ऑफ ग्लाएगो बैंक की असफलता ने वित्तीय समुदाय में आघात की तरंगे फैला दीं। 1890 में बैंक ऑफ इंग्लैंड ने बैंकिंग प्रणाली की सहायता की कि वह उस व्यापक भयानक संकट से उभर सके जिसमें बेरिंग ब्रदर्स, लंदन का एक अग्रणी मर्चेंट बैंकिंग हाउस फंसा हुआ था। बैंक ऑफ इंग्लैंड ने गारंटी फंड के रुप में बचाव कार्य चलाया तथा 17 मिलियन पौंड से अधिक की राशि जुटाई, इसमें से अधिकांश भाग शक्तिशाली संयुक्त स्टॉक बैंकों से। हालांकि संकट से बचाव कर लिया गया, परंतु इसमें बैंक ऑफ इंग्लैंड द्वारा अदा की गई अग्रणी भूमिका ने उस उत्तरदायित्व को दर्शा दिया जो इसको समग्र बैंकिंग प्रणाली की स्थिरता के लिए अनुमत करना पड़ा। बैंकों को सरकार के युद्धकालीन ऋण और अग्रिमों का वित्त पोषण करने के लिए विवश किया गया तथा नोटों का निर्गम तेजी से बढ़ा। एक बार पुनः बैंक ऑफ इंग्लैंड को हस्तक्षेप करना पड़ा : 1970 के बाद के दशक में सुदृढ वृद्धि तथा बड़े बैंकों का विशालीकरण, उद्योग में आए संकटों द्वारा बाधित कर दिया गया। उच्च ब्याज की दरों के कारण1973 के उत्तरार्द्ध में इनमें से अनेक बैंकों को धराशायी कर दिया। और जैसे-जैसे यह संकट और गहराता गया, तो बैंक ऑफ इंग्लैंड ने बचाव कार्यक्रम चलाया जिसें समाशोधन बैंकों से समर्थन मिला। जनता के विश्वास को बहाल किया गया क्योंकि असफल हुए बैंकों को या तो पुनर्गठित कर दिया गया या, समाप्त कर दिया गया। परंतु इसका परिणाम हुआ बैंकिंग अधिनियम 1976 जिसने बैंक ऑफ इंग्लैंड के द्वारा बैंकिंग प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण की औपचारिक भूमिका को बढ़ा दिया।

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का अनुभव इससे भिन्न था। 1863 से पहले, केवल राज्य सरकारों के पास ही बैंकों को विनियमित करने की शक्तियां थीं और इसमें केवल बैंक चार्टर जारी करना शामिल था। 1863 में, फेडरल सरकार ने बैंक विनियमन में सक्रिय रुचि लेनी प्रारंभ की। 1864 का राष्ट्रीय बैंक अधिनियम में यह प्रावधान किया गया कि कोई फेडरल एजेंसी, करेंसी के कॉम्प्ट्रोलर का कार्यालय को बैंकों को लाईसेंस प्रदान करने की शक्ति होगी। फेडरल सरकार की बैंक चार्टरिंग की शक्तियां तेजी से बढ़ी। 1864 में फेडरल सरकार ने राष्ट्रीय बैंक अधिनियम पारित किया जिसमें यह शर्त लगायी गई कि नए चार्टर्ड बैंकों को फेडरल ऋण को खरीदना होगा तथा वह ट्रेजरी द्वारा उपलब्ध कराए गए नोटों को जारी करेगा। 1836 से 1914 तक अमरिका में कोई केंद्रीय बैंक नहीं था। परंतु इसे 1913 के दौरान फेडरल रिज़र्व अधिनियम या ओवन ग्लास अधिनियम के माध्यम से फेडरल रिज़र्व प्रणाली की रचना की गई; मुख्य रुप से प्रारक्षित निधियों की धारक संस्था के रूप में कार्य करने के लिए, निधियों के आहरण से आनेवाली व्यापक कमी को रोकने के के लिए अंतिम मुद्रा-सर्जक के रूप में।

1930 के बाद के दशक में आर्थिक मंदी का अमरीका में बैंकिंग प्रणाली पर विनाशकारी प्रभाव पड़ा। निजी बैंकों ने जिन्होंने स्टॉकों और शेयरों में निवेश किया था, यह पाया कि वॉल स्ट्रीट के धराशायी होने से उनकी निधियों को गंभीर हानि पहुंची है। दिसंबर 1930 में, बैंक ऑफ यूनाइटेड स्टेट को बलपूर्वक बंद होने के लिए विवश होना पड़ा। अनेक बैकों को आगे जारी रखना कठिन लगा और कुछ ही वर्षों में अमेरिका के कुल बैंकों के 20% बैंकों को बंद होना पड़ा। 1933 के प्रारंभ में अमरीकी जनता का अपनी बैंकिंग प्रणाली पर से विश्वास उठना शुरु हो गया। जब फ्रेंकलिन डी.रूज़वेल्ट अमरीका के राष्ट्रपति चुने गए तो उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि उनकी पहली चिंता इस बैंकिंग के संकट को सुलझाने की होगी। कांग्रेस का उद्घाटन करने के बाद अगले दिन उन्होंने कांग्रेस का विशेष सत्र आमंत्रित किया तथा चार दिन के बैंक अवकाश की घोषणा की। 9 मार्च 1933 को कांग्रेस ने आपातकालीन बैंकिंग राहत अधिनियम पारित किया जिसमें यह प्रावधान किया गया कि जैसे ही परीक्षक (निरीक्षक) उन्हें वित्तीय रुप से सुरक्षित पाएंगे वैसे ही बैंकों को पुनः खोल दिया जाएगा। बाद में उस वर्ष कांग्रेस में बैंकिंग अधिनियम 1933 पारित किया। फेडरल रिजर्व बोर्ड को बैंकों के निवेश संबंधी संव्यवहारों पर कठोर नियंत्रण प्रदान किया गया और 5,000 अमरीकी डॉलर तक की बैंक में जमा सभी जमाराशियों को बीमित करने के लिए फेडरल जमा बीमा निगम की स्थापना की गई। (फ्रैंकलिन एंड हेरिंग 2001)।

बैंक विनियमन का उत्तरदायित्व सौंपने संबंधी कुछ अन्य देशों के अनुभव पूर्णतः भिन्न ही रहे। बैंकिंग संकटों के आने तथा इन संकटों से निपटने के लिए केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप की जरूरत होने के बावजूद कुछ देशों ने केंद्रीय बैंक की स्थापना के कई वर्षों पहले या बाद में बैंकिंग प्रणाली के पर्यवेक्षण के लिए केंद्रीय बैंक से बाहर पृथक विनियामक प्राधिकरण की स्थापना की। कनाडा सरकार ने होम बैंक के असफल हो जाने के बाद 1925 मे कार्यालय महानिरीक्षक बैंक की स्थापना की। बैंक ऑफ कनाडा इसके नौ साल बाद स्वामित किया गया (जोर्जिज 2003)। कनाडा का अनुभव अपने आप में अद्वितीय नहीं था। अन्य अनेक देशों ने जिनमें चिली, मैक्सिको, पेरू तथा स्केनडिनावियन देशों में विकसित केंद्रीय बैंकों तथा बैंक के विनियामक पूर्णतः अलग अलग थे। अभी हाल ही में यू.के. ओर आस्ट्रेलिया सरकार ने अपने केंद्रीय बैंकों के संस्थागत आई देश में संशोधन किया जिसमें उनके विनियामक उत्तरदायित्वों को किसी एक अलग एजेंसी को दे दिया गया। अतः एक उपयुक्त संरचना खड़ी करने तथा बैंक के विनियमन और पर्यवेक्षण का उत्तरदायित्व सौंपने संबंधी अनुभव पर्याप्त अलग-अलग रहे। हालांकि बुनियादी उद्देश्य प्रणालीगत स्थिरता को बनाए रखने का रहा है। इस प्रकार वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण की संस्थागत संरचना में तथा इससे संबंधित विधान में अलग-अलग राष्ट्रों के बीच पर्याप्त भिन्नताएं हैं।

सारणी 5.1 : 2002 में एकल पर्यवेक्षक, अर्ध समन्वित पर्यवेक्षी एजेंसियों तथा बहु पर्यवेक्षक वाले देश *

वित्तीय प्रणाली के लिए एकल पर्यवेक्षक		दो प्रकार की वित्तीय मध्यस्थ संस्थाओं का पर्यवेक्षण करनेवाली एजेंसी			बहु पर्यवेक्षक (न्यूनतम एक बैंक के लिए एक प्रतिभूति फर्म के लिए तथा एक बीमा के लिए)	
		बैंक और प्रतिभूति फर्में	बैंक और बीमा	प्रतिभूति फर्में और बीमा कर्ता		
1. आस्ट्रिया	12. जापान गणराज्य	23. डोमिनिकन	29. आस्ट्रेलिया	40. बोलिविया	47. आयरलैंड	62. इटली
2. बहरीन	13. लटानिया	24. फिनलैंड	30. बेलजियम	41. चिली	48. बहामा	63. जोर्डन
3. बर्नाडा	14. मालद्वीप	25. लक्ज़मबर्ग	31. कनाडा	42. मिश्र	49. बारबोडोस	64. लिथुवानिया
4. केमेन आईलैंड	15. भालटा	26. मेक्सिको	32. कोलम्बिया	43. मोरिशस	50. बोत्स्वाना	65. नीदरलैंड
5. डेनमार्क	16. निकारगुआ	27. स्विटजरलैंड	33. इक्वाडोर	44. स्लोवाकिया	51. ब्राजील	66. न्यूजीलैंड
6. एस्टोनिया	17. नार्वे	28. उरुग्वे	34. एल्सल्वाडोर	45. दक्षिण अफ्रीका	52. बुल्गारिया	67. पनामा
7. जर्मनी	18. सिंगापुर		35. ग्वाटेमाला	46. यूक्रेन	53. चीन	68. फिलीपीन्स
8. जिब्राल्टर	19. दक्षिण कोरिया		36. कजाकिस्तान		54. साईप्रस	69. पोलेंड
9. हंगरी	20. स्वीडन		37. मलेशिया		55. मिश्र	70. पुर्तगाल
10. आइलैंड	21. युएई		38. पेरू		56. फ्रांस	71. रुस
11. आयरलैंड	22. यू.के.		39. वेनेजुएला		57. ग्रीस	72. स्लोवाकिया
					58. हांगकांग	73. श्रीलंका
					59. भारत	74. स्पेन
					60. इंडोनिया	75. थाईलैंड
					61. इजराइल	76. टर्की
						77. अमेरिका
नमूने में सभी देशों के प्रतिशत						
29%		**8%**	**13%**	**9%**	**38%**	

* इस नमूने में केवल वे ही देश शामिल हैं जो सभी तीनों प्रकार की मध्यस्थ संस्थाओं (बैंक, प्रतिभूति फर्में तथा बीमा कर्ताओं) का पर्यवेक्षण करते हैं।
स्रोत : मार्टिनेज जोस डि लूना और रोज़ थोमस ए.2003

भारत में एक व्यापक बैंकिंग विनियमन संबंधी विधान की ओर प्रयास

5.16 भारत में वाणिज्यिक बैंकिंग के विकास के प्रारंभिक चरणों से यह पता चलता है कि बैंकिंग विकास के प्रारंभिक चरण के दौरान ईस्ट इंडिया कंपनी की सरकार, रायल चार्टर तथा भारत सरकार द्वारा बैंकों का विनियमन और संचालन किया जाता था। बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 का अधिनियम बनाने से पहले बैंकिंग कंपनियों से संबंधित प्रावधान भारतीय कंपनी अधिनियम में निहित थे। भारत में कंपनी विधि 1850 के कंपनी अधिनियम 43 को लागू करने से शुरू हुआ जो इंग्लिश कंपनी अधिनियम 1844 पर आधारित था। 1857 के संयुक्त स्टॉक कंपनी तथा अन्य सहायक कंपनियों के गठन और विनियमन के लिए जिसमें उसके सदस्यों की सीमित या असीमित देयता है, एक अधिनियम पारित किया गया। परंतु इस अधिनियम के अंतर्गत सीमित देयताओं का विशेषाधिकार उस कंपनी को नहीं दिया गया था जो बैंकिंग अथवा बीमा के लिए बनाई गई हो। इस अयोग्यता को 1860 के अधिनियम द्वारा हटा दिया गया जो इंग्लिश कंपनी अधिनियम, 1857 पर आधारित था। कंपनियों से संबंधित कानून व्यापक रूप में कंपनी अधिनियम 1913 के रूप में पुनः बनाया गया जो बैंकिंग कंपनियों पर भी लागू किया गया।

5.17 1913 के दौरान आए बैंकिंग संकट ने बैंकिंग प्रणाली की कमजोरियों को उजागर किया जैसे नकदी तथा अन्य तरल आस्तियां अनावश्यक रूप से कम अनुपात में रखना, बैंकों के निदेशकों को तथा उन कंपनियों को जिनमें निदेशकों का हित निहित है, गैर जमानती भारी ऋण प्रदान करना। कुछ बैंकों ने अवांछनीय गतिविधियों और संव्यवहारों को अपनाया, अत्यधिक तथा अनियंत्रित विस्तार के बाद उसका धराशायी होना अपरिहार्य है। पश्चिम बंगाल में यह स्थिति विशेष रूप से गंभीर थी। चार अनुसूचित बैंक तथा अनेक गैर अनुसूचित बैंक असफल हो गए। इनमें खोई गई राशि, जिनमें अधिकांश मध्यम वर्ग की बचतें थीं, 26 करोड़ रु. से ज्यादा थी। बैंकों के असफल होने के मुद्दो की विस्तार से जांच भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जांच समिति (1929-31) द्वारा की गई। इसके विचारणीय विषयों में ''जनता के हितों को सुरक्षित रखने की दृष्टि से बैंकिंग का विनियमन'' शामिल था। भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जांच समिति की रिपोर्ट में विशेष बैंक अधिनियम बनााने की आवश्यकता पर बल दिया गया जिसमें बैंकों का गठन, प्रबंधन, लेखा परीक्षा, और परिसमापन के मुद्दे शामिल हैं। उक्त समिति की साधिकारक सिफ़ारिशें भारत में बैंकिंग सुधारों के इतिहास का एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर रही हैं ।

बाक्स V.3
भारत में वाणिज्यिक बैंकिंग का विकास

ईस्ट इंडिया कंपनी ने कंपनी के व्यापार और उसके द्वारा राजस्व को बढ़ाने के उद्देश्य से 1720 में बैंक ऑफ़ बंबई की स्थापना की। 1773 में वाऐन होस्टिंग्ज ने जनरल बैंक ऑफ़ बंगाल एंड बिहार की स्थापना की जो एक निजी संस्था थी, परंतु उसे ईस्ट इंडिया कंपनी की सरकार का संरक्षण प्राप्त था। गवर्नर जनरल की काउंसिल में विरोध के कारण 1775 में जनरल बैंक बंद कर दिया गया। 1786 में जनरल बैंक ऑफ़ इंडिया को फिर शुरू किया गया जिसकी शेयर धारकों पर सीमित देयता थी। परंतु उस समय न तो ऐसा कोई ब्रिटिश और नहीं भारतीय कानून विद्यमान था जो रायल चार्टर के अतिरिक्त किसी अन्य को शेयर धारकों पर सीमित देयता प्रदान कर सके। बाद में अन्य बैंक जैसे कार्नेटिक बैंक (1788), मद्रास बैंक (1795), ब्रिटिश बैंक (1795) तथा एशियाटिक बैंक (1804) निजी संस्थाओं के रूप में स्थापित हुए।

1 फरवरी 1806 को बेनेटिंक द्वारा अपनी परिषद का संकल्प पारित किए जाने पर मद्रास में गवर्नमेंट बैंक ने कार्य करना प्रारंभ किया। गवर्नमेंट बैंक को कुछ शर्तों के अधीन नोट जारी करने की शक्तियां प्रदान की गई। बैंक ऑफ़ हिंदुस्थान के अलावा, दो अन्य योरोपीय बैंकों ने अठ्ठारहवीं शताब्दी के बंगाल में विभिन्न अवधियों के लिए परिचालन किया। कमर्शियल बैंक (1819) तथा बैंक ऑफ़ कोलकाता (1824) का प्रारंभ मुख्यतः एजेंसी गृहों द्वारा किया गया। कोलकाता बैंक तथा कामर्शियल बैंक को मिलाकर यूनियन बैंक का जन्म हुआ। इन निजी बैंकों का स्वामित्व कुछ व्यक्तियों के हाथ में था और उनका प्रबंधन कुछ व्यक्तियों द्वारा किया जाता था तथा सीमित देयता के साथ कानूनी दृष्टि से साझेदारी फर्म का नाम दिया गया।

बैंक ऑफ़ कोलकाता सीमित देयता वाली संयुक्त स्टॉक बैंक के रूप में 1806 में स्थापित किया गया जिसे 1809 में रायल चार्टर के अंतर्गत ले आया गया तथा उसका नया नाम बैंक ऑफ़ बंगाल रखा गया। बाद में बैंक ऑफ़ बॉम्बे (1840) तथा बैंक ऑफ़ मद्रास (1843) ईस्ट इंडिया कंपनी द्वारा 1840 के अधिनियम III और 1843 के अधिनियम IX द्वारा स्थापित किए गए। जून 1843 में बैंक ऑफ़ मद्रास के खुलने के साथ - साथ बेन्टिक द्वारा स्थापित गवर्नमेंट बैंक बंद हो गया। इन प्रेसीडेंसी बैंकों का कारोबार प्रारंभ में बिलों की भुनाई या अन्य बेचान योग्य निजी प्रतिभूतियों, नकदी खाते रखने, जमा राशियां प्राप्त करने तथा नकदी नोट जारी करने और उनका परिचालन करने तक सीमित था। बैंकिंग पद्धति तथा संगठन में प्रमुख नवोन्मेष बैंक ऑफ़ बंगाल की स्थापना के साथ आया जिसमें शामिल हैं (क) पूंजी जुटाने के लिए संयुक्त स्टॉक प्रणाली का उपयोगः (ख) चार्टर द्वारा शेयरधारकों पर सीमित देयता सौंपना, (ग) सार्वजनिक राजस्व अदायगियों के लिए स्वीकार किए जाने योग्य नोट- निर्गम के लिए प्रावधान; (घ) आम जनता से जमा राशियां स्वीकार करने के लिए आम प्रावधान (ड.)ऋण तथा उन प्रतिभूतियों पर स्पष्ट सीमा जिन्हें यह स्वीकार किया जा सकता है; तथा (च) निदेशक मंडल में विनियामक परिवर्तनों का प्रावधान। रायल चार्टर जो तीन प्रेसीडेंसी बैंकों का संचालन करता था, समय-समय पर संशोधित किया गया। भारत के अंदर प्रेसीडेंसी बैंकों के अलावा विशेष अधिकारवाला कोई और कानूनी रूप से मान्यता प्राप्त वाणिज्यिक बैंक नहीं था। ईस्ट इंडिया कंपनी की सरकारने मौद्रिक और ऋण प्रणाली के विनियमन का अधिकार अपने ही पास सुरक्षित रखा।

पेपर करेंसी अधिनियम, 1861 के पारित हो जाने पर प्रेसीडेंसी बैंकों द्वारा करेंसी नोट जारी करने का अधिकार समाप्त कर दिया गया तथा वही कार्य सरकार को सौंप दिया गया। बैंक ऑफ़ बॉम्बे के असफल हो जाने पर न्यू बैंक ऑफ़ बॉम्बे की स्थापना 1868 में की गई। 1876 में प्रेसीडेंसी बैंक अधिनियम अस्तित्व में आया जिसने तीनों प्रेसीडेंसी बैंको को एक संयुक्त विधान के अंतर्गत ले लिया तथा कारोबार पर प्रतिबंध लगा दिए। 1876 के अधिनियम IX के अनुसार भारत सरकार ने चार्टर को कठोरतापूर्वक लागू किया और इन बैंकों की बहियों की आगधिक समीक्षा करना शुरू किया। 1921 में, तीनों प्रेसीडेंसी बैंकों और उनकी शाखाओं को मिलाकर इम्पीरियल बैंक इंडिया बनाा दिया गया जिसने वाणिज्यिक बैंक, बैंकरों का बैंक तथा सरकार का बैंक होने की तीहरी भूमिकाएं प्राप्त कर लीं। 1951 में जब पहली पंचवर्षिय योजना शुरू की गई, तो ग्रामीण भारत के विकास को सर्वोच्च्य प्राथमिकता दी गई। अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति ने यह सिफ़ारिश की थी, कि इम्पीरियल बैंक ऑफ़ इंडिया का अधिग्रहण करके तथा इसके साथ सरकार द्वारा स्वाधिकृत पूर्ववर्ती बैंकों या सरकार से संबद्ध बैंकों को इससे समन्वित करके सहभागिता तथा सरकार द्वारा प्रायोजित बैंक की स्थापना की जाए। तद्नुसार संसद में मई 1955 में एक अधिनियम पारित किया गया और 1 जुलाई 1955 को भारतीय स्टेट बैंक का गठन किया गया। बाद में 1959 में स्टेट बैंक ऑफ़ इण्डिया (सहायक बैंक) अधिनियम पारित किया गया जिसने भारतीय स्टेट बैंक को यह प्राधिकार दिया कि वह आठ पूर्ववर्ती सरकार से संबद्ध बैंकों का अपनी सहायक संस्थाओं के रूप में अधिग्रहण कर लें।

स्रोत : भारतीय स्टेट बैंक का विकास (भाग I तथा ।।)

5.18 जब भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम 1934 लागू हुआ, तब रिज़र्व बैंक का एक महत्वपूर्ण कार्य था - बैंकों की नकदी आरक्षित निधियों को रखना, विवेकानुसार उन्हें आर्थिक निभाव प्रदान करना तथा ऋण नियंत्रण की लिखतों के माध्यम से अर्थ व्यवस्थाओं की आवश्यकताओं के अनुरूप उनके परिचालनों के विनियमित करना। देश की बैंकिंग प्रणाली के संदर्भ में रिज़र्व बैंक की मुख्य भूमिका बैंकों की अल्पावधिक आस्तियों की चलनिधि को सुनिश्चित करने के प्रयोजन के लिए अंतिम उधारदाता की मानी गई।

5.19 भारत में बैंकिंग विधान बनााने का पहला प्रयास था - भारतीय कंपनी (संशोधन) अधिनियम, 1936 को पारित करना, जिसमें बैंकिंग कंपनियों से संबंधित प्रावधानों पर एक अलग अध्याय जोड़ा गया। इस नए विधान की दो महत्वपूर्ण विशेषताएं थीं जिसमें भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जाँच समिति की कुछ सिफ़ारिशों को शामिल किया गया। पहली बार ''बैंकिंग'' की व्यावहारिक परिभाषा निश्चित करने तथा बैंकिंग को अन्य वाणिज्यिक परिचालनों से पृथक करने का दृढ़तापूर्वक प्रयास किया गया। इस संशोधित अधिनियम के कुछ प्रावधानों के माध्यम से अनुसूचित बैंकों की विशेष हेसियत स्वीकार की गई। जैसे कि इस आधार पर कि अनुसूचित बैंकों को रिज़र्व बैंक के आम पर्यवेक्षण और नियंत्रण पर छोड़ा जा सकता है। आरक्षित निधियों को निर्माण की अपेक्षा केवल गैर अनुसूचित बैंकों पर लागू

की गई। तथापि इन प्रावधानों ने बैंकिंग विनियमन की समस्या के किनारे को ही छुआ है।

5.20 वर्ष 1938 के मध्य में ट्रानकोर नेशनल एंड क्वीलोन बैंक (टीएनक्यूबैंक) की असफलता ने जनता को डरा दिया। इस घटना में रिज़र्व बैंक की भूमिका जनता और मीडिया की नजरों में आ गई। तथापि यह देखा गया कि अधिकांश गैर अनुसूचित बैंक बिना किसी नियंत्रण के कार्य करते रहे क्योंकि वे अपने परिचालनों पर रिज़र्व बैंक का विनियमन लागू होने देने के लिए तैयार नहीं थे। 1939 से 1949 के बीच विभिन्न राज्यों में 588 बैंक असफल हो गए।

5.21 रिज़र्व बैंक ने अक्तूबर 1939 में गैर अनुसूचित बैंकों पर उनकी आस्तियों और देयताओं के विवरण के विशेष संदर्भ में एक रिपोर्ट केंद्रीय बोर्ड को प्रस्तुत की। उक्त रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया कि इनमें से अनेक बैंकों के पास बहुत कम नकदी आरक्षित तथा उनके काफी बड़े अंश अशोध्य और संदिग्ध ऋणों के हैं। ऐसे बैंकों की कुकुरमुत्तों की तरह वृद्धि हो रही है जिनकी वित्तीय स्थिति संदिग्ध है तथा यह सारी सूचना उनके सजे संवरे तुलन पत्रों के आधार पर दी गई थी जिसमें बहुत सारी असंतोषजनक बातों की नहीं दर्शाया गया था। बैंक अधिनियम के बारे में रिज़र्व बैंक का प्रस्ताव नवंबर 1939 में भारत सरकार को भेजा गया तथा उसे जनवरी 1940 में बैंकों, बैंकिंग और वाणिज्यिक संघों, जनता के प्रमुख सदस्यों तथा प्रेस को इस अनुरोध के साथ भेजा गया कि वे अपने उत्तर रिज़र्व बैंक को छह माह में भेज दें। प्राप्त उत्तरों से यह संकेत मिला कि आम तौर पर कारोबारी समुदाय तथा उनके संघों ने ड्राफ्ट बिल (विधेयक के मसौदे) का स्वागत किया है। रिज़र्व बैंक के विभिन्न स्थानीय बोर्डों से प्राप्त अभिमतों के आधार पर रिज़र्व बैंक ने सरकार को यह लिखा कि देश में राय एक व्यापक बैंक के विधान को स्वीकार करने के लिए अभी परिपक्व नहीं हुई है।

5.22 एक व्यापक बैंक अधिनियम के लिए सितंबर - अक्तूबर 1943 में पुनः प्रयास किए गए। 6 अप्रैल 1945 को वित्त-सदस्य ने विधान सभा में प्रवर समिति को सौंपने के लिए एक प्रस्ताव पेश किया। अप्रैल 1946 में सदन द्वारा उक्त प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया, परंतु उक्त समिति की नवंबर 1946 तथा बैंकिंग कंपनी (शाखाओं पर प्रतिबंध) अधिनियम, 1946 को भी शामिल किया गया। प्रवर समिति द्वारा संशोधित उक्त विधेयक 8 फरवरी 1949 को विधानसभा में प्रस्तुत किया गया और 17 फरवरी 1949 को बैंककारी विनियमन (वीआर) अधिनियम के रूप में पारित कर दिया गया। इस प्रकार बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण का कार्य इस अधिनियम के प्रावधानों से संचालित होता है जो अपने व्यापक रूप में अनेक परिचालनात्मक मुद्दों के अलावा बैंक के गठन से लेकर समामेलन तक बैंकों के अनेक पहलुओं के बारे में बताता है। बैंकिंग परिचालन विभाग को इस अधिनियम के प्रशासन का कार्य सौंपा गया जिसका मूलतः गठन अगस्त 1945 में किया गया था ताकि वह बैंकिंग कंपनी विधेयक पारित हो जाने के बाद रिज़र्व बैंक पर आने की संभावना वालों अनेक कर्तव्यों और उत्तरदायित्व को निभाने के लिए अपेक्षित प्रशासनिक मशीनरी उपलब्ध करा सके।

5.23 सारांश में 1930 और 1940 के बाद के दशकों ने ऐसे बैंकों को हवा हो जाते हुए देखा है जिनका सांविधिक रूप से व्यापक तरीके से विनियमन और पर्यवेक्षण नहीं किया जा रहा था। इसी क्रम में अनेक बैंक असफल हो गए। जमाकर्ताओं के हितों को सुरक्षित रखने तथा बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ आधार पर विकसित करने की दृष्टि से बैंकिंग प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण का दायित्व बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 बनाकर रिज़र्व बैंक को दे दिया गया। वित्तीय गतिविधियों की प्रतिक्रिया में बैंककारी विनियमन अधिनियम में निरंतर संशोधन होते रहे हैं और अब तक इसके मूल अधिनियम में 33 संशोधन किए जा चुके हैं।

II. भारत में बैंक विनियमन और पर्यवेक्षण का विकास

5.24 चूंकि रिज़र्व बैंक के कार्य वर्षों से विकसित होते रहे हैं; अतः विनियामक और पर्यवेक्षी दृष्टिकोणों को जब भी आवश्यक समझा गया, संशोधित किया गया। एक विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक की भूमिका पर बल क्रमिक रूप से बैंकों की दैनिक गतिविधियों के व्यष्टिगत विनियमन से हटकर व्यापक पर्यवेक्षण पर दिया जाने लगा है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि विनियमन का अनुपालन एक ऐसे परिवेश में किया जा रहा है जहाँ उनके अपने निष्कर्षों के आधार पर बैंकों के प्रबंध-तंत्र सभी वाणिज्यिक निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र हैं। वाणिज्यिक बैंकों, सहकारी बैंकों, गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, तथा वित्तीय संस्थाओं के वित्तीय विनियामक तथा पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक की भूमिका के विकास के संबंध में कुछ प्रमुख गतिविधियां इस भाग में प्रस्तुत की गई हैं।

क. वाणिज्यिक बैंकों का विनियमन तथा पर्यवेक्षण

5.25 1950 से पहले अनेक बैंक असफल हो गए थे और बैंकिंग क्षेत्र तब अर्थ व्यवस्था की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए विकसित नहीं हो पाया था। प्रारंभ में 1940 में रिज़र्व बैंक को यह अधिकार दिया गया था कि वह भारत सरकार से सलाह करके सीमित मात्रा में बैंकिंग कंपनियों का निरीक्षण कर सकता है। इन निरीक्षणों का प्रयोजन भी सीमित होता था। लाईसेंस के लिए पात्रता, शाखाओं का खोलना, उनका समामेलन तथा उसके द्वारा जारी निदेशों के अनुपालन के संबंध में रिज़र्व बैंक को संतुष्ट करना। संबंधित बैंकिंग कंपनियों की पूर्व सहमति से, रिज़र्व बैंक उनको प्रदत्त-पूंजी का वास्तविक या विनिमय - योग्य मूल्य निर्धारित करने तथा भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की दूसरी अनुसूची में उनको शामिल करने की उनकी

पात्रता पर विचार करने के प्रयोजन से उनकी आरक्षित निधि का पता लगाने की दृष्टि से उनकी बहियों की और खातों की जांच करता था। बैंकिंग कंपनी (निरीक्षण) अध्यादेश, 1946 द्वारा रिज़र्व बैंक बैंक को बैंकिंग कंपनियों का निरीक्षण करने की विशेष शक्तियां प्रदान की गईं। इस अध्यादेश ने बैंकिंग कंपनी की पूर्व-सहमति को उसके निरीक्षण के लिए अनावश्यक बना दिया तथा निरीक्षण के उद्देश्यों को भी व्यापक बना दिया। बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के अंतर्गत रिज़र्व बैंक के लिए यह अपेक्षित था कि वह खाता बहियों तथा बैंकिंग कंपनी के परिचालनों की पद्धति का निरीक्षण करके लाईसेंस जारी करने से पूर्व अपने आपको संतुष्ट कर ले। यह प्रावधान यह सुनिश्चित करने में सहायता करता है कि उक्त बैंकिंग कंपनी अपने जमाकर्ताओं को उनके अर्जित दावे पूर्णतः अदा करने की स्थिति में है तथा यह कि उसके कार्य उसके जमाकर्ताओं के हितों के प्रतिकूल रूप में नहीं चलाए जा रहे हैं।

5.26 निरीक्षणों में अंतर्निहित प्रयोजन किसी बैंकिंग कंपनी की प्रदत्त-पूंजी और आरक्षित निधियों की वास्तविक या विनिमय-मूल्य के मात्रात्मक आकलन से क्रमिक रूप से बदलकर उसकी वित्तीय स्थिति, प्रबंधन तथा परिचालन की पद्धतियों का आकलन करना हो गया। जुलाई 1949 में, सभी बैंकिंग कंपनियों के प्रणालीगत आवधिक निरीक्षण करने की नीति घोषित की गई। फरवरी 1950 में, यह निर्णय किया गया कि सभी बैंकिंग कंपनियों का निरीक्षण किया जाएगा भले ही उनका आकार और हैसियत तथा अस्तित्व की अवधि कोई भी क्यों न हो और यह कि ऐसा निरीक्षण रिज़र्व बैंक की पर्यवेक्षी गतिविधियों की नियमित विशेषता होगी।

स्थापना का चरण (1950-1968)

5.27 1950 के बाद के दशक के दौरान विनियमन और पर्यवेक्षण का मुख्य बल ऐसी उदीयमान अर्थ व्यवस्था की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए बैंकिंग प्रणाली की एक संरचना को तैयार करने में सुविधा प्रदान करना था जो योजनाबद्ध आर्थिक वृद्धि के पथ पर बढ़ रही है। रिज़र्व बैंक ने मार्च 1950 में सभी बैंकों के प्रणालीगत आवधिक निरीक्षण शरू किए। इन निरीक्षणों ने कुछ बैंकों के परिचालनों में अवांछनीय पहलुओं को दर्शाया जैसे - दोषपूर्ण अग्रिम और निवेश; प्रबंध और नियंत्रण में दोष : शाखाओं का अपर्याप्त पर्यवेक्षण, प्रारक्षित निधियों का निम्नस्तर; सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश का निम्नस्तर; तथा निवेश के मूल्य के लिए अपर्याप्त प्रावधान। इनमें से अनेक कमियां गैर अनुसूचित बैंकों के मामले में अक्सर पाई गईं। रिज़र्व बैंक ने उन मामलों में जो लाईसेंस के लिए बैंकों की पात्रता का आकलन करने के लिए किए गए किसी निरीक्षण में ऐसी कमियाँ पाई गई थीं। कोई निर्णय लेना स्थापित कर दिया ताकि उस बैंक को लाइसेंस के लिए पात्रता हेतु सफल होने के लिए उपयुक्त अवसर दिया जा सके तथा कई मामलों में सुधार पाए जाने के बाद लाईसेंस प्रदान किए गए । 1953 में रिज़र्व बैंक अस्थायी रूप से कुछ बैंकों के समामेलन के लिए सहमत हो गए, बशर्ते यह समामेलन जमाकर्ताओं के हित में माना गया हो।

5.28 बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के लागू हो जाने पर इसने बैंकिंग कंपनियों की प्रबंधकीय अनियमियताओं से निपटने में, विशेषकर बैंकों के निदेशकों, प्रबंध-निदेशकों और मुख्य कार्य पालक अधिकारियों की नियुक्तियों संबंधी शर्तों के बारे में, रिज़र्व बैंक की शक्तियों के संबंध में कानून में कुछ कमियों को उजागर किया। नीतिगत मुद्दों के संबंध में बैंकिंग कंपनियों को निदेश देने का मुद्दा अपर्याप्त पाया गया। इन कमियों के दूर करने की दृष्टि से जनवरी 1957 में उस अधिनियम में सुधार किया गया। कुछ अन्य गतिविधियाँ थीं बैंकों द्वारा पुनर्वित्त सुविधाओं के लिए प्रावधान करना तथा एसबीआईए ॲक्ट को पारित करना ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि बैंकिंग प्रणाली को लचीलापन प्रदान कर दिया गया है ताकि वह विकासशील अर्थव्यवस्था की आवश्यकताओं के प्रति अधिक प्रतिक्रियाशील हो जाए।

5.29 पलाई सेंट्रल बैंक तथा लक्ष्मी कमर्शियल बैंक दोनों के 1960 में पतन में वाणिज्यिक बैंकों के प्रति रिज़र्व बैंक की नीति के अनेक पहलुओं को प्रभावित किया। इन दोनों बैंको के फेल हो जाने से रिज़र्व बैंक निरीक्षण मशीनरी को सुधारने की आवश्यकता के प्रति सचेत हो गया। इससे रिज़र्व बैंक ने बैंकों तथा यहाँ तक कि उनकी कुछ शाखाओं का भी आकस्मिक निरीक्षण किया और उससे धोखधड़ियों का पता लगाया। पलाई सेंट्रल बैंक के बंद हो जाने के बाद रिज़र्व बैंक ने समामेलन करने तथा बैंकों के लाइसेंस तेजी से रद्द करने की नई शक्तियां प्राप्त कीं। 1961 में, रिज़र्व बैंक ने अपनी निरीक्षणागत व्यवस्थाओं को पुनर्गठित तथा सशक्त बनाया ताकि गतावधि की अपेक्षा कहीं ज्यादा शाखाओं का निरीक्षण किया जा सके तथा इन निरीक्षणों को और व्यापक बनाया गया ताकि उसमें चयनात्मक लेखा परीक्षा का तत्व भी शामिल किया जा सके। रिज़र्व बैंक ने भारतीय बैंकों के लिए पूंजी पर्याप्तता मानदंडों विकसित करने के लिए तथा वाणिज्यिक बैंकों के पूंजी मानदंडों को ध्यान में रखते हुए एक जमा बीमा योजना लागू करने के लिए काफी रुचि दिखाई। इन उपायों ने रिज़र्व बैंक के निरीक्षणों की भूमिका को सुदृढ़ करने में सहायता की।

5.30 1960 और 1968 के बीच रिज़र्व बैंक के विनियमन और पर्यवेक्षण कार्य का मुख्य जोर बैंकों के परिचालनों की सुदृढ़ता को सुनिश्चित करने और समेकन तथा अनिवार्य समामेलन तथा समापनसहित विभिन्न उपायों द्वारा छोटे जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करने पर बना रहा। इस अवधि के दौरान जमा बीमा योजना भी शुरू की गई। शाखा लाईसेंस की नीति के माध्यम से रिज़र्व बैंक ने भारतीय बैंकों की शहरों में केंद्रित असंतुलित शाखा वितरण के कार्य को दुरूस्त करना शुरू किया। शाखा विस्तार कार्यक्रम तथा निधियों के विप्रेषण की सुविधा बढ़ाकर कुछ कम विकसित क्षेत्रों में बैंकिंग की वृद्धि को प्रोत्साहित

किया। इस अवधि के दौरान व्यक्तियों के कुछ समूहों द्वारा उन बैंकों के कार्यो पर जिनमें उनका मालिकाना हित निहित था, लागू किए गए नियंत्रण को कम कर दिया गया। बैंकिंग प्रणाली को एक नई दिशा देने की आवश्यकता को 1967 में मान लिया गया तथा ऋण को नियोजित करने से संबंधित मुद्दो पर सामाजिक नियंत्रण की संकल्पना को लागू किया गया (मल्होत्रा 1990)।

सुदृढ़ीकरण और समेकन का चरण (1969-1991)

5.31 19 जुलाई, 1969 को 14 प्रमुख वाणिज्यिक बैंकों का राष्ट्रीकरण सार्वजनिक क्षेत्र की प्रविष्टि के साथ ही भारतीय बैंकिंग प्रणाली में एक नया मोड़ आया। बैंकों के राष्ट्रीकरण के उद्देश्यों को पूरा करने के लिए विनियमन के मुख्य जोर को नया रूप दिया गया। राष्ट्रीकरण के बाद बैंकों को सौंपी गई व्यापक भूमिका के संदर्भ में बैंकों के निरीक्षण की प्रणाली का भी पुनर्गठन करने की आवश्यकता हुई। बैंकों के निरीक्षणों के पुनर्गठन के अनुसार अब इनका उद्देश्य विभिन्न पहलुओं में प्रत्येक बैंक के समग्र कार्य-निष्पादन का मूल्यांकन करना था। रिज़र्व बैंक ने प्रारंभ में नए राष्ट्रीकृत बैंकों को यह सूचित किया कि किसी भी ऐसे प्रस्ताव को स्वीकृत करने से पूर्व, जिसके लिए सामान्य परिस्थितियों में उनके बोर्ड का अनुमोदन अपेक्षित है, रिज़र्व बैंक से सलाह ले लें। रिज़र्व बैंक ने राष्ट्रीकृत बैंकों को यह भी आश्वासन दिया कि कारोबार का निराशाजनक तक अंतरण या आहरण होने की स्थिति में वह उन्हें बिना किसी शर्त के समर्थन देगा। रिज़र्व बैंक ने राष्ट्रीकरण के उद्देश्यों को लागू करने के आवश्यक उपायों तथा शाखा विस्तार के राष्ट्रीकरण से संबंधित मुद्दो पर राष्ट्रीकृत बैंकों के साथ विचार-विमर्श किए।

5.32 केंद्र सरकार ने रिज़र्व बैंक के साथ परामर्श करके 18 जुलाई 1970 को प्रत्येक राष्ट्रीकृत बैंक के लिए प्रथम निदेशक मंडल का गठन किया। इस प्रकार विनियामक के रूप में रिज़र्व बैंक ने यह सुनिश्चित किया कि नए राष्ट्रीकृत बैंक सुचारू रूप से परिचालन करना जारी रखें तथा जमाकर्ताओं और ग्राहकों को असुविधा नहीं हो।

5.33 सरकार ने भी बैंको की शाखा विस्तार नीति जैसे मुद्दों पर नियंत्रण लागू करना प्रारंभ किया इससे ऐसी स्थिति पैदा हो गई जिसके अंतर्गत बैंकिंग प्रणाली के विनियमन पर अधिकार क्षेत्र में दुहरापन आ गया। रिज़र्व बैंक ने यह सुनिश्चित करने के लिए सधन प्रयास किए कि इसकी लाइसेंस देने की नीति के अंतर्गत बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार संतुलित रूप में हो। राष्ट्रीय ऋण परिषद (एनसीपी) के गठन, जो सामाजिक नियंत्रण की नीति के कारण हुआ, ने भी शाखा लाइसेंस और प्रक्रियाओं पर प्रभाव डाला। राष्ट्रीय ऋण नीति ने शाखा लाइसेंस देने की नीति में संशोधन के कुछ सुझाव दिए। तदनुसार इस नीति का मई 1968 में संशोधन किया गया। दिसंबर 1969 में शुरू की गई अग्रणी बैंक योजना की उत्पत्ति इस प्रयास से हुई और इसने यह उदाहरण प्रस्तुत किया कि कैसे बैंकिंग सामाजिक नीति का साधन बन गया।

5.34 राष्ट्रीकरण के पश्चात्, शाखा लाइसेंसीकरण की नीति में भारी रूपांतरण हुआ। रिज़र्व बैंक ने यह प्रस्ताव किया था कि नए कार्यालयों के लिए आवेदन पत्रों पर उस विशेष स्थान पर कारोबारी संभावना तथा क्या उस क्षेत्र में पर्याप्त बैंकिंग सुविधा है या नहीं का आकलन करने के बाद विचार किया जाएगा। तथापि बैंकिंग विभाग, वित्त मंत्रालय का विचार था कि मई 1968 में विनिर्दिष्ट नीति की दृष्टि से शाखा विस्तार अभी भी भारी मात्रा में शहरोन्मुखी है तथा यह कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में 1:1 का मानदंड तथा सात कम बैंक वाले राज्यों में एक साख से कम की आबादी वाले केंद्रों में 10 प्रतिशत शाखाएं खोलने की नीति शायद अब प्रासंगिक नही है । बैंकिंग विभाग ने भी यह अनुभव किया किसी राष्ट्रीकृत बैंक द्वारा किसी ऐसे राज्य या संघशासित प्रदेश में जहाँ उसकी पहले से ही काफी उपस्थिति नहीं हो, वहाँ ऋण संबंधी अवरोधों तथा वरिष्ठ अधिकारियों के स्थानीय समस्याओं से परिचित न होने के कारण उठनेवाली कठिनाईयों के कारण शाखा खोलने को निरूत्साहित किया जाना चाहिए। तथापि, रिज़र्व बैंक का मत था कि शाखा लाइसेंसीकरण का दायित्व रिज़र्व बैंक का ही बना रहना चाहिए।

5.35 बाद में रिज़र्व बैंक ने 1972 से 1974 के तीन वर्षों के लिए शाखा विस्तार कार्यक्रम के लिए एक भावी योजना मंगवाने का विचार किया। इसे प्रत्येक बैंक को तैयार करना था, जिसमें अल्पविकसित / अल्पबैंक सुविधा वाले जिलों को प्राथमिकता देनी थी, परंतु वित्त मंत्रालय की राय इससे भिन्न थी। उन्होंने यह अनुभव किया कि बैंकों द्वारा खोले गए ग्रामीण कार्यालयों (शाखाओं) के अनुपात ने गिरने या कम होने की प्रवृत्ति दर्शाई है, तथा यह कि संशोधित फार्मूले में ऐसी प्रकृति को प्रतिकूल रूप से प्रमाणित नहीं किया है तथा इसमें कुछ कार्यालयों की तुलना में ऐसे कार्यालयों को खालने में कमी लाने की कोई अंतवर्ती प्रवृत्ति नहीं है। बाद में वित्त मंत्रालय में नए निर्मित राजस्व एवं बैंकिंग विस्तार ने भी ग्रामीण और अर्ध शहरी क्षेत्रों में शाखा विस्तार कार्यक्रम में तेजी लाने पर जोर दिया है। रिज़र्व बैंक ने इस विचार को शामिल करते हुए सभी वाणिज्यिक बैंकों को मार्गदर्शी दिशा विदेश जारी किए हैं। रिज़र्व बैंक ने यह निर्दिष्ट किया है कि एक ऐसी स्थिति आ गई है जहाँ बैंकों को विभिन्न राज्यों और जिलों के बीच शाखा विकास में उस समानता को कम करने की आवश्यकता पर पर्याप्त रूपसे विचार करने तथा समेकन की प्रक्रिया पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

5.36 पर्यवेक्षी प्रक्रिया तंत्र को और सुदृढ़ करने की दृष्टि से यह निर्णय लिया गया कि 1977-78 के दौरान एक नए प्रकार का निरीक्षण किया जाए - अर्थात् वित्तीय आकलन के अलावा बैंकों का वार्षिक

आकलन भी किया जाए। जहाँ वित्तीय आकलन में मुख्य जोर आस्तियों और देयताओं के आकलन तथा बैंकों की परिचालन पद्धतियों को आकलन पर रहता था, वहीं निरीक्षण की वार्षिक आकलन प्रणाली में अधिक बल प्रणालियों के आकलन तथा विकासात्मक पहलुओं पर दिया गया। बैंकों के निरीक्षण की प्रणाली पर निरंतर संवीक्षा की जाती रही है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इस अभ्यास से अपेक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति होती है।

5.37 1970 के बाद के दशक के दौरान रिज़र्व बैंक ने निजी क्षेत्रों के बैंकों के प्रबंध तंत्र को सुदृढ़ करने से संबंधित विभिन्न मुद्दों को उनके बोर्डो का पुनर्गठन करके निपटाया। भारतीय राष्ट्रीकृत बैंकों को विदेशी शाखाओं के पर्यवेक्षण और नियंत्रण पर भी ध्यान दिया गया। बैंकिंग क्षेत्र में लेखांकन, पुनर्वित्त के प्रावधान, बैंकिंग प्रयासों से निरीक्षण की प्रणालियों और प्रक्रियाओं से संबंधित मुद्दों पर भी ध्यान दिया गया।

5.38 1980 के बाद के दशक में रिज़र्व बैंक की विनियामक और पर्यवेक्षी कार्यों ने विभिन्न मुद्दों पर ध्यान केंद्रित किया। 1980 में यह निर्णय किया गया कि सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों का उद्देश्य यह होगा कि वे अपने अग्रिमों का अनुपात प्राथमिक प्राप्त क्षेत्रों के लिए बढ़ाकर 1985 तक 40% तक ले आए तथा उसमें से काफी कुछ अंश बीस सूत्री कार्यक्रम के हिताधिकारियों को आबंटित किया जाएगा। रिज़र्व बैंक ने यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया कि लघु और सीमांत क्षेत्रों में अधिक ऋण उपलब्ध कराए जाएंगे तथा बैंकों को यह निदेश दिए कि वे ऋण की कमीवाले क्षेत्रों में अधिक ऋण उपलब्ध कराएं। इन मुद्दों पर ध्यान दिए जाने का परिणाम यह हुआ कि 1980 में छह और बैंको का राष्ट्रीकरण कर दिया गया।

5.39 बैंकिंग प्रणाली के भारी विस्तार का परिणाम यह हुआ कि कुछ क्षेत्रों में दबाव और तनाव पैदा हो गया। भौगोलिक दृष्टि से व्यापक क्षेत्रो में शाखाओं के होने से पर्यवेक्षण और नियंत्रण शिथिल पड़ गया। रिज़र्व बैंक ने सार्वजनिक क्षेत्र तथा निजी क्षेत्र के वाणिज्यिक के निरीक्षण की प्रणाली की समीक्षा करने तथा उनमें सुधार / संशोधन सुझाने के लिए दिसंबर 1981 में बैंकों के निरिक्षण पर एक कार्य दल गठित किया। उक्त कार्यदल की सिफारिशों का अनुसरण करते हुए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निरीक्षण का वार्षिक मूल्यांकन करना छोड़ दिया गया। जनवरी 1985 से बैंकों की वार्षिक लेखा परीक्षा होने के बाद चलाई जानेवाली वार्षिक वित्तीय समीक्षा की प्रणाली शुरू की गई बैंक शाखाओं में आंतरिक नियंत्रण प्रणालियों की समीक्षा सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निरीक्षक मंडलों का पुनर्गठन तथा भारतीय बैंकों की बदली अंतरराष्ट्रीय उपस्थिति के संदर्भ में बैंकों के पूंजीकरण को बढ़ाने को महत्व दिया गया। बैंकों की विद्यमान निरीक्षण प्रणालियों की समीक्षा करने का कार्य भी शुरू किया गया। आपदाग्रस्त मध्यवर्ती सहकारी बैंकों तथा भूमि विकास बैंकों के पुनर्वास का प्रयास किया गया। विदेशी बैंकों के स्थानीय परामर्शी बोर्ड गठित किए गए। उनके परिणाम स्वरूप 1980 के बाद के दशक के माध्यम में यह प्रणाली समेकन, विशाखीकरण और उदारीकरण के चरण में प्रवेश कर गई (मल्होत्रा 1990)। इस अवधि तक आते-आते शाखा विस्तार का कार्य काफी सीमा तक धीमा पड़ गया।

अविनियमन और उदारीकरण का चरण (1991 के बाद)

5.40 1990 के बाद का दशक आमतौर पर भारतीय वित्तीय प्रणाली, और विशेषकर, बैंकिंग प्रणाली के इतिहास में विशेष उल्लेखनीय रहा है। 1980 के बाद के दशक में भारतीय बैंकिंग प्रणाली ने सामाजिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में उल्लेखनीय प्रगति करने के बावजूद कुछ समस्याओं का भी अनुभव किया जिनके कारण उनकी दक्षता और उत्पादकता में कमी तथा उनकी लाभप्रदता में गिरावट आई। निदेशित निवेश तथा निदेशित ऋण कार्यक्रमों को बैंकिंग प्रणाली की परिचालनगत दक्षता को प्रमावित किया। ऋण संविभाग की गुणवत्ता में भी गिरावट आ गई। कार्यमूलक दक्षता, अधिक स्टाफ होने, प्रौद्योगिकी को लाने में अपर्याप्त प्रगति, तथा बैंकों की आंतरिक संगठनगत संरचना में कमजोरी के कारण प्रभावित हुई। इन कारणों ने वित्तीय प्रणाली ने शीघ्र सुधार किए जाने को आवश्यक बना दिया। तदनुसार व्यापक वित्तीय क्षेत्र के सुधार शुरू करने की दृष्टि से बैंकिंग से संबंधित विभिन्न मुद्दों की जांच करने के लिए वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति (अध्यक्षः एम.नरसिहंम, 1991) गठित की गई। नरसिंहम समिति की सिफारिशें का अनुसरण करते हुए रिज़र्व बैंक ने वित्तीय क्षेत्र के सुधारों पर व्यापक दृष्टिकोण अपनाया।

5.41 पर्यवेक्षण विभाग (डीओएस) को जिसे अब बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग (डी बी एस) कहा जाता है, संस्थागत ढांचे को सुदृढ़ करने के लिए 1993 में रिज़र्व बैंक के अंदर गठित किया गया। वित्तीय पर्यवेक्षण के लिए उच्चधिकार प्राप्त बोर्ड (बीएफएस) का गठन नवंबर 1994 में किया गया जिसमें भारतीय रिज़र्व बैंक के गवर्नर अध्यक्ष के रूप में एक उप गवर्नर, उपाध्यक्ष, तथा रिज़र्व बैंक में केंद्रीय बोर्ड के चार निदेशक इसके सदस्य थे।

5.42 बैंकों को सदृढ़ करने के लिए ब्याज दरों को विनियंत्रित करने, सीआरआर, एसएलआर जैसी सांविधिक पूर्व करों में कटौती तथा बैंकों को परिचालनगत स्वायतत्ता जैसे उपाय किए गए। इसके अलावा, विभिन्न ऐसे विवेकसम्मत उपाय भी किए गए जो वैश्विक सर्वोत्तम संव्यवहारों के अनुरूप थे। बैंकिंग क्षेत्र के सुधार का एक प्रमुख उद्देश्य वर्धित प्रतिस्पर्धा द्वारा दक्षता तथा उत्पादकता को बढ़ाना रहा है। (मोहन 2005)। नरसिंहम समिति की सिफारिशों के अनुसरण में निजी क्षेत्र के बैंकों की प्रविष्टि को सुविधाजनक बनाने के लिए बैंकिंग प्रणाली की उच्चतर उत्पादकता और दक्षता प्राप्त करने की दृष्टि से मेहत्तर प्रतिस्पर्धा को बढ़ाने की दृष्टि से 1993 में मार्गदर्शी दिशा निदेश जारी किए गए।

5.43 वर्षों से, भारत में विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियां वैश्विक गतिविधियों के अनुरूप तथा भारतीय वित्तीय प्रणाली की बदलती गति के अनुसार उल्लेखनीय रूप से बदली हैं। प्रत्यक्ष निरीक्षण (स्थल पर जाकर निरीक्षण) के अलावा, रिज़र्व बैंक ने तीन अन्य पर्यवेक्षी दृष्टिकोणों को अपनाया जैसे - ऑफ साइट (अप्रत्यक्ष) निगरानी, बैंकों में आंतरिक नियंत्रण प्रणाली तथा बाह्य लेखा परीक्षकों का उपयोग। भारतीय रिज़र्व बैंक की निरीक्षण प्रणाली की समीक्षा एक कार्यदल द्वारा की गई । बैंकों पर प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण प्रणाली की समीक्षा संबंधी कार्यदल (अध्यक्षः एस. पद्मनाभन) का गठन फरवरी 1995 को किया गया। उक्त कार्यदल ने जहाँ प्रत्यक्ष निरीक्षणों की प्रमुखता पर पुनः बल दिया, वहीं यह भी सिफारिश की कि इससे एक सतत निरीक्षण की प्रणाली की ओर बढ़ा जाए इसने एक आंतरिक अप्रत्यक्ष निगरानी प्रणाली से समर्थित आवधिक पूर्ण प्रत्यक्ष जांच की रणनीति की सिफारिश की तथा दो सांविधिक जांचों के बीच में संबद्ध अभ्यासों की भी सिफारिश की।

5.44 कार्यदल ने सिफारिश की कि पथ से भटकी (विपथन) की प्रक्रियाओं को ठीक करने की दिशा में पर्यवेक्षण को मोड़ा जाए। यह निर्णय किया गया कि आवधिक और पूर्ण सांविधिक जांचों को आकलन के मूल क्षेत्रों पर केंद्रित किया जाए जैसे (क) वित्तीय स्थिति तथा कार्य-निष्पादन (ख) प्रबंधन तथा परिचालनात्मक स्थिति (ग) अनुपालन तथा (घ) अंतरराष्ट्रीय रूप से स्वीकृत पूंजी पर्याप्तता, आस्ति गुणवत्ता, प्रबंधन, आय, चलनिधि तथा प्रणालियां (केमल्स) रेटिंग मॉडल तथा भारतीय बैंकों की प्रणालियों और नियंत्रण को इसमें जोड़ते हुए तथा विदेशी बैंकों के लिए (पूंजी-पर्याप्तता, अति गुणवत्ता, अनुपालन, प्रणालियां और नियंत्रणों) के सीएसीएम मॉडल को जोड़ते हुए आकलन किया जाए। बाद में, इस मॉडल को सीएएलसीएस बनाने के लिए चलनिधि के परीक्षण को भी शामिल किया गया। आवधिक सांविधिक परीक्षणों के साथ चार प्रकार के नियमित और चक्रिय प्रत्यक्ष आकलन भी किए जाने थे जैसे - लक्षित आकलन, नियंत्रक बिंदुओं पर लक्षित आकलन, अधिकृत लेखा परीक्षा तथा निगरानी दौरे।

5.45 अप्रत्यक्ष निगरानी तथा चौकसी (ओसमोस) प्रणाली को 1995 में परिचालन में ले आया गया जो आपात प्रबंधन के एक भाग के रूप में जल्दी चेतावनी देने वाली प्रणाली का ढांचा था तथा संवेदी संस्थाओं के प्रत्यक्ष निरीक्षण के लिए खतरे की घंटी जैसी थी। बैंकों से यह अपेक्षित था कि वे विनियामक सह-पर्यवेक्षी रिपोर्ट देने के लिए इनफिनेट के उपयोग के स्तर में वृद्धि करें। ऐसे क्षेत्रों का पता लगाने के लिए जिनमें तत्काल पर्यवेक्षी कार्रवाई की जानी है, तथा समय रहते कार्रवाई करनी है, वहाँ जून 2005 से सभी श्रेणी के बैंकों के लिए विवरणी प्रस्तुत करने की समय-सीमा को घटा दिया गया है।

5.46 बैंकों में आंतरिक नियंत्रण तथा निरीक्षण / लेखा परीक्षा प्रणाली संबंधी कार्यदल (अध्यक्षः आर. जिलानी) की सिफारिशें 1997-98 के दौरान लागू की गई) रिज़र्व बैंक ने अप्रैल 1999 में विनियमन समीक्षा प्रधिकरण गठित किया। ऐसे बैंक की वित्तीय स्थिति का पता लगाने के लिए जिसके समेकन के स्तर पर सहायक संस्थाएं / संयुक्त उद्यम हों, मार्च 2003 से समेकित लेखांकन और पर्यवेक्षण शुरू किया गया। एक समेकित विवेक सम्मत रिपोर्टिंग (सीपीआर) प्रणाली 2003 में शुरू की गई।

5.47 सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में हुए व्यापक परिवर्तनों जो उनके आकार और परिचालनों की जटिलता के रूप में झलकते हैं, को ध्यान में रखते हुए सार्वजनिक क्षेत्र के बैंको में सांविधिक लेखा परीक्षकों की नियुक्ति के लिए अपनाए जाने वाले मानदंडों और संव्यवहारों की जांच करने के लिए एक कार्यदल गठित किया गया। बैंकों के पर्यवेक्षण में बाह्य लेखा परीक्षकों की भूमिका को मजबूत किया गया।

5.48 बैंकिंग कारोबार में आई जटिलताओं तथा जटिल जोखिम संविभागों के साथ उभरते नवोन्मेषी उत्पादों के साथ रिज़र्व बैंक ने पर्यवेक्षण की जोखिम आधारित पर्यवेक्षण दृष्टिकोण को लागू करने के लिए उपाय किए। जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (आरबीएस) पर हाल ही में समीक्षा की गई है, जिसमें जोखिम प्रोफिलिंग टेम्प्लेट की जांच करते हुए तथा एक नए रेटिंग ढ़ाचे को लागू किया गया। इस संशोधन से आरबीएस प्रक्रिया को और भी अधिक जोखिम संवेदी, वस्तुनिष्ठ तथा उपयोगकर्ताओं में अनुकूल बनाने की उम्मीद है (बॉक्स V.4)।

5.49 वित्तीय क्षेत्र की सम्मिश्र वृद्धि तथा सीमा-पारीय वित्तीय समूहों की वृद्धि के कारण वित्तीय समूहों से जुड़े देश विदेश के समग्र संकटों तथा संभावित जोखिमों से निपटने में देश की प्रतिक्रियाओं को समझने के लिए पर्यवेक्षण प्रक्रिया को विशेष ध्यान देने की जरूरत है। रिज़र्व बैंक ने बकाया मुद्दों /पर्यवेक्षण संबंधी चिंताओं से निपटने के लिए वित्तीय समूहों के मुख्य कार्यपालक अधिकारी तथा अन्य मुख्य विनियामकों के साथ छमाही चर्चा बैठक करता है। वो वित्तीय समूहों की निगरानी प्रणाली को और सुदृढ़ करेगा।

5.50 एक ऐसी सुरक्षित और सुदृढ़ बैंकिंग प्रणाली बनाने की दिशा में, जिसे एक मजबूत पर्यवेक्षी व्यवस्था का समर्थन प्राप्त हो, त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई (पीसीए) की प्रणाली की परिकल्पना की गई है। हाल के वर्षों मेंअंतरराष्ट्रीय वित्तीय संबधों में काले धन को वैध बनाने संबंधी गतिविधियों को रोकने की महत्व प्राप्त हुआ है।नवंबर, 2004 में काले धन को वैध बनाने के विरोधी (एएमएल) तथा आंतकवाद के वित्तपोषण को रोकने (सीएफटी) संबंधी मानकों पर वित्तीय कार्रवाई कार्यदल (एफएटीएफ) द्वारा की गई सिफारिशों के अनुरूप अपने ग्राहक को जानिए (केवाईटी) सिद्धांतों के दिशा निदेशों को भी रिज़र्व बैंक ने संशोधित किया है।

5.51 हाल के वर्षों में व्यापक ऋण अधिसूचना जो किसी उधारकर्ता द्वारा पहले से ही ली गई ऋण सुविधाओं तथा उसकी चुकौती के पिछले

बॉक्स V.4
देश-देश में प्रथाएं : जोखिम आधारित पर्यवेक्षण

जोखिम आधारित पर्यवेक्षण (आरबीएस) विधेयक पर्यवेक्षण के सिद्धान्त पर आधारित है। विकसित और उभरती हुई दोनों प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं के समूहों में अनेक देशों में इस जोखिम आधारित पर्यवेक्षी दृष्टिकोण को अपनाया है। 1997 में दो परामर्शी लेखों के प्रकाशन के बाद, जिसमें दो दृष्टिकोणों को शामिल किया गया था जैसे जोखिम आकलन, पर्यवेक्षण के साधन, मूल्यांकन (आरएटीइ) तथा अनुसूची 3 अनुपालन आकलन, संपर्क मूल्यांकन (एससीएसएलइ)। बैंक ऑफ इंग्लैंड ने जोखिम आधारित पर्यवेक्षी दृष्टिकोण को अपनाया। बैंक ऑफ इंग्लैंड (अब पर्यवेक्षण को वित्तीय सेवा प्राधिकरण को सौंप दिया गया है) मे पर्यवेक्षण के मानक स्थापित करते हुए एक लचीले और विभेदक जोखिम आधारित पर्यवेक्षण को अपनाया है। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत विनियामक विभिन्न बाह्य जोखिमों को हिसाब में लेते हुए किसी संस्था का जोखिम का खाका बनाता है। विनियामक जोखिम प्रशमीकरण कार्यक्रम (आरएमपी) भी बनाता है, जिसमें निदानात्मक, निगरानीपरक प्रतियोगी और उपचारी साधन शामिल होते हैं जिन्हें परिणामकारक रूप में बनाया जाता है। (बैंक ऑफ इंग्लैंड 1998)।

वित्तीय संस्थान अधीक्षक का कार्यालय (ओएसएफआई) कनाडा, ने बैंक की सहायक संस्थाओं तथा संबद्ध संस्थाओं की गतिविधियों तथा उनके घरेलू और विदेशी परिचालनों के पर्यवेक्षण के लिए अगस्त 1999 में जोखिम आधारित पर्यवेक्षी ढांचे की शुरुआत की। पर्यवेक्षी गतिविधियों के लिए ओएसएफआई के जोखिम आधारित दृष्टिकोण में बैंक की सभी उल्लेखनीय गतिविधियों का मूल्यांकन भी शामिल है चाहे वे गतिविधियों बैंकिंग से संबंधित हो या गैर बैंकिंग से।उस पर्यवेक्षण के दृष्टिकोण में विभिन्न अंतर्निहित जोखिमों का आकलन करना तथा विभिन्न कारोबारी जोखिम क्षेत्रों का (जैसे ऋण, बाजार, परिचालन, चलनिधि आदि) नियंत्रण करना तथा बैंक के निवल जोखिम पर पहुँचना शामिल है।

आस्ट्रेलिया में, 1990 के बाद के दशक में उत्तरार्ध में यह पाया गया कि लगभग 86 प्रतिशत बैंकों को, जो कुल बैंक आस्तियों के 95 प्रतिशत को दर्शाते हैं, आस्ट्रेलियन प्रूडेंसियल रेग्यूलेटरी आथोरिटी (एपीआरए) द्वारा जोखिम की समेकनवाली रेटिंग में निम्न जोखिम की श्रेणी में रखा गया। इस प्रकार यह पाया गया कि ये रेटिंग बैंकिंग क्षेत्र के अंदर संस्थाओं के लिए पर्यवेक्षी गतिविधियों को प्राथमिकता क्रम देने के लिए अपर्याप्त आधार प्रदान करती है। इस पृष्ठभूमि में तथा अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों के अनुरूप जुलाई 2000 में एपीआरए ने संवेदनशील वित्तीय संस्थाओं, जिनमें अधिकांश बैंक भी शामिल थे, के लिए एक जोखिम आधारित पर्यवेक्षी पद्धति भी अपनाई। एपीआरए का पर्यवेक्षी ढांचा संगत, कठोर, प्रभावी और लक्षबद्ध जोखिम आधारित पर्यवेक्षण को बढ़ाना चाहता है। इसके अलावा, इन देशों ने आपातकालीन आवश्यकताओं को पूरा करने में शामिल साधनों को उन्नत बनाकर पर्यवेक्षण के लिए जोखिम आधारित दृष्टिकोण की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए आवश्यक कदम उठाए हैं।

भारत में, बैंकों के लिए जोखिम आधारित पर्यवेक्षण की ओर बढ़ने का विचार सर्वप्रथम 2000 में शुरू किया गया। रिज़र्व बैंक का आरबीएस ढांचा किसी बैंक द्वारा झेले जा रहे विभिन्न जोखिमों के विश्लेषण के द्वारा बैंकों के जोखिम की रूपरेखा का आकलन करता है। शुरू शुरू में चलाए गए आधारित पर्यवेक्षण के दो दौर चले जिनमें 23 बैंकों को शामिल किया गया । इससे प्राप्त अनुभवों के आधार पर आरबीएस की प्रक्रिया की अक्तूबर 2005 में समीक्षा की गई ताकि जोखिम की रूपरेखा बनाने वाले अभ्यागत को और अधिक जोखिम संवेदी, वस्तुपुरक तथा उपयोगकर्ता के अनुकूल बनाया जा सके। यथोचित जोखिम आकलन तथा जोखिम के समूहन के लिए रेटिंग का एक नया ढांचा बनाया गया है।

बैंकों के लिए आरबीएस ढांचे को सुचारू रूप से कार्यान्वयन को नया पूंजी समझौता (बेसिल II) के लिए पूर्वगामी स्थिति मानी जा सकती है। जो भारतीय बैंकों को बेसिल II मानदंडों को बेहतर तरीके से अपनाने में समर्थ बनाएंगे। इससे भारतीय रिज़र्व बैंकों की जोखिम प्रणाली के संव्यवहार सुदृढ़ होंगे तथा यह किसी संभावित संकट से उनकी रक्षा करेगा (लीलाधर : 2005)।

रिकार्ड के बारे में ब्योरे उपलब्ध करती है, महत्वपूर्ण हो गई है। तदनुसार बैंकों और वित्तीय संस्थाओं के चूककर्ता उधारकर्ताओं के संबंध में सूचना के प्रकटीकरण की एक योजना शुरू की गई । ऋण संबंधी मामलों पर सूचना के आदान-प्रदान को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से 2000 में एक ऋण आसूचना ब्यूरो (भारत) लि. (सिविल) का गठन किया गया।

5.52 उच्चस्तरीय गैर निष्पादक आस्तियों (एनपीए) से निपटने के लिए बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं को देय ऋण वसूली न्यायाधिकरण स्थापित किए गए। समस्याग्रस्त अर्थसक्षम संस्थाओं के कंपनी ऋणों की समय रहते और पारदर्शी रूप में पुनर्विन्यास के लिए एक प्रक्रिया तंत्र स्थापित करने की दृष्टि से 2001 में बीएफआर, डीआरटी तथा अन्य कानूनी प्रक्रियाओं के अधिकार क्षेत्र से बाहर कंपनी ऋण पुनर्निवेश (सीडीआर) की योजना शुरू की गई। निरंतर वसूली सुनिश्चित करने के लिए बैंकों को एक उल्लेखनीय प्रोत्साहन प्रदान करने की दृष्टि से 2002 में वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण तथा पुनर्गठन एवं प्रतिभूति अनुप्रवर्तन (एएफसी) अधिनियम पारित किया गया। गैर निष्पादक अस्तियों से निपटने के लिए बैंकों को उपलब्ध विकल्पों को बढ़ाने की दृष्टि से एनपीए की खरीद / बिक्री के बारे मार्गदर्शी दिशा-निदेश 13 जुलाई 2005 को जारी किए गए।

बासल मानदंड लागू करने में प्रगति

5.53 बासल समिति के मानदंडों (बासल I) की दिशा में बढ़ने के लिए एकसमान पूंजी सरंचना के मानकों तथा प्रगति को सुनिश्चित करने के लिए तथा बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि पूंजी पर्याप्तता प्रणाली बैंकिंग पर्यवेक्षण के लिए बासल के बुनियादी सिद्धांतों को अपनाने हेतु यह अपेक्षित है कि बैंक की सहमत संस्थाओं के कार्यकलापों में समेकित लेखांकन और पर्यवेक्षण के सिद्धांतों का कठोरतापूर्वक अनुपालन किया जाए।

5.54 बासल II का ढांचा इस प्रकार बनाया गया है कि वह बैंकिंग प्रणाली के परिचालनों को ऋण जोखिम, बाजार जोखिम तथा परिचालनगत जोखिम के लिए पूंजीगत अपेक्षाओं के निर्धारण का आधार प्रदान कर सके तथा बैंकों / पर्यवेक्षकों को उन दृष्टिकोणों का चयन करने में समर्थ बना सके जो उनके परिचालनों और वित्तीय बाजारों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त हैं। बासल II के अंतर्गत बैंकों की पूंजीगत अपेक्षाओं को बैंकों के तुलनपत्रों में निहित जोखिमों को और भी अधिक घनिष्ठता के साथ बनाया जाएगा। बासल II की ओर निर्बाध रूप से बढ़ने को सुनिश्चित करने की दृष्टि से, इसमें निहित जटिलताओं को देखते हुए एक परामर्शी दृष्टिकोण अपनाने की परिकल्पना की गई है। जैसा कि रिज़र्व बैंक ने निदेश दिया है, भारतीय बैंक मार्च 2007 से बासल II मानदंडों को अपनाने की तैयारी कर रहे हैं। बासल II मानकों के अंतर्गत परिष्करण के विभिन्न स्तरों की ओर बढ़ने की गति और क्रम का निर्धारण रिज़र्व बैंक द्वारा यथासमय किया जाएगा।

बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण का आधुनिकीकरण

5.55 समग्र दृष्टि से बैंकिंग प्रणाली की महत्ता पर विचार करते हुए कंपनी संचालन से संबंधित मुद्दों को उच्च महत्ता दी गई। रिज़र्व बैंक अभी हाल की अवधि में फिट एंड प्रोपर (सही और उपयुक्त) प्रबंध तथा विशाखीकृत स्वामित्व पर बल देने के साथ बेहतर कंपनी संचालन सुनिश्चित करने तथा बाजार अनुशासन को प्रोत्साहित करने पर ध्यान केंद्रित करता रहा है। बैंकों को अपने परंपरागत उत्पादों के अलावा और अधिक प्रकार के उत्पाद और सेवाएं देने और उनका विशाखीकरण करने के लिए प्रेरित किया गया था। यूनिवर्सल बैंकिंग की ओर बढ़ने की नीति की घोषणा की गई।

5.56 भारत की विवेकसम्मत विनियामक प्रणाली को आगे बढ़ाने के संदर्भ में परामर्शी प्रक्रिया को सुदृढ़ करने के लिए नवंबर 2003 में वित्तीय विनियमन संबंधी स्थायी तकनीकी परामर्शदात्री समिति का गठन बैंकों, बाजार सहभागियों तथा वित्तीय बाजारों के विनियामकों के बीच किया गया। भारतीय वित्तीय सेवा क्षेत्र में संभावित हितों के टकराव स्रोतों और स्वरूप की पहचान करने तथा उन्हें दूर करने के लिए संभावित उपायों / की जानेवाली कारवाई को सुझाने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक ने एक कार्यदल का गठन किया ।

5.57 यह सुनिश्चित करने के लिए कि ग्राहकों के साथ ईमानदारी पूर्ण व्यवहार के लिए आचरण की एक व्यापक संहिता संकल्पित की गई है और उसका पालन किया जाता है इसके लिए ब्रिटेन के मंडल की तर्ज पर एक स्वतंत्र भारतीय बैंकिंग संहिता एवं मानक बोर्ड का गठन कर लिया गया है। बेहतर आर्थिक समावेशन प्राप्त करने की दृष्टि से नवंबर 2005 से सभी बैंकों को बुनियादी बैंकिंग के नो फ्रील खाते या हो शून्य या बहुत कम न्यूनतम शेषराशियों और प्रभारी लिए एक बुनियादी बैंकिंग उपलब्ध कराएंगे। जो ऐसे खातों तक व्यापक जनता की पहुँच के अंदर ले आएंगे। बैंकों से अनुरोध किया गया है कि वे अपनी वर्तमान प्रथा की समीक्षा करें और उसे वित्तीय समेकन के उद्देश्य के अनुरुप बनाए।

5.58 सारे विश्व में वित्तीय प्रणालियों में आ रही प्रौद्योगिकीय उन्नयन के कारण हाल के वर्षों में बैंकिंग में कंप्यूटरीकरण को उच्च महत्व प्राप्त हुआ है। 100 प्रतिशत कंप्यूटरीकरण की ओर बढ़ने की संभावना का परिणाम यह हुआ है कि बैंकों में उस अपेक्षा की पूर्ति के लिए भरपूर प्रयास किए जा रहे हैं। जो बेहतर ग्राहक सेवा, आंतरिक नियंत्रण तथा प्रणाली प्रबंधन प्रदान करेंगे। भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा मई 2005 में जारी वित्तीय क्षेत्र के लिए प्रौद्योगिकी विजन दस्तावेज विभिन्न मानकों और दृष्टिकोणों पर व्यापक सूचना उपलब्ध कराकर आइएएस लेखा परीक्षा तथा कारोबारी निरंतरता योजनाओं का अपेक्षित ध्यान केंद्रित करके इसके द्वारा बल दिए जानेवाले क्षेत्रों पर प्रकाश डालता है।

ख. सहकारी बैंकों का विनियमन और पर्यवेक्षण

5.59 सहकारी बैंकिंग प्रणाली भारतीय वित्तीय प्रणाली को एक महत्वपूर्ण घटक है। भारत में सहकारी बैंक ग्रामीण जनसंख्या तथा शहरी जनसंख्या के कुछ भागों की भी बैंकिंग आवश्यकताओं को पूरा करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ग्रामीण ऋण की अपर्याप्तता ने 1950 और 1960 के बाद के पूरे दशकों में रिज़र्व बैंक तथा सरकार का ध्यान आकृष्ट किया। कृषि ऋण प्रणाली जैसा कि यह उभरकर आई है, वह विकास और हस्तक्षेप दोनों के उत्पाद के रूप में आई है तथा यह ऋण सुदुर्दगी से लगातार बने हुए असंतोष से प्रेरित प्रणाली की प्रतिक्रिया को प्रतिबिंबित करती है (मोहन 2004 क)।

5.60 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 में कृषि ऋण से संबंधित विशिष्ट प्रावधान हैं। आरबीआई अधिनियम की धारा 54 विशेष रूप से प्राधिकृत करती है कि न केवल ग्रामीण ऋण के लिए, बल्कि दीर्घावधिक वित्त और पुनर्वित्त के लिए भी रिज़र्व बैंक अपने अंदर ही एक कृषि ऋण विभाग का गठन कर सकता है। इस अधिनियम की धारा 17 इसे यह शक्ति प्रदान करती है कि वह राज्य सहकारी बैंकों या किसी अन्य ऐसी एजेंसी के माध्यम से जो कृषि में संलग्न हो, कृषि ऋण प्रदान कर सकता है। ग्रामीण ऋण के लिए एक व्यापक ऋण की बुनियादी संरचना बनाने की नींव अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण (1954) द्वारा रख दी गई थी। विदेश समिति ने, जिसने यह सर्वेक्षण कराया था, राष्ट्रीय कृषि ऋण निधि के निर्माण की सिफारिश की थी, जिसे बाद में रिज़र्व बैंक ने बनाया। कृषि पुनर्वित्त निगम ने, जिसकी स्थापना रिज़र्व बैंक द्वारा 1963 में की गई थी, पुनर्वित्त के माध्यम से निधियां उपलब्ध कराई, परंतु ऋण सहकारी समितियाँ अभी तक भी भली प्रकार काम नहीं कर रही थीं। अग्रमी बैंक योजना द्वारा विकेंद्रीकृत ऋण आयोजना ऋण के आंबटन के व्यापक प्रसार के लिए शुरू की गई जो अन्य कार्यों

के साथ-साथ कृषि को सुधार देने का कार्य भी करें। पुर्नवित्त पोषण के अलावा, कृषि पुनर्वित्त निगम को दी गई विकासात्मक और संवर्धनात्मक भूमिका पर जोर देने के लिए कृषि पुनर्वित्त निगम को 1975 में कृषि पुनर्वित्त एवं विकास निगम का नाम दिया गया। उन सब प्रयासों के बावजूद कृषि क्षेत्र को ऋण का प्रवाह किसी खास सुधार को दर्शाने में असमर्थ रहा क्योंकि सहकारी संस्थाओं के पास संसाधनों की कमी थी जो आंशिक मांग को पूरा कर पाते। इन समस्याओं को सुलझाने की दृष्टि से 1975 में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना की गई। कृषि और ग्रामीण विकास के लिए संस्थागत ऋण की प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए 12 जुलाई 1982 को नाबार्ड की स्थापना की गई। अपनी स्थापना के साथ नाबार्ड ने एआरडीसी के सारे कर्म, सहकारी समितियां तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों (आरआरबी) को पुनर्वित्त संबंधी रिज़र्व बैंक के कार्य अपने पास ले लिए।

5.61 राज्य सरकार तथा रजिस्ट्रार, सहकारी समिति जिसकी नियुक्त राज्य सरकार द्वारा की गई है, उन सहकारी समितियों के लिए मुख्य विनियामक प्राधिकारी थे जो किसी एक राज्य के अंतर्गत कार्य कर रही हों। शहरी सहकारी बैंकों (यूसीबी) का विनियमन तथा पर्यवेक्षण बैंककारी विनियमन अधिनियम जो कि सहकारी समितियों पर लागू है जो 1 मार्च 1966 से लागू हो गया था, बैंकिंग विधि के अंतर्गत रिज़र्व बैंक के सांविधिक नियंत्रण की सीमा में पाया गया। सहकारी बैंकों के संबंध में रिज़र्व बैंक की शक्तियां सीमित हैं। जहाँ सहकारी बैंकों के पर्यवेक्षण के संबंध में सिद्धांत बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के अंतर्गत शहरी सहकारी बैंकों के संबंध में रिज़र्व बैंक द्वारा बना लिए गए और लागू कर दिए गए हैं। वहीं यह अधिनियम प्राथमिक कृषि ऋण समितियों तथा भूमि विकास बैंकों पर लागू नहीं होता था। इस प्रकार उन्हें राज्यों की विनियामक सीमा के अंतर्गत रखा गया।

5.62 भारत में कृषि ऋण प्रदान करने की एक महत्वपूर्ण विशेषता ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं का फैला हुआ व्यापक जाल है। ग्रामीण वित्तीय संस्थाओं की वर्तमान संरचना तीन स्तरीय है जिसमें ग्रामीण सहकारी ऋण संस्थाएं, प्राथमिक कृषि ऋण समितियों, मध्यवर्ती सहकारी बैंक, राज्य सहकारी बैंक) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, स्थानीय क्षेत्रीय बैंक, शहरी बैंक, शहरी सहकारी बैंक, तथा वाणिज्यिक बैंक / सहकारी बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण से जुड़े कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों पर इस भाग में चर्चा की गई है।

5.63 ग्रामीण ऋण संरचना में अनेक प्रकार की वित्तीय संस्थाएं हैं जैसे कि भारी स्तर पर शाखा विवरण का कार्यक्रम चलाया गया ताकि ग्रामीण क्षेत्रों में सुदृढ़ संस्थागत आधार निर्मित किया जा सके। वर्तमान में विभिन्न सहकारी संस्थाओं की संख्या 1,10,000 से ऊपर है। इससे ग्रामीण ऋण के विस्तार में सहायता की तथापि कृषि के लिए सहकारी समितियों के ऋण की मात्रा गिरती रही है उतनी ही जितनी कि वाणिज्यिक बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के अंश में 1980, तथा 1990 के बाद के दशक में उनके अंशों में वृद्धि हुई। (मोहन 2004 क)। यह सहकारी ऋण संस्थाओं के व्यापक पैठ की मांग करती है।

दोहरा नियंत्रण

5.64 सहकारी संस्थाओं पर दोहरा नियंत्रण एक विवादास्पद मुद्दा है। सहकारी ऋण प्रणाली संबंधी कार्यदल (अध्यक्षः जगदीश कपूर, 1999) ने सहकारी ऋण संस्थाओं पर दोहरे नियंत्रण के मुदे पर विचार किया था तथा नियंत्रण की अतिव्याप्ति को हटाए जाने तथा प्रयोजन मूलक स्वायत्तता प्रदान करने तथा सहकारी समितियों को परिचलनात्मक आजादी देने का सुझाव दिया था। उक्त कार्यदल ने यह सुझाव दिया था कि इस क्षेत्र के सभी खिलाडियों अर्थात् राज्य सरकार, रिज़र्व बैंक, नाबार्ड और शिखर बैंक तथा सहकारी संस्थाओं के संबंध में शक्तियों का प्रत्यायोजन करके उनकी भूमिकाएं और उत्तरदायित्व तथा विनियमन के क्षेत्रों को पुनः निर्धारित किया जाए। सहकारी बैंकों में बनी हुई कमजोरियों की दृष्टि से संस्था विशेष के विकास की कार्रवाई योजनाओं और समझौता ज्ञापन के निष्पादन के लिए तैयारी करने की एक प्रणाली 2003-04 से शुरु की गई है। इसके अलावा, एक कार्यदल (अध्यक्ष : ए. वैद्यनाथन) की अगस्त 2004 में नियुक्ति की गई जो अन्य बातों के साथ साथ ग्रामीण सहकारी बैंकिंग संस्थाओं के लिए एक उपयुक्त विनियामक ढांचे की जांच करेगा। उक्त कार्यदल की सिफारिशें सरकार द्वारा सैद्धांतिक रूप से स्वीकार कर ली गई हैं।

शहरी सहकारी बैंकों की स्थिति को सुदृढ़ करना

5.65 अनेक शहरी सहकारी बैंकों की कमजोर वित्तीय स्थिति को ध्यान में रखते हुए, रिज़र्व बैंक ने शहरी सहकारी बैंको को मजबूत बनाने की दिशा में अनेक उपाय किए हैं। 31 मार्च 1993 से शहरी सहकारी बैंकों को यह सूचित किया गया हैं कि वे भी विवेक-सम्मत मानदंडों का कठोरतापूर्वक पालन करें जिनमें शामिल हैं - पूंजी पर्याप्तता मानदंडों को लागू करना, अहित देयता प्रबंधन के ढांचे का निर्धारण करना, एल एल आर की शर्त के अनुपालन के प्रयोजन के लिए सरकारी तथा अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों की धारिता के अंश में वृद्धि करना, कंपनियों के शेयरों और डिबेंचरों की जमानत पर बैंक वित्त पर सीमाएं लगाना, तथा पूंजी बाजार में निवेश जोखिमों को सीमित करना। वित्तीय प्रणाली के लिए शहरी सहकारी बैंकों की कार्य प्रणाली से उभरनेवाली चुनौतियों को देखते हुए शहरी सहकारी बैंकों के कार्यनिष्पादन की समीक्षा करने तथा इस क्षेत्र को सुदृढ़ करने के लिए आवश्यक उपाय सुझाने के लिए रिज़र्व बैंक ने एक उच्चस्तरीय समिति (अध्यक्षाः के माधवराव, 1999) गठित की। इस उच्च स्तरीय समिति की सिफारिशें के आधार पर विद्यमान शहरी बैंकिंग सरंचना को सुदृढ करने के लिए उपाय शुरू किए गए हैं।

शहरी सहकारी बैंकों से संबंधित पर्यवेक्षी प्रणाली को सुदृढ़ करना

5.66 माधवपुरा मर्केंटाइल को-ऑपरेटिव बैंक के फेल हो जाने जैसे उदाहरणों ने सहकारी बैंकिंग प्रणाली के ऊपर कठोर विनियामक नियंत्रण रखने की आवश्कता को उभार दिया। पर्यवेक्षी प्रणाली-तंत्र को सुदृढ़ करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक ने अप्रत्यक्ष निगरानी प्रणाली (ओएसएस) को ऐसे सभी और अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों पर लागू कर दिया जिनकी जमाराशियों का आकार रु.100 करोड़ या उससे अधिक का है। एक पर्यवेक्षी मोनिटरिंग प्रणाली मार्च 2002 से अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों के लिए शुरू की गई जो सभी शहरी सहकारी बैंकों पर अप्रत्यक्ष निगरानी प्रणाली स्थापित करने की दिशा में पहला कदम था। पूंजी पर्याप्तता मानदंड मार्च 2002 से चरणबद्ध रूप में शुरु किए गए। ऋण जोखिम के संकेद्रण को बचाकर और अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों के लिए अप्रत्यक्ष निगरानी तथा अपने ग्राहक को जानिए संबंधी मार्गदर्शी दिशा- निदेशों के अनुसरण द्वारा बेहतर जोखिम प्रबंधन की शुरुआत शहरी सहकारी बैंकों को सुदृढ़ करने के लिए की गई।

5.67 कुछ अनियमितता को रोकने की दृष्टि से शहरी सहकारी बैंकों के निदेशकों उनके संबंधियों तथा उन संस्थाओं को, जिनमें उनका हित निहित है, ऋणों और अग्रिमों की स्वीकृति पर अक्तूबर 2003 से पूर्णतः पाबंदी लगा दी गई है। रिज़र्व बैंक ने यह भी निदेश दिया है कि शहरी सहकारी बैंकों को चाहिए कि वे गैर एसएलआर प्रतिभूतियों में निवेश करने के संबंध में सामान्यतः उनकी पृष्ठभूमि की जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। रिज़र्व बैंक ने शहरी सहकारी बैंकों को ग्रेड देने की एक नई प्रणाली शुरू की। जो उनकी सीआरएआर, एनपीए के स्तर, हानियों का रिकार्ड तथा विनियामक परिवेश के अनुसार अनुपालन पर आधारित है। इसी प्रकार (केमल्स एसीएएमइएलएस) मॉडल के अंतर्गत शहरी सहकारी बैंको की पर्यवेक्षी रेटिंग की प्रणाली भी शुरू की गई है। प्रारंभ में यह अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों के लिए शुरू की गई थी, परंतु बाद में उसका सरलीकृत रूप मार्च 2004 में गैर अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों पर भी लागू कर दिया गया।

5.68 शहरी सहकारी बैंकों तथा वाणिज्यिक बैंकों के बीच संरचनागत तथा सांस्कृतिक अंतर होते हुए भी उपर्युक्त उपाय यह सुझाते हैं कि रिज़र्व बैंक अपनी विनियामक और पर्यवेक्षी शक्तियों का प्रयोग यह सुनिश्चित करने के लिए कर रहा है कि सहकारी ऋण संरचना भी वाणिज्यिक बैंकों की विनियमन और पर्यवेक्षण की लाइन पर सुदृढ़ता प्राप्त करें।

5.69 सारांश में रिज़र्व बैंक हाल के वर्षों में देश में सहकारी बैंकिंग की सरंचना के विनियमन और पर्यवेक्षण को सुदृढ़ करने पर ज्यादा ध्यान दे रहा है। शहरी सहकारी बैंकों को वित्तीय प्रणाली के अनुरूप बनाने की दिशा में एक विवेक सम्मत उपाय के रूप में रिज़र्व बैंक का ड्राफ्ट विजन दस्तावेज (2005) में विद्यमान विनियमन और पर्यवेक्षण प्रणाली को तर्क सम्मत बनाने का प्रयास किया गया है। प्रौद्योगिकी के उन्नयन द्वारा पर्यवेक्षण की लक्ष्य केंद्रित प्रणाली बनाना तथा दोहरी नियंत्रण से निपटने के लिए प्रणाली-तंत्र विकसित करना। रिज़र्व बैंक द्वारा परिकल्पित भावी कार्य-योजना परिचालनगत अवरोधों को हटाना, तथा शहरी सहकारी बैंकों को सुदृढ़ करना तथा उन्हें वाणिज्यिक बैंक के समान बनाना है।

ग. गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों का विनियमन और पर्यवेक्षण

5.70 भारत में चार प्रकार की गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां अर्थात् उपस्कर पट्टादायी कंपनियां, किराया खरीद कंपनियां, ऋण कंपनियां तथा निवेश कंपनियां रिज़र्व बैंक के विनियामक क्षेत्र में आती हैं। भारत में बढ़ती हुई सेवा क्षेत्र की गतिविधियों के साथ, एनबीएफसी ऋण प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं। एनबीएफसी का व्यापक नेटवर्क है। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 में अध्याय III ख को जोड़कर रिज़र्व बैंक को फरवरी 1964 से एनबीएफसी को सांविधिक रूप से विनियमित करने में समर्थ बनाया गया है। तबसे भारतीय बैंक ने समय-समय पर आवश्यकता के अनुसार एनबीएफसी को उपयुक्त रूप से विनियमन और पर्यवेक्षण करने के उपायों की शृंखला शुरू की है। 1966 में, एनबीएफसी कंपनियों के संबंध में रिज़र्व बैंक की विनियामक शक्तियों को बढ़ाने के लिए नए निदेश जारी किए गए हैं।

जमाराशियां स्वीकार करने संबंधी गतिविधियों का विनियमन

5.71 1966 में दो नए निदेश अर्थात गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां (रिज़र्व बैंक) निवेश 1966 तथा गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनी (रिज़र्व बैंक) निवेश, 1966 जारी किए गए। इन निदेशों के प्रावधानों को समय पर अनुपालन करने में औद्योगिक उपक्रमों द्वारा झेली जा रही कठिनाईयों को दूर करने के लिए रिज़र्व बैंक ने इन निदेशों में 1967 में कुछ संशोधन किए।

5.72 1973-74 के दौरान, रिज़र्व बैंक ने प्राइज चिट, लकी ड्रॉ बचत योजनाएं आदि चलाने वाली कंपनियों द्वारा जमाराशियों को स्वीकार करने को विनियमित करने के लिए विविध गैर बैंकिंग कंपनी (रिज़र्व बैंक) निदेश, 1973 जारी किए। मई 1987 में रिज़र्व बैंक ने ऐसी कंपनियों को विनियमित करने के लिए अवशिष्ट गैर बैंकिंग कंपनी (रिज़र्व बैंक) निदेशक, 1987 जारी किए। भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) अधिनियम, 1974 में रिज़र्व बैंक को यह अधिकार प्रदान करता है कि वह एनबीएफसी कंपनियों का निरीक्षण कर सकता है जब भी वह आवश्यक समझे कि ऐसा निरीक्षण करना आवश्यक या उचित है।

5.73 एनबीएफसी संबंधी कार्यदल (अध्यक्ष : ए.सी.शाह) की सिफारिशों के अनुसरण में 1992 में रिज़र्व बैंक ने उपायों की शृंखला शुरू की जिसमें रु.50 लाख और उससे अधिक की निवल स्वाधिकृत

निधियों के आधारपर एनबीएफसी के पंजीकरण, तथा जमा स्वीकार्य योजना का पुनःपरिभाषीकरण भी शामिल है। रिज़र्व बैंक ने एनबीएफसी (कंपनियों) की आपत्तियों को विनियमित करना भी शुरु कर दिया। 1994 में, एनबीएफसी पर आय की पहचान, आस्ति वर्गीकरण, प्रावधानीकरण और पूंजी पर्याप्तता के संबंध में विवेकसम्मत मानदंड लागू किए गए। तदनुसार, पंजीकृत एनबीएफसी से यह अपेक्षा की गई कि 31 मार्च 1995 तक 6 प्रतिशत का न्यूनतम पूंजी पर्याप्तता मानदंड प्राप्त करें। एनबीएफसी के लिए सीआरएआर मानदंड क्रमिक रूप से बढ़ाए गए और वर्तमान में 12 प्रतिशत का मानदंड निर्धारित किया गया है।

5.74 इन संस्थाओं के विनियामक ढांचे को और सुदृढ़ करने की दृष्टि से, भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) अधिनियम 1997 में बनाया गया। उस विधान का मुख्य जोर प्रथमतः उनकी जमा संग्रहण की मात्रा को उनकी निवल स्वाधिकृत निधियों से संबद्ध करके उनके जमा संग्रहण को संशोधित करना था। इसने संशोधित प्रविष्टि मानदंड भी निर्धारित किए और रिज़र्व बैंक के पास अनिवार्य पंजीकरण, भार-रहित अनुमोदित प्रतिभूतियों के रूप मे तरल आस्तियों का कुछ प्रतिशत बनाए रखना, रिज़र्व प्रारक्षित निधियों की नीति बनाना तथा लाभों का कुछ प्रतिशत प्रत्येक वर्ष उसमें अंतरित करना।

5.75 यह सुनिश्चित करने के लिए कि जमाकर्ताओं को उचित सेवा प्रदान की जाती है तथा प्रणालीगत जोखिम को बचाया जाता है, रिज़र्व बैंक का फिलहाल ध्यान का केंद्रबिंदु है - उनकी कार्यपद्धती को सुधारना, जिसमें परिचालनो में पारदर्शिता, कंपनी संचालन, अपने ग्राहक को जानिए नियम योजना नियत आदि भी शामिल हैं। रिज़र्व बैंक के पास पंजीकृत ऐसी एनबीएफसी, जिनकी निवल स्वाधिकृत निधियां 5 करोड़ रूपए की हैं, उन्हें यह अनुमति दी गई है कि वे बिना जोखिम की सहभागिता के, फीस के आधार पर बीमा कंपनियों के एजेंट के रूप में बीमा कारोबार कर सकती हैं। ऐसी एनबीएफसी कंपनियों के लिए जो बीमा संयुक्त उद्योग में प्रवेश करना चाहती हैं, न्यूनतम 12 प्रतिशत की पूंजी-पर्याप्तता निर्धारित की गई है। यदि कंपनी जनता की जमाराशियां रखती है तो न्यूनतम पूंजी पर्याप्तता 15 प्रतिशत प्रास्तविक की गई है। इसके अलावा एनबीएफसी के लिए रूपए 500 करोड़ की न्यूनतम निवल मालियत, तीन वर्ष तक लगातार निवल लाभ तथा कुल बकाया लीज / किराया खरीद आस्तियों और अग्रिमों की 5 प्रतिशत तक अधिकतम गैर निष्पादक आस्तियां निर्धारित की गई हैं।

एनबीएफसी (कंपनियों) के पर्यवेक्षण को सुदृढ़ करना

5.76 कुछ एनबीएफसी कंपनियों के फेल होने तथा जमाकर्ताओं के धन की हुई हानि के संदर्भ में एनबीएफसी कंपनियों का पर्यवेक्षण महत्वपूर्ण हो गया है। खन्ना समिति (1999) की सिफारिशों की पृष्ठभूमि में एनबीएफसी कंपनियों के आकार, गतिविधियों के प्रकार तथा जनता की जमाराशियां स्वीकार करती है या नहीं इस आधार पर एनबीएफसी कंपनियों के प्रभावी पर्यवेक्षण के लिए एक व्यापक पर्यवेक्षी मॉडल विकसित किया गया है। इस प्रयोजन के लिए एक चार आयामी प्रक्रिया-तंत्र बनाया गया है जिसमें केमल्स के आधार पर प्रत्यक्ष निरीक्षण, आधुनिकतम उन्नत सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग करते हुए आवधिक नियंत्रण विवरणियों के माध्यम से अप्रत्यक्ष निगरानी, एक प्रभावी बाजार आसूचना नेटवर्क, तथा एनबीएफसी (कंपनियों) के सांविधिक लेखा परीक्षकों द्वारा अपवादात्मक रिपोर्ट प्रस्तुत करना शुरू की गई, ताकि एनबीएफसी कंपनियों का विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचा उत्तम रूप से काम कर सके। अप्रत्यक्ष निरीक्षण की प्रणाली को केमल्स दृष्टिकोण के आधार पर बनाया गया है तथा वह बैंकिंग प्रणाली के लिए अपनाए गए पर्यवेक्षी मॉडल के सादृश्य है। एनबीएफसी कंपनियों को प्रभावी ढंग से विनियमित करने के लिए उनकी निरीक्षण नीति को हाल ही में संशोधित किया गया है। एनबीएफसी कंपनियों की कार्य-प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों के अनुरूप बनाने के लिए रिज़र्व बैंक ने उनके द्वारा अपनी जनता की जमा राशि स्वीकार करने की योजना को स्वैच्छिक रूप से चरणबद्ध रूप में छोड़ने के लिए उनकी कार्य-योजना के संबंध में एनबीएफसी कंपनियों के साथ परामर्शी प्रक्रिया शुरू की है। हाल ही में रिज़र्व बैंक ने अवशेष गैर बैंकिंग कंपनियों के लिए एक आगामी पथ यह सुनिश्चित करने के लिए निर्धारित किया है कि इन कंपनियों की संक्रमण प्रक्रिया रिज़र्व बैंक निदेशानुसार पूरी हो।

घ) वित्तीय संस्थाओं का विनियमन और पर्यवेक्षण

5.77 वर्षों से भारतीय रिज़र्व बैंक वित्तीय संस्थाओं जैसे पूर्ववर्ती भारतीय औद्योगिक विकास बैंक, भारतीय यूनिट ट्रस्ट, राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक, राष्ट्रीय आवास बैंक तथा बुनियादी संरचना विकास वित्त कंपनी लि. को स्थापित करने में संलग्न रहा है। यह जानना रूचिकर है कि हालांकि रिज़र्व बैंक ने इन संस्थाओं का निर्माण और उनके पोषण में सहायता की है, परंतु 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों से यह इनको विनियमित नहीं करता था। तथापि रिज़र्व बैंक के पास वे सांविधिक शक्तियां थीं कि भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के अंतर्गत वह उनकी सूचनाएं मंगाए तथा वह उन्हें निदेश जारी करे। विकास वित्त संस्थाएं (डीएफआइ) का तेजी से विस्तार हुआ, विशेषकर 1980 के बाद के दशक में। अतः 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षो में मौद्रिक और ऋण नीति के अनुबंध के रूप में विकास वित्त संस्थाओं को रिज़र्व बैंक की निगरानी व्यवस्थाओं के अंतर्गत ले आया गया। 1994 में प्रमुख मीयादी ऋणदायी संस्थाओं (जैसे आइडीबीआई, आईसीआई, आइएफसीआइ, भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी), भारतीय औद्योगिक निवेश बैंक (आइआइबीआई) तथा एग्ज़िम बैंक पर आय की पहचान, आस्ति-वर्गीकरण, प्रावधानीकरण तथा पूंजी-पर्याप्तता से संबंधित विवेक-सम्मत मार्गदर्शी दिशानिदेश लागू किए

गए। बाद में ये मानदंड भारतीय पर्यटन वित्त निगम (टीएफसीआई) तथा आइडीएफसी पर भी लागू कर दिए गए। 1996 में पुनर्वित्त संस्थाएं जैसे सिडबी, नाबार्ड तथा एनएचबी को भी विवेकसम्मत विनियमों के अंतर्गत ले आया गया। एकल उधारकर्ता /एकल उधारकर्ता समूह के संबंध में ऋण जोखिम संबंधी मानदंड सभी अखिल भारतीय मीयादी ऋण दात्री तथा पुनर्वित्त संस्थाओं पर भी लागू कर दिए गए।

वित्तीय संस्थाओं के पर्यवेक्षण को सुदृढ़ बनाना

5.78 अप्रैल 1995 में चुनिंदा अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं को वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड के पर्यवेक्षण अधिकार क्षेत्र में ले आया गया। बाद में वित्तीय संस्थाओं के विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे में वैश्विक परिवेश में बैंकों की वाणिज्यिक गतिविधियों की तेज वृद्धि के अनुरूप उल्लेखनीय परिवर्तन किए गए।

5.79 वित्तीय संस्थाओं को सुदृढ बनाने के लिए उनके पर्यवेक्षण को सबल करने हेतु उपाय शुरू किए गए। 1995 से अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं को वाणिज्यिक बैंकों की ही तरह (केमल्स मानदंडों पर) प्रत्यक्ष पर्यवेक्षी नियंत्रण के अंतर्गत ले आया गया है। नाबार्ड, सिडबी तथा एनएचबी जैसी वित्तीय संस्थाओं द्वारा किए जाने वाले विकासात्मक और पर्यवेक्षी कार्यो को हिसाब में लेते हुए इन संस्थाओं के पर्यवेक्षी आकलन के लिए एक संशोधित दृष्टिकोण लागू किया गया है। वित्तीय संस्थाओं के बीच विद्यमान द्विभाजन को देखते हुए, जिससे उनके द्वारा अदा किए जानेवाली ब्याज दरों और परपिक्वता अवधि आदि में भारी विविधता आ जाती है, जिससे अंततः बाजार में अव्यवस्था से फैल जाती है। अतः वित्तीय संस्थाओं द्वारा संसाधन संग्रहण को 1998 में विनियमन के अंतर्गत ले आया गया। निरंतर आधार पर इनकी समीक्षा किए जाने पर इन विनियमनों को उदार बनाया गया तथा ऋण बाजार मे होने वाली गतिविधियों के अनुरूप नमनीय बनाया गया। संसाधनों की बढ़ती लागत, बढी गई प्रतिस्पर्धा, तथा आस्ति गुणवत्ता में गिरावट से जूझ रही वित्तीय संस्थाओं ने अपनी गतिविधियों को अर्ध बैंकिंग गतिविधियों में विशाखीकृत किया। इससे वित्तीय संस्थाओं के लिए विनियामक प्रणाली तंत्र की समीक्षा करने की आवश्यकता हो गई। विकास वित्त संस्थाओं संबंधी कार्यदल की सिफारिशों के आधार पर रिजर्व बैंक प्रत्यक्ष निरीक्षण के माध्यम से नाबार्ड, सिडबी, एनएचबी और एग्ज़िम बैंक का पर्यवेक्षण करना जारी रखेगा तथा विकास वित्त संसथाओं के लिए कमोबेश वाणिज्यिक बैंकों की तर्ज पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष निगरानी प्रणाली शुरू की गई है। वित्तीय क्षेत्र में प्रमुख पुनर्विन्यास हाल के वर्षों में हुआ। आइसीआइसीआइ तथा आडीबीआइ के बैंकों के रूप में हुए रूपांतरण इसका प्रत्यक्ष प्रमााण है। रिज़र्व बैंक द्वारा यह माना गया है कि हाल के वर्षों में चुनिंदा वित्तीय संस्थाओं का बैंकों के रूप में रूपांतरण यह अपेक्षा करता है कि उनके ऊपर निरंतर और उचित विनियामक और पर्यवेक्षी नियंत्रण जारी रहना चाहिए।

रिज़र्व बैंक की विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका में व्यापक रूपांतरण

5.80 पिछले कुछ दशकों में रिज़र्व बैंक द्वारा अपनाई गई विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियां अधिकांश आवश्यकता प्रेरित तथा घरेलू तथा वैश्विक गतिविधियों दोनों की प्रतिक्रिया में थीं। आम तौर पर भारतीय अर्थव्यवस्था में और विशेषकर बैंकिंग प्रणाली में समय-समय पर हुई गतिविधियों के अनुरूप विनियमन और पर्यवेक्षण के उद्देश्यों और दृष्टिकोणों में भी गत पांच दशकों में बदलाव आया है, जबकि बुनियादी प्रयोजन बैकिंग प्रणाली की सुदृढ़ता तथा स्थिरता बनाए रखने का बना रहा। भारत में विनियमन और पर्यवेक्षण के उद्देश्यों और दृष्टिकोणों में हुए परिवर्तनों के फलस्वरूप विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक की भूमिका भी इन वर्षों के दौरान काफी कुछ बदल गई है।

5.81 जैसा कि हाल के वर्षों में देखा गया है भारतीय बैंकिंग प्रणाली ने क्रमिक रूप से धीरे-धीरे वैश्विक चरित्र प्राप्त करना शुरू कर किया है वैसे ही विनियमन और पर्यवेक्षण ने अपना ध्यान व्यवस्थागत अस्थिरता को रोकने, प्रतिस्पर्धा को बढ़ाने, बाजार की परंपराओं को सुधारने, सूचनागत असमानताओं को कम करने तथा काले धन को वैध बनाने से रोकने पर रहा है। वर्षो से, बदलते हुए वित्तीय परिवेश के अनुरूप कुछ विनियमनों ने पूर्णतः या अंशतः अपनी प्रासंगिकता खो दी है जैसे ब्याज दरों का नियंत्रण तथा गतिविधियों पर प्रतिबंध लगाने, बैंकों की अवस्थिति तथा निवेश गतिविधियों / भारत में बैंकों के विनियमन और पर्यवेक्षण के व्यापक उद्देश्य तथा तदनुसार विनियामक उपाय और नियंत्रण के उपाय सारणी 5.2, 5.3 और 5.4 में दिए गए हैं।

5.82 सारांश में, घरेलू और बाह्य वित्तीय परिवेश में होने वाले निरंतर परिवर्तनों के प्रति रिज़र्व बैंक ने समय-समय पर और क्रमिक रूप से अपने विनियमन और पर्यवेक्षी कार्यों के मुख्य बलों में बदलती हुई स्थिति के अनुसार बदलाव लाकर प्रतिक्रिया की है। 1950 के बाद के दशक में वित्तीय संरचना के निर्माण की प्रक्रिया के लिए सुविधा प्रदाता की भूमिका से लेकर रिजर्व बैंक ने बाद के दशकों में अपना मुख्य ध्यान न केवल संरचना का विस्तार करने के लिए वरन् परिचालनगत दक्षता आस्तियों की गुणवत्ता तथा बैंकों की वित्तीय शक्ति बढ़ाकर तथा सरंचना और जमाकर्ताओं के हितों की सुरक्षा और सुदृढ़ता को सुनिश्चित करके बैकिंग क्षेत्र की आंतरिक शक्ति को सुधारने पर भी अपना ध्यान केंद्रित किया है। जहाँ विनियमन और पर्यवेक्षण का बुनियादी उद्देश्य हमेशा से ''वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता और स्थिरता को बनाए रखना रहा है, वहीं विनियमन और पर्यवेक्षण ने समानांतर रूप से अन्य उद्देश्यों पर भी अपना ध्यान केंद्रित किया है जैसे तुलन पत्र की पारदर्शिता, जमाकर्ताओं के हितों का संरक्षण,

सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करना, दक्षता को सुधारना, प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देना, बाजार की प्रथाओं में सुधार लाना, तथा सूचना की असमानताओं में कमी लाना रिज़र्व बैंक के विनियमन और पर्यवेक्षण का वर्तमान और भावी केंद्र बिंदु जमाकर्ताओं के हितों की सुरक्षा करते हुए भारतीय वित्तीय प्रणाली को दक्षता और सुदृढ़ता की वैश्विक मानदंडों के अनुसार बनाना है ताकि वह आघातों को झेल सके और स्थिरता बनाए रख सकें। विनियमन और पर्यवेक्षण की भूमिका विकसित करना जारी रहेगी जैसा कि विश्वभर में हो रहा है।

भारत में विनियामक मॉडल

5.83 किसी वित्तीय प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण के कोई भी एकाकी सैद्धान्तिक मॉडल या कोई एक मात्र व्यवहारिक दृष्टिकोण नहीं है। वित्तीय बाजार के पर्यवेक्षण और विनियमन के लिए चार व्यापक दृष्टिकोणों की पहचान की जा सकती है - वे हैं ''संस्थागत पर्यवेक्षण'', ''उद्देश्यों के अनुसार पर्यवेक्षण'', ''कार्यमूलक पर्यवेक्षण'' तथा ''एकाकी विनियामक पर्यवेक्षण'' (जिओर्गोइ, 2001)। एक अधिक परंपरागत संस्थागत दृष्टिकोण में पर्यवेक्षण वित्तीय परिणाम की प्रत्येक श्रेणी का या वित्तीय बाजार के प्रत्येक एकाकी घटक परिचालक किया जाता है तथा यह पर्यवेक्षण का कार्य समग्र गतिविधियों के लिए किसी विशिष्ट एजेंसी को दिया जाता है। उद्देश्यों के अनुसार पर्यवेक्षण मॉडल यह बताता है कि सभी मध्यस्थक संस्थाओं तथा बाजारों पर एक से अधिक प्राधिकरणों का नियंत्रण हो सकता हो, या उसका प्रत्येक एकल प्राधिकरण विनियमन के एक उद्देश्य के लिए उत्तरदायी होता है, भले ही उस मध्यत्सक संस्था का कानूनी स्वरूप या वे जो कार्य या गतिविधियों

सारणी 5.2: भारत में वित्तीय विनियमन संबंधी दृष्टिकोण, उपाय तथा उद्देश्य (1950 से 1980 के बाद के दशक तक)

विनियामक दृष्टिकोण, उपाय तथा नियंत्रण	उद्देश्य			
	प्रणाली की स्थिरता को बढ़ाना	दक्षता को बढ़ाना	जमाकर्ताओ का सरंक्षण तथा ग्राहक सेवा	सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करना
व्यापक आर्थिक नियंत्रण				
प्रारक्षित अपेक्षाएं	*			
ऋण/ जमा की उच्चतम सीमाएं	*			
ब्याज दर नियंत्रण	*			*
विदेशी लेनदेनों पर प्रतिबंध	*			*
ऋण आबंटन				
निर्दिष्ट चुनिंदा ऋण कार्यक्रम				*
अधिमान्य ब्याज दरें				*
अनिवार्य उधार की अपेक्षाएं				*
संरचनागत नियंत्रण				
प्रविष्टि, विकास तथा बिलयन संबंधी अपेक्षाएं	*	*	*	*
भौगोलिक प्रतिबंध	*			*
गतिविधि संबंधी प्रतिबंध	*			*
विवेकसम्मत नियंत्रण				
पूंजी-पर्याप्तता संबंधी अपेक्षाएं	*	*	*	
संविभागीय जोखिम का संकेंन्द्रण, विशाखीकरण	*	*		
गैर निष्पादन आस्तियों का वर्गीकरण	*	*		
रिपोर्ट करने संबंधी अपेक्षाएं	*	*		
संगठनात्मक नियंत्रण				
बाजार निर्माण संबंधी नियम	*	*	*	
सहभागिता निर्माण संबंधी नियम	*	*	*	
बाजार सूचना प्रकटीकरण	*	*	*	
संबंधी अपेक्षाएं	*		*	
न्यूनतम तकनीकी मानदंड	*	*	*	
संरक्षणवादी नियंत्रण				
ग्राहक सूचना प्रकटीकरण संबंधी अपेक्षाएं			*	*
ग्राहक की गोपनीयता संबंधी संरक्षण			*	*
चूक की स्थिति में ग्राहक की प्रतिपूर्ति संबंधी नियम			*	*
विवाद का अधिनिर्णय तथा निपटारा नियम			*	*

फार्मेट स्रोत : *मिस्त्री पर्सी, 2003, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली संबंधी विनियमन एवं पर्यवेक्षण, राष्ट्रमंडल सचिवालय की बैठक, लंदन, जून।*

सारणी 5.3: भारत में वित्तीय विनियमन के दृष्टिकोण, उपाय तथा उद्देश्य - 1990 के बाद का दशक

विनियामक उपाय	उद्देश्य				
	सर्वांगी जोखिम को रोकना	संकट को रोकना	जमाकर्ता संरक्षण	दक्षता संवर्धन	बैंक का पुनर्विन्यास
प्रतिस्पर्धा नीति			*	*	*
प्रकटीकरण मानदंड	*	*	*	*	
कारोबारी संचालन के नियम			*	*	*
पूंजी पर्याप्तता मानक	*	*	*		*
प्रविष्टि परीक्षण (उचित और सही व्यक्ति)	*	*	*	*	*
चलनिधि संबंधी अपेक्षाएं	*	*	*		*
रिपोर्ट करने संबंधी अपेक्षाएं	*	*	*		*
सेवाओं पर प्रतिबंध	*				*
आपत्तियों पर प्रतिबंध	*				*
जमा बीमा	*	*	*		*
रिज़र्व संबंधी अपेक्षाएं	*	*	*		*
ग्राहक के लिए उपयुक्तता संबंधी अपेक्षाएं			*		
जमाराशियों पर ब्याज दर संबंधी नियंत्रण	*		*		
ऋणों पर ब्याज दर संबंधी नियंत्रण		*	*		
निवेश की अपेक्षाएं					*
भौगोलिक प्रतिबंध					*

फार्मेट स्रोत : *मिस्त्री पर्सी, 2003, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली संबंधी विनियमन एवं पर्यवेक्षण, राष्ट्रमंडल सचिवालय की बैठक, लंदन, जून।*

करते हो या उसका स्वरूप ये दोनों कुछ भी क्यों न हों। कार्यमूलक पर्यवेक्षण उस वित्तीय प्रणाली मे किए गए आर्थिक कार्यों को ''निर्दिष्ट'' के रूप में मानकर चलता है। ''एकाकी'' विनियामक पर्यवेक्षी मॉडल केवल एक नियंत्रक प्राधिकरण पर आधारित है, और सभी बाजारों और

सारणी 5.4 : भारत में वित्तीय विनियमन के दृष्टिकोण, उपाय और उद्देश्य - 2000 और उसके बाद

विनियामक दृष्टिकोण और उपाय	उद्देश्य				
	प्रतिस्पर्धा को बढ़ाना	बाजार सहभागिता बढ़ाना	सूचना की असमानता घटाना	सर्वांगी अस्थिरता को रोकना	काले धन को वैध बनाने से रोकना
प्रतिस्पर्धा					
बाजार संरचना नीति	*				
बाजार आचरण					
प्रकटीकरण मानक		*			
कारोबारी संचालन के नियम		*			
बाजार संचालन		*			
विवेक सम्मत विनियमन					
प्रविष्टि नियम		*	*		
जोखिम पूंजी संबंधी अपेक्षाए		*	*	*	
तुलन पत्र संबंधी प्रकटीकरण			*	*	
तुलन पत्र से इतर सं1बंधी प्रतिबंध			*	*	
सम्बृद्ध संस्थाएं			*	*	
चलनिधि संबंधी अपेक्षाएं			*	*	
प्रारक्षित निधि संबंधी अपेक्षाएं			*	*	
जवाबदेही संबंधी अपेक्षाएं			*	*	
सर्वांगी स्थिरता संबंधी नियम					
अंतिम उधारदाता				*	
भुगतान प्रणाली की निगरानी				*	
एएमएल-सीएफटी उपाय					*

फार्मेट स्रोत : *मिस्त्री पर्सी, 2003, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय प्रणाली संबंधी विनियमन एवं पर्यवेक्षण, राष्ट्रमंडल सचिवालय की बैठक, लंदन, जून।*

मध्यस्थक संस्थाओं पर, चाहे वे बैंकिंग में हो या वित्तीय या बीमा क्षेत्र में, सभी का उत्तदायित्व इसके पास होता है।

5.84 इन विभिन्न प्रकार के विनियमन मॉडलों के होते किसी आदर्श मॉडल को चुनना वास्तव में कठिन कार्य है। इस प्रकार परिचालनगत अनुभव, न केवल यूरो क्षेत्र में, बल्कि अमेरिका में भी यह संकेत करता है कि केंद्रीय बैंक पर्यवेक्षी कार्य को प्रभावी रूप में कर रहे हैं। साथ ही, ब्रिटेन में प्रचलित एफएसए- प्रकार के एकल मॉडल के कार्य-निष्पादन का अनुभव अभी तक कम ही किया गया है।

5.85 भारत ने परंपरागत रूप से संस्था-आधारित विनियमन की प्रणाली को अपनाया है। रिज़र्व बैंक बैंकों, एनबीएफसी कंपनियों तथा अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं के लिए पर्यवेक्षण संस्था के रूप में कार्य करता है, वहीं विभिन्न राज्यों में कंपनी रजिस्ट्रार सहकारी क्षेत्र के बैंकों, शहरी और ग्रामीण दोनों प्रकार के बैंकों के लिए एक संयुक्त विनियामक का कार्य करता है। सेबी पूंजी बाजारों तथा अनेक संस्थाओं जैसे स्टॉक एक्सचेंजों, म्युचुअल फंडों तथा अन्य आस्ति-प्रबंधों कंपनियों, प्रतिभूति व्यापारियों और ब्रोकरों, मर्चेंट बैंकरों तथा क्रेडिट रेंटिंग एजेंसियों का विनियमन करता है। बीमा क्षेत्र बीमा विनियामक तथा विकास प्राधिकरण (इर्डा) द्वारा विनियमित किया जाता है।

5.86 क्या वर्तमान विनियामक मॉडल तथा संरचना उपयुक्त है या उसमें कुछ बदलाव लाने की जरूरत है, इस पर भारत में हाल के वर्षों में चर्चा होती रही है। विनियमन अधिकार क्षेत्रों की अतिव्याप्ति तथा अंतरालों के विषय पर अनेक समितियों तथा कार्य दलों द्वारा विचार किया है। इन समितियों द्वारा अभिव्यक्त किए गए विचारों तथा तकनीकी चर्चाओं के परिणाम अपने-अपने स्वरूप में भिन्न-भिन्न रहे हैं।इस संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण विचार ये हैं कि बैंकिंग प्रणाली पर भारतीय रिज़र्व बैंक तथा बैंकिंग विभाग, वित्त मंत्रालय का दोहरा नियंत्रण समाप्त होना चाहिए तथा रिज़र्व बैंक ही बैंकिंग प्रणाली के विनियमन के लिए प्रमुख एजेंसी होना चाहिए। खान कार्यकारी दल ने यह महसूस किया था कि विनियमन के कार्य में एकरुपता सुनिश्चित करने के लिए विभिन्न विनियामकों की गतिविधियों का पर्यवेक्षण तथा समन्वय करने के लिए एक 'सुपर रेग्यूलेटर' की स्थापना करना वांछनीय होगा। दीपक पारीख समूह ने यह अनुभव किया कि 'पूंजी बाज़ारों' पर उच्चस्तर समूह के माध्यम से विनियमन में महत्तर समन्वय लाने तथा इसे कानूनी हैसियत देने की जरूरत है।

5.87 सभी संगत कारकों पर विचार करते हुए यह तर्क दिया गया है कि विद्यमान विनियामक-संरचना को बाधित किए बिना विद्यमान विनियामक अंतरालों तथा अतिव्याप्तियो की पहचान की जानी चाहिए तथा यह आवश्यक है कि किसी ऐसे सर्वव्यापी विनियामक विधान की संभाव्यता का पता लगाया जाए जो विद्यमान अधिकार क्षेत्रों को बाधित किए बिना एक शिखर विनियामक प्राधिकारी की स्थापना करे। यह प्रस्ताव किया गया था कि रिज़र्व बैंक का वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड बैंकों और गैर बैंकों के पर्यवेक्षण करने का कार्य रख सकता है, परंतु इसका अध्यक्ष उपगवर्नर होना चाहिए। बीमा विनियामक प्राधिकारण बीमा कंपनियों का पर्यवेक्षण करे, सेबी पूंजी बाजार पर अपना विनियामक अधिकार क्षेत्र जारी रखें। शिखर वित्तीय विनियामक प्राधिकरण का गठन विधान द्वारा किया जा सकता है जिसमें भारतीय रिज़र्व बैंक का गवर्नर अध्यक्ष हो तथा इसके सदस्य इन तीनों विनियामक एजेंसियों के अध्यक्ष हों। इस शिखर संस्था में अंशकालीन आधार पर कुछ बाहरी विशेषज्ञों को भी शामिल किया जा सकता है। वित्तीय सचिव, रिज़र्व बैंक के बोर्ड की तरह बिना वोटिंग के अधिकार के इसका स्थायी विशेष आमंत्रित या एक नियमित सदस्य हो सकता है। इस शिखर प्राधिकरण का विधि द्वारा (कानूनन) यह अधिकार क्षेत्र होना चाहिए कि वह इन विनियामक अंतरालों को किसी एजेंसी को सौंप सके, विनियामक अतिव्याप्तियों पर अधिनिर्णय दे सके तथा विनियामक समन्वय सुनिश्चित कर सके। इस शिखर संस्था का एक अंशकालीन सचिवालय हो जो रिज़र्व बैंक से हो। इस प्रस्ताव के पीछे भावना वर्तमान अनौपचारिक व्यवस्थाओं में सुधार लाना तथा इसे विधान आधारित प्राधिकरण में बदलना है। रिज़र्व बैंक के गवर्नर के इस प्राधिकरण के अध्यक्ष होने पर उसके अधिकार-क्षेत्र के बारे में चर्चा की गई है और यह तर्क दिया गया कि प्रत्येक लेनदेन, भले ही वह किसी भी बाजार में किया गया हो, का अंतिम रूप से भुगतान निपटान के रूप में एक चरण नकदी रूप में / अंतरबैंक बाजार में होना चाहिए। उस बाजार में जिसमें कि यह लेन देन किया गया है, कोई भी समस्या आने पर उसका प्रभाव नकदी बाजार पर होता है। रिज़र्व बैंक जो कि नकदी का अंतिम प्रदाता है (भले ही वह विनियामक रूप में न सही), को सभी वित्तीय बाजारों में इनके कार्य-कलापों में स्थिरता होने के प्रति चिंता करनी पड़ती है (रेड्डी 2006 ख)।

5.88 विनियमन की प्रभावशीलता को बढ़ाने, विनियमन में सामंजस्य प्राप्त करने, विनियामक अंतरालों को पाटने तथा विनियामक अतिव्याप्तियों को न्यूनतम करने के लिए रिज़र्व बैंक हाल के वर्षों में विभिन्न पहलें करता रहा है। कुछ ऐसी प्रक्रिया - तंत्र है जिसके द्वारा वित्तीय प्रणाली में विभिन्न विनियामकों के बीच व्यापक समन्वय सुनिश्चित किया जाता है। विभिन्न विनियामकों के बीच सूचना के नियमित आदान-प्रदान की प्रणाली स्थापित कर दी गई है। पूंजी और वित्तीय बाजारों पर उच्च स्तरीय समिति कार्य कर रही है जिसमें रिज़र्व बैंक के गवर्नर अध्यक्ष हैं, तथा वित्त सचिव, अध्यक्ष सेबी तथा अध्यक्ष इर्डा इसके सदस्य के रूप में उन नीतिगत मुद्दों पर विचार कर रहे हैं जिनमें विनियामक अतिव्याप्ति विद्यमान है। इस समिति ने तीन तकनीकी स्थायी समितियों का गठन किया है जिनमें इन तीनों का एक दूसरे में प्रतिनिधित्व है जो बैंकिंग क्षेत्र, बीमा क्षेत्र तथा पूंजी बाजार की गतिविधियों की समीक्षा करने के लिए एक अंतर-एजेंसी मंच प्रदान करेंगी।

5.89 भारतीय वित्तीय प्रणाली की संरचना वर्तमान विनियामक संरचना तथा विनियामक व्यवस्थाओं की व्यापक संवीक्षा यह दर्शाती है कि ''ऊपरी सतह'' तथा ''विनियामक विवाचन'' के स्तर पर विनियामक अतिव्याप्तियां विनियामक टकराव नगण्य है। यह भी स्पष्ट है कि एकही जैसी गतिविधियों करने वाली विभिन्न प्रकार की वित्तीय संस्थाओं का विनियमन करते हुए वर्तमान विनियामक संव्यवहार ''कार्य-पिष्पादन के लिए किसी असमान स्तर'' का निर्माण नहीं कर रही हैं(राज.2005)। इस संदर्भ में प्रासंगिक मुद्दा यह नहीं है कि विकल्प 'एकल विनियामक' का हो या ''बहु विनियामक'' का, बल्कि मुद्दा यह है कि भारतीय वित्तीय प्रणाली तथा संस्थागत पृष्ठभूमि की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए प्रभावी रूप से क्या कार्य करता है तथा वह अर्थव्यवस्था के अनुकूल हो। उनमें मांगों के दबाव से निपटाने के लिए 'कुछ करना है' यह मानकर विकल्प को नहीं चुनना चाहिए। विकल्पों में से चयन पूर्णतः एकल या बहु विनियामक के रुप में नहीं करना हैं, क्योंकि मिश्रित तथा अनुपूरक व्यवस्थाएं किए जाने की भी संभावनाएं हैं। किसी भी प्रणाली के अंतर्गत सूचनाओं के आदान-प्रदान तथा समन्वय के मुद्दे उठने अनिवार्य हैं। अंतिम विश्लेषण में विनियामक उद्देश्य, व्याप्ति, कौशल, परिचालनगत प्रभावशीलता तथा विश्वसनीयता महत्वपूर्ण है तथा संरचनाएं वित्तीय विनियमन का एक तत्व रह जाती हैं (रेड्डी 2001 ख)।

5.90 यह मानी हुई बात है कि विनियामक और पर्यवेक्षी दृष्टिकोणों, प्रणालियों और संरचनाओं को अर्थव्यवस्थाओं, वित्तीय उत्पादों / सेवा बाजारों, प्रौद्योगिकी के प्रगामी विकास और समेकन तथा बदलती हुई बाजार की मांगों को पूरा करने में आई प्रतिस्पर्धा की प्रतिक्रिया में वित्तीय संस्थाओं के रूपांतरण के साथ बने रहने के लिए अपने आपको बदलते रहना होगा। भारत में विनियमन का वर्तमान मॉडल जिसमें रिज़र्व बैंक अन्य विनियामकों के साथ संगत सूचनाओं का आदान-प्रदान समन्वित रूप से करता है, प्रभावी रूप से काम कर रही है।

III. मौद्रिक नीति का संचालन तथा विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका के साथ उसकी संगति

5.91 जैसा कि अध्याय III में चर्चा की गई है, किसी केंद्रीय बैंक के संदर्भ में एक महत्वपूर्ण चर्चा यह है कि क्या किसी केंद्रीय बैंक द्वारा मौद्रिक नीति और पर्यवेक्षी कार्य दोनों का साथ-साथ संचालन करने में कोई अंतर्निहित टकराव है। वित्तीय स्थिरता संबंधी कार्य को किसी केंद्रीय बैंक के पास रखने के पक्ष में, उस स्थिति में भी जब वित्तीय संस्थाओं के विनियमन का कार्य किसी दूसरी संस्था को दे दिया जाए, तर्क यह है कि मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता संबंधी नीतियां परस्पर गुंथी हुई हैं (सिनक्लेयर,2000)। मौद्रिक नीति के वित्तीय स्थिरता के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ हो सकते हैं तथा इसी प्रकार वित्तीय स्थिरता संबंधी निर्णयों का मौद्रिक नीति के लिए निहितार्थ होते हैं।

5.92 वित्तीय क्षेत्र की स्थिरता एक स्थिर, व्यापक परिवेश के संदर्भ में सर्वोत्तम रूप में प्राप्त की जाती है। व्यापक मौद्रिक नीति के प्रबंधन में एक ऐसा दृष्टिकोण जिसका उद्देश्य मूल्यों को स्थिर रखने का हो तथा जो अर्थव्यवस्था के ऐसे लचीले समायोजनों को आसान बनाता हो जो विवेकसम्मत मानदंडों के पूर्णतः अनुकूल है। अंतरराष्ट्रीय अनुभव यह दर्शाता है कि वित्तीय और बैंकिंग के संकट करेंसी और व्यापक आर्थिक संकटों से विकट रूप में जुड़े हुए हैं। अतः विवेकसम्मत नीतियों का उद्देष्य वित्तीय प्रणाली की स्थिरता को बढ़ाने का होना चाहिए। जहाँ पर्यवेशी भूमिका और मौद्रिक नीति की भूमिका के बीच का संबंध केंद्रीय बैंक के संदर्भ में एक दूसरे के अनुपूरक का है। वास्तव में ऐसे भी अवसर हो सकते हैं; जहाँ इन दोनों कार्यो के बीच संभावित टकराव हो सकता है। (बाक्स V.5)।

5.93 मौद्रिक नीति और बैंकिंग सुदृढ़ता के बीच स्पष्ट दोहरा घनिष्ट संबंध है (रेड्डी, 1998)। मौद्रिक नीति और बैंकिंग सूत्र सुदृढ़ता के बीच विशेष संबंध यह अपेक्षा करते हैं कि दोनों कार्यों को संयुक्त कर दिया जाए। बैंकिंग प्रणाली भारत में मौद्रिक नीति के संकेत देने में मुख्य माध्यम बनी हुई है। अतः बैंकों की सुदृढ़ता रिज़र्व बैंक की चिंता का वैध विषय बना हुआ है।

5.94 रिज़र्व बैंक की पर्यवेक्षी गतिविधियां उसके मूल्य स्थिरता संबंधी उद्देश्य से लाभान्वित हुई हैं और यह मान लिया गया है कि बैंकों की सुरक्षा और सुदृढ़ता का मूल्यांकन इसकी अर्थ व्यवस्था में स्थिरता और वृद्धि को सुनिश्चित करने के दायित्व के साथ मिलकर संयुक्त रूप से किया जाना चाहिए। अपने समग्र उत्तरदायित्व को पूरा करने के लिए रिज़र्व बैंक को भारतीय और वैश्विक वित्तीय प्रणालियों दोनों की जटिलताओं की व्यापक और गहन जानकारी विकसित करनी पडी थी। मौद्रिक नीति तथा पर्यवेक्षण दोनों को संयुक्त रूप से उत्तरदायित्व के साथ उसके पास अंतर्दृष्टि तथा ऐसी तकनीकों को उपयोग में लाने की शक्तियां दोनों हैं जो कम स्पष्टवादी है और हस्तगत समस्या के लिए निश्चित रूप से अंशशोधित (लक्ष्य भेदी) हैं। ऐसे साधन इसकी संकट-प्रबंधन की योग्यता को बढ़ा देते हैं और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि उन्हें समस्याओं से बचा देते हैं। गतिशील वित्तीय प्रणाली दबावों की कथाओं से प्रभावित हैं। यह मान लिया गया है कि किसी वित्तीय संकट के प्रति तत्परतापूर्वक प्रतिक्रिया करने की रिज़र्व बैंक की योग्यता के लिए प्रत्येक बैंकिंग संस्थान से संबंधित व्यापक सूचना की आवश्यकता नहीं होती हैं। परंतु इसके लिए यह अपेक्षित है कि रिज़र्व बैंक को इसकी गहन जानकारी हो कि भिन्न-भिन्न संस्थान किस प्रकार का व्यवहार करने वाले हैं और भयंकर वित्तीय दबाव की

बाक्स V.5
पर्यवेक्षी भूमिका तथा मौद्रिक नीति के बीच हितों का टकराव

एक व्यावसायिक केंद्रीय बैंकर मौद्रिक नीति के उद्देश्यों तथा विवेक-सम्मत लक्ष्यों के बीच टकराव की ऐसी स्थितियों की कल्पना कर सकता है जो विशेषकर गंभीर आर्थिक और वित्तीय प्रणाली के दबाब की स्थिति में उत्पन्न हो सकती हैं। ऐसी स्थिति तब उत्पन्न होती है जब मुद्रा स्फीतिकारी दबाब ब्याज दरों को तेजी से बढ़ाने की अपेक्षा करते हैं तथा बैंक भारी रूप से अपनी आस्तियों के मूल्यों में संभावित रूप से गिरने का जोखिम पाते हैं। टकराव उठ खड़े हो सकते है यदि यह सोचा जाए कि ब्याज दरों के बढ़ने के परिणाम स्वरूप बैंक ऋणों की जमानत वाली कुछ आस्तियों का मूल्य इतना ज्यादा गिर सकता है कि वह ऋण की राशि से भी कम हो जाए। यह वास्तविक चिंता का विषय होगा यदि उधारकर्ता की उधार राशि का मूल्य काफी बढ़ जाए क्योंकि आस्ति के मूल्यों में गिरावट काफी ज्यादा होगी। दूसरी चिंता तब उठ खड़ी हो सकती है यदि केंद्रीय बैंक कुछ प्रकार के बैंकिंग संकटों के प्रबंधन में गहरे रूप से संलग्न हो जाए। इससे केंद्रीय बैंक का ध्यान इसकी मौद्रिक नीति संबंधी गतिविधियों से काफी हट सकने की संभावना है।

जहां मौद्रिक नीति के संचालन में केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता का महत्व अनेक अनुभवजन्य अध्ययनों का विषय रहा है, वहां केंद्रीय बैंक की संरचना के अन्य पहलुओं के महत्व पर अपेक्षाकृत बहुत कम शोध किया गया है, विशेषकर बैंक पर्यवेक्षण में इसकी भूमिका पर। तथापि, हाल ही में, नीतिनिर्माताओं का इस ओर काफी ध्यान गया है। यद्यपि ओइसीडी राष्ट्रों में से लगभग तीन चौथाई (3/4) देश अपने केंद्रीय बैंक को बैंक पर्यवेक्षण का या तो पूर्ण या आंशिक उत्तरदायित्व सौंपते हैं, इनमें से अनेक देश इन उत्तरदायित्वों की समीक्षा कर रहे हैं। उदाहरण के लिए 1997 के मध्य में बैंक ऑफ इंग्लैंड को बेहतर स्वतंत्रता दी गई, परतुं उसे बैंकों के पर्यवेक्षण के दायित्व से मुक्त कर दिया गया। इस संदर्भ में, बैंक ऑफ इंग्लैंड के पूर्व गवर्नर ने कहा था,'' मौद्रिक और वित्तीय स्थिरता आपस में संबंधित हैं। यह मान्य नहीं है कि मौद्रिक प्राधिकारी चुपचाप अपनी स्थिरता उन्मुखी अपनी मौद्रिक नीति के उद्देश्यों को आगे बढ़ाना जारी रखें, यदि वित्तीय प्रणाली जिसके माध्यम से यह नीति संचालित की जाती है, और जो वास्तविक अर्थव्यवस्था से संबंध उपलब्ध कराती है। उनके कानों के चारो ओर धराशायी हो रही हो। इस परस्पर संबद्धता से तात्पर्य है-कि वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के लिए जो भी संक्षिप्त संस्थागत व्यवस्थाएं हैं, केंद्रीय बैंक उस वित्तीय प्रणाली की सुदृढ़ता में भारी रुचि रखता है'' (जॉर्ज 1994)।

केंद्रीय बैंक के पास बैंक पर्यवेक्षण की ड्यूटी होनी चाहिए या नहीं इसका एक महत्वपूर्ण चर्चा का मुद्दा यह है कि क्या ये उत्तरदायित्व मौद्रिक नीति के कार्य - निष्पादन में योगदान करते हैं या नहीं , फेडरल रिज़र्व बैंक ने प्रभावी रूप से बैंक पर्यवेक्षण की सूचना को मौद्रिक नीति से निर्माण में प्रभावी रूप से समाहित किया है । बैंकिंग और वित्तीय सेवाओं से संबंधित समिति, अमेरिका के समक्ष इस विषय पर अपने विचार रखते हुए और तर्क देते हुए कहा था कि फेडरल रिज़र्व बैंक को पर्यवेक्षी कार्यों से अलग नहीं किया जाना चाहिए। 19 मार्च 1997 को अध्यक्ष एलेन ग्रीनस्पर्न ने प्रतिनिधि सभा में कहा था कि, ''फेडरल रिज़र्व बोर्ड का विश्वास है कि वित्तीय आधुनिकीकरण को संकटों का प्रबंध करने में, एक दक्ष और सुरक्षित भुगतान प्रणाली सुनिश्चित करने में तथा मौद्रिक नीति के संचालनों में अमेरिका के केंद्रीय बैंक की योग्यता और शक्ति को कम नहीं आँकना चाहिए। हम ऐसा मानते हैं कि ये तभी इस की अपेक्षा करते हैं कि फेडरल रिज़र्व बैंक पर्यवेक्षक के रूप में अपने पास महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय भूमिका बनाए रखे। आज की संरचना में अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करने में हमारे पास पर्याप्त अधिकार और व्याप्तियों है।

कोई केंद्रीय बैंक पर्यवेक्षण और विनियमन के उत्तरदायित्व से जुड़ा है या नहीं? अच्छे केंद्रीय बैंक से यह अपेक्षित है कि उसे वित्तीय संस्थाओं, वित्तीय बाज़ारों तथा वित्तीय प्रणाली संरचना की गहरी समझ बूझ हो। मौद्रिक नीति के प्रयोजनों के लिए वित्तीय संस्थाओं की भूमिका को समझना, तथा यह जानना कि केंद्रीय बैंक के निर्णयों से रूपांतरण की प्रक्रिया से गुजर रहे बाज़ार अपना अंतिम आर्थिक प्रभाव बना रहे हैं, नीति को लागू करने की दक्षता में सहायता करते हैं। यह विवेक सम्मत उद्देश्यों के लिए भी अपेक्षित है, क्योंकि संस्थाएं असफल होती हैं, अकसर वित्तीय बाज़ारों और वित्तीय प्रणाली संबंधी बुनियादी संरचना या तो अनेक समस्याओं की जड़ होगी या जोखिम को एक संस्था से दूसरी संस्था पर संप्रेषित कर देगी। यद्यपि विनियमन और पर्यवेक्षण, प्रारंभ में, केंद्रीय बैंक का बुनियादी कार्य नहीं था, फिर भी बाद में अधिकांश केंद्रीय बैंकों ने विनियमन और पर्यवेक्षण के कार्य को स्वीकार कर लिया है। इस चर्चा पर प्रोफेसर गुडहर्ट ने विराम लगा दिया, ''अंततः बैंकिंग पर्यवेक्षक और वे व्यक्ति जो केंद्रीय बैंक में मुद्दे से चिंतित हैं कि सर्वांगिण स्थिरता जारी रहनी चाहिए उन्हें घनिष्ठता से मिलकर कार्य करना चाहिए भले ही पर्यवेक्षक शारीरिक रूपसे कहीं भी बैठते हैं । (गुडहर्ट, 2000)।

स्थिति में उनके पास कौन-कौन से संसाधन उपलब्ध हैं। उन घटनाओं के लिए भी जो वित्तीय संकटों को बढ़ा सकते है, प्रणाली सर्व प्रथम रिज़र्व बैंक की ओर देखती है, केवल इसलिए नहीं क्योंकि यह अंतिम उधारदाता है, बल्कि इस लिए भी क्योंकि इसके पास विशेषज्ञता और अनुभव हैं।

5.95 रिज़र्व बैंक के पर्यवेक्षी उत्तरदायित्व इसे महत्वपूर्ण गुणवत्तापूर्ण और मात्रात्मक सूचना देते हैं, जो न केवल इसे मौद्रिक नीति के निर्माण में सहायता करती हैं, बल्कि इस पर भी महत्वपूर्ण प्रति सूचना उपलब्ध कराती हैं, कि नीति संबंधी दृष्टिकोण बैंक के कार्यों को कैसे प्रभावित कर रहा है।

उदाहरण के लिए, बैंक ऋण का आवास-ऋण, भूमि-संपदा तथा खुदरा के वित्त पोषण में बढ़ते हुए अंशों ने ऋण की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त नीति संबंधी प्रतिक्रियाओं की मांग की है। आस्ति-मूल्य में परिवर्तन एक वित्तीय गतिवर्धक प्रभाव के माध्यम से निवेश और अथवा खपत पर सशक्त प्रभाव डाल सकते हैं ओर इस संदर्भ में आस्ति मूल्यों में भारी बदलाव मौद्रिक नीति के लिए चुनौती खड़ी कर सकता है। विनियामक और पर्यवेक्षक की दृष्टि से, विशेषकर आस्ति-मूल्य परिवर्तनों में गैर समदेखीयता को देखते हुए इस उच्च वृद्धि दर को उपयुक्त जोखिम भारांक के निर्धारण के जरिए विनियमित किए जाने की जरूरत है। ऋण के इस अस्थायी चक्रीय विस्तार को ध्यान में रखते हुए रिज़र्व बैंक ने जोखिम भारांक को दिसंबर 2004 में आवास ऋण के मामलों में 50 प्रतिशत से बढ़ाकर 75 प्रतिशत और व्यक्तिगत ऋण तथा क्रेडिट कार्डों सहित उपभोक्ता ऋण के मामले में 100 प्रतिशत से बढ़ाकर 125 प्रतिशत कर दिया। बाढ़ में पूंजी बाजार तथा वाणिज्यिक भू-संपदा में ऋण के लिए ऋण जोखिम पर जोखिम भारांक जुलाई 2005 में 100 प्रतिशत से बढ़ाकर 125 प्रतिशत कर दिया।

5.96 बैंक निरीक्षकों के माध्यम से एकत्रित गोपनीय पर्यवेक्षी सूचना काफी सीमा तक मुद्रा नीति के संचालन में सुधार ला सकती है(जोई आदि, 1999)। अतः यह लाभदायक होगा कि समानांतर रूप से मौद्रिक नीति संबंधी कार्यों को बैंकिंग विनियमन और पर्यवेक्षण के साथ-साथ जारी रखा जाए। भारतीय संदर्भ में ये दो कार्य परस्पर विरोधी होने की बजाए एक दूसरे के पूरक अधिक हैं।

IV. उभरते मुद्दे

5.97 उभरते हुए वातावरण में यह सुनिश्चित करने के लिए कि रिज़र्व बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी कार्य प्रभावी बने रहें, कुछ मुद्दों पर विचार करने की जरुरत है। इन मुद्दों में प्रमुख हैं - वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करना, बासल II व्यवस्था में सुचारू रूप से रूपांतरण, तथा उभरते हुए वित्तीय संस्थाओं के समूह को विनियमित तथा पर्यवेक्षित करने के लिए उपयुक्त संरचनाएं तथा इलैक्ट्रानिक बैंकिंग।

(i) वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करना

5.98 वित्तीय स्थिरता के लिए केंद्रीय बैंक को दायित्व लेना चाहिए, केंद्रीय बैंकिंग के इतिहास में इस धारणा की जड़ें गहरी हैं। पिछले कुछ दशकों से वित्तीय स्थिरता का मुद्दा काफी महत्वपूर्ण रहा है, और वह अंतरराष्ट्रीय नीति की कार्यसूची में सबसे ऊपर पहुँच गया है (क्लाडियों, 2002)। विश्वभर में आए अनेक वित्तीय संकटों तथा उन संकटों का संबंधित अर्थ व्यवस्थाओं पर सर्व विनाशकारी प्रभावों के संदर्भ में ''वित्तीय स्थिरता'' को केंद्रीय बैंकों के महत्वपूर्ण कार्य के रूप माना जा रहा है।

5.99 वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने में रिज़र्व बैंक की भूमिका में व्यापक रूपांतरण इसकी स्थापना के समय से ही देखा जा सकता है। बैंकों को असफल होने से रोकने तथा वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में इसकी भूमिका वर्षों से मजबूत और परिष्कृत होती रही है। वित्तीय स्थिरता को बनाए रखने में रिज़र्व बैंक द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण बहुआयामी है जैसे मौद्रिक नीति के माध्यम से समग्र व्यापक आर्थिक संतुलन को बनाए रखना; संस्थाओं और बाजारों द्वारा कार्यप्रणाली में व्यापक विवेक सम्मत सुधार तथा विनियमन और पर्यवेक्षण के माध्यम से व्यापक विवेक-सम्मत संस्थागत सब को और सुदृढ़ करना। इस संबंध में रिज़र्व बैंक अन्य देशी विनियामकों के साथ मिलकर घनिष्ठ सहयोग से कार्य कर रहा है।

5.100 वित्तीय संकट को रोकने के लिए व्यापक आर्थिक स्थिरता को बनाए रखना रिज़र्व बैंक की मुख्य चिंता है। अपनी मौद्रिक नीतियों के माध्यम से मुद्रा स्फीति को सीमित रख कर तथा मुद्रा स्फीतिकारी प्रत्याशाओं को स्थिर करके रिज़र्व बैंक ने वित्तीय स्थिरता बढ़ाने में भी सहायता की है।

5.101 मजबूत और दक्ष वित्तीय बाजार वित्तीय प्रणाली को स्थिरता प्रदान करते हैं, रिज़र्व बैंक इन बाजारों में अपने परिचालनों के माध्यम से मौद्रिक नीति के प्रयोजनों के लिए मुख्य बाजारों की गतिविधियों की बारीकी से निगरानी करते हुए वित्तीय बाजारों की दक्षता एवं सुचारू कार्य प्रणाली को प्रोत्साहित करता रहा है और जहाँ आवश्यक हुआ एक उचित विनियामक ढ़ांचे की स्थापना करता रहा है।

5.102 आघातों के सम्मुख खड़े रहने के लिए शक्ति प्राप्त करने में बैंकों को समर्थ बनाने के लिए अनके पास एक मजबूत पूंजी का आधार होना आवश्यक है। पूंजी पर्याप्तता मानदंडों को निर्धारण करके आघातों को झेल सकने की बैंकों की योग्यता को सुदृढ़ किया गया है। बासल I की अपेक्षाओं को पूरा करने के बाद भारतीय बैंक अब नए पूंजी-पर्याप्तता ढ़ांचे वाली (बासल II) व्यवस्था की ओर बढ़ रहे हैं। रिज़र्व बैंक ने बासल II को अपनाना सैद्धांतिक रूप से स्वीकार कर लिया है। बैंकों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है कि वे अपने कारोबार की योजना तथा कार्य-निष्पादन संबंधी बजट निर्माण प्रणाली के अनुरूप अपनी पूंजी पर्याप्तता आकलन प्रक्रिया (सीएएपी) भी बनाएं।

5.103 किसी संकट-ग्रस्त बैंक को हमेशा चूकों और उनपर जमाकर्ताओं की दौड़ से बचने के लिए सही समय पर पर्याप्त निधियों की आवश्यकता होती है। संकट समाधान के उपायों में अंतिम उधारदाता के रूप में केंद्रीय बैंक की भूमिका भी शामिल है। रिज़र्व बैंक विवेक - सम्मत रूप में चलनिधि के प्रबंधन के लिए जब भी आवश्यक हो चलनिधि उपलब्ध कराता है। यह अलग-अलग रूप से उन वित्तीय संस्थाओं को प्रत्यक्ष रुप से धन उधार देता है जो बुनियादी तौर पर मजबूत और ऋण शोधन में सक्षम हैं, परंतु अस्थायी रूप से चलनिधि के संकट में हैं।

5.104 निजी क्षेत्र के बैंकों का स्वामित्व और नियंत्रण जब भली-भांति विशाखीकृत होता है, तो वह बढ़ी हुई निधियों के दुरुपयोग या अविवेकी रूप में उनके उपयोग के जोखिम को न्यूनतम करने में मदद करता है। स्वस्थ प्रतियोगिता के माध्यम से बैंकों के मजबूत विकास के लिए रिज़र्व बैंक ने फरवरी 2005 में विस्तृत मार्गदर्शी दिशा निदेश जारी किए थे, जिसमें बैंकों द्वारा विशालीकृत स्वामित्व तथा प्रतिधारिताओं पर प्रतिबंध लगाये गए थे। बैंकों पर प्रभावी नियंत्रण के मुद्दे पर रिज़र्व बैंक ने यह शर्त लगाई कि सभी स्रोतों से निजी बैंकों में सकल विदेशी निवेश उनकी प्रदत्त पूंजी के 74 प्रतिशत से ज्यादा नहीं होना चाहिए।

5.105 इस तथ्य पर विचार करते हुए कि दुर्बल भुगतान प्रणाली वित्तीय स्थिरता को ही खतरे में डाल देगी, रिज़र्व बैंक सुरक्षित और उन्नत भुगतान प्रणालियों का पोषण और उनको प्रौन्नत करता रहा है। भुगतान एवं निपटान प्रणालियों के लिए पर्यवेक्षण बोर्ड हाल ही में गठित किया गया है, जो सभी प्रकार के भुगतान और निपटान प्रणालियों के विनियमन तथा पर्यवेक्षण को संबंधित सुदृढ़ नीतियां निर्धारित करेगा।

5.106 वित्तीय संस्थाओं के दैनिक लेनदेनों की अपनी जानकारी के माध्यम से विनियामक व्यवस्थाओं के प्रति अपना योगदान करता रहा है। बैंकिंग प्रणाली के लिए चौकसी और निगरानी प्रणाली को वर्तमान संव्यवहारों को और बेहतर बनाकर सुदृढ़ किया गया है। प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष पर्यवेक्षण पर समेकिन लेखांकन को और बेहतर और पर्यवेक्षण तथा जोखिम आधारित पर्यवेक्षण पर बल दिया गया। जोखिम आधारित पर्यवेक्षण को प्रयोग के तौर पर शुरू किया गया है। प्रणाली की स्थिरता की दृष्टि से वित्तीय प्रणाली के सभी घटकों अर्थात्-बैंकिंग, सहकारी बैंकिंग, एनबीएफसी, तथा एफ आइ के समेकित दृष्टिकोण पर विचार किया गया है। किसी बैंक की कमजोरी को प्रारंभिक स्तर पर ही दूर करने के प्रयोजन से त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई ''करने के लिए मार्गदर्शी दिशा निदेश जारी कर दिए गए हैं। वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने तथा बैंकिंग प्रणाली को अनावश्यक वित्तीय संकटों से बचाने के लिए जोखिम मानदंडों, व्युत्पन्नी (डेरिवेटिक्स) उत्पादों पर ऋण जोखिमों से बचाने के लिए ''अपने ग्राहक को जानिए'' तथा ''काले धन को वैध बनाने से रोकने'' संबंधी अनुदेश जारी किए गए हैं।

5.107 कुछ सहकारी बैंकों की कमजोर वित्तीय स्थिति को ध्यान में रखते हुए, रिज़र्व बैंक ने कठोर विवेक-सम्मत मानदंड बनाए हैं जैसे भुगतान आदेश / माँग ड्राफ्ट भुनाई मानदण्ड, स्टॉक पर उधार देने संबंधी मानदंड, पूंजी बाजार में निवेश जोखिम संबंधी सीमाएं, स्वर्ण पर उधार देने संबंधी मानदंड, आदि जिससे हानियों को सीमित रखा जा सके तथा ऐसी घटनाओं को भविष्य में दुबारा घटित होने से बचा जा सके। परंतु, साथ ही, वित्तीय स्थिरता को बनाए रखने के लिए रिज़र्व बैंक ने चूककर्ता सहकारी बैंकों के विरुद्ध कार्रवाई की है। यह कार्रवाई शेयर धारकों के हितों की अपेक्षा जमाकर्ताओं के हितों को सुरक्षित रखने की दृष्टि से की गई है रिज़र्व बैंक किसी ऐसे नैतिक संकट के खड़े होने के प्रति सावधान है, जो बैंकिंग प्रणाली के लिए कोई बुरा उदाहरण स्थापित करने की ओर ले जाए।

5.108 इस संदर्भ में विचारणीय एक महत्वपूर्ण मुद्दा यह है कि, कठोर विनियामक व्यवस्थाओं के स्थापित होने के बावजूद, भारतीय वित्तीय प्रणाली में, बैंकों को फेल होने और बैंकों से पैसा निकालने की दौड़ की घटनाएं हुई हैं। विनियामक और पर्यवेक्षक के रुप में रिज़र्व बैंक की उपस्थिति का होना बैंकों द्वारा अपने आप किए गए उल्लंघनों और प्रबंध के कारण बैंकों पर पड़ने वाली दौड़ या उनके फेल होने से बचाने की कोई गारंटी नहीं है। प्रभावी विनियमन के युग ने बैंकों के फेल हो जाने को घटनाओं को किसी वित्तीय संस्था की अपनी कु व्यवस्था के कारण हो जाने के रूप में माना जाना चाहिए। भारत में शोधक्षम बैंक से लेन-देन करते समय नीति निर्याताओं के ध्यान में छोटे जमाकर्ताओं के हितों का संरक्षण करने की आवश्यकता के साथ - साथ सर्वांगी चिंताएं सर्वोपरि हैं (मोहन, 2005)।

(ii) बासल II मानदंड तथा इसके निहितार्थ

5.109 विश्वभर में बैंकिंग प्रणाली बासल II मानदंडों को अपनाने की ओर बढ़ रही है। बासल II के ढ़ांचे से प्रमुख जोखिमों से निपटने के लिए बैंकों द्वारा सुदृढ़ जोखिम प्रबंध -परंपराओं को अपनाने के लिए प्रेरित होने की आशा है। भारतीय बैंकिंग प्रणाली के बासल II में रूपांतरण के संदर्भ में कुछ मुद्दे उठने की संभावना है।

5.110 हालांकि भारत में, विभिन्न बैंकों में वित्तीय सूचना की निगरानी आंकड़ा प्रसारण, तथा डाटा भंडारण करने के कार्य को बेहतर और उन्नत करने के समवर्ती प्रयास चल रहे हैं, फिर भी इस कार्य को पूरा करना कठिन प्रतीत होता है, क्योंकि भारत में अनेक प्रकार के वाणिज्यिक बैंक कार्यरत हैं जो विकास के विभिन्न चरणों में हैं। चूंकि यह नया समझौता संसाधन-सघन है जो भारी डाटाबेस, सुदृढ़ सूचना प्रौद्योगिकी के ढ़ांचो की मांग करता है, जो विभिन्न परिदृश्यों में बैंकों के जोखिम का प्रोफाईल बनाते हैं। यह बैंकों और विनियामक से भारी मांग करती है कि वे उपयुक्त साधनों के माध्यम से अपने सूचना आधार में सुधार लाएं। क्षमता-निर्माण बैंकों और विनियामक निकायों, दोनों में, महत्वपूर्ण है, बासल II मानदंडों के अंतर्गत काम करते हुए और विशेषकर उन्नत दृष्टिकोणों को अपनाते हुए। विभिन्न सरलीकृत दृष्टिकोणें को लागू करने में बैंकों, बैंकिंग विनियामकों, तथा रेटिंग एजेंसियों इन सभी की ओर से तैयारी किए जाने की आवश्यकता है। रेटिंग एजेंसियों को शायद ''निर्गमकर्ता रेटिंग'' देने के लिए एक ढ़ांचा विकसित करना होगा। निर्गमकर्ताओं के लिए रेटिंग को प्रोत्साहित करना, तथा रेटिंग से संबंधित विश्वसनीय और

गुणवत्तापूर्ण ऐतिहासिक आंकड़ा का न मिलना महत्वपूर्ण है। अपर्याप्त ऐतिहासिक आंकड़ा और साथ ही ऐसे आंकड़े को विकसित करने और बनाए रखने से जुड़ी लागत भी बासल II के अंतर्गत जोखिम के मापन की उन्नत तकनीकों की ओर बढ़ने की गति प्रभावित होगी। जैसे-जैसे बासल II की ओर बढ़ने की प्रक्रिया गति पकड़ती है, भारत में अनेक बैंकों को बाजार-पूंजी की आवश्यकता होगी।

5.111 इन चुनौतियों के बावजूद, यह लगता है कि भारतीय बैंक बासल II की ओर बढ़ने में समर्थ होंगे। क्योंकि भारत ने इस प्रारंभिक संक्रमण के लिए सरल विकल्प चुने हैं। रिज़र्व बैंक ने इस संक्रमण प्रक्रिया को डिजाइन बनाने तथा उसे लागू करने, दोनों के लिए परामर्शी तथा सहभागितापूर्ण दृष्टिकोण को चुना है। अनेक सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों तथा निजी क्षेत्र के पुराने बैंकों ने ऋण जोखिम के लिए मानकीकृत दृष्टिकोण तथा परिचालनगत जोखिम के लिए बुनियादी संकेतक दृष्टिकोण अपनाकर बासल II में जाने के लिए भावी पथ पहले से तैयार कर लिया है।

(iii) समेकित पर्यवेक्षण तथा वित्तीय संस्थाओं का समूहन - भारत में विनियामक तैयारी

5.112 घरेलू वित्तीय बाजारों का अपविनियमन होने के साथ ही वित्तीय संस्थाओं का समूहन 1980 के बाद के दशक से तेजी से बढ़ा है। अपनी विनियामक और पर्यवेक्षी संरचना को अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों के अनुरुप बनाने के लिए भारत ने भी समेकित पर्यवेक्षण का ढ़ांचा अपनाया (बाक्स V.6)।

5.113 भारत में वित्तीय समूहन के अभ्युदय ने देश में वर्तमान विनियामक और पर्यवेक्षी ढांचे के लिए कुछ चुनौतियां खड़ी कर दी हैं। एक ऐसी ही चुनौती है जो नैतिक संकट के पहलू से निकलती है, क्योंकि कुछ वित्तीय समूह काफी बड़े हो गए हैं। वे विनियामकों के समक्ष एक ऐसी द्विविधा खड़ी कर देते हैं कि वे इतने बड़े हैं कि वे फेल नहीं हो सकते। दूसरी चुनौती संक्रामक प्रभाव या प्रतिष्ठा के प्रभाव अन्य घटक में सहायक संस्था पर पड़ने से संबंधित हैं, जो उस समूह के लेन-देनों और जोखिमों में जटिलता तथा गैर पारदर्शिता, वित्तीय समूह के अंदर ही बिना कुछ रखे हुए लेनदेन इन चिंताओं को बढ़ाते हैं जो इस वित्तीयन समूह के सदस्यों द्वारा प्रयुक्त विनियामन अंतर्पणन के बारे में है, जो संक्रामक जोखिम को बढ़ाता है।

5.114 रिज़र्व बैंक ने नवंबर 2000 में बहुअनुशासनीय कार्य दल (अध्यक्ष : विपिन मलिक) गठित किया था जिसका कार्य था - समेकित पर्यवेक्षण को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से समेकित लेखांकन तथा अन्य मात्रात्मक पद्धत्तियों को शुरू करने की सम्भावता का मार्गदर्शी

बाक्स V.6
समेकित लेखांकन तथा पर्यवेक्षण

समेकित पर्यवेक्षण प्रभावी बैंक पर्यवेक्षण का एक अनिवार्य तत्व है तथा यह अलग-अलग बैंकों के परंपरागत पर्यवेक्षण की तकनीकी की अनुपूरक का काम करती है। यह पर्यवेक्षण का समूहवार दृष्टिकोण है जहाँ किसी बैंकिंग समूह द्वारा वहन किए जा रहे सभी जोखिमों को समग्रता में हिसाब में लिया जाता है। भले ही वे कहीं भी दर्ज (पंजीकृत) किए गए हों। इस दृष्टिकोण का एक मुख्य तत्व है वित्तीय विवरणों को समेकित आधार पर बनाना - जिसमें बैंकों तथा उनकी संबंधित संस्थाओं की आस्तियों और देयताओं तथा तुलन-पत्र से इतर मदों को वस्तुतः ऐसा मानकर कि जैसे वे एक ही संस्था हैं: मिलाकर समेकित विवरण बनाया जाता है। ऐसी रिपोर्टें पर्यवेक्षकों को उन जोखिमों का मापन करने में समर्थ बनाती हैं, जिन्हें उस बैंक समूह द्वारा वहन करना है, तथा पर्यवेक्षी मानकों को लागू करता है जैसे भारी ऋण-निवेश जोखिम तथा संबंधित जोखिम की सीमाएं तथा एक समूह के आधार पर न्यूनतम पूंजी-पर्याप्तता अनुपात सहायक होता है। इसमें लेखांकन समेकन तथा समेकित पर्यवेक्षण दोनों को शामिल किया जाता है जो बैंकिंग समूहों के पर्यवेक्षण का मुख्य पहलू बनता है।

समेकित लेखांकन को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से मार्गदर्शी दिशा-निदेशों तथा अन्य मात्रात्मक पद्धतियों की दृष्टि से बैंकों को सूचित किया गया है, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ यह भी बताया गया है कि विवेक-सम्मत मानदंडों के उपायों का उद्देश्य है - बेहतर जोखिम -प्रबंधन तथा ऋण जोखिम के संकेंद्रण को बचाना, अतः अनुमानित जोखिमों पर विवेक-सम्मत सीमाओं के अनुपालन करने के अलावा बैंकों को चाहिए कि वे एकल तथा समूह उधारकर्ता के जोखिमों पर भी विवेक-सम्मत सीमाओं का पालन करना चाहिए। बैंकों और विकास वित्त संस्थाओं के बीच विवेक-सम्मत मानदंडों की सामंजस्यपूर्ण बनाने के प्रयासों के एक भाग के रूप में बैंकों के लिए निर्धारित समेकित लेखांकन और पर्यवेक्षण सम्बंधी मार्गदर्शी दिशानिदेश 1 अप्रैल 2003 से विकास वित्तीय संस्थाओं पर भी लागू कर दिए गए। वित्तीय संस्थाओं ने भी अपनी वार्षिक रिपोर्ट के एक भाग के रूप में समेकित वार्षिक खातों को बनाना /प्रकाशित करना शुरू कर दिया है। समेकित पर्यवेक्षण से संबंधित विवेक-सम्मत मानदंड (30 जून 2004 की स्थिति के अनुसर) केवल वाणिज्यिक बैंकों , अर्थात् - सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक, निजी क्षेत्र के बैंक तथा विदेशी बैंक पर ही लागू हैं । वाणिज्यिक बैंकों से यह अपेक्षित है कि वे समेकित वित्तीय विवरण तैयार करें तथा समूह के आधार पर कुछ विवेक-सम्मत विनियमनों का अनुपालन करें। भारत में कार्यरत विदेशी बैंकों / अन्य वित्तीय संस्थाओं को, जिनकी पैतृक संस्था कोई विदेशी संस्था है, तथा समूह को जिसकी पैतृक संस्था कोई गैर बैंकिंग वित्तीय संस्था है, भले ही वह वित्तीय हो या गैर वित्तीय, इस समेकित पर्यवेक्षण के ढ़ांचे से अलग रखा गया है। शहरी सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों पर समेकित पर्यवेक्षण लागू नहीं होगा क्योंकि उनकी कोई सहायक संस्था नहीं होती। राज्य सहकारी बैंकों तथा जिला मध्यवर्ती सहकारी बैंकों को भी इस समेकित पर्यवेक्षण से संबंधित मार्गदर्शिका दिशा-निदेश जारी नहीं किए गए है, अतः उन्हें भी समेकित खाते तैयार नहीं करने होंगे। जैसे-जैसे बैंकों का आकार बढ़ने लगता है, तथा वे अंतर-समूह जटिल परिचालनों में प्रवेश करते हैं तथा उन्हें करते हैं, तो समेकित लेखांकन तथा पर्यवेक्षी तकनीकों का और विकास करना होगा ताकि उभरती हुई आवश्यकताओं को पूरा कर सकें तथा अपेक्षित सुरक्षोपाय करने होंगे ताकि ऐसे बड़े संगठनों तथा बैंकिंग समूहों अंतर्निहित जोखिम से निपट सकें।

दिशा-निदेश मार्च 2003 को समाप्त वर्ष से लागू करने के लिए बैंकों को जारी किए गए। भारत में समेकित पर्यवेक्षण के घटकों में शामिल हैं - सार्वजनिक प्रकटीकरण के लिए समेकित वित्तीय विवरण तैयार करना तथा जोखिमों के पर्यवेक्षी आकलन के लिए समेकित विवेक - सम्मत रिपोर्ट तैयार करना जो बैंकों तथा अन्य पर्यवेक्षित संस्थाओं को अन्य समूह के सदस्यों द्वारा भेजी जा सकती है। इसके अतिरिक्त, कुछ विवेक-सम्मत विनियमन जैसे पूंजी पर्याप्तता, तथा समूह आधारपर भारी जोखिमों का संकेंद्रण को भी लागू किया जाता है। समेकित पर्यवेक्षण के अनुपूरक के रूप में तथा इन मुद्दों से निपटने के लिए एक अग्रगणी उदाहरण के रूप में तथा वित्तीय स्थिरता को और मजबूत करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक ने वित्तीय समूहन संबंधी कार्य दल गठित किया। जून 2004 में प्रस्तुत अपनी रिपोर्ट में उक्त कार्य दल ने एक अंतर-विनियामक मंच गठित किए जाने की सिफारिश की थी जिसके सदस्य रिज़र्व बैंक, सेबी तथा इर्डा से लिए जाएं। यह मंच पूर्णतः वित्तीय समूहन की गतिविधियों की निगरानी करेगा। यह नया ढांचा संबंधित विनियामकों अर्थात् रिज़र्व बैंक, सेबी और इर्डा द्वारा अलग-अलग संस्थाओं के विनियामक ढांचे तक पर्यवेक्षण के पहले से ही विद्यमान ढांचे का अनुपूरक होगा तथा समेकित विवेक-सम्मत रिपोर्टिंग की प्रणाली बैंकों के संबंध में शुरू की गई। रिज़र्व बैंक ने पहले से ही भारत में वित्तीय समूहन के पर्यवेक्षण की प्रणाली स्थापित कर दी है। जून 2004 में एक वित्तीय समूहन कक्ष भारतीय रिज़र्व बैंक के बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग में गठित किया गया था, जो संपर्क इकाई है तथा समूहन के पर्यवेक्षण के मामलों में दो अन्य विनियामकों अर्थात् सेबी और इर्डा के साथ समन्वय रखता है।

5.115 वित्तीय समूहन के परिचालन यह अपेक्षा करते हैं कि समूह की संस्थाओं के बीच जटिल और पेचीदा संबंधों को सभी परिपेक्ष्य में समझा जाए। संक्रामक प्रभाव के खतरे को भी उचित रूप से समझने की जरूरत है क्योंकि समूहन के एक भाग में प्रतिकूल गतिविधियां अन्य भांगों के परिचालनों को भी प्रभावित कर सकते हैं। वर्तमान अंतर-विनियामक मंच एक अनौपचारिक समूह है - जिसमें सूचना के आदान-प्रदान एक दूसरे को करने के संबंध में विनियामकों के बीच कोई प्रभावी सहयोग नहीं है। इससे यह आवश्यक हो जाता है कि एक औपचारिक व्यवस्था की जाए जो विनियामकों के बीच सूचना के आदान-प्रदान को आदेशात्मक बना दें। भारत में वित्तीय समूहन का विनियमन आज भी विकासात्मक चरण में हैं। परंतु इसे उभरती हुई आवश्कता के अनुरूप बनाने के लिए विनियामक ढांचे को सुदृढ़ करने के लिए उपाय पहले से ही शुरू कर दिए गए हैं।

(iv) भारत में इलैक्ट्रानिक बैंकिंग का विनियमन और पर्यवेक्षण

5.116 इलैक्ट्रानिक बैंकिंग इलैक्ट्रानिक सरणियों जैसे टेलीफोन, इंटरनेट, सैल फोन आदि के माध्यम से बैंकिंग की सेवाओं और उत्पादों की सुपुर्दगी की प्रक्रिया है तथा इसमें इंटरनेट बैंकिंग, टेलीफोन बैंकिंग, मोबाइल बैंकिंग आदि आते हैं। अनेक उदीयमान अर्थ-व्यवस्थाओं में ई-बैंकिंग के विनियमन और पर्यवेक्षण अभी-भी विकास के चरण में है। (बाक्स V.7)।

5.117 भारत सरकार तथा रिज़र्व बैंक ने भारत में ई-बैंकिंग के विकास को सुविधाजनक बनाने के लिए अनेक पहलें की हैं। विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक ने विद्यमान भुगतान और निपटान प्रणालियों का समेकन करने में तथा तत्काल समय के परिवेश में कार्य करनेवाली एक दक्ष, समेकित तथा सुरक्षित प्रणाली की स्थापना करने की दृष्टि से प्रौद्योगिकी के उन्नयन में काफी प्रगति की है, जिसने भारत में ई-बैंकिंग से विकास को और आगे बढ़ाने में सहायता की है। भारत सरकार ने 17 अक्तूबर 2000 से लागू आईटीएक्ट,2000 अधिनियम बनाया है। जो इलैक्ट्रानिक लेनदेनों तथा इलैक्ट्रानिक वाणिज्य के अन्य साधनों को कानूनी मान्यता प्रदान करती है।

पर्यवेक्षी प्रणाली का उन्नयन

5.118 प्रौद्योगिकी-प्रधान वित्तीय प्रणाली के विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में अपने आपको उन्नत करने के लिए रिज़र्व बैंक प्रयास करता रहा है। 1998 में इसने अपनी पर्यवेक्षी प्रणाली को उन्नत करने तथा अपने पर्यवेक्षी कार्यों को कंप्यूटरीकृत परिवेश में अपनाने के लिए अंतरराष्ट्रीय विकास विभाग को तकनीकी सहायता परियोजना का लाभ उठाया था। इसने फरवरी 1998 में सभी बैंकों को अपनी प्रणालियों में विद्यमान जोखिमों के मूल्यांकन के लिए तथा इन जोखिमों, जिन्हें मोटे तौर पर तीन शीर्षों में रखा जा सकता है,- अर्थात् सूचना प्रौद्योगिकीगत परिवेश जोखिम, सूचना प्रौद्योगिकीगत परिचालन जोखिम तथा उत्पाद जोखिम, से निपटने के लिए पर्याप्त नियंत्रण प्रणाली-तंत्र स्थापित करने के लिए ''कंप्यूटर तथा दूर संचार प्रणाली जोखिम तथा नियंत्रण'' विषय पर मार्गदर्शी-दिशा निदेश जारी किए थे।

इंटरनेट बैंकिंग का संवर्धन

5.119 रिज़र्व बैंक ने इंटरनेट बैंकिंग (आई - बैंकिंग) के विभिन्न पहलुओं की जांच करने के लिए एक कार्य दल का गठन किया है। उक्त कार्य दल ने आई-बैंकिंग के तीन प्रमुख क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित किया है अर्थात् (i)प्रौद्योगिकी तथा सुरक्षा संबंधी मुद्दे, (ii) कानूनी मुद्दे और (iii) विनियामक तथा पर्यवेक्षी मुद्दे। उक्त कार्यदल ने अपनी रिपोर्ट जून 2001 में प्रस्तुत कर दी थी और रिज़र्व बैंक ने कार्यदल की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए बैंकों द्वारा लागू किए जाने के लिए ''भारत में इंटरनेट बैंकिंग'' पर मार्गदर्शी दिशा निदेश जारी किए। इसमें यह भी कहा गया था की इससे पूर्व ''कंप्यूटर तथा दूर संचार में जोखिम तथा नियंत्रण'' (1998) पर जारी पूर्ववर्ती मार्गदर्शी दिशा निदेश भी इंटरनेट बैंकिंग पर समान रूप से लागू होंगे।

बाक्स V.7
ई-बैंकिंग विनियमन तथा पर्यवेक्षण - अंतरराष्ट्रीय अनुभव

फिनलैंड विश्व में पहला देश था जिसने ई-बैंकिंग में अग्रणी भूमिका निभाई। इस्कें डिनाबियन देशों में इंटरनेट का प्रयोग करने वालों की संख्या सबसे ज्यादा है। फिनलैंड ओर स्वीडन में एक तिहाई से ज्यादा बैंक ग्राहक ई-बैंकिंग का लाभ उठा रहे हैं। इंटरनेट बैंकिग आस्ट्रिया, कोरिया, सिंगापुर, स्पैन, स्विटजरलैंड आदि में भी काफी प्रचालित है। ई-बैंकिंग प्रभावीरूप से भुगतान और लेखा पद्धति को सुविधजनक बनाता है इसके द्वारा वह बैंकिंग सेवाओं की सुपुर्दगी की गति काफी सीमा तक बढ़ा देता है। जहाँ ई-बैंकिंग ने दक्षता तथा सहूलियत में वृद्धि की है, वहीं इसने विनियामकों तथा पर्यवेक्षकों के लिए अनेक चुनौतियां भी खड़ी की हैं (बीआइएस 2000)।

इंटरनेट बैंकिंग द्वारा खड़ी की गई चुनौतियों की प्रतिक्रिया में विभिन्न देशों के विनियामक और पर्यवेक्षकों ने विनियमन की अपनी - अपनी प्रक्रिया-तंत्र तैयार किए हैं। अमेरिका में विधान और विनियमनों का एक ऐसा ढांचा है जो विशिष्ट रूप से इंटरनेट तथा ई-कॉमर्स से और खासकर इलैक्ट्रानिक बैंकिंग तथा इंटरनेट बैंकिंग से जुड़े उपयोग तथा अधिकारों को विशिष्ट रूप से संहिता बद्ध करता है। फेडरल रिज़र्व की चिंताएं, यह सुनिश्चित, करने तक सीमित हैं कि इंटरनेट बैंकिंग तथा अन्य बैंकिंग सेवाएं बैंकिंग की सुरक्षितता, सुरक्षा तथा सुदृढ़ता पर तथा बैंकों के ग्राहकों के संरक्षण पर यथोचित ध्यान देते हुए लागू की जाएं।

ब्रिटेन में,ई-बैंकिंग गतिविधियों के विनियमन के लिए कोई विशेष विधान नहीं है। एफएसए इलैक्ट्रानिक बैंकिंग के विनियमन के प्रति उदासीन है। स्वीडन में स्वैरिंग बैंक द्वारा ई-बैंकिंग पर कोई औपचारिक मार्गदर्शी-दिशा निदेश परीक्षकों को नहीं दिए गए हैं। इंटरनेट बैंकिंग की चल रही गतिविधियों को नियंत्रित करने में बिना किसी सक्रिय सहभागिता के वित्तीय बाजारों की सामान्य निगरानी का ही एक भाग रहा है। रिज़र्व बैंक ऑफ न्यूजीलैंड इंटरनेट बैंकिंग की गतिविधियों तथा परंपरागत बैंकिंग की गतिविधियों दोनों पर विनियमन का एक ही दृष्टिकाण अपनाता है। तथापि वहाँ कुछ ऐसे बैंकिंग विनियमन हैं जो केवल इंटरनेट बैंकिंग पर ही लागू होते हैं। पर्यवेक्षण जनता द्वारा सूचना के प्रकटीकरण पर आधारित है, न कि विस्तृत विवेकसम्मत नियमों को लागू करने पर (रिपोर्ट ऑन इंटरनेट बैंकिंग 2001 क)।

मोनेटोरी अथोरिटी ऑफ सिंगापुर (एमएएस) इंटरनेट बैंकिंग पर भी वही विवेक-सम्मत मानदंड लागू करती है जैसा की परंपरागत बैंकिंग पर। एमएएस ने सितंबर 2002 में इंटरनेट बैंकिंग टेक्नोलोजी रिस्क मैनेजमेंट गाइडलाईन्स का मसौदा तैयार किया था जो इंटर बैंकिंग उपलब्ध कराने वाले सभी बैंकों से यह मांग करता है कि वे एक सुदृढ़ ओर प्रभावशाली जोखिम प्रबंध प्रक्रिया स्थापित करें। ई-बैंकिंग के सम्बंध में हांगकांग का विनियामक दृष्टिकोण अपने स्वरुप में कम विशिष्टतापरक है। हांगकांग मोनेटोरी अथोरिटी (एचकेएमए) अपने बैंकों से यह अपेक्षा करती हैं कि वे अपनी प्रणाली के सुरक्षा पहलुओं का बारीकी से विश्लेक्षण करें तथा इसकी किसी योग्य स्वतंत्र विशेषज्ञ से समीक्षा कराएं (रिपोर्ट ऑन इंटरनेट बैंकिंग 2001क)।

इन अनेक देशों की तरह भारत में भी ई-बैंकिंग के लिए कोई विशिष्ट विनियामक कानून नहीं हैं। बैंकों पर लागू विद्यमान विनियामक ढांचे को इंटरनेट बैंकिंग पहचानने तथा ऐसे जोखिमों से निपटाने के लिए आवश्यक नियंत्रण प्रक्रिया - तंत्र विकसित करने के बारे में कुछ मार्गदर्शी-दिशा निदेश जारी किए गए हैं। भारत में ई-बैंकिंग सेवाएं प्रदान करनेवाले बैंकों को इन मार्गदर्शी दिशा निदेशों को पालन करने की जरूरत है।

प्रौद्योगिकी से संबंधित विनियामक ढांचे को सुदृढ़ करना

5.120 बैंकों पर लागू विद्यमान विनियामक ढांचा इंटरनेट बैंकिंग पर भी लागू कर दिया गया है। इन मार्गदर्शी दिशानिदेशों में विभिन्न मुद्दों को शामिल किया गया है जो प्रौद्योगिकी सुरक्षा मानदंडों, तथा कानूनी ओर विनियामक ढांचे के अंतर्गत आएंगे। ऐसे छाया बैंकों को जिनके कोई कार्यालय नहीं है तथा केवल ऑन लाइन पर कार्य करतें हों, भारत में ई-बैंकिंग सेवाएं प्रदान करने की अनुमति नहीं है तथा केवल उन बैंकों को, जिन्हें बैंककारी विनियमन अधिनियम के अंतर्गत लाईसेंस प्रदान किया गया है, तथा जिनकी भारत में भौतिक उपस्थिति है, ऐसी सेवाएं प्रदान करने की अनुमति दी गई है। इसके अलावा, बैंकों से यह अपेक्षित है कि वे इंटरनेट बैंकिंग की सुरक्षा प्रणालियों और प्रक्रियाओं के टूटने या उनके फेल हो जाने के प्रत्येक मामले की रिपोर्ट रिज़र्व बैंक को करेंगे। साथ ही रिज़र्व बैंक अपने विवेक से ऐसे बैंकों की विशेष लेखा परीक्षा, निरीक्षण कराने का निर्णय ले सकता है। हाल के मार्गदर्शी- दिशा निदेशों के अनुसार बैंकों को इंटरनेट सेवा प्रदान करने के लिए रिज़र्व बैंक का पूर्व - अनुमोदन लेने की आवश्यकता नहीं है। तथापि, बैंकों की अपनी इंटरनेट नीति होनी चाहिए तथा उन्हें यह सुनिश्चित करने की जरूरत है कि उनकी यह नीति ''भारत में इंटरनेट बैंकिंग कार्यदल'' द्वारा 2003 में निर्धारित मानदंडों के अनुरूप हो।

इलैक्ट्रॉनिक मनी से संबंधित मुद्दे

5.121 रिज़र्व बैंक ने इलैक्ट्रानिक मनी पर एक दूसरा कार्यदल गठित किया था जिसने अपनी रिपोर्ट जुलाई 2002 में प्रस्तुत कर दी थी। उक्त समूह ने पाया कि ई-मनी का अधिक व्यापक रुप में प्रयोग होने की स्थिति में केंद्रीय बैंक के संदर्भ में चिंता के कुछ क्षेत्रों की पहचान की है, ताकि मौद्रिक नीति के संचालन को कोई क्षति नहीं पहुँचे तथा साथ ही, इस लिखत (साधन) की निष्ठा भी बनी रहे। उक्त समूह द्वारा दिए सुझावों में से कुछ सुझाव थे बहु-प्रयोजनवाली ई-मनी केवल प्राधिकृत बैंकों द्वारा उधार के आधार पर जारी की जानी चाहिए। जिसकी कठोरता

से विनियमन तथा घनिष्ठता से निगरानी की जानी चाहिए; यूनिट के खाते में मनी संबंधी कार्य को सुरक्षित रखने तथा अर्थ व्यवस्था में मुद्रा आपूर्ति पर नियंत्रित करने के लिए उनकी उन्मोचनता को सुनिश्चित करे तथा मौद्रिक नीति के प्रयोजन के लिए तथा आपराधिक दुरुपयोग जैसे काले धन को वैध बनाने से संरक्षण के लिए रिपोर्ट करनी चाहिए।

ई-सिक्योरिटी को सुनिश्चित करना

5.122 बिना चुनौतियों के कोई नवोन्मेष नहीं होता और सूचना प्रौद्योगिकी भी इस नियम का अपवाद नहीं है। इन नवोन्मेषों से उभरने वाली सबसे बड़ी चुनौती - सिक्योरिटी (सुरक्षा) से संबंधित है (मोहन 2004ग)। ई-बैंकिंग के क्षेत्र में धोखाधड़ी की संभावना पर तथा संक्रामक प्रभाव की संभावना पर विचार करते हुए रिज़र्व बैंक ने विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में ई-बैंकिंग से जुड़े ऐसे जोखिमों से निपटने के लिए सक्रिय भूमिका निभाता रहा है जो अन्यथा भारतीय बैंकिंग क्षेत्र की विश्वनीयता को कम कर देती। इलैक्ट्रानिक बैंकिंग की सुविधा के उपयोग से जुड़े धोखाधड़ी के मुद्दों को रिज़र्व बैंक बड़ी तत्परता से निपटाता रहा है। सुरक्षित ई-बैंकिंग के लिए मार्गदर्शी - दिशा निदेश जारी करने के बाद भी रिज़र्व बैंक समय-समय पर ऐसी धोखाधड़ियों को रोकने के लिए नियंत्रण प्रक्रिया-तंत्र के संबंध में सूचित करता रहा है। हाल ही के एक मामले में जिसने एक ग्राहक ने इंटरनेट बैंकिंग की सुविधा का उपयोग करते हुए धोखाधड़ी की थी, रिज़र्व बैंक ने संबंधित बैंक को व्यवसाय की खामियों के कारण बच निकलने के रास्तों को बंद करने के बारे में सूचित किया था तथा वही बात अन्य बैंकों को भी सूचित की गई थी ताकि वे चौकस रहें तथा इंटरनेट बैंकिंग प्रणाली के दुरुपयोग को नियंत्रित करें।

5.123 भारत में, ई-बैंकिंग का संवर्धन करने के लिए कानूनी बुनियादी संरचना अभी व्यापक रूप में स्थापित नहीं हुई हैं। डिजिटल हस्ताक्षर के प्रमाणपत्र जारी करने के लिए निमंत्रक, प्रमाणन प्राधिकरण द्वारा नियुक्त लाईसेंस मुद्रा प्रमाण अधिकारी भी अभी भारत में नहीं हैं। साथ ही, भारत ने अभी तक अंतरराष्ट्रीय साइबर क्राइम ट्रीटी पर हस्ताक्षर भी नहीं किए है, जो साइबर अपराध तथा अपराधियों से संबंधित सूचना के आदान-प्रदान के लिए विभिन्न हस्ताक्षरकर्ता राष्ट्रों के बीच सहयोग को गहन बनाने का प्रयास करता है। इसके अलावा, साइबर क्राइम के कानूनों से संबंधित विधान, ई-मनी उत्पादों पर विनियामक प्राधिकरण से संबंधित स्पष्टीकरण उपभोक्ता संरक्षण तथा गोपनीयता कानून से संबंधित मुद्दे अभी भी अनसुलझे हुए हैं। भारत में ई-बैंकिंग परिचालनों को और अधिक व्यापक, सुरक्षित तथा दक्ष बनाने के लिए इन मुद्दों को संबंधित प्राधिकारियों द्वारा निपटाने की जरूरत है।

5.124 चूंकि प्रौद्योगिकी नवोन्मेष के कारण भारत और विदेशों में ई-बैंकिंग से संबंधित बैंकिंग के संव्यवहार और विधान (कानून) अभी भी विकास की प्रक्रिया में हैं, अतः बैंकिंग तथा वाणिज्य से संबंधित विभिन्न विधानों तथा विनियामक ढांचे की निरंतर समीक्षा करने की जरूरत है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि ई-बैंकिंग सुदृढ़ आधार पर विकसित हो तथा ई-बैंकिंग से संबंधित चुनौतियां वित्तीय स्थिरता को कोई खतरा पैदा न करें, रिज़र्व बैंक ई-बैंकिंग का कानूनी और अन्य अपेक्षाओं की निगरानी और समीक्षा कर रहा है।

V. भारत में विनियमन और पर्यवेक्षण - एक आकलन

5.125 भारत में रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकिंग के विनियमन का मुख्य प्रयोजन वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करना तथा इसकी सुदृढ़ता और दक्षता बढ़ाकर वित्तीय प्रणाली में विश्वास को बनाए रखना है। अलग-अलग बैंकों के मामले में कुछ छुटपुट या एकाकी मामलों को छोड़कर रिज़र्व बैंक द्वारा अपनाई जा रही विनियमन और पर्यवेक्षण की नीतियाँ यह सुनिश्चित करने में सफल रही हैं कि विनियमन के मौटे-मौटे उद्देश्य पूरे किए जाते हैं। विनियमन में पाए जाने वाले अंतरालों की निरंतर आधार पर समीक्षा की जाती है तथा उनको यथोचित उपायों द्वारा समय-समय पर दूर किया जाता है। भारतीय जनता को बैंकिंग प्रणाली में पूरा भरोसा है जो इस तथ्य से जाना जा सकता है कि वे बैंक जमा राशियों को पूर्णतः सुरक्षित मानते हैं। 1969 और 1980 में दो अवसरों पर किए गए बैंकों के राष्ट्रीकरण के परिणामस्वरूप सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के स्वामित्व ने इस दृढ़ भावना में योगदान किया है। सुदृढ़ वित्तीय स्थिति तथा बैंकिंग प्रणाली की शक्ति रिज़र्व बैंक की विनियामक और पर्यवेक्षी दृष्टिकोणों की प्रभावशीलता को दर्शाती हैं। वर्षों से, भारत ने सर्वोत्तम अंतरराष्ट्रीय संव्यवहारों को तथा मानकों और संहिताओं को अपनाना शुरू कर रखा है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि भारतीय वित्तीय प्रणाली सबल आधारों पर कार्य करती है।

5.126 भारतीय वित्तीय प्रणाली की वैश्वीकरण की ओर बढ़ने की एक महत्वपूर्ण विशेषता प्राधिकारियों की अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों की ओर बढ़ने की रही है (मोहन 2005)। भारत ने हमेशा वित्तीय क्षेत्र के प्रशासन में सर्वोत्तम संव्यवहारों की अवधारणा तथा उसके क्रियान्वयन की दिशा में सक्रिय पहल की हैं। मौद्रिक और वित्तीय नीतियों के निर्माण में बढ़ी हुई पारदर्शिता तथा संबंधित आंकड़ों के प्रसारण में सुधार सहित अंतरराष्ट्रीय मौद्रिक प्रणाली में स्थिरता बनाए रखने से संबंधित क्षेत्रों में विश्वस्तर पर स्वीकृत कुछ न्यूनतम मानकों का पालन करने की आवश्यकता का भारत ने पूर्णतः समर्थन किया है। भारत एक ऐसे स्वैच्छिक दृष्टिकोण, ईमानदार, सम्यक तथा निरंतर प्रक्रिया को अपनाने का समर्थन करता है, जिसमें विभिन्न देशों की

संस्थागत तथा कानूनी संरचना एवं उनके विकास के स्तर को भली प्रकार ध्यान में रखा गया हो (रेड्डी 2001 क)।

5.127 भारत मानक स्थापित करने वाली विभिन्न संस्थाओं से घनिष्ठता से संबद्ध रहा है तथा अंतरराष्ट्रीय मानकों और संहिताओं को विकसित करने तथा उनको लागू करने के कार्य में सन्नद्ध अनेक मुख्य अंतरराष्ट्रीय मंचों के कार्य में सक्रियतापूर्वक भाग लेता रहा है। अंतरराष्ट्रीय मानकों और संहिताओं को लागू करने की प्रक्रिया का मार्गदर्शन करने के लिए, भारत में, सरकार से परामर्श करके 1999 में रिज़र्व बैंक ने भारतीय रिज़र्व बैंक के उपगवर्नर की अध्यक्षता में तथा सचिव, आर्थिक कार्य विभाग, वित्त मंत्रालय, भारत सरकार को वैकल्पिक अध्यक्ष के रूप में लेकर ''अंतरराष्ट्रीय वित्तीय मानकों और संहिताओं संबंधी स्थायी समिति'' का गठन किया था।

अंतरराष्ट्रीय बेंच मार्क तथा मानदंड - विभिन्न देशों की तुलना

5.128 विभिन्न अर्थ व्यवस्थाओं को वित्तीय प्रणालियों पर इन मानदंडों के अनुपालन की स्थिति तथा इनके प्रभाव के संबंध में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तुलना करना कठिन कार्य हैं जिसका कारण है संगत मानदंडों पर एक समान, अधिकाधिक तथा अद्यतन सूचना की कमी । तथापि वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण के संबंध में देशवार परंपरा के संबंध को विश्व बैंक डाटाबेस (2003) में उपलब्ध सूचना और आंकड़ों का उपयोग किया जा सकता है। बर्थ आदि (2003) ने विभिन्न देशों में विनियमन और पर्यवेक्षण की संरचना की तुलना की है। एक निजी पहल भी है जिसे ई स्टैंडर्ड फोरम कहा जाता है, जो वित्तीय मानकों और संहिताओं को लागू करने में विभिन्न देशों के तुलनीय आंकड़े उपलब्ध कराता है। संगत सूचना के किसी आधिकारिक तथा अधिकृत स्रोत के न होने पर यहाँ यह प्रयास किया गया है कि ई-स्टैंडर्ड फोरम द्वारा पब्लिक डोमेन में उपलब्ध कराई गई सूचना तथा विश्व बैंक डाटाबेस मे अन्य देशों के साथ भारतीय बैंकिंग प्रणाली की बेंचमार्क पर उपलब्ध कराई गई सूचना, इन दोनों को उपलब्ध कराई गई सूचना का उपयोग करते हुए तथा भारत के कार्य-निष्पादन का मानकों, संहिताओं और सर्वोत्तम व्यवहारों के संदर्भ में एक वस्तुनिष्ठ आकलन करने का प्रयास किया गया है।

5.129 ई-स्टैंडर्ड फोरम तुलनात्मक प्रयोजनों के लिए 83 देशों के संबंध में 13 अंतरराष्ट्रीय मानकों और संहिताओं पर सूचकांकों की गणना करता है। स्टैंडर्ड इंडेक्स मे इन अंतरराष्ट्रीय मानकों तथा संहिताओं में संदर्भ में किसी देश के अनुपालन स्तर का मापन करता है। यह देशों को प्रथम स्थान (सर्वाधिक अनुपालन) से लेकर 23वें स्थान (एक्सेस अनुपालन) का क्रम देता है तथा 0 (शून्य अंक) (सब से कम अनुपालन) से लेकर 100 अंक (सर्वाधिक अनुपालन) प्रदान करता है (सारणी 5.5)।

5.130 ई-स्टेंडर्ड फोरम द्वारा दिए गए अंकों के अनुसार तथा सामान्य आधार पर समय समय पर अद्यतन किए गए अनुसार भारत ने डाटा प्रसारण, मौद्रिक पारदर्शिता, राजकोषीय पारदार्शिता, कंपनी संचालन, मनी लॉडरिंग तथा बैंक पर्यवेक्षण में 60 प्रतिशत अंक प्राप्त किए हैं। अन्यों के साथ भारत की वित्तीय प्रणाली की तुलना करने के प्रयोजन के लिए कुछ चुनिंदा अन्य देशों द्वारा प्राप्त किए गए अंकों से संक्षिप्त तुलना करना उपयुक्त होगा। बैंक पर्यवेक्षण मानकों के संदर्भ में भारत (60) अंकों के साथ अर्जेंटाइना (40), चीन (40) से काफी आगे है जबकि जापान, फिलीपीन, रूस, सिंगापुर और दक्षिण कोरिया से बराबरी के स्थान पर है।

5.131 विश्व बैंक द्वारा एक डाटाबेस तैयार किया गया था की जिसमें 107 देशों में बैंकिंग क्षेत्र की विनियामक तथा पर्यवेक्षी संव्यवहारों के संबंध में महत्वपूर्ण तथ्यों को एकत्रित किया गया था। ये संकेतक मुख्य रूप से पूंजी मानकों, पर्यवेक्षी क्षमता, त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई करने की योग्यता तथा पुनसंरचना करने की शक्तियों के बारे में सूचना प्रदान करते हैं। भारत सहित 12 देशों के बारे में बैंकिंग विनियमन सरणी 5.6 में दिया गया है।

5.132 प्रत्येक देश और क्षेत्र की विशिष्ट विशेषताओं पर विचार करते हुए विभिन्न देशों में बैंकिंग प्रणाली के विनियमन के संबंध में कोई एक समान संव्यवहार नहीं हैं। तथापि जब विभिन्न देशों का आकलन किया गया तो एक मोटा-मोटा स्वरूप सामने आया। विभिन्न नमूना देशों में महत्वपूर्ण विनियमक संव्यवहारों के मोटे-तौर पर तुलना करने को सुविधा जनक बनाने की दृष्टि से स्टैलिंग तथा स्टुडार्ट (2003) की पट्टणी का उपयोग करते हुए एक संक्षिप्त इंडेक्स तैयार किया गया है। यह ओवरऑल रेग्युलेशन इंडेक्स (ओआरआई) का निर्माण सारणी 5.6 में दी गई प्रत्येक पंक्ति में दिए गए मूल्यों को उस पंक्ति के औसत से विभाजित करके और फिर देशवार उनका जोड़ करके किया गया है (चार्ट V.1)।

5.133 चार्ट V.1 यह दर्शाता है कि इन चुनिंदा देशों में ही अर्जेटीना कठोरता पूर्वक विनियमित देश है, उसके बाद मेक्सिको का स्थान आता है यह देखना रुचिकर है कि अमेरिका और आस्ट्रेलिया में अर्जेटिना और मेक्सिको की तुलना में कम स्तर के विनियामाक प्रतिबंध हैं। इस संबंध में भारत का स्थान बेंच मार्क देशों अर्थात अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया से तुलनीय है। इन चुनिंदा देशों में ओआरआई स्कोर में मलेशिया का स्थान सबसे नीचे है। तथापि इस संदर्भ में इसका जोर दिए जाने की जरूरत है कि निम्न ओआरआई स्कोर मिलने का मतलब यह कदापि नहीं है कि उस देश में उदार विनियामक प्रणाली है। यह संभव है कि इनमें से कुछ देशों में जिन्हें निम्न ओआरआई स्कोर मिला है, विनियामक संव्यवहार उस स्तर तक उन्नत है जहाँ अनुदेशों के संबंध में संस्थाओं को अधिक स्वायत्तता दे दी गई हो या बाजार आधारित विनियमन महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा हो। इसी प्रकार एक उच्चतर ओआरआई

सारणी 5.5 अंतरराष्ट्रीय मानकों तथा संहिताओं के अनुपालन पर चुनिंदा देशों का स्कोर

	डाटा प्रसारण	मोनिटर पारदर्शिता	राजकोषीय पारदर्शिता	ऋण शोधन ढांचा	लेखांकन	कंपनी संचालन	लेखा परीक्षा	मनीलान्डरिंग	भुगतान प्रणाली-सीबी	भुगतान प्रणाली	बैंकिंग पर्यवेक्षण	प्रतिभूतियों का विनियमन	बीमा पर्यवेक्षण
भारत	**80**	**60**	**60**	**20**	**20**	**60**	**20**	**60**	**40**	**40**	**60**	**20**	**40**
अर्जेंटिना	80	60	60	60	20	40	60	60	0	0	40	60	60
आस्ट्रेलिया	80	100	80	80	60	60	60	80	80	100	80	80	80
ब्राजील	80	80	80	40	20	40	40	80	0	0	0	60	0
कनडा	80	100	100	60	20	60	20	80	100	100	100	80	100
चीन	20	40	20	0	40	60	0	60	0	0	40	40	0
फ्रैंस	80	100	80	40	40	60	60	80	100	100	100	60	40
जर्मनी	80	100	80	80	20	60	60	80	100	100	80	80	80
जापान	80	80	80	60	40	60	40	80	80	80	60	100	60
मलेशिया	80	60	60	0	40	60	60	60	40	60	0	40	40
मेक्सिको	80	80	80	60	0	60	60	80	60	40	40	40	60
न्यूजीलैंड	40	100	80	40	60	60	60	100	80	80	80	80	20
फिलीपीन	80	80	60	0	40	60	60	60	0	0	60	80	0
रूस	60	40	60	40	40	60	60	60	20	40	60	40	60
सिंगापुर	80	60	60	80	40	60	60	80	0	80	60	60	80
दक्षिण कोरिया	80	80	80	40	20	60	60	60	60	80	60	80	80
थाईलैंड	100	80	60	40	40	40	0	40	60	80	0	60	0
यू.के	80	100	80	60	40	80	60	80	80	100	80	80	80
अमेरिका	80	100	100	80	40	80	20	80	100	100	100	100	80

टिप्पणी : पूर्ण अनुपालन - 100, अनुपालन - प्रगति में 80, अधिनियम बनाए गए - 60, मंशा घोषित की गई - 40, कोई अनुपालन नहीं - 20, अपर्याप्त सूचना - 0

स्रोत : स्टैंडर्ड फोरम

स्कोर से यह तात्पर्य निकालना आवश्यक नहीं है कि उसमें आघातों को झेलने की ज्यादा ऊर्जा है। इस विश्लेषण का उद्देश्य यह बताने तक सीमित है कि भारतीय विनियामक संव्यवहार मोटे तौर पर उन्नत अर्थ व्यवस्थाओं द्वारा अपनाई जा रहे संव्यवहारोंके अनुरूप हैं।

5.134 उसी विश्व बैंक के आंकड़ों कें आधार का उपयोग करते हुए सारणी 5.7 बैंक पर्यवेक्षण के संबंध में भी प्रवृत्तियो को दर्शाती है। इन चुनिंदा देशों में पर्यवेक्षण के संव्यवहारों का संक्षिप्त आकलन समझने की दृष्टि से समग्र पर्यवेक्षण (ओवर ऑल सुपरविजन) इंडेक्स

सारणी : 5.6 बैंक विनियमन - चुनिंदा संकेतक 1999-2000

	भारत	मलेशिया	मेक्सिको	अर्जेंटिना	ब्राजील	फिलीपिन	थाईलैंड	रूस	दक्षिण कोरिया	जर्मनी	आस्ट्रेलिया	अमेरिका
न्यूनतम पूंजी आस्ति अनुपात अपेक्षा (%)	8.0	8.0	8.0	11.5	11.0	10.0	8.5	12.0	8.0	8.0	8.0	8.0
वास्तविक जोखिम समायोजित पूंजी अनुपात (%)	11.6	13.0	13.5	16.4	15.8	18.0	13.0	12.0	10.0	11.0	11.0	12.0
पूंजी तर्क संगतता सूचकांक	5	1	5	6	3	3	3	4	5	5	6	4
पूंजीगत विनियमन सूचकांक	7	3	7	8	6	4	5	5	6	6	7	6
समग्र बैंक गतिविधियां तथा स्वामित्व प्रतिबंधक सूचकांक	2.5	2.5	3.0	1.8	2.5	1.7	2.2	2.0	2.2	1.2	2.0	3.0

टिप्पणी : 1. स्टैलिंग्स तथा स्टुडार्ट (2003) में दी गई पद्धति का उपयोग करते हुए गणना की गई ।

2. पूंजी तर्क-संगतता सूचकांक में बीआइएस मार्गदर्शी दिशा-निदेशों का अनुपालन शामिल है, परंतु जिसमें लीवरेज संभावना सीमित है उस स्तर के विभिन्न उपायों को भी शामिल किया गया है।

3. पूंजीगत विनियमन सूचकांक में पूंजीगत तर्क-संगतता सूचकांक को आस्तियों के प्रकार के मामले के साथ मिलाकर बनाया गया है जिसे पूंजी आस्ति अनुपात के रूप में नहीं गिना जा सकता ।

4. गतिविधियों तथा स्वामित्व सूचकांक में उन गतिविधियों के प्रकारों को लिया गया है जिन्हें बैंक कर सकते हैं तथा वे प्रतिबंध जिन्हें किसी बैंक पर लगाया जा सकता है।

स्रोत : डाटा बेस के विवरण के लिए जिसे 109 देशों में बैंक विनियामकों तथा पर्यवेक्षकों के सर्वेक्षण से तैयार किया गया है, वर्ध के, प्रियो तथा रौस (2001) देखें।

चार्ट V.1 समग्र विनियमन सूचकांक

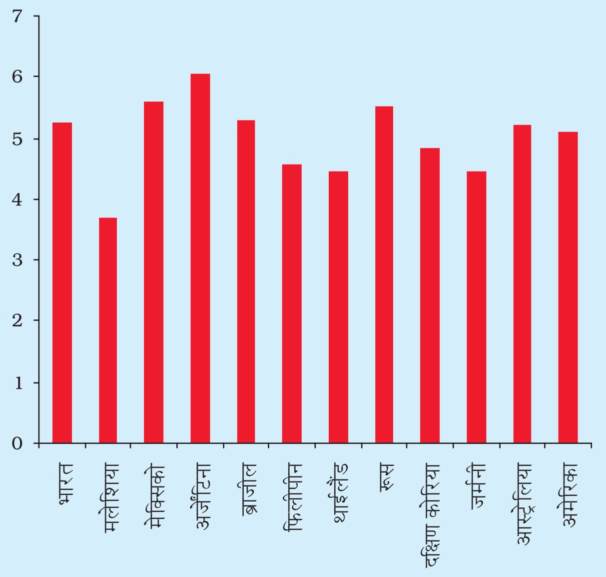

(ओएसआई) का निर्माण किया गया है। इसमें भी उसी पद्धति का प्रयोग किया गया है जो ओआरआई के निर्माण में प्रयुक्त की गई थी। इनमें फिलीपीन्स, ब्राजील, दक्षिण कोरिया, अर्जेटिंना तथा मेक्सिको को सर्वोच्च स्कोर (कठोर पर्यवेक्षी मानदंड) प्राप्त हुआ है, तथा भारत और रूस को निम्नतम / बेंचमार्क देशों के साथ भारत की स्थिति 6.4 स्कोर के साथ अमेरिका (8.5) और आस्ट्रेलिया (7.9) से मामूली सी नीचे थी (चार्ट V.2)।

5.135 यह मानने की जरूरत है कि ओआरआई तथा ओएसआई भारी संख्या में आकड़ों को एकत्र संख्या में संक्षिप्त कर देते हैं तथा एक खास वक्त पर स्थिति को दर्शाते हैं और इसलिए उनकी सामान्य सीमाएं हो जाती हैं। तथापि चूंकि विभिन्न देशों के संबंध में आंकड़ा संकलन की पद्धति एकसमान है, यह विभिन्न देशों में विनियमन और पर्यवेक्षण की स्थिति को मोटे तौर पर दर्शाती हो, जो मोटे तौर पर लगभग तथा तैयारशुदा देशों के बीच तुलना करने को सुविधाजनक बनाता है। उपर्युक्त विश्लेषण से मोटे तौर पर जो तस्वीर उभरकर

सारणी : 5.7 बैंक पर्यवेक्षण चुनिंदा संकेतक - 1999-2000

देश / मद	भारत	मलेशिया	मेक्सिको	अर्जेंटिना	ब्राजील	फिलीपीन	थाईलैंड	रूस	दक्षिण कोरिया	जर्मनी	आस्ट्रेलिया	अमेरिका
प्रतिसंस्था व्यावसायिक बैंक पर्यवेक्षक	5.5	4.7	11.5	2.4	4	7	10	2.4	5.7	1	2	0.1
अधिकारिक पर्यवेक्षी सूचकांक	9	11	10	12	15	12	11	8	10	11	12	14
त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई सूचकांक	0	2	3	0	6	6	0	2	4	0	0	5
पुर्नसंरचना की शक्ति का सूचकांक	2	3	3	3	3	3	3	3	3	2	3	3
दिवालिया घोषित करनेवाला सूचकांक	0	2	2	2	2	2	2	1	2	2	1	2
पर्यवेक्षी सहिष्णुता विवेकाधीन सूचकांक	3	0	1	3	2	1	2	1	1	3	3	1
पर्यवेक्षी कार्यावधि सूचकांक	7	..	..	6.2	15	25	10	..	17	10	2	7
पर्यवेक्षक की बैंकिंग सेवा में जाने की संभावना	1	2	1	3	2	3	2	3	1	2	3	1
अंतरराष्ट्रीय क्रेडिट रेटिंग एजेंसियों द्वारा रेटिंग / दिए गए सर्वोच्च बैंकों का प्रतिशत	..	100	..	100	100	60	90	..	100	100	100	100
निजी निगरानी सूचकांक	6	9	6	8	8	8	6	5	6	5	10	8

.. उपलब्ध नहीं

टिप्पणी : 1. आधिकाधिक पर्यवेक्षी शक्ति सूचकांक में यह निर्णय करने के लिए कि क्या पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के पास कोई ऐसी अथोरिटी है जो समस्या को राकने के लिए तथा उसे ठीक करने के लिए कोई विशेष कार्रवाई कर सकती है, पर्यवेंक्षी शक्तियों के 16 उपायों को शामिल किया गया है।

2. त्वरित सुधारात्मक कार्रवाई सूचकांक यह दर्शाता है कि क्या कोई कानून बैंक की ऋण शोधन क्षमता के क्षरण के स्तरों के पूर्व-निर्धारण के लिए स्थापित है जो हस्तक्षेप जैसे किसी स्वचालित अनुप्रर्वत्तन कार्रवाई करने को मजबूर करता है।

3. पुनर्संरचना संबंधी शक्तियों का सूचकांक यह दर्शाता है कि क्या पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के पास ऐसी कोई शक्ति है कि वह संकट-ग्रस्त बैंक का पुनर्गठित या उसकी पुनर्संरचना कर सके।

4. दिवालिया घोषित करने की शक्ति : क्या पर्यवेक्षी प्राधिकारियों के पास ऐसी कोई शक्ति है कि किसी गहरे संकट मे फंसे बैंक को दिवालिया घोषित कर सके।

5. पर्यवेक्षी सहिष्णुता विवेकाधीन शक्तियों का सूचकांक : यहाँ तक कि प्राधिकृत किए जाने पर भी, पर्यवेक्षी प्राधिकारी सहिष्णुता में व्यस्त हो सकते है जब कि बैंकों की और से कानूनों / विनियमनों के उल्लंघन को पाते हैं या अन्य अविवेकशील व्यवहार पाते हैं।

6. पर्यवेक्षकों का बैंकिंग सेवा में जाने की संभावना : यह परवर्ती उन पर्यवेक्षको का द्योतक है जो सेवानिवृत्ति के बाद बैंकिंग उद्योग द्वारा सेवा में नियोजित किए जा सकते हैं।

7. निजी निगरानी संबंधी परवर्ती : यद्यपि बैंकों का व्यवहार विभिन्न विनियमनों तथा पर्यवेक्षी कार्यों द्वारा सीमाबद्ध होता है, निजी मार्केट शक्तियां भी उन्हें प्रमाणित करती हैं। अतः यह महत्वपूर्ण है कि विभिन्न देशों मे निजी पर्यवेक्षी या मार्केट विद्यमान है उसकी उस सीमा को मात्रा को पकड़ने का प्रयास किया जाए।

स्रोत : डाटाबेस के विवरण के लिए जिसे 107 देशों को बैंक विनियामकों और पर्यपवेक्षकों के सर्वेक्षण से बनाया गया है (देखें बार्थ, के प्रियो तथा लेविन (2001)।

आती है वह यह है कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली पर प्रयोज्य वर्तमान विनायमक तथा पर्यवेक्षी संव्यवहार मोटे तौर कहीं भी अपनाई जाने वाली सर्वोत्तम संव्यवहार के समकक्ष हों। बैंक की विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियों ने विश्व की सर्वोत्तम प्रक्रियाओं, साधनों तथा संव्यवहारों को भारतीय बैंकिंग प्रणाली के लिए स्थापित कर दिया है जो उन्नत बैंकिंग प्रणालियों से तुलनीय हों वित्तीय प्रणाली के विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक ने सर्वोत्तम संव्यवहारों मानकों और संहिताओं को इस रूप में क्रियान्वित करने की कोशिश की है जो घरेलू परिस्थितियों की संगति में हैं।

5.136 बैंकिंग क्षेत्र में लागू किए गए वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की एक शृंखला के साथ साथ अनुपालन की कराई गई प्रणाली विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियों ने भारतीय बैंकिंग प्रणाली को काफी सीमा तक मजबूती प्रदान की है। अंतरराष्ट्रीय गतिविधियों के अनुरूप व्यक्तिगत और समष्टिगत विवेक-सम्मत उपायों के माध्यम से स्थिरता लाने के लिए विनियामक और पर्यवेक्षी ढ़ाँचे को व्यापक बनाया गया है, जिसने भारतीय बैंकिंग प्रणाली को शक्ति प्रदान की है। वैश्विक प्रतिस्पर्धा से निपटने के लिए भारतीय बैंकों को परिचालनगत नमनीयता प्रदान करके विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियों को अधिक उदार बनाया गया है। इससे भारतीय बैंकों को समेकित होने तथा उभरी प्रतिस्पर्धा में टिकने के लिए अपनी कारोबारी रणनीतियों को उनके अनुरूप बनाया गया है। विवेक-सम्मत विनियामक और पर्यवेक्षी संरचना ने वित्तीय क्षेत्र के स्वस्थ वृद्धि के लिए आवश्यक आधार तथा उपादान प्रदान किए है। भारतीय वित्तीय प्रणाली को भी गहन बनाने में समर्थ बनाने के साथ-साथ इन नीतियों ने वित्तीय मध्यस्थक संस्थाओं के स्वास्थ्य में भी सुधार किया है तथा

चार्ट V.2 समग्र सूचकांक

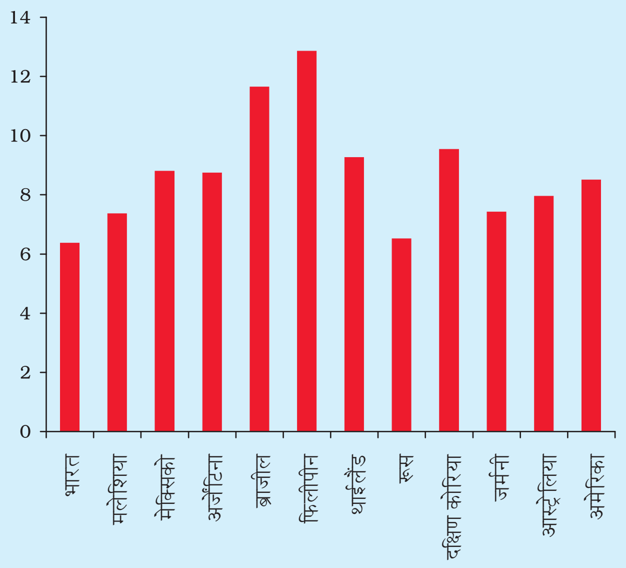

वित्तीय प्रणाली में उपलब्ध उत्पादों में वृद्धि की है। बैंको के लिए विनियामक ढांचे ने सुधारों से लेकर भारतीय बैंकिंग प्रणाली की बढ़ती हुई शक्ति तथा ऊर्जस्विता को दर्शाते हुए अपेक्षित परिणाम प्राप्त किए हैं।

5.137 विनियामक और पर्यवेक्षी नीतियाँ बैंकिंग उद्योग की वृद्धि को बढ़ाने में प्रभावी सिद्ध हुई हैं और इन्होंने उसकी पहुँच को जनता के व्यापक आधार तक बढ़ा दिया है। नए बैंकों के उदय तथा उभरती प्रतिस्पर्धा से वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं का काफी विस्तार हुआ है। भारत में बैंकों ने पर्याप्त परिचालनगत नमनीयता के परिवेश में काम करते हुए सुदृढ़ तुलन-पत्र बना लिया है। सुधारोत्तर अवधि में, बैंकों ने अपनी आस्तियों और देवताओं में वृद्धि की उच्च दरें निरन्तर बनाए रखी हैं।, अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की कुल देयताओं के प्रति जमाराशियों का अनुपात 1991-92 के 77-7 प्रतिशत से बढ़कर 2004-05 में 0.1 प्रतिशत हो गया है। बैंकों के वित्तीय स्वास्थ्य में भी उल्लेखनीय सुधार हुआ है जो उनके पूंजी पर्याप्तता अनुपात तथा बेहतर आस्ति गुणवत्ता के रूप में प्रदर्शित होता है। मार्च 2005 के अंत में भारत में कार्यरत 88 अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों में से 86 ने 9 प्रतिशत से ऊपर की सीआरआर बनाए रखी थी। भारतीय बैंकों की आस्ति गुणवत्ता में भी भारी सुधार हुआ है। 1980 के बाद के दशक के मध्य से एनपीए काफी ज्यादा तथा लगातार गिरकर मार्च 2005 के अंत तक निवल एनपीए 2.0 प्रतिशत आ गए। भारत में विभिन्न बैंकों की लाभ प्रदत्त के स्तरों में भी वृद्धि हुई है। लाभप्रदता की दृष्टि से प्रमुख भारतीय बैंकों की तुलना अन्य अर्थ-व्यवस्थाओं में बैंकों से की जाए तो यह उनके पक्ष में जाती है। आस्तियों की प्रति यूनिट का परिचालन व्यय भी हाल के वर्षों में गिरा है। प्रति कर्मचारी कारोबार में वृद्धि हुई है तथा स्टाफ की लागत में कमी आई है, आदि ने भारतीय बैंकिंग प्रणाली की बढ़ी हुई दक्षता को दर्शाया है। अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग संव्यवहारों को क्रमिक रूप में लागू करना तथा भारत में वित्तीय क्षेत्र को चरणबद्ध रूप में उदार बनाने से देश को उन प्रमुख वित्तीय संकटों से बचा लिया जिन्हें अन्य अनेक उभारती हुई अर्थ व्यवस्थाओं को 1990 के बाद के दशक से झेलना पड़ा था (मोहन 2005) / मात्रात्मक तथा गुणवत्ता के संकेतक इस तथ्य की ओर संकेत करते हैं कि विभिन्न मानदंडों पर भारतीय बैंकों का कार्य-निष्पादन क्रमिक रूप से अंतरराष्ट्रीय मानकों की ओर बढ़ रहा है।

5.138 तथापि विनियामक और पर्यवेक्षी परिवेश पूर्णतः चिंतामुक्त भी नहीं है।सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का वित्तीय स्वास्थ्य भारी असंतोषजनक है। इन बैंकों के लाभ और लाभप्रदता की दृष्टि से इन बैंकों की दक्षता में सुधार लाए जाने की गुंजाइश है। लेनदेन की लागतों में कमी एक ऐसा क्षेत्र है जिसपर ध्यान केंद्रित किए जाने की जरूरत है

(मोहन 2005)। ग्राहक सेवाओं में सुधार की जरूरत है तथा वित्तीय समावेशन पर नए सिरे से ध्यान देने की आवश्यकता है। ग्रामीण जनता के लिए बैंकिंग सेवाओं की उपलब्धता में और सुधार किए जाने की जरूरत है। विभिन्न जरूरतमंद क्षेत्रों को ऋण सुपुर्दगी / प्रक्रिया-तंत्र मे और सुधार आवश्यक है। कुछ क्षेत्रों में कानूनी परिवर्तन की जरूरत है। इन चिंताओं के होते हुए रिज़र्व बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी कार्यो का वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन यह दर्शाता है कि यह कमोबेश जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा करने तथा बैंकिंग प्रणाली की सुदृढ़ता को बनाए रखने में सफल रहा है, हालांकि बैंक असफल होने की इक्का दुक्का घटनाएं भी हुई हैं।

5.139 वस्तुतः वर्तमान परिस्थिति में, भारत में विनियामक और पर्यवेक्षी प्रक्रिया एक उत्तेजनापरक चरण में है तथा और आगे परिपक्वता की ओर बढ़ रहा है जिसका उद्देश्य वित्तीय प्रणाली को मेहत्तर शक्ति तथा स्थिरता प्रदान करना है। अतः, इस स्थिति में पूछा जानेवाला तर्क-सम्मत प्रश्न है यहाँ से कहाँ? उन कारणों का पता लगाना उपयोगी होगा जो अल्पावधि, मध्यावधि और दीर्घावधि में भारतीय बैंकिंग प्रणाली की कार्य-पद्धति को प्रमाणित कर सकते हैं। तदनुसार पहचानी गई नीतियों के संदर्भ में विनियमन का मुख्य ध्यान तथा पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं को कुछ क्षेत्रों में बदले जाने की तथा कुछ अन्य क्षेत्रों में इन्हें उन्नत बनाने की जरूरत है।

5.140 वित्तीय प्रणालियाँ विश्वभर में अभी भी विकसित हो रही हैं और भारतीय वित्तीय प्रणाली भी इसका अपवाद नहीं है। कंप्यूटर तथा दूर-संचार संबंधी प्रौद्योगिकी की तेज वृद्धि वित्तीय क्षेत्र के रूपांतरण करना जारी रखेगी । वित्तीय नवोन्मेष वित्तीय फर्मों के परंपरागत विशिष्ट प्रकार के खास रूपों के बीच अंतरों (विभेदों) को मिटाने के पीछे प्रेरक शक्तियाँ रही हैं। नई बाजार वास्तविकताओं को स्वीकार करते हुए तथा यूनिवर्सल बैंकिंग की ओर प्रगति तथा उपर्युक्त कानूनी और विनियामक परिवर्तनों का अनुसरण करने की जरूरत होगी। अपविनियमन तथा उदारीकरण की प्रक्रिया और तेज होने की संभावना है। भारत में विनिमानक प्रतिक्रिया ने एक ऐसी वित्तीय प्रणाली को संवर्धन करने पर ध्यान केंद्रित किया है जो बाजारी सिद्धांतों पर आधारित है। भारत में बैंकिंग क्षेत्र के समेकन के लिए आर्थिक तर्काधार वर्तमान स्थिति में निर्विवाद है। स्वामित्व का स्वरूप बदल रहा है और वह सरकारी स्वामित्व की प्रधानता से हट रहा है। इस पृष्ठ-भूमि में, विनियामक दायित्व सुविधा प्रदाता की भूमिका निभाने का होगा, साथ ही बाजार की शक्तियों को समेकन की प्रक्रिया की सीमा तथा उसकी विषयवस्तु के निर्धारण का अवसर दिया जाएगा।

5.141 उन भारी सर्वांगीण परिवर्तनों के फलस्वरूप जो कठोर पूंजीगत मानकों के लागू होने के अनुरूप बैंकिंग कारोबार के संचालन के स्वरूप को प्रभावित कर रहे हैं, एक मुख्य अपेक्षा जो बैंकों तथा विनियामक को पूरी करनी है, वह है, प्रणाली में उच्च गुणवत्तावाले मानव संसाधनों का पोषण करना, जो नए परिवेश को अपनाते हुए उसके साथ चल सकें। भारतीय बैंकिंग क्षेत्र में विभिन्न घटकों की विद्यमानता के कारण विनियामक अपेक्षाओं में अभी भी विनियामक विवाचन और कभी कभी उनके निवारण की गुंजाइश है। इस संदर्भ में सहकारी बैंकिंग क्षेत्र पर बहु विनियामक के अधिकार क्षेत्र को समाप्त करने की जरूरत को स्वीकर किया गया है तथा इस दिशा में ओर आगे प्रयास किए जाने की जरूरत है। जहाँ बैंकों और गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की संरचना में अंतर है, परंतु उनके द्वारा की जानेवाली गतिविधियों के कारण उनके परिचालनात्मक एकरूपता के क्षेत्र विद्यमान है। अतः एक महत्वपूर्ण मुद्दा बैंकों तथा एनबीएफसी कंपनियों के बीच विनियामक एकरूपता की सीमा स्पष्ट करने का है।

5.142 तेजी से बदलते प्रौद्योगिकी के इस युग में रिज़र्व बैंक का उत्तरदायित्व अधिक कठिन हो गया है इसलिए ये परिवर्तन प्रौद्योगिकी में आवाधिक रूप से उन्नयन तथा उसके फलस्वरूप पर्यवेक्षण की नीतियों में परिवर्तन की एक नई और अतिरिक्त चुनौतियां लेकर आया है। भारतीय भुगतान प्रणालियों के लिए चुनौतियाँ विभिन्न प्रौद्योगिकी के प्लेट फार्मों तथा मैसेज प्रेषण सेवाओं पर तथा विभिन्न निपटान प्रक्रिया तंत्रों में प्रयुक्त की जाती है, मुख्य परिचालनागत निर्भरताओं से आ सकती है। बुनियादी आंतरिक निमंत्रणों के अनुपालन न करने से भयंकर परिणाम हो सकते हैं। पर्याप्त आंतरिक नियंत्रण जोखिम आधारित पर्यवेक्षण की प्रणाली की मुख्य पूर्व-शर्त है जो कि पहले से ही स्थापित कर गया है। जहाँ ऐसा करना आर्दश स्थिति होगी कि आंतरिक नियंत्रण के व्यापक ढांचे को अलग-अलग बैंकों के ऊपर छोड़ दिया जाए फिर भी रिज़र्व बैंक शायद विश्वभर में सर्वोत्तम रूप से प्रबंधित बैंकों द्वारा अपनाई गई सर्वोत्तम संव्यवहारों और ढ़ांचों पर प्रकाश डालकर शिक्षक की भूमिका निभा सकता है। बैंकों के दबाव को कुछ हाल की घटनाएं वस्तुतः ऋण संकेंद्रण, कुप्रबंधन, धोखा धड़ी तथा नवीन और जोखिम भरी गतिविधियों को शुरू करने जैसी बैंक असफलताओं कारणों के विरुद्ध निरंतर सतर्क रहने की मांग करती है। बाजार आसूचना की प्रभावी व्यवस्था इस संदर्भ में महत्वपूर्ण हो जाती है।

5.143 भारतीय संदर्भ में उच्च गुणवत्ता वाली वित्तीय सूचना के भारी मात्रा में उपलब्धता महत्वपूर्ण है। वित्तीय स्थिरता की सुरक्षा करने तथा इसे और बढ़ाने की अपनी डयूटी के रूप में यह लेखा मानदंडों की उच्च गुणवत्ता बनाए रखने तथा उनको प्रभावी रूप में लागू करने में रिज़र्व बैंक का कानूनी हित बनता है। चूंकि भारत शेष विश्व के साथ क्रमिक रूप से अधिकाधिक समन्वित हो रहा है, अतः भारतीय बैंकिंग प्रणाली का विदेशी बैंकों के साथ तथा विदेशी बैंकों का भारतीय बैंकों के साथ परस्परसुविधा के आदि मानदंडों में तेजी से वृद्धि होगी। अतः विदेशी पर्यवेक्षकों के साथ अधिक घनिष्ठता से सहयोग करने के लिए सीमा पार के लेनदेनों तथा भारतीय बैंकों के विदेशी परिचालनों पर निगरानी पर पर ज्यादा ध्यान देने की जरूरत होगी। काले धन के शोधन से रोकने के संबंध में विभिन्न विदेशी पर्यवेक्षकों के बीच सहयोग महत्वपूर्ण हो जाता है।

5.144 जहाँ भारत में अधिकांश लोगों की वित्तीय सेवाओं तक पहुँच है, परंतु अभी भी ऐसे बहुत से लोग हैं जिन्हें, बैंकिंग प्रणाली से सेवाओं और उत्पादों की पूरी श्रेणी का लाभ प्राप्त करने में कठिनाइयां हो रही हैं। वित्तीय समावेशन का संवर्धन भारतीय विनियामक दृष्टिकोण का भविष्य में मुख्य तत्व होना चाहिए जिसे बैंकिंग प्रणाली को उनकी कंपनी जगत के प्रति उत्तरदायित्व के प्रति संवेदनशील बनाकर लाया जा सकता है। ग्राहक सेवा में उल्लेखनीय सुधार तो वस्तुतः एक चुनौती है जिसे बैंकों और विनियामक दोनों को बढ़ाने की जरूरत है। ग्राहक सेवाएं से संबंधित चिंताओं से निपटने के लिए ''बैंक ओम्बुड्समैन'' योजना को हाल ही में संशोधित किया गया है।

5.145 जैसा कि भारतीय बैंकिंग प्रणाली को उन विविध प्रकार की चुनौतियों से निपटना होता है, अतः पर्यवेक्षण के स्वरूप में भी भारी परिवर्तन किए जाने की आवश्यकता है। जैसे जैसे बैंकिंग उद्योग नई परंपराओं और नवोन्मेषों की गति के साथ चलाने के प्रयास करता रहा है, पर्यवेक्षकों कें भी अपनी दक्षताओं और संव्यवहारों को पुनः अधिमुखी बनाने की आवश्यकता है। यदि भारतीय बैंकों को वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी बनाना है तो यह उनके लिए उपयुक्त समय है कि वे सुदृढ़ और उन्नत जोखिम प्रबंधन संस्कृति स्थापित करें (मोहन 2003)। विनियामक के बोझ को कम करने तथा पर्यवेक्षण की प्रभावशीलता को बढ़ाने के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें जोखिम प्रबंधन में आंतरिक रूप से विकसित मॉडल बनाने चाहिए तथा उनका जोखिम प्रबंधन में प्रयोग करना चाहिए। विनियामक तथा पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक का भावी लक्ष्य शायद यही होगा कि वह बैंकों को एक और दक्ष कारोबारी संव्यवहारों में नवोन्मेष करने की अधिकतम संभव आजादी देने तथा दूसरी ओर जमाकर्ताओं के हितों की सावधानीपूर्वक सुरक्षा करने, बैंकिंग प्रणाली की सुदृढ़ता को सुनिश्चित करने तथा वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के बीच उपयुक्त संतुलन बनाए रखे। भारत में बैंकों के स्तर और आकार में विविधता को देखते हुए, सबसे बड़े और सम्मिश्र बैंकों तथा अधिकांश छोटे और मझोले बैंकों के बीच एक स्पष्ट भेद करना आवश्यक होगा। जहाँ बड़े बैंकों और बैंक समूहों के लिए कठोर जोखिम आकलन आदेशात्मक है, वहीं अधिकांश छोटे बैंकों को एक अलग तथा संस्था विशेष के अनुसार जोखिम आकलन का दृष्टिकोण अपनाने की जरूरत है। सरलता बनाम जटिलता तथा विनियामक की जोखिम के प्रति संवेदनशीलता यह याद दिलाती है कि एक ही फंदा सभी के लिए फिट नहीं होता तथा उनके साथ अलग-अलग व्यवहार किए जाने की मांग करता है।

VI. निष्कर्ष

5.146 उभरती हुई चुनौतियों तथा विनियामक और पर्यवेक्षी दृष्टिकोणों में आए परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए भारतीय बैंकिंग प्रणाली का दीर्घावधिक लक्ष्य अपने आपको अनिवार्यतः घरेलू बैंक से वैश्विक स्तर के बैंक के रूप में रूपांतरित करना है। बैंकिंग उद्योग को अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्कृष्टता की ऊँचाइयों तक ले जाने के लिए अनेक मोर्चों पर, जैसी नई प्रौद्योगिकी का समावेश, बेहतर ऋण जोखिम का आकलन, निरंतर वित्तीय नवोन्मेष, बेहतर आंतरिक नियंत्रण तथा उपयुक्त कानूनी ढांचा, कार्रवाई करने की आवश्यकता होगी। अंततः बैंकिंग प्रणाली तथा विनियामक की विश्वसनीयता पूर्णतः जनता के विश्वास में निहित है। इस संदर्भ में रिज़र्व बैंक की भूमिका बैंकों को प्रतिस्पर्धी बनने तथा नवोन्मेष करने की अनुमति देने के साथ-साथ प्रणाली की सुदृढ़ता और सफलता को बढ़ाने के रूप में आती है। तथापि यह माना गया है कि बैंकिंग विनियमन के फेल होने के जोखिम को कम करने के लिए न कि उसे समाप्त करने के लिए बनाया गया है (ग्रीनस्थन 2005)। इसके अलावा, जहाँ बैंकिंग प्रणाली तथा विनियात्मक,उनकी कार्य पद्धति को प्रभावित करनेवाले परिवर्तनों को समयोजित और अपनाते हैं वहाँ वे भारतीय अर्थव्यवस्थां की वास्तविकताओं की अनदेखी नहीं कर सकते। संचालन और वित्तीय समेकन सामाजिक आर्थिक विकास की के इस स्तर यह भारत जैसे देश के लिए मुख्य मुद्दों के रूप में उभरेंगे (रेड्डी 2005)। अतः विनियामक और पर्यवेक्षी संरचना के पुनर्गठन के कारण बैंकिंग प्रणाली को बेहतर दक्षता के लाभों को यह सुनिश्चित करना चाहिए के नए युग की बैंकिंग प्रणाली के संपूर्ण उत्पाद और सेवाएं समाज के सभी तबकों को उपलब्धता कराई जाएं।

5.147 सारांश में, रिज़र्व बैंक के वित्तीय विनियमन और पर्यवेक्षण की बदलती भूमिका का बल व्यक्तिगत विनियम पर कम परंतु विवेक-सम्मत पर्यवेक्षण पर अधिक है। विनियामक हस्तक्षेप पर कम बल है, परंतु ऐसे वातावरण के निर्माण पर अधिक बल है जिसमें बैंक अपने आपको स्वतंत्र महसूस करें और नवोन्मेष करें, जिसमें नियमों पर निर्भरता कम हो, परंतु सिद्धांतों पर अधिक महत्व हो, बैंकों की दैनिक गतिविधियों की निगरानी करने को कम महत्व दिया गया हो, परंतु उनके जोखिम आकलन तथा जोखिम को सीमित करने पर अधिक ध्यान दिया गया हो। भविष्य में विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका केवल दोस्ताना और स्पष्ट ही नहीं होगी, बल्कि त्वरित और पक्की भी / रिज़र्व बैंक की नई भूमिका भारतीय बैंकिंग प्रणाली के विभिन्न घटकों के बीच अवसरों को मानती है तथा विनियामक के व्यवहार में उपयुक्त लचिलापन को शामिल करती है, विनियमन और पर्यवेक्षण का बदलता स्वरूप पर्यवेक्षी प्रक्रियाओं में प्रौद्योगिकी के साधन उपयोग को तथा पर्यवेक्षकों की दक्षताओं और क्षमताओं को काफी बढा देने को महत्व प्रदान करेगी। भविष्य में रिज़र्व बैंक की विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका देशी बैंकों को सुदृढ तथा वैश्विक स्तर पर मान्यताप्राप्त खिलाडियों के रूप में रूपांतरित करने के लिए मार्गदर्शन करने तथा उसे सुविधाजनक बनाने की होगी, साथ ही सामाजिक आर्थिक उद्देश्यों को पूर्णतः पूरा करने तथा वित्तीय प्रणाली में स्थिर और व्यवस्थित स्थितियां बनाए रखने को जारी रखने की होगी।

VI वित्तीय बाजार : विकास और वैश्वीकरण

6.1 आर्थिक वृद्धि के संवर्धन में उपयुक्त वित्तीय संस्थाओं और वित्तीय बाजारों को विकसित करने की महत्ता बताने की शायद ही आवश्यकता है। उदीयमान बाजारों में केंद्रीय बैंकों ने हाल के वर्षों में दक्ष बाजारों और संस्थाओं के विकास की दिशा में सचेत प्रयास किए हैं, अनिवार्यतः विश्व के विभिन्न भागों में 1990 के बाद के दशक में हुए अनेक वित्तीय संकटों के दौरान प्रणाली में उजागर हुई कुछ कमजोरियों के बाद । सारे विश्व में, केंद्रीय बैंकों में यह मान्यता बढ़ती जा रही है कि एक सुचारू रूप से चलने वाला वित्तीय बाजार अर्थव्यवस्था में ब्याज दर संकेतों को सुधार कर मौद्रिक नीति के बाजार आधारित लिखतों के दक्ष उपयोग को समर्थ बनाता है। मौद्रिक नीति की दक्षता को बढ़ाने के अलावा, गहन और सुचारू रूप के कार्य करने वाले वित्तीय बाजार घरेलू बचतों को जुटाने का संवर्धन करते हैं तथा वित्तीय मध्यस्थ संस्थाओं की आबंटनात्मक दक्षता को सुधारते हैं तथा एक अंतरराष्ट्रीय या एक क्षेत्रीय वित्तीय केंद्र के रूप में उभरने में मदद करते हैं, ('टर्नर एण्ड टी' डेक 1996) । सुदृढ़ घरेलू वित्तीय बाजार बाह्य अशांति के दिनों में भंडार (बफर) का कार्य करते हैं तथा संकट के समय घरेलू बैंकिंग प्रणाली को आघातों को झेलने में मदद करते हैं। इसके अलावा, वे हैजिंग लिखतों का विकास करने तथा व्यापक आर्थिक उद्वेगशीलता और वित्तीय अस्थिरता को कम करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान करते हैं। दक्ष वित्तीय बाजारों को अनेक अप्रत्यक्ष लाभ भी मिलते हैं - जैसे भौतिक तथा मानव पूंजी का तेजी से संचयन, अधिक स्थिर निवेश वित्तपोषण, तथा वे प्रौद्योगिकीय प्रगति को बढ़ाते हैं।

6.2 वित्तीय बाजार का विकास एक जटिल और समय खपानेवाली प्रक्रिया है। सुचारू रूप से कार्य करने वाले गहन और तरल बाजारों के विकास के लिए कोई शॉर्टकट नहीं है (तारापोर, 2000)। वित्तीय बाजारों के सुधार के लिए कुछ पूर्व-शर्तें हैं, जैसे व्यापक आर्थिक (समष्टिगत) स्थिरता, सबल और दक्ष वित्तीय संस्थाएं तथा संरचना, विवेकसम्मत विनियमन तथा पर्यवेक्षण, जमाकर्ता के सशक्त अधिकार तथा संविदागत अनुप्रवर्तन । बाजार की बुनियादी संरचना को सुधारने के उपायों को, कानूनी के उपयुक्त ढांचे के साथ-साथ सुधार के प्रारंभिक चरण से ही लागू किया जाना चाहिए। ये परिस्थितियां अंतर-बैंक लेनदनों तथा सक्रिय चलनिधि प्रबंधन सहित वित्तीय लेनदेनों की वृद्धि करने में सहायता करती हैं। साथ ही, कम से कम तीन प्रमुख व्यापक आर्थिक विशेषताएं हैं जो घरेलू वित्तीय बाजारों के सुधार को रोक सकती हैं, पहली है - भारी सरकारी घाटा निजी क्षेत्र के वित्तपोषण को सुखा सकता है, और इस प्रकार कंपनी ऋण बाजारों की वृद्धि को रोकते हैं। दूसरी है - उच्च और उद्वेगशील मुद्रास्फीति की दरें तथा अवास्तविक विनिमय दरें भी वित्तीय गतिविधियों पर जोखिम और प्रतिलाभों के बारे में अनिश्चितताएं खड़ी करके वित्तीय बाजारों का दम घोट देती हैं। तीसरी हैं - वित्तीय दमन की नीतियां जैसे उच्च मुद्रा स्फीतिगत कराघान, उच्च अपेक्षित आरक्षित निधि अनुपात, सब्सीडी प्राप्त या निर्देशित ऋण कार्यक्रम, ऋण की राशनिंग तथा जमा और ऋणों की ब्याज दरों पर उच्चतम सीमा वित्तीय बाजार के विकास को बाधा पहुंचाते हैं।

6.3 जैसा कि अध्ययन III में उल्लेख किया गया है सुधारों का क्रम निर्धारण तथा उनकी गति भी मौद्रिक तथा वित्तीय स्थिरता की सुरक्षा के लिए तथा उनके प्रतिगमन से बचने के लिए भी महत्वपूर्ण हैं। जहां वर्तमान शोध वित्तीय बाजारों के सुधारों के सर्वाधिक दक्ष पथ को ढूंढ़ने में समर्थ नहीं हो पाई है, परंतु जिन मुद्दों पर व्यापक रूप से चर्चा हुई है उनमें शामिल हैं - विकास की बैंक आधारित प्रणाली को अपनाया जाना चाहिए या बाजार आधारित प्रणाली को? क्या वित्तीय बाजार के विभिन्न घटकों के क्रमबद्ध सुधार को अपनाया जाना चाहिए तथा क्या पूंजी खाते का उदारीकरण घरेलू वित्तीय बाजार के सुधार से पहले किया जाना चाहिए।

6.4 1935 में भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना से लेकर वित्तीय क्षेत्र तथा वित्तीय बाजार के विकास में रिज़र्व बैंक की भूमिका में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। प्राथमिक रूप से बैंक आधारित वित्तीय प्रणाली से निकल कर भारत में वित्तीय प्रणाली का विकास योजनाबद्ध विकास के प्रयासों का वित्तपोषण करने के रूप में हुआ है। इस उद्देश्य के लिए संस्थागत विकास ने रिज़र्व बैंक का पर्याप्त ध्यान आकृष्ट किया। अल्पावधिक वित्तपोषण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए व्यापक आधार वाले बैंक क्षेत्र के विकास के अनुपूरक के रूप में दीर्घावधिक वित्तपोषण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए रिज़र्व बैंक ने विशिष्ट विकास वित्त संस्थाओं की स्थापना की। 1990 के बाद के दशक के प्रारंभ से वित्तीय क्षेत्र के सुधारों की शुरुआत ने वित्तीय बाजारों के विकास के लिए मजबूत प्रोत्साहन प्रदान किया। बाजार आधारित मौद्रिक नीति संबंधी लिखतों की शुरुआत, पूंजीगत नियंत्रणों का उदारीकरण तथा 1990 के बाद के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था का विश्व के बाजारों के साथ समेकन ने देश को संभावित उद्वेगशील पूंजी के आगमों से मौद्रिक तथा विदेशी मुद्रा विनिमय दर के प्रबंधन में रिज़र्व बैंक के लिए नई चुनौतियों और द्विविधाओं से परिचित कराया। इसने वित्तीय बाजारों में गहनता तथा स्थिरता सुनिश्चित करने की दिशा में नए सिरे से बल देने की मांग की ।

6.5 इस अध्याय का उद्देश्य भारत में वित्तीय बाजारों के निर्माण और विकास में विशषकर बढ़ते हुए वैश्वीकरण और उदारीकरण के संदर्भ में रिज़र्व बैंक की बदलती हुई भूमिका का पता लगाना है। इसके भाग I में मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति तथा विदेशी मुद्रा (फोरेक्स) बाजारों, जो रिज़र्व बैंक द्वारा नियंत्रित होते हैं, पर विशेष ध्यान केंद्रित करते हुए भारत में वित्तीय बाजारों की संरचना और उनके विकास के बारे में चर्चा की गई है। समय के साथ विकसित होने वाले इन बाजारों तथा उनकी वर्तमान में हैसियत की समीक्षा की गई है। भाग II में अर्थव्यवस्था के उदारीकरण तथा विश्व व्यापीकरण के संदर्भ में वित्तीय बाजारों के विकास में रिज़र्व बैंक की बदलती हुई भूमिका को स्पष्ट किया गया है तथा उपयुक्त संस्थागत तथा कानूनी सुधारों की महत्ता को रेखांकित किया गया है। अंतिम भाग में अंतिम निष्कर्ष प्रस्तुत किए गए हैं।

I. वित्तीय बाजारों का विकास : भारतीय अनुभव

6.6 भारत के पास वित्तीय मध्यस्थता का एक दीर्घ और उतार-चढ़ाव भरा इतिहास है। 20 वीं शताब्दी के शुरू होने तक भारत में बीमा कंपनियां (जीवन तथा साधारण) तथा एक कार्यरत स्टॉक एक्सचेंज था। 1935 में भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना से भी पहले देश में मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति तथा विदेशी मुद्रा बाजार थे। तथापि इन बाजारों के पास लिखतों की कमी थी, खिलाड़ियों की संख्या सीमित थी तथा उनमें गहराई की कमी थी, इसका आंशिक कारण था कि भारतीय वित्तीय प्रणाली मुख्यतः बैंक आधारित प्रणाली थी।

6.7 स्वातंत्रोत्तर अवधि के दौरान वित्तीय संस्थाओं तथा बाजारों के विकास का पथ मुख्यतः भारत में अपनाए गए योजनाबद्ध विकास की प्रक्रिया से प्रेरित था जिसमें बचतों के संग्रहण तथा योजना की प्राथमिकताओं को पूरा करने के लिए निवेश को सरणीबद्ध करना था। 1947 में आजादी के समय, भारत में सुविकसित बैंकिंग प्रणाली थी। बैंक प्रधान वित्तीय विकास की रणनीति अपनाने का उद्देश्य था - क्षेत्रवार विशेषकर, कृषि और उद्योग की ऋण की आवश्यकताओं को पूरा करना । इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए रिज़र्व बैंक ने अपना ध्यान संस्थाओं के निर्माण के लिए विनियमन तथा विकास करने की प्रक्रिया-तंत्र पर केंद्रित किया तथा उद्योग और कृषि की अल्पावधिक कार्यकारी पूंजी संबंधी अपेक्षाओ को पूरा करने के लिए वाणिज्यिक बैंकिंग नेट वर्क का विस्तार किया गया। विशिष्ट विकास वित्त संस्थाएं (डीएफआइ) जैसे आइडीबीआइ, नाबार्ड, तथा सिडबी आदि, रिजर्व बैंक के स्वामित्व की प्रधानता के साथ स्थापित की गईं जो उद्योग और कृषि की दीर्घावधिक वित्तपोषण की अपेक्षाओं को पूरा कर सकें। इन संस्थाओं की वृद्धि को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से इन सस्थाओं को रियायती वित्त उपलब्ध कराने के लिए एक प्रणाली-तंत्र की स्थापना भी रिज़र्व बैंक द्वारा की गई।

6.8 इस प्रकार, 1990 के बाद के दशक तक संस्थागत विकास की उल्लेखनीय स्थापना के बावजूद, वित्तीय क्षेत्र का परिवेश गहन तथा व्यापक वित्तीय बाजारों के विकास के लिए अनुकूल नहीं था। वास्तव में इसका परिणाम हुआ अलग-अलग घटकीकृत तथा अल्प विकसित बाजारों की स्थापना, जिनमें लिखतों की कमी थी, तथा सहभागियों की संख्या सीमित थी। बैंक और वित्तीय संस्थाएं अत्यधिक विनियमित परिवेश में कार्य करती थीं जिन पर नियंत्रित ब्याज दरों की संरचना तथा ऋण प्रवाहों पर मात्रात्मक प्रतिबंध लगे होते थे। अत्यधिक उच्च प्रारक्षित अपेक्षाएं थीं तथा उधार देने योग्य संसाधनों का काफी बड़ा भाग प्राथमिकता-प्राप्त और सरकारी क्षेत्र के लिए पूर्व-क्रय कर लिया जाता था। जहां मात्रात्मक प्रतिबंध का परिणाम निजी क्षेत्र के लिए ऋण की राशनिंग के रूप में हुआ, जहां ब्याज दर नियंत्रणों ने विधियों का उप-अभीष्टतम रूप में प्रयोग किया जाने लगा। इसका परिणाम हुआ निम्न स्तरों पर निवेश और वृद्धि। इनके साथ अन्य कारक थे, जैसे यथोचित लेखांकन, पारदर्शिता और विवेक सम्मत मानदंडों का अभाव। इसके परिणामस्वरूप बैंकिंग प्रणाली में भारी मात्रा में गैर निष्पादक आस्तियां (एनपीए) बन गईं। इसके कारण वित्तीय दबाव ने उत्पादकता और दक्षता में गिरावट के अलावा बैंकिंग क्षेत्र की लाभप्रदता में गिरावट आ गई। बैंक आधारित तथा अत्यधिक नियंत्रित व्यवस्था वित्तीय बाजार के विकास के लिए प्रतिकूल हो गई।

6.9 1991 के भुगतान संतुलन के संकट के संदर्भ में, वित्तीय प्रणाली संबंधी समिति (अध्यक्ष : एम. नरसिंहम, 1991) द्वारा की गई सिफारिशों के अनुसार भारत में एक व्यापक संरचनात्मक तथा वित्तीय क्षेत्र के सुधार की प्रक्रिया शुरू की गई जो वित्तीय क्षेत्र के क्रमिक अपविनियमन तथा वित्तीय बाजार के विभिन्न घटकों के विकास और समेकन के लिए प्रस्थान-बिंदु सिद्ध हुए। उदारीकरण और वैश्वीकरण की बढ़ती हुई चुनौतियों को पूरा करने में समर्थ एक सुदृढ़, प्रतिस्पर्धी तथा दक्ष बैंकिंग प्रणाली बनाने के लिए वित्तीय प्रणाली के कार्यकलापों को सुदृढ़ करने के लिए उपाय शुरू किए गए। वित्तीय क्षेत्र में किए गए कुछ संरचनात्मक परिवर्तनों में निम्नलिखित शामिल हैं । प्रवेश संबंधी प्रतिबंधों को हटाना, अधिकांश घटकों में वित्तीय आस्तियों के मुक्त रूप से मूल्य निर्धारण की शुरुआत, परिमाण संबंधी प्रतिबंधों में ढील, प्रतिभूतियों को जारी करने/ नए ऋणों को जारी करने की नई पद्धतियां, लिखतों की संख्या में वृद्धि, बढ़ी हुई सहभागिता, लेनदेन (व्यापार) समाशोधन तथा निपटान संव्यवहारों में सुधार, सूचनाओं के आदान-प्रदान में सुधार, पारदर्शिता तथा प्रकटीकरण संबंधी संव्यवहार। इसके साथ ही, 1992-93 से पूंजी-पर्याप्तता संबंधी अपेक्षाओं, आस्ति-वर्गीकरण तथा

प्रावधानीकरण संबंधी मानदंडों, आस्ति-देयता प्रबंध प्रणालियां तथा जोखिम-प्रबंध प्रणालियों को स्थापित करके बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ करने के लिए उपाय शुरू किए गए। इन उपायों ने बैंकिंग क्षेत्र में बढ़ती प्रतिस्पर्धा तथा मुद्रा, विदेशी मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजारों में समेकन की दिशा में योगदान किया । और वे वित्तीय क्षेत्र की समग्र आविनियमन प्रक्रिया से समन्वित हो गए।

भारतीय रिज़र्व बैंक की भूमिका

6.10 वित्तीय बाजारों में रिज़र्व बैंक की भूमिका को महत्व प्राप्त हो गया। जिसके निम्नलिखित कारण हैं । पहला, वित्तीय बाजारों में रिज़र्व बैंक की प्राथमिक रूचि इसके मौद्रिक नीति के संप्रेषण में इसकी महत्ता के कारण है। परिचालन की दृष्टि से मौद्रिक नीति के संचालन के लिए मुद्रा बाजार के परिचालन तथा अप्रत्यक्ष लिखतों पर निर्भरता ने मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति तथा विदेशी मुद्रा बाजारों के विकास को आवश्यक बना दिया। दूसरा, वित्तीय स्थिरता रिज़र्व बैंक के लिए एक बढ़ता हुआ महत्वपूर्ण मुद्दा हो सकता है, जिसका परिणाम हुआ वित्तीय बाजार के विकास पर अधिक ध्यान दिया गया । मुद्रा बाजार वह केंद्र बिंदु है, जिसके कारण रिज़र्व बैंक को हस्तक्षेप करना पड़ता है - अल्पावधिक चलनिधि प्रवाहों को संतुलित बनाना। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसका संबंध अल्पावधिक चलनिधि प्रवाहों को प्रति संतुलित करता है, क्योंकि इसका विदेशी मुद्रा बाजार के साथ इसके संबंध है। सरकारी प्रतिभूति बाजार कई कारणों से पूरे ऋण बाजार का केंद्र बिंदु बन गया है; पहला, सरकार का राजकोषीय घाटा - केंद्र और राज्यों - दोनों का, निरंतर काफी उच्च बना हुआ है, जिसका परिणाम यह हुआ कि केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा बाजार से भारी उधार लिया जाता है। क्योंकि कंपनी ऋण बाजार अभी भी विकास की नवजात अवस्था में है, सरकारी प्रतिभूति बाजार ऋण बाजार का सबसे बड़ा घटक है। दूसरे, यह अन्य ऋण बाजार की लिखतों के मूल्य निर्धारण के लिए बेंचमार्क का कार्य करता है। तीसरा, यह मौद्रिक नीति के लिए एक दक्ष संप्रेषण सरणि प्रदान करता है। विदेशी मुद्रा बाजार के विकास के लिए रिज़र्व बैंक का ध्यान मुख्यतः विनिमय दर को स्थिरता प्रदान करने की ओर है।

6.11 वित्तीय बाजारों में रिज़र्व बैंक का हक कई कारणों से है - पहला, रिज़र्व बैंक मौद्रिक प्राधिकारी के रूप में मौद्रिक नीति के संप्रेषण के लिए सर्वाधिक रूप से जुड़ा है। दूसरा, यह माना जाना चाहिए कि भारत न तो आबद्ध अर्थव्यवस्था है और न ही मुक्त अर्थव्यवस्था। वास्तव में, भारत एक खुलती हुई अर्थव्यवस्था है, तथा इसके खुलने की प्रक्रिया का सावधानीपूर्वक प्रबंधन तथा स्थिरता वृद्धि के लिए महत्वपूर्ण है (रेड्डी 2005)। तीसरे, चूंकि बाजार कानूनों, विनियमनों तथा नीतियों द्वारा गत अवधि में अनेक प्रकारों से दमित थे, अतः रिज़र्व बैंक कानूनी परिवर्तनों, प्रौद्योगिकी और संस्थागत विकास, तथा बाजार की व्यष्टिगत संरचना में गत्यात्मक सुधार लाकर एक समर्थक परिवेश निर्मित करके बाजारों के विकास को सुविधाजनक बनाता रहा है। चौथे, रिज़र्व बैंक के चार्टर के हिसाब से कुछ वित्तीय बाजारों का विनियमन अपेक्षित है। यह मुद्रा बाजार से संबंधित है जोकि मौद्रिक नीति, सरकारी प्रतिभूति बाजार जो कि आय वक्र का विकास करने की दृष्टि से महत्वपूर्ण हो, तथा विदेशी मुद्रा बाजार जो विदेशी मुद्रा बाजार का अंतरण भाग है, का केंद्र है। प्रतिभूति संविदा विनियमन अधिनियम में संशोधनों तथा उसके अंतर्गत सरकारी अधिसूचनाओं ने जो रिज़र्व बैंक को इसका अधिकार क्षेत्र प्रदान करती है, इस पहलू को रूपाकार देने में सहायता की है। पांचवें, उन्नत लिखतों के क्रमिक विकास तथा बाजार के संव्यवहारों में नवोन्मेष के साथ प्रौद्योगिकीगत संरचना वित्तीय बाजारों के सुधारों का एक अपरिहार्य अंग बन गया है। अतः रिज़र्व बैंक ने भुगतान एवं निपटान प्रणालियों, सुपुर्दगी बनाम भुगतान (डीवीपी) तथा इलैक्ट्रोनिक फंड ट्रान्सफर (इएफटी) जैसे क्षेत्रों में बाजार का विकास सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से एक उपयुक्त प्रौद्योगिकीगत बुनियादी संरचना के विकास में रिज़र्व बैंक ने काफी रूचि ली है। और अंतिम पर उतना ही महत्वपूर्ण, यह कारण है कि आधुनिक वित्तीय बाजार जटिल है। अतः रिज़र्व बैंक के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने आपको इसके लिए तैयार करे तथा निरंतर अद्यतन करता रहे कि वह अपने विकासात्मक तथा विनियामक भूमिकाएं दक्षतापूर्वक निभाता रहे। इस प्रक्रिया में सर्वोत्तम संव्यवहारों का पता लगाने के लिए विश्व के अन्य खिलाड़ियों के साथ निरंतर संपर्क बनाए रखना, भारतीय बाजारों में विद्यमान परंपराओं का बेंचमार्क बनाना, भारत की अनोखी देशी परिस्थितियों के ढांचे के अंतर्गत अंतरराष्ट्रीय मानकों की ओर बढ़ने के लिए अंतरालों को पहचानना तथा आवश्यक उपाय करना शामिल है।

भारत में वित्तीय बाजारों की संरचना तथा वृद्धि

6.12 भारत में वित्तीय क्षेत्र में, वर्तमान में, वित्तीय संस्थाएं, वित्तीय बाजार और वित्तीय लिखतें शामिल हैं। भारत में वित्तीय बाजार के विभिन्न घटक हैं - ऋण बाजार, मुद्रा बाजार, सरकारी प्रतिभूति बाजार, विदेशी मुद्रा बाजार, पूंजी बाजार तथा बीमा बाजार। जहां, मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति तथा विदेशी मुद्रा बाजार का विनियमन रिज़र्व बैंक द्वारा किया जाता है, वहीं, पूंजी बाजार भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) के अंतर्गत आता है, तथा बीमा बाजार का विनियमन बीमा विनियामक तथा विकास प्राधिकरण (इर्डा) द्वारा किया जाता है। इन बाजारों के विकास के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा वर्षों से तथा सेबी द्वारा (1990 के दौरान) अनेक उपाय किए गए हैं।

6.13 1990 के बाद के दशक तक वित्तीय बाजारों के अपेक्षाकृत कम विकसित स्वरूप के कारण फर्में अपनी निधियों की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए काफी सीमा तक वित्तीय मध्यस्थों पर निर्भर थीं। विभाजित बाजार की विद्यमानता मौद्रिक नीति की भावनाओं / धड़कनों के संप्रेषण को छिपाने की प्रवृत्ति रखती थीं जिसका परिणाम यह हुआ कि संसाधनों का अभीष्टतम आबंटन नहीं हो पाता था (कामेसम 2001)।

6.14 इस प्रकार भारत में वित्तीय बाजार का सुधार एक हाल की घटना है तथा यह समग्र वित्तीय क्षेत्र और 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में शुरू किए गए संरचनागत सुधारों की प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण घटक बना । भारत में वित्तीय बाजार के सुधारों ने सुप्रसिद्ध दृष्टिकोण को अपनाया । वास्तव में, सुधारों की प्रक्रिया 1980 के बाद के दशक के मध्य से भारत में मौद्रिक प्रणाली की कार्य-पद्धति की समीक्षा संबंधी समिति, 1985 (अध्यक्ष : सुखमय चक्रवर्ती) तथा मुद्रा बाजार संबंधी कार्य दल 1987 (अध्यक्ष : एन.वागुल) की सिफारिशों के अनुसरण में किए गए अनेक उपायों से प्रारंभ हुई थी। तथापि इस प्रक्रिया को गति 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों में मिली जब वित्तीय बाजार के सभी घटकों (मुद्रा, विदेशी मुद्रा तथा सरकारी प्रतिभूति) में व्यापक दायरे में सुधार किए गए। भारत में बाजारों के सुधार की प्रक्रिया चरणबद्ध या क्रमिक रूप में अपनाई गई है ताकि अस्थिरकारी प्रभावों से बचा जा सके।

6.15 भारत में वित्तीय क्षेत्र तथा बाजार सुधारों के प्रति सामान्य दृष्टिकोण पारदर्शी, समन्वयवादी तथा परामर्शी प्रक्रिया वाला रहा है, जिसका उद्देश्य विभिन्न संभावित द्विविधाओं को समाप्त करना था। स्वयं सुधार की प्रक्रिया की विशेषता सतर्कता रही जिसमें स्थिरता को बनाए रखने के उपायों को क्रम-वार, सावधानीपूर्वक बनाने, मौद्रिक उपायों को परस्पर लागू करने तथा संगतता एवं अन्य नीतियों के साथ अनुपूरकता सुनिश्चित करने पर बल दिया गया था । इसके अलावा, वित्तीय बाजारों में सुधार समग्र मौद्रिक नीति के ढांचे के अंदर-अंदर लिए गए तथा उनका समन्वय मुद्रा तथा विदेशी मुद्रा बाजारों के सुधारों के साथ तालमेल बिठाते हुए किया गया। अनेक प्रमुख सुधारों को अनेक चरणों में लागू किया गया है, उनके संप्रेषण की अनुमति देते हुए, ताकि वे बाजार की स्थितियों, या सहभागियों के किसी अन्य समूह या आम तौर पर वित्तीय प्रणाली को अस्थिर न बना दें (रेड्डी 2005)।

6.16 भारत में मुद्रा तथा सरकारी प्रतिभूति बाजार तीन प्रमुख गतिविधियों से प्रेरित था। पहली, तदर्थ खजाना बिलों के जरिए सरकारी घाटे के स्वत: वित्तपोषण (जिसमें दिसंबर 1974 से 4.6 प्रतिशत प्रतिवर्ष की स्थायी कूपन दर लागू होती थी) के स्थान पर 1997 में बैंक दर से सहबद्ध ब्याज दर पर अर्थोपाय अग्रिमों (डब्ल्यूएमए) का लाया जाना था जिसके कारण राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण बाजार बडी मात्रा में किया जाने लगा। इसने सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास को गति प्रदान की। दूसरी, एक समर्थकारी संस्थागत और कानूनी ढांचा तथा मौद्रिक नियंत्रण के अप्रत्यक्ष लिखतों की व्यूह रचना, जैसे बैंक दर, जिसे अप्रैल 1997 को पुनः सक्रिय किया गया, नीलामियों को मिलाने की रणनीति, निजी स्थानन, सरकारी प्रतिभूतियों में 1998-99 से खुले बाजार के परिचालन, तथा चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) (जो जून 2000 से शुरू की गयी) ने वित्तीय बाजार के विकास में उल्लेखनीय रूप से योगदान किया (रेड्डी 2000)। तीसरी, एक उपयुक्त कानूनी, संस्थागत, प्रौद्योगिकीय तथा विनियामक ढांचे की स्थापना ने वित्तीय बाजार के सभी विभिन्न घटकों में चलनिधि तथा पारदर्शिता बढ़ाने में योगदान किया है।

भारत में वित्तीय बाजारों की स्थिति

6.17 भारत में वित्तीय बाजारों का विकास की चरणबद्ध प्रक्रिया रही है, तथा जो मोटे तौर पर सुधार से पूर्व (अर्थात 1990 के दशक से पूर्व जब बाजार संप्रेषण के दौर में थे) तथा सुधार की अवधि या सुधारोत्तर अवधि (जब से 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों से जब बाजार में भारी मात्रा और तेजी से सुधार हुए)।

मुद्रा बाजार

6.18 मुद्रा बाजार वित्तीय प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण घटक है, क्योंकि यह निधियों की अल्पावधिक मांग तथा उनके लिए आपूर्ति करने के संतुलन को बनाए रखने के लिए आधार प्रदान करता है और इस प्रकार मौद्रिक नीति के संचालन को सुविधाजनक बनाता है। यह एक साल तक की मीयादवाली अल्पावधिक निधियों के लिए बाजार है तथा इसमें वे वित्तीय लिखत शामिल हैं जो मुद्रा के समीपतम एवज़ी हैं। मुद्रा बाजार से आम तौर पर तीन कार्य करने अपेक्षित हैं। (i) यह अल्पावधिक निधियों की मांग और आपूर्ति के अंतराल को दूर करने के लिए संतुलन प्रदान करता है, (ii) यह अर्थव्यवस्था में चलनिधि तथा ब्याज दरों के सामान्य स्तरों को प्रमाणित करने के लिए केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप का केंद्र बिंदु बनता है, तथा यह अल्पावधिक निधियों के प्रदानकर्ता तथा उपयोगकर्ता को एक दक्ष बाजार में स्पष्ट मूल्य पर उधार लेने तथा निवेश करने के लिए तर्क-सम्मत पहुंच प्रदान करता है (वाघुल 1987)।

6.19 अल्पावधिक मुद्रा बाजार तथा दीर्घावधि पूंजी बाजार के बीच कोई विशेष उल्लेखनीय विभेद नहीं हैं और वस्तुतः इन दोनों बाजारों के बीच आंतरिक संपर्क हैं क्योंकि दोनों बाजारों में लिखतों की व्यूह रचना अनिवार्यतः एक निरंतरता बनाए रखती है (वाघुल 1987) । रिज़र्व बैंक मुद्रा बाजार सबसे महत्वपूर्ण घटक है। मौद्रिक नीति के

संचालन में मुद्रा बाजार के निहितार्थों के कारण मुद्रा बाजार रिज़र्व बैंक के प्रत्यक्ष विनियमन के अंतर्गत आता है। मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक के परिचालनों का प्राथमिक उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि अल्पावधिक उधार देने की दरें तथा चलनिधि को उन स्तरों पर बनाए रखा जाए जोकि समग्र मौद्रिक नीति के उद्देश्यों से मेल खाते हों जैसे मूल्य-स्थिरता बनाए रखना, अर्थव्यवस्था के उत्पादक क्षेत्रों के ऋण के पर्याप्त प्रवाह सुनिश्चित करना, तथा वित्तीय बाजारों में व्यवस्थित स्थिति बनाए रखना । प्रणाली में चलनिधि और ब्याज की दरें रिज़र्व बैंक द्वारा अपने अधिकार क्षेत्र में निहित विभिन्न साधनों जैसे नकदी प्रारक्षित अनुपात, स्थायी सुविधाएं/पुनर्वित्त योजनाएं, रेपो तथा रिवर्स रेपो लेनदेन, बैंक दरों में परिवर्तन, खुले बाजार के परिचालन और कभी-कभी विदेशी मुद्रा स्वैप परिचालनों के माध्यमों का उपयोग करके इस क्षेत्र को प्रभावित करता है। मौद्रिक नीति की प्रक्रिया में बाजार की भूमिका को मानते हुए रिज़र्व बैंक ने प्रणाली में विद्यमान चलनिधि पर बेहतर नियंत्रण रखने तथा ब्याज दर के संकेतक देने के लिए दक्ष प्रणाली-तंत्र बनाने के लिए मुद्रा बाजार की लिखतों को निरंतर बेहतर बनाए रखने में सक्रिय रूचि ली है।

सुधार-पूर्व की अवधि

(i) 1930 से 1960 के दशक तक

6.20 इस अवधि के दौरान भारतीय मुद्रा बाजार में लिखतों की कमी, बाजार की संरचना में गहनता तथा विविधता की कमी, देखी गई। अंतरबैंक मांग मुद्रा बाजार भारतीय मुद्रा बाजार का मूल था। 1935 में रिज़र्व बैंक के निर्माण से पहले, मुद्रा बाजार में दो पर्याप्त भिन्न क्षेत्र थे। अर्थात् संगठित और असंगठित क्षेत्र (एसबीआई, 2003)। जहां संगठित क्षेत्र में इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया - 1935 तक अर्ध केंद्रीय बैंक, भारतीय जाइंट स्टॉक बैंक तथा विदेशी मुद्रा बैंक, देशी बैंकर जैसे श्राफ, मनीलेंडर, चेट्टी, मुल्तानी निधियां, चिट फंड आदि असंगठित क्षेत्र में आती थीं। सहकारी ऋण संस्थाओं ने इन दोनों क्षेत्रों के बीच में मध्यस्थक की स्थिति प्राप्त की हुई थी। इंपीरियल बैंक जो देश का सबसे अग्रणी वाणिज्यिक बैंक था, तथा कुछ अग्रणी भारतीय ज्वाइंट स्टॉक बैंक हुंडियों (आंतरिक विनियम बिलों) को बट्टे पर भुनाया करते थे। यह असंगठित क्षेत्र के लिए ऋण लिखत का मुख्य माध्यम था । जो इन दोनों क्षेत्रों के बीच एक मात्र संपर्क सूत्र था। एक उचित केंद्रीय बैंक के न होने के कारण मुद्रा बाजार में निधियों की मांग और आपूर्ति के बीच भारी असंतुलन था, मौसमी व्यस्त और कामकाज की मंदी के दौरान ब्याज की दरों में भारी असंतुलन था। तथापि, इंपीरियल बैंक मुद्रा बाजार को स्थिरता प्रदान नहीं कर सका, क्योंकि इसे सरकार से उच्च ब्याज दरों पर उधार लेना पड़ता था। तथापि, इंपीरियल बैंक ने मुद्रा बाजार को सहायता प्रदान की जिसमें उसने सरकार की भारी शेष राशियों का उपयोग किया जो इसकी इच्छा पर प्रयुक्त की जा सकती थीं, जो इसका प्रमुख निवेश योग्य संसाधन बना।

6.21 इंपीरियल बैंक ने सांविधिक दृष्टि से न सही तो भी 1935 तक बैंकरों के बैंक के रूप में कार्य किया तथा अन्य बैंकों की (भारतीय और विदेशी मुद्रा - दोनों की शेष राशियों को रखा तथा उन्हें उनकी कठिनाइयों के दिनों में या मुद्रा की तंगी की स्थितियों में आर्थिक लाभ प्रदान किया। यह स्थिति 1935 के बाद भी उन क्षेत्रों में जारी रही जहां रिज़र्व बैंक ने अपने कार्यालय स्थापित नहीं किए थे। अग्रिम अक्सर सरकारी या अन्य गिल्ट प्रतिभूतियों की जमानत पर मांग ऋण के रूप में प्रदान किए जाते थे, यद्यपि कभी-कभी ये भी ओवरड्राफ्ट के स्वरूप के होते थे।

6.22 बैंक दर वह मुख्य उधार दर होती थी जिस पर इंपीरियल बैंक आम तौर पर सरकारी प्रतिभूतियों की जमानत पर उधार दिया करता था। इस दर का निर्धारण इंपीरियल बैंक के केंद्रीय बोर्ड की समिति द्वारा किया जाता था तथा यह धन की मांग पर निर्भर करता था जोकि प्रायः व्यापार, विशेषकर विदेश व्यापार, कच्चे माल जैसे खाद्यान्न, कपास,जूट और जूट के निर्मित वस्तुओं की व्यापारगत मांग द्वारा निर्धारित किया जाता था । ऋणों पर बैंक दर सहित ब्याज की दरें, इस व्यापार के उतार-चढ़ाव के अनुसार घटती बढ़ती रहती थीं। इंपीरियल बैंक तब भी जब देयताओं के प्रति इसका नकदी अनुपात निम्न पाया जाता था जो चलनिधि का संकेतक था। बैंक दर के अलावा, इंपीरियल बैंक आवधिक रूप से हुंडी की दरें घोषित किया करता था।जो प्रायः बैंक दर के समकक्ष या इससे थोड़ी सी उच्च होती थी। इंपीरियल बैंक द्वारा अपने अग्रिमों पर वसूली की जानेवाली दरों तथा हुंडियों पर बट्टे की दरों के माध्यम से, तथा इसकी इच्छा से या वित्तीय सहायता प्रदान करने से मना करने पर यह ऋण के प्रावधान तथा मुद्रा बाजार की दरों को काफी सीमा तक प्रभावित किया करता था।

6.23 काफी पहले अर्थात् 1931 में, भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जांच समिति (1931) ने भारतीय मुद्रा बाजार के इन दोनों घटकों के समेकन की आवश्यकता को रेखांकित किया। इसमें कुछ शर्तों जैसे न्यूनतम पूंजी और प्रारक्षित निधि, कारोबार का स्वरूप, खातों की लेखा परीक्षित कराने आदि को पूरी करने पर देशी बैंकों को रिज़र्व बैंक के साथ जोड़ने की सिफारिश की थी । बाद में, अगस्त 1937 में रिज़र्व बैंक ने भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 की दूसरी अनुसूची के अंतर्गत बैंकिंग कारोबार करनेवाली देशी बैंकरों को शामिल करने के लिए एक योजना बनाई ।

6.24 1935 में रिज़र्व बैंक के गठन के पश्चात् संगठित बाजार ने जिसमें रिज़र्व बैंक, इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया, विदेशी बैंक तथा भारतीय संयुक्त स्टॉक बैंक, शामिल थे तथा अर्ध सरकारी निकायों तथा बड़े आकार की संयुक्त स्टॉक कंपनियों ने भी मुद्रा बाजार में उधारदाता के रूप में भाग लिया। इनके द्वारा उधार दी गई राशि को

आम तौर पर 'हाउस मनी' कहा जाता था (भारिबैं.1958)। वित्तीय मध्यस्थक जैसे मांग ऋण ब्रोकरों, आम वित्त तथा स्टॉक ब्रोकरों ने भी बाजार में भाग लिया। हालांकि मांग बाजार में लेनदेन की गई निधियों की मात्रा बैंकों की जमा राशियों के संसाधनों की तुलना में बड़ी नहीं थी। तथापि यह मुद्रा बाजार में सर्वाधिक संवेदनशील घटक था। इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया ने मांग मुद्रा बाजार में भाग नहीं लिया, परंतु अन्य बैंकों ने इससे ऋण और अग्रिम लिए। तथापि बाद में बैंकों ने उत्तरोत्तर रूप में अपने आर्थिक निभाव के लिए रिज़र्व बैंक की ओर रुख किया। मांग मुद्रा बाजार के अलावा इस बाजार में और कोई महत्वपूर्ण घटक नहीं था।

6.25 अप्रैल 1935 में भारतीय रिज़र्व बैंक के गठन के साथ ही, बैंक दर के निर्धारण का कार्य इंपीरियल बैंक से इसमें ले लिया। 4 जुलाई 1935 को अर्थात् उस दिन से पहले जब अनुसूचित बैंकों को अपनी सांविधिक जमा राशियां रिज़र्व बैंक के पास जमा करानी थीं, रिज़र्व बैंक ने पहली बार 3.5 प्रतिशत की बैंक दर की आधिकारिक रूप से घोषणा की । यह वह मानक दर थी जिस पर रिज़र्व बैंक विनिमय बिल या अन्य पात्र वाणिज्यिक पत्रों को खरीदने या भुनाने के लिए तैयार था। बाद में इंपीरियल बैंक की आधिकारिक दर को इंपीरियल बैंक अग्रिम दर कहा जाने लगा। जो इंपीरियल बैंक की हुंडी दर से भिन्न थी, जो सरकारी प्रतिभूतियों पर अग्रिमों के लिए दर थी तथा उन अन्य अग्रिमों पर ब्याज की गणना करने के लिए आधार दर थी जिस पर ब्याज की सचल दर लगाई जानी थी। आम तौर पर अर्थव्यवस्था की तथा विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र की सेवा करने के लिए अखिल भारतीय ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण समिति ने यह सिफारिश की थी कि इंपीरियल बैंक का अधिग्रहण करके एक सरकार की सहभागिता वाले तथा सरकार द्वारा प्रायोजित बैंक के रूप में गठन किया जाए तथा पूर्ववर्ती सरकारी स्वामित्व वाले तथा सरकार से सम्बद्ध बैंकों का इसके साथ समेकन कर दिया जाए। तदनुसार मई 1955 में संसद में एक अधिनियम पारित किया गया तथा 1 जुलाई 1955 को भारतीय स्टेट बैंक का गठन किया गया।

6.26 हालांकि, रिज़र्व बैंक को विधान के अंतर्गत मौद्रिक नीति की सामान्य लिखतों का उपयोग करने की शक्तियां प्राप्त थीं, परंतु मौद्रिक नियंत्रण के लिए लिखतों का चयन करने का विकल्प मुद्रा बाजार की संरचनागत विशेषताओं के कारण सीमित कर दिया गया था। भारत में मुद्रा बाजार का एक महत्वपूर्ण पहलू था - मुद्रा तथा ऋण की मांग का मौसमीपन जो मोटे तौर पर कृषि के मौसमों के अनुसार चलता था। प्रसंगवश, सरकार के खातों की लेखा बंदी वित्त वर्ष के अंत में मार्च में होने से भी मुद्रा बाजार में मौसमीपन के तत्व को बढ़ाने में मदद की ।

6.27 भारत में मुद्रा बाजार की संरचना भले ही, शिथिल या ढीली रही हो, परंतु पूर्णतः असमन्वित नहीं थी (भा.रि.बैं.1958) । देशी बैकरों ने इंपीरियल बैंक ऑफ इंडिया तथा अन्य वाणिज्यिक बैंकों से पुनर्भुनाई की सुविधाओं का लाभ उठाया, जिनकी इसके परिणाम स्वरूप रिज़र्व बैंक तक पहुंच हो गई। देशी मुद्रा बाजारों की ओर से संगठित बाजार के संसाधनों का सहारा सामान्यतः व्यस्त मौसम के दौरान लिया जाता था, जब फसलों की कटाई होती थी तथा वे उत्पादक के स्थान से थोक विक्रेता के पास आती थीं। रिज़र्व की स्थापना के समय के आसपास असंगठित मुद्रा बाजार का घटक सबसे महत्वपूर्ण घटक था जो कुल लेनदेन का 90 प्रतिशत बैठता था। तब से सकल की दृष्टि से इसकी महत्ता काफी कम हो गई। परंतु कुछ क्षेत्रों जैसे कृषि, खुदरा व्यापार, छोटे उधारकर्ताओं के विभिन्न वर्गों तथा कुछ सीमा तक लघु उद्योगों के लिए यह बाजार संसाधनों का महत्वपूर्ण स्रोत बना रहा। इसके मुख्य लाभ थे - परिचालनों में नमनीयता, तथा उधारकर्ता द्वारा सहज पहुंच। परंतु ये लाभ ब्याज की उन ऊंची दरों के कारण हवा हो गए जिन पर ये संसाधन उधारकर्ताओं को उपलब्ध कराए जाते थे। अतः उस समय मौद्रिक नीति का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य था- संगठित क्षेत्र से इन क्षेत्रों के लिए ऋण का प्रवाह सुविधाजनक बनाने के लिए पद्धतियां विकसित करना तथा इसे तर्क-संमत शर्तों पर उपलब्ध कराना ।

6.28 बिलों की पुनर्भुनाई ऋण नियंत्रण की सबसे महत्वपूर्ण लिखतें थीं तथा भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जाँच समिति (1931) ने वाणिज्यिक बिलों के बाजार के शीघ्र गठन की सिफारिश की थी। परंतु युद्ध तथा देश के विभाजन से होने वाली कठिनाइयों के मद्देनजर 1952 की शुरुआत तक रिज़र्व बैंक इस दिशा में कोई भी कदम नहीं उठा सका। बिल बाजार योजना अंततः 16 जनवरी 1952 को शुरू की गई। इस योजना के अंतर्गत रिज़र्व बैंक ने अनुसूचित बैंकों को उनके वचन पत्रों या उनके अपने घटकों के 90 दिनों के मीयादी बिल या वचन पत्र (प्रोमसरी नोटों) की जमानत पर मांग ऋणों के रूप में अग्रिम उपलब्ध कराए। मुख्य रूप से यह बैंकों को आर्थिक निभाव उपलब्ध कराने की एक योजना थी। तथापि यह योजना वास्तविक बिलों के लिए एक बाजार का विकास करने में सफल नहीं हुई।

6.29 अल्पावधिक नियंत्रण उपायों की मंशा व्यस्त मौसम के दौरान बैंकों को अस्थायी आर्थिक निभाव की राशि तथा लागत को विनियमित करना तथा आवश्यक वस्तुओं का भंडार बनाए रखना था । अल्पावधिक नियंत्रण के लिए वणिज्यिक बैंकों की रिज़र्व बैंक तक पहुंच को निवल चलनिधि अनुपात प्रणाली[1] (एनएलआर) द्वारा विनियमित किया जाता था । दीर्घावधि नियंत्रण उपायों का उद्देश्य था ऋण के प्रवाहों को तथा विभिन्न क्षेत्रों के लिए ऋण की लागत को अपेक्षित दिशा में मोड़ना ।

6.30 वर्षों से रिज़र्व बैंक ने अपने ऋणों और खुले बाजार के परिचालनों से आम तौर पर ब्याज दरों में तथा विशेष तौर पर मांग मुद्रा एवं बाजार बिल दरों में काफी सीमा तक ब्याज की दरों के स्तरों को घटाने तथा साथ ही ब्याज दरों में मौसमी घटबढ़ को, जो कि रिजर्व बैंक की स्थापना से पहले भारतीय मुद्रा बाजार की एक मुख्य विशेषता थी, कम करने में सफल हुआ था।

(ii) 1970 से 1980 के दशक के दौरान

6.31 1970 के बाद के दशक से 1980 के बाद तक के दशक के बीच की अवधि में भी कम चलनिधि, लिखतों की कमी तथा सहभागियों की सीमित संख्या पाई जाती थी। इस अवधि के दौरान भारतीय मुद्रा बाजार की मुख्य विशेषताएं थीं -

(क) संकीर्ण आधार तथा सीमित संख्या में सहभागियों वाले सीमित बाजार - बैंक और दो अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाएं। बाजार में प्रवेश कठोरतापूर्वक नियंत्रित किया जाता था। इसके अलावा, कुछ बड़े उधारदाता तथा भारी संख्या में उधारकर्ताओं के साथ असंतुलित बाजार । बाजार में ऐसे सहभागियों की कमी थी जो उधार लेने और देने के बीच विकल्प देकर एक सक्रिय बाजार का निर्माण कर सकते।

(ख) बाजार का समग्र आकार अर्थव्यवस्था के आकार की तुलना में बहुत छोटा था । समग्र लेनदेन बैंक जमाराशियों का मात्र 3 से 5 प्रतिशत बनता था।

(ग) बाजार में लिखतों की कमी थी तथा लेनदेन प्रायः रात्रिभर की मांग तथा अल्प सूचना (15 दिनों तक के लिए) अंतरबैंक जमाराशियां / ऋण, रेपो मार्केट तथा बिल पुनर्भुनाई तक ही सीमित थे।

(घ) बाजार में ब्याज दरें भी कठोरतापूर्वक विनियमित तथा नियंत्रित होती थीं (भारतीय बैंक संघ (आईबीए) की मध्यस्थता के माध्यम से सहभागियों के बीच स्वैच्छिक रूप में हुए करार द्वारा) । तथापि चलनिधि की तंगी की स्थिति में निर्धारित दरों का कठोरतापूर्वक पालन नहीं किया जाता था और अधिकतर उन्हें भंग किया जाता रहता था (वाघुल 1987)।

6.32 उपर्युक्त विशेषताओं के कारण असंगठित मुद्रा बाजार क्षेत्रवार वित्तपोषण के अंतरालों को पूरा किया करता था (अर्थात् संगठित वित्तीय प्रणाली में असंतुष्ट उधारकर्ताओं की अपेक्षाओं की पूर्ति)। असंगठित क्षेत्र में ब्याज दरें संगठित क्षेत्र की ब्याज दरों की तुलना में उच्चतर तथा बाजार से अधिक संबद्ध थीं। मांग मुद्रा बाजार - जो प्रमुख बाजार था - पूर्णतः एक अंतरबैंक बाजार 1971 तक था जब यूटीआई और एलआईसी को बाजार में भाग लेने की अनुमति दी गई। जहां वाणिज्यिक तथा सहकारी बैंकों ने उधारकर्ता और उधारदाता दोनों रूपों में भाग लिया, वहीं एलआईसी और यूटीआई, जिनके पास अल्पावधिक सचल निधियां काफी मात्रा में थीं, को बाजार में निधियों की आपूर्ति को बढ़ाने के लिए उधार देने की अनुमति दी गई। रात्रिभर के लिए मांग/मीयादी मुद्रा ने परंपरागत रूप में बैंकों को प्रारक्षित अपेक्षाओं को बनाए रखने में सहायता की थी। इस प्रकार 1970 और 1980 के बाद के दशकों में भारत में मांग मुद्रा बाजार बुनियादी तौर पर ''ओवर दि काउंटर मार्केट'' रहा। क्योंकि ब्रोकरों को बाजार में भाग लेने की अनुमति नहीं थी। (मार्च 1978 तक, मांग मुद्रा संबंधी लेनदेन ब्रोकरों के माध्यम से किए जा सकते थे। तब से लेकर रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को रोक दिया गया कि वे मांग मुद्रा बाजार के परिचालनों पर दलाली अदा न करें क्योंकि इसने जमाराशियों पर दलाली अदा करना बंद कर दिया था।

6.33 दिसंबर 1973 से पूर्व, मांग बाजार की दरें बाजार द्वारा मुक्त रूप से निर्धारित की जाती थीं, परंतु जैसे ही ये दरें 25 प्रतिशत से 30 प्रतिशत की ऊंचाई पर पहुंच गईं और उसी स्तर पर बनी रहीं, आरबीआई ने इसमें हस्तक्षेप किया तथा बाजार में कुछ व्यवस्था लाई। क्योंकि यह महसूस किया गया कि लंबी अवधि तक उच्च ब्याज की दरें पूर्ण बैंकिंग प्रणाली के परिचालनों को विकृत कर देंगी तथा उधार की दरों को नियंत्रित संरचना के अंतर्गत योजनाबद्ध ऋण आबंटन के बुनियादी उद्देश्यों के प्रतिकूल होंगी। दिसंबर 1973 में आरबीआई द्वारा मांग मुद्रा पर 15 प्रतिशत की सीमा लगाई गई, तथापि यह उच्चतम सीमा चरणबद्ध रूप में मार्च 1978 तक घटाकर 8.5 प्रतिशत कर दी गई। मुद्रास्फीतिकारी दबावों के उभरने तथा 1979-80 में नियंत्रित ब्याज दरों के तेजी से बढ़ने के कारण अप्रैल 1980 में मांग मुद्रा पर ब्याज की दरों को 10 प्रतिशत तक बढ़ाना आवश्यक हो गया।

6.34 मांग मुद्रा बाजार में कारोबार की मात्रा बैंकों की औसत उधार राशियां, जो 1982-83 में रु. 573 करोड़ की थीं, 1985-86 तक बढ़कर रु. 1,067 करोड़ रु. की हो गई। अंतरबैंक मीयादी जमा/ऋण बाजार, जहां निधियां 14 दिनों से ज्यादा के लिए उधार दी जाती थीं, भी इतना ही कम विकसित था। इस बाजार के सहभागी वाणिज्यिक बैंक तथा सहकारी बैंक थे। बाजार में ब्याज दरें रिज़र्व बैंक के किसी निदेश से परिचालित नहीं होती थीं। तथापि आरबीआई ने अंतरबैंक लेनदेनों की उच्चतम दरें निश्चित की। चलनिधि की तंगी की अवधियों में बाजार में ब्याज दरों की उच्चतम सीमाएं भंग हो जाया करती थीं। जैसा कि

[1] निवल चलनिधि अनुपात (एनएलआर) बैंक की नकदी, रिजर्व बैंक के पास जमाशेष राशि, अधिसूचित बैंकों में चालू खाता जमाराशियां तथा सरकारी और अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में निवेश, इसमें से भारिबैंक, भा.स्टेबैंक तथा आइडीबीआइ से इसकी कुल उधारियों को घटाकर शेष राशि का इसकी कुल मांग और मीयादी देयताओं के प्रति अनुपात था।

मांग मुद्रा बाजार के मामले में होता था। इस बाजार में लेनदेनों की मात्रा 1985-86 में रु. 420 से रु.1,000 करोड़ के बीच रही।

6.35 सुविकसित मुद्रा बाजार में, खजाना बिल प्रायः मुद्रा बाजार के परिचालनों का अनिवार्य भाग होता है। तथापि भारतीय संदर्भ में, मुद्रा बाजार की लिखत के रूप में खज़ाना बिलों की भूमिका (सरकार द्वारा अल्पावधि उधार लेने की लिखत) कुछ ऐतिहासिक गतिविधियों के कारण काफी सीमा तक कम कर दी गई (वाघुल 1987) । पहला, अधिकांश खज़ाना बिलों का निर्माण जो सरकार के घाटे को दर्शाते हैं, भारी मात्रा में वर्षों तक बिना निधियन के पड़े रहे तथा अधिकांश खज़ाना बिल रिज़र्व बैंक द्वारा रखे गए। दूसरे, 91 दिवसीय खजाना बिलों पर बट्टा दर 1974 से 46 प्रतिशत पर अपरिवर्तित बनी रही। साथ ही यह दर अन्य अल्पावधिक दरों से पूर्णतः असमायोजित बनी रही। तीसरे, चूंकि ये बिल रिज़र्व बैंक द्वारा मुक्त रूप से पुनर्भुनाये जाते थे तथा पखवाड़े के औसत के रूप में नकदी प्रारक्षित अनुपात (सीआरआर) बनाये रखने की शर्त को देखते हुए बैंक खजाना बिल बाजार का उपयोग अनिवार्यतः एक से दो दिनों की बहुत अल्पावधि के लिए जमा करने हेतु किया करते थे। अतः खजाना बिलों में बैंकों के निवेशों में ये तीव्र तथा रिज़र्व बैंक के पास बैंकों की नकदी शेष राशियों में भारी और तीव्र उद्वेगशीलता रहती थी। उतार-चढ़ाव वाले घट-बढ़ पूर्णतः अनुत्पादक थे तथा मुद्रा प्रबंधन के लिए गलत संकेत देते थे। तदनुसार इन समस्याओं पर नियंत्रण पाने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा दो उपाय किए गए। आस्ति खजाना बिलों को पुनः चलाना/घुमाना तथा अतिरिक्त जल्दी पुनर्भुनाई फीस लगाने की शुरुआत।

6.36 नवंबर 1970 में एक नई योजना बिल पुनर्भुनाई योजना के नाम से शुरू की गई जिसमें कई नई विशेषताएं थीं जिसके अंतर्गत रिज़र्व बैंक वास्तविक व्यापार बिलों की बैंक दर पर या इसके विवेक पर निर्दिष्ट दर पर पुनर्भुनाई करता था। वर्षों से यह पुनर्भुनाई सुविधा सीमित कर दी गई तथा यह विवेकानुसार उपलब्ध कराई गई। मुद्रा बाजार में दूसरी लिखत थी - सहभागिता प्रमाणपत्र (1970 में शुरू की गई) । परंतु ये दोनों ही महत्वपूर्ण नहीं थीं।

6.37 चक्रवर्ती समिति (1985) ऐसी पहली समिति थी जिसने भारतीय मुद्रा बाजार के विकास के लिए व्यापक सिफारिशें कीं। इसके बाद रिज़र्व बैंक द्वारा विशिष्ट रूप से मुद्रा बाजार को व्यापक तथा गहन बनाने के लिए विभिन्न पहलुओं की जांच करने के लिए गठित की गई थी। इन दो समितियों की सिफारिशों का अनुसरण करते हुए कई नई पहलें शुरू की गई। जमा प्रमाणपत्र (सीडी) (1989 से जमा प्रमाणपत्र योजना शुरू की गई), वाणिज्यिक पत्र (सीपी 1989 से शुरू किया गया) अंतरबैंक सहभागिता प्रमाणपत्र (जोखिम सहित तथा जोखिम रहित रूप में) शुरू किए गए ताकि लिखतों का दायरा बढ़ाया जा सके। जमा प्रमाणपत्र बुनियादी तौर पर चलनिधि की तंगी के दौरान बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा जारी परक्राम्य मुद्रा बाजार की लिखत हैं। आम तौर पर अपेक्षाकृत छोटे शाखा नेटवर्क वाले छोटे बैंक जमा प्रमाणपत्र जुटाते हैं। चूंकि सीडी बड़ी जमाराशियों के होते हैं, अतः सीडी पर लेनदेन की लागत खुदरा जमाराशियों की अपेक्षा कम होती है। भारतीय मितीकाटा एवं वित्त गृह लि. (डीएफएचआइ) की स्थापना 1988 में मुद्रा बाजार लिखतों का चलनिधि उपलब्ध कराने तथा इन लिखतों में द्वितीयक बाजारों के विकास में सहायता करने के लिए की गई। डीएफएचआइ की स्थापना रिज़र्व बैंक, सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा संयुक्त रूप से की गई। तथपि रिज़र्व बैंक ने डीएफएचआई में अपनी शेयरधारिता का मार्च 2003 में विनिवेश कर दिया । सही मूल्य का पता लगाने के लिए मुद्रा बाजार में ब्याज दरों को 1989 में मुक्त कर दिया गया। मांग मुद्रा के मामले में ब्याज दरों को चरणबद्ध रूप में अपविनियमित किया गया। यह रोचक बात है कि मुद्रा बाजार की दरें भारत में बैंकों की जमा और उधार की दरों को अपविनियमित करने से पहले ही कर दी गई।

6.38 पुनर्खरीद करार (रेपो) मुद्रा बाजार की अल्पावधिक लिखत है जो केंद्रीय बैंकों द्वारा बाजार में अल्पावधिक चलनिधि बढ़ कर तथा प्रणाली से अतिरिक्त चलनिधि को सोखकर मुद्रा बाजार की दरों में आई उद्वेगशीलता को शांत करने के लिए प्रयुक्त की जाती है।[2] मुद्रा बाजार की लिखत होने के कारण रेपो बाजार के विनियमन का कार्य रिज़र्व बैंक के अधिकार क्षेत्र में आता है। तदनुसार, रिज़र्व बैंक बैंकों और गैर बैंक संस्थाओं द्वारा लिखत के रूप में रेपो के उपयोग से संबद्ध है, तथा सहभागियों की पात्रता भी, जो ऐसे लेनदेन कर सकते हैं, जारी करता है। तथा यह केंद्र सरकार के साथ परामर्श करके बैंकों को इस संबंध में अनुदेश जारी करता है। भारत में बैंक अकसर सरकारी तथा अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों तथा पीएसयू बांडों के संबंध में वापस खरीद के लिये 15 अप्रैल 1987 तक आपस में तथा बड़े सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों और अपने बड़े ग्राहकों के साथ करार करते थे जब रिज़र्व बैंक ने कुछ मार्गदर्शी दिशा-निदेश जारी किए, जिनमें अन्य बातों के साथ-साथ कंपनी प्रतिभूतियों तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा जारी बांडों की वापस खरीद कर रोक लगा दी गई थी। 1 दिसंबर 1987 से भारतीय यूनिट ट्रस्ट की यूनिटें रेपो लेनदेन करने के लिए अनुमोदित प्रतिभूतियां नहीं रहीं। रेपो सुविधा का भारी मात्रा में दुरुपयोग का पता लगने के बाद अवांछनीय गतिविधियों को समाप्त करने की दृष्टि से बैंकों को गैर बैंक ग्राहकों के साथ सरकारी या अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में वापस खरीद की व्यवस्था

[2] रिपो व्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंकों का शामिल होना अनिवार्य नहीं हैं, वे बाजार सहभागियों के बीच भी हो सकते हैं।

करने से रोक दिया गया, जबकि वे 4 अप्रैल 1988 से अन्य बैंकों के साथ (अंतरबैंक) वापस खरीद व्यवस्थाएं कर सकते हैं।

सुधार/सुधारोत्तर अवधि (1990 का दशक)

6.39 भारत में मुद्रा बाजार में, विशेषकर, 1990 के बाद मध्य दशक से, मुद्रा बाजार के लिखतों के उन्नयन, नई लिखतों को शुरू करने, तथा बाजार में गम्भीरता तथा चलनिधि बढ़ाने के लिए अनुपूरक उपायों की दृष्टि से उल्लेखनीय प्रगति देखी गई। इस अवधि के दौरान भारत में मुद्रा बाजार की लिखतों में (i) मांग/सूचना मुद्रा (ii) मीयादी मुद्रा, (iii) जमा प्रमाणपत्र, (iv) वाणिज्यिक पत्र, (v) खजाना बिल, (vi) पुनर्खरीद करार (रेपो), (vii) ब्याज दर -स्वैप/वायदा दर करार तथा (viii) वाणिजिक बिलों की पुनर्भुनाई योजना शामिल थी।

6.40 1990 के बाद के दशक के दौरान मांग मुद्रा बाजार में सहभागिता व्यापक होकर अन्य सहभागियों के साथ-साथ इसमें प्राथमिक और अनुषंगी व्यापारियों, कंपनी निकायों (प्राथमिक व्यापारियों के माध्यम से) को भी शामिल कर लिया गया। जहां बैंक और प्राथमिक व्यापारियों को बाजार में उधार देने और उधार लेने की अनुमति थी, अन्य संस्थाएं केवल उधारदाता के रूप में भाग ले सकते थी। नरसिंहम समिति (1998) तथा मांग मुद्रा बाजार के विकास की जांच करने के लिए गठित रिज़र्व बैंक के आंतरिक कार्यदल (1997) की सिफारिशों का अनुसरण करते हुए मांग मुद्रा बाजार का सुधार करने तथा इसे पूर्णतः अंतरबैंक बाजार बनाने के लिए चरणबद्ध रूप में 1999 में उपाय शुरू किए गए। 1990 के दशक के उत्तरार्ध से रेपो बाजार के विकास के साथ ही मांग मुद्रा बाजार को प्राथमिक व्यापारियों को शामिल करते हुए एक पूर्णतः अंतरबैंक बाजार के रूप में रूपांतरित कर दिया गया है। यह प्रक्रिया जो 1999 में शुरू की गई थी, अगस्त 2005 में पूरी हो गई।

6.41 1999 में इस मुद्रा बाजार को और गहन बनाने तथा बाजार सहभागियों को अपने जाखिमों को सुरक्षित करने की दृष्टि से भारतीय मुद्रा बाजार की एक उल्लेखनीय गतिविधि रुपया व्युत्पन्नी लिखत (डेरिवेटिव्स) अर्थात ब्याज दर स्वैप (अदला-बदली), (आइआरएस)/ वायदा दर करार (एफआरए) की शुरुआत है। इसकी शुरुआत से उठाए गए कई अन्य उपायों के अलावा, 20 मई 2005 से बाजार सहभागियों को सूचित किया गया कि वे ब्याज दर व्युत्पन्नी लिखत के लिए केवल देशी रुपया बेंचमार्क का ही उपयोग करें । तथापि बाजार सहभागियों को बेंचमार्क के रूप में मुंबई अंतरबैंक वायदा ऑफर्ड दर (माइफोर) (एमआइएफओआर) का उपयोग करने के लिए छह माह की संक्रमण अवधि दी गई, जिसकी समीक्षा की जा सकती है। तथापि निश्चित आय मुद्रा बाजार तथा डेरिवेटिव्स संघ (फिम्मडा) के अनुरोध पर बाजार सहभागियों को रिज़र्व बैंक द्वारा अनुमोदित उपयुक्त सीमाओं के अधीन, बाजार निर्माण के प्रयोजन के लिए अनुमति योग्य विदेशी मुद्रा जाखिमों वाले लेनदेनों के संबंध में माइफोर स्वैप का उपयोग करने की अनुमति दी गई।

6.42 रेपो बाजार को 1992 की अनियमिततायों के कारण गहरा धक्का लगा। प्रतिभूति बाजार की अनियमितताओं के संदर्भ में गठित जानकीरामन समिति ने यह रिपोर्ट दी थी कि रेपो के लिए फलता-फूलता बाजार उपलब्ध है तथा वस्तुतः न केवल बैंकों ने, बल्कि मुद्रा बाजार के सभी थोक सहभागियों ने व्यापक रूप से रेपो लेनदेनों का उपयोग किया है। भले ही उसके उपयोग पर स्पष्टतः प्रतिबंध लगा हो। इन अनियमितताओं का पता लगने के बाद रिज़र्व बैंक ने तैयार वायदा लेनदेनों पर रोक लगा दी तथा बैंकों पर सरकारी दिनांकित प्रतिभूतियों तथा अनुमोदित/ न्यासी प्रतिभूतियों में रेपो लेनदेन करने पर 22 जून 1992 से प्रतिबंध लगा दिया। तथापि खजाना बिलों की रेपो को इस प्रतिबंध से छूट दी गई। खजाना बिलों के लेनदेनों सहित दोहरे तैयार वायदा लेनदेनों पर भी कठोर प्रतिबंध लगा दिया गया तथा यह पाबंदी वित्तीय संस्थाओं पर लगा दी गई। जस्टिस वरियावा का निर्णय भारत में रेपो बाजार के विकास के संदर्भ में अत्यधिक महत्वपूर्ण था, क्योंकि इसने यह निर्णय दिया कि बैंकों तथा अन्य संस्थाओं द्वारा किए गए सभी रेपो लेनदेन अवैध और शून्य थे क्योंकि प्रतिभूति संविदा विनियमन अधिनियम (एससीआरए) 1956 की धारा 16 तथा सरकार की दिनांक 27 जून 1969 की अधिसूचना के अनुसार उन पर प्रतिबंध लगा हुआ है।[3] रेपो लेनदेनों को कानूनी रूप से सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक को इस मुद्दे पर बैंकों तथा रिज़र्व बैंक द्वारा आवश्यक समझी गयी संस्थाओं द्वारा उक्त अधिसूचना में निहित पाबंदी से छूट दिए जाने के लिए सरकार से बात करनी पड़ी। उक्त अधिसूचना को संशोधित करते हुए जिसमें प्रतिभूतियों में वायदा लेनदेनों पर पाबंदी लगाई गई थी, सरकार ने अधिसूचनाएं जारी कीं, जिनकी बदौलत बैंकिंग कंपनियों, सहकारी बैंकों, प्राथमिक व्यापारियों (नाम देते हुए तथा अनुषंगी व्यापारियों (नाम देते हुए) को यह अनुमति दी गई कि वे निर्दिष्ट प्रतिभूतियों में तैयार वायदा लेनदेन कर सकते हैं बशर्ते, इन लेनदेनों का निपटान लोक ऋण कार्यालय, मुंबई में रखे गए एसजीएल खातों के माध्यम से किया जाए। इसके अलावा, केंद्र सरकार द्वारा अधिसूचित गैर बैंक संस्थाओं को केवल रिवर्स रिपो करने की अनुमति दी गई।

6.43 1999 से रेपो बाजार में फिम्मडा की सहायता से सहभागियों तथा लिखतों को व्यापक बनाकर, संस्थाओं का विकास करके तथा लेनदेन और लेखांकन की परंपराओं में एकरूपता लाकर अनेक सुधार किए गए। रेपो परिचालनों को दक्ष बनाए तथा पर्याप्त सुरक्षोपायों के साथ भारतीय समाशोधन निगम लि. का गठन किया गया। रेपो बाजार में कुल लेनदेन ने

[3] रिपर्चेज एग्रीमेंट (पुनर्खरीद करार) रेपो संबंधी रिपोर्ट, भारिबैंक 6 अगस्त 1999

विभिन्न कारकों जैसे मांग/सूचना, मुद्रा लेनदनों से संबंधित पात्र बाजार सहभागियों की संख्या पर लगाई गई सीमाएं, सुपुर्दगी बनाम भुगतान II को लागू करना, कुछ अवधियों के दौरान मांग दर से भी नीचे चल रही रेपो और बाजार रेपो दरों को रोल ओवर की अनुमति देना। मुद्रा तथा सरकारी प्रतिभूति बाजारों से संबंधित तकनीकी परामर्शदात्री समिति (टीएसी) के सलाह के आधार पर 23 फरवरी 2003 से सुपुर्दगी बनाम भुगतान तथा पारदर्शिता सुनिश्चित करते हुए उपयुक्त सुरक्षोपायों के साथ गैर एसजीएल खाता धारकों को चुनिंदा श्रेणी के लिए भी रेपो पात्रता को बढ़ा दिया गया। साथ ही 11 मई 2005 से मार्केट रेपो सुविधा में सहभागिता बढ़ाकर कुछ पात्रता मानदंडों तथा सुरक्षापायों के साथ गैर अनुसूचित शहरी सहकारी बैंकों तथा अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों के पास गिल्ट खाता रखने वाली कंपनियों को भी दे दी गई। प्रतिभूतियों की जमानत पर उधार लेने तथा देने संबंधी दायित्व (सीबीएलओ) भी मात्राओं में तेज वृद्धि के साथ मुद्रा बाजार में उभरती लिखत के रूप में अब सामने आया है। सीबीएलओ भारत में अनोखी लिखत है। यह सीसीआइएल द्वारा जनवरी 2003 में उन गैर बैंक सहभागियों के लिए शुरू की गई थी जो या तो अंतरबैंक मांग मुद्रा में से निकल गए थे या जिन्हें इस बाजार में सीमित पैठ दी गई थी, बड़े-बड़े बाजार सहभागियों के चलते उपयुक्त क्वोटा नहीं प्राप्त कर पाते थे।

6.44 भारत में वाणिज्यिक पत्र रिजर्व बैंक द्वारा निर्दिष्ट शर्तों के अनुसार अच्छी साख दर वाली कंपनियों तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा जारी किए जाते हैं। पिछले कुछ वर्षों में वाणिज्यिक पत्र जारी करने की इन शर्तों में काफी छूटें दी गई हैं। बैंक वाणिज्यिक पत्रों में प्रमुख निवेशकर्ता हैं। बैंकिंग प्रणाली में चलनिधि तथा सीपी की दरों और बैंकों की मुख्य उधार की दरों के बीच का अंतर भारत में सीपीबाजार के मुख्य प्रेरक रहे हैं, कभी-कभी बैंकों ने मांग मुद्रा बाजार से उधार लेकर तथा सीपी बाजार में उधार देकर अंतरपणन किया है। क्योंकि अंतरबैंक मांग दरें अक्सर सीपी की दर से निम्न हुआ करती हैं। भारत में कंपनी जगत ने जब भी मुद्रा बाजार की दरें बैंकों के मुख्य उधार दरों (पीएलआर) से निम्न रही हैं, बैंकों से उधार लेकर सीपी जारी करने को वरीयता दी है। भारत में सीपी के लिए सक्रिय द्वितीय बाजार नहीं उभर सका क्योंकि यहां निवेशक लिखतों को परिपक्वता तक रखने को वरीयता देते हैं, जिसका कारण है उच्चतर जोखिम समायोजनागत प्रतिलाभ तथा विभिन्न निवेशकों तथा राज्यों के बीच स्टाम्प ड्यूटी में अंतर का होना।

6.45 सीपी बाजार को सक्रिय करने के लिए किए गए महत्वपूर्ण उपाय थे - अक्तूबर 1997 में, सीपी को नकदी ऋण सीमाओं से असंबद्ध करना, तथा अक्तूबर 2000 में सीपी का अपने आप में अलग लिखत के रूप में रूपांतरण तथा सीपी का लेनदेन डिमेट फार्म में करना, जिससे 1 मार्च 2004 से लनदेन की लागत तथा स्टैम्प ड्यूटी को कम करने में सहायता मिली। गैर एसएलआर ऋण प्रतिभूतियों पर रिजर्व बैंक के मार्गदर्शी दिशा-निदेशों के कारण परस्पर निधियों के भारी निवेश हित, तथा सार्वजनिक जमाराशियों का संग्रह करने से पट्टेदायी और वित्तीय कंपनियों को चरणबद्ध रूप में हटाने की शुरू की गई नीति ने भी सीपी बाजार को बढ़ा दिया ।

6.46 1989 से जमा प्रमाण पत्र (सीडी) के शुरू किए जाने से लेकर सीडी बाजार को नमनीयता और गहनता प्रदान करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक ने अनेक पहलें की हैं। सीडी के लिए भारत में द्वितीयक बाजार का विकास नहीं हो सका। इसका कारण है कि धारकों द्वारा लिखतों को परिपक्व होने की अवधि तक रखना क्योंकि अन्य खुदरा जमाराशियों की तुलना में उस पर उच्च ब्याज दर दी गई थीं, सीडी की नमनीयता में इन वर्षों के दौरान सुधार हुआ है। जिसके कारण थे - न्यूनतम अवरुद्ध अवधि में कमी करना, जारी करने की राशि में कमी लाना तथा डिमेट रूप को वरीयता देना।

6.47 हाल की अवधि में, अन्य बातों के साथ-साथ मुद्रा बाजार संबंधी तकनीकी समूह की सिफारिशों के अनुसरण में रिज़र्व बैंक का मुख्य ध्यान तथा नीतिगत बल मुद्रा बाजार में प्रतिभूतिकृत उधार बाजार को सुधारने, रुपया आय वक्र में सुधार लाने, पारदर्शिता सुनिश्चित करने तथा बेहतर मूल्य की खोज, बेहतर जोखिम प्रबंधन के अवसर प्रदान करने तथा मौद्रिक परिचालनों को सुदृढ़ करने पर रहा है। निकट भविष्य में, मुद्रा बाजार के अनेक ऐसे क्षेत्र हैं, जिन पर रिज़र्व बैंक को ध्यान केंद्रित करने की जरूरत है। हालांकि रेपो एक प्रमुख मुद्रा बाजार की लिखत के रूप में उभरकर आई है, परंतु एफआरबीएम को लागू करने से सरकारी प्रतिभूतियों के कम होने की संभावना है, जो प्रतिभूतियों के समूह को व्यापक आधार प्रदान करने की मांग करती है। जो रेपो तथा सीबीएलओ बाजारों के लिए जमानत का काम कर सके। ओटीसी डेरिवेटिव्स से जुड़े भी कई मुद्दे हैं, जैसे ऐसी संविदाओं की वैधता की अपस्पष्टता, निवल राशि निकालने संबंधी कानूनों का न होना आदि। इस संदर्भ में, ओटीसी डेरिवेटिव्स को कानूनी स्पष्टता प्रदान करने के लिए रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 में संशोधन महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि इससे बाजार का और भी विकास हो सकता है।

6.48 मुद्रा बाजार का व्यवस्थित विकास करने की दृष्टि से विभिन्न बेंचमार्कों के आधार पर अलग-अलग श्रेणी के सहभागियों के लिए मांग मुद्रा बाजार में उधार लेने और उधार देने के लिए विवेकसम्मत सीमाएं निर्धारित की गई हैं। अलग-अलग बेंचमार्क से मानक बेंचमार्क की ओर जाने की संभाव्यता का पता लगाने की जरूरत है। साथ ही, आस्ति देयता प्रबंध ढांचे में तथा जोखिम प्रबंध प्रणालियों में सुधार होने के फलस्वरूप मांग/सूचना मुद्रा बाजार में जैसा कि तुलनपत्र की संरचना द्वारा अपेक्षित है, बैंकों और प्राथमिक व्यापारियों को अधिक लचीलापन प्रदान करने की संभावना की भी जांच की जानी है।

मुद्रा बाजार की गतिविधि

6.49 मांग/नोटिस मुद्रा बाजार जो कई दशकों से भारतीय मुद्रा बाजार का बुनियादी घटक था, धीरे-धीरे अन्य लिखतों जैसे आइआरएस/एफआरए/रेपो, सीपी, सीबीएओ तथा सीडी को रास्ता देता रहा है (सारणी 6.1)। मांग मुद्रा बाजार में दैनिक औसत कुल कारोबार जो 2001-02 में रु. 35,144 करोड़ रुपए का हुआ करता था, 2004-05 में घटकर लगभग आधा 14,170 करोड़ रुपए का रह गया, जो अन्य बातों के साथ रिज़र्व बैंक की ओर से यह सचेत प्रयास रहा है कि मांग /सूचना मुद्रा बाजार से पूर्णतः अंतरबैंक बाजार की ओर बढ़ा जाए।

6.50 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों से, मांग दरें, प्रणाली में विद्यमान चलनिधि की स्थितियों के आधार पर निर्भर रहते हुए काफी कुछ घटती बढ़ती रहीं हैं। औसत मांग मुद्रा जो 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में 1993-94 के 7 प्रतिशत से लेकर 1995-96 में 17.7 प्रतिशत के दायरे में घटती बढ़ती रही हैं, 2000-01 से 2004-05 के दौरान वह 4.6 प्रतिशत से 9.2 प्रतिशत के सीमित दायरे में घटती बढ़ती रही जो अन्य बातों के साथ-साथ प्रणाली में विद्यमान चलनिधि की सुविधाजनक स्थिति तथा एलएएफ के माध्यम से बैंक की चलनिधि समायोजन सुविधा की सफलता को दर्शाती है। समग्र चलनिधि, सरकार के उधार लेने के कार्यक्रम, खातेदार ऋण में वृद्धि, पूंजी प्रवाह, कर बहिर्गम, मौसमी कारक (भारी करेंसी आहरण) तथा रिज़र्व बैंक के बाजार परिचालन (खुले बाजार के परिचालन), रेपो, रिवर्स रेपो, पुनर्वित्त/ स्थायी सुविधाएं, नकदी प्रारक्षित अनुपात) जैसे अनेक कारकों ने मांग मुद्रा बाजार को प्रभावित किया। जहां ऐतिहासिक रूप से सांविधिक पूर्वक्रय (सीआरआर/ एसएलआर) अपेक्षाएं तथा आरक्षित राशि रखने संबंधी अवधि वे प्रमुख घटक थे जिन्होंने भारत में मांग मुद्रा दरों को प्रभावित किया, वहां 1990 के बाद के दशक में अर्थव्यवस्था को क्रमिक रूप से खोलने से तथा वित्तीय बाजारों के विभिन्न घटकों के समेकन के कारण मांग की दरों ने विदेशी मुद्रा, सरकारी प्रतिभूतियों तथा कभी-कभी पूंजी बाजार की गतिविधियों से प्रभावित होने की प्रवृत्ति दर्शाई है।

6.51 मीयादी मुद्रा बाजार, जो 14 दिनों से अधिक के लिए अल्पावधिक निधियों के लिए बाजार है, गत अवधि में अनेक उपायों को किए जाने के बावजूद विकसित नहीं हो पाया है। इस तथ्य के बावजूद कि बैंकों को 19 अप्रैल 1997 से अंतरबैंक देयताओं पर सीआरआर/ एसएलआर रखने से छूट दे दी गई थी, मीयादी मुद्रा बाजार में औसत दैनिक कुल कारोबार में पर्याप्त वृद्धि नहीं हुई है।

6.52 बैंक, विशेषकर उस अवधि में जब ऋण की मांग उच्च होती है, जमा प्रमाणपत्र जारी करते हैं। सीडी जारी करने की मात्रा में 1993 से काफी उतार-चढ़ाव रहा है। चलनिधि की स्थितियों को कठोर बनाने तथा बैंक ऋण के लिए बढ़ी हुई मांग के कारण सीडी की मांग 2005 के दौरान तेजी से बढ़ी (9 दिसंबर 2005 को बकाया राशि रु. 30,445 करोड़ की थी (चार्ट VI.1)

चार्ट VI.1 : जमा प्रमाणपत्र

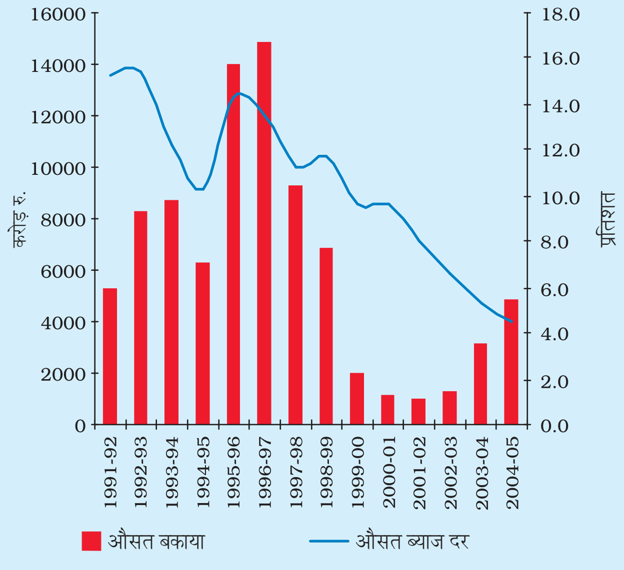

सारणी 6.1 : मुद्रा बाजार की गतिविधि

(करोड़ रु.)

वर्ष	औसत दैनिक कुल कारोबार			बकाया राशि*			वायदा दर करार/ ब्याज दर स्वैप (अनुमानित राशि)	वाणिज्यिक बैंकों द्वारा पुनर्भुनाए गए वाणिज्यिक बिल
	मांग मुद्रा बाजार	मीयादी मुद्रा बाजार	रेपो बाजार (एलएएफ से बाहर)	जमानती उधार तथा उधार देने संबंधी देयताएं	वाणिज्यिक पत्र	जमा प्रमाणपत्र		
1	2	3	4	5	6	7	8	9
1999-00	23,161	–	6,895	–	7,014	1,908	–	–
2000-01	30,423	–	10,500	–	6,751	1,199	18,014	–
2001-02	35,144	195	30,161	–	7,927	949	50,503	–
2002-03	29,421	341	46,960	30	8,268	1,224	1,50,039	417
2003-04	17,191	519	10,435	515	7,835	3,212	3,74,631	515
2004-05	14,170	526	17,135	6,780	11,723	6,052	8,12,500	355

* मार्च के अंत में

स्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकीय पुस्तिका, वार्षिक रिपोर्ट भारिबैंक, विभिन्न अंक ।

चार्ट VI.2 क : वाणिज्यिक पत्र

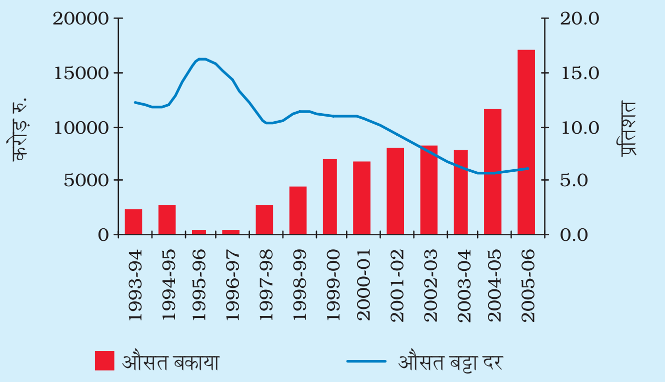

चार्ट VI. 2ख : जमा प्रमाणपत्र / मूल उधार दर का औसत बट्टा दर

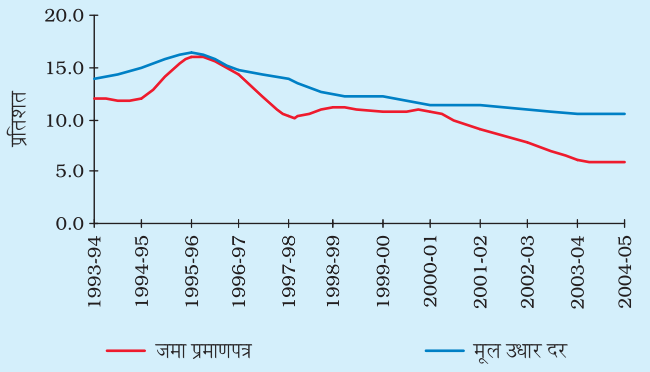

6.53 जमा प्रमाणपत्रों (सीडी) में निरंतर वृद्धि होने के कई कारण रहे हैं, जैसे गैर एसएलआर ऋण प्रतिभूतियों में बैंकों द्वारा निवेश पर रिज़र्व बैंक की संशोधित गाइड लाइन्स, 1 मार्च 2004 से सीडी पर स्टाम्प ड्यूटी में कमी, स्रोत पर कर की कटौती वापस लेना, वैकल्पिक प्रतिस्पर्धी लिखतों जैसे सावधि जमा की तुलना में सीडी के अंतर्गत जमाराशियों का समय- पूर्व आहरण की सुविधा समाप्त करना, तथा द्वितीयक बाजार की लेनदेन के लिए बेहतर अवसर/मांग की ओर देखें तो, भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सबी) द्वारा पारस्परिक निधियों (एमएफ) पर अपनी निधियों को बैंक जमाराशियों के रूप में जमा करने पर पाबंदी लगाना तथा पारस्परिक निधियों के पास निधियों की बेहतर स्थिति ने सीडी बाजार को प्रोत्साहन प्रदान किया। सीडी बाजार में एक प्रोत्साहनपरक गतिविधि यह है कि कुछ सर्वोत्तम साख दर वाले बैंक अपनी सीडी की रेटिंग करा रहे हैं ताकि वे बाजार में बेहतर पहुंच प्राप्त कर सकें हालांकि वर्तमान मार्गदर्शी दिशानिदेशों के अनुसार यह रेटिंग कराना अनिवार्य नहीं है।

6.54 कंपनियों द्वारा सीपी जारी करने की परंपरा भी 2003-04 से तेजी से बढ़ी है। सीपी की बकाया राशि मार्च 1993 के अंत के रु. 577 करोड़ से तेजी से बढ़कर मार्च 1998 के अंत तक रु. 1500 करोड़ तथा दिसंबर 2005 के अंत तक रु. 17,180 करोड़ की हो गई।

6.55 यह देखा गया है कि कंपनियां आम तौर पर उस समय सीपी जारी करती हैं जब मुद्रा बाजार की दरें बैंकों की मूल उधार दरों (पीएलआर) से सामान्यतया निम्न होती हैं। यह उनकी मात्रा की घटबढ़ से झलकता है (चार्ट VI.2 क तथा VI.2 ख।

6.56 जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, भारतीय मुद्रा बाजार में एक उल्लेखनीय गतिविधि रुपया ब्याज दर स्वैप/ वायदा दर करारों की 1999 में शुरुआत होने की रही है । ताकि बाजार के सहभागी अपने जोखिमों से सुरक्षा प्राप्त कर सकें तथा रुपया आयवक्र के उदय को भी सुविधाजनक बना सकें। इन लिखतों की लोकप्रियता इस तथ्य से देखी जा सकती है कि छोटी-सी अवधि में ही बाजार में इनकी मात्रा (अनुमानित मूलधन की राशि) मार्च 2001 के अंत की रु. 18,014 करोड़ से तेजी से बढ़कर सितंबर 2005 में रु. 13,15,306 करोड़ की हो गई।

6.57 रेपो बाजार (बाजार रेपो) मुद्रा बाजार का दूसरा घटक है जो उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है, क्योंकि यह अल्पावधिक निधियों को जमा करने की एक महत्वपूर्ण वैकल्पिक लिखत के रूप में उभरी है। जो पूर्णतः अंतर बैंक मांग/सूचना मुद्रा लागत की ओर बढ़ रही है। कुछ तीव्र उतार-चढ़ाव के बावजूद रेपो बाजार में औसत दैनिक कुल कारोबार रेपो बाजार में तेजी से बढ़ा है, विशेषकर 2001-02 से और 2002-03 में यह सर्वोच्च स्तर पर पहुंच गया। उसके बाद इसमें गिरावट आई और 2004-05 में यह रु. 17,135 करोड़ का रहा।

6.58 सारांश में, हाल के वर्षों में, रिज़र्व बैंक का दृष्टिकोण मुद्रा बाजार के विभिन्न घटकों के संतुलित विकास को तेज करना, नए लिखतों को शुरू करना, तथा वर्तमान लिखतों को अधिक नमनीय बनाना, गैर प्रतिभूतिकृत ऋणों पर सहभागियों की निर्भरता को कम करना, अल्पावधि प्रतिभूतियों में मूल्य (ब्याज) का पता लगाना, तथा भुगतान प्रणाली की बुनियादी संरचना को उन्नत करना रहा है। तदनुसार, रिज़र्व बैंक की रणनीति पूर्णतः मांग/सूचना मुद्रा बाजार विकसित करने; पूर्ण चलनिधि समायोजन सुविधा शुरू करने, बुनियादी संरचना का विकास करने, पारदर्शिता को प्रोन्नत करने, तथा गैर बैंक सहभागियों के लिए लिखतों के संबंध में विभिन्न उपाय शुरू करने पर ध्यान केंद्रित करने की रही है। वर्षों से रिज़र्व बैंक द्वारा की गई विभिन्न पहलों के कारण मुद्रा बाजार में गहनता तथा चलनिधि में काफी वृद्धि हुई है।

सरकारी प्रतिभूति बाजार

6.59 भारत में सरकारी प्रतिभूति बाजार समग्र ऋण बाजार का काफी बड़ा भाग बनता है। इस बाजार की ब्याज दरें वित्तीय बाजारों के अन्य घटकों के लिए बेंचमार्क उपलब्ध कराती है। ऐतिहासिक रूप से

भारत में सरकारी प्रतिभूति बाजार में प्रोत्साहन भारी सरकारी उधार लेने की अपेक्षाओं से प्राप्त हुआ है। जबकि 1990 के दशक में इसका अतिरिक्त कारण था - बढ़ा हुआ पूंजीगत प्रवाह तथा इसे निष्प्रभावी करने की जरूरत। रिज़र्व बैंक ने जब भी चाहा मौद्रिक विस्तार को निष्प्रभावी करने के लिए अपने संविभाग से विपणन योग्य देशी पात्र बांडों का उपयोग किया ।

कानूनी आधार

6.60 सरकारी प्रतिभूतियों में रिज़र्व बैंक के परिचालन को कानूनी आधार भारतीय रिज़र्व अधिनियम, 1934 की धारा 20, 21 तथा 21 क द्वारा प्रदान किया गया है । जिसके अनुसार रिज़र्व बैंक को लोक ऋण के प्रबंधन तथा केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के नए ऋण जारी करने के कार्य सौंपे गए हैं। लोक ऋण अधिनियम, 1944 के प्रावधान भी रिज़र्व बैंक पर लोक ऋण के प्रबंधन का उत्तरदायित्व डालते हैं। इन कार्यों में नए ऋण जारी करना, प्रत्येक छमाही में ब्याज अदा करना, रुपया ऋणों को चुकाना तथा ऋण प्रमाणपत्रों से संबंधित सभी मामले और ऋण धारिताओं का पंजीकरण शामिल है।

6.61 रिज़र्व बैंक प्रतिभूतियों के मूल्यों और आय को प्रभावित करके बाजार की स्थितियों को व्यवस्थित करने के लिए गिल्ट बाजार में सक्रिय रूप से परिचालित करता है। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 17 (8) के अंतर्गत रिज़र्व बैंक को केंद्र सरकार या किसी राज्य सरकार की किसी भी मीयाद की तथा केंद्रीय बोर्ड की सिफ़ारिश पर केंद्र सरकार द्वारा निर्दिष्ट किसी स्थानीय प्राधिकरण की प्रतिभूतियों को खरीद और बेच सकता है। वस्तुतः यह भाग खुले बाजार परिचालनों के लिए कानूनी स्थापना करने का अधिकार देता है तथापि वर्तमान में रिज़र्व बैंक केवल केंद्र सरकार द्वारा जारी प्रतिभूतियों का लेनदेन करता है, न कि राज्य सरकारों तथा स्थानीय प्राधिकारियों द्वारा जारी प्रतिभूतियों का । रिज़र्व बैंक को सरकारी प्रतिभूति बाजार पर विनियामक शक्तियां प्रतिभूति संविदा (विनियमन) अधिनियम, 1956 की धारा 16 से प्राप्त होती हैं, जिसके अंतर्गत सरकार ने अपने द्वारा प्रयोग की जानेवाली शक्तियां रिज़र्व बैंक को प्रत्यायोजित कर दी हैं।

सुधार-पूर्व अवधि (1930 दशक से 1980 के दशक तक)

6.62 एक गहन तथा तरल सरकारी प्रतिभूति बाजार, विशेषकर, 1950 के बाद के दशक से, नहीं उभर सका, मुख्यतः सरकार की भारी उधार राशियां लेने की आवश्यकताओं के कारण तथा सरकारी प्रतिभूतियों पर कृत्रिम रूप से निम्न कूपन दरें होने के कारण, जिसका प्रणाली में वित्तीय आस्तियों की संपूर्ण आय संरचना पर प्रभाव पड़ा, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा केंद्र सरकार के बजट घाटे का वित्त पोषण तदर्थ खज़ाना बिलों के माध्यम से स्वचालित मौद्रीकरण की व्यवस्था के अंतर्गत किया जाता था। सरकारी बांडों की भारी आपूर्ति को इसकी नियंत्रित दरों पर खपाना सुनिश्चित करने के लिए रिज़र्व बैंक ने न्यूनतम सांविधिक चलनिधि अनुपात (एसएलआर) बनाए रखना अनिवार्य कर दिया जिसके द्वारा वाणिज्यिक बैंकों को अपनी देयताओं के काफी बड़े भाग को बाजार की ब्याज दरों से निम्न दरों पर सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश के लिए एक तरह उठाकर रख देना पड़ता था। इस बाजार में भी अनेक प्रकार की विशेषताएं होती थीं जैसे - वाउचर ट्रेडिंग, स्विच कोटा, नकदी खरीद तथा पृथक से खरीद बिक्री की सूचियां ।

6.63 ऐतिहासिक रूप से श्रेष्ठ प्रतिभूतियों में निवेशकों में अलग-अलग व्यक्ति तथा सस्थाएं शामिल होती थी। कुछ समय बाद, श्रेष्ठ प्रतिभूति बाजार ने बंधक बाजार का स्वरूप ले लिया जिसमें, वित्तीय संस्थाएं प्रमुख अभिदानकर्ता हो गईं। बैंककारी विनियमन अधिनियम 1949 की धारा 24 के अंतर्गत बैंकों को 16 मार्च 1949 से अपनी कुल मांग और मीयादी देयताओं की न्यूनतम 20 प्रतिशत तक तरल आस्तियां नकदी, स्वर्ण या भार-रहित अनुमोदित प्रतिभूतियों के रूप में रखनी पड़ती थीं। एसएलआर उस कार्रवाई का परिणाम था जिसके अंतर्गत बैंकों को अपनी सरकारी प्रतिभूति धारिताओं को बेचकर परिवर्ती प्रारक्षित अपेक्षाओं के प्रभाव से मुक्ति पाने से रोकना था। इस अधिनियम में बाद में 1962 में संशोधन किया गया जिसमें सभी बैंकों से यह अपेक्षा की गई कि वे 16 सितंबर 1964 से भारत में अपनी कुल मांग और मीयादी देयताओं का कम से कम 25 प्रतिशत की तरल आस्तियां रखेंगे। 1970 से एसएलआर को क्रमिक रूप से बढ़ाया गया जिसका उद्देश्य बैंक ऋण में विस्तारवादी प्रवृत्ति को रोकना तथा बैंकों के सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश को बढ़ाना था, विशेषकर पंचवर्षीय योजनाओं के वित्त पोषण के संदर्भ में । क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों तथा सहकारी बैंकों को यह अनुमति दी गई कि वे न्यूनतम 25 प्रतिशत के स्तर पर एसएलआर रख सकते हैं। यह एसएलआर बारंबार बढ़ाया गया और 1970 के दशक में बढ़ाकर दिसंबर 1978 में 34 प्रतिशत, अक्तूबर 1981 में 35 प्रतिशत एवं सितंबर 1990 में 38.5 प्रतिशत कर दिया गया ।

6.64 सुधार-पूर्व अवधि के दौरान भारत में वित्तीय बाजार की संरचना का एक पहलू था - सरकारी तथा अर्ध सरकारी प्रतिभूतियों के लिए बाजार की संकीर्णता। इसका तात्पर्य था कि चलनिधि को नियंत्रित करने के लिए सरकारी प्रतिभूतियों में खुले बाजार के परिचालनों का उपयोग करने का सीमित अवसर । अतः इस क्षेत्र में रिज़र्व बैंक के परिचालनों को सरकारी प्रतिभूति बाजार में मुख्यतः नियंत्रित स्थिति को सुनिश्चित बनाए रखने की ओर मोड़ दिया गया ताकि सार्वजनिक क्षेत्र में एक और

केंद्र सरकार, राज्य सरकारों तथा विभिन्न अन्य उधारकर्ताओं को तथा दूसरी ओर सरकारी क्षेत्र तथा शेष अर्थव्यवस्था को उपलब्ध संसाधनों का तर्कसंमत आबंटन हो सके।

6.65 सरकारी प्रतिभूतियों पर आय के स्रोत पर कर की कटौती (टीडीएस) की परंपरा ने सरकारी प्रतिभूतियों की वाउचर-ट्रेडिंग, तथा बाजार में मूल्यों में विकृति करने की परंपरा शुरू कर दी। इस परंपरा के चलने के कारण रिज़र्व बैंक के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह स्विच लेनदेन के लिए कोटा निर्धारित करें, ब्याज की देय तारीख से एक माह पहले विशेष प्रतिभूति में ट्रेडिंग को रोक दें आदि जिसने कुछ सीमा तक बाजार में डीलरों की आजादी पर पाबंदी लगा दी। इसके अलावा, इसने एक ऐसी स्थिति पैदा कर दी जिसमें रिज़र्व बैंक को इसके खुले बाजार के परिचालनों पर सीमा लगानी पड़ी। सरकारी प्रतिभूतियों में अंतर बैंक लेनदन को प्रोत्साहित करने के लिए बिना किसी सीमा के त्रिकोणीय स्विचों (अंतरणों) की अनुमति दी गई तथा अनुमोदित ब्रोकरों को यह अनुमति दी गई कि वे ऐसी संविदाएं प्रस्तुत कर सकते हैं। तथापि, वास्तव में, इन त्रिकोणीय स्विचों का उपयोग बैंकर ही कर रहे थे, अधिकांशतः अपने लिए आय कर वाउचर का नाम लेने के लिए। 1981 में रिज़र्व बैंक द्वारा स्थापित एक आंतरिक दल ने यह सिफारिश की थी कि ऐसी ट्रेडिंग के लिए प्रोत्साहन को बंद करके इस ट्रेडिंग को रोकने के लिए उपाय किए जाने चाहिए। 1997 में सरकारी प्रतिभूति बाजार में स्रोत पर कर की कटौती (टीडीएस) को हटा देने से यह प्रथा समाप्त हुई तथा इसने ऋण बाजार में कर-सुधारों की शुरुआत की घोषणा कर दी।

6.66 प्रारंभ में अपनायी गई नीति का उद्देश्य खरीद और बिक्री के लेनदेनों के लिए दो अलग-अलग सूचियां बनाना था, और इन सूचियों में अलग- अलग प्रतिभूतियों को शामिल किया गया । एक निश्चित राशि से कम राशि की प्रतिभूतियों का स्टॉक प्रतिभूतियों की उस सूची में रखा गया, जो खरीदी जाने के लिए थीं तथा उस विनिर्दिष्ट राशि से अधिक राशि की प्रतिभूतियों के स्टाक को बिक्री की सूची में रखा गया। तीन साल के भीतर परिपक्व हो रहे ऋण को उनके स्टॉक की स्थिति की परवाह किए बिना खरीदी जाने वाली सूची में रखा गया ताकि रिज़र्व बैंक मीयाद पूरी होनेवाले ऋणों का रूपांतरण कर सके। श्रेष्ठ प्रतिभूति बाजार के डीलरों को अपने संविभागों का प्रबंध अधिक लचीले रूप में कर देने के लिए अधिक आजादी देने के विचार से यह आवश्यक समझा गया कि ऐसी परिस्थितियां निर्मित की जाएं जिनमें, निवेशक अपनी इच्छा की प्रतिभूतियां खरीद और बेच सके। द्वितीयक बाजार की स्थिति को देखते हुए इसके लिए अवसर सीमित ही थे। अतः रिज़र्व बैंक को यह उत्तरदायित्व लेना पड़ा कि वह विभिन्न निवेशक समूहों से आने वाली अलग-अलग प्रतिभूतियों की मांग को पूरा करे। इस उद्देश्य के लिए यह आवश्यक हो गया कि खरीद और बिक्री के लिए अलग-अलग सूचियां रखने की परंपरा को समाप्त कर दिया जाए और तदनुसार रिज़र्व बैंक उन सभी प्रतिभूतियों को खरीदने और बेचने के लिए तैयार हुआ जिन्हें सामान्यतः खुले बाजार के परिचालनों के माध्यम से खरीदा बेचा जाता था।

सुधारोत्तर अवधि

6.67 1990 के बाद का दशक सरकारी प्रतिभूति बाजार के विकास की एक महत्वपूर्ण अवधि रही, जिसमें लिखतों, संस्थाओं तथा प्रक्रियाओं की दृष्टि से व्यापक सुधार किए गए। इस बाजार में एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी। जून 1992 में दिनांकित प्रतिभूतियों के लिए नीलामी प्रणाली की शुरुआत जिसमें सरकारी प्रतिभूतियों के लिए बाजार निर्धारित ब्याज दरों की ओर बढ़ने की प्रवृत्ति स्थापित की । 1990 के दशक से पूर्व प्लेन बनीला (बिना किसी शर्त के) निश्चित कूपन बांड के साथ अधिकांश सरकारी बांड जारी किए जाते थे। सरकार के ऋण प्रबंधक के रूप में रिज़र्व बैंक के लिए एक बाध्यकारी उद्देश्य था सरकारी प्रतिभूतियों में ऐसी नई विशेषताएं लाना जो सरकार की वरीयताओं तथा बाजार दोनों के लिए बेहतर हो तथा साथ ही विकसित होती हुए बाजार की परिस्थितियों के भी अनुकूल हों। भारत में सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री पूर्व घोषित / खुली बिक्री दोनों आधारों पर की गई। नीलामियां भी विभेदकारी । विभिन्न दरों की तथा सीलबंद बोली के प्रकार की होती थीं। ''जो जीता यह उसका दुर्भाग्य'' जो कि विविध मूल्य की नीलामियों से जुड़ा हुआ था, विशेषकर 91 दिवसीय खजाना बिलों की समस्या को समाप्त करने तथा बाजार सहभागियों को व्यापक बनाने की दृष्टि से, इस संबंध में एक समान मूल्य वाली नीलामी पद्धति शुरू की गई। साथ ही साथ, भारी उधार कार्यक्रमों के प्रतिकूल प्रभाव को कम करने की दृष्टि से रिज़र्व बैंक सरकारी प्रतिभूतियों का निजी स्थानन स्वीकार करता रहा है, तथा उन्हें उस समय जब बाजार की ब्याज दरें अनुकूल होने की आशा हो, उन्हें बाजार में जारी करता रहा है। बाजार का विकास करने के उपायों के एक भाग के रूप में, विभिन्न प्रकार के खजाना बिल जैसे - 14 दिवसीय, 91 दिवसीय, 182 दिवसीय, 364 दिवसीय परिपक्वता वाले खज़ाना बिल शुरू किए गए । दीर्घावधि परिपक्वतावाली। मुख्य लिखतें भी शुरू की गई जिनकी मुख्य विशेषता थी 1990 के बाद के दशक के दौरान विभिन्न जोखिमों से सुरक्षा प्राप्त करना तथा निवेशक की वरीयता के अनुकूल होना। दीर्घावधि बांडों के संदर्भ में नवोन्मेष भी शुरू किए गए, जैसे जीरो कूपन बांड (जनवरी 1994), सचल दर बांड (1995-96) तथा पूंजी सूचकांक बांड (दिसंबर 1997) । कॉल और पुट आप्शंस वाले बांड भी जारी किए गए।

6.68 सुधार की अवधि में सरकारी प्रतिभूति बाजार में संस्थागत सुदृढ़ीकरण की दिशा में प्रमुख प्रयास किए गए। सरकारी प्रतिभूतियों के लिए द्वितीयक बाजार के विकास के लिए भारतीय प्रतिभूति लेनदेन

निगम (एसटीसीआई) की स्थापना मई 1994 में सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों तथा अखिल भारतीय वित्तीय संस्थाओं के साथ मिलकर रिज़र्व बैंक द्वारा संयुक्त रूप से की गई। वर्षों से जैसे ही बाजार उत्तरोत्तर रूप से विकास के उच्च स्तरों पर पहुंचा, रिज़र्व बैंक ने इस संस्था में अपनी धारिताओं को छोड़ दिया। दो तरफा भाव उद्धृत करने तथा बाजार का विकास करने के लिए मार्च 1996 में सरकारी प्रतिभूतियों में प्राथमिक व्यापारियों की प्रणाली भी शुरू की गई। जुलाई 1995 से सरकारी प्रतिभूतियों के लेनदेन में सुपुर्दगी बनाम भुगतान प्रणाली की शुरुआत की गई। पूर्णतः सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करने के लिए समर्पित पारस्परिक निधियों को प्रोत्साहित करने के लिए रिज़र्व बैंक ने चलनिधि समर्थन सुविधा पुनः शुरू की गई जो या तो केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों को सीधे या रिवर्स रेपो के माध्यम से खरीदने की प्रथा शुरू की गई। प्राथमिक व्यापारियों को सुरक्षा नेट या बाहर निकलने का रूट प्रदान करने की दृष्टि से, ताकि वे खजाना बिल बाजार में सक्रियतापूर्वक भाग ले सकें, रिज़र्व बैंक ने खुले बाजार के परिचालनों के माध्यम से, जिसमें पूर्णतः प्राथमिक व्यापारियों को ही जाने की अनुमति थी; फरवरी 2000 से शुरू की गई । तयशुदा लेनदेन प्रणाली (एनडीएस) 15 फरवरी 2002 से परिचालन में लाई गई जिसका उद्देश्य अन्य बातों के साथ-साथ केंद्र / राज्य सरकार की प्रतिभूतियों की प्राथमिक नीलामियों तथा खुले बाजार के परिचालनों / चलनिधि समायोजन सुविधा की नीलामियों के लिए ऑनलाइन इलेक्ट्रानिक रूप में बिडिंग (बोली लगाने) के लिए प्लेटफार्म उपलब्ध कराना था।

6.69 सरकारी प्रतिभूतियों में निवेशक आधार 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों से व्यापक हुआ है जिसमें अब वाणिज्यिक बैंक, सहकारी बैंक, बीमा कंपनियां, भविष्य निधियां, वित्तीय संस्थाएं (मीयादी ऋणदात्री संस्थाओं सहित), पारस्पारिक निधियां, गिल्ट फंड, प्राथमिक व्यापारी, गैर बैंक वित्तीय कंपनियां तथा कंपनी संस्थाएं शामिल हैं। प्रारंभ में रिज़र्व बैंक सरकारी प्रतिभूतियों को मुख्यतः सरकार के उधार लेने के कार्यक्रम का समर्थन करने के लिए तथा खुले बाजार के परिचालनों को चलाने के लिए रखता था। मुख्यतः एसएलआर के कारण बैंक सरकारी प्रतिभतियों में प्रमुख निवेशक रहे हैं। तथापि, हाल के वर्षों में यह देखा गया है कि बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों में सांविधिक अपेक्षाओं से कहीं अधिक की राशि निवेशित की हुई है, जिसका आंशिक कारण है कि इनमें प्रतिलाभ की दर तुलनात्मक रूप से आकर्षक है, तथा पूंजी पर्याप्तता अनुपात की दृष्टि से इन निवेशों पर जीरो जोखिम भारांक दिए जाने के कारण, तथा अंशतः इसलिए कि वाणिज्यिक ऋण की अपेक्षाकृत मंदी मांग है। सरकारी प्रतिभूति बाजार का आकार बड़ा है और बढ़ रहा है। यह इस बात से प्रमाणित हो जाता है कि केंद्र सरकार की बकाया दिनांकित प्रतिभूतियों का स्तर 31 मार्च 2005 को रु. 8,953 बिलियन या सघउ के 28.9 प्रतिशत बैठता है।

6.70 सरकारी प्रतिभूति बाजार की कार्य-पद्धति को सुधारने की दृष्टि से सरकारी प्रतिभूति बाजार में की गई पहलें हैं :- (i) मई 1997 में नकदी और ऋण प्रबंध समूह की स्थापना जिसमें रिज़र्व बैंक तथा सरकार के अधिकारी शामिल हैं। इसने सरकार के उधार कार्यक्रम को व्यवस्थित तथा तर्कसम्मत बना दिया है। क्योंकि यह कार्यक्रम वित्तीय बाजारों को अस्थिर किए बिना पूरे किए जा सके। (ii) सरकारी प्रतिभूतियों में नीलामियां करने की प्रक्रिया को प्रगामी रूप से उन्नत बनाया जा रहा है जिसमें मूल्य आधारित तथा आय आधारित दोनों नीलामी प्रणालियों को मिला दिया गया है, इससे चलनिधि में सुधार हुआ है, ऋण के लिए मीयाद की अवधि को बढ़ाकर, तथा बेंचमार्क के उभरने की प्रक्रिया को सुविधाजनक बनाया गया है (iii) प्राथमिक व्यापारियों की संख्या 1996 में 2 से बढ़ाकर 2005 मे 17 करके संस्थागत बुनियादी संरचना को सुदृढ़ करना, तथा उन पर पूंजी-पर्याप्तता तथा अन्य विवेकसम्मत मानदंड लागू करके उन्हें कार्य रूप में मजबूत बनाना, (iv) बैंकों के निवेश संविभाग में मूल्यांकन मानदंडों में परिवर्तन कर दिया गया है। तथा (v) रिज़र्व बैंक ने सरकारी प्रतिभूतियों के लिए (अक्तूबर 2000 से) आय वक्र की घोषणा करने की प्रणाली से हट कर अब उस दैनिक आधार पर फिम्मड़ा द्वारा कराया जाता है।

6.71 सरकारी प्रतिभूति बाजार की कार्य पद्धति को सुधारने के लिए अन्य कई उपाय भी किए गए हैं। 14 दिवसीय तथा 182 दिवसीय खजाना बिल वापस ले लिए गए तथा उसके समानांतर रूप में 91 दिवसीय खजाना बिलों की घाषित राशि को बढ़ा दिया गया। 182 दिवसीय खजाना बिल अप्रैल 2005 में शुरू किए गए। इलैक्ट्रानिक बिडिंग को सुविधाजनक बनाने, द्वितीयक बाजार की लेनदेन तथा निपटान के लिए तथा तत्काल सकल निपटान के आधार पर लेनदेनों पर सूचना प्रसारित करने के लिए तयशुदा लेनदेन प्रणाली फरवरी 2002 में शुरू की गई। रिज़र्व बैंक ने इस प्रयोजन के लिए लोक ऋण कार्यालय का स्वैचालीकरण शुरू किया। सरकारी प्रतिभूतियों, खजाना बिलों, रेपो, विदेशी मुद्रा विनिमय वाले सभी लेनदेनों में, प्रतिपक्षी (पार्टी) के रूप में कार्य करने के लिए सीसीआइएल स्थापित किया गया। संपूर्ण प्रणाली नेटवर्क वाले परिवेश में कार्य करेगी और भारतीय वित्तीय नेटवर्क (इनफिनेट) संप्रेषण के लिए आधार भूमि प्रदान करेगा। अगस्त 2005 में, एक इलैक्ट्रानिक आर्डर मैचिंग ट्रेडिंग प्रणाली को एनडीए में शामिल किया गया ताकि सरकारी प्रतिभूतियों में बिना नाम के द्वितीयक बाजार के लेनदेन किए जा सकें।

6.72 सरकारी प्रतिभूति बाजार में राजकोषीय दायित्व तथा बजट प्रबंधन (एफआरबीएम) के परिवेश में रिज़र्व बैंक के सामने प्राथमिक चुनौती है प्रभावी ऋण प्रबंध कैसे सुनिश्चित किया जाए। प्राथमिक व्यापारियों को नीलामियों की पूरी हामीदारी का उत्तरदायित्व सौंपते हुए जैसा कि केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों के बाजार संबंधी तकनीकी समिति

(जुलाई 2005) द्वारा सिफारिश की गई है, वित्तीय बाजारों में स्थिरता के हित में एक सुचारू रूप से अंतरण की योजना बनाई जानी है।

6.73 प्राथमिक व्यापारियों पर सौंपी गई भारी जिम्मेदारी को ध्यान में रखते हुए, पीडी प्रणाली को प्रभावी बनाने की दृष्टि से उन्हें यथोचित प्रोत्साहन देकर उनकी प्रतिपूर्ति की जानी है, जैसे रेपो का निधियन, तथा नीलामियों में उनके पूर्णतः आबंटन जोकि पीडी प्रणाली वाले अधिकांश देशों में एक खास विशेषता है। शॉर्ट सेल की प्रथा के न होने के कारण यह प्राथमिक व्यापारियों की बाजार निर्माण की भूमिका को सीमित कर देती है क्योंकि बाजार जोखिम को सुरक्षित करने की उनकी योग्यता पर रोक लग जाती है। शॉर्ट सैलिंग पर तकनीकी समिति की सिफारिशें इस अंतराल को भर देंगी। इस संदर्भ में, मुख्य चुनौती यह सुनिश्चित करना है कि शॉर्ट सेलिंग के लाभ बेहतर और अधिक दक्ष मूल्य की खोज की प्रक्रिया की ओर ले जाते हैं, वहीं शॉर्ट सेलिंग के दबावों तथा स्टॉकों को अपने पास बनाए रखने के कारण अनावश्यक मूल्यों में भारी उतार-चढ़ाव को बचाया जाता है। साथ ही सुपुर्दगी की कमियों की स्थितियों से निपटने के लिए प्रभावी व्यवस्था कर ली गई है। प्राथमिक व्यापारियों से संबंधित तकनीकी समूह द्वारा दिए गए सुझाव के अनुसार रिज़र्व बैंक में प्रतिभूतियों को उधार लेने की एक खिड़की बनाया जाना इस दिशा में एक कदम हो सकता है।

6.74 'जब भी यदि यह जारी किया जाए' इसे 'ह्वेन इश्यूड' (डब्ल्यूआइ) (''जब जारी किया जाए'' के रूप में भी जाना जाता है) बाजार अनेक विकसित देशों में स्थापित हैं । सरकारी प्रतिभूतियों में 'ह्वेन इश्यूड' लेनदेन फ्यूचर्स मार्केट में लेनदेन जैसा कार्य करता है। जिसमें वस्तुतः इसके निपटान की तारीख से पहले इसके खरीदने बेचने की स्थितियां कई बार आ सकती हैं। एफआरबीएम परिवेश में, मुख्य नीलामियों में रिज़र्व बैंक की अनुपस्थिति मुख्य नीलामियों की खपत के लिए एक अधिक मार्केट प्रक्रिया तंत्र की जरूरत है। इस प्रकार 'ह्वेन इश्यूड' मार्केट इस प्रक्रिया तंत्र का एक आवश्यक अंग होगा और उसे सक्रिय रूप से प्रेरित किए जाने की जरूरत है।

6.75 1990 के बाद के दशक के उत्तरार्ध से रिज़र्व बैंक बाजार की गुणवत्ता को सुधारने की दृष्टि से विद्यमान प्रतिभूतियों को पुनः जारी करने की प्रक्रिया के माध्यम से निष्क्रिय रूप से समेकन की नीति का अनुसरण करता रहा है । आज की तारीख में केंद्र सरकार द्वारा जारी कुल 111 बकाया प्रतिभूतियों में से केवल 20 का आकार ही रु. 15,000 करोड़ या उससे अधिक का है। इस प्रकार, पुनर्निगम ने समेकन की कुछ मात्रा प्राप्त की है, अभी भी भारी संख्या में छोटे आकार की प्रतिभूतियां हैं और बहुत कम बाजार में बेची खरीदी जाती हैं। वर्तमान में, इनको सक्रिय रूप से समेकित करने की भारी जरूरत है जिसमें छोटे आकार की तरल आस्तियों को भारी संख्या में इनके धारकों से खरीदना होगा और इनके बदले में तरल आस्तियों को थोड़ी संख्या में जारी करना होगा। तथापि संरचनागत मुद्दे जैसे भारत में सरकारी प्रतिभूतियों को रखने का विषम तरीका तथा 'परिपक्वता तक धारित' श्रेणी में से प्रतिभूतियों को बेचने से बैंकों की बेलंस शीट पर पड़ने वाले प्रभाव से निपटना होगा।

बाजार की गतिविधियां

6.76 रिज़र्व बैंक द्वारा 1990 के बाद के दशक के प्रारम्भिक वर्षों से किये गये विभिन्न उपायों की बदौलत सरकारी प्रतिभूति बाजार में मात्रा और तरलता दोनों दृष्टियों से भारी वृद्धि देखी गई। केंद्र सरकार की

सारणी 6.2 : भारत सरकार प्रतिभूति बाजार की संक्षिप्त झलक

मद	1992	1996	2002	2003	2004	2005
1	2	3	4	5	6	7
बकाया स्टॉक (रु. बिलियन में)	769	1,375	5,363	6,739	8,243	8,953
सघउ के अनुपात में बकाया स्टॉक (प्रतिशत)	14.68	14.20	27.89	27.29	30.09	28.94
कुल कारोबार /सघउ (प्रतिशत)	–	34.21	157.68	202.88	87.78	72.99
वर्ष के दौरान जारी प्रतिभूतियों की औसत मीयाद (वर्षों में)	–	5.70	14.90	15.32	14.94	14.13
वर्ष के दौरान जारी प्रतिभूतियों की भारांकित औसत लागत (प्रतिशत)	11.78	13.77	9.44	7.34	5.71	6.11
वर्ष के दौरान जारी प्रतिभूतियों की न्यूनतम आर अधिकतम मीयाद (वर्षों में)	उ.न.	2-10	5-25	7-30	4-29	5-30
कुल कारोबार में पीडी का अंश						
क. प्राथमिक बाजार			70.46	65.06	50.84	36.02
ख. द्वितीयक बाजार		–	22.04	21.72	24.25	26.7

* सीसीआइएल : भारतीय समाशोधन निगम लि.

टिप्पणी : टर्नओवर सीधी बिक्री (मात्रा*2) तथा रेपो (मात्रा *4) के कुल कारोबार का जोड़ है।

स्रोत : सरकारी प्रतिभूति बाजार पर आंतरिक तकनीकी समूह की रिपोर्ट 2005, भारतीय रिज़र्व बैंक।

चार्ट VI.3: क खजाना बिलों का आय वक्र

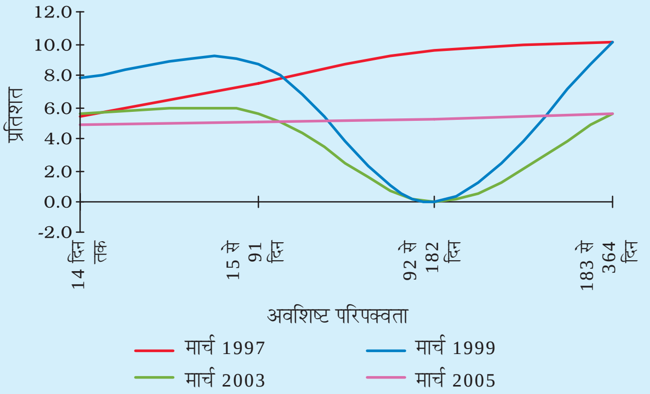

चार्ट VI.3: ख केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों का आय वक्र

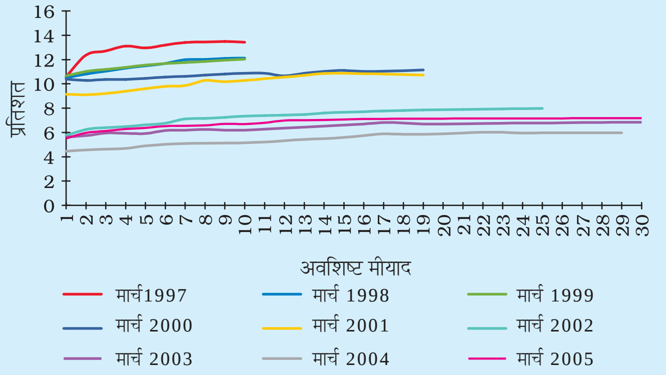

प्रतिभूतियों का बकाया स्टॉक 1992 से 2005 तक लगभग 12 गुना बढ़ गया है (सारणी 6.2)। सघउ के अनुपात की तुलना में उक्त अवधि के दौरान यह 14.7 प्रतिशत से दुगुना बढ़कर 28.9 प्रतिशत हो गया है। सरकारी प्रतिभूति बाजार में कुल कारोबार जो 1996 में सघउ का लगभग एक तिहाई था, तेजी से बढ़कर 2003 में सघउ के 200 प्रतिशत से ऊपर हो गया, परंतु उसके बाद 2005 में खिसककर 73 प्रतिशत रह गया इसका मुख्य कारण था हाल के वर्षों में ब्याज की दरों में वृद्धि।

6.77 सरकारी प्रतिभूति बाजार की एक उल्लेखनीय विशेषता सरकारी प्रतिभूतियों की मीयाद का लंबी होते जमा है जो 1996 के 5.7 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2005 में 14.1 वर्षों की हो गई। गिरती हुई ब्याज दरों के परिवेश में रिजर्व बैंक ने इनकी मीयाद को क्रमिक रूप से बढ़ाकर 30 वर्ष तक कर दिया जो 1990 के बाद के दशक में 10 वर्षों के दायरे में थी।

सारणी 6.3 : भारत सरकार के बाजार ऋणों के लिए भारांकित औसत आय तथा मीयाद

वर्ष	भारांकित औसत आय (नए ऋण) (प्रतिशत)	नए ऋणों की मीयाद का दायरा (वर्षों में)	भारांकित औसत मीयाद (नए ऋण) (वर्षों में)	बकाया स्टॉक की भारांकित औसत मीयाद (वर्षों में)
1	2	3	4	5
1995-96	13.75	2-10	5.7	उप. न.
1996-97	13.69	2-10	5.5	उप. न.
1997-98	12.01	3-10	6.6	6.5
1998-99	11.86	2-20	7.7	6.3
1999-00	11.77	5-20	12.6	7.1
2000-01	10.95	3-20	10.6	7.5
2001-02	9.44	5-25	14.3	8.2
2002-03	7.34	7-30	13.8	8.9
2003-04	5.71	4-29	14.94	9.78
2004-05	6.11	5-30	14.13	9.42

उप.न.: उपलब्ध नहीं।
स्रोत : सरकारी प्रतिभूति बाजार पर तकनीकी समूह की रिपोर्ट 2005, भारिबैंक ।

जारी प्रतिभूतियों की भारांकित औसत लागत जो 1992 (बाजार संबद्ध दर का पहला साल) में 11.8 प्रतिशत से बढ़कर 1996 में 13.8 प्रतिशत पर पहुंच गई, परंतु उसके बाद उसमें गिरावट आ गई और वह 2005 में गिरकर 6.1 प्रतिशत पर आ गई। विभिन्न कारकों जैसे दीर्घ अवधियों के लिए आय वक्र को विकसित करने की आवश्यकता तथा संभावित उन्मोचन दबाव को कम करने तथा जोखिम के पुनर्वित्त पोषण ने सरकारी प्रतिभूतियों के परिपक्वतास्वरूप को बढ़ाने की आवश्यकता पैदा कर दी।

6.78 ऋण प्रबंधक के रूप में रिज़र्व बैंक की मुख्य चिंता सरकार की उधार की लागत को न्यूनतम करना है। सामान्यतया ऊर्ध्वमुखी झुकाव वाले आय वक्र के साथ, प्रतिभूति की मीयाद की अवधि जितनी ही लंबी होगी, उतनी ही अधिक लागत होगी। इस प्रकार उधार की मीयाद और लागत के बीच सीधी संबंध है (मोहन 2004)। तथापि आम तौर पर 2003-04 तक गिरती हुई ब्याज दर के परिदृश्य देखे गए तथा प्रणाली में विद्यमान सुविधाजनक चलनिधि की स्थिति ने

सारणी 6.4 : सरकारी प्रतिभूति बाजार में द्वितीयक बाजार के लेनदेनों की मात्रा

वर्ष	सीधी खरीद का अंश (प्रतिभूति)	रेपो का अंश (प्रतिशत)	कुल (रु. बिलियन)
1	2	3	4
1996-97	76.40	23.60	1,229
1997-98	86.74	13.26	1,857
1998-99	82.53	17.47	2,272
1999-00	84.66	15.34	5,393
2000-01	81.95	18.05	6,981
2001-02	77.00	23.00	15,739
2002-03	71.20	28.80	19,557
2003-04	63.69	36.31	24,334
2004-05	41.09	58.91	21,894

स्रोत : सरकारी प्रतिभूति बाजार पर तकनीकी समिति की रिपोर्ट 2005, भारिबैं ।

सारणी 6.5 केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों का स्वामित्व (कुल में अंश)

(प्रतिशत)

धारकों की श्रेणी	1991	1992	1993	1994	1995	1996	1997	1998	1999	2000	2001	2002	2003
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
भारतीय रिज़र्व बैंक (अपना खाता)	25	22	11	3	3	9	3	13	11	8	9	8	7
वाणिज्यिक बैंक	55	60	65	72	69	64	68	58	59	61	61	61	58
भारतीय जीवन बीमा निगम	13	15	16	17	17	18	20	19	18	18	19	20	19
भारतीय यूनिट ट्रस्ट	0	0	0	5	6	4	1	1	0	0	1	0	0
नाबार्ड	0	0	2	2	1	1	1	1	0	0	0	0	0
प्राथमिक व्यापारी	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	2	1	1
अन्य (ईपीएफ, कोल माइन्स पीएफ तथा अन्य)	7	3	6	1	4	4	7	9	11	12	8	10	13
कुल	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**	**100**

मार्च 2003 के अंत की बकाया पर आधारित

स्रोत : केंद्र सरकार के प्रतिभूति बाजार पर आंतरिक तकनीकी समूह की रिपोर्ट 2005, भारिबैं.

रिज़र्व बैंक को दोहरे उद्देश्य प्राप्त करने में सहायता की - नए ऋणों की मीयाद की अवधि को बढ़ाना तथा उधार लेने की लागत को कम करना (सारणी 63 तथा चार्ट VI.3 क और VI 3ख)। इन गतिविधियों ने बाजार में गहनता तथा ओज को दर्शाने के अलावा, रिज़र्व बैंक द्वारा निष्क्रिय ऋण प्रबंधन की जगह सक्रिय ऋण प्रबंधन को भी दर्शाया।

6.79 भारत में सरकारी प्रतिभूति बाजार में द्वितीय बाजार की बढ़ती हुई गतिविधियां एक उल्लेखनीय विशेषता है। 1996-97 से 2004-05 के बीच की अवधि में इनमें सत्रह गुनी वृद्धि हुई है (सारणी 6.4)।

6.80 सरकारी प्रतिभूति बाजार में लेनदेन जो देश में सभी एक्सचेंजों के इक्विटी घटकों में हुई संयुक्त लेनदेन से भी आगे निकल गई, वह बाजार की गहनता की संकेतक है (मोहन 2004) । यह प्रवृत्ति 2004-05 में पलट गई। सरकारी प्रतिभूतियों में वाणिज्यिक बैंकों की धारिता का अंश 1980 के बाद के दशक के दौरान तथा 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों में बढ़ना जारी रहा। मार्च 1998 के अंत में 58 प्रतिशत पर गिरने से पहले यह मार्च 1994 के अंत में 72 प्रतिशत के शिखर स्तर तक पहुंच गया (सारणी 6.5) । आज आकार, उत्पाद विविधता, गतिविधि तथा तकनीकी स्थिति की दृष्टि से भारतीय सरकारी प्रतिभूति बाजार आस्ति बाजार अर्थव्यवस्थाओं में सर्वोत्तम है (जाधव 2005)।

6.81 सभी विभिन्न मीयादों के लिए आय कमोवेश एक समान 1990 के बाद से बढ़ रही है (चार्ट VI.4)।

विदेशी मुद्रा बाजार

6.82 गत सात दशकों के दौरान विदेशी मुद्रा बाजार ने अत्यधिक निमंत्रित बाजार से उदार व्यवस्था की ओर महत्वपूर्ण रूपांतरण को

चार्ट VI.4 गिल्ट आय

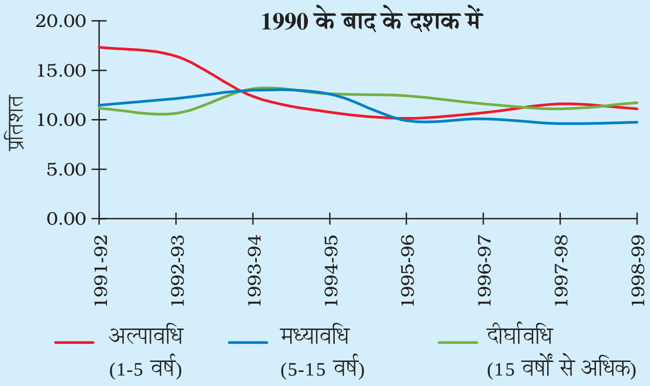

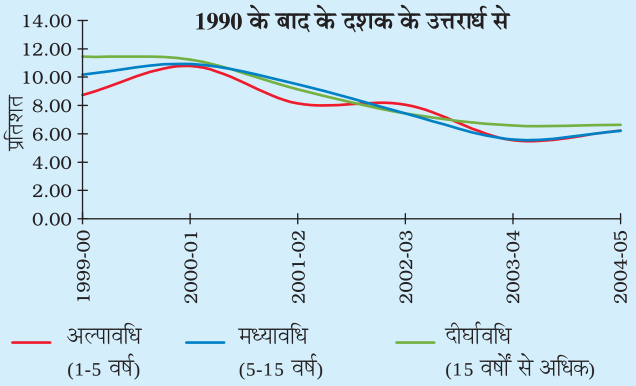

देखा है। विदेशी मुद्रा बाजार में मुख्यतया प्राधिकृत व्यापारी (एडी), जो अधिकांशतः बैंक हैं, निर्यातक और आयातक, अलग-अलग व्यक्ति तथा रिजर्व बैंक शामिल है। 1990 के पहले बाजार अत्यधिक नियंत्रित था। विदेशी मुद्रा भंडार की कमी को देखते हुए बैंक, निर्यातक तथा अलग- अलग व्यक्तियों को उनके द्वारा अर्जित / प्राप्त विदेशी मुद्रा रिज़र्व बैंक को सौंपनी पड़ती थी। भारत में विदेशी मुद्रा बाजार ने उत्तरोत्तर गहनता प्राप्त कर ली है और मार्च 1993 में बाजार द्वारा निर्धारित विनिमय दर की प्रणाली में इसका रूपांतरण हो गया। उसके बाद विभिन्न बाह्य लेनदेनों पर लगे प्रतिबंधों का क्रमिक रूप से, परंतु पर्याप्त उदारीकरण किया गया।

6.83 विदेशी मुद्रा बाजार के विकास के लिए विनिमय दर निर्धारण की पद्धति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है । अंतरराष्ट्रीय रूप से विनिमय दर व्यवस्था ने गत अनेक दशकों से महत्वपूर्ण परिवर्तन देखें हैं। ऐसी एक भी विनिमय दर व्यवस्था नहीं है, जिसे सभी देशों के लिए सभी समयों के लिए उपयुक्त माना जा सकता है। हालांकि विनिमय दर व्यवस्था का चयन करना देश विशेष तथा उसकी आकस्मिक परिस्थितियों पर तथा अन्य बातों के साथ-साथ व्यापक आर्थिक नीतियों पर निर्भर करता है, सारे विश्व में अब नमनीय/सचल दर व्यवस्था के पक्ष में सहमति बढ़ती जा रही है।

सुधार -पूर्व की अवधि (1930 से 1980 के बाद के दशक तक)

6.84 उपर्युक्त अवधि के दौरान भारत के विदेशी मुद्रा बाजार में गहनता और तरलता की कमी थी। विदेशी मुद्रा नियंत्रण तथा विदेशी मुद्रा विनिमय दर की व्यवस्था विदेशी मुद्रा बाजार के विकास में आड़े आई। 1930 से 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों से विदेशी मुद्रा विनिमय दरों में भारी विविधता रही। 'स्टर्लिंग क्षेत्र'[4] की व्यवस्थाओं के बाद (1974 तक) मुद्रा का बाह्य मूल्य 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों में दो चरणों में विनिमय दर में उदारीकरण किए जाने तक मुद्रा समूह के अनुसार निर्धारित किया जाता था । द्वितीय विश्व युद्ध के छिड़ जाने के बाद मुख्यतः गैर स्टर्लिंग क्षेत्र की करेंसियों को बनाए रखने तथा उन्हें अनिवार्य प्रयोजनों के लिए उपयोग में लगाने की दृष्टि से 3 सितंबर 1939 से भारत में विदेशी मुद्रा नियंत्रण शुरू किया गया। विदेशी मुद्रा नियंत्रण का उद्देश्य मुख्यतया विभिन्न प्रयोजनों के लिए विदेशी मुद्रा की मांग को इसकी उपलब्ध आपूर्ति की सीमाओं में विनियमित करना था । इस प्रकार यह विदेशी मुद्रा के लिए विभिन्न प्रतिस्पर्धी मांगों के बीच विदेशी मुद्रा की आपूर्ति की राशनिंग करना था।युद्ध की समाप्ति के चरणों में यह स्पष्ट हो गया कि विदेशी मुद्रा के संसाधनों को सर्वाधिक विवेकसंमत रूप में उपयोग करने के लिए युद्धोत्तर अवधि में भी विदेशी मुद्रा लेनदेनों पर नियंत्रण जारी रखना होगा। अतः यह निर्णय लिया गया कि यह नियंत्रण सांविधिक आधार पर लागू किया जाए और तदनुसार विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम, 1947 बनाया गया। उक्त अधिनियम जो 25 मार्च 1947 का लागू हुआ प्रारंभ में पांच वर्ष की अवधि के लिए वैध था तथा 1952 में इसे और पांच साल के लिए बढ़ा दिया गया। 1957 में इसे स्थायी आधार पर लागू कर दिया गया। उक्त अधिनियम ने रिज़र्व बैंक को तथा कुछ मामले में केंद्र सरकार को यह अधिकार दिया कि वे भारत से बाहर विदेशी मुद्रा में लेनदेन, करेंसी नोटों और सोना चांदी के निर्यात और आयात, निवासियों और अनिवासियों के बीच प्रतिभूतियों के अंतरणों, विदेशी प्रतिभूतियों के अभिग्रहण आदि को नियंत्रित और विनियमित कर सकते हैं । बाद में उक्त अधिनियम के स्थान पर एक अधिक व्यापक विधान अर्थात विदेशी मुद्रा विनियमन अधिनियम 1973 (फेरा) लागू किया गया।

6.85 इस नियंत्रित व्यवस्था के दौरान नीति का मुख्य जोर 1990 से पहले मुख्यतः भारत के आयातों को सुविधाजनक बनाने के लिए विनिमय दर का प्रबंधन करना था। फेरा के माध्यम से विदेशी मुद्रा भंडार पर कठोर नियंत्रण की एक अनिश्चित (संदिग्ध) विशेषता विश्व में विदेशी मुद्रा के लिए सबसे बड़े तथा सर्वाधिक दक्ष समानान्तर बाजारों अर्थात् हवाला (अनाधिकारिक) बाजार का निर्माण रही (तारापोर 2000)।

कानूनी आधार

6.86 विदेशी मुद्रा भंडार के प्रबंधन के प्रयोजन के लिए रिज़र्व बैंक को भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 17 (3) (क) के अंतर्गत अनुसूचित बैंकों से /को विदेशी मुद्रा खरीदने और बेचने की शक्तियां प्रदान की गई हैं। धारा 40 सरकार को अधिसूचनाएं वे दरें निर्धारित करती हैं जिन पर रिज़र्व बैंक बिना किसी सीमा के स्टर्लिंग (या अन्य विदेशी मुद्राएं) खरीदने और बेचने के लिए बाध्य था। तथापि प्राधिकृत व्यापारियों के साथ रिज़र्व बैंक के दैनिक परिचालन उक्त अधिनियम की धारा 173) से ली गई शक्तियों के अंतर्गत संचालित किए जाते थे। इसकी दरें निर्धारित मार्जिनों के अंदर समय-समय पर निर्धारित की जाती थीं। इस धारा के अंतर्गत रिज़र्व बैंक द्वारा खरीदी गई विदेशी मुद्राएं थीं - पौंड स्टर्लिंग, अमरीकी डालर (अक्तूबर 1972 से) ड्यूश मार्क (मार्च 1974 से), तथा जापानी येन (मई 1974 की समाप्ति से)। तथापि पौंड-स्टर्लिंग ही केवल वह करेंसी थी जो फरवरी 1993 तक रिजर्व बैंक द्वारा बेची जाती थी, क्योंकि यह मध्यस्थक मुद्रा थी। इसके बाद अमरीकी डालर मध्यस्थक मुद्रा हो गई ।

[4] स्टर्लिंग क्षेत्र में मुख्यतः ब्रिटिश सामाज्य के देश शामिल थे जो ऐतिहासिक, आर्थिक और राजनैतिक रूप से ब्रिटेन के साथ बंधे हुए थे तथा जिनकी करेंसियों के मूल्य पौंड स्टर्लिंग पर आधारित थे। इस व्यवस्था का उद्देश्य था, स्टर्लिंग क्षेत्र के सदस्यों के उपयोग के लिए गैर स्टर्लिंग क्षेत्र की करेंसियों का एक केंद्रीय भंडार बनाना तथा जिसे ब्रिटेन द्वारा अपने स्वामित्व में लेना और उसका परिचालन करना था।

6.87 1960 के बाद के दशक के अंतिम वर्षों में स्टर्लिंग क्षेत्र के अधिकांश देशों ने, जिनमें भारत भी शामिल था, स्टर्लिंग के विनिमय मूल्य में होनेवाली घटबढ़ से होनेवाली हानियों के जोखिम को व्यापक आधार देने की दृष्टि से अपने विदेशी मुद्रा भंडार को विशाखीकृत करना शुरू कर दिया। स्टर्लिंग क्षेत्र के देशों की ओर से स्टर्लिंग की धारिता को कम करने के दौरान ब्रिटेन के भुगतान संतुलन को प्रतिकूल रूप से प्रभावित होने से रोकने के लिए ब्रिटेन की सरकार अधिकांश स्टर्लिंग मुद्रा का भंडार अपनी मुद्रा के अमरीकी डालर मूल्य बनाए रखना था इस गारंटी के बदले में स्टर्लिंग क्षेत्र के देशों ने यह वचन दिया कि वे अपनी कुल आधिकारिक बाह्य रिज़र्व को जिसे न्यूनतम स्टर्लिंग अनुपात के रूप में जाना था, हमेशा स्टर्लिंग में रखेंगे। इन व्यवस्थाओं में यह भी अपेक्षा की गई है कि स्टर्लिंग क्षेत्र के देश अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) के पास अपने रिजर्वों गैर स्टर्लिंग मुद्राओं के एक भाग में स्वैच्छिक रूप से रखेंगे।

6.88 जब तक भारत 'स्टर्लिंग क्षेत्र' के रूप में जाने जानेवाले देशों के समूह का एक सदस्य रहा, जिसका ब्रिटेन एक केंद्रवर्ती देश था, भारत को अपनी विदेशी मुद्रा आस्तियों का लगभग संपूर्ण भाग स्टर्लिंग में रखना पड़ा, इन स्टर्लिंग जमाराशियों के बदले में गैर स्टर्लिंग क्षेत्र की विदेशी मुद्रा अस्तियों की करेंसियों को ब्रिटेन को अंतरित किया जा रहा था। 23 जून 1972 से जब पौंड स्टर्लिंग मुद्रा चलाई गई, तो ब्रिटेन के प्राधिकारियों ने स्टर्लिंग क्षेत्र को ब्रिटेन, चेनल आईलैंड, मान आईलैंड, रिपब्लिक ऑफ आयरलैंड तक सीमित कर दिया तथा जिब्राल्टर को विदेशी मुद्रा नियंत्रण के प्रयोजनों के लिए तथा अन्यों को अनिवासी के रूप में नामित किया।

6.89 भारत के साथ यह करार जो प्रारंभ में तीन वर्षों की अवधि के लिए था, आवधिक रूप से बढ़ाया जाता रहा, जबतक कि 31 दिसंबर 1974 को समाप्त नहीं कर दिया गया। इसके बाद विदेशी मुद्रा भंडार की प्रक्रिया तेज हो गई थी। 4 अक्तूबर 1975 से रिजर्व बैंक ने हाजिर अमेरिकी डालरों की खरीद और बिक्री की दरें घोषित करना बंद कर दिया तथा किसी विदेशी मुद्रा को बेचना भी बंद कर दिया। तथापि रिज़र्व बैंक ने प्राधिकृत व्यापारियों से अमरीकी डालर खरीदना जारी रखा।

6.90 जुलाई 1978 में, रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 में सांविधिक प्रावधानों का संशोधन किया गया तथा 1975 से लगातार बढ़ते हुए विदेशी मुद्रा भंडार का और भी प्रभावी ढंग से उपयोग करने में समर्थ बनाने की दृष्टि से इसे व्यापक बनाया गया। रिज़र्व बैंक यूएसडालर, पौंड स्टर्लिंग, ड्यूश मार्क और येन 12 माह तक की अलग-अलग अवधियों के लिए हानि और वायदा दोनों की खरीद करता रहा। परंतु पौंड स्टर्लिंग तथा डालर को केवल हाजिर दर पर बिक्री की। पौंड स्टर्लिंग की खरीदने और बेचने की रिजर्व बैंक की दरों में निम्नतम तथा उच्चतम दरों का काम किया तथा अंतरबैंक बाजार इन दरों के अंदर रहा।

6.91 1970 के दशक के प्रारंभिक वर्षों तक, निश्चित दर की प्रणाली को देखते हुए विदेशी मुद्रा बाजार को व्यापारिक लेनदेन करने की प्रक्रिया-तंत्र के रूप में मान लिया गया। ब्रिटेन वुड्स करार टूट जाने तथा प्रमुख करेंसियों के जारी किए जाने से विदेशी मुद्रा विनिमय दर प्रणाली का संचलन करना केंद्रीय बैंकों के लिए एक बड़ी चुनौती बन गया, क्योंकि करेन्सी दरों में उतार-चढ़ाव ने बाजार के खिलाड़ियों के लिए करेंसी के भारी उतार चढ़ाव में लेनदेन करने के लिए सीमाहीन बाजार में जबरदस्त अवसरों के द्वार खोल दिए । (सोढ़ानी 1995)। तथापि भारत में विदेशी मुद्रा बाजार विदेशी मुद्रा नियंत्रणों के कारण, अपेक्षाकृत सुरक्षित बना रहा जिसमें पूंजी के प्रवाहों को रोके रखा गया, तथा इसके अलावा बैंकों से यह अपेक्षित था कि वे केवल कवर परिचालन करें और सभी समयों पर असुरक्षित विदेशी मुद्रा की शून्य या शून्य के आसपास स्थिति बनाए रखें।

6.92 जैस-जैसे मांग बननी शुरू हुई, भारत में बैंकों को रिजर्व बैंक द्वारा 1978 में यह अनुमति दी गई कि वे विदशी मुद्रा में दिनभर के लिए लेनदेन कर सकते हैं। इसके फलस्वरूप शून्य या लगभग शून्य असुरक्षित स्थिति बनाए रखने की शर्त प्रत्येक दिन कारोबार की समाप्ति पर ही पूरी करनी पड़ती थी। विदेशी मुद्रा की मात्रा की यह स्थिति जिसे रात्रिभर के लिए असुरक्षित (खुली स्थिति) रखी जा सकती थी, तथा वे सीमाएं जिन तक व्यापारी दिन के अंदर लेनदेन कर सकते थे, का निर्धारण बैंकों के प्रबंध तंत्र द्वारा किया जाना होता था।

6.93 जैसे-जैसे लाभ कमाने के अवसर उभरने लगे, प्रमुख बैंकों ने रुपयों के प्रति तथा विभिन्न करेंसियों (अर्थात् यूरो करंसियों) के लिए दुतरफा भाव उद्धृत करने प्रारंभ कर दिए और धीरे धीरे व्यापार की यात्रा बढ़ने शुरू हो गई। इसको 1975 में विदेशी मुद्रा दर की प्रणाली में किए गए परिवर्तन से सहायता मिली । जहां रुपए को पौंड स्टर्लिंग से मुक्त कर दिया गया तथा प्रबंधित सचल दर करारों के अंतर्गत रुपए का बाह्य मूल्य रिज़र्व बैंक द्वारा भारत के प्रमुख बाजार सहभागियों की भारांकित मुद्रा समूह के अनुसार निर्धारित किया जाता था। मध्यस्थक मुद्रा अर्थात् पौंड स्टर्लिंग की असीमित मात्रा में खरीदने और बेचने के रिज़र्व बैंक के दायित्व के कारण जो कि बैंकों की व्यापारिक खरीदारियों से उठ रही थी, इसकी खरीदने/बेचने की दरें प्रभावी आधार बन गईं जिनके आसपास बाजार चलने लगा।

6.94 जैसे-जैसे परिमाण में वृद्धि हुई तथा लाभ के उद्देश्य ने विभिन्न प्रकार की परंपराएं शुरू करा दीं (जिनमें से कुछ अनियमित भी थीं) तो विदेशी मुद्रा लेनदेन में संलग्न बैंकों द्वारा अपनाए जानेवाली संपूर्ण डीलिंग परिचालनों के लिए मार्गदर्शी दिशानिदेशों के व्यापक सेट की आवश्यकता अनुभव हुई। तदनुसार बैंकों द्वारा अपनाए जाने के लिए 1981 में विदेशी मुद्रा कारोबार पर आंतरिक नियंत्रण के लिए मार्गदर्शी दिशा निदेश बनाए गए।

6.95 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में बिगड़ती हुई व्यापक आर्थिक स्थिति ने विदेशी मुद्रा विनिमय दर की व्यवस्था में संरचनागत बदलाव की आवश्यकता जताई। जिसका विदेशी मुद्रा बाजार पर प्रभाव पड़ा। भारी और निरंतर बाह्य असंतुलन बाध्य ऋणग्रस्तता के बढ़ते हुए स्तरों में लक्षित हुई। रुपए की विनिमय दर उत्तरोत्तर विसंगतिपूर्ण होती गई। यह स्थिति क्रमिक रूप से प्रमुख करेंसियों की तुलना में वास्तव में अवमूल्यन किए जाने के बावजूद रही। जुलाई 1990 में खाड़ी युद्ध, अर्थव्यवस्था की कमजोर स्थिति ने चलनिधि और विश्वास के अभूतपूर्व संकट को जन्म दिया जिसने असाधारण दोष निवारक उपाय किए जाने की मांग की, देश ने इसके साथ ही साथ वृद्धि के लिए प्रेरणाएं उत्पन्न करने के लिए स्थिरीकरण और संरचनागत सुधारों की प्रक्रिया को अपना लिया था।

सुधार / सुधारोत्तर अवधि (1990 के बाद से)

6.96 इस चरण में विनिमय दर के उदारीकरण के अलावा, बाजार को व्यापक और गहन बनाने के लिए व्यापक दायरे वाले उपाय किए गए। विदेशी मुद्रा बाजार के सुधार के लिए प्रेरणाएं रंगराजन समिति (1992), सोढ़ानी समिति (1995), तथा तारापोर समिति (1997) द्वारा उपलब्ध कराई गई। विदेशी मुद्रा बाजार को दी गई महत्ता विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम (फेमा 1999) की उद्देश्यिका से पर्याप्त रूप से स्पष्ट है। फेमा का एक मुख्य उद्देश्य है - 'भारत में विदेशी मुद्रा बाजार का व्यवस्थित विकास करना'।

6.97 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों में भारत में विदेशी मुद्रा बाजार विकास के प्रारम्भिक चरणों में था तथा उसमें अनेक कमियां थीं। हाजिर तथा वायदा बाजारों में गहनता तथा तरलता की कमी थी, बाजार अधिकांश वणिक कारोबार के लिए कुछ थोड़े से सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से तथा अधिकांश अंतरबैंक वणिक कारोबार के लिए विदेशी बैंकों पर निर्भर रहने के कारण सुचारू रूप से नहीं चल रहा था। वायदा दरें मांग और आपूर्ति को दर्शाती थीं, न कि मुद्रा और विदेशी बाजारों के बीच समन्वय के अभाव तथा अंतरराष्ट्रीय बाजार में उधार लेने/देने पर लगे प्रतिबंधों के कारण ब्याज दर अंतरालों को । खुली स्थिति तथा अंतराल पर उच्चतम सीमाओं के कारण बाजार निर्माण की संभावनाओं का वास्तव में अभाव था। विदेशी बाजारों में लेनदेन शुरू करने पर प्रतिबंध के कारण विभिन्न मुद्राओं में विनिमय बाजार विकसित नहीं हो सका था। वायदा संविदा तथा विभिन्न मुद्राओं में विनिमय विकल्पों के अलावा, अन्य हेजिंग उत्पादों के लिए मुक्त रूप से पैठ भी नहीं उपलब्ध थी। अतः सोढ़ानी समिति ने यह सिफारिश की थी कि विदेशी मुद्रा बाजार को विकसित करने के किसी भी प्रयास को अनिवार्यतः इन मुद्दों को संचालित करने वाले विनियमनों में ढील देना शुरू करना चाहिए।

6.98 विदेश व्यापार तथा विदेशी निवेश संबंधी नीतियों में बदलावों के साथ-साथ, विदेशी मुद्रा विनिमय दर प्रबंध के संबंध में उल्लेखनीय परिवर्तन हुए। प्रबंधित सचल प्रणाली से, जिसके अंतर्गत विनिमय दर का आधिकारिक रूप से निर्धारण किया जाता था, अनेक चरणों से गुजरते हुए यह व्यवस्था बाजार पर आधारित प्रणाली पर पहुंची, जिसके अंतर्गत विनिमय दर मांग और आपूर्ति की शक्तियों द्वारा निर्धारित की जाती है, (रंगराजन 2000) । रुपए की विनिमय दर के संबंधित नीति में 1991 में अमूल चूल परिवर्तन किए गए। पहले, रुपए की विनिमय दर का 1 जुलाई और 3 जुलाई 1991 को दो चरणों में अवमूल्यन किया गया। मध्यस्थक मुद्रा अर्थात पौंड स्टर्लिंग की तुलना में इन दो चरणों में किए गए निम्नमुखी समायोजन 17.38 प्रतिशत बैठते हैं। इसके बाद रुपया विनिमय दर को रुपया अमरीकी डालर के विनिमय दर से बांध दिया गया, जो 26 रु. प्रति डालर था। दूसरे, 1 मार्च 1992 को रुपए की आंशिक परिवर्तनीयता दोहरी विनिमय दर प्रणाली के रूप में जिसे उदारीकृत विनिमय दर प्रबंध प्रणाली (लर्म्स) कहा गया, व्यापार, उद्योग, विदेशी निवेश तथा सोने के आयात के क्षेत्रों में किए गए उदारीकरण के अन्य उपायों के साथ-साथ शुरू की गई। इस प्रणाली में चालू खाता लेनदेनों (निर्यात, विप्रेषण आदि) में प्राप्त सभी विदेशी मुद्रा को पूर्णतः प्राधिकृत व्यापारियों को सौंपना होता था। इन लेनदेनों को प्राप्त आय के परिवर्तन के 60 प्रतिशत की विनिमय दर बाजार दर होती थी जो प्राधिकृत व्यापारियों द्वारा उद्धृत की जाती थी, जबकि शेष 40 प्रतिशत आय को रिजर्व बैंक की आधिकारिक दर पर परिवर्तित किया जाता था। इसके बदले में प्राधिकृत व्यापारी विदेशी मुद्राओं की अपनी कुल खरीद की चालू प्राप्तियों का 40 प्रतिशत रिज़र्व बैंक द्वारा घोषित आधिकारिक विनिमय दर पर रिज़र्व बैंक को सौंपना होता था। शेष 60% विदेशी मुद्रा को वे अपने पास रखकर अनुमत लेनदेनों के लिए खुले बाजार में बेचने के लिए स्वतंत्र होते थे।

6.99 संक्रमणकालीन व्यवस्था के रूप में लर्म्स ने रुपए के बाह्य मूल्य को स्थिरता प्रदान करने तथा लेनदेनों की बढ़ी हुई मात्रा के लिए एक संकीर्ण अंतरबैंक विदेशी मुद्रा बाजार को बनाने की भूमिका निभाई। तथापि इसमें दोहरी विनिमय दर प्रणाली विद्यमान थी तथा निर्यात आय को सौंपने पर इन दोनों दरों के बीच के अंतराल पर निर्यात कर निहित था। साथ ही इस प्रणाली को लंबे समय तक बनाए नहीं रखा जा सका। क्योंकि इसमें कुल आयातों के बीच सब्सीडी के साथ प्राप्त विदेशी मुद्रा के लिए राशनिंग की मांग की गई थी, इससे संसाधनों के आबंटन में अनिवार्यतः विकृतियां पैदा हो गई। जैसे-जैसे इसे लागू रखा गया, तो ऐसे संकेत मिलने शुरू हो गए कि इनके विप्रेषण अपने सामान्य पथ से हटकर पूंजी खाते में जाने लगे क्योंकि कुछ अनिवासी रुपया जमाखातों में आगमों की बाजार दर पर पूर्णतः प्रत्यावर्तन की अनुमति थी, जबकि चालू खाते के रूप में विप्रेषणों को केवल 60 प्रतिशत के ही बाजार दर

पर प्रत्यार्वन की अनुमति थी। दिसंबर 1992 के प्रारंभ में आधिकारिक विनिमय दर में निम्नमुखी समायोजन किया गया तथा अंततः दोहरी विनिमय दर प्रणाली को मिलाकर एकल दर 1 मार्च 1993 से प्रभावी की गई। तथाकथित संशोधित लर्म्स की कुछ विशेषताएं निम्नलिखित थीं:

(i) सभी विदेशी मुद्रा प्राप्तियां 2 मार्च 1993 से बाजार द्वारा निर्धारित दरों पर बदली जाती थीं।

(ii) विनिमय दरों को एक कर देने से (एकल विनिमय दर) चालू खाते में परिवर्तनीयता की ओर एक महत्वपूर्ण प्रगति हुई। मुक्त रूप से जारी की जानेवाली विनिमय दर व्यवस्था विदेशी मुद्रा नियंत्रण के ढांचे के अंदर चलती रही। चालू प्राप्तियां बैंकों को सौंपनी होती थी, जिससे अनुमतियोग्य प्रयोजनों के लिए विदेशी मुद्रा की मांग को पूरा किया जाता था। ये लेनदेन जिन दरों पर किए जाते थे, उनका निर्धारण बाजार द्वारा किया जाता था।

(iii) प्राधिकृत व्यापारियों को बेची गई विदेशी मुद्रा का कोई भी भाग अब रिज़र्व बैंक को नहीं सौंपनी होती थी, तथापि रिज़र्व बैंक अपने विवेक पर विदेशी मुद्रा की खरीद /बिक्री के लिए बाजार में जा सकता था। भारत सरकार की ऋण संबंधी देयताओं की चुकौतियों से इतर किसी अन्य प्रयोजन के लिए विदेशी मुद्रा को बेचने का रिज़र्व बैंक का दायित्व अब बदल गया था। यह अब केवल अमरीकी डालर की खरीद/बिक्री करता था जिसने मार्च 1993 में मध्यवर्ती मुद्रा के रूप में पौंड स्टर्लिग का स्थान ले लिया था। मार्च 2002 से यूरो एक अतिरिक्त मध्यवर्ती मुद्रा हो गई।

(iv) 4 अक्तूबर 1995 से रिज़र्व बैंक ने अपनी बिक्री / खरीद की दरें देना बंद कर दिया। वर्तमान में, रिज़र्व बैंक मुंबई में प्रतिदिन दोपहर 12 बजे के समय पर कुछ चुनिंदा बैंकों द्वारा दी गई दरों के आधार पर संदर्भ दर उद्धृत करता है। अन्य बातों के साथ-साथ रिज़र्व बैंक की दर विशेष आहरण अधिकारों के लेनदेनों पर लागू होती हैं।

(v) यह सुनिश्चित करने के लिए कि रुपए की विनिमय दर मांग आपूर्ति की स्थिति को पूर्णतः दर्शाए, तथा साथ ही वह प्रारक्षित निधियों के माध्यम से लेनदेन को समाप्त कर दे इस दृष्टि से यह निर्णय लिया गया कि 3 जुलाई 1995 से भारत सरकार के ऋण चुकौतियों संबंधी अदायगी (सिविल) को बाजार के माध्यम से भेजे।

6.100 चालू खाते के लेनदेनों को तथा पूंजी खातों में अनेक लेनदेनों को विदेशी मुद्रा विनियमनों तथा नियंत्रणों से मुक्त कर दिया गया। अब भारत में सचल दर विद्यमान है। जिसमें निश्चित दर का कोई भी लक्ष्य निश्चित नहीं किया गया है। दैनिक घटबढ़ की रिज़र्व बैंक बड़ी घनिष्ठतापूर्वक निगरानी करता है। भारतीय विदेशी मुद्रा बाजार अपेक्षाकृत पतला है और रिज़र्व बैंक की घोषित नीति है अस्थायी तौर पर उठी मांग आपूर्ति के असंतुलनों को पूरा करना। इसका उद्देश्य है बाजार को व्यवस्थित बनाए रखना तथा यह सुनिश्चित करना कि बाजार में तरलता संबंधी कोई समस्या, अफवाह या भय से प्रेरित तीव्र उतार चढ़ाव न हो (जालान 2000) । जहां देश का केंद्रीय बैंक विदेशी मुद्रा बाजार में हस्तक्षेप करता है तो ऐसा करने के पीछे इसका मुख्य उद्देश्य तीव्र उतार चढाव तथा अस्थिरता को रोकना होता है (रंगराजन 2000)।

6.101 विदेशी मुद्रा बाजार में गहनता और तरलता की कमी को देखते हुए इसका उद्देश्य अपूर्णताओं को दूर करना था। भारतीय विदेशी मुद्रा बाजार को व्यापक तथा गहन बनाने तथा इसे वैश्विक वित्तीय प्रणाली से संबद्ध करने के लिए किए गए प्रमुख उपाय थे : **(i)** बैंकों को रात्रिभर के लिए असुरक्षित निवल स्थिति तथा अंतराल की सीमा निर्धारित करना, (रिज़र्व बैंक औपचारिक रूप से सीमाओं का अनुमोदन करता है;) ओवरसीज बाजारों में ट्रेडिंग स्थितियों की शुरुआत करना; ब्याज दरों का निर्धारण करना । उच्चतम सीमा के अधीन तथा एफसीएनआर(बी) जमाराशियों के लिए परिपक्वता अवधि निश्चित करना। (3 वर्ष से अधिक नहीं) जिसमें सांविधिक पूर्व-क्रयों से अंतरबैंक खरीदों पर सांविधिक पूर्वक्रय को छोड़कर तथा आस्ति देयता प्रबंधन डेरिवेटिव उत्पादों का उपयोग करना । ; **(ii)** देशी और विदेशी मुद्रा बाजारों को समन्वित करने को सहज बनाने की दृष्टि से विवेक-सम्मत उपाय के रूप में अपने पूंजीगत आधार को बढ़ाने के संबंध में प्राधिकृत व्यापारियों को विदेशों से उधार लेने की अनुमति दी गई। प्राधिकृत व्यापारियों को अपनी विदेशी शाखाओं और प्रतिनिधि कार्यालयों से अपनी भार-रहित टीयर I पूंजी के 15 प्रतिशत तक या 10 मिलि.अम डालर या इसके समकक्ष जो भी उच्चतर हो, ऋण, ओवरड्राफ्ट तथा अन्य प्रकार की निधि आधारित ऋण सुविधाएं लेने की अनुमति दी गई। इन निधियों का उपयोग किसी भी उद्देश्य के लिए विदेशी मुद्रा में ऋण देने के अलावा करने की अनुमति दी गई। प्राधिकृत व्यापारियों को इन सीमाओं को पार करने की भी नमनीयता भी दी गई जो पूर्णतः उनके अपने सामान्य कारोबारी परिचालनों के लिए भारत में अपने रुपया ऋणों की प्रतिपूर्ति करने के लिए होगा न कि इसे मांग मुद्रा या अन्य बाजारों में विनियोजित करने के लिए। **(iii)** कंपनियों को अपने विदेशी मुद्रा जोखिमों का प्रबंधन करने के लिए पर्याप्त आजादी प्रदान की गयी । हालांकि उनको संभावित जोखिमों को सुरक्षित करने के लिए अनुमति दी गई थी, परंतु इस सुविधा को एशियाई संकट के बाद अस्थायी रूप से रोक दिया गया था। विदेशी मुद्रा अर्जकों के विदेशी मुद्रा खातों (ईईएफसी) की पात्रता को भी तर्कसम्मत बनाया गया। विभिन्न जोखिम प्रबंधन की रणनीतियों की कंपनियों को अनुमति दी गई है। जैसे वायदा संविदाओं को निरस्त करना तथा पुनः बुक करना, हालांकि वर्तमान में निरस्त संविदाओं को पुनः बुक करने की परम्परा निरस्त कर दी गई है, जबकि रोलओवर की अनुमति दी गई है। अन्य जोखिम प्रबंध के साधनों, विवेकसम्मत अपेक्षाओं के अंतर्गत, की अनुमति दी गई है जैसे प्रति मुद्रा विकल्प, दुतरफा ऋण के प्रति ऋण आधार पर । निम्नतर लागत विकल्प रणनीतियां जैसे दायरा वायदा, तथा अनुपात दायरा वायदा तथा अन्य रणनीतियों

चार्ट VI.5 : विदेशी मुद्रा बाजार में कुल कारोबार

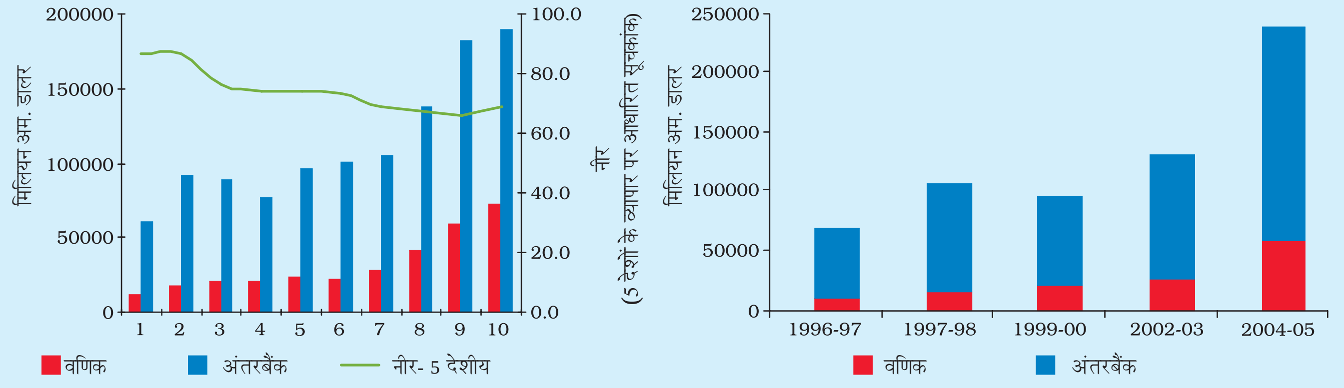

तथा बाह्य वाणिज्य उधार जोखिमों को सुरक्षित करने के लिए रणनीतियां बनाने की अनुमति दी गई है। बाजार द्वारा निर्धारित विनिमय दर व्यवस्था में, ग्राहकों तथा प्राधिकृत व्यापारियों का व्यवहार विनिमय दर की गतिविधियों के काफी सीमा तक प्रभावित करता है। सीसीआइएल, जिसने अंतरबैंक अमरीकी डालर/ भारतीय रुपए के हाजिर / वायदा दरों को नवंबर 2002 से तथा अंतरबैंक अमरीकी डालर/ भारतीय रुपए के नकदी और टॉम ट्रेड के फरवरी 2004 से निपटारा विदेशी परिचालनों को निपटाना शुरू कर दिया था। इस अवधि में विदेशी मुद्रा बाजार का देशी वित्तीय बाजारों से तथा वैश्विक बाजारों के साथ मेहत्तर समेकन देखा गया।

6.102 विदेशी मुद्रा बाजार पर तकनीकी समूह (2005) ने वर्तमान विनियमों को और उदार बनाने के लिए अनेक सिफारिशें की हैं। इनमें से कुछ सिफारिशें जैसे किसी भी मीयाद के लिए वायदा संविदा को निरस्त करना तथा उसे पुन: बुक करने की छूट, कंपनियों के अंतरराष्ट्रीय कमोडिटी एक्सचेंजो/बाजारों में अपने कमोडिटी मूल्य जोखिमों के लिए सुरक्षा प्राप्त करने के लिए प्राधिकृत व्यापारियों को अनुमति देने की शक्तियों का प्रत्यायोजन तथा अंतरबैंक विदेशी मुद्रा बाजारों के ट्रेडिंग के घंटों को बढ़ा देने की सिफारिशों को पहले से ही लागू कर दिया गया है।

6.103 और ज्यादा उदारीकरण बैंकों पर ज्यादा उत्तरदायित्वपूर्ण ढंग से कार्य करने की मांग करता है ताकि निगमित संस्थाओं (कंपनियों) में ऐसा विश्वास बढ़े कि वे डेरिरेटिव्स लेनदेन कर सकें। कुछ अंतरराष्ट्रीय बैंकों के उदाहरणों का अनुसरण करते हुए जिसमें उनकी ओर से ढ़िलाई बरती जाने पर उन्हें क्षतिपूर्ति के दावों को झेलना पड़ता है, भारत में सभी बैंकों को ग्राहकों के लिए उपयुक्त और सटीक नीति की शुरुआत करने की जरूरत है। ''उपयुक्तता मानक'' यह सुनिश्चित करता है कि बैंक जटिल डेरिवेटिव लेनदेनों के संबंध में भी ऋण संबंधी निर्णय लेने में उन्हीं सिद्धांतों का उपयोग करें जिनका उपयोग वे गैर डेरिवेटिव लेनदेनों के लिए करते हैं।

6.104 डेरिवेटिव लेखांकन भारत में अभी भी निर्माण की स्थिति में है। बैंकों और कंपनियों की बहियों में (राजस्व की पहचान तथा आस्तियों और देयताओं के मूल्यन के संबंध में) तथा हेजिंग और ट्रेडिंग लेनदेनों के बीच और ज्यादा स्पष्टता लाने की जरूरत है। बेहतर कंपनी संचालन के संदर्भ में, बैंकों और कंपनियों की ओर से और ज्यादा प्रकटीकरण का मुद्दा महत्वपूर्ण हो गया है। मिश्रित सांचागत उत्पादों के मामले में बैंकों और कंपनियों की ओर से यह आवश्यक है कि वे पारदर्शी बनें और लिए गए जोखिमों की प्रवृत्ति और मात्रा का प्रकटीकरण करें तथा इन जोखिमों की निगरानी करने के लिए प्रणाली स्थापित करें।

6.105 भारी बकाया वायदा स्थितियों के कारण भारत में बैंक अपनी बहियों में जोखिमों का वहन करते हैं। सीसीआइएल का प्रस्ताव है कि अम.डालर रुपया वायदा लेनदेनों के निपटान की गारंटी व्यापार की तारीख से ही लागू कर दी जाए, इससे वायदा बाजार में गहनता तथा चलनिधि के काफी सीमा तक बढ़ने की आशा है और इससे जोखिमों में कमी आएगी। तारापोर समिति की सिफारिशों के अनुसार पूंजी खाते के और उदार कर देने से भविष्य में विदेशी मुद्रा बाजार में और नई चुनौतियों के आने की संभावना है।

चार्ट VI. 6 : वायदा प्रीमियम में घटबढ़

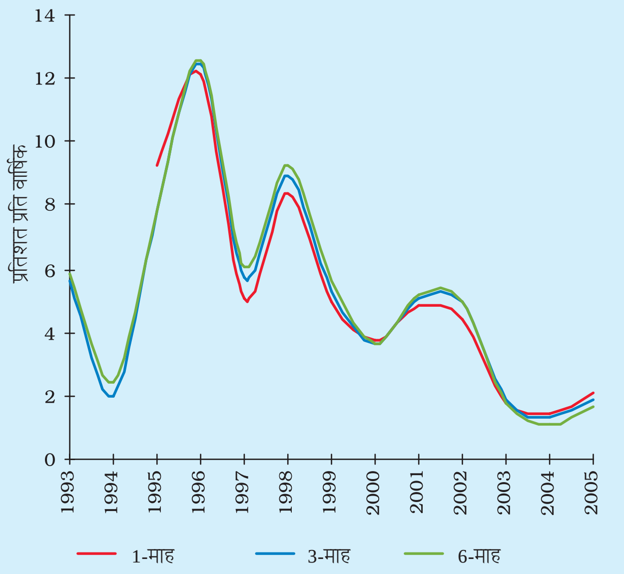

चार्ट VI.7: सांकेतिक प्रभावी विनिमय दर के मुकाबले भारतीय रुपए की घट-बढ़

निर्धारित विनिमय दर आधिकारिक रूप से | **बाजार द्वारा निर्धारित विनिमय दर**

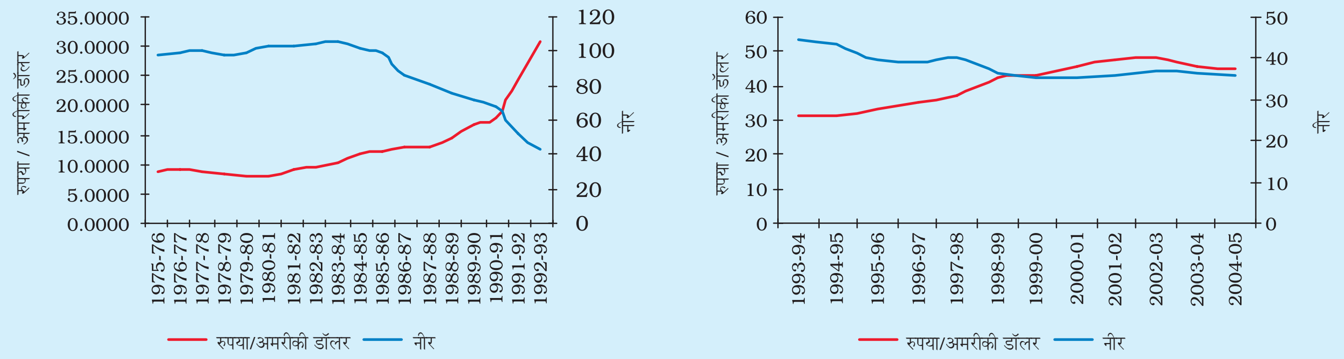

बाजार संबंधी गतिविधियां

6.106 विदेशी मुद्रा बाजार में मासिक कुल कारोबार 1.7 गुना बढ़कर जो जुलाई 1996 में 17 बिलि.अम. डालर का था, मई 2005 में 29 बिलि.अम. डालर का हो गया। हालांकि विदेशी मुद्रा बाजार में थोक लेनदेनों के लिए अंतरबैंक लेनदेनों के खाते में इसका अंश वर्षों के दौरान कम हुआ है (जो जुलाई 1997 के लगभग 87% से गिरकर मई 2005 में लगभग 72 प्रतिशत रह गया है (चार्ट VI.5)। साथ ही साथ वणिक लेनदेनों का अंश बढ़कर दोगुने से भी ज्यादा हो गया है (13.5 प्रतिशत से बढ़कर 27.8 प्रतिशत इसी अवधि में)। वायदा बाजार घटक (स्वैप तथा वायदा) में स्वैप की तुलना में वायदा बाजार अधिक तेजी से बढ़ा है।

6.107 विदेशी मुद्रा के संचयन को दर्शाते हुए, भारतीय अर्थव्यवस्थाओं में सुदृढ़ पूंजी आगम तथा विश्वास के कारण वायदा प्रीमियम जो 1995-96 में चोटी पर पहुंच गया था, तेजी से गिरकर नीचे आ गया (चार्ट VI.6)।

6.108 बाजार द्वारा निर्धारित विनिमय दर व्यवस्था के अंतर्गत भारतीय रुपया व्यवस्थित रूप में चला है तथा विदेशी मुद्रा बाजार ने स्थिर स्थितियां दर्शाई हैं। ऐसा खास कर 1999-2000 के बाद हुआ

सारणी 6.6 : भारत में घरेलू वित्तीय बाजार का तुलनात्मक आकार
(रुपया मूल्यवर्गित)

(करोड़ रु.)

बाजार	औसत दैनिक कुल कारोबार	चालू बाजार मूल्यों पर अंकित सघउ	का. 1 की तुलना में का. 2 का प्रतिशत	एम$_3$	का. 2 की तुलना में का. 4 का प्रतिशत	बैंक जमा	का. 4 की तुलना में का. 6 का प्रतिशत	बैंक जमा	का. 1 की तुलना में का. 8 का प्रतिशत	केंद्र सरकार के आंतरिक ऋण	का. 1 की तुलना में का. 8 का प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
मुद्रा बाजार*											
1999-00	30,056	19,36,831	1.6	11,24,174	2.7	8,13,345	3.7	4,35,958	6.9	7,14,254	4.2
2000-01	40,923	20,89,500	2.0	13,13,220	3.1	9,62,618	4.3	5,11,434	8.0	8,03,698	5.1
2001-02	65,500	22,71,984	2.9	14,98,355	4.4	11,03,360	5.9	5,89,723	11.1	9,13,061	7.2
2002-03	76,722	24,63,324	3.1	17,17,960	4.5	12,80,853	6.0	7,29,215	10.5	10,20,689	7.5
2003-04	28,146	27,60,025	1.0	20,05,676	1.4	15,04,416	1.9	8,40,785	3.3	11,41,706	2.5
2004-05	31,830	31,05,512	1.0	22,53,938	1.4	17,00,198	1.9	11,00,428	2.9	12,70,272	2.5
सरकारी प्रतिभूति बाजार											
1999-00	–	19,36,831	–	11,24,174	–	8,13,345	–	4,35,958	–	7,14,254	–
2000-01	2,802	20,89,500	0.1	13,13,220	0.2	9,62,618	0.3	5,11,434	0.5	8,03,698	0.3
2001-02	6,252	22,71,984	0.3	14,98,355	0.4	11,03,360	0.6	5,89,723	1.1	9,13,061	0.7
2002-03	7,067	24,63,324	0.3	17,17,960	0.4	12,80,853	0.6	7,29,215	1.0	10,20,689	0.7
2003-04	8,445	27,60,025	0.3	20,05,676	0.4	15,04,416	0.6	8,40,785	1.0	11,41,706	0.7
2004-05	4,826	31,05,512	0.2	22,53,938	0.2	17,00,198	0.3	11,00,428	0.4	12,70,272	0.4
ईक्विटी बाजार											
1999-00	–	19,36,831	–	11,24,174	–	8,13,345	–	4,35,958	–	7,14,254	–
2000-01	9,308	20,89,500	0.4	13,13,220	0.7	9,62,618	1.0	5,11,434	1.8	8,03,698	1.2
2001-02	3,310	22,71,984	0.1	14,98,355	0.2	11,03,360	0.3	5,89,723	0.6	9,13,061	0.4
2002-03	3,711	24,63,324	0.2	17,17,960	0.2	12,80,853	0.3	7,29,215	0.5	10,20,689	0.4
2003-04	6,309	27,60,025	0.2	20,05,676	0.3	15,04,416	0.4	8,40,785	0.8	11,41,706	0.6
2004-05	6,566	31,05,512	0.2	22,53,938	0.3	17,00,198	0.4	11,00,428	0.6	12,70,272	0.5

*इसमें मांग मुद्रा, मीयादा मुद्रा और रेपो बाजार शामिल है।
स्रोत: भारतीय अर्थव्यवस्था के संबंध में सांख्यिकीय पुस्तिका, वार्षिक रिपोर्ट, भारिबैं विभिन्न अंक ।

सारणी 6.7: भारत में विदेशी मुद्रा बाज़ार तुलनात्मक आकार

(मिलियन अमरीकी डॉलर)

	विदेशी मुद्रा बाज़ार-मासिक औसत पण्यावर्त	विदेशी मुद्रा आस्तियां*	स्तंभ 3 की तुलना में स्तंभ 2 (प्रतिशत)	बाह्य ऋण*	स्तंभ 5 की तुलना में स्तंभ 2 (प्रतिशत)
1	2	3	4	5	6
1999-00	–	35,058	–	98,263	–
2000-01	1,19,521	39,554	302.2	1,01,326	118.0
2001-02	1,23,947	51,049	242.8	98,843	125.4
2002-03	1,32,072	71,890	183.7	1,04,958	125.8
2003-04	1,78,400	1,07,448	166.0	1,11,715	159.7
2004-05	2,41,010	1,35,571	177.8	1,23,310	195.5

* मार्च के अंत में।
स्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकीय पुस्तिका ।

चार्ट VI.8: मांग दर, गिल्ट आय तथा वायदा प्रीमियम

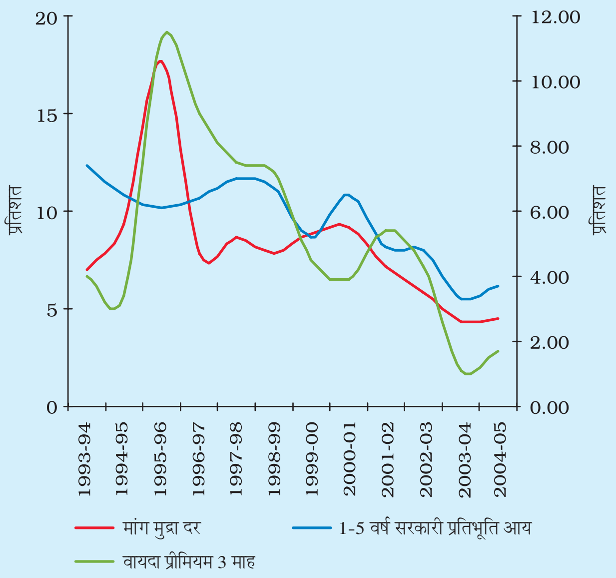

यदि उसकी तुलना उससे पहले की स्थिति से की जाए अर्थात् 1992 से पहले, जब रुपए की विनिमय दर रिजर्व बैंक द्वारा आधिकारिक रूप से निर्धारित की जाती थी। (चार्ट VI.7)।

वित्तीय बाजारों का तुलनात्मक आकार तथा समेकन

6.109 वित्तीय बाजारों के सभी तीनों घटकों ने ऊपर की गई चर्चानुसार बाजारों को गहन तथा व्यापक बनाने के लिए 1990 के बाद के वर्षों से किए गए विभिन्न उपायों के फलस्वरूप परिमाण (मात्रा), सहभागियों की संख्या तथा तरलता की दृष्टि से उल्लेखनीय प्रगति देखी गई। मुद्रा बाजार भारत में रुपया मूल्यवर्धित वित्तीय बाजार का सबसे महत्वपूर्ण घटक बनकर उभरा है जिसने सरकारी प्रतिभूति बाजार और ईक्विटी बाजार ने किए गए लेनदेनों को भी पार कर लिया है। इसका अंश 1990-2000 में सघउ के लगभग 1.6 प्रतिशत से दुगुना होकर 2002-03 में सघेउ के 3.1 प्रतिशत पर पहुंच गया, परंतु उसके बाद इसमें तेजी से गिरावट आई जिसका कारण अन्य बातों के साथ-साथ, मांग मुद्रा बाजार के कुल कारोबार में गिरावट का आना था (सारणी 6.6) ।

6.110 कुल कारोबार में यह तेज गिरावट मुख्यतः पूर्णतः अंतर बैंक मांग मुद्रा बाज़ार की ओर बढ़ने के कारण थी। तथापि, सरकारी प्रतिभूति बाजार का अंश 2000-01 से 2002-03 के बीच सघउ के लगभग 0.1 प्रतिशत से 0.3 प्रतिशत तक बढ़ा, जबकि 2004-05 में बढ़ती हुई ब्याज दरों के कारण, जिसने कारोबार की गतिविधि को प्रभावित किया; यह गिर गया। सघउ के प्रति ईक्विटी बाजार का अंश 2000-01 और 2004-05 के बीच आधे से अधिक रहा। विदेशी मुद्रा बाजार का तुलनात्मक आकार भी उल्लेखनीय रूप से बढ़ा था (सारणी 6.7)।

6.111 भारत में वित्तीय बाजार के विकास का प्रमुख उद्देश्य वित्तीय बाजारों में समेकन की प्रक्रिया को तेज करना रहा है जो प्रतिस्पर्धी बाजारों के निर्माण के अलावा मौद्रिक नीति के बाजार आधारित लिखतों का प्रयोग करने में सहायता करनी है। घरेलू वित्तीय बाजार के विभिन्न घटकों के तुलनात्मक अंश यह दर्शाते हैं कि मुद्रा बाजार बाजार का बहुत बड़ा घटक है। इसके बाद ईक्विटी बाजार और इसके बाद गिल्ट बाजार का स्थान आता है (सारणी 6.8)।

सारणी 6.8 : भारतीय घरेलू (रुपए मूल्यांकित) वित्तीय बाज़ार एक नज़र में

	मुद्रा बाजार-औसत दैनिक पण्यावर्त* (करोड़ रुपए)	सरकारी प्रतिभूति बाजार-औसत दैनिक पण्यावर्त (करोड़ रुपए)	ईक्विटी बाजार-औसत दैनिक पण्यावर्त		कुल जोड़ (2+3+4+5)	कुल में प्रतिशत अंश		
			बीएसई (करोड़ रुपए)	एनएसई (करोड़ रुपए)		मुद्रा बाजार	सरकारी प्रतिभूति बाजार	ईक्विटी (बीएसइ + एनएसइ)
1	2	3	4	5	6	7	8	9
2000-01	40,923	2,802	3,981	5,327	53,034	77.2	5.3	17.6
2001-02	65,500	6,252	1,229	2,081	75,061	87.3	8.3	4.4
2002-03	76,722	7,067	1,250	2,461	87,500	87.7	8.1	4.2
2003-04	28,146	8,445	1,980	4,329	42,900	65.6	19.7	14.7
2004-05	31,830	4,826	2,053	4,513	43,222	73.6	11.2	15.2

*: मांग मुद्रा, मीयादी मुद्रा तथा रेपो बाजार शामिल है।
स्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकीय पुस्तिका, वार्षिक रिपोर्ट, भा.रि.बैंक, विभिन्न प्रकाशन।

बाजार समेकन

6.112 रिज़र्व बैंक की नीतियों का मुख्य जोर गहन, तरल और समन्वित वित्तीय बाजारों के विकास पर रहा है। तदनुसार सुधार की प्रक्रिया ने वित्तीय बाजारों के विभिन्न घटकों के बीच परस्पर समेकन में सहायता की है। बाजारों के बीच संपर्क की सरणियां अलग अलग रही हैं। उदाहरण के लिए मांग मुद्रा बाजार और विदेशी मुद्रा बाजार के बीच समेकन का परिचालन अनिवार्यतः विदेशी बाजारों में बैंकों की अनुमति निवेश की सीमाओं तथा बैंकों के अपने खाते या कंपनियों के खातों में एफसीएनआर(बी) के अंतर्गत विदेशी मुद्रा में तेज (सुरक्षा कवर) समय-पूर्व भुगतान आदि के विकल्प के माध्यम से होती है। इन संपर्क सरणियों के व्यापक और गहन होने की आशा है अतः उनका लाभ उठाया जाना चाहिए। दूसरा उदाहरण मांग मुद्रा बाजार और सरकारी प्रतिभूति बाजार के बीच संपर्क सरणी से संबंधित है जहां सरकारी प्रतिभूतियों में भारी निवेशों का निधियन अल्पावधिक उधार राशियों से, विशेषकर मांग मुद्रा बाजार से किया जाता है। वित्तीय बाजारों के विभिन्न घटक बेहतर रूप से समेकित हो गए हैं विशेषकर 1990 के बाद के दशक के मध्य से (चार्ट VI.8)।

6.113 जैसे-जैसे वित्तीय बाजारों में सुधार आगे बढ़े, बाजार के विभिन्न घटकों तथा देशी और अंतरराष्ट्रीय बाजारों के बीच संपर्क बढ़ा। अंतरराष्ट्रीय दृष्टि से भी देशी और वैश्विक बाजारों में समन्वय का गहन और तेजी से बढ़ाने के लिए दबाव बढ़ता जाएगा। भारतीय वित्तीय बाजार का अंतरराष्ट्रीय बाजारों के साथ समन्वय के संदर्भ में पूंजी खाते की परिवर्तनीयता जिसका विदेशी मुद्रा बाजार पर महत्वपूर्ण प्रभाव है, की ओर बढ़ने का अत्यधिक महत्त्व है। पूंजी खाते की परिवर्तनीयता संबंधी (सीएसी) रिपोर्ट में जैसा कि उल्लेख किया गया है, पूंजी खाते की परिवर्तनीयता की पूर्व शर्तें/संकेतक जसे राजकोषीय समेकन, पूर्व निर्धारित मुद्रास्फीति की दर की प्राप्ति, वित्तीय क्षेत्र का समेकन, विदेशी मुद्रा भंडार की पर्याप्तता, भुगतान संतुलन की सुदृढ़ स्थिति, आदि को उचित रूप से पूरा करना है, इससे पहले कि रुपए को पूंजी खाते पर पूर्ण परिवर्तनीय बनाया जाए। अंतरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के साथ वास्तविक तथा वित्तीय क्षेत्रों दोनों के बढ़ते हुए समन्वय के साथ बाह्य आवेगों के प्रभाव को और तेजी से महसूस किया जाएगा जो इसे अनिवार्य बना देती हैं कि इन पूर्व-शर्तों को पूंजी खाते की पूर्ण परिवर्तनीयता लाने से पहले सुस्थापित किया जाए।

6.114 मुद्रा, सरकारी प्रतिभूतियां और विदेशी मुद्रा बाजारों के बीच बढ़ते हुए संपर्कों ने कभी-कभी रिज़र्व बैंक द्वारा विदेशी मुद्रा बाजारों में अत्यधिक उद्वेगशीलता को रोकने के लिए मांग और आपूर्ति के बीच आय अंतरालों को पूरा करते हुए अल्पावधिक मौद्रिक उपायों का उपयोग करने की आवश्यकता आ जाती है। हाल के वर्षों में भारतीय वित्तीय बाजारों ने वैश्विक वित्तीय बाजारों के अनुरूप बढ़ाने की प्रवृत्ति दर्शाई है जो एक ओर देशी और अंतरराष्ट्रीय बाजारों में बढ़ते हुए समेकन का संकेत करती हैं, वहीं दूसरी ओर चालू वित्तीय बाजारों के विभिन्न घटकों के बीच समन्वय को भी जो वित्तीय क्षेत्र के सुधारों और सूचना प्रौद्योगिकी द्वारा प्रेरित बढ़ते हुए वैश्वीकरण के कारण हुआ है। दूरगामी वित्तीय क्षेत्र के सुधारों ने भारत को एक खुली अर्थव्यवस्था के ढांच की ओर बढ़ने को सुविधाजनक बनाया है जिसमें विदेशी मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति और मुद्रा बाजार के बीच परस्पर क्रिया-प्रतिक्रिया काफी महत्वपूर्ण हो गई है। अर्थव्यवस्था को खोलने से विदेशी निवेशों के आगमों की दृष्टि से लाभ प्राप्त हुए हैं, जिसने वृद्धि और रोजगार में योगदान किया है। तथापि, इन लाभों ने भारी और उद्वेगशील पूंजी प्रवाहों के बीच व्यापक अर्थव्यवस्था के प्रबन्धन के लिए नई चुनौतियां भी खड़ी कीं (मोहन 2004)। इसके मौद्रिक प्रबंधन के लिए निहितार्थ थे। भारत ने इस चुनौती का सामना उपयुक्त मौद्रिक राजकोषीय समन्वय के माध्यम से किया। चलनिधि समायोजन सुविधा योजना में उपयुक्त परिवर्तन किए गए। व्यवस्था में चल रही अतिरिक्त चलनिधि के काफी बड़े अंश से निपटने के लिए एमएसएच शुरू की गयी। बाजार समन्वय

सारणी 6.9 प्रमुख वित्तीय बाजार की दरों में सह संबंध गुणांक

अवधि	मुद्रा बाजार				फोरेक्स बाजार - वायदा प्रीमियम						प्रतिभूति बाजार - गिल्ट आय$					
	मांग मुद्रा दर		रेपो दर		1-माह		3-माह		6-माह		अल्पा-वधिक		मध्या-वधिक		दीर्घा-वधिक	
	मा.वि	पर.सह.	मा.वि	पर.सह.	मा.वि	पर.सह.	मा.वि	पर.सह.	मा.वि	पर.सह.	मा.वि	पर.सह.	मा.वि	पर.सह.	मा.वि	पर.सह.
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17
1970 के बाद का दशक	2.68	32.22									0.53	10.66	0.52	9.76	0.54	9.08
1980 के बाद का दशक	1.16	12.25									3.48	40.62	1.63	19.75	1.47	16.14
1991-92 से 1995-96	5.35	39.31	2.12^	27.24^			4.41*	70.57*	3.93*	62.82*	3.29	24.52	1.21	10.23	1.05	8.78
1996-97 से 2004-05	1.82	25.50	1.69	27.96	2.19	48.08	2.62	53.05	2.90	56.50	2.20	24.43	1.90	21.58	2.23	23.07

$: उन्मोचनगत आय

* : इसमें 1993-94 से 1995-96 की अवधि भी शामिल है।

^ : 1992-93 से 1995-96 की अवधि भी शामिल है।

अल्पावधि: 1-5 वर्ष: मध्यावधि: 5-15 वर्ष: दीर्घावधि: 15 वर्ष और उससे अधिक

मा.वि.: मानक विचलन पर.सह.: परिवर्ती सहगुणांक

स्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकी पुस्तिका भारिबैं.

चार्ट VI.9: मांग दरों के लिए चलनिधि समायोजन सुविधा से पूर्व और बाद में अनौपचारिक मार्जिन

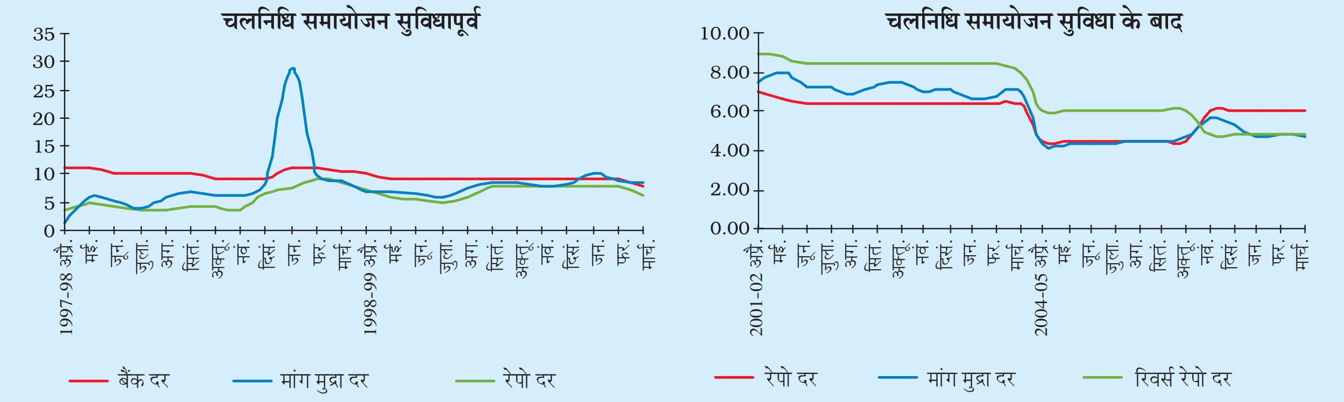

के संदर्भ में, रिज़र्व बैंक बड़ी तत्परता से वैश्विक गतिविधियों पर नजर रखता है, जिसका भारतीय अर्थव्यवस्था और वित्तीय बाजारों पर प्रभाव पड़ेगा और त्वरित उपचारात्मक उपाय करता है। उदाहरण के लिए पूर्व एशियाई संकट और उसके बाद 11 सितंबर 2001 के संकट के बाद विभिन्न वित्तीय बाजारों में रिज़र्व बैंक की कार्रवाई तथा इसकी प्रभावोत्पादकता को विश्व भर में स्वीकार किया गया है (जालान 2000)।

उद्वेगशीलता

6.115 ऐसा लगता है कि वर्षों से वित्तीय बाजार के समन्वय ने उद्वेगशीलता को कम किया है। मांग मुद्रा बाजार में उद्वेगशीलता (मानक विचलन तथा परिवर्ती सहगुणांक द्वारा मांपे गए अनुसार) की तुलना यदि पहले 1970 के बाद के दशक और 1990 के बाद के दशक की उद्वेगशीलता से की जाए तो 1996-97 से 2004-05 की अवधि की उद्वेगशीलता कम हुई है (सारणी 6.9)। अप्रैल 1997 में बैंक दर को सक्रिय करने के पश्चात एक अनौपचारिक मार्जिन बैंक दर (उच्चतम सीमा) और रेपो दर (निम्नतम) द्वारा बनाया गया । तथापि, 2000 में चलनिधि समायोजन सुविधा के शुरू किए जाने के बाद अनौपचारिक मार्जिन रेपो तथा रिवर्स रेपो द्वारा बनाया गया (चार्ट VI 9) । विदेशी मुद्रा बाजार ने भी 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों की तुलना में 1990 के बाद के दशक के मध्य के वर्षों में कम उद्वेगशीलता देखी। जो बाजार में गहनता में वृद्धि के कारण हो सकती है। तथापि, सरकारी प्रतिभूति बाजार में यह प्रवृत्ति इसके बिल्कुल विपरीत रही जिसमें उद्वेगशीलता 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों की तुलना में इसी दशक के मध्य के वर्षों में बढ़ी है जो अन्य बातों के साथ-साथ द्वितीय बाजार में बढ़ी हुई गतिविधियों के कारण हो सकती है।

6.116 वित्तीय बाजार के समन्वय का प्रमुख लक्ष्य वित्तीय बाजारों के सभी विभिन्न घटकों में दरों के संघ की शक्ति (अर्थात् परस्पर सह संबंध) द्वारा उपलब्ध कराई गई (सारणी 6.10) । 1996-97 से 2004-05 की अवधि के दौरान मांग और श्रेष्ठ प्रतिभूति (गिल्ट) बाजारों के बीच संपर्क 1990 के बाद के दशक (1993-94 - 1995-96) के प्रारंभिक वर्षों की तुलना में अधिक मजबूत दिखाई दिए जो बेहतर समन्वय को दर्शाते हैं। यह आश्चर्यजनक है कि मांग और विदेशी मुद्रा बाजारों (वायदा प्रीतियम) के बीच यह संपर्क, 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों की तुलना में इसी दशक के मध्यवर्ती वर्षों में कमजोर हुआ है जिसका कारण शायद पूर्व एशियाई संकट के परिप्रेक्ष्य में बाह्य क्षेत्र में उस समय विद्यमान उद्वेगशीलता को देशी बाजारों में फैलने से रोकने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए विभिन्न उपाय थे।

सारणी 6.10: प्रमुख वित्तीय बाजार की दरों में सह संबंध गुणांक

अवधि	मांग दर तथा वायदा प्रीमियम			मांग एवं रेपो दर	मांग दर तथा गिल्ट आय			वायदा प्रीमियम तथा गिल्ट आय		
	1-माह	3-माह	6-माह		अल्पावधि	मध्यावधि	दीर्घावधि	1-माह	3-माह	6-माह
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1970s					0.75	0.69	0.66			
1980s					0.63	0.82	0.87			
1991-92 to 1995-96		0.96 *	0.96 *	0.88 **	0.43	-0.80	-0.65		-0.98*	-0.65 *
1996-97 to 2004-05	0.73	0.67	0.65	0.59	0.87	0.97	0.94	0.87	0.72	0.78

* 1993-94 से 1995-96.तक की अवधि शामिल है।
** 1992-93 से 1995-96.तक की अवधि शामिल है।
स्रोत: भारतीय अर्थव्यवस्था पर सांख्यिकीय पुस्तिका, भा.रि.बैंक।

6.117 समयावधियों में अंतरों के बावजूद, वित्तीय बाजारों के विभिन्न घटकों में तथा मुद्रा बाजार में भी बढ़े हुए समन्वय को दर्शाने वाले बेहतर सह संबंध गुणांक पूर्ववर्ती अनुभवजन्य अध्ययनों के अनुरूप हैं (रिज़र्व बैंक 2000-01 तथा 2003-04)।

बाजार का विकास - द्विविधाएं तथा चुनौतियां

6.118 अधिकांश केंद्रीय बैंकों की तरह वित्तीय बाजारों के सुधारों के संदर्भ में रिज़र्व बैंक को भिन्न-भिन्न मुद्दों से संतुष्ट होना पड़ा जिनमें से कुछ परस्पर विरोधी थे जैसे -

(i) भारतीय वित्तीय बाजार में विविध विनियामकों का होना, जिसमें रिज़र्व बैंक मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति और विदेशी मुद्रा बाजार को विनियमित करता है, सेबी पूंजी बाजार को विनियमित करता है और इर्डा बीमा क्षेत्र को) इसने बाजार सुधार की प्रक्रिया को सुचारू बनाने के लिए रिज़र्व बैंक तथा अन्य विनियामकों के बीच कनिष्ठ सहयोग को आवश्यक बना दिया हैं। (क्योंकि बैंक तथा वित्तीय संस्थाएं अनेक बाजारों में प्रमुख खिलाड़ी हैं)।

(ii) सरकारी प्रतिभूति बाजार में रिज़र्व बैंक को दोहरी भूमिकाएं निभानी पड़ती हैं अर्थात् एक विनियामक की तथा एक ऋण प्रबंधक की (ऋण प्रबंधक की भूमिका उसे रिज़र्व बैंक अधिनियम से प्राप्त हुई है)। उच्च राजकोषीय घाटों के प्रतिकूल प्रभाव को सीमित रखते हुए साथ ही मौद्रिक नीति के बल को कम होने दिए बिना नीति के संचालन ने रिजर्व बैंक के समक्ष गत अवधि में कई अवसरों पर वास्तविक चुनौती खड़ी कर दी है।

(iii) भारी पूंजी आगमों को देखते हुए विदेशी मुद्रा विनिमय दर का प्रबंधन रिज़र्व बैंक के समक्ष प्रमुख द्विविधा बनकर उभरा है, जो मौद्रिक तथा बाह्य क्षेत्र के प्रबंधन में घनिष्ठ समन्वय की मांग करता है। अर्थव्यवस्था के बढ़ते हुए वैश्वीकरण के चलते मौद्रिक नीति के संचालन में विनिमय दर एक बहुत महत्वपूर्ण कारक बनकर उभरा है। इसके अलावा, यह मान लिया गया है कि विनिमय दरों के संबंध में जो आर्थिक कारकों की बाध्यताओं द्वारा अपेक्षित भारांकों की तुलना में लोकप्रिय अवधारणाओं को दिए गए अतिरिक्त भारांक निश्चित रूप से मौद्रिक प्रबंधन को जटिल बना देंगे। विदेशी मुद्रा की स्थिति तथा विदेशी मुद्रा बाजारों के संबंध में जनता में जागरूकता जगाना रिज़र्व बैंक के लिए एक महत्वपूर्ण कार्य रहा है। दूसरे केंद्रीय बैंकों की तरह रिज़र्व बैंक को झेलने पड़ रहे विदेशी मुद्रा प्रबंधन के संबंध में अन्य मुद्दे हैं - (क) विनिमय दर व्यवस्था की उपयुक्तता, (विशेषकर तथा कथित ''असंभव ट्रिनिटीटट की परिकल्पना के संबंध में) जो यह मानता है कि पूंजी खाते की पूर्ण परिवर्तनीयता, मौद्रिक आजादी (मुद्रा स्फीति के नियंत्रण के लिए) तथा एक स्थिर करेंसी संभव नहीं हैं, (ख) किस दर की निगरानी की जाए (अंकित या वास्तविक तथा (ग) विदेशी मुद्रा विनिमय बाजारों में स्थिरता बनाम उद्वेगशीलता (जालान 2001) ।

(iv) सुव्यवस्थित और दक्ष वित्तीय बाजारों ने बाजार सहभागियों के साथ लगातार संपर्क बनाए रखने को आवश्यक बना दिया जिसमें 'गोपनीयता' पर कोई समझौता न किया गया हो ताकि परामर्शी प्रक्रिया-तंत्र के माध्यम से बाजारों के विनियामक पहलुओं में बदलाव लाए जा सके ।

(v) वैश्वीकरण और उदारीकरण के संदर्भ में पारदर्शिता तथा आंकड़ा प्रसारण में अल्पाधिकारवादी प्रवृत्तियों को रोकना तथा प्रतिस्पर्धी बाजारों के विकास को सुविधाजनक बनाना जरूरी है। रिज़र्व बैंक वित्तीय बाजारों के विभिन्न पहलुओं और इसके परिचालनों पर आंकड़ों का प्रसारण करता रहा है। इस संदर्भ में बिना मौद्रिक नीति तथा वित्तीय स्थिरता के साथ समझौता किए बाजार को कितना उजागर करना है, यह एक चुनौती के रूप में उभरी है।

(vi) रिज़र्व बैंक के अंदर भी एक प्रमुख चुनौती है , अपने कार्मिकों की दक्षता /कौशलों को सुधारने के लिए व्यवस्थाएं करने की ताकि वे बाजार सहभागियों को गति और कौशलों के साथ कदम से कदम मिलाकर चल सकें।

(vii) बैंकों के विनियामक और पर्यवेक्षक के रूप में रिज़र्व बैंक की भूमिका में भी कुछ टकराव है। उदाहरण के लिए पर्यवेक्षक की दृष्टि से आस्ति देयता प्रबंध के मार्गदर्शी सिद्धान्तों को पूरा करने के लिए अल्पावधिक प्रतिभूतियां जारी करना अधिक अनुकूल है, जबकि ऋण प्रबंधक के रूप में रिज़र्व बैंक मीयाद प्रोफाइल के साथ दीर्घकालीन प्रतिभूतियों के साथ मीयाद के प्रोफाइल का मिलान करने का वरीयता देता है।

II. उदारीकरण और वैश्वीकरण के संदर्भ में वित्तीय बाजारों में रिज़र्व बैंक की बदलती भूमिका

6.119 पिछली शताब्दी के दौरान एक महत्वपूर्ण घटना विश्व भर में केंद्रीय बैंकों की भूमिका का तेजी से हुआ विकास है। यह कई कारणों से हुआ जैसे देशी अर्थव्यवस्था तथा वित्तीय प्रणाली का उदारीकरण, वैश्वीकरण तथा प्रौद्योगिकी उन्नयन। जहां अधिकांश पिछली शताब्दी के दौरान केंद्रीय बैंकों ने अपने निर्णय ज्यादातर घरेलू संदर्भ में लिए। इस स्थिति में कई देशों के संदर्भ में 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों से उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है (ग्रीनसन, 1997)। उद्वेगशील पूंजी प्रवाहों तथा संकटों की शृंखला के संदर्भ में अनेक देशों में केंद्रीय बैंकों को अपनी भूमिका के बारे में, विशेषकर वित्तीय बाजार सुदृढ़ घरेलू वित्तीय बाजारों को विकसित करने में पर्याप्त प्रयास करने और संसाधनों का विस्तार करने के लिए सोचने को मजबूर कर दिया।

6.120 भारत जैसे देशों के अनुभवों ने यह दर्शाया है कि योजना आधारित और विनियमित संरचना से बाजार आधारित प्रणाली की ओर बढ़ने से केंद्रीय बैंकों की भूमिका में भी भारी परिवर्तन हुए हैं। हालांकि केंद्रीय बैंक की विनियामक और विकासात्मक भूमिकाएं अभी भी बनी हुई हैं, लेकिन ऐसी भूमिकाओं का स्वरूप बदल चुका है। वित्तीय बाजारों के विनियामक के रूप में, केंद्रीय बैंक की प्रमुख चिंता मौद्रिक स्थिरता तथा बाजारों में व्यवस्थित स्थितियां बनाए रखने की है। इस उद्देश्य के लिए यह उपयुक्त प्रणालियां, प्रक्रियाएं, मानकें और संहिताएं, जोखिम प्रबंध प्रणालियां, तथा लेखांकन मानदंड जो वैश्विक मानदंडों के समक क्ष हों, स्थापित करके एक सुव्यवस्थित बाजार के विकास के लिए एक अनुकूल विनियामक परिवेश बनाने का प्रयास करता है। इसी प्रकार बाजारों में केंद्रीय बैंक की विकासात्मक भूमिका में, (नई संस्थाओं लिखतों की रचना तथा आधुनिक भुगतान और निपटान प्रणालियों के माध्यम से आवश्यक बुनियादी संरचना तथा प्रौद्योगिकीय समर्थन प्रदान करके) बाजार के विकास की बाधाओं को हटाना शामिल है। देशी वित्तीय बाजारों का वैश्विक बाजारों के साथ समन्वय केंद्रीय बैंकों तथा संकटों और संक्रामक प्रभावों को रोकने के लिए सभी विश्व बाजारों में बेहतर पारदर्शिता तथा मानकों में एकरूपता लाने के लिए अंतरराष्ट्रीय मानक स्थापित करने वाली एजेंसियों के बीच घनिष्ट समन्वय की मांग करता है। वैश्वीकरण के साथ-साथ अर्थव्यवस्था और वित्तीय बाजारों की संरचना में परिवर्तनों ने भारत सहित कई देशों में मौद्रिक नीति संबंधी ढांचे तथा परिचालन प्रक्रियाओं में परिवर्तनों को आवश्यक बना दिया है। वैश्वीकरण और उदारीकरण ने केंद्रीय बैंकों के परिचालनों में विविध द्विविधाएं भी खड़ी कर दी हैं।

6.121 सभी केंद्रीय बैंक बुनियादी तौर पर अपनी अपनी अर्थव्यवस्थाओं में ऋण के प्रवाह के बारे में चिंतित होते हैं, चाहे यह ऋण बैंकों, गैर बैंकों, वित्तीय संस्थाओं से या संस्थागत निवेशकों से प्रवाहित होता है। नए वित्तीय परिदृश्य में संस्थागत निवेशक तथा अन्य गैर बैंक वित्तीय संस्थाएं पहले से कहीं ज्यादा आस्तियों के अंश और ऋण जोखिम रखते हैं । वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति का एक बड़ा भाग प्रतिभूति बाजारों द्वारा की जाती है, जो बहुत कुछ अपनी परंपरागत उत्तरदायित्वों को संभाले हुए हैं (मैकडोनो, 1998) । तदनुसार, वैश्विक निश्चित आय और ऋण बाजारों के संबंध में केंद्रीय बैंकों के महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व हैं - (i) अपने स्वयं के कार्यों में पारदर्शिता बढ़ाते हुए मूल्य की खोज की प्रक्रिया को बढ़ाना ; (ii) चलनिधि प्रदाता के रूप में बैंक सुदृढ़ ऋण संबंधी निर्णय लेकर लेनदेन की प्रक्रिया को समर्थन देने में अपनी भूमिका उचित रूपसे निभाएं, यह सुनिश्चित करना।

6.122 वैश्वीकरण और वित्तीय बाजारों के समन्वय ने मौद्रिक, वित्तीय तथा बाह्य क्षेत्र के प्रबंधन में केंद्रीय बैंकों के लिए नई नई चुनौतियां और द्विविधाएं प्रस्तुत कर दी हैं। भारतीय वित्तीय बाजार के वैश्विक बाजारों के साथ समन्वय के संदर्भ में रिज़र्व बैंक की विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण हो गई है। तदनुसार रिज़र्व बैंक ने अपनी मौद्रिक नीति के परिचालन संबंधी प्रक्रियाओं में सुधार किया। साथ ही अपनी विनियामक प्रणाली तंत्र में भी, ताकि वैश्विक मानकों के समकक्ष बन सकें। वित्तीय संस्थाओं, बाजारों और वित्तीय संरचना के विभिन्न पहलू जैसे जोखिम प्रबंध प्रणालियां, आय की पहचान, और प्रावधानीकरण संबंधी मानदंड, प्रकटीकरण संबंधी मानदंड और लेखांकन मानक अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों के अनुरूप बनाने शुरू किए गए हैं।

मौद्रिक नीति की संप्रेषण प्रक्रियातंत्र का विकास

6.123 भारत में मौद्रिक नीति घरेलू और वैश्विक व्यापक आर्थिक दशाओं, दोनों, में होनेवाले परिवर्तनों के अनुरूप निरंतर प्रतिक्रियाएं करती रही है और तदनुसार परिचालनात्मक प्रक्रियाओं में भारी परिवर्तन हुए हैं। जहां 1990 के बाद के दशक के मध्य से पूर्व मुद्रा को परिचालनात्मक लक्ष्य और बैंकों के रिजर्व को परिचालनात्मक साधन माना जाता था, वहीं अपविनियमन के साथ साथ ब्याज दरों और विनिमय दरों में इन दोनों के निर्धारण में बाजारी शक्तियों की भूमिका में वृद्धि हुई । तथापि, यह ढांचा भी अधिकाधिक दबाव में आता चला गया - बढ़ते हुए पूंजी आगम के कारण बढ़ती हुई चलनिधि द्वारा मुद्रा आपूर्ति पर बढ़ते हुए ऊर्ध्वमुखी दबाव को निष्प्रभावी करना पड़ा (मोहन, 2004)। गुणत्मक परिवर्तियों की तुलना में ब्याज दरों और विनिमय दरों द्वारा प्राप्त की गयी महत्ता के कारण मौद्रिक नीति की संप्रेषण प्रक्रिया-तंत्र में विद्यमान बढ़ते हुए परिवर्तनों के साक्ष्यो के संदर्भ में मूल्य निर्धारण संबंधी निर्णय अधिकांशतः बाजार शक्तियों पर छोड़ दिए गए। भारत में मौद्रिक नीति का कायाकल्प 1990 के बाद के दशक के अंतिम वर्षों में हुआ। मौद्रिक और वित्तीय क्षेत्र के सुधारों ने रिज़र्व बैंक को अपने अधिकार में विद्यमान विभिन्न लिखतों का विस्तार करने में समर्थ बनाया । आरक्षित अपेक्षाओं पर निर्भरता, विशेषकर, नकदी आरक्षित अनुपात पर निर्भरता को मौद्रिक नियंत्रण के एक लिखत के रूप में कम कर दिया गया। सीआरआर को 1994-95 के 15.0 प्रतिशत से घटाकर वर्तमान में 5.0 प्रतिशत पर ले आया गया है। सांविधिक चलनिधि अनुपात को 1992 के 38.5 प्रतिशत से घटाकर 25 प्रतिशत के सांविधिक रूप से निम्नतम स्तर पर ले आया गया है। इसके फलस्वरूप रिजर्व बैंक ने 1998-99 से एक अधिक व्यापक आधार वाले विविध संकेतक दृष्टिकोण को अपनाया। जिसके द्वारा ब्याज दरें या विभिन्न बाजारों (जैसे मुद्रा, पूंजी तक सरकारी प्रतिभूति बाजारों में प्रतिलाभ की दरें तथा करेंसी, बैंकों और वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋण विस्तार, राजकोषीय स्थिति, व्यापार, पूंजी आगम, मुद्रास्फीती की दर, विनिमय दर, पुनर्वित्त तथा विदेशी मुद्रा में लेनदेनों के संबंध में आंकड़े जो

उच्च फ्रीक्वेंसी के आधार पर उपलब्ध हों, नीति संबंधी निर्णय लेने के लिए उत्पादन आंकड़ों के साथ-साथ उपलब्ध कराए जाते हैं। यह परिवर्तन धीरे-धीरे आया और 1990 के बाद के प्रारंभिक वर्षों से सुधार की अवधि के दौरान किए गए उपायों का तर्कसम्मत परिणाम था (रेड्डी 2002)।

6.124 एक अपविनियमित वित्तीय परिवेश में, जिसमें पर्याप्त सीमा तक खुले पूंजी खाते हों, मौद्रिक नीति को अल्पावधिक आधार पर अप्रत्याशित परिवर्तनों के प्रति भी प्रतिक्रिया करनी पड़ती है। एक बहुविधि संकेतक प्रणाली को अपनाने से इसने रिज़र्व बैंक का घरेलू और अंतरराष्ट्रीय आर्थिक तथा बाजार की स्थितियों के अनुसार प्रभावी रूप से परिवर्तन करने की आवश्यक नमनीयता प्रदान की।

6.125 कुछ महत्वपूर्ण कारक जिन्होंने भारत में 1990 के बाद के दशक के दौरान मौद्रिक नीति के ढांचे तथा परिचालनगत प्रक्रियाओं को रूपाकार प्रदान किया वे थे - बजट घाटे का रिज़र्व बैंक द्वारा स्वतः मौद्रीकरण से अलग करना, बढ़ते हुए पूंजी आगम तथा वित्तीय बाजारों के सुधार। भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते हुए वैश्वीकरण और उदारीकरण के साथ-साथ मौद्रिक नीति ने उल्लेखनीय परिवर्तन देखें। जहां 1990 के बाद के दशक के प्रारंभिक वर्षों तक भारत में मौद्रिक नीति ने ऋण के प्रवाह की लागत, भाग तथा दिशा को नियंत्रित करने का प्रयास किया, वहीं 1990 के बाद के दशक में शुरू की गई विभिन्न नीतियों, गतिविधियों और वित्तीय बाजारों के समन्वय ने केंद्रीय बैंक के मूल्य संकेतकों की भूमिका को बढ़ा दिया और इसके द्वारा इससे पूर्व के मात्रात्मक परिवर्तियों के स्थान पर ब्याज दरों को भारत में मौद्रिक नीति के संप्रेषण प्रक्रिया-तंत्र में उत्तरोत्तर बढ़ते हुए परिवर्ती के रूप में बना दिया (मोहन 2004)। इसके अलावा, क्रमिक रूप से भारतीय अर्थव्यवस्था के खुलते चले जाने से मौद्रिक नीति, विदेशी मुद्रा विनियमन दर नीति, तथा राजकोषीय नीति को उत्तरोत्तर रूप से यह सुनिश्चित करने के लिए समन्वित करना पड़ा कि ये नीतियां एक दूसरे के विरोधी प्रयोजनों के लिए काम न करें। (तारापोर 2000)।

6.126 इस संदर्भ में, रिज़र्व बैंक का प्रयास नीति के अप्रत्यक्ष लिखतों की ओर बढ़ने के लिए आधार तैयार करने की दृष्टि से वित्तीय बाजारों को विकसित करने का रहा है। प्रथम चरण के रूप में, सरकारी प्रतिभूतियों पर आयों को बाजार से संबद्ध कर दिया गया। साथ ही साथ रिजर्व बैंक ने अन्य बाजारों से संबंधित अनेक वित्तीय उत्पाद तैयार करने में सहायता की। अगले चरण में, ब्याज दर संरचना को समानान्तर रूप से तर्कसम्मत बनाया गया तथा बैंकों को यह छूट दी गई कि अपनी प्रमुख ब्याज दरों का निर्धारण स्वयं करें। इसने चलनिधि प्रबंधन के लिए तथा विदेशी मुद्रा बाजार में अल्पावधिक उद्वेगशीलता को रोकने के लिए खुले बाजार के परिचालनों के एक प्रभावी उपाय के रूप में प्रयोग करने को सुविधाजनक बनाया। इस अवधि के दौरान शुरू किया गया, एक अन्य महत्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय परिवर्तन था बैंक दर को पुनः सक्रिय बनाना, प्रारंभ में इसे रिज़र्व बैंक की पुनर्वित्त की दर सहित अन्य सभी दरों से जोड़ दिया गया (अप्रैल 1997)। बाद में निश्चित रेपो दर (दिसंबर 1997) शुरू करना। जिसने मुद्रा बाजार में एक अनौपचारिक मार्जिन निर्माण करने में सहायता की। इसमें रेपो दर का न्यूनतम स्तर था और बैंक दर का उच्चतम स्तर। खुले बाजार के परिचालनों के साथ-साथ इन दोनों लिखतों के प्रयोग ने रिज़र्व बैंक को अधिकांश समय मांग दर को अनौपचारिक मार्जिन के अंदर बनाए रखने में समर्थ बनाया। बाद में, जून 2000 से चलनिधि समायोजन सुविधा की शुरुआत ने चलनिधि की स्थिति को दैनिक आधार पर और साथ ही बैंक दर में परिवर्तनों के माध्यम से नीति संबंधी बल का संकेत देते हुए चलनिधि समायोजन सुविधा के जरिए अल्पावधिक ब्याज दरों को भी संतुलित करने में मदद की। मौद्रिक नीति का जोर विशेषकर 1990 के बाद के दशक के मध्य से नीतिगत लिखतों का और अधिक लचीले और दुतरफा रूप से प्रयोग करने पर रहा है, हालांकि रात्रिभर के लिए ब्याज दरों को लक्ष्यबद्ध करने की कोई औपचारिक नीति नहीं है, तो भी एलएएफ ने रिज़र्व बैंक को इस योग्य बना दिया है कि बैंक रिज़र्व के लक्ष्यों पर जोर को कम किया जाए तथा ब्याज दरों पर उत्तरोत्तर रूप से ध्यान केंद्रित किया जाए। रात्रिभर के लिए ब्याज दरें अब उत्तरोत्तर रूप में प्रधान परिचालन लक्ष्य के रूप में उभर रही हैं (मोहन 2004)।

6.127 जहां भारत में मौद्रिक प्रणाली अभी भी विकसित हो रही है, तथा अर्थव्यवस्था में विभिन्न अंतःक्षेत्रीय संपर्कों में परिवर्तन हो रहा है, वहां संप्रेरण सरणियों पर उभरता हुआ साक्ष्य यह सुझा रहा है कि परिमाणात्मक सरणियों की तुलना में दर सरणियां धीरे-धीरे महत्व प्राप्त करती जा रही हैं। मुद्रा आपूर्ति संबंधी तीसरे कार्य दल (1998) द्वारा प्रस्तुत अर्थमितीय साक्ष्य यह संकेत करते हैं कि ब्याज दर के माध्यम से नीतिगत परिचालन के प्रति उत्पाद प्रतिक्रिया साशक्त होती जा रही है। इसी प्रकार, मुद्रास्फीति पर स्फीतिकारी मौद्रिक नीति का प्रभाव, अर्थव्यवस्था के सीमित रूप में खुले होने की स्थिति में, विनिमय दर के मुकाबले ब्याज दरों के माध्यम से अधिक सबल होता जा रहा है।

6.128 बढ़ते हुए बाजारोन्मुखीकरण के कारण, भारत में मौद्रिक नीति उन संरचनागत और विनियामक उपायों पर ध्यान केंद्रित करती रही है जो वित्तीय प्रणाली को सुदृढ़ करने तथा वित्तीय बाजारों के विभिन्न घटकों की कार्य प्रणाली में सुधार लाने के लिए बनाई गई है। विशेषज्ञों तथा बाजार सहभागियों के साथ व्यापक विचार-विमर्श के पश्चात अनेक उपाय शुरू किए गए हैं तथा वे इन उपायों को मौद्रिक

नीति की परिचालनगत दक्षता बढ़ाने, रिज़र्व बैंक की विनियामक भूमिका को पुनः परिभाषित करने, विवेकसम्मत तथा पर्यवेक्षी मानकों को सुदृढ़ करने, ऋण सुपुर्दगी प्रणाली में सुधार लाने, तथा वित्तीय क्षेत्र के प्रौद्योगिकीगत तथा संस्थागत ढांचे को विकसित करने की ओर मोड़ा गया है (रेड्डी 2000)। प्रौद्योगिकी के अपविनियमन के साथ संपर्क ने भी एक अधिक खुले, प्रतिस्पर्धी और वैश्वीकृत वित्तीय बाजार के अभ्युदय में योगदान किया है। इन विभिन्न सुधारों ने सुदृढ़ आधार की नींव डाली है, जिसने रिज़र्व बैंक को पूर्व एशियाई जैसे संकटों, प्रतिबंधों, तथा घरेलू अनिश्चितताओं जैसी अंतरराष्ट्रीय चुनौतियों से अधिक प्रभाव शाली रूप से निपटने में तथा एक सम्माननीय वृद्धि दर यथोचित मूल्य और विनिमय दर स्थिरता प्राप्त करने में सहायता की है। विशेषकर संकट वाले वर्षों में रिज़र्व बैंक द्वारा मौद्रिक नीति के संचालन ने देश में और विश्व भर में दोनों ओर से सम्मान और विश्वासनीयता प्राप्त की है।

6.129 मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति तथा विदेशी मुद्रा बाजारों के बीच बढ़ते संपर्क रिज़र्व बैंक से यह अपेक्षा करते हैं कि वह विदेशी मुद्रा बाजार में अत्यधिक उद्वेगशीलता को रोकने के लिए कभी-कभी हस्तक्षेप करने के साथ-साथ अल्पावधिक मौद्रिक उपायों का भी उपयोग करे। वर्तमान बाजार द्वारा निर्धारित विनिमय दर व्यवस्था में विदेशी मुद्रा बाजारों में सुव्यवस्थिति स्थिति बनाए रखना, अस्थायी रूप से उभरे मांग आपूर्ति के अंतरालों को पूरा करना (जो अनिश्चितताओं या अन्य कारणों से उभर सकते हैं)। इस संदर्भ में, रिज़र्व बैंक देश में तथा विदेशों में हो रही गतिविधियों पर बड़ी बारीकी से निगाह रखे हुए हैं तथा ऐसे उपाय करता है जो यह समय-समय पर आवश्यक समझता है।

पारदर्शिता, सहयोग तथा सर्वोत्तम संव्यवहार

6.130 बाजार परिचालनों में पारदर्शिता वित्तीय बजारों के सुचारू कार्यकलाप के लिए तथा दक्ष मौद्रिक नीति के संप्रेषण प्रणाली-तंत्र के लिए अनिवार्य है (ब्यौरे अध्याय III में) । पारदर्शिता का लाभ यह है कि केंद्रीय बैंक के चालू और भावी व्यवहार के बारे में सूचनाएं उजागर करती है तथा उसके द्वारा प्रत्याशा के निर्माण तथा बाजार के व्यवहार को प्रभावित करती है। वैश्वीकरण के संदर्भ में, अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं जैसे वास्तविक क्षेत्र, ब्याज और विनिमय दरों, तथा मूल्यों से संबंधित पर्याप्त, समय पर तथा गुणवत्ता पूर्ण आंकड़ों बाजारों के दक्ष परिचालन के लिए के प्रसारण की आवश्यकता को महत्व प्राप्त हुआ है, क्योंकि अपर्याप्त सूचना परिणाम असमान सूचना के रूप में हो सकता है, तथा यह बाजारों में नैतिक संकट तथा उच्च उद्वेगशीलता की ओर ले जा सकता है। अतः रिज़र्व बैंक ने बाजारों के व्यवस्थित कार्य कलापों को सुविधाजनक बनाने की दृष्टि से नियमित अंतरालों पर वित्तीय बाजारों पर आंकड़े तथा अपने परिचालनों के संबंध में प्रसारण करने के लिए अनेक पहलों की शुरुआत की है।

6.131 पूर्व-एशियाई, लैटिन अमरीकी, तथा रूसी वित्तीय संकटों के बाद वित्तीय प्रणाली के विनियामकों तथा केंद्रीय बैंकों के बीच सहयोग तथा सूचनाओं के आदान-प्रदान के लिए मान्यता बढ़ती जा रही है (ब्यौरे अध्याय III में)। भारत वित्तीय मानकों तथा संहिताओं के अनेक प्रमुख अंतरराष्ट्रीय मंचों की कार्य प्रणाली में सक्रिय रूप से भाग लेता रहा है। सेबी के माध्यम से अंतरराष्ट्रीय प्रतिभूति आयोग संगठन (आइओएससीओ) में भारत का प्रतिनिधित्व किया गया है तथा यह विशेष डाटा प्रसारण मानक (एडीडीएस) का पहले से ही अभिदानकर्ता रहा है।

6.132 वैश्वीकरण तथा घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय बाजारों के बीच मिटते विभेदों ने (इक्विटी बांडों और विदेशी मुद्रा लिखतों के लिए) ठोस और सुदृढ़ वित्तीय बाजारों और संस्थाओं के निर्माण के लिए सर्वोत्तम संव्यवहारों की संहिता की आवश्यकता बढ़ा दी है। जहां मुद्रा बाजार आम तौर पर एक राष्ट्रीय बाजार होता है, वहीं सरकारी प्रतिभूति बाजार, ईक्विटी बाजार तथा विदेशी मुद्रा बाजार उत्तरोत्तर वैश्विक रूप से समन्वित हो गए हैं, जो आस्तियों के मूल्यन, लेखांकन मानदंड, तथा विनियामकों और बाजार सहभागियों द्वारा प्रकटीकरण मानदंडों जैसे बाजारों से संबंधित विभिन्न पहलुओं के संबंध में मानकों और संहिताओं का एक एक समान सैट की मांग करता है । प्रतिभूति बाजारों के मामले में आइओएसीओ ने वैश्विक मानकों और मानदंडों को बनाने में और डेरिवेटिव्स मार्केट के लिए अंतरराष्ट्रीय स्वैप और डेरिवेटिव्स संघ (आइएसडीए) ने बाजार की सर्वोत्तम परंपराओं का निर्धारण करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके साथ ही, इन एजेंसियों द्वारा किए गए प्रयासों के अलावा, अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं जैसे आइएमएफ, विश्व बैंक तथा जी-20 ने भी वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए वित्तीय बाजारों के लिए सर्वोत्तम वैश्विक संव्यवहारों के एकीकरण करने में काफी रुचि दर्शाई है।

संस्थागत तथा प्रौद्योगिकीगत बुनियादी संरचना

6.133 उदारीकृत वित्तीय बाजार में घरेलू और वैश्विक बाजारों में प्रभावी रूप से प्रतिस्पर्धी बनने के लिए सहभागियों को दक्ष संस्थागत और प्रौद्योगिकीगत बुनियादी संरचना की आवश्यकता होती है। वित्तीय बाजारों की दक्षता को बढ़ाने के लिए बनाए गए अधुनातम प्रौद्योगिकीय बुनियादी संरचना तथा अन्य समर्थनकारी संस्थागत ढांचों को स्थापित करने में केंद्रीय बैंकों को मुख्य भूमिका निभानी पड़ती है। वित्तीय बाजारों के विकास के लिए संस्थागत तथा प्रौद्योगिकीगत बुनियादी संरचना के क्षेत्र में सुपुर्दगी बनाम भुगतान प्रणाली, भारतीय समाशोधन निगम, तत्काल सकल निपटान प्रणाली (आरटीजीएस), केंद्रीकृत निधि प्रबंध प्रणाली (सीएफएमएस) : एनडीएस तथा सांचागत वित्तीय संप्रेषण समाधान (एसएफएमएस) को परिचालन में लाकर रिज़र्व बैंक ने अनेक पहलें की हैं । (विस्तार के लिए अध्याय IV देखें)।

कानूनी ढांचा

6.134 वित्तीय बाजार के सुधार कानूनी ढांचे में तदनुरूपी गतिविधियों पर निर्भर करते हैं। कई अन्य देशों की तरह भारत में भी विधानों में परिवर्तन एक क्रमिक और धीमी प्रक्रिया है, जो भारत में बाजारों के विकास में बाधक बनी हुई है। वैधानिक परिवर्तन जो सुधारों के समर्थन के लिए अपेक्षित हैं, 1993 के बाद से उत्तरोत्तर कठिन होते जा रहे है। अतः कुछ वांछित परिवर्तनों को विद्यमान कानूनों के मानदंडों और संरचना के भीतर ही समायोजित करना होगा (रंगराजन 2000)। वित्तीय बाजारों के विकास के लिए किए गए अनेक उपायों के लिए विधान में परिवर्तन या नए कानूनों को लागू करने की अपेक्षा है। उदाहरण के लिए इनमें लोक ऋण अधिनियम में किए गए संशोधन तथा सरकारी प्रतिभूति विधेयक को प्रस्तुत करना (सरकारी प्रतिभूतियों में लेनदेन करने के लिए नमनीयता प्रदान करने तथा खुदरा बिक्री को सुविधाजनक बनाने के लिए) भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में संशोधन (अन्य बातों के अलावा, सीआरआर / एसएलआर के लिए सांविधिक न्यूनतम स्तर को घटाकर मौद्रिक नीति संबंधी परिचालनों पर लचीलापन लाना, ऋण प्रबंधन के कार्यों को अलग करना, आदि) राजकोषीय दायित्व तथा बजट प्रबंध अधिनियम (एफआरबीएम) को अधिनियम बनाना (राजकोषीय प्रबंधन पर यथोचित नियंत्रण लाना), बैंककारी विनियमन अधिनियम में संशोधन (प्रतिभूति नियमों, तथा बैंकिंग के विनियामक ढांचे को इसमें शामिल करना), परक्राम्य लिखत अधिनियम में संशोधन (इलेक्ट्रोनिक चेक, प्रतिभूतिकृत प्रमाणपत्र, तथा अन्य विकासशील उत्पादों को इसके अंतर्गत लाने के लिए इसे सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 के अनुरूप बनाना) तथा आस्ति प्रतिभूतिकरण संबंधी विधेयक का अधिनियम बनाना (आस्ति प्रतिभूतिकरण के लिए बाजार को समर्थनकारी परिवेश उपलब्ध कराने के लिए) शामिल है।

6.135 केंद्रीय बजट 2005-06 में की गई घोषणा के अनुसार अन्य बातों के साथ-साथ ओटीसी डेरिवेटिव्स को कानूनी रूप से वैध बनाने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 में संशोधन करने के लिए एक विधेयक संसद में प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार सरकारी प्रतिभूति विधेयक में सरकारी प्रतिभूतियों के बाजार को व्यापक बनाना है, जिसमें खुदरा हित को सुविधाजनक बनाने के साथ-साथ एक सुव्यवस्थित द्वितीयक बाजार को सुनिश्चित करना है। इस विधेयक के द्वारा लोक ऋण के प्रबंधन में अपेक्षित कुछ ठोस सुधार निम्नलिखित हैं- (i) द्वितीयक बाजार की तरलता को बेहतर बनाने के लिए सरकारी प्रतिभूतियों को वापस लेकर उनका पुनर्गठन करना तथा निवेशकों के लिए बेहतर जोखिम आबंटन में समर्थ बनाना, (ii) सरकारी प्रतिभूतियों के दृष्टिबंधक, गिरवी के लिए प्रावधान करना तथा उनके लिए धारणाधिकार, पुनर्ग्रहणाधिकार का निर्माण करना आदि। इन उपायों से बाजार की गतिविधियां सुविधाजनक बनने की आशा है।

परामर्शकारी दृष्टिकोण की भूमिका

6.136 भारत में वित्तीय बाजार के सुधारों का प्रमाण चिह्न एकमत के निर्माण का रहा है जिसे अंतर्विभागीय कार्यदलों, अंतर्एजेंसी समितियों तथा तकनीकी परामर्शदाता समितियों का निर्माण के स्तरों पर तथा वित्तीय बाजार समिति (एफएमसी) (निगरानी स्तरपर) के माध्यम से परिचालित किया जाता है। इसका उद्देश्य है नीति निर्माण और उसके कार्यान्वयन के स्तरों पर सभी पणधारकों को शामिल करना । ज्यादा अपविनियमन विनियामक द्वारा बाजार की गतिविधियों की बारीकी से निगरानी करने की महत्ता को रेखांकित करता है। जो रिज़र्व बैंक में एफएमसी के माध्यम से क्रियान्वित होता है। (यह रोजाना बाजारों के खुलने से पहले और कभी-कभी एक से अधिक बार जब भी स्थिति की मांग हो बैठक करती है)। वित्तीय बाजार समिति वित्तीय बाजारों में चलनिधि तथा ब्याज दर की स्थिति की समीक्षा करती है तथा सर्वोच्च प्रबंध-तंत्र को उस कार्रवाई की सलाह देती है जो दिन के दौरान रिज़र्व बैंक द्वारा की जानी अपेक्षित है। यह संस्थागत ढांचा रिज़र्व बैंक द्वारा वित्तीय बाजारों पर प्रभाव डालने वाले सभी महत्वपूर्ण निर्णयों पर एक समेकित दृष्टिकोण अपनाने में सहायता करता है। चूंकि वित्तीय बाजारों में अत्यधिक उद्वेगशीलता बैंकों के तुलनपत्रों को क्षति पहुंचा सकती है, बाजारों के विश्वास पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती है, तथा वित्तीय स्थिरता के लिए खतरा पैदा कर सकती है, अतः रिज़र्व बैंक वित्तीय बाजार के विभिन्न घटकों में हो रही गतिविधियों की निरंतर निगरानी करता है तथा आवश्यक उपचारात्मक उपाय करता है। बाजार चौकसी पर ज्यादा ध्यान केंद्रित करने के लिए रिज़र्व बैंक में एक अलग से वित्तीय बाजार विभाग की स्थापना की गई है।

III. निष्कर्ष

6.137 भारत में गत सात दशकों में वित्तीय बाजार के विकास की समीक्षा यह प्रकट करती है कि रिज़र्व बैंक एक गहन तथा ऊर्जस्वित मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति तथा विदेशी मुद्रा बाजारों की संरचना करने में सफल रहा है, हालांकि उन्हें अभी और भी सुदृढ़ बनाने की जरूरत है। सुधारों की प्रक्रिया की सफलता अब तक कई घटकों पर निर्भर रही है, जैसे व्यापक आर्थिक स्थिरता, सुदृढ़ वित्तीय संस्थाएं, अनुकूल कानूनी ढांचा, प्रौद्योगिकीगत समर्थन तथा अनुकूल नीतिगत परिवेश। इसके अलावा, वित्तीय बाजार के सुधार अन्य क्षेत्रों में सुधारों से भी अंशतः संशोधित किए गए विशेषकर, राजकोषीय सुधारों तथा बाह्य क्षेत्रों में सुधारों से भी अंशतः संशोधित किए गए विशेषकर, राजकोषीय सुधारों तथा बाह्य क्षेत्र में सुधारों से । भारत में वित्तीय क्षेत्र के सुधार ने मौद्रिक नीति के संप्रेषण प्रक्रिया-तंत्र के सुविधाजनक बनाने के अलावा मौद्रिक नीति की रणनीतियों को सुविधाजनक बनाया, इससे ऋण आबंटन पर जोर देने के स्थान पर मौद्रिक लक्ष्य पर और बाद में बहुल संकेतक दृष्टिकोण पर ध्यान केंद्रित किया। वित्तीय बाजार के विकास के बिना ये परिवर्तन

संभव नहीं हुए होते। भारत में ब्याज दर व्यवस्था के अविनियमन की सफलता मुख्यतः समानान्तर रूप से वित्तीय बाजारों के विकास के कारण हो सकी। वित्तीय बाजारों ने बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को अपने कार्यकलापों, चलनिधि तथा कोषागार परिचालनों को बेहतर रूप में प्रबंधन करने में समर्थ बनाया है, और इस प्रकार अपनी निधि आधारित आय और लाभप्रदता को सुदृढ़ किया। इसके अलावा 1990 के बाद के दशक में वित्तीय बाजारों की वृद्धि ने बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं द्वारा अपने आस्ति एवं देयता प्रबंधन को सुधारने में योगदान किया है। साथ ही साथ, बड़ी कंपनियों द्वारा अपने वित्तपोषण संबंधी पैटर्न में उल्लेखनीय बदलाव लाया गया। और उन्होंने अपने संसाधनों को बैंकों द्वारा जुटाने की बजाए वित्तीय बाजारों से जुटाए।

6.138 यद्यपि रिज़र्व बैंक द्वारा की गई विभिन्न पहलों के परिणामस्वरूप मुद्रा बाजार, सरकारी प्रतिभूति बाजार तथा विदेशी मुद्रा बाजार गहन और व्यापक हुए हैं, फिर भी सुधारों की प्रक्रिया अभी समाप्त नहीं हुई है।

6.139 मुद्रा बाजार में रिज़र्व बैंक की नीति का जोर प्रतिभूति समर्थित ऋण बाजार के विकास को प्रोत्साहित करने, रेपो और सीबीएलओ के लिए प्रतिभूति के रूप में कार्य करने के लिए प्रतिभूतियों के पूल को व्यापक आधारवाला बनाने तथा आस्ति देयता प्रबंधन के ढांचे में और सुधार लाने के लिए बेहतर जोखिम प्रबंधन के लिए अवसर प्रदान करने पर रहेगा। एफआरबीएम के परिवेश में, सरकारी प्रतिभूति बाजार में उपयुक्त सुरक्षोपायों के साथ शॉर्ट-सेलिंग, 'ह्वेन इश्यूड' बाजार का विकास करना सक्रिय समेकन तथा प्रभावी ऋण प्रबंधन को सुनिश्चित करना कुछ ऐसी चुनातियां हैं जिन्हें रिज़र्व बैंक को फिलहाल झेलना पड़ रहा है। विदेशी मुद्रा बाजार में पूंजी खाता परिवर्तनीयता समिति की सिफारिशों के अनुसार पूंजी खाते का और उदारीकरण रिज़र्व बैंक को नई चुनातियां खड़ी कर सकता है। जोखिम प्रबंध प्रणालियां, डरिवेटिव्स लेखांकन मानकों, ग्राहक अनुकूलता तथा उपयुक्तता मानकों पर अधिक ध्यान देना होगा तथा प्रकटीकरण को सुधारना होगा।

6.140 भारतीय वित्तीय बाजारों का वैश्विक बाजार के साथ समन्वय के संदर्भ में, रिज़र्व बैंक अपने विनियामक प्रणाली-तंत्र को निरंतर उन्नत और अद्यतन बनाता रहा है ताकि वे वैश्विक मानकों के समकक्ष बन सकें। वित्तीय स्थिरता की सुरक्षा करने के लिए रिज़र्व बैंक सहित केंद्रीय बैंकों को चालू तथा विकसित हो रही वैश्विक गतिविधियां जैसी प्रचुर चलनिधि, तथा वैश्विक वित्तीय बाजारों में निम्न ब्याज दरें, वित्तीय बाजारों के सहभागियों की बढ़ती हुई उन्नत क्षमता, तथा जटिल और अत्यधिक समर्थित ऋण डेरिवेटिव्स सहित वित्तीय लिखतों तथा सांचागत उत्पाद जैसे संपार्श्विकीकृत ऋण दायित्वों के कारण चलनिधि और ब्याज दरों का जाखिम बढ़ सकता है तथा वित्तीय बाजारों में उद्वेगशीलता काफी बढ़ सकती है यदि अचानक और तेज समायोजन किया जाए। यह मुद्दा हाल में वित्तीय क्षेत्र में समेकन की हाल की गतिविधियों के संदर्भ में अधिक प्रासंगिक हो गया है। अच्छे दिनों में वित्तीय बाजारों के लिए एक मात्र सबसे महत्वपूर्ण जोखिम कारक आत्मतोष है। विश्व व्यापी वित्तीय स्थिरता रिपोर्ट, 2005)। इसके साथ अन्य कारक जैसे निम्न जोखिम तथा जटिल वित्तीय लिखतों से निपटने वाली जोखिम प्रबंध प्रणालियों के अपरीक्षित तत्व अंततः वित्तीय बाजारों के लिए खतरनाक हो जाते हैं। ये गतिविधियां रिज़र्व बैंक तथा अन्य केंद्रीय बैंकों को चुनातियां खड़ी कर देती हैं क्योंकि उन्हें इनकी मौद्रिक नीति की प्रतिकियाओं को बनाते समय अभिव्यक्त करना होता है, व्यवस्थागत चलनिधि जोखिमों को पूरा करने के लिए रणनीति बनाने तथा जोखिमों को दूर करने तथा वित्तीय बाजार के नवोन्मेषों पर घनिष्ठ निगरानी रखनी पड़ती है।

6.141 रिज़र्व बैंक सहित केंद्रीय बैंकों को वित्तीय मध्यस्थ जोखिम प्रोफाइल, विशेषकर संकेंद्रण जोखिम तथा अचानक आने वाले बाजार मूल्य आघातों के प्रति उनकी संवेदनशीलता के प्रति सतर्क रहना पड़ता है। चालू वैश्विक वित्तीय परिदृश्य उपयुक्त जोखिम प्रबंध रणनीतियों तथा बेहतर समन्वय तथा विदेशों की प्रतिकूल गतिविधियों का देशी अर्थव्यवस्था तथा बाजारों पर आनेवाले प्रभावों को रोकने के लिए केंद्रीय बैंकों के बीच सूचनाओं के आदान-प्रदान की आवश्यकता को रेखांकित करता है।

6.142 वित्तीय बाजारों में इन महत्वपूर्ण परिवर्तनों के होते हुए भी, ऐसे अनेक अतिसूक्ष्म कारक हैं जिनका मौद्रिक नीति पर प्रभाव हो सकता है। कुछ गतिविधियां जिनका आनेवाले वर्षों में मुद्रा और सरकारी प्रतिभूति बाजारों के आकार और विकास पर प्रभाव पड़ सकता है, वे हैं एफआरबीएम अधिनियम, 2003 का अनुपालन (जो 1 अप्रैल 2006 से केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों की प्राथमिक नीलामियों में रिज़र्व बैंक की सहभागिता को समाप्त कर देगी) जहां इससे ऋण प्रबंधन के कार्यकलापों को मौद्रिक परिचालनों से पृथक् कर दिया जाएगा जो रिज़र्व बैंक मौद्रिक परिचालनों में लचीलापन तथा अपने तुलनपत्र की संरचना में बेहतर नियंत्रण रखने में समर्थ बनाएगा, वहीं यह वित्तीय बाजारों में दीर्घकालीन स्थिरता बनाए रखने के लिए रिज़र्व बैंक तथा सरकार के बीच बेहतर समन्वय की मांग करेगा। बदले हुए मौद्रिक तथा ऋण प्रबंध परिदृश्यों के संदर्भ में रिजर्व बैंक को अपने खुले बाजार के परिचालनों तथा चलनिधि समायोजन सुविधाओं को बेहतर बनाने के लिए उपाय करने होंगे। अल्पावधि से मध्यावधि में बाजार चलनिधि का पूर्वानुमान लगाने में बेहतर सटीकता बहुत महत्वपूर्ण हो गई है। रिज़र्व बैंक रेपो के लिए प्रतिभूति के रूप में कार्य करने के लिए प्रतिभूतियों के समूह को व्यापक आधार प्रदान करने के मुद्दे की भी जांच करनी होगी।

6.143 मध्यावधि में रिज़र्व बैंक को जिस दूसरी चुनौती का सामना करना होगा वह है - भारतीय अर्थव्यवस्था का बढ़ता हुआ खुलापन तथा सुदृढ़ पूंजी के आगमों के बाद चलनिधि का प्रबंधन। चूंकि वित्तीय बाजारों में अत्यधिक उद्वेगशीलता, विनिमय दरों और ब्याज दरों के बीच परस्पर अन्योन्याश्रित संबंध होता है जो एक ओर अर्थव्यवस्था की प्रतिस्पर्धात्मकता में क्षरण और दूसरी ओर निष्प्रभावीकरण की वित्तीय लागत (जो विदेशी मुद्रा भंडार के विनियोजन से प्राप्त आय के ऊपर निष्प्रभावीकृत राशि पर कूपन के बहिर्गमन के रूप में मापी गई है) परिणत हो सकता है । रिज़र्व बैंक को अपने निष्प्रभावीकरण की परिचालनों में उचित रूप से संतुलन लाना होगा । इसके अलावा, निष्प्रभावीकरण का प्रभाव मुद्रा बाजार में अल्पावधिक ब्याज दरों के स्थिरीकरणों के मुद्दे के लिए भी पड़ेगा जो रिजर्व बैंक द्वारा अपने नीति संबंधी लिखतों को बेहतर बनाने की मांग करता है ताकि मांग मुद्रा की दरों को सीमित दायरे में (रेपो और रिवर्स रेपो की दरों के बीच) रखा जा सके।

6.144 उदारीकृत तथा समन्वित वित्तीय प्रणाली तथा बाजार केंद्रीय बैंकों के समक्ष नई चुनौतियां खड़ी करते हैं क्योंकि समष्टिगत अर्थव्यवस्था के प्रबंधन में विद्यमान विकृतियों को बढ़ाने की प्रवृत्ति होती है। यह अकसर अत्यधिक आशावादिता तथा वित्तीय आस्तियों के न्यून मूल्यांकन को जन्म देती है, जो पूंजी खाते की परिवर्तनीयता और उच्च राजकोषीय घाटे के साथ मिलकर संकट की ओर ले जाती हैं। एक उदारीकृत वित्तीय प्रणाली में, यह विनियमन नहीं, बल्कि यह बाजार अनुशासन है, जो वित्तीय स्थिरता बनाए रखता है। इसके लिए बेहतर पारदर्शिता, सुदृढ़ संस्थाओं का पोषण करने वाली तथा बेहतर जोखिम विश्लेषण प्रणालियों को विकसित करने की आवश्यकता बताती है । बाजार अनुशासन में सुधार भी बैंकों, वित्तीय बाजार के प्रमुख खिलाड़ियों तथा विनियामकों के बीच बेहतर समन्वय की मांग करता है) अतः बाजार अनुशासन (बेसिल II, पिलर III) को महत्व प्राप्त हो जाता है । भारत में वाणिज्य बैंक 31 मार्च 2007 से बासल II मानदंडों को लागू करना शुरू करेंगे। वित्तीय स्थिति में और बैंकों के जोखिम प्रोफाइल में बेहतर पारदर्शिता लाने के लिए भारत प्रकटीकरण के क्षेत्र को बढ़ा रहा है। बासल II को अपनाने से जोखिम प्रबंध प्रणालियों को सुधारने तथा भारतीय बैंकों की प्रतिस्पर्धात्मकता को बढ़ाएंगे। और इस प्रकार उन्हें वैश्विक वित्तीय बाजारों में अधिक सक्रिय भूमिका निभाने में समर्थ बनाएगा।

6.145 वर्षों से विश्व भर में मौद्रिक और वित्तीय प्रणाली में हो रहे परिवर्तनों ने वित्तीय बाजारों की गति को ही बदल दिया है। मौद्रिक नीति के क्षेत्र में निम्न और स्थिर मुद्रास्फीति के साथ-साथ अत्यधिक सुदृढ़ केंद्रीय बैंकों ने मौद्रिक सक्रियता को बदल दिया है। इसके फलस्वरूप जहां बढ़ती हुई मुद्रास्फीति अब कोई मुख्य चिंता नहीं रह गई है, आस्ति मूल्यों तथा ऋण में अत्यधिक वृद्धि प्रमुख चुनौतियों के रूप में उभरी हैं जिन्हें केंद्रीय बैंकों को झेलना पड़ता है, क्योंकि यह स्थिति वित्तीय अस्थिरता की ओर ले जा सकती है। चूंकि अर्थव्यवस्था, अधिक चक्रोन्मुखी हो गई है अतः मुद्रास्फीति वित्तीय स्थिरता को अब आगे से प्रमुख संकेतक नहीं है, क्योंकि आस्ति मूल्यों में भारी झुकाव वित्तीय अस्थिरता की ओर ले जा सकती है। वित्तीय स्थिरता के संदर्भ में बेहतर पारदर्शिता के अलावा, अर्थव्यवस्था के प्रमुख क्षेत्रों तथा बैंकों में विद्यमान प्रवृत्तियों का बेहतर विश्लेषण, दबावों और नीतियों के संकेतों का पता लगाने में जो मुद्रास्फीतिगत प्रत्याशाओं को बेहतर रूप से प्रभावित करते हैं तथा सावधानीपूर्वक अंतरराष्ट्रीय पूंजीगत आवागमन के उदारीकरण ने महत्व प्राप्त कर लिया है। रिजर्व बैंक तथा दूसरे केंद्रीय बैंकों को बाजार प्रेरित रणनीतियों तथा उन नीतियों का अनुसरण करना है जो स्थिर हों तथा अपेक्षाओं को पूरी करने वाली हों, राजकोषीय अनुशासन तथा गहन और सुचारू रूप से कार्य करने वाले वित्तीय बाजार केंद्रीय बैंक की नीति संबंधी रणनीति की सफलता के लिए आवश्यक है।

VII मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों के पारस्परिक संबंध विषयक मामले

7.1 केंद्रीय बैंकिंग समय के साथ-साथ राजनैतिक एवं आर्थिक शक्तियों की अनुक्रिया में विकसित होने वाली प्रक्रिया है। सिद्धांततः केंद्रीय बैंक, जो मौद्रिक नीति बनाता है तथा सरकार, जो राजकोषीय नीति के लिए जिम्मेदार है, के बीच, व्यापक आर्थिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, प्रभावी समन्वय आवश्यक है।

7.2 मौद्रिक-राजकोषीय समन्वय को क्रियान्वित करने के लिए हाल के वर्षों में अनेक देशों में सरकारों ने स्वयं को अनुशासित करने हेतु राजकोषीय जवाबदेही संबंधी कानून, जिनमें अन्य बातों के अतिरिक्त केंद्रीय बैंक से ऋण लेने की प्रवृत्ति पर रोक तथा उधार सीमा नियत करते हुए मुद्रास्फीति के स्थिरीकरण हेतु मौद्रिक नीति को अधिक नम्य एवं स्वायतः बनाने आदि से संबंधित मदों पर प्रावधान किए गए हैं। स्वतंत्र केंद्रीय बैंक की आवश्यकता की उद्घोषणा से इसको और बल मिला है । महत्वपूर्ण बात यह है कि कुछ ऐसे देशों ने, जिन्होंने अतिमुद्रास्फीति की समस्या झेली है, प्रायः केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता हेतु कानून बनाए हैं।

7.3 हालांकि रिज़र्व बैंक की स्थापना एक निजी स्वामित्व एवं प्रबंध वाले निकाय के रूप में हुई थी, परंतु वस्तुतः यह सरकारी निदेशों के अंतर्गत कार्य करता था। इस संबंध में, उल्लेखनीय है कि केंद्रीय निदेशक मंडल के सदस्य घरेलू हितों का प्रतिनिधित्व करते थे तथा ब्रिटिश साम्राज्य के हितों की रक्षा एवं रिज़र्व बैंक तथा बैंक ऑफ इग्लैंड की नीतियों में टकराव न हो, यह सुनिश्चित करने के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा गवर्नर की नियुक्ति की जाती थी। वास्तव में रिज़र्व बैंक के बोर्ड को अपनी मुद्रा एवं विदेशी मुद्रा विनिमय नीतियों के संबंधी निर्णयों का स्वरूप ब्रिटिश सरकार की नीतियों के अनुसार ढालने के लिए विवश होना पड़ता था ।

7.4 स्वतंत्रता के पश्चात् सन् 1949 में रिज़र्व बैंक के राष्ट्रीकरण के बाद से मौद्रिक-राजकोषीय संबंधों ने एक विकासशील देश की परंपरा के अनुसार मार्ग अपनाया है। योजनाबद्ध विकास प्रक्रिया की शुरुआत से राजकोषीय नीति ने निभावपरक मौद्रिक एवं अनुकूल ऋण प्रबंध नीति की सहायता से भारी सार्वजनिक निवेश के माध्यम से आर्थिक वृद्धि प्रारंभ करने की जिम्मेदारी संभाली। इस विषय में इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि सार्वजनिक ऋण के स्तर, संरचना एवं लागत के निर्धारण की प्रक्रिया में राजकोषीय, मौद्रिक एवं ऋण प्रबंध नीतियों का परस्पर घनिष्ठ संबंध रहा है। सार्वजनिक ऋण का बाज़ार दर से कम दर पर वित्तपोषण करने का औचित्य यह है कि सार्वजनिक परियोजनाओं की उत्पादन पूर्व निर्माणावधि बहुत लंबी होती है तथा जिसे संप्रभुता प्राप्त उधाकर्ता होने के कारण सरकार कम ब्याज दर पर ऋण लेने में समर्थ होनी चाहिए। हालांकि इससे सरकार ऋण की लागत में कमी कर सकी, तथापि इससे व्यापक आर्थिक नीति लक्ष्यों की प्राप्ति में मौद्रिक नीति उपकरणों की क्षमता घट गई। सन् 1980 के बाद के दशक के अंत तक राजकोषीय मौद्रिक मुद्रास्फीति का परस्पर संबंध उत्तरोत्तर स्पष्ट नज़र आने लगा जिसके कारण राजकोषीय घाटे के मौद्रीकरण से उत्पन्न मौद्रिक विस्तार से मुद्रास्फीति बढ़ी, इसके फलस्वरूप सरकारी खर्चों में राजस्व की प्राप्ति की अपेक्षा ज़्यादा वृद्धि हुई, जिससे बजट घाटा और बढ़ा। उसके रक्षात्मक उपाय के रूप में बजट असंतुलन के मौद्रिक दुष्प्रभावों को सीमित करने के लिए रिज़र्व बैंक ने बैंकों के आरक्षित अनुपातों में वृद्धि की जिससे बैंकेतर संस्थाओं के मुकाबले बैंकों की लाभप्रदता की हानि हुई। चूँकि पूर्वाधिकृत संसाधनों में वृद्धि सरकारी जरूरतों की पूर्ति हेतु अपर्याप्त थी, अतः सरकार को राजकोषीय सुविधाएं देकर सरकार को आबद्ध बाज़ार के बाहर से ऋण लेना पड़ा। विकास प्रक्रिया बनाए न रखे जा सकने के कारण 1990 के बाद के दशक में राजकोषीय, मौद्रिक एवं ऋण प्रबंधक नीतियों में सुधारों की बहुमुखी रणनीति बनाने की आवश्यकता हुई ताकि रिज़र्व बैंक को लिखत प्रयुक्त करने की ज़्यादा स्वाधीनता दी जा सके।

7.5 उपर्युक्त पृष्ठभूमि में इस अध्याय के शेष भाग को निम्नानुसार व्यवस्थित किया गया है। इसके भाग I में मौद्रिक-राजकोषीय पारस्परिक संबंधों के विकास , सिद्धांत एवं विश्लेषणात्मक संरचना का वर्णन किया गया है। भाग II में इस संबंध विभिन्न देशों में प्रचलित व्यवहारों की चर्चा की गई है।इसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि यद्यपि विभिन्न देशों मौद्रिक राजकोषीय संबंधों के तौर तरीके अलग-अलग हो सकते हैं तथापि सामान्य मान्यता यही है कि बाज़ार में विश्वास पैदा करने तथा मौद्रिक स्थिरता सुनिश्चित करने हेतु मौद्रिक नीति एवं राजकोषीय नीति में परस्पर संगति तथा अनुपूरकता आवश्यक है। वर्ष 1935-2003 अवधि में मौद्रिक और राजकोषीय परस्पर संबंधों के विकास की प्रक्रिया को तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है, जिसका वर्णन भाग III में किया गया है। प्रथम चरण में प्रारंभिक काल (1935-1930) का समावेश है, दूसरे चरण (1950-1991) में राजकोषीय सक्रियता एवं मौद्रिक निभाव का वर्णन किया गया है

तथा तीसरे चरण में व्यापक आर्थिक संकट तथा तदनुवर्ती वित्तीय क्षेत्र सुधारों (1991-2003) का चित्रण किया गया है। रिज़र्व बैंक द्वारा लोक ऋण का प्रबंध मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों के बीच की महत्वपूर्ण कड़ी है। तदनुसार भाग IV में सार्वजनिक ऋण प्रबंध रणनीति के परिवर्तन सहित लोक ऋण प्रबंध की विकास यात्रा का वर्णन निष्क्रिय प्रबंधन से लेकर अधिक सक्रिय ऋण प्रबंध रणनीति V में 2003-05 अवधि में राजकोषीय विधान, मौद्रिक प्रबंध तथा किया गया है जिसमें परिवर्तन का समावेश है ऋण प्रबंध पर चर्चा की गई है। राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध की पृष्ठभूमि में मौद्रिक-राजकोषीय समन्वय का वर्णन भाग VI में किया गया है। भाग VII में भारत में मौद्रिक-राजकोषीय संबंधों का आकलन तथा भाग VIII में उपसंहार के तौर कुछ मुद्दों पर चर्चा की गई है।

I. मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंध: विकास, सिद्धांत एवं विश्लेषणात्मक संरचना

विकास

7.6 केंद्रीय बैंकों का जन्म विशेष ऐतिहासिक परिस्थितियों में हुआ है जो न सिर्फ उनके द्वारा किए जाने वाले कार्यों को प्रभावित करती हैं, बल्कि उनकी परिचालन शैली पर भी प्रभाव डालती हैं। यद्यपि केंद्रीय बैंकों की परिचालन प्रक्रिया मे ंअंतर हो सकता है, परंतु सभी जगह वे मौद्रिक नीति के परिचालन के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस संदर्भ में मौद्रिक सिद्धांतों में परिष्कार ने केंद्रीय बैंकिंग के सिद्धांत के विकास में बहुत भारी योगदान किया है।

7.7 प्रारंभिक केंद्रीय बैंकों (स्वीडन और इग्लैंड) से आधुनिक केंद्रीय बैंकों द्वारा निष्पादित कार्यों किए जाने वाले को करने की उम्मीद नहीं की गई थी, बल्कि उनकी स्थापना सरकारों के बजट घाटे की पूर्ति के लिए की गई थी। विधि द्वारा केंद्रीय बैंकों को नोट निर्गम का एकाधिकार प्रदान करने से इस कार्य मेंसुविधा हो गई । मुद्रा सृजन की शक्ति के प्रत्यायोजन से उस मुद्रा के मूल्य की रक्षा की ज़िम्मेदारी भी आ पड़ी। समय के साथ-साथ मुद्रा निर्गम के एकाधिकार तथा साथ ही सरकार का बैंकर होने के विशेषाधिकार से ऐसी स्थिति पैदा हो गई कि जहाँ बैंक का स्वामी (सरकार) ही उसका सबसे बड़ा कर्जदार बन गया। इससे सरकारों में अपनी ऋणग्रस्तता को अपने वित्तपोषण के लिए प्रयोग करने की प्रवृत्ति बढ़ी। परंतु केंद्रीय बैंक द्वारा उपलब्ध कराए गए ऋण से केंद्रीय बैंक द्वारा जारी मुद्रा का अवमूल्यन हुआ। हालांकि मुद्रा के अवमूल्यन से सरकार के वास्तविक ऋण में कमी हुई, परंतु इससे मुद्रा की क्रयशक्ति के ह्रास द्वारा आर्थिक परिवेश में अनिश्चितता पैदा हो गई। इस प्रकार केंद्रीय बैंक की सरकार का बैंकर की भूमिका से इसके मुद्रा के मूल्य के अनुरक्षण के प्रमुख कार्य में बाधा आई । इन परिस्थितियों से केंद्रीय बैंक के मौद्रिक नीति लक्ष्यों एवं सरकार का बैंकर होने की भूमिका में टकराव पैदा हुआ।

7.8 प्रमाणों से यह संकेत मिलता है कि सरकारों द्वारा असीमित केंद्रीय बैंक ऋण का प्रयोग औपनिवेशिक विस्तार, युद्धों एवं द्वितीय विश्व युद्धोत्तर अर्थव्यवस्थाओं के नवनिर्माण के वित्त पोषण के लिए किया गया (जाधव, 2003) । इस काल में सरकार के घाटे के वित्तपोषण से उत्पन्न दबाव से मुद्रास्फीति को बढ़ावा नहीं मिला क्योंकि तब अर्थव्यवस्थाएं अपनी वर्तमान क्षमताओं से नीचे कार्य कर रही थीं। परंतु निरंतर उच्चतर क्षमता के उपयोग से राजकोषीय नीति प्रेरित प्रगति प्रक्रिया ने आपूर्ति संकटों जैसे तेजी से बढ़ते अंतरराष्ट्रीय तेल मूल्यों एवं वास्तविक उत्पादकता संबंधी आघातों से बाधा आई। इससे आर्थिक गत्यावरोध उत्पन्न हुआ तथा साथ ही सभी देशों में मुद्रास्फीति में वृद्धि हुई जिससे 1970 के बाद के दशक में मुद्रागत अपस्फिति की स्थिति पैदा हो गई । तदनुसार शैक्षिक क्षेत्रों तथा नीति निर्माता क्षेत्रों में दोनों केंद्रीय बैंक की भूमिका एवं लक्ष्यों की पुनरीक्षा की गई तथा इसके फलस्वरूप केंद्रीय बैंक के लक्ष्यों में सरकार के वित्तपोषण के लिए मुद्रा नीति के रुझान पर की तुलना में मूल्य स्थिरता को वरीयता दी गई। विभिन्न सरकारों एवं केंद्रीय बैंकों ने अपनी नीतियों की प्राथमिकताओं का पुनर्निधारण किया तथा सरकारों को आर्थिक विकास दर में वृद्धि करने तथा केंद्रीय बैंकों को मूल्य स्थिरता निश्चित करने की भूमिका दी गई। परंतु चूंकि समाज की दृष्टि से वे दोनों ही लक्ष्य वांछनीय हैं, अतः सन 1980 दशक के मध्य से आर्थिक नीति की दोनों शाखाओं (राजकोषीय एवं मौद्रिक) के बीच बेहतर समन्वय पर जोर दिया गया।

व्यापक आर्थिक सिद्धांत

7.9 केंज़ ने एक ऐसे मौद्रिक सिद्धांत का प्रतिपादन करके, जो केंद्र में एक केंद्रीय बैंक को रखकर पूर्णतः विकसित बैंकिंग क्षेत्र के इर्द - गिर्द घूमता है, स्थूल आर्थिक विचारधारा में क्रांति ला दी (केंज़, 1936)। आर्थिक प्रणाली की केन्ज़ की मान्यता में आर्थिक प्रणाली एक स्वनियंत्रित निकाय नहीं है बल्कि वह कारणात्मक कड़ियों का जटिल समुच्चय है, जिससे नीति निर्माता निर्देशित करने का प्रयास करता है। इस पृष्ठभूमि में जहां राजकोषीय नीतिगत उपायों को राष्ट्रीय सरकारों का अधिकार क्षेत्र माना गया, वहीं अर्थव्यवस्था को वांछित दिशा में ले जाने के लिए मौद्रिक उपायों का अधिकार केंद्रीय बैंक को दिया गया ।

7.10 प्राचीन अर्थशास्त्रियों के इस दृष्टिकोण से कि पैसा सिर्फ एक पर्दा है, अलग हटते हुए केंज़ ने ब्याज दर एवं अर्थव्यवस्था में निवेश के स्तर के बीच के संबंधों पर जोर देते हुए अर्थव्यवस्था के मौद्रिक

एवं वास्तविक क्षेत्रों का समेकन किया । उसने तर्क दिया कि केंद्रीय बैंक मुद्रा के सृजन द्वारा ब्याज दर में परिवर्तन ला सकते हैं जिसके कारण फर्मों के दीर्घावधि निवेश की लाभप्रदता बदल सकती है तथा वास्तविक क्षेत्र की गतिविधियों के स्तर पर प्रभाव पड़ सकता है। चूंकि केंद्रीय बैंक विकास कार्यों के प्रत्यक्ष वित्तपोषण या फिर सरकार के घाटे के वित्तपोषण द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से मुद्रा सृजन कर सकता है, अतः मौद्रिक-राजकोषीय कड़ी केन्ज़ के मौद्रिक सिद्धांत में अंतर्निहित थी। परंतु केन्ज़ ने यह सुझाव दिया कि मुद्रा मांग, ब्याज दरों एवं आर्थिक गतिविधि के स्तर के बीच का संबंध अस्थिर है तथा संपत्ति धारकों तथा भविष्य के प्रति उनकी आशंकाओं से इसमें तीव्र परिवर्तन आते हैं।

7.11 द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद पहले दो दशकों में केन्ज़ की विचार धारा ने यह तर्क दिया कि उपभोक्ताओं एवं फर्मों के व्यय का निर्णय प्रायः आस्तियों पर आय की दर पर निर्भर नहीं करते, बल्कि वे प्रत्याशागत परिवर्तियों के प्रति ज़्यादा संवेदनशील होते हैं। केंज़ की यह अति अमौद्रिक व्याख्या केंद्रीय बैंकों के लिए परंपरागत बुद्धिमत्ता बन गई। परिणामतः राजकोषीय नीति संबंधी केंद्रीय कार्यों का केंद्र बन गई तथा मौद्रिक नीति को हाशिए पर धकेल दिया गया। इस अवधि में राजकोषीय नीति के उत्कर्ष का आंशिक कारण, केन्ज़ियन नीति के इस निर्धारण कि समग्र मांग की कमी की समस्या को स्फीतिकारक राजकोषीय नीति से निपटा जा सकता है, की स्वीकृति के अतिरिक्त 1930 के बाद के दशक की महा मंदी तथा द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर नवनिर्माण की प्रक्रिया थी।

7.12 1970 के बाद में दशक के प्रारंभ में हुई घटनाओं ने केन्ज़ के सिद्धान्तों को कटघरे में खड़ा कर दिया : निश्चित विनिमय दर प्रणाली का विघटन, प्रथम ओपेक (ओपीइसी) तेल संकट, खराब पैदावार एवं फसलों की बर्बादी तथा वियतनाम युद्ध के दुष्प्रभावों के संयुक्त प्रभाव से अमरिका में मुद्रास्फीति दर में वृद्धि हुई तथा उच्च बेरोजगारी आई। अन्य कई देशों की अर्थव्यवस्थाएं भी समांतर रूप से डगमगा गईं। यह अपस्फीतिकारी स्थिति अल्पावधिक फिलिप्स वक्र की इस परंपरागत मान्यता से टकराता हुआ लगा कि उच्चतर मुद्रास्फीती की लागत पर निम्न बेरोजगारी प्राप्त की जा सकती है। बाद के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि दीर्घावधि में मुद्रास्फीति एवं बेरोजगारी का अन्योन्याश्रित संबंध होने का कोई सिद्धांत लागू नहीं होता तथा इससे मुद्रास्फीति के विरुद्ध ज़्यादा निश्चयपूर्वक संघर्ष करने का मार्ग खुला।

7.13 1970 के बाद के दशक में नई पीढ़ी के अर्थशास्त्रियों ने यह मान कर कि बाज़ार के सहभागियों की प्रत्याशा तर्कसंगत होती है तथा बिना कोई आग्रह किए बाज़ार स्वच्छता के दृष्टिकोण को अपनाते हुए यह तर्क दिया कि प्रत्याशित नीतिगत उपायों का कोई महत्व नहीं होता तथा केवल अप्रत्याशित नीतिगत उपायों से ही कोई असली और वह भी अस्थायी असर पड़ सकता है। बाज़ार सहभागियों के ऐसे आश्चर्यों की उत्पत्ति से बचाने के लिए यह तर्क दिया गया कि स्थिरीकरण की नीति विभेदकारी नहीं होनी चाहिए क्योंकि इससे बाज़ार में विकृति आती है। अतः, नीतिगत प्रयोजनों के लिए नियम आधारित मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की संस्तुति की गई, जो प्रत्याशागत बेमेलता एवं परिणामों की अनिश्चितता का निवारण करने में सहायक होती है।

7.14 तर्कसंगत प्रत्याशागत प्रतिमानों ने भावी मुद्रा नीति के सिद्धांतों एवं व्यवहारों पर काफी प्रभाव डाला । केन्ज मत के अर्थशास्त्रियों ने सिद्ध किया कि तर्कसंगत प्रत्याशा के सिद्धांत को सत्य मान कर भी, प्रत्याशित नीति उपायों से वास्तविक प्रभाव पड़ता है, बशर्ते बाज़ार समाशोधन मान्यता में ढ़ील दी जाए (फिशर, 1977 एवं फेल्पस और टेलर, 1977)। और आगे किए गए अनुसंधान ने इस मत को रेखांकित किया कि बाज़ार स्थिरीकरण की भूमिका में प्रभावी होने लायक पर्याप्त स्फूर्ति नही हैं तथा इस पर बाह्य राजनैतिक विचारों का भारी प्रभाव होता है (डार्नबुश एवं फिशर, 1990)। अतः व्यापक आर्थिक स्थिरीकरण की जिम्मेदारी की भूमिका मौटे तौर पर केंद्रीय बैंक को दे दी गई तथा यह माना गया कि राजकोषीय नीति केवल एक दूसरे मांग संकट को दर्शाती है, जिसका मौद्रिक नीति को निराकरण करना चाहिए। परिणामतः मौद्रिक नीति का महत्व बढ़ा जिससे कई मामलों में राजकोषीय घाटे के प्रति लापरवाह सरकारों पर लगाम लगाने के लिए स्वतंत्र केंद्रीय बैंक की स्थापना करने जैसे संस्थागत परिवर्तन किए गए। इस विचारधारा ने पूर्ववर्ती जर्मनी के बुडेस बैंक की कार्यप्रणाली को प्रभावित किया तथा यूरोपीय केंद्रीय बैंक की नींव रखी।

7.15 सन 1980 के बाद के दशक में क्रीड़ा सिद्धांत (गेम थ्योरी) के कार्यान्वयन से स्थिरीकरण नीति के सिद्धांत को और बल मिला। इस व्यवस्था में आर्थिक नीति की दो शाखाओं (राजकोषीय और मौद्रिक) में संघर्ष के रूप में असहयोगी व्यवहार से समाज की दृष्टि से कम-अभीष्टतम परिणाम मिले एवं समाज-कल्याण का ह्रास हुआ। परिणामतः सामाजिक दृष्टि से वांछनीय मूल्य स्थिरीकरण सहित आर्थिक वृद्धि के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सन 1980 के बाद के दशक के मध्य से बेहतर मौद्रिक राजकोषीय समन्वय पर जोर दिया जा रहा है।

[1] स्थायित्व की नीति में कई कठिनाइयां हैं जो लिखतों तथा लक्ष्यों के बीच परस्पर संबंध से पैदा हुई हैं क्योंकि एक लक्ष्य को पाने की कोशिश में दूसरा हाथ से छूट जाता है। इस संदर्भ में, टिंबरजन ने एक विशेष लक्ष्य को पाने के लिए केवल एक लिखत के चयन की वकालत की है, अर्थात् लक्ष्यों तथा लिखतों की संख्या समान होनी चाहिए।

मौद्रिक राजकोषीय समन्वय : सैद्धान्तिक आधार

7.16 चूंकि समन्वय की समस्या के मूल में उपकरणों का अभाव है, अतः टिंबरजन के परंपरागत लक्ष्य एवं साधनगत दृष्टिकोण मौद्रिक-राजकोषीय समन्वय के लिए एक उपयोगी संरचना उपलब्ध करता है (टिंबरजन, 1952)[1]। यदि सरकार के पास पर्याप्त संख्या में राजकोषीय साधन उपलब्ध हैं तो सरकार के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह अपने कार्यों के लिए केंद्रीय बैंक के कार्यों के साथ समन्वय करे। इस विषय में, सरकार एवं केंद्रीय बैंक दोनों के पास उपलब्ध साधनों की संख्या जानना आवश्यक है तथा यह अर्थव्यवस्था के समुचित प्रतिमान के चयन तथा लक्ष्यों की सही सूची पर निर्भर करता है। यदि राजकोषीय उपकरण सक्षम हैं तो वे पर्याप्त हो सकते हैं, बशर्ते मौद्रिक नीति का राजकोषीय नीति के साथ पूर्ण समन्वय किया जाए क्योंकि समन्वय के अभाव में कम-अभीष्टतम परिणाम प्राप्त होते हैं (बाक्स VII-1)। परंतु लेटिन अमेरिकी संदर्भ में इसका उलटा (यथा अर्जेंटीना) उदाहरण देखने को मिला जहां अति उच्च मुद्रास्फीति के कारण वास्तविक खपत के स्तरों की सुरक्षा करने के लिए मजदूरी एवं वेतनों का सूचीकरण करने जैसे राजकोषीय उपाय करने पड़े। इससे मजदूरी - मूल्य - उच्च चक्र की स्थिति पैदा हुई तथा अर्थव्यवस्था में स्थायी अति उच्च मुद्रास्फीति की समस्या उत्पन्न हो गई। इस प्रकार राजकोषीय दृष्टि से मुद्रास्फीति को बेहतर निभाव के रूप में मौद्रिक राजकोषीय समन्वय के कारण निम्नस्तरीय परिणाम मिले।

7.17 अनुसंधान की अन्य धारा यह उल्लेख करती है कि मौद्रिक राजकोषीय समन्वय महत्वपूर्ण[2] नहीं है। अग्रमुखी नव केन्जियन प्रतिमानों में मौद्रिक नीति के लिए राजकोषीय नीति की प्रासंगिकता सिर्फ यहाँ तक सीमित है कि राजकोषीय नीति एक मांग संकट का प्रतिनिधित्व करती है जिसका मौद्रिक प्राधिकारी को प्रतिकार करना चाहिए। दीर्घावधि में राजकोषीय समेकन से न्यूनतर संतुलनकारी वास्तविक ब्याज दर की स्थिति उत्पन्न होगी (टेलर, 1995)। ऐसे परिवेश में मुद्रास्फीति को लक्ष्य के समीप रखने के लिए सांकेतिक ब्याज दर में कटौती करनी अपेक्षित होगी। अतः राजकोषीय नीतियों के परिवर्तनों से मौद्रिक नीति समायोजन की आवश्यकता पैदा होगी, परंतु राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों को मिश्रण व्यापक से आर्थिक परिणामों पर प्रभाव नहीं पड़ेगा।

बॉक्स VII.1
मौद्रिक आर राजकोषीय समन्वय के मुद्दे

राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों के समन्वय में कई विशेषताएं हैं । पहली, उनकी परस्पर क्रियाएं सकल मांग को प्रभावित करती हैं और अल्पावधि में उत्पादन तथा ब्याज दरों का निर्धारण करती हैं । दूसरी, खुली अर्थव्यवस्था के संदर्भ में, कठोर मौद्रिक नीति के कारण ऊंची ब्याज दरें जहां व्यापार किए जाने वाले माल की उत्पादन लागत पर विपरीत प्रभाव डाल सकती हैं, वहीं राजकोषीय उपाय टैरिफ, कोटा तथा सीमा-शुल्क के माध्यम से ऐसी वस्तुओं के उत्पादकों पर पड़ने वाले बोझ को समाप्त कर सकते हैं। तीसरी, मौद्रिक राजकोषीय समन्वय, बाण्ड तथा सरकारी घाटे को धन उपलब्ध कराने में आदर्श संयोजन सुनिश्चित करता है, क्योंकि केंद्रीय बैंक क खुला बाजार परिचालन यह निर्धारित करता है कि कितना धन/ बांड उपलब्ध करवाया जाना है। चौथी, राजनीतिक दबाव समन्वय कार्य थोप सकता है क्योंकि, प्रजातंत्र में सरकार को आर्थिक नीति के उद्देश्य निर्धारित करने का खुला जनादेश हासिल होता है, जिसका मौद्रिक प्राधिकारी को पालन करना ही होता है। पांचवीं, समय की धारणा और चर अंतराल जिनकी सहायता से राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति के उपकरण लघु तथा दीर्घकालिक लक्ष्यों पर प्रभाव डालते हैं जिसके लिए आर्थिक नीति की इन दो भुजाओं के बीच कुछ हद तक समन्वय की आवश्यकता होती है। अंतिम, गैर समन्वयित नीतिगत परिणामों की अनिश्चितता को सक्रिय समन्वय से न्यूनतम किया जा सकता है क्योंकि समन्वयन की असफलता से प्रायः सामाजिक कल्याण का भारी नुकसान होता है।

तथापि, प्रश्न यह है कि क्या अधिक समन्वय वाकई बेहतर होता है ? यदि केंद्रीय बैंक और सरकार दोनों इस बात पर सहमत हैं कि क्या किया जाना है, किंतु यदि दोनों प्राधिकारियों में से किसी एक के अनिश्चित व्यवहार के कारण समन्वित दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सका तो, ऐसी स्थिति में समन्वय से ही उसमें सुधार लाया जा सकेगा जिसमें समझदार नीति निर्माताओं को अड़ियल प्राधिकारी पर हावी होना पड़ेगा। हालांकि, वास्तविकता यह है कि राजकोषीय और मौद्रिक नीतियों में समन्वय प्रायः बहुत कमजोर होता है । यदि दोनों प्राधिकारी सामंजस्य से और विश्वसनीय कार्रवाई करें तो समन्वय की कमी इन तीन कारणों में से किसी एक के कारण उत्पन्न हो सकती है, जैसे (i) राजकोषीय और मौद्रिक प्राधिकारी दोनों के अलग-अलग उद्देश्य हो सकते हैं अर्थात् समाज के लिए सबसे अच्छा क्या है उसके बारे में अलग-अलग मत; (ii) राजकोषीय और /अथवा मौद्रिक नीति कार्रवाई का अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाल संभावित प्रभाव के बारे में दोनों प्राधिकारियों के मत भिन्न हो सकते हैं, अर्थात् वे अलग-अलग आर्थिक सिद्धांतों का पालन कर सकते हैं ; और (iii) नीतिगत हस्तक्षेप की अनुपस्थिति में अर्थव्यवस्था की संभावित स्थिति के बारे में दोनों प्राधिकारी अलग-अलग भविष्यवाणी कर सकती हैं (ब्लाइंडर, 1982)। समन्वय की समस्या तभी हल हो सकती है जब उपयुक्त उद्देश्य या सही सिद्धांत या सही भविष्यवाणी वाले प्राधिकारी के हाथ में निर्णय लेने की शक्ति दे दी जाए, बशर्ते यह मालूम हो कि दोनों प्राधिकारियों में सही कौन है। सच्चाई यह है, कि यह पहले से शायद ही कभी मालूम हो पाता है। सबसे अच्छी रणनीति यह है कि दोनों प्राधिकारियों को थोड़े थोड़े अधिकार दे दिए जाएं और दोनों को एक दूसरे की कार्रवाइयों को निरस्त करने की थोड़ी सी पात्रता दे दी जाए, हालांकि इसका सबसे खराब परिणाम यह हो सकता है कि दोनों में हित की लड़ाई हो जाए अथवा यह भी संभावना है कि यह लड़ाई एक गतिरोध बनके रह जाए।

[2] मंडल फ्लेमिंग ढांचे में, मौद्रिक और राजकोषीय नीतियों के बीच समन्वय का मुद्दा पूर्ण पूंजी गतिशिलता के संसार में विद्यमान नहीं होता है, क्योंकि राजकोषीय नीति तभी प्रभावी होती है जब विनिमय दर स्थिर हो जबकि मौद्रिक नीति तब प्रभावी होती है जब विनिमय दर परिवर्तनीय हो।

7.18 तथापि, नीतिगत मिश्रण की यह अप्रासंगिकता अंतिम सत्य नहीं है क्योंकि तीन अलग-अलग परंतु परस्पर संबंधित मुद्दे नीतिगत समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं (कुटनर, 2002) । प्रथम, मौद्रिक राजकोषीय समन्वय का सर्वाधिक स्पष्ट प्रभाव उत्पादन की संरचना पर पड़ता है। एक आबद्ध अर्थव्यवस्था में सरकारी खर्च में वास्तविक वृद्धि से निवेश मांग पर कुछ हद तक ह्रासकारी प्रभाव पड़ता है। वास्तविक ब्याज दर में कमी करके, विस्तारवादी मौद्रिक नीति निवेश के ह्रासकारी प्रभाव को कम कर सकती है, परंतु इससे मुद्रास्फीति बढ़ने का खतरा है। इसके अलावा मौद्रिक-राजकोषीय मिश्रण का भुगतान संतुलन के चालू खाते पर इसका प्रभाव एक अन्य संबंधित आयाम है। राजकोषीय विस्तार से ब्याज दरों पर वृद्धिकारी प्रभाव पड़ेगा तथा इससे उत्पन्न ब्याज दर अंतराल से विदेशी पूंजी के अंतर्प्रवाह को प्रेरणा मिलेगी एवं इस प्रकार निवेश का ह्रासकारी प्रभाव कम होगा। परंतु पूंजी अंतर्प्रवाह का निहितार्थ यह है कि स्वदेशी मुद्रा के अधिमूल्यन से चालू खाता घाटा बढ़ेगा। सन 1980 के बाद के दशक के अमेरिकी घाटा-द्वय की यही व्याख्या दी गई थी। अभी हाल ही में विपरीत प्रकार की समस्या अर्थात कठोर राजकोषीय नीति एवं नरम मौद्रिक नीति सन 1999 यूरो के प्रचलन होने के तुरंत बाद उसके अवमूल्यन के लिए ज़िम्मेदार था (कोहन एवं लाइसेल, 2001) ।

7.19 मौद्रिक-राजकोषीय परस्पर प्रभावों का एक दूसरा विचार इस दृष्टिकोण से उभरता है कि , प्रत्येक राजकोषीय नीतिगत कार्य जिसमें चालू खाता बजट घाटा में वृद्धि होती है का वित्तपोषण या तो भावी कर राजस्व में वृद्धि करके या सरकार की मूल्यवर्गित देनदारियों जैसे कि मुद्रा जिसका कि घाटे के वित्तपोषण के लिए सिक्का ढ़लाई के रूप में प्राप्त लाभ का प्रयोग किया जा सकता है। बिना किसी प्रत्यक्ष मौद्रिक कार्यवाही के भी मूल्य स्तर में वृद्धि द्वारा दो अवधियों के बीच राजकोषीय संतुलन पुनर्स्थापित किया जा सकता है जिससे सरकार की बकाया देनदारियों का मूल्य घटेगा। जहाँ पारंपरिक मत यह है कि राजकोषीय घाटे से अत्यधिक मौद्रिक विस्तार एवं परिणामस्वरूप मुद्रास्फीति का जन्म होता है, परंतु वहीं मूल्य स्तर का राजकोषीय सिद्धांत (एफटीपीएल) का तर्क है कि राजकोषीय असंतुलन से मुद्रास्फीति में वृद्धि होती है तथा तत्पश्चात् मुद्रा आपूर्ति में उच्च मूल्यों के अनुरूप वृद्धि होती है (वुड फोर्ड, 2001) ।

7.20 तीसरा दृष्टिकोण मौद्रिक एवं राजकोषीय असहयोग से उभरता है । राजकोषीय प्राधिकारियों का व्यवहार मौद्रिक अधिकारियों के मुद्रास्फीति के लक्ष्य को प्राप्त करने के सामर्थ्य को प्रभावित करता है। परंतु इन परिस्थितियों में मूलतः प्राधिकारियों के लक्ष्यों में अंतर होने से उनमें टकराव पैदा होता है। जबकि मौद्रिक प्राधिकारी का यह प्रयास होता है कि उत्पादन एवं मुद्रास्फीति का स्तर राजकोषीय प्राधिकारी के वांछित स्तर से कम रहे, वहीं राजकोषीय प्राधिकारी का प्रयास यह होता है कि उत्पादन एवं मुद्रास्फीति का स्तर मौद्रिक प्राधिकारी की सुविधा स्तर से ऊपर रहे। इस असहयोग का परिणाम होता है, मुद्रास्फीति कारक राजकोषीय नीति जिसका निवारण संकुचनकारी मुद्रा नीति द्वारा किया जाता है (नोरधास, 1994) । इसके अतिरिक्त मौद्रिक नीति प्राधिकारी के पूर्व-वचनबद्धता की कोई उपयोगिता नही होती है, क्योंकि इसके इस वचनबद्धता का मूल्य विवेकाधिकार वादी राजकोषीय नीतिगत कार्यवाही से पूर्णतः नकारात्मक हो जाता हैं (दीक्षित एवं लंबर्टिनी, 2003) ।

मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंध का विश्लेषणात्क ढांचा

7.21 राजकोषीय एवं मौद्रिक नीति एक ही संपूर्ण व्यापक आर्थिक नीति की दो शाखाएं हैं तथा आर्थिक स्थिरता उनका सांझा लक्ष्य है। राजकोषीय नीति सार्वजनिक ऋण का आकार निर्धारित करती है, जबकि मौद्रिक नीति यह निर्धारित करती है कि इस ऋण का कितना अंश केंद्रीय बैंक से लिया जाएगा तथा ऋण प्रबंध नीति लोक ऋण की लागत एवं संरचना तय करती है। इन नीतियों के लक्ष्यों में सदा समरसता नहीं होती, इसके अलावा इन नीतियों में कुछ अंतर्निहित लाभ भी हो सकते हैं जिसके कारण लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए नीतिगत समन्वय की आवश्यकता पड़ सकती है। इस संदर्भ में मौद्रिक-राजकोषीय समन्वय के विस्तृत मिलेजुले ढांचे में कई मुद्दों से निपटा जा सकता है।

7.22 मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों के बीच संबंध का विश्लेषण राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण के लिए मौद्रिक वित्त पोषण बांड द्वारा वित्तपोषण में से एक के चयन के संदर्भ में किया जा सकता है । बांड द्वारा ऋण उगाहने का अर्थ है कि सरकारी ऋण का एक निवल भाग आंतरिक या बाह्य बाज़ार में बेचा जाए। दूसरी ओर मुद्रा द्वारा वित्तपोषण 3 में केंद्रीय बैंक द्वारा प्राथमिक निर्गम से ऋण खरीद, खुले बाज़ार के परिचालन एवं गैर जमानती अग्रिम के रूप में केंद्रीय बैंक के सरकार के प्रति निभाव में परिवर्तन। ज़्यादा बांड निर्गम से ब्याज दर पर वृद्धि हेतु दबाव बढ़ता है तथा इससे आर्थिक विकास पर बुरा असर पड़ता है। मुद्रा विस्तार एवं तदनुसार मुद्रा आधार में वृद्धि से मुद्रास्फीति को बल मिलता है जिससे घाटा बढ़ता है और परिणाम स्वरूप भारी घाटा, ज़्यादा मौद्रिक वित्तपोषण और उच्च मुद्रास्फीति दर के दुष्चक्र की सृष्टि होती है।

[3] प्रत्यक्ष मौद्रीकरण और द्वितीयक बाज़ार परिचालनों द्वारा मौद्रीकरण के बीच अंतर किए जाने की आवश्यकता है।

[4] सार्जेन्ट और वालेस (1981) का "मौद्रिककार का नापसंदीदा गणित" प्रस्तुति में यह दिखाया गया है कि बाण्ड का वित्तपोषण अत्यधिक स्फीतिकारी दबाव पैदा कर सकता है, जो मुद्रास्फीति के प्रति राजकोषीय कारण बनता है।

परंतु सरकारी घाटे के मुद्रीकरण से, विशेषकर अतिरिक्त क्षमता की उपस्थिति में, यह आवश्यक नहीं है कि बुरा प्रभाव पड़े।

7.23 केंद्रीय बैंक द्वारा राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण कदाचित ही स्वैच्छिक होता है। एक केंद्रीय बैंक प्राथमिक बाज़ार में राजकीय प्रतिभूतियों की खरीद द्वारा सरकार को ऋण प्रदान करने को बाध्य होता है। इसीप्रकार केंद्रीय बैंकों के चार्टरों में सरकारी स्वामित्व के कारण केंद्रीय बैंक द्वारा वार्षिक लाभ का सरकार को स्थानांतरण के संबंध में प्रावधान अनिवार्य वित्तपोषण का उदाहरण है। इसके अलावा, सरकारी घाटे का वित्तपोषण बाज़ार ब्याज दर या भारी रियायती दरों पर हो सकता है तथा उत्तरवर्ती अनिवार्य वित्तपोषण का ही एक प्रकार है। इससे भी आगे, विदेशी मुद्रा विनिमय गारंटियां निक्षेप बीमा, आकस्मिक देनदारियां एवं निदेशित ऋण प्रवाह आदि कुछ अर्ध राजकोषीय कार्य हैं जो केंद्रीय बैंक सरकार की ओर से करता है तथा जिनकी लागत सरकार के तुलनपत्र पर परिलक्षित नहीं होती है। इसके विपरीत चलनिधि के प्रबंध की दृष्टि से द्वितीयक बाज़ार से सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद स्वैच्छिक वित्तपोषण का उदाहरण है।

7.24 उपरोक्त संदर्भ में, यह नोट करना समीचीन होगा कि ऋण के वित्तपोषण के भिन्न तरीकों के प्रभाव अलग-अलग होते हैं। एक ओर आंतरिक ऋण पर निर्भरता से वाणिज्यिक क्षेत्र को ऋण उपलब्धता, ब्याज दर तथा मुद्रा आधार पर दुष्प्रर्भाव पड़ता है, वहीं बाह्य ऋण से बाह्य क्षेत्र के प्रबंध पर असर होता है। अनिवार्य तरीके से सरकारी बांडों की खरीद से भी निजी निवेश का ह्रास होता है। अतः मौद्रिक एवं राजकोषीय संबंधों के विश्लेषण के लिए राजकोषीय घाटे के मौद्रिकरण के परिमाण पर विचार करना पर्याप्त नहीं होगा तथा इसका दायरा बढ़ा कर मुद्रास्फीति को स्थिर रखने, इसके लिए राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण का अभीष्टतम मिश्रण, व्यापक आर्थिक स्थिरता में सहायक ब्याज दर एवं विनिमय दर स्तर को भी इसमें शामिल करना आवश्यक है (रेड्डी, 2000 क)।

7.25 सफल स्थिरीकरण नीति के लिए यह आवश्यक है कि अर्थव्यवस्था के विस्तार एवं संकुचन दोनों के लिए मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों में पूर्व समन्वय हो। विकसित अर्थव्यवस्थाओं में समन्वय की आवश्यकता अपेक्षाकृत कम होती है क्योंकि प्रत्येक नीति अलग अपना कार्य करती है तथा लक्ष्यों की प्राप्ति एवं सामंजस्य बाज़ार शक्तियों द्वारा किया जाता है। परंतु विकासशील देशों में घनिष्ठ समन्वय की अधिक आवश्यकता होती है क्योंकि आदर्श बाज़ार तंत्र का अभाव होता है। इसके अलावा नीति प्राधिकारियों एवं प्रत्येक नीति को दिए गए उप-लक्ष्यों में टकराव हो सकता है जिससे घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता पड़ती है। परंतु यह जानना आवश्यक है समन्वय-तंत्र देश विशेष की परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं से मेल खाता हो।

II. मौद्रिक एवं राजकोषीय परस्पर संबंध : विभिन्न देशों के अनुभव

7.26 यद्यपि सैद्धान्तिक तौर पर नीति निर्माण में समन्वित दृष्टिकोण के लाभों के बारे में आम सहमति बन रही है परंतु व्यवहार में विभिन्न देशों में मौद्रिक एवं राजकोषीय समन्वय की प्रक्रियागत व्यवस्थाओं में भारी भिन्नता पाई जाती है। देश के इतिहास, सामाजिक - राजनैतिक विचारधारा, वित्तीय बाज़ार विकास की अवस्था तथा नीतियों के लक्ष्य समुच्चय पर निर्भर करते हुए समन्वय का सही क्षेत्र एवं अंतर्वस्तु में अंतर है। परंतु इन सबमें सरकार द्वारा केंद्रीय बैंक से ऋण पर औपचारिक सीमा का आरोपण एक सामान्य बात है। इस संबंध में केंद्रीय बैंक से सरकार को संसाधनों के प्रवाह को सीमित करने के लिए एक संस्थागत साधन के तौर पर केंद्रीय बैंक को अधिक स्वतंत्रता देने का सुझाव दिया जाता है (अलसीना 1988)। विशिष्ट तथा (i) प्रत्यक्ष ऋण, (ii) लाभ स्थानांतरण, (iii) अर्धराजकोषीय क्रिया कलापों को सीमित करने तथा (iv) मौद्रिक नीति एवं ऋण प्रबंध के कार्यों के अलग-अलग करने की व्यवस्था की गई है। अगले अनुच्छेदों में इन विषयों पर विभिन्न देशों के व्यवहारों तथा अंतरराष्ट्रीय अनुभव का संक्षेप में वर्णन किया गया है।

केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को ऋण

7.27 मौद्रिक एवं राजकोषीय अधिकारियों के पारस्परिक समन्वय के आकलन का प्रारंभिक बिंदु केंद्रीय बैंक द्वारा राजकोषीय प्राधिकारी के प्रति निभाव की सीमा पर दृष्टिपात करना है। बैंक ऑफ इग्लैंड द्वारा संपन्न सर्वेक्षण, जिसमें 122 विकासशील तथा 20 आर्थिक सहयोग एवं विकास संगठन (ओइसीडी) देशों की तुलना की गई थी, से यह ज्ञान हुआ कि हालांकि दोनों समूहों में विकास दर में कोई विशेष अंतर नही था परंतु विकासशील देशों में मुद्रास्फीति की दर विकसित देशों की दर की अपेक्षा तीन गुणी उच्च थी (फाई एवं अन्य, 1999)। इसके अलावा सरकारी उधार [(i) विकासशील देशों ने विकसित (ओइसीडी* देशों की अपेक्षा दुगनी राशि उधार ली] के प्रभाव को निरस्त करने के लिए विकासशील देशों ने प्रारक्षित निधियों की अपेक्षाओं (केंद्रीय बैंक

[5] राजकोषीय सहिष्णुता चर कारकों पर निर्भर है, अर्थात् (i) केंद्रीय बैंकों का स्वामित्व सरकार के पास हो; (ii) सरकार को केंद्रीय बैंकों के करेंसी निर्गम से होनेवाले फायदे की पात्रता सरकार के लिए हो और (iii) केंद्रीय बैंक, सरकार के बैंकर के रूप में कार्य करें तथा (iv) केंद्रीय बैंक कमीशन पाने हेतु सरकार के लोक ऋण का प्रबंधन करें (प्रिंगल एंड कोर्टिस, 1999)।

[6] अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष द्वारा किए गए एक अध्ययन से ज्ञात होता है कि दिसंबर, 1992 के अंत में आधे से ज़्यादा देशों ने सरकार को चालू खाते पर ओवरड्राफ़ ट देने से मना करने की स्थिति का सर्वेक्षण किया। 44 प्रतिशत विकसित देशों ने तथा 22 प्रतिशत विकासशील देशों ने ऋण और अग्रिम पर पाबंदी लगाई है (कोटारेल्ली, 112 प्रारक्षित निधियों को प्रारंभ में जमाकर्ताओं के हित को सुरक्षित रखने के साधन के रूप लिया जाता था। इसीलिए मूल रूप से, भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 42(1) के अंतर्गत अनुसूचित बैंकों से अपेक्षित था कि वे अपनी मांग देयता का 5 प्रतिशत और मीयादी देयता का दो प्रतिशत रिज़र्व बैंक के पास न्यूनतम नकदी प्रारक्षित निधि के रूप में रखें।

में जमा प्रारक्षित राशि विकसित देशों की अपेक्षा पांच गुनी थी) का अत्यधिक प्रयोग किया। इन निष्कर्षों से यह संकेत मिलता है कि विकासशील देशों में मुद्रा प्राधिकारी की पराधीनता के कारण ज़्यादा राजकोषीय निभाव का व्यवहार किया गया[5]।

7.28 केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को ऋण देना राजस्व स्थानांतरण का सबसे प्रत्यक्ष रूप है तथा इसने मौद्रिक-राजकोषीय समन्वय की इच्छा रखने वाले प्राधिकारियों का सर्वाधिक ध्यान आकर्षित किया है। सामान्य दृष्टिकोण यह रहा है कि केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को ऋण की सीमा निर्धारित की जाए। बैंक ऑफ इग्लैंड द्वारा सन् 2000 में 94 देशों की मुद्रा नीतिगत संरचनाओं के सर्वेक्षण से सरकार को केंद्रीय बैंक से किसी भी प्रकार के ऋण के निषेध की प्रवृत्ति उजागर हुई है (सारणी 7.1)।

7.29 कई देशों ने राजकोषीय जवाबदेही विधि द्वारा केंद्रीय बैंक द्वारा प्राथमिक बाज़ार में सरकारी प्रतिभूतियों के क्रय पर निषेध लगाया है। इसके विपरीत द्वितीयक बाज़ार से सरकारी प्रतिभूतियों के क्रय तथा केंद्र बैंक में सरकारी धनराशि के निक्षेप पर अपेक्षाकृत कम बाध्यताएं आरोपित की गई हैं। विकसित देशों में जर्मनी, अमेरिका, जापान तथा फ्रांस एवं विकासशील देशों में चिली, पेरु, अर्जेंटीना एवं ब्राजील ऐसे उदाहरण हैं जहां केंद्रीय बैंक ऋण तक सरकारी पहुंच पर अनिवार्य बाध्यताएं हैं। कम बाध्यता वाले देशों में ब्रिटेन (युनाइटेड किंगडम) स्पेन, आयरलैंड, इटली आदि विकसित एवं भारत, इंडोनेशिया एवं मलेशिया आदि विकासशील देश शामिल हैं। ऐसे देशों, जहां वित्तीय बाज़ार विकसित नहीं है, में सरकार को केंद्रीय बैंक ऋण अनुमति देने का व्यवहार्य विकल्प नही है। आदर्श परिस्थितियों की अनुपस्थिति में भी केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को दिया गया ऋण बाज़ार ब्याज दर पर, प्रतिभूतिकृत होना चाहिए तथा उसकी ऋण शर्तें यथा उपरी सीमा का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए। अनुपालनीय मानदंडों एवं उसके उल्लंघन के परिणामों का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए। साथ ही बैंक द्वारा सरकार को अप्रत्यक्ष ऋण यथा वित्तीय संस्थाओं एवं सार्वजनिक उपक्रमों के माध्यम से ऋण पर भी सीमा लगाई जानी चाहिए।

केंद्रीय बैंक के लाभ

7.30 केंद्रीय बैंक के लाभ भी एक प्रकार का राजस्व अंतरण है। वास्तव में सरकार विश्वसनीयता वृद्धि तथा लाभ अंतरण को अधिक करने हेतु ऐसे ऋणों की मात्रा जिन पर ब्याज जैसी लागत नहीं होती तथा जो राजस्व घाटे को कम करने में मदद करते हैं जान बूझ कर केंद्रीय बैंक से सीमित कर सकती है। इस संदर्भ में, केंद्रीय बैंक से सरकार को अधिक लाभों का अंतरण हो, यह सुनिश्चित करने के लिए एक प्रभावी प्रक्रिया तंत्र है, कि सरकार बैंक में कर्ज ले। कर्जे की भारी मात्रा सरकारी प्रतिभूतियों की अधिक खरीद से केंद्रीय बैंक की ब्याज आय में वृद्धि होगी तथा उसे केंद्रीय बैंक अधिक लाभ के रूप में सरकार को अंतर्गत कर सकता है[8]। आकलन यह दर्शाते हैं कि कुछ देशों में लाभों का यह अंतरण का सकल घरेलू उत्पाद के साथ 4 से 5% का अनुपात था (फ्राई आदि पूर्वोद्धृत)। स्वतंत्र गणना से पता चलता है कि कई देशों में सिक्का ढ़लाई का लाभ अंतरित लाभ से ज़्यादा था। इससे संकेत मिलता है कि केंद्रीय बैंक के अंतरण प्रायः वास्तविक से ज़्यादा प्रच्छन्न होते हैं (फ़्राई एवं अन्य पूर्वोद्धृत)।

अर्ध राजकोषीय गतिविधियां एवं केंद्रीय बैंक की हानियां :

7.31 राजकोषीय स्वरूप की कुछ गतिविधियों का सरकार से केंद्रीय बैंक को अंतरण मौद्रीकरण का अन्य तरीका है। ऋण प्रबंध, राजकोषीय प्राधिकारी द्वारा निर्धारित विनिमय दर का प्रबंध, राजकोषीय क्षेत्र का सुदृढ़ीकरण, विनिमय प्रतिभूतियां, निक्षेप प्रत्यय तथा आकस्मिक

सारणी 7.1: सरकार को केंद्रीय बैंक का ऋण

(राष्ट्रों की संख्या)

राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण करने के लिए केंद्रीय बैंक की सीमा	औद्योगीकृत	परिवर्ती	विकासशील	समस्त
1	2	3	4	5
(i) निषिद्ध, कभी उपयोग नहीं, बहुत कम नही	26	11	9	46
(ii) कम, प्रवर्तित सीमा	1	5	9	15
(iii) विद्यमान सीमा जिनका सामान्यतया प्रवर्तन होता है।	1	4	20	25
(iv) सीमा न होने की स्थिति में व्यापक सीमा विद्यमान होना तथा कुछ प्रक्रिया विद्यमान होना	0	2	5	7
(v) कोई सीमा नहीं अथवा थोड़ा बहुत प्रवर्तन	0	0	1	1

स्रोत : एल. महादेव तथा जी स्टर्न (सं.) : विश्व संदर्भ में मौद्रिक नीति का ढांचा, राउटलेज, 2000

7 उदाहरण के लिए, बैंक ऑफ इंग्लैंड समस्त लाभ को करेंसी निर्गमकर्ता से खज़ाना को अंतरित कर देता है।

8 यह इस बात को भी अनिवार्य बनाता है कि केंद्रीय बैंक प्राथमिक बाज़ार नीलामी में भाग न ले।

देनदारियाँ, निदेशित ऋण प्रवाह तथा वित्तीय दमन आदि ऐसी गतिविधियां हैं जिनका संचालन केंद्रीय बैंक सरकार की ओर से करता है। इनका बजट में कहीं हिसाब-किताब नहीं होता तथा ये गुप्त रहती हैं। इनकी लागत तथा इससे भी ज़्यादा महत्वपूर्ण तौर पर इन गतिविधियों के कारण हानियां केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में तथा परिणामतः सरकार को कम लाभ के अंतरण के रूप में परिलक्षित होती हैं। लैटिन अमेरिकी देशों जैसे चिली में 1980 के बाद के दशक के अंत में इन अर्ध राजकोषीय नीतियों से केंद्रीय बैंकों को हानियां हुई। सन् 1990 के बाद के दशक में फिलीपीन्स में इस नुकसान से केंद्रीय बैंक को वित्तीय हानियां उठानी पड़ीं (डालटन एवं जिजोबेक, 1999)।

ऋण प्रबंधन

7.32 केंद्रीय बैंकों की अर्ध राजकोषीय गतिविधियों को सीमित करने की अनिवार्यता को देखते हुए अनेक औद्योगिक देशों ने ऋण प्रबंध को मौद्रिक नीति से अलग करने के प्रयास किए तथा ऋण प्रबंधकों एवं केंद्रीय बैंक के बीच सूचना के समुचित आदान-प्रदान के लिए तंत्र स्थापित किए। यह यूरोपीय मौद्रिक संघ के सदस्यों के बारे में सर्वाधिक स्पष्ट है क्योंकि मौद्रिक नीति संचालन यूरोपीय केंद्रीय बैंक प्रणाली द्वारा किया जाता है तथा ऋण का प्रबंध राष्ट्रीय प्राधिकारियों द्वारा किया जाता है जिससे मौद्रिक नीति एवं ऋण प्रबंध के बीच हितों के टकराव की संभावना काफी कम हो जाती है (अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष, 2002)। मेस्ट्रिक संधि के प्रावधान, जो सरकार पर अपने राष्ट्रीय केंद्रीय बैंक से ऋण लेने पर प्रतिबंध लगाते हैं, ऋण सीमा नियत करते हैं जिससे ऋण अनुरक्षणीयता को प्रोत्साहन मिलता है, ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति के अलगाव को मज़बूत करते हैं। इटली में ऋण प्रबंध राजस्व एवं व्यय की सामान्य वार्षिक आवर्ती एवं असामान्य प्रवृत्ति का संज्ञान लेकर, सरकार के नकदी प्रवाह की सतत निगरानी करते हैं। इसके अलावा ऋण प्रबंधक एवं बैंक ऑफ इटली, जिसके पास सरकार अपना धन जमा रखती है तथा जिसके माध्यम से सरकार का अधिकांश नकदी प्रवाह होता है, सरकारी नकदी के प्रवाह की सूचना का आदान-प्रदान करते हैं। सरकारी धन पर समुचित नियंत्रण के लिए सिर्फ वित्त मंत्रालय ही इस खाते का परिचालन कर सकता है।

7.33 वित्तीय बाज़ार में विरोधाभासी गतिविधियों की रोक-थाम के लिए ऋण प्रबंधकों एवं केंद्रीय बैंकों के बीच समन्वय के लिए भी औद्योगिक राष्ट्रों ने प्रयास किए। यूनाईटेड किंगडम में जब बैंक ऑफ इग्लैंड मुद्रा बाज़ार परिचालन करता है, तो उस समय ऋण प्रबंध कार्यालय नीलामी नहीं करता है तथा वह 14 दिन की परिपक्वता अवधि की विपरीत रेपो भी नहीं धारण करता है। जिस दिन बैंक की मौद्रिक नीति समिति अपनी ब्याज दरें घोषित करती है उस दिन यह कार्यालय तदर्थ नीलामी भी नहीं करता हैं [9]।

7.34 औद्योगिक राष्ट्रों ने मुक्त बाज़ार परिचालनों के लिए केंद्रीय बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों के प्रयोग से केंद्रीय बैंक तथा ऋण प्रबंधकों के बीच उठने वाले टकराव से बचने के लिए मार्ग ढूंढ लिए हैं। यह मामला विशेषकर तब महत्वपूर्ण बन जाता है जब सरकार ऋण आवश्यकताएं बहुत कम या बिल्कुल नहीं हो, परंतु केंद्रीय बैंक को मौद्रिक नीति के परिचालन हेतु ज़्यादा परिमाण में कम जोखिम वाली आस्तियों की आवश्यकता होती है। यूरोपीय मौद्रिक संघ में यूरोपीय केंद्रीय बैंक प्रणाली ने सरकारी प्रतिभूतियों पर पूर्ण निर्भरता से बचने के लिए सार्वजनिक एवं निजी प्रतिभूतियों की एक विस्तृत सूची बनाई है। अन्य औद्योगिक राष्ट्रों में भी ऐसे ही कदम उठाए गए हैं।

7.35 सुविकसित वित्तीय बाज़ार के अभाव में उदीयमान अर्थव्यवस्थाओं एवं विकासशील देशों में समन्वय की कठिनाइयां ज़्यादा गंभीर हैं। केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता के अभाव तथा सुविकसित

सारणी 7.2 : ऋण प्रबंधन प्रथाओं का सर्वेक्षण

(राष्ट्रों की संख्या)

ऋण प्रबंधन प्रथाएं	हां	नहीं
1	2	3
I. संस्थागत ढांचा		
(i) वार्षिक उधार प्राधिकार	14	4
(ii) ऋण उच्चतम सीमा	10	8
(iii) पृथक ऋण एजेंसी	4	14
II. संविभाग प्रबंधन		
(i) ऋण से प्रबंध की गई पृथक सरकारी नकदी राशि	11	6
III. सरकारी ऋण के लिए प्राथमिक बाज़ार संरचना		
(i) केंद्रीय बैंक की प्राथमिक बाज़ार में सहभागिता	6	12
(ii) केंद्रीय बैंक की केवल गैर स्पर्धा आधार पर सहभागिता	6	8

टिप्पणी : जोड़ का 18 तक पहुंचना आवश्यक नहीं है क्योंकि यह प्रत्यर्थी (रिस्पांडेंट) की संख्या पर आधारित है।

स्रोत : लोक ऋण प्रबंधन हेतु दिशानिदेश (अंमुको-विश्व बैंक, 2002)।

[9] तथापि, यह पाबंदी डीएमओ द्वारा किए जा रहे द्विपक्षीय परिचालनों पर लागू नहीं होती है क्योंकि उनका बाजार पर प्रभाव नीलामी की तुलना में अपेक्षाकृत कम होता है।

घरेलू बाज़ार की अनुपस्थिति में सरकार द्वारा केंद्रीय बैंक से ऋण लेने की प्रवृत्ति से छुटकारा दिलाना कठिन है। इससे ऋण प्रबंध एवं मुद्रा नीति के लक्ष्यों का अलग-अलग करना कठिन हो जाता है क्योंकि दोनों एक समान बाज़ार लिखतों पर निर्भर रहते हैं तथा वे आय वक्र के लघु छोर पर कार्य करने के लिए विवश होते हैं। एक अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष - विश्व बैंक सर्वेक्षण ने विकास यात्रा के विभिन्न पड़ावों पर स्थित 18 देशों के ऋण प्रबंध व्यवहारों का वर्णन किया है जिसने कुछ महत्वपूर्ण मानदंडों के आधार पर मौद्रिक एवं राजकोषीय समन्वय तथा ऋण प्रबंध के लक्ष्यों में अंतर को स्पष्ट किया है (अ.मु.को. 2002) (सारणी 7.2)।

7.36 पोलैंड जैसे अनेक देशों ने राजस्व एवं व्यय के पूर्वानुमान तथा वित्त मंत्रालय एवं केंद्रीय बैंक के बीच समुचित समन्वय तंत्र एवं सूचना विनिमय व्यवस्था की स्थापना में कठिनाईयां महसूस की हैं (यूगोलिनी, 1996)। तथापि कुछ देशों ने मौद्रिक नीति की गतिविधियों तथा मुद्रा प्रबंध के बीच समुचित समन्वय के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं। ब्राजील एवं कोलंबिया में ऋण प्रबंधक एवं केंद्रीय बैंक सूचना के आदान प्रदान एवं तथा सरकार के चालू एवं भावी चलनिधि की आवश्यकताओं के पूर्वानुमान के लिए नियमित रूप से मिलते हैं। ब्राजील में केंद्रीय बैंक को वार्षिक वित्तीय कार्यक्रम पर टिप्पणी करने का अवसर मिलता है तथा सरकार द्वारा केंद्रीय बैंक से प्रत्यक्ष ऋण लेने पर विधिक प्रतिबंध है। मेक्सिको में एक सामान्य आर्थिक एवं राजकोषीय पूर्वानुमान समुच्चय का प्रयोग करके ऋण प्रबंध, राजकोषीय नीति तथा मौद्रिक नीति का निर्माण किया जाता है। इसके अलावा मेक्सिकन केंद्रीय बैंक अनेक प्रकार के लेनदेन में सरकार के एजेंट की भूमिका निभाता है। इससे मेक्सिको में राजकोषीय, ऋण प्रबंध तथा मुद्रा नीति प्राधिकारियों के बीच परस्पर निरंतर कार्यकारी संबंध मज़बूत होते हैं तथा सूचना के समुचित विनिमय को प्रोत्साहन मिलता है। स्लोवेनिया में केंद्रीय बैंक राजकोषीय दस्तावेजों में निहित वार्षिक ऋण कार्यक्रम पर टिप्पणी करता है तथा सरकार पर केंद्रीय बैंक से उधार लेने पर विधिक प्रतिबंध है।

7.37 उदीयमान बाजार वाले देशों में जमैका ने मौद्रिक नीति निरपेक्ष ऋण प्रबंध लक्ष्यों की स्पष्टतर परिभाषा की अनुमति दी है। सरकार के आर्थिक एवं वित्तीय कार्यक्रमों में सुमेलता सुनिश्चित करने हेतु बैंक ऑफ जमैका एवं योजना प्राधिकारी के वरिष्ठ अधिकारियों की नियमित बैठकें होती हैं। मोरक्को में बजट कानूनों का रुख, विशेषतः बजट घाटे का स्तर एवं बजट घाटे की पूर्ति हेतु संसाधनों के प्रबंध, को परिभाषित करने के लिए राजकोष एवं बाह्य वित्त विभाग सक्रिय रूप से भाग लेते हैं (अ.मु.को पूर्व उद्धृत)। भारत में केंद्रीय बैंक में आंतरिक बैठकों द्वारा ही ऋण प्रबंध, राजकोषीय तथा मुद्रा नीतियों का समन्वय सुनिश्चित किया जाता है तथा ऋण आवश्यकताओं के प्रभावों पर केंद्रीय बैंक एवं वित्त मंत्रालय के बीच नियमित चर्चा होती है। इसके अतिरिक्त एक वार्षिक बजट पूर्व-अभ्यास द्वारा मौद्रिक एवं राजकोषीय लक्ष्यों का सुमेल निश्चित किया जाता है।

7.38 राजकोषीय एवं मौद्रिक समन्वय प्रक्रिया का अभी विकास हो रहा है। हालांकि राष्ट्रीय व्यवहारों में अंतर हैं, परंतु एक निश्चित आम सहमति उभरती हुई प्रतीत होती है। मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की सुमेलता एवं अनुपूरकता से विश्वास पैदा होता है जो स्थायित्व सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विभिन्न देशों के अनुभव से यह साफ झलकता है कि निश्चित लक्ष्य एवं उत्तरदायित्व जैसे सुरक्षा उपाय भी राजकोषीय अपव्यय की रोकथाम नहीं कर सकते हैं। 1990 के बाद के दशक में इस मत को बल मिला जिसने अनेक देशों में केंद्रीय बैंक ऋण को सीमित करने के प्रयास को जन्म दिया। विशिष्टतया, सुधारों का केंद्र बिंदु केंद्रीय बैंक रहा क्योंकि राजकोषीय समायोजन का असर मौद्रिक प्राधिकारी की गतिविधियों पर पड़ता है, केंद्रीय बैंक को परिचालन की स्वायत्तता देने तथा राजनैतिक दखलंदाजी से रक्षा करने हेतु अनेक देशों ने संस्थानिक व्यवस्था स्थापित करने के लिए वैधानिक उपाय किए। राष्ट्रों ने अधिक पारदर्शिता एवं प्रकटीकरण व्यवहार तथा मौद्रिक नीति के निर्माण एवं निर्धारण प्रक्रिया में खुलापन लाकर अपने केंद्रीय बैंकों को अधिक ज़िम्मेदार बनाने का प्रयास भी किया है। विकसित देशों के अनुभव से यह ज्ञात होता है कि ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति परिचालन का विलगन वित्तीय बाज़ारों के विकास पर निर्भर करता है। एक भली-भांति काम करने वाले सरकारी प्रतिभूति बाज़ार से यह संभव होता है कि सरकार बड़ी मात्रा में बाज़ार से संसाधन जुटाए जिससे मुद्रा नीति परिचालनों में अधिक युक्तिचालन की गुंजाइश मिलती है। इसके अलावा विकसित देशों में मूल्य स्थिरता के प्रति पक्की वचनबद्धता द्वारा मुद्रानीति लक्ष्यों की स्पष्ट परिभाषा करना संभव हुआ जिससे ब्याज दरों की एकसार अवधि संरचना का विकास संभव हुआ। इसने वित्तीय बाज़ारों, विशेषकर ऋण बाज़ार के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जिससे विकसित अर्थव्यवस्थाओं में ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति के विलगन का मार्ग प्रशस्त हुआ। इसके साथ-साथ विकसित देशों ने वित्तीय बाज़ार के विस्तार एवं गहनता के लिए प्रयास किए जिससे बाज़ार शक्तियों के द्वारा समायोजन के समन्वय के अनुकूल वातावरण निर्मित हुआ। कुछेक देशों में मौद्रिक राजकोषीय समन्वय दोनों के लिए स्पष्ट परिभाषित नियमों के अनुसार होता है।

III. भारत में मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंधों का विकास

7.39 किसी भी अन्य विकासशील अर्थव्यवस्था के संदर्भ में भारत में भी वर्षों से मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों का निर्माण सामान्य लक्ष्य समूह यथा साम्यता के साथ-साथ आर्थिक वृद्धि की उच्च एवं वहनीय दर तथा पर्याप्त स्तर तक मूल्य स्थिरता तथा व्यवहार्य भुगतान संतुलन बनाए रखने के लिए ही किया जाता है। सिद्धांततः भारत में मौद्रिक एवं राजकोषीय समन्वय से संबंधित प्रावधान भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 में निहित है, जिनके अनुसार रिज़र्व बैंक केंद्रीय एवं राज्य सरकारों के ऋण का प्रबंध करता है तथा उनके बैंकर का कार्य करता है[10] बदले में संबंधित सरकारों को रिज़र्व बैंक में एक न्यूनतम धनराशि जमा रखनी होती हैं जिस पर ब्याज नहीं मिलता। परंतु भारत में ऐतिहासिक रूप से रिज़र्व बैंक पर सरकार के प्रभुत्व के अधीन इन दो प्रक्रियाओं के समन्वय का विकास हुआ। रिज़र्व बैंक के उदय के समय औपनिवेशिक परिस्थितियों ने तत्कालीन ब्रिटिश सरकार को राजकोष निरपेक्षता की नीति अपनाकर रिज़र्व बैंक की भूमिका को वित्तीय प्रणाली के रोजमर्रा के प्रबंध तक सीमित करने को प्रेरित किया। द्वितीय विश्व युद्ध की धन संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सरकार को रिज़र्व बैंक से ऋण लेने को बाध्य किया। स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने विकासशील अर्थव्यवस्था के वांछनीय लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अग्रणी भूमिका अपनाई तथा रिज़र्व बैंक ने निभाव के रुझान वाली मौद्रिक नीति अपनाई। राष्ट्रीकरण के पश्चात् सरकार तेजी से फैलती सार्वजनिक बैंकिंग प्रणाली से आबद्ध योगदानों द्वारा अतिरिक्त संसाधन एकत्र कर सकी। अनियंत्रित राजकोषीय निभाव से 1990 के शुरू में आर्थिक संकट पैदा हुआ, परंतु सरकार एवं रिज़र्व बैंक की सक्रिय भूमिका से मौद्रिक नीति निर्माण में राजकोषीय प्रधानता में कमी आई तथा आर्थिक नीति की दोनों शाखाओं में अधिक समन्वय स्थापित हुआ।

7.40 मौद्रिक राजकोषीय संबंधों का निर्धारण एक ओर बजटीय असंतुलनों[11] का रिज़र्व बैंक सरकार के बजट घाटे के वित्तपोषण के निवल निभाव तथा अन्य तरीकों द्वारा किया गया तथा राजकोषीय अनिवार्यताओं की अनुक्रिया में मौद्रिक नीति प्रक्रिया में किए गए समायोजनों द्वारा किया गया तथा दूसरी ओर, विकसित होती व्यापक आर्थिक परिस्थितियों द्वारा हुआ। इन सीमाओं के अंतर्गत 1990 के बाद के दशक तक राजकोषीय घाटे से मुद्रा विस्तार हुआ तथा सरकार एवं अन्य प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के बैंकिंग क्षेत्र द्वारा निभाव को सहारा देने हेतु रिज़र्व बैंक ने वाणिज्यिक क्षेत्र के वित्त पोषण को नियंत्रित किया। 1980 के बाद के दशक में राजकोषीय प्रधानता के हानिकारक प्रभावों की पहचान से मुद्रा - उत्पादन - मूल्य के परिप्रेक्ष्य में मुद्रा आपूर्ति - आरक्षित मुद्रा संबंधों की व्याख्या में मुद्रा गुणांक की सहायता से मौद्रिक नीति निर्माण पर इसके दुष्प्रभावों की औपचारिक समीक्षा करने की उत्प्रेरणा मिली जिससे राजकोषीय घाटे के मौद्रीकरण को कम करने पर ध्यान दिया गया। संकटोत्तर काल में चूंकि राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण के लिए रिज़र्व बैंक से ऋण लेने की प्रवृत्ति का नियंत्रण हुआ। अतः ब्याज दरों के उदारीकरण तथा सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के विकास से कम राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण के लिए कम मौद्रीकरण एवं अधिक बांड निर्गम का दौर आया। इस दौर में, रिज़र्व बैंक ने सक्रिय ऋण प्रबंध नीति चलाई ताकि सरकार का बढ़ता हुआ बजट घाटा एवं अधिक बांड निर्गम से ब्याज दरों पर दबाव पड़ने से आर्थिक विकास पर बुरा प्रभाव न पड़े। साथ ही चूंकि बाज़ारों के अधिक मुक्त होने तथा संस्थाओं को परिचालन स्वतंत्रता मिलने से मौद्रीकरण के स्रोत, अनिवार्यतः बाह्य कारकों के कारण, और विविध हो गए। अतः मुद्रा नीति निर्माण हेतु इन सभी कारकों का आकलन करने के लिए बैंक ने बहु संकेतक दृष्टिकोण अपनाया।

7.41 उपरोक्त पृष्ठभूमि में इस सेक्शन में मौद्रिक राजकोषीय संबंधों के तीन महत्वपूर्ण चरणों की चर्चा की गई है। प्रथम चरण 1935-1950 अवधि से संबंधित है, दूसरा चरण 1950-91 से संबंधित है जिसमें राजकोषीय प्रधानता एवं मौद्रिक निभाव का वर्णन है तथा तीसरा चरण 1991-2003 से संबंधित है जिसमें आर्थिक संकट तथा तदनुगामी राजकोषी एवं वित्तीय क्षेत्र सुधारों की चर्चा है।

प्रथम चरण : प्रारंभिक वर्ष (1935-1950)

7.42 प्रारंभिक वर्षों में मौद्रिक राजकोषीय संबंधों का विकास लगभग अनुपस्थित आधुनिक बैंकिंग प्रणाली के मद्देनज़र केंद्रीय बैंकिंग के कार्यों एवं तकनीकों के अनुकूलन के प्रयासों, द्वितीय विश्वयुद्ध शुरु होने के कारण मिली विशेष ज़िम्मेदारियों के निवर्हन, स्वतंत्र भारत में बैंक की नई भूमिका तथा निजी बैंक से राष्ट्रीकृत

[10] जहां यह कार्य केंद्र सरकार के लिए अनिवार्य हैं (धारा 20 और 21 के अंतर्गत) वहीं इसी प्रकार का कार्य भारतीय रिज़र्व बैंक, जम्मू और कश्मीर तथा सिक्किम राज्य को छोड़कर अन्य राज्य सरकारों के लिए उनके साथ अलग से करार के माध्यम से करता है (धारा 21क के अंतर्गत)।

[11] रंगराजन, बसू और जाधव (1989) द्वारा निर्धारित विश्लेषणात्मक ढांचे के अनुसार सरकारी व्यय (गैर ब्याज और ब्याज) और उसके राजस्व आगमों के बीच के अंतर का वित्तपोषण रिज़र्व बैंक के बाहर और उसके भीतर धारित घरेलू ऋण देयताओं के माध्यम से किया जाता है।

बैंक बनने के सक्रमण काल की पृष्ठभूमि में हुआ (भा.रि.बैंक, 1970)। अपने प्रारंभिक वर्षों में 1930 के बाद के शुरुआती सालों की मंदी के बाद इसे द्वितीय विश्वयुद्ध काल की तेजी का मुकाबला करना पड़ा। द्वितीय विश्वयुद्ध काल के दौरान आजादी से पहले की बार-बार बदलती राजकोषीय नीति (1945-1951) दीर्घ राजनैतिक संकट, देश के बटंवारे के समय की सामाजिक उथल - पुथल तथा कोरिया युद्ध की तेजी से उत्पन्न परिस्थितियों में इसे मौद्रिक नीति निर्माण में स्थायित्व को प्रोत्साहन देने के प्रयास करने पड़े।

संरक्षणवादी राजकोष नीति एवं प्रारंभिक मुद्रा परिचालन

7.43 1930 के बाद के दशक में भारत सरकार ने, अमेरिका, इंग्लैंड तथा फ्रांस सरकारों द्वारा मंदी की समाप्ति के लिए चलाई जा रही सक्रिय राजकोषीय तथा विनिमय दर नीतियों के विपरीत, संतुलित बजट एवं निर्धारित विनिमय दर की निर्बाधता की नीति का पालन किया। वास्तव में बजट संतुलन की प्राप्ति को रिज़र्व बैंक की स्थापना की पूर्व शर्त माना जाता था। राजकोषीय निरपेक्षता को परिलक्षित करते हुए रिज़र्व बैंक से सरकार ने बहुत कम ऋण लिया तथा सरकारी प्रतिभूतियों के मूल्य को स्थिर रखने के लिए उसे सरकारी ऋण कार्यक्रम को बहुत अधिक सहायता नहीं देनी पड़ी। अतः मौद्रिक नीति का ध्यान मुद्रा के दैनंदिन प्रबंध एवं विनिमय दर के प्रबंध पर केंद्रित था परंतु मौद्रिक नीति उपकरणों की सीमित परिचालन नम्यता के कारण इसमें भी पर्याप्त कौशल की आवश्यकता पड़ती थी।

युद्ध का वित्तपोषण एवं मौद्रिक विस्तार

7.44 द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रारंभ के बाद सरकारी खर्च, जो युद्ध के पहले दो वर्षों में कम था, 1942-43 में बढ़ कर दुगुना हो गया तथा लगातार बढ़ता गया। सन 1945-46 में युद्ध का खर्च सकल राजकीय खर्च का 77 प्रतिशत था। इसके परिणामस्वरूप रिज़र्व बैंक को इस हद तक ब्रिटिश सरकार एवं उसके मित्रों के युद्ध के खर्च का वहन करना पड़ा कि अधिक कर वसूली एवं बजट लाभ के बावजूद भारत सरकार उस खर्च को वहन करने में असमर्थ रही। 1940-46 वर्षों के दौरान भारत सरकार एवं मित्रों के कुल खर्च का 45% का वित्तपोषण रिज़र्व बैंक को करना पड़ा। इसके अलावा युद्धपूर्व समय के विपरीत 1940 के बाद के दशक में तत्काल प्रयोग न होने वाले वसूली योग्य युद्ध खर्चे के कारण भारी मात्रामें तेजी से जमा हो रह स्टर्लिंग शेष की समस्या का सामना करना पड़ा तथा मुद्रा निर्गम द्वारा सरकारी खर्चे के लिए भारी मात्रा में धन जुटाना पड़ा (सारणी 7.3)।

7.45 तेजी से बदलते राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक परिदृश्य के अनुरूप राजकोषीय नीति में भी बदलाव आए। युद्धोतर काल में मंदी की प्रत्याशा से किए गए राजकोषीय शिथिलताजन्य मुद्रास्फीति दबाव के पुनः उभरने पर उलटना पड़ा तथा बजट घाटे की पूर्ति एवं निजी मांग का नियंत्रण करने हेतु भारी कर लगाए गए। युद्धोत्तर काल में मोटे तौर पर कम ब्याज वाली मुद्रा नीति से पीछे हटना पड़ा। मुद्रा विस्तार कम ही हुआ क्योंकि बजट घाटे एवं बैंक ऋण विस्तार के विस्तारक प्रभाव को भुगतान संतुलन में घाटे द्वारा निरस्त कर दिया गया।

प्रारंभिक वर्षों में मौद्रिक नीति के उपकरण

7.46 प्रारंभिक वर्षों में बैंक नकदी प्रारक्षित निधि अनुपात में परिवर्तन नहीं कर सकता था तथा उसे इसकी आवश्यकता भी नहीं पड़ी, क्योंकि कम ऋण उठाव के कारण बैंक अपने जमा में वृद्धि की राशि का बड़ा भाग सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करते थे[12]। चूंकि बैंक-दर अपरिवर्तनीय रखी गई थी (सिवाय सन् 1935 में 50 आधार बिंदु तक कमी के), प्रारंभिक वर्षों में मौद्रिक प्राधिकारी के पास केवल बैंकों से स्टर्लिंग खरीद, साप्ताहिक खज़ाना बिल नीलामी नियंत्रण तथा बैंकों को दीर्घकालिक प्रतिभूतियों की जगह मध्यम एवं अल्पावधिक प्रतिभूतियां बेचने के लिए मुक्त बाज़ार परिचालन के उपकरण थे। उल्लेखनीय है कि इन उपकरणों का प्रयोग सरकारी

सारणी 7.3: समष्टिगत आर्थिक और मौद्रिक संकेतक : 1930 और 1940 के दशक

(प्रतिशत)

अवधि (औसत)	विकास दर			भा.रि.बैं. की विदेशी आस्ति की तुलना में घरेलू आस्ति	सघउ की तुलना में करेंसी
	वास्तविक सदेउ	थोमूसू	मुद्रा आपूर्ति		
1	2	3	4	5	6
1936-40	1.3	4.3	9.6	39.1	8.0
1941-45	1.0	18.1	37.8	95.4	12.5

स्रोत : जाधव, 2003

[12] आरक्षित निधि की आवश्यकताओं को, शुरू-शुरू में जमाकर्ताओं के हित की सुरक्षा के रूप में समझा गया। इसप्रकार, मूलत: भा.रि.बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 42 (1) के अंतर्गत अनुसूचित बैंकों को उनकी मांग देयताओं के पांच प्रतिशत तथा मीयादी देयताओं के दो प्रतिशत की न्यूनतम नकद आरक्षित राशि रिजर्व बैंक के पास रखना अपेक्षित है।

आवश्यकताओं के अनुसार किया जाता था तथा बाज़ार आवश्यकताओं को केवल गौण स्थान दिया जाता था। वास्तव में स्थिर ब्याज रखने की आवश्यकता भी इसलिए थी ताकि निर्धारित विनिमय दर प्रणाली बनाए रखने में सहूलियत हो तथा स्टर्लिंग अंतर्प्रवाह को प्रोत्साहन मिले। रिज़र्व बैंक ने द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद वाणिज्यिक बैंकों को मुनाफाखोरी के कामों जैसे शेयर, बुलियन तथा खाद्यान्न की जमानत पर ऋण देने पर नियंत्रण रखने को कहा।

दूसरा चरण - राजकोषीय प्रधानता एवं मौद्रिक निभाव (1950-1991)

7.47 आजादी के बाद रिज़र्व बैंक का राष्ट्रीकरण किया गया तथा बैंकिंग कंपनी अधिनियम, 1949 (जिसका सन् 1966 में बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 का नाम दिया गया) के पारित होने के बाद इसने समस्त बैंकिंग क्षेत्र के व्यापक एवं प्रभावी नियंत्रण की शक्तियां प्राप्त कर की। भारत में केंद्रीय बैंकिंग के शैशव काल में मौद्रिक - राजकोषीय परस्पर संबंधों का विकास चार अलग-अलग पहलुओं में रिज़र्व बैंक की विकासमान भूमिकाओं के परिप्रेक्ष्य में हुआ। प्रथम, रिज़र्व बैंक की मौद्रिक नीति को पुनः क्रियान्वित किया गया, विशेषकर 1950 के बाद के दशक के मध्य में, जो अल्पावधि दबावों का पूर्वानुमान एवं उनके समाधान के अलावा आयोजन प्रक्रिया की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील होनी चाहिए थी। दूसरी भूमिका वाणिज्यिक बैंकों के विनियमन एवं उनके व्यवस्थित विकास को प्रोत्साहन देने की थी। तीसरी एवं चौथी भूमिका सन् 1960 के बाद के दशक में उद्योग एवं 1970 के बाद के दशक में कृषि के वित्तपोषण के औपचारिकीकरण को प्रोत्साहित करने की थी (बालचंद्रन, 1998)। 1970 के बाद के दशक में आपूर्ति संकट से उत्पन्न स्फीतिकारक दबावों का सामना करने हेतु एक समन्वित मौद्रिक राजकोषीय अनुक्रिया की आवश्यकता पड़ी। सरकार के राजस्व खाते में पहली बार सन् 1979-80 में घाटा होने एवं बाद के समय में उसके विस्तार तथा मुद्रा-वित्त पर बढ़ती निर्भरता से सन् 1980 के बाद के दशक के मध्य में मौद्रिक- राजकोषीय संबंधों की संरचना का पुनर्मूल्यांकन करने की आवश्यकता पड़ी।

राजकोषीय सक्रियता एवं योजना का वित्तपोषण

7.48 स्वतंत्रता के बाद राजनैतिक एवं आर्थिक अनिश्चतताएं धीरे-धीरे घटीं तथा सन् 1950-51 के पश्चात पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से राजकोषीय नीति ने सामाजिक आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। नई अर्थव्यवस्था में जहां आय का स्तर तथा तदनुसार बचत-स्तर कम था, वहां राजकोषीय नीति ने आधारभूत संरचना के रूप में पूंजी आधार तथा ग्रामीण विकास की ज़िम्मेदारी संभाली। ऐसी परियोजनाओं के उच्च पूंजी-उत्पाद अनुपात तथा दीर्घ निर्माण अवधि के कारण पूंजी निर्माण का वित्तपोषण गैर वाणिज्यिक शर्तों पर करना आवश्यक था। इसके लिए बाज़ार के संसाधनों पर समुचित अधिकार स्थापित करने के लिए सरकारी तंत्र का प्रयोग किया गया। योजना में स्थिर किए गए निवेश लक्ष्यों ने मुद्रा नीति निर्माण की पृष्ठ भूमि का काम किया तथा मुद्रा नीतिको कुछ राष्ट्रीय लक्ष्यों, जिनमें वित्तीय प्रणाली की गहनता भी शामिल थी, की प्राप्ति का साधन बनाया गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना के दस्तावेजों ने पूर्वानुमान किया कि उत्पादन में वृद्धि तथा वास्तविक बचतों से ऋण में वृद्धि होगी (भा.स. 1951)। 1950 के बाद के दशक के शुरू में विकास दर कम रही। मुद्रा नीति पर मूल्य स्थिरता बनाए रखने के लिए कोई बेजा दबाव नही पड़ा क्योंकि बड़े मुद्राभंडार के कारण आयात तथा औद्योगिक क्षेत्र की क्षमता के बेहतर दोहन से मुद्रास्फीति के दबाव का निवारण किया जा सकता था।

7.49 द्वितीय पंचवर्षीय योजना में योजना का आकार दुगना करने तथा बाद में योजनाकार में और वृद्धि से आंतरिक एवं सरकारेत्तर स्रोतों में वृद्धि की आवश्यकता पड़ी। तब प्रचालित केन्ज़ियन रुढ़िवादी विचारधारा के अनुरूप उत्पादक क्षमता के पूर्ण दोहन के लिए महत्वाकांक्षी निवेश योजनाओं तथा अविकसित अर्थव्यवस्था के निम्न बचत स्तर के अंतर को पाटने के लिए बजट घाटा का प्रयोग किया गया। सन 1950 के दशक के मध्य से क्रमिक पंचवर्षीय योजनाओं के वित्तपोषण के लिए बाज़ार ऋण एवं घाटे के वित्तपोषण पर बढ़ती निर्भरता के कारण मौद्रिक नीति का संचालन राजकोषीय घाटे के आकार एवं उसके वित्तपोषण के माध्यम द्वारा शासित था। अतः मौद्रिक नीति को योजनाओं के वित्तपोषण से उत्पन्न घाटे की पृष्ठभूमि में मूल्य स्थिरता लक्ष्य की प्राप्ति के साथ समझौता करना पड़ा।

घाटे का वित्तपोषण - मौद्रिक नीति पर प्रभाव

7.50 हालांकि भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के प्रावधानों के अनुसार रिज़र्व बैंक को अग्रिम की तारीख से तीन महीने तक देय ऋण देने की शक्ति दी गई है, परंतु यह आदेशात्मक प्रावधान न होकर सिर्फ समर्थकारी प्रावधान है। ये अग्रिम सरकार के आमदनी एवं खर्चों के अस्थायी असंतुलन के वित्तपोषण के लिए किए गए थे ताकि सरकार के नकदी प्रबंध में सहायता मिले। परंतु व्यवहार में यह घाटे के वित्तपोषण का साधन

बन गया अर्थात जब भी सरकार के खाते में जमा राशि न्यूनतम शेष से कम पड़ती हो उस स्थिति में, तदर्थ खज़ाना बिल के द्वारा बजट घाटे की पूर्ति का स्थायी वित्तीय स्रोत बन गया (बाक्स VII.2)। अतः यद्यपि तदर्थ खज़ाना बिलों की अवधि 91 दिन ही थी तथा उनका उद्देश्य सरकार की अस्थायी आवश्यकताओं की पूर्ति करना था परंतु, परिपक्व तदर्थ खज़ाना बिलों की जगह पर नए तदर्थ खज़ाना बिलों के निर्गम से यह सरकारी घाटे की पूर्ति का स्थायी एवं लगभग असीमित माध्यम बन गया। दूसरे आधार मुद्रा के निर्माण पर रिज़र्व बैंक का नियंत्रण खत्म हो गया।

7.51 तदर्थ खज़ाना बिलों के निर्गम द्वारा रिज़र्व बैंक से असीमित ऋण संसाधनों की उपलब्धि से केंद्र सरकार के राजकोषीय अनुशासन को खतरा पैदा हो गया (सारणी 7.4)। आसानी से प्राप्त रिज़र्व बैंक ऋण से न केवल केंद्र सरकार के राजकोषीय विवेक का ह्रास हुआ, बल्कि राज्य सरकारों को भी ओवरड्राफ़्ट लेने की शक्ति मिली जिसका एक बड़ा भाग केंद्र द्वारा रिज़र्व बैंक से नया लोन लेकर अपने खाते में लिया जाता था (बालचंद्रन, 1998।

7.52 वैधानिक तौर पर नियत न्यूनतम नकदी शेष की पूर्ति के अतिरिक्त रिज़र्व बैंक को सरकार की अधिक शेष राशि रखने की आवश्यकता की पूर्ति के लिए सरकार के अनुरोध पर अतिरिक्त तदर्थ, खज़ाना बिलों का निर्गम करना पड़ता था। चूंकि सरकार के बजट घाटे का अनियंत्रित विस्तार हो रहा था तथा सरकार तदर्थ खज़ाना बिलों के भुगतान में असमर्थ थी, अतः रिज़र्व बैंक के निर्गम विभाग के संतुलन पत्र में इन खज़ाना बिलों का बड़ा भाग परिलक्षित होता था। अतः इस शर्त के साथ कि ब्याज से अर्जित अधिक लाभ को रिज़र्व बैंक सरकार को अंतरित करेगा, जुलाई 1958 के बाद समय-समय पर तदर्थ खज़ाना बिलों के स्थान पर दिनांकित प्रतिभूतियाँ जारी की गईं।

सारणी 7.4 : रिज़र्व बैंक द्वारा बजट घाटे का वित्तपोषण

(करोड़ रुपए)

अवधि	सृजित तदर्थ	निरस्त तदर्थ	निवल सृजित तदर्थ	निधिकृत तदर्थ	निधीयन के बाद निवल
1	2	3	4	5	6
I योजना	350	10	250	0	250
II योजना	1,975	1,030	945	500	445
III योजना	2,430	1,630	800	275	525

स्रोत : जी. बालचंद्रन, दि रिज़र्व बैंक ऑफ इंडिया, 1951-67', 1998

बॉक्स VII.2
तदर्थ खजाना बिल

भारत में खजाना बिलों की शरुआत विश्व युद्ध II के दौरान हुई थी, जो भारत सरकार द्वारा रिज़र्व बैंक को जारी किए गए थे जिसका उद्देश्य स्टर्लिंग ऋण के प्रत्यावर्तन को अस्थाई वित्त उपलब्ध कराना था। चूंकि रुपए ऋण के माध्यम से सरकार की प्राप्तियां कई बार स्टर्लिंग ऋण के प्रत्यावर्तन से मेल नहीं खातीं, इसलिए रिज़र्व बैंक को तदर्थ खजाना बिल जारी किए गए ताकि रिज़र्व बैंक के पास वैकल्पिक पात्र रुपया आस्तियां उपलबध रहें। भारत सरकार ने बाद में जब दिनांकित प्रतिभूतियों का कार्यक्रम शुरू किया तो तदर्थ खजाना बिलों को समाप्त कर दिया गया। तदर्थ खजाना बिल 1948-49 में थी, ब्रिटीश सरकार को अंतरित स्टर्लिंग प्रतिभूतियों को रिप्लेस करने के लिए स्टर्लिंग बैलेंस करार 1948 के अनुसार जारी किए गए थे। सरकारी घाटे के वित्तपोषण के लिए तदर्थ खजाना बिलों की शुरुआत पहली पंचवर्षीय योजना से देखी जा सकती है, हालांकि उनकी मात्रा उतनी होती थी कि उसका प्रभाव गैर स्फीतिकारी हो। किंतु, 1955 के प्रारंभ में भारत सरकार और भारतीय रिज़र्व बैंक के बीच एक परिचालनगत व्यवस्था की गई, जो स्वतः ही तदर्थ खजाना बिल बनाए जाने की सुविधा मुहैया कराती थी जिससे अत्यधिक नकदी आहरित कर लिए जाने की स्थिति में केंद्र सरकार की निर्धारित न्यूनतम नकदी राशि के स्तर को बनाए रखा जाता था। अतः, जब केंद्र सरकार का वास्तविक शेष निर्धारित न्यूनतम स्तर (उस समय शुक्रवार के दिन 50 करोड़ रुपए और अन्य दिन 4 करोड रुपए) से कम हो जाता था तो तदर्थ खज़ाना बिल स्वतः सृजित कर लिए जाते थे, किंतु शेष राशि का स्तर निर्धारित स्तर तक पहुंच जान के बाद उसका सृजन निरस्त हो जाता था।

हालांकि यह अस्थायी व्यवस्था मानी जाती थी, किंतु 1958 से तदर्थ खजाना बिल वित्तपोषण तथा दिनांकित प्रतिभूतियों के निधीयन का नियमित साधन बन गए। सामान्य अर्थों में, 'निधीयन' का आशय 'निधिकृत' ऋण जारी करके लोक ऋण का समेकन करना है, अर्थात् 'फ्लोटिंग' ऋण के स्थान पर 'दीर्घकालिक अथवा अदिनांकित प्रतिभूतियां', अर्थात् खजाना बिल और अर्थोपाय अग्रिम (भारिबैं 1983) । स्वतः मौद्रीकरण की समस्या बढ़ती गई क्योंकि अत्यधिक मात्रा में तदर्थ खजाना बिल जारी किए गए और 1982 से अदिनांकित बाजार मं न बेचने योग्य विशेष प्रतिभूतियों में परिवर्तित कर दिए गए जिन पर 4.6 प्रतिशत भुनाई दर रखी गई है। प्रारंभ में बकाया तदर्थ खजाना बिलों को सरकार द्वारा दिनांकित प्रतिभूतियों में परिवर्तन किया गया जिसकी मात्रा 1981 तक प्रति वर्ष 50-100 करोड़ रुपए थी। 1982 से इस तरह के परिवर्तन में न केवल तेजी आई बल्कि उनकी मूल विशेषताओं में भी बुनियादी परिवर्तन हुआ है। पूर्व में जो परिवर्तन किए गए वे सरकारी दिनांकित प्रतिभूतियों के रूप में थे जिनकी विशिष्ट परिपक्वता अलग-अलग ब्याज दरों पर थी, किंतु 1982 के बाद जो परिवर्तन हुआ वह 4.6 प्रतिशत विशेष प्रतिभूतियों के रूप में हुआ जिनके शोधन की कोई तिथि निश्चित नहीं थी और यह कार्य विशेष रूप से रिज़र्व बैंक द्वारा किया गया। मार्च, 1994 के अंत तक रिज़र्व बैंक के पास धारित विशेष प्रतिभूतियों के ऐसे परिवर्तनों की बकाया राशि 71,000 करोड़ रुपए थी (भारिबैं, 1994) । विशेष प्रतिभूतियों में परिवर्तित तदर्थ खजाना बिलों की बकाया राशि मार्च, 1997 के अंत में 1,21,818 करोड़ रुपए थी (भारिबैं, 2005)

7.53 तदर्थ खज़ाना बिलों के अलावा प्राथमिक बाज़ार से प्रतिभूतियों की खरीद द्वारा भी सरकारी घाटे का मौद्रीकरण किया जाता था। द्वितीय पंचवर्षीय योजना से बाज़ार ऋण लक्ष्यों में वृद्धि हुई तथा बाज़ार द्वारा अनवशोषित प्रतिभूतियों की खरीद के लिए रिज़र्व बैंक को आगे आना पड़ा। सरकारी घाटे के मौद्रीकरण की अपेक्षा रिज़र्व बैंक ने प्राथमिक बाज़ार में सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद को बेहतर समझा। परंतु प्राथमिक बाज़ार में सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद से मौद्रिक नीति परिचालन पर बाध्यकारी प्रभाव पड़ा क्योंकि सरकारी ऋण की लागत को नियंत्रित करने हेतु ब्याज दर में वृद्धि को टालना पड़ा। सरकारी प्रतिभूतियों के व्यापक बाज़ार की अनुपस्थिति से रिज़र्व बैंक के दूसरे ऋण नियंत्रण उपकरण यानि मुक्त बाज़ार परिचालन का प्रभाव भी सीमित था। सन् 1950 के दशक के मध्य में निजी क्षेत्र द्वारा ऋण उठाव में वृद्धि के संकेत मिलने पर रिज़र्व बैंक को एक नए उपकरण से स्वयं को सुसज्जित करना पड़ा। भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधन) अधिनियम 1956 द्वारा मौद्रिक नीति में नमनीयता प्रदान करने के लिए नकदी आरक्षित अनुपात (अपनी मांग एवं आवधिक देयताओं का वह भाग जो बैंक रिज़र्व बैंक के पास जमा रखते हैं) में परिवर्तन की शक्ति रिज़र्व बैंक को प्रदान की गई। इस संशोधन से पहले रिज़र्व बैंक के पास वाणिज्यिक बैंकों के प्रारक्षित अनुपातों को, जो मांग देयताओं का 5% तथा अवधि देयताओं का 2@ पर थे, बदलने की शक्ति नहीं थी। साथ-साथ आनुपातिक प्रारक्षित प्रणाली के स्थान पर न्यूनतम प्रारक्षित प्रणाली के लागू होने के कारण परिवर्तनशील प्रारक्षित आवश्यकताओं के लागू होने का महत्व है[13]। यद्यपि सन 1949 में ही रिज़र्व बैंक को चयनित ऋण नियंत्रण की शक्ति प्रदान की गई थी परंतु, इसने इसका नियमित प्रयोग सन 1956 में ही आवश्यक वस्तुओं की जमानत पर ऋणों के नियंत्रण के लिए किया गया ताकि मुद्रास्फीति को कम रखा जा सके। इन प्रयासों के बावजूद विदेशी मुद्रा के क्षरण एवं अनियंत्रित बजट घाटे के कारण मौद्रिक नीति में युक्तिचालन की कम गुंजाइश बची थी।

आर्थिक आघात एवं बैंकों के लिए ऋण राशनिंग

7.54 रिज़र्व बैंक, जो पहले योजनाओं के संसाधन निर्धारण में निष्क्रिय भूमिका निभाता था, 1960 के दशक में निरंतर सक्रिय होता गया तथा उसने योजना निर्माताओं का विकास एवं संसाधन संग्रहण के अधिक यथार्थ संमत लक्ष्य निर्धारित करने का आग्रह किया। इससे तीसरी योजना के मौद्रिक बजट का निर्माण किया गया। सन् 1960 के दशक की शुरुआत में रक्षा एवं विकास आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु सरकारी खर्च में वृद्धि, खाद्यान्नों की कमी, आयात द्वारा जिसकी आंशिक भरपाई की जा सकी, मेहनतानों के मूल सूचीबद्ध होने से मुद्रास्फीति दबाव में भारी वृद्धि हुई। परिणामतः मुद्रा नीति निर्माण का कार्य कठिनतर हो गया। रिज़र्व बैंक को, मौद्रिक नीति को सख्त बनाने की ऐसी रणनीति अपनानी पड़ी जो सरकारों की आर्थिक निभाव पर दुष्प्रभाव न डाले, तदनुसार, रिज़र्व बैंक ने 1960 के बाद के दशक के पूर्वार्द्ध में बैंक दर में कई किस्तों में वृद्धि कर मौद्रिक नीति को कठोर बना दिया तथा सरकार को दिए जाने वाले रिज़र्व बैंक ऋण के मुद्रा विस्तार के दबाव को कम करने हेतु बैंकों द्वारा निजी क्षेत्र को दिए जाने वाले ऋण के पुनर्वित्त की शर्तों को प्रतिबंधात्मक बना दिया। इसके लिए रिज़र्व बैंक ने 1960 में कोटा स्लैब प्रणाली[14] लागू की जिसने रिज़र्व बैंक से बैंकों द्वारा लिए जाने वाले ऋण की लागत में उत्तरोत्तर वृद्धि होती चली गई। कोटा स्लैब प्रणाली के कारण ऋण लागत में वृद्धि से बचने के लिए बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री शरू कर दी जिससे उनको बैंक दर पर उपलब्ध पुनर्वित्त कोटा पर प्रभाव नहीं पड़ता था।

7.55 यह सुनिश्चित करने के लिए कि बैंक सरकारी प्रतिभूतियों को नही बेचें, रिज़र्व बैंक ने सन 1964 में कोटा स्लैब प्रणाली को समाप्त कर उसकी जगह निवल चलनिधि अनुपात (एनएलआर) आधारित ऋण प्रणाली शुरू की[15]। नई प्रणाली में बैंकों द्वारा सरकारी

[13] वर्तमान समानुपातिक प्रारक्षित प्रणाली के अंतर्गत, नोट निर्गमन, स्वर्ण मुद्रा, बुलियन और विदेशी प्रतिभूतियों के प्रयोजन से, ये कुल आस्तियों के 40 प्रतिशत से कम नहीं होने चाहिए। भारतीय रिज़र्व बैंक (संशोधित) अधिनियम, 1956 और भारतीय रिज़र्व बैंक (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 1957 के अंतर्गत रिज़र्व बैंक द्वारा जारी किए जाने वाले नोट की मात्रा पर कोई उच्चतम सीमा निर्धारित नहीं की गई है। तथापि, रिज़र्व बैंक के निर्गम विभाग में रखी गई स्वर्ण मुद्रा, बुलियन और विदेशी प्रतिभूतियों का कुल मूल्य किसी भी समय 200 करोड़ रुपए से कम नहीं होना चाहिए, जिसमें से कम से कम 115 करोड़ रुपए का सोना होना चाहिए।

[14] "कोटा स्लैब" रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को पुनर्वित्त देने से संबंधित वर्गीकृत उधार दर प्रणाली थी जिसमें कोटा के भीतर उधार बैंक दर पर थे और जो उधार उससे ऊपर थे उन पर अलग श्रेणी की दण्डात्मक दरें लगाई जाती थीं। यह "कोटा" बैंकों द्वारा रिज़र्व बैंक के पास रखी गई सीआरआर राशियों से जुड़ा हुआ था।

[15] "निवल चलनिधि अनुपात = [(बैंक की नकद राशियां+ अन्य बैंकों के पास चालू खातों की राशियां + रिज़र्व बैंक के पास राशियां + सरकारी तथा अन्य अनुमोदित प्रतिभतियों में निवेश) - (भारतीय रिज़र्व बैंक, भारतीय स्टेट बैंक और भारतीय औद्योगिक विकास बैंक से लिया गया कुल उधार)]/सकल मांग और मीयादी देयताएं। एनएलआर - आधारित पुनर्वित्त 1975 में समाप्त कर दिया गया था ताकि लागत तथा पुनर्वित्त की उपलब्धता को अधिक प्रभावी तरीके से नियंत्रित किया जा सके।

प्रतिभूतियों की बिक्री तथा उनके द्वारा रिज़र्व बैंक एवं अन्य प्राधिकृत संस्थाओं के ऋण उठाने से उनका निवल चलनिधि अनुपात नियत अनुपात से कम हो जाएगा तथा उससे बैंकों के पुनर्वित्त ऋण की समस्त राशि पर ब्याज दर उत्तरोत्तर बढ़ती जाएगी। निवल चलनिधि अनुपात आधारित पुनर्वित्त प्रणाली ने बैंकों को सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री करने से हतोत्साहित किया जिससे सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में स्थिरता आई। इसके अलावा एनएलआर (एनएलआर) एक कठोर मौद्रिक नीति का उपकरण था क्योंकि इसमें रिज़र्व बैंक से पुनर्वित्त प्राप्ति के लिए बैंक द्वारा प्राधिकृत संस्थाओं से लिए गए ऋण को घटा दिया जाता था।

7.56 केंद्रीय बैंक के रूप में रिज़र्व बैंक की यह अनिवार्य भूमिका रही है कि वह बैंकों की चलनिधि की स्थिति की निगरानी करे। तदनुसार, नकदी प्रारक्षित निधि अनुपात (सीआरआर) (जो सन् 1935 से अस्तित्व में था) के अलावा विवेक-सम्मत उपकरण के रूप में बैंककारी विनियमन अधिनियम 1949 के प्रावधानों के अनुसार सांविधिक चलनिधि अनुपात का प्रचलन शुरू हुआ जिसके द्वारा रिज़र्व बैंक बैंकों की मांग एवं अवधि देयताओं के एक प्राधिकृत अनुपात के बराबर मूल्य की तरल आस्तियां रखता था ताकि आवश्यकता पड़ने पर इसके संसाधनों के निस्सरण की आवश्यकता को पूरा किया जाए एवं तदद्वारा बैंकिंग प्रणाली की स्थिरता की रक्षा की जाए। प्रारंभ में नकदी, स्वर्ण, रिज़र्व बैंक में जमा सकल राशि, अन्य बैंकों में चालू खातों में जमा राशि सरकारी एवं अन्य स्वीकृत प्रतिभूतियों आदि तरल आास्तियों को सांविधिक चलनिधि अनुपात में गणना करने योग्य माना गया। सन् 1960 में नकदी प्रारक्षित अनुपात को परिचालन का परिवर्तनीय उपकरण के रूप में उपयोग शुरू करने के बाद बैंकों में अपने उच्चतर नकदी प्रारक्षित अनुपात आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सरकारी प्रतिभूतियों को बेचने की प्रवृत्ति देखी गई। यद्यपि इस प्रकार बैंक उच्चतर नकदी प्रारक्षित अनुपात आवश्यकता का पालन कर सकते थे, परंतु इससे उनके सांविधिक चलनिधि अनुपात की संरचना बदल जाती थी तथा उनके सरकारी प्रतिभूति धारण में कमी होती थी तथा रिज़र्व बैंक में जमा राशि में उतनी वृद्धि हो जाती थी। बैंकों के इस प्रकार उच्चतर प्रारक्षित अपेक्षाओं की पूर्ति के लिए सरकारी प्रतिभूतियों को बेचने के व्यवहार को हतोत्साहित करने तथा सरकारी प्रतिभूति बाज़ार को स्थायित्व देने के लिए सन् 1962 में बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 में संशोधन कर नकदी प्रारक्षित अनुपात की राशि को सांविधिक चलनिधि अनुपात में गिनने के अयोग्य माना गया। बैंकों की चलनिधि स्थिति को मज़बूत बनाने के लिए सांविधिक चलनिधि अनुपात को 20% से बढ़ाकर 25% कर दिया गया। 1969 में बैंकों के राष्ट्रीकरण एवं बैंकिंग प्रणाली के विस्तार के बाद सन् 1969 से सन् 1990 तक एस एल आर अनुपात में लगातार वृद्धि होती रहने से तथा सरकारी घाटे की वृद्धि के कारण यह सरकारी प्रतिभूतियों का आबद्ध निवेश आधार बनाने का उपकरण बन गया (बाक्स VII.3)। रिज़र्व बैंक ने निर्यात, लघु उद्योग एवं रक्षा क्षेत्रों में भी ऋण प्रवाह को प्रोत्साहित किया।

7.57 रिज़र्व बैंक को सन् 1966 में रुपए के अवमूल्यन से उत्पन्न मुद्रास्फीति तथा आयात नियंत्रण से उत्पन्न गंभीर औद्योगिक मंदी का सामना करना पड़ा। नियंत्रित मूल्य प्रणाली के द्वारा सरकार ने भी मुद्रास्फीतिकारी दबावों से निपटने का सक्रिय प्रयास किया। इस प्रणाली के माध्यम से सरकार की खाद्यान्न मूल्य नीति, जो द्वितीय विश्वयुद्ध के समय से लागू थी, खाद्यान्न मूल्य नियंत्रण का माध्यम बनी। तीसरी पंचवर्षीय योजना तक फसल की स्थिति एवं खाद्यान्न मूल्यों पर दबाव के अनुरूप सरकार की खाद्यान्न मूल्य नीति में नियंत्रण, उदारता तथा आंशिक नियंत्रण आदि बदलाव आते रहे। अन्य के अलावा कृषि उत्पादन में वृद्धि तथा उपभोक्ताओं को राहत पहुँचाने हेतु सन 1965 में खाद्यान्नों की प्रशासनिक क्रय एवं निर्गम प्रणाली शुरू की गई तथा कृषि मूल्य आयोग एवं भारतीय खाद्य निगम की स्थापना की गई। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना से राज्यों की सहभागिता से थोक एवं खुदरा तथा कृषि उत्पादनेतर पण्यों को नियंत्रित मूल्य प्रणाली के अधीन लाकर मुद्रास्फीति नियंत्रण में सरकार की भूमिका का विस्तार किया गया। इससे अर्थव्यवस्था में लागत एवं मूल्य वृद्धि या मूल्य एवं मेहनताना वृद्धि के बीच की स्वचालित कड़ी की गुंजाइश कम हो गई। यह नियंत्रण उपभोक्ता वस्तुओं एवं औद्योगिक कच्चे माल पर लागू था क्योंकि इनसे अर्थव्यवस्था की मूल्य संरचना पर प्रभाव पड़ता था। अतः नियंत्रित मूल्य कृषि उत्पादों तक सीमित नहीं रहे, बल्कि सीमेंट और इस्पात पर भी लागू होते थे (घोष, 1974)।

सामाजिक नियंत्रण एवं ऋण आयोजना

7.58 1970 के बाद के दशक में राजकोषीय नीति का ज़्यादा जोर सामाजिक न्याय एवं गरीबी हटाने पर होने के कारण सन् 1969 में बैंकों के राष्ट्रीकरण तथा वित्तीय संस्थाओं में सार्वजनिक क्षेत्र के शामिल होने के परिणाम स्वरूप मौद्रिक नीति का केंद्र भौतिक आयोजना से हटकर सीधे ऋण एवं ऋण नियंत्रण द्वारा 'ऋण आयोजना' पर आ गया। इन संरचनात्मक एवं संगठनात्मक परिवर्तनों से वित्तीय प्रणाली ने सार्वजनिक क्षेत्र को अर्थव्यवस्था के संसाधनों का उत्तरोत्तर आहरण सरल बनाया। इससे रिज़र्व बैंक एवं सरकार के संबंधों की प्रकृति बदल गई तथा रिज़र्व बैंक ने वित्तीय क्षेत्र की संरचना तथा ब्याज दर को मुद्रा नीति के उपकरण के रूप में उपयोग में सीमित भूमिका निभाई।

बॉक्स VII.3
सांविधिक चलनिधि अनुपात : उत्पत्ति और कार्य

भारत में वाणिज्य बैंकों को परंपरागत रूप से दो प्रकार की प्रारक्षित अपेक्षाएं पूरी करनी पड़ती है, अर्थात सीआरआर और एसएलआर। जिसमें सीआरआर, भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 42 के अंतर्गत और एसएलआर, बैंकिंग विनियमन अधिनियम की धारा 24 के अनुसार निर्धारित है, जिसके अंतर्गत सभी बैंकिंग कंपनियों से अपेक्षित है कि वे भारत में अपनी मांग और मीयादी देयताओं का न्यूनतम निर्धारित अंश भारतीय रिज़र्व बैंक के पास नकदी, स्वर्ण, शेष के रूप में, अन्य बैंकों में चालू खाता शेष, मांग और अल्प सूचना पर धन तथा भार रहित सरकारी तथा अन्य अनुमोदित प्रतिभूतियों में रखें। चलनिधि अनुपात निर्धारित करने का प्राथमिक उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि यदि बैंकों से अप्रत्याशित रूप से प्रचुर मात्रा में धन निकाला जाए तो उस समय उनके पास पर्याप्त चलनिधि प्रारक्षित हा। अतः, इसकी अपेक्षा यह है कि बैंकों में वित्तीय अनुशासन रहे और जमाकर्ताओं को थोड़ी सुरक्षा मिले। वाणिज्य पत्र (सीपी) एक अल्पकालिक मुद्रा बाज़ार लिखत होने के नाते उस 'चल आस्ति' के रूप में माना जा सकता है। तथापि, अच्छी गुणवत्ता के वाणिज्य पत्र की कमी ने सरकारी प्रतिभूतियों को इसमें शामिल करना अनिवार्य कर दिया है, यद्यपि उनकी मीयाद एसएलआर की परिभाषा में मध्यावधि से दीर्घावधि हो सकती है, क्योंकि वे श्रेष्ठ स्वरूप की होती हैं और संकट के समय उन्हें सबसे आसानी से चलनिधि में बदला जा सकता है। (बालचंद्रन, 1998)।

सीआरआर की अनिवार्यता पूरी करने के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक के पास रखी गई नकदी 1962 तक समस्त चलनिधि अनुपात का हिस्सा होती थी। इससे बैंकों के लिए सहज हो गया था कि जब भी प्रारक्षित अनुपात की सीमा बढ़ती थी तो वे अपनी सरकारी धारिता को बेच देते थे, जिससे इस लिखत का प्रभाव समाप्त हो जाता था। 1960 के दशक के प्रारंभ में जहां औसत समस्त चलनिधि अनुपात में निरंतर गिरावट हुई है, वहीं जमा की तुलना में ऋण का अनुपात बढ़ा है, और यह आशंका बढ़ गई है कि बैंक का ऋण, जमा में होनेवाली वृद्धि से अधिक है तथा बैंकों की चलनिधि स्थिति का क्षरण हो रहा है। अतः 1962 के बैंककारी विनियमन अधिनियम में संशोधन किया गया और भारत में बैंकों का न्यूनतम एसएलआर उनकी मांग और मीयादी देयताओं के 20 प्रतिशत से बढ़ाकर 25 प्रतिशत कर दिया गया। एसएलआर का बनाए रखना खास तौर से इसलिए है ताकि नकदी प्रारक्षित अनुपात की जरूरत को पूरा किया जा सके। फिर भी, प्रचलित सीआरआर अपेक्षा से अधिक के किसी भी शेष को एसएलआर की गणना में शामिल किया जा सकता है। इस संशोधन से यह सुनिश्चित किया गया है कि सीआरआर में जितनी वृद्धि होनी, तो साथ ही समस्त चलनिधि बाध्यता भी उतनी ही बढ़ेगी। बैंकों को इसका पालन 16 सितंबर, 1964 से करना था। बैंककारी विनियमन अधिनियम में 1983 में किए गए संशोधन ने रिज़र्व बैंक को बैंकों का एसएलआर 40 प्रतिशत तक बढ़ाने की शक्ति प्रदान कर दी है।

हालांकि प्रारंभ में एसएलआर को बैंकों की चलनिधि सुरक्षित रखने के उपाय के रूप में इस्तेमाल किया गया था, इससे बैंकों की निजी क्षेत्र को अधिक ऋण देने की क्षमता भी बढ़ जाती थी। रिज़र्व बैंक द्वारा मौद्रिक विस्तार करने तथा सरकार की अनियंत्रित ऋण आवश्यकताओं को पूरा करने तथा बैंक ऋण के विस्तार की गति को नियंत्रित करने के उद्देश्य से, एसएलआर लिखत सरकार के लिए बैंकों से अत्यधिक मात्रा में संसाधन जुटाने का उपकरण बन गया। एसएलआर जो 1970 में 25 प्रतिशत था उसे धीरे-धीरे बढ़ाकर 1990 में 38.5 प्रतिशत कर दिया गया (चार्ट ए)। इससे सरकारी प्रतिभूतियों में बंधे हुए निवेशक की तरह निवेश करने का आधार बढ़ गया। तथापि, 1990 के दशक के प्रारंभ में समष्टिगत आर्थिक संकट की घटना तथा एसएलआर का राजकोषीय घाटे को पूरा करने के उपकरण के रूप में इस्तेमाल की तुलना में उसे विवेकपूर्ण उपकरण के रूप में इस्तेमाल पर जोर दिए जाने से एसएलआर को वापस कम किया गया और अक्तूबर 1978 में उसकी न्यूनतम सांविधिक अपेक्षा 25 प्रतिशत कर दी गई।

चार्ट क : सांविधिक चलनिधि अनुपात : 1949 - 2005

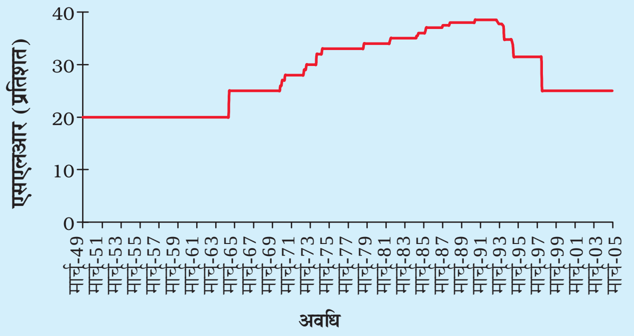

7.59 सन् 1973 के तेल संकट से उत्पन्न मुद्रास्फीति दबावों के कारण राजकोषीय नीति ने अवशिष्ट आय में कमी के लिए कठोर कदम उठाए। गेहूं के दामों में भारी घटबढ़ के निवारण हेतु सरकार ने गेहूं के थोक व्यापार का राष्ट्रीकरण किया तथा सारे देश में क्रय एवं निर्गम मूल्य एकसमान किया । समय के साथ भारी मात्रा में विकास खर्च के वचन के अलावा बढ़ते हुए अनुदानों से सरकारी खर्च और बढ़ गया। सातवें वित्त आयोग की सिफारिशों के अनुरूप राज्यों को अधिक निवल स्थानांतरण, बढ़ते हुए ऋण पर भारी ब्याज तथा मूल्यों में अधिकाधिक अनमनीयता से राजस्व खर्च और बढ़ गया। इसके विपरीत राजस्व में वृद्धि की दर कम थी जिससे सन् 1979-80 से केंद्र सरकार एवं सन् 1982-83 से केंद्र सरकारों और राज्य सरकारों के बजट में संयुक्त रूप से भारी राजस्व घाटे के रूप में संरचनात्मक असंतुलन पैदा हो गया।

7.60 सन् 1970 एवं 1980 के बाद के दशकों में प्रमुखतया रिज़र्व बैंक से भारत सरकार को दिए गए ऋण से प्रारक्षित मुद्रा में आई भारी वृद्धि मुद्रा नीति को प्रभावित करने वाला सबसे महत्वपूर्ण कारक थी (भा.रि.बैंक, 1985)। इस कारक पर कोई नियंत्रण न होने के कारण मौद्रिक नीति ने अपना ध्यान मुद्रा विस्तार को नियंत्रित करने की दृष्टि समग्र चलनिधि को कम करने तथा सन् 1970 के बाद

के दशक से बन रहे मुद्रास्फीति दबाव को कम करने पर केंद्रित किया। सांविधिक चलनिधि अनुपात का प्रयोग राजकोषीय परिचालन से प्रारक्षित मुद्रा की वृद्धि पर पड़ने वाले प्रभाव को कम करने वाले उपकरण के रूप में किया जाता था। क्योंकि यह बैंक ऋण का रुख सामान्य प्रयोगों से मोड़कर सरकार की ओर कर देता था। बैंकों द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की अधिक खरीद सुनिश्चित करने के लिए रिज़र्व बैंक ने सन् 1970 में तीन चरणों में सांविधिक चलनिधि अनुपात 25% से बढ़ाकर 28% कर दिया। उसके बाद समय-समय पर इसमें वृद्धि की गई तथा दिसंबर 1978 में यह बढ़कर 35% हो गया। रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को दिए गए ऋण मुद्रा-सृजन के प्रभाव को कम करने के लिए रिज़र्व बैंक ने सांविधिक चलनिधि अनुपात में सन् 1973 नकदी आरक्षण अनुपात में भी वृद्धि कर दी। इस ऋण का बड़ा हिस्सा बैंकों से कम ब्याज दर पर ले लिया जाता था। वास्तव में चूंकि इसकी ब्याज दर में जो 1974 में 4.6% थी, कोई परिवर्तन नहीं किया गया अतः1970 के बाद से काफी बड़ी अवधि तक असली ब्याज दर ऋणात्मक बनी रही। अतः जो बैंक इन प्रतिभूतियों में निवेश करते थे वे यथाशीघ्र रिज़र्व बैंक से उनका पुनर्बट्टीकरण करवा लेते थे तथा इस प्रकार रिज़र्व बैंक के पास ऐसी प्रतिभूतियां भारी मात्रा में जमा हो गई। इसके अतिरिक्त तदर्थ खज़ाना बिल जो वस्तुतः अल्पावधि प्रकृति के थे, वे लगातार बजट घाटे की वजह से भुगतान होने से बड़ी मात्रा में जमा हो गए। उनका उपयोग दीर्घावधि संसाधन स्रोत के रूप किया जाने लगा। परंतु दूसरे तेल संकट एवं सूखे के कारण सन् 1979-81 में सरकारी प्रतिभूतियों की ब्याज दर के भारी वृद्धि हो गई। मुद्रास्फीति दबावों का सामना करने के लिए सन 1970 के बाद के दशक में रिज़र्व बैंक ने भी समय-समय पर ब्याज दर में वृद्धि की।

राजकोषीय अपव्ययता की समस्या की पहचान तथा मौद्रिक विस्तार को लक्ष्य बद्ध करने की ओर बढ़ना

7.61 इन वर्षों के दौरान कर/सकल घरेलू उत्पाद अनुपात में वृद्धि के बावजूद केंद्र सरकार के बजट घाटे, जो पहली बार सन 1979-80 में देखा गया, में 1980 के बाद के दशक में भी वृद्धि होती गई जिससे बढ़ते सार्वजनिक ऋण तथा ब्याज भुगतान तथा तदजनित संसाधन क्षय से विकास कार्यों के लिए संसाधनों की कमी की आशंका उत्पन्न हो गई। पिछले दशक में देखी गई भारी मुद्रास्फीति के कारण छठी पंचवर्षीय योजना में मूल्य-स्थिरता के अनुकूल विकास रणनीति अपनाने को प्रेरित किया। परंतु सन 1984-85 एवं 1985-86 में लागत में वृद्धि की वसूली, उत्पादन प्रोत्साहन, कतिपय वस्तुओं के उपभोग को कम करने, अनुदान की मात्रा घटाने तथा विकास योजनाओं के लिए संसाधन संग्रहण को मज़बूत करने के लिए कई बार मूल्यवृद्धि की गई।

7.62 सातवीं पंचवर्षीय योजना में आधारभूत संरचना की कमी को पूरा करने तथा उत्पादकता बढ़ाने पर ज़्यादा ध्यान दिया गया। दिसंबर, 1985 में सरकार ने संसद को प्रस्तुत किए गए अपने चर्चा पत्र 'दीर्घावधि राजकोषीय नीति' में यह माना कि बिगड़ती राजकोषीय स्थिति 1980 के बाद के दशक की सबसे बड़ी चुनौती थी तथा इससे निपटने के लिए उसने राजकोषीय स्थिति में सुधार के लिए विशिष्ट लक्ष्य एवं नीतियाँ प्रस्तावित की, परंतु दीर्घावधि राजकोषीय नीति के अंतर्गत किए गए उपायों से केवल अस्थायी राहत मिली क्योंकि, सरकारी खर्च में बेतहाशा खर्चे तथा सार्वजनिक उपक्रमों के खराब निष्पादन से सन् 1989-90 से राजकोषीय स्थिति फिर बिगडने लगी। लगभग अवरुद्ध सकल घरेलू बचत दर तथा वित्तीय बचत दर, जो 1980 के बाद के दशक की पहली छमाही में सकल घरेलू उत्पाद की क्रमशः 18.4 % एव 6.4 % थीं, तथा चक्रवर्ती समिति[16] की सिफारिशों के अनुसार सरकारी प्रतिभूतियों पर ब्याज दर में वृद्धि के निर्णय से सन् 1980 के बाद के दशक में उधार की लागत लगातार बढ़ती गई। दिनांकित प्रतिभूतियों की कूपन दर तथा लघु बचतों एवं भविष्यनिधियों की ब्याज दर में वृद्धि से 1980 के बाद के दशक के उत्तरार्ध में ऋण की लागत बहुत बढ़ गई तथा जिसने चालू प्राप्तियों के बड़े भाग का पूर्व-अधिग्रहण कर लिया।

7.63 सरकार के बाज़ार ऋण में वृद्धि के साथ-साथ 1980 के दशक में सरकार को रिज़र्व बैंक के ऋण में भी वृद्धि हुई। 'अत्यधिक बजट घाटे से मुद्रास्फीति नियंत्रण का भार मौद्रिक नीति पर पड़ेगा' इसका संज्ञान लेकर सातवीं पंचवर्षीय योजना में सीमित घाटे वाली अमुद्रास्फीति कारक राजकोष नीति का पालन करने का सुझाव दिया गया (मल्होत्रा-1958)। तदनुसार, रिज़र्व बैंक का सरकार को निवल ऋण, जो 1986-87 में 103.3% हो गया था, दशक के अंत तक घटकर 95% रह गया।

7.64 बजट खाते के वित्तपोषण के लिए ऋण लेने की बढ़ती हुई प्रवृति पर चिंता जताते हुए चक्रवर्ती समिति ने सिफारिश की

[16] भारतीय मौद्रिक प्रणाली की कार्यप्रणाली की व्यापक समीक्षा करने के उद्देश्य से और मूल योजना के उद्देश्यों के संवर्धन में मौद्रिक नीति की प्रभावशीलता में सुधार लाने के उपाय सुझाने हेतु रिज़र्व बैंक ने 1982 में मौद्रिक प्रणाली की कार्यप्रणाली की समीक्षा करने के लिए एक समिति गठित की (अध्यक्ष : सुखमय चक्रवर्ती)। समिति ने अपनी रिपोर्ट 1985 में प्रस्तुत की।

थी कि मूल्य स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए यह सुनिश्चित किया जाए कि रिज़र्व बैंक से सरकार को ऋण मुद्रा निस्तार की सुरक्षित सीमा से बाहर न जाए। समिति ने उल्लेख किया कि प्रारक्षित मुद्रा एवं मुद्रा आपूर्ति में वांछनीय वृद्धि पर सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक संरचना के विकास के व्यवहार्य दृष्टिकोण के लिए सरकार एवं रिज़र्व बैंक के बीच न्यूनतम समन्वय स्थापित किया जाना चाहिए (भारतीय रिज़र्व बैंक, 1985)। समिति ने सिफारिश की थी कि मुद्रा प्राधिकारी मौद्रिक विस्तार को लक्ष्य बद्ध करने की रणनीति अपनाए जिसमें फीडबैक के अनुसार संशोधन किया जाए तथा एम$_3$ को लक्ष्य मुद्रा माना जाए। यह रणनीति वास्तविक क्षेत्र की वृद्धि दर तथा मूल्य स्तर में सहनीय वृद्धि को ध्यान में रखकर वांछित मुद्रा प्रसार सुनिश्चित करने के सांझा प्रयासों ने रिज़र्व बैंक एवं भारत सरकार को मिलकर काम करने को प्रेरित करेगी। समिति ने यह भी सुझाव दिया कि उत्पादन एवं ऋण योजनाओं में विचारणीय समन्वय स्थापित करने के लिए वार्षिक एवं पंचवर्षीय योजनावधि के लिए समग्र मौद्रिक बजट बनाया जाए। घाटे के भारी मौद्रीकरण एवं तदनुसार सरकार को रिज़र्व बैंक के ऋण में अनुबंधित सीमा से अधिक वृद्धि की संभावना का विलोपन करने के लिए समिति ने यह सुझाव दिया कि ब्याज दरों में वृद्धि के साथ सरकारी प्रतिभूतियों की परिपक्वता अवधि कम की जाए।

7.65 चक्रवर्ती समिति की सिफारिशों के अनुसार बजट के मौद्रीकरण को सही प्रकार से जानने तथा एतदद्वारा राजकोषीय परिचालन के मौद्रिक प्रभावों पर ज़्यादा ध्यान केंद्रित करने के लिए केंद्र सरकार ने सन् 1985-86 के बजट से 'सरकार को निवल रिज़र्व बैंक ऋण' का ज्ञापन मद के रूप में उल्लेख करना शुरू किया। बैंकों को भी सन 1985 में रिज़र्व बैंक में जमा नकदी शेषों तथा खज़ाना बिलों में भारी घटबढ़ से बचने का परामर्श दिया गया क्योंकि इन गति विधियों से सरकार को रिज़र्व बैंक के निवल ऋण में अस्थिरता पैदा होती थी।

7.66 चक्रवर्ती समिति की सिफारिशों के अनुसार सन् 1986-87 से मौद्रिक नीति कार्यनीति का केंद्र बिंदु ऋण आयोजना से हटकर मौद्रिक विस्तार की लक्ष्यबद्ध करने के दृष्टिकोण पर आ गया। इससे सरकार एवं रिज़र्व बैंक के बीच अधिक समन्वय की ज़रुरत पड़ी क्योंकि मुद्रा विस्तार लक्ष्यों का आकलन संघीय बजट के प्रस्तुतीकरण के पश्चात ही बजट घाटे के परिमाण तथा सरकार के बाज़ार से उधार कार्यक्रम की जानकारी मिल पाती थी।

7.67 सन् 1980 के बाद के दशक के अंत मे राजकोषीय स्थिति में भारी गिरावट से राजकोषीय नीति के अनुरक्षण के बारे में चिंताएं पैदा हुई। इस घटना के बाद सरकारी घाटे एवं उसके वित्त पोषण के विश्लेषण की आवश्यकता महसूस की गई (रंगराजन एवं अन्य, 1989) तदनुसार, सरकार की निवल उधार आवश्यकता को दर्शाने वाली-'सकल राजकोषीय घाटा' की अवधारणा का जन्म हुआ। तत्पश्चात भारत सरकार ने अपने आर्थिक सर्वेक्षण एवं रिज़र्व बैंक ने अपनी वार्षिक रिपोर्ट में राजकोषीय घाटे एवं उसके वित्त पोषण की अवधारणा का व्यापक प्रयोग किया (बाक्स VII.4)।

बॉक्स VII.4
राजकोषीय अंतर की गणना - बजट घाटा, मौद्रीकृत घाटा और राजकोषीय घाटा

1980 के दशक के मध्य में जो राजकोषीय अंतराल आ गया था उसे 'बजट घाटे' के रूप में मापा गया जिसका मुख्य कारण तदर्थ खजाना बिलों की मात्रा तथा बकाया अन्य 91 दिवसीय खजाना बिलों एवं केंद्र सरकार की रिज़र्व बैंक में रखी जमाराशियों तथा उसके अन्य नकदी शेषों में हुआ परिवर्तन है। जबकि बजट घाटे में जैसा कि उस समय परिभषित किया गया था, राजकोषीय परिचालन के मौद्रिक प्रभाव को काफी कम बताया गया क्योंकि उसमें दिनांकित प्रतिभूतियों में रिज़र्व बैंक के निवेश को शामिल नहीं किया गया, किंतु कुछ मामलों में मौद्रिक प्रभाव को उस सीमा तक अत्यधिक बताया गया जिस सीमा तक बैंकों में खजाना बिल रखे गए थे। इसे देखते हुए, चक्रवर्ती समिति ने इस आवश्यकता पर जोर दिया कि सरकार का रिजर्व बैंक पर पूरी निर्भरता का उपाय किया जाए ताकि राजकोषीय परिचालनों के मौद्रिक प्रभाव को आंका जा सके।

चूंकि सरकारी प्रतिभूतियों के नए निर्गमों की बाजार से पर्याप्त मांग न होने तथा दिनांकित प्रतिभूतियों में कम अभिदान की स्थिति में अधिकांश हिस्सा रिज़र्व बैंक द्वारा ले लिया जाता है और उसका प्रारक्षित मुद्रा वृद्धि पर वही प्रभाव पड़ता है जो खजाना बिलों की खरीद से पड़ता है, इस स्थिति में समिति ने सिफारिश की है कि रिज़र्व बैंक के पास सरकारी जमाराशियों के समायोजन के बाद रिज़र्व बैंक की दिनांकित प्रतिभूतियों और खजाना बिलों की धारिता में हुए निवल परिवर्तन, अर्थात् रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को किए गए निवल जमा को सरकारी घाटे के मौद्रीकरण की मात्रा की माप के रूप में लिया जा सकता है। समिति ने यह भी सिफारिश की है कि राजकोषीय अंतर को राजकोषीय घाटे के रूप में मापा जाए जो सरकार की निवल उधार आवश्यकता को प्रदर्शित करेगी, वर्ष 1989-90 के भारत सरकार के आर्थिक सर्वेक्षण ने राजकोषीय अंतर को एक ओर सरकारी व्यय तथा निवल उधार तथा दूसरी ओर चालू राजस्व एवं अनुदानों के बीच के अंतर की गणना को बताया है। यह राजकोषीय घाटे की अवधारणा की पहली सरकारी मान्यता थी।

ऋण प्रबंध बनाम मुद्रा प्रबंध

7.68 प्रारंभिक वर्षों में केंद्र एवं राज्य सरकार की प्रतिभूतियों में निवेश इन शर्तों के अधीन किया जाता था कि कुल राशि शेयर पूंजी, प्रारक्षित निधि तथा रिज़र्व बैंक जमादेयताओं के तीन बटे पांच भाग के योग से अधिक नहीं होगा तथा उसमें अल्पावधि एवं दीर्घावधि प्रतिभूतियों का अनुपात भी नियत किया गया था। रिज़र्व बैंक द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की धारिता पर सीमा का निर्धारण काफी हद तक अंतरराष्ट्रीय अनुभवों के आधार पर किया गया था जिसमें प्रथम विश्वयुद्ध से 1930 के दशक की भारी मंदी तक की अवधि में केंद्रीय बैंकों को असीमित मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद के लिए विवश किया गया था। तत्पश्चात बाध्यता को हटा लिया गया तथा रिज़र्व बैंक को मुद्रा नीति के परिचालन में नमनीयता की शक्ति प्राप्त हुई। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय सरकारी प्रतिभूति मूल्यों की स्थिरता बनाए रखने तथा सरकारी प्रतिभूतियों में अधिकतम निवेश सुनिश्चित करने हेतु मुक्त बाज़ार परिचालन ऋण प्रबंध नीति का महत्वपूर्ण साधन बना।

7.69 यद्यपि शुरुआत के वर्षों में गैर बैंकिंग स्रोतों जैसे देशी राज्यों, बड़े उद्योगपतियों तथा उद्यमियों का सरकार के उधार कार्यक्रम में भारी योगदान रहता था, परंतु वे बाद में इन प्रतिभूतियों को बैंकों को बेच देते थे। सन 1945-51 में सरकार का निवल उधार ऋणात्मक था और कठोर मौद्रिक परिस्थितियों को सरल बनाने के लिए रिज़र्व बैंक ने मुक्त बाज़ार से सरकारी प्रतिभूतियों का क्रय किया तथा बैंकों को दीर्घावधि प्रतिभूतियाँ खरीदने की प्रवृत्ति से बच कर संतुलित अवधि मिश्रण की प्रतिभूतियां खरीदने की सलाह दी। योजनाबद्ध विकास के प्रारंभिक वर्षों में सरकार का उधार कार्यक्रम बाज़ार की मांग को पूरा नहीं कर पाता था तथा बाज़ार मांग को पूरा करने के लिए रिज़र्व बैंक ने अपने खाते में उपलब्ध प्रतिभूतियाँ बेचीं। परंतु द्वितीय पंचवर्षीय योजना के प्रारंभकाल में यह सब बदल गया तथा सरकार के उधार कार्यक्रम में जनता का योगदान धीरे-धीरे कम हो गया।

7.70 बैंकों पर लागू सांविधिक चलनिधि अनुपात आवश्यकता संबंधी प्रावधानों तथा वित्तीय संस्थाओं तथा बीमा कंपनियों द्वारा निवेश पर लागू इसी प्रकार के सांविधिक प्रावधानों से निर्मित सरकारी प्रतिभूतियों के आबद्ध बाज़ार से निम्न ब्याज दर पर ऋण लेना आसान बन गया। 1950 के बाद के दशक से सरकारी उधार में निरंतर वृद्धि तथा आबद्ध निवेशकों द्वारा सांविधिक अनिवार्यता से अधिक निवेश के प्रति अनिच्छा के कारण रिज़र्व बैंक को शेष ऋण को खपाने के लिए आगे आना पड़ा।

7.71 सन् 1980 के दशक के पूर्वार्ध से दीर्घकालिक प्रतिभूतियों पर ब्याज दर में भारी वृद्धि से इन प्रतिभूतियों की मांग में वृद्धि हुई। इसके अलावा दैनिक एस एल आर के सख्त अनुपालन से बैंकिंग क्षेत्र का सरकारी बाज़ार ऋण में योगदान बढ़ा । परंतु दशक के अंत में संसाधन जुटाने के बाज़ारेत्तर स्रोतों जैसे लघु बचत तथा भविष्य निधि योजनाओं का महत्व बढ़ा तथा आंतरिक ऋण प्रबंध नीति पृष्ठभूमि में चली गई (तारापोर, 1990)।

7.72 सन् 1990 के बाद के दशक के प्रारंभ तक सरकारी प्रतिभूति बाज़ार की अविकसित अवस्था ने मौद्रिक एवं ऋण-प्रबंध समन्वय की सफलता में बाधा डाली। सरकारी प्रतिभूतियों पर नियंत्रित एवं अधिकांशतः अप्रतियोगी ब्याज दरों के कारण खुला बाज़ार के परिचालन मौद्रिक नीति उपकरणों के बजाय राजकोषीय नीति के अनुषंगी के तौर पर काम करते थे।

मौद्रिक, राजकोषीय एवं ऋण प्रबंध नीतियों का पारस्परिक संबंध - 1935-1991

7.73 सुधार पूर्व काल में मौद्रिक राजकोषीय संबंधों की आधारभूत विचारधारा का जोर रिज़र्व बैंक की स्वायत्तता के बजाय इस बात पर था कि मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों के बीच समरसता हो तथा वे एक ही दिशा में कार्य करें[17]। तदनुसार राजकोषीय नीति की प्रधानता के युग में यह आवश्यक था कि रिज़र्व परिचालन उसमें सहायक बनें। हालांकि रिज़र्व बैंक मौद्रिक एवं ऋण प्रबंध नीतियों का रुझान प्रायः राजकोष नीति के अनुकूल होता था, परंतु इनमें कुछ टकराव एवं समन्वय की घटनाएं भी हुईं।

नीति-गत-टकरावों की घटनाएं

7.74 सन् 1957 में ही रिज़र्व बैंक ने तदर्थ खज़ाना बिलों के माध्यम से सरकार को ऋण देने की अपनी परंपरा पर आशंका व्यक्त की जब उसने सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि प्रतिसप्ताहांत सरकार के खाते में अंतिम शेष सुनिश्चित करने के लिए तदर्थ का सृजन केवल एक यांत्रिक प्रक्रिया बन गया हैं। तथा उपलब्ध संसाधनों की परवाह किए बगैर सरकार की खर्च करने की प्रवृत्ति पर कोई नियंत्रण नहीं है। रिज़र्व बैंक के अनुसार 'सरकार की इच्छा के अनुसार मुद्रा के स्वचालित विस्तार से रिज़र्व बैंक भारत में मौद्रिक स्थायीत्व

[17] रिज़र्व बैंक के भूतपूर्व गवर्नर एल.के.झा द्वारा दिया गया वक्तव्य, जिसे बालचंद्रन ने उद्धृत किया है, 1998 पृ 730 ।

सुनिश्चित करने के लिए बैंक नोट निर्गम का नियंत्रण करने के अपने सांविधिक उत्तरदायित्व का निर्वहन करने में असमर्थ है (बालचंद्रन, 1998)।' यद्यपि सरकार ने रिज़र्व बैंक को अपने उधार कार्यक्रमों से संबंधित चर्चा में शामिल करने का वचन दिया, परंतु तदर्थ खज़ाना बिल के निर्गम पर औपचारिक नियंत्रण के अभाव में उनके परिणाम को प्रभावित करने की रिज़र्व बैंक की क्षमता का ह्रास हुआ।

7.75 सरकार के कर्ज़ के आकार से मुद्रा प्राधिकारी द्वारा ब्याज दरों में बदलाव लाने में कठिनाइयाँ आती थीं, क्योंकि सरकार उच्चतर ब्याज दरों के खिलाफ थी। इसने रिज़र्व बैंक को ऐसे उपाय करने को बाध्य किया जिनसे सरकारी ऋण की लागत में प्रत्यक्ष वृद्धि नहीं होती। उदाहरण के तौर पर सन् 1960 में मुद्रास्फीति में वृद्धि की समस्या से निपटने के लिए अतिरिक्त नकदी प्रारक्षित निधि अनुपात लागू कर मौद्रिक नीति को सख्त बनाया गया, हालांकि वह बैंक दर बढ़ाना चाहता था। परंतु इस उपाय से बैंक ऋण विस्तार पर नियंत्रण नहीं लगा क्योंकि अतिरिक्त नकदी प्रारक्षित अनुपात के अनुपालन के लिए बैंकों ने अपनी सरकारी प्रतिभूतियों को बेच दिया जिससे सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में मंदी आई (बालचंद्रन, पूर्वोद्धृत)। सन् 1963 के पश्चात ही रिज़र्व बैंक को यह अनुमति मिली कि वह बैंक दर में 50 आधार बिंदुओं की वृद्धि कर सके। अतः समुचित मौद्रिक नीति उपकरण का प्रयोग करने की रिज़र्व बैंक की स्वतंत्रता के साथ कुछ सीमा तक समझौता किया गया।

7.76 इसके अलावा, सन 1960 के बाद के दशक में रिज़र्व बैंक के मुक्त बाज़ार परिचालन उसकी मौद्रिक नीति का समर्थन करने की बजाय उसका विरोध करते थे। सन् 1960-66 वर्षों में रिज़र्व बैंक दर को 5% से बढ़ाकर 6% कर दिया गया तथा बैंकों के प्रति निभाव को नियंत्रित करने के लिए अनेक उपाय किए गए। परंतु बाज़ार को स्थिर करने के लिए मुक्त बाज़ार परिचालनों द्वारा रिज़र्व बैंक निवल खरीददार बन गया एवं इस प्रकार उसने प्रणाली से उपलब्ध चलनिधि में वृद्धि ही की (बालचंद्रन, पूर्वोद्धृत)।

समन्वय की घटनाएं

7.77 सन् 1970 के बाद के दशक के मध्य में हालांकि राजकोषीय नीति का प्राथमिक लक्ष्य आर्थिक विकास को उत्प्रेरित करना था, परंतु सरकार ने मुद्रास्फीति के नियंत्रण हेतु उपाय करने से परहेज नहीं किया। सरकार ने खर्चे घटाने, अवशिष्ट आय को सीमित करने, लाभांश भुगतान कम करने तथा उच्च आयकर समूह के करदाताओं पर अनिवार्य बचत योजना लागू करने जैसे उपाय किए [18]। सरकार ने संघीय उत्पादन शुल्क की दरें बढ़ाईं तथा अनुसूचित बैंकों द्वारा उनके घरेलू ऋणों एवं अग्रिमों पर अर्जित सकल ब्याज दर पर 7 प्रतिशत का ब्याज कर लागू किया। मुद्रास्फीति दबाव में कमी आने पर ब्याज कर को हटा दिया गया, परंतु द्वितीय तेल संकट से उत्पन्न मुद्रास्फीति दबाव के कारण सन् 1980 में इसे दोबारा लागू किया गया। चूंकि ब्याज कर को दीर्घावधि संसाधन संग्रहण उपकरण के तौर पर प्रयोग करने से तेज गति से बदलती परिस्थितियों के प्रतिकार हेतु मौद्रिक नीति की प्रभावकारिता में कमी आती थी, अतः सरकार ने सन् 1985 में ब्याज कर को हटा लिया (सिंह, 1982)।

7.78 इस दौरान किए गए मौद्रिक उपायों में बैंक दर बचत ब्याज दर, ऋण ब्याज दर तथा पुनर्बट्टाकरण दर में वृद्धि शामिल हैं। इसके अलावा खाद्यान्न, कपास, तिलहन, तथा तेल की मुनाफाखोरी की दृष्टि से जमाखोरी रोकने के लिए चयनित ऋण नियंत्रण प्रणाली लागू की गई। अतः हालांकि राजकोषीय नीति के प्रति मुद्रानीति का रुझान सहायक का रहा, परंतु जब सख्त मौद्रिक नीति उपायों की आवश्यकता हुई तो दोनों नीति में घनिष्ठ समन्वय किया गया। इस अवधि में ऋण नीति के उपकरण के रूप में ब्याज, बेहतर माल नियंत्रण तथा बैंकों को ऋण देने में रिज़र्व बैंक की स्वेच्छा महत्वपूर्ण बने। सन 1991 के व्यापक आर्थिक संकट एवं उसके प्रति नीति अनुक्रिया से मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों का समन्वय और मज़बूत हुआ।

तृतीय चरण : व्यापक आर्थिक संकट, सुधार एवं उनका प्रभाव

सन 1991 के व्यापक आर्थिक संकट की मुख्य कठिनाई

7.79 सन् 1980 के बाद के दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था की उच्चतर विकास दर सन् 1990के बाद के दशक के प्रारंभ में घटकर कम हो गई तथा निरंतर बढ़ते राजकोषीय घाटे के बाह्य क्षेत्र में भी दुष्प्रभाव दिखाने लगा तथा 12 जुलाई 1991 को विदेशी मुद्रा भंडार घट कर 1 अरब डॉलर का रह गया जिससे चालू खाते का घाटा असहनीय

[18] अतिरिक्त पारिश्रमिक (अनिवार्य जमा) अध्यादेश, 1974 में प्रावधान की गई संपूर्ण अतिरिक्त मजदूरी और वेतन तथा अतिरिक्त महंगाई भत्ते की आधी राशि को अनिवार्य रूप से जमा करने का प्रावधान किया गया है, जिसे रिजर्व बैंक के पास अवरुद्ध रखा जाता है तथा जमा की अवधि समाप्त होने के बाद पांच वार्षिक किस्तों में चुकाया जाएगा। कंपनी (लाभांश पर अस्थाई प्रतिबंध) अध्यादेश, 1974 में कंपनियों द्वारा कर उपरांत लाभ वितरण को सीमित करने का प्रावधान किया गया है तथा तीसरे अध्यादेश में अनिवार्य जमा योजना प्रारंभ की गई है ताकि 15,000 रुपए से अधिक की निवल वार्षिक आय वाले सभी करदाता उसके अंतर्गत आ जाएं। इन जमाराशियों को भी रिजर्व बैंक के पास अवरुद्ध रखना है और जमाराशि जमा किए जाने वाले वित्तीय वर्ष की समाप्ति से दो वर्ष पूरा होने पर उसे पांच वार्षिक किस्तों में चुकाया जाएगा।

स्तर पर पहुंच गया। इसके अतिरिक्त राजकोषीय घाटे के मौद्रिक नीति द्वारा अनियंत्रित निभाव से उत्पन्न मुद्रा प्रसार से दो अंकों की मुद्रास्फीति दर पैदा हो गई। वैश्विक आर्थिक संकट से और गंभीर बने इन व्यापक आर्थिक असंतुलनों ने अभूतपूर्व बाह्य भुगतान संकट पैदा कर दिया।

7.80 उच्च राजकोषीय घाटों, विशेषकर केंद्रीय सरकार के राजस्व घाटे से; 'बैंकों से ज़्यादा ऋण लेने तथा बैंकों को कम ब्याज दर पर ऋण देने को विवश करने' का दुष्चक्र बन गया (भारतीय रिज़र्व बैंक, 1992)। राजकोषीय नीति की प्रधानता ने मौद्रिक नीति के संचालन को पांच प्रकार से प्रभावित किया। प्रथम, सांविधिक चलनिधि अनुपात, जिसको प्रारंभ में बैंकों द्वारा जोखिमरहित निवेश के उपकरण के तौर पर शुरू किया गया था, वह सरकार द्वारा आबद्ध बैंकिंग प्रणाली के संसाधनों का पूर्वाधिग्रहण करने का साधन बन गया। सांविधिक चलनिधि अनुपात, जो सन् 1964 में निवल मांग एवं मीयादी देयताओं का 25 प्रतिशत था, वह सितंबर 1990 में बढ़कर 40 प्रतिशत हो गया। दूसरे, सरकार बढ़ती हुई ऋण मांग को पूरा करने में बैंकिंग प्रणाली के संसाधनों की अपर्याप्तता से रिज़र्व बैंक ने राजकोषीय घाटे का मौद्रीकरण किया तथा मौद्रीकरण एवं सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात 1970 के बाद के दशक में 1 प्रतिशत से बढ़कर 1980 के बाद के दशक में लगभग दोगुना यानी 2.1 प्रतिशत हो गया। तीसरे, सन 1980 के बाद के दशक के अंत एक राजकोषीय-मौद्रिक मुद्रास्फीति दुष्चक्र का अस्तित्व उभरकर सामने आया जिसके अनुसार राजकोषीय घाटे के मौद्रीकरण से उत्पन्न अत्यधिक मुद्रा का विस्तार हुआ तथा जिससे सरकार के राजस्व में हुई वृद्धि से ज़्यादा खर्च में वृद्धि हुई जिससे राजकोषीय घाटा और बढ़ा। चौथे, सरकार को ज़्यादा संसाधन उपलब्ध करवाने की विवशता के कारण पैदा हुए मौद्रिक विस्तार से उत्पन्न संसाधनों, जिन्हें बैंक वाणिज्यिक क्षेत्र को आबंटित कर सकते थे, को समेटने के लिए नकद प्रारक्षित अनुपात को सन् 1964 में निवल मांग एवं मीयादी देयताओं के 3 प्रतिशत से बढ़ाकर जुलाई 1989 में 15 प्रतिशत कर दिया गया। अंत में, सार्वजनिक ऋण पर ब्याज लागत को कम करने के लिए नियंत्रित ब्याज दर प्रणाली लागू की गई जिससे मौद्रिक नीति के संप्रेषण माध्यम के रूप में ब्याज दर की तीव्रता घट गई।

संकट समाधान रणनीति तथा मौद्रिक नीति पर राजकोषीय बाध्यताओं में कमी - 1991-92 से 1993-94 तक

7.81 व्यापक आर्थिक संकट दो प्रकार से वरदान सिद्ध हुआ। प्रथम, इसमें बढ़ते हुए राजकोषीय घाटे से अनुरक्षणीय विकास दर के लिए आवश्यक समुचित राजकोषीय मौद्रिक संबंधों तथा उच्च मुद्रास्फीति प्रत्याशाओं को नियंत्रित करने में आने वाली बाधाओं को पहचाना गया। दूसरे, इस संकट ने अनिवार्यता की स्थिति पैदा की तथा सरकार एवं रिज़र्व बैंक द्वारा अभी तक लागू नीतियों को उलटने के लिए समन्वित कार्यवाही की सशक्त इच्छा प्रकट की गई। वास्तव में यह माना जाता है कि सन 1991 का असली महत्व इस तथ्य से है कि सरकार ने इससे प्राप्त अवसर का प्रयोग ऐसे सुधार लागू करने में किया जिसका संकट सें कोई संबंध नहीं था (एन सी ए इ आर, 2001)।

7.82 सरकार एवं रिज़र्व बैंक ने संयुक्त रूप से ऐसी संकट समाधान रणनीति का कार्यान्वय न किया जिसने मौद्रिक राजकोषीय संबंधों को नई दिशा दी तथा राजकोषीय नीति ने मौद्रिक नीति को उचित महत्व प्रदान किया। इस नीति के अनुसार सन् 1991-92 में राजकोषीय घाटे में भारी कमी की गई तथा बाद के वर्षों में सकल राजकोषीय घाटे एवं सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात को खर्चे में कमी तथा सन 1990-91 से 1996-97 वर्षों में घाटे के मौद्रीकरण द्वारा कम किया गया। उल्लेखनीय है कि इस अवधि में केंद्र सरकार के राजस्व घाटे में भी कमी की गई। बजट असंतुलन एवं केंद्रीय सरकार के घाटे में कमी से मौद्रिक नीति के निर्माण में राजकोषीय नीति का प्रभाव कम हुआ तथा इसने रिज़र्व बैंक को वित्तीय प्रणाली सम्बंधी समिति (अध्यक्ष : एम.नरसिंहम, 1991) की सिफारिशों के अनुसार नकदी प्रारक्षित निधि अनुपात एवं सांविधिक चलनिधि अनुपात में कमी करने में सहायता की जिससे वित्तीय प्रणाली के संसाधन मुक्त हुए जिनको वाणिज्यिक क्षेत्र को आबंटित किया जा सकता था। निर्यात की स्पर्धात्मकता को बनाए रखने के लिए रिज़र्व बैंक ने जुलाई 1991 में दो चरणों में रुपए का अवमूल्यन किया तथा मार्च 1992 में दोहरी विनिमय दर प्रणाली लागू की। इसने विदेशी मुद्रा भंडार की खस्ता हालत को सुधारने के लिए आयात नियंत्रण के उपाय भी किए। मांग एवं मुद्रास्फीति दबाव में कमी के लिए भी प्रयास किए गए। कालांतर में मार्च 1993 में रिज़र्व बैंक ने बाज़ार आधारित विनिमय दर अंगीकार की। स्थिरीकरण की समन्वित रणनीति एवं सुधार उपायों से 1990 के बाद के दशक के मध्य तक वास्तविक सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि दर में बढ़ोत्तरी हुई।

मौद्रिक नीति के प्रत्यक्ष के बदले अप्रत्यक्ष उपकरणों का उपयोग

7.83 सक्रिय राजकोषीय दबाव संबंधी उपायों, सांविधिक चलनिधि अनुपात को एक विवेकसंमत उपकरण के तौर पर प्रयोग करने के निर्णय तथा नकदी प्रारक्षित अनुपात के साथ-साथ उसमें कमी करने

सारणी 7.5 : मौद्रिक नीति लिखत

लिखत/दशक	1930द-1940द	1950द	1960द	1970द	1980द	1990द	2000द और अब तक
1	2	3	4	5	6	7	8
आरक्षित नकदी निधि अनुपात				Ö	Ö	Ö	Ö
सांविधिक चलनिधि अनुपात				Ö	Ö	Ö	
स्थायी सुविधा		Ö	निवल चलनिधि पर आधारित	क्षेत्र विशेष को पुनर्वित्त	क्षेत्र विशेष को पुनर्वित्त	क्षेत्र विशेष को पुनर्वित्त	
चयनात्मक ऋण नियंत्रण	Ö	Ö	Ö	Ö	Ö	महत्वहीन हटा दिया गया	
खुला बाज़ार परिचालन		Ö	Ö	Ö	Ö	1992-93 में पुनः शुरू	Ö
बैंक दर		Ö	Ö	Ö		पुनः शुरू	Ö
चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) के अंतर्गत रेपो/रिवर्स रेपो नीलामी							Ö
बाज़ार स्थिरीकरण योजना							Ö

Ö लिखत का सक्रिय परिचालन दर्शाता है।

से ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो गईं कि रिज़र्व बैंक मुद्रा नीति के अप्रत्यक्ष उपकरणों को पुन:सक्रिय कर सका (सारणी 7.5)। रिज़र्व बैंक ने एक दशक में पहली बार बैंक दर को मौद्रिक नीति के उपकरण के तौर पर प्रयोग किया तथा मुद्रास्फीति के नियंत्रण हेतु सन् 1991 में उसमें 2 प्रतिशत बिंदु की वृद्धि की। चूंकि वांछित चलनिधि सुनिश्चित करने के लिए मुक्तबाज़ार परिचालन का प्रयोग किया जा सकता था, अतः बैंक ने मौद्रिक नीति प्रबंध हेतु मुक्त बाज़ार परिचालन उपकरण को पुनः सक्रिय किया। सरकारी प्रतिभूतियों पर बाज़ार आधारित ब्याज दर प्रणाली की शुरुआत तथा सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में पर्याप्त संस्थाओं के निर्माण के विकास से यह संभव हुआ। रिज़र्व बैंक ने भी बाज़ार में अस्थायी चलनिधि की अधिकता के अवशोषण के लिए सरकारी प्रतिभूतियों की बिक्री द्वारा रेपो की शुरुआत की जिसमें निश्चित अवधि के बाद लेनदेन को उलट दिया जाता है तथा प्रारंभ में यह अवधि बैंकों के प्रारक्षित प्रबंध के आवर्तन अर्थात् 15 दिन की रखी गई।

7.84 अभूतपूर्व मुद्रा प्रवाह तथा उससे उत्पन्न अधिक मुद्रा विस्तार के कारण मुद्रास्फीति दबाव को कम करने के लिए अप्रत्यक्ष उपकरणों का उपयोग 1993-95 वर्षों के दौरान भी जारी रहा। जब विनिमय दर का बाज़ार द्वारा निर्धारण होने लगा तथा चालू खाते में परिवर्तनीयता की ओर कदम उठाए जाने लगे तो शुरुआती दौर में विनिमय दर के स्थायीत्व के रिज़र्व बैंक द्वारा अधिक पूंजी प्रवाह का अवशोषण आवश्यक हो गया। पूंजी अंतर्प्रवाह के प्रभाव को नियंत्रित करने तथा मुद्रास्फीतिगत दबावों के निवारण हेतु रिज़र्व बैंक को अपने खाते में धारित सरकारी प्रतिभूतियों का मुक्त बाज़ार परिचालनों एवं रेपो के माध्यम से विक्रय करना पड़ा। इस प्रकार बैंक द्वारा मुक्त बाज़ार परिचालन के प्रयोग ने नकदी प्रारक्षित निधि अनुपात में वृद्धि के स्थापन का कार्य किया तथा समग्र मुद्रा नियंत्रण की आवश्यकता का निवारण किया।

मुद्रा नीति पर राजकोषीय बाध्यताओं में नरमी : 1994-2003

7.85 इस दौर में मौद्रिक नीति प्रबंध की दक्षता में सुधार के लिए राजकोष घाटा एवं स्वचालित मुद्रा एवं राजकोष नीतियों का अनिवार्य संयुक्त मौद्रीकरण के विलगन के लिए व्यवस्था स्थापित करना लक्ष्य था। रिज़र्व बैंक तथा केंद्र सरकार के मध्य सितंबर 1994 में हुए ऐतिहासिक समझौते के कार्यान्वयन से तदर्थ खज़ाना बिल द्वारा राजकोषीय घाटे के स्वतः मौद्रीकरण की प्रक्रिया समाप्त कर दी गई। हालांकि मौद्रिक नीति का ध्यान मूल्य स्थायीत्व तथा अर्थव्यवस्था के विकास हेतु पर्याप्त वित्तपोषण दोनों लक्ष्यों पर रहा, परंतु बदलती परिस्थितियों के अनुसार उन पर दिए गए सापेक्ष जोर में परिवर्तन होता रहा स्वतः मौद्रीकरण में कमी के कारण मुद्रा नीति पर राजकोषीय नीति के वर्चस्व में काफी कमी हुई।हालांकि सन 1997-98 से राजकोष घाटे में वृद्धि होने लगी परंतु बाज़ार तथा राष्ट्रीय लघु बचत निधि से प्राप्त निरंतर वित्तीय सहायता से घाटे के मौद्रीकरण को नियंत्रित करने में मदद मिली। इसके विपरीत मुद्रा नीति को पूंजी प्रवाह तथा ऋण उठाव के आवर्तन से उत्पन्न कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। अनियंत्रित वातावरण में मौद्रिक तथा वित्तीय स्थायीत्व सुनिश्चित

करने के अलावा रिज़र्व बैंक को अर्थव्यवस्था के विकास में सहायक ब्याज दर परिस्थितियों एवं सरकारी उधारों की लागत कम करने की अतिरिक्त ज़िम्मेदारी उठानी पड़ी।

तदर्थ खज़ाना बिलों को चरणबद्ध रूप से समाप्त करना

7.86 चक्रवर्ती समिति की सिफारिशों के अनुरूप तथा 1980 के बाद के दशक के मध्य से प्राप्त प्रतिसूचना, (जब मुद्रा आपूर्ति का स्तर आर्थिक विकास दर तथा स्वीकार्य मुद्रास्फीति दर के अनुरूप था), के आधार पर रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक विस्तार को लक्ष्यबद्ध करने की संरचना को लागू किया। लक्ष्य के अनुपालन का निहितार्थ सरकारी घाटे के मौद्रीकरण को सीमित करना था। सक्रिय राजकोषीय संसाधनों तथा मुद्रा आपूर्ति को नियंत्रित करने हेतु रिज़र्व बैंक के प्रयासों के बावजूद सन् 1990 के बाद के दशक के प्रारंभ में तदर्थ खज़ाना बिल के अस्तित्व के कारण मौद्रीकृत घाटे पर तुरंत नियंत्रण नहीं किया जा सका। वास्तव में ऐसी स्थितियाँ आईं, जब राजकोषीय घाटा बढ़ा था, परंतु वर्ष के खत्म होते-होते इसको नियंत्रित किया गया। इसका संज्ञान लेकर सरकार एवं रिज़र्व बैंक के बीच सन् 1994 में समझौता हुआ जिसके अनुसार उनमें सन् 1996-97 के अंत तक तीन चरणों में तीन वर्षों की अवधि में तदर्थ खज़ाना बिलों को चरणबद्ध रूप में समाप्त करने के लिए सहमति बनी (बाक्स VII.5)।

7.87 तदर्थ खज़ाना बिलों के निर्गम की नियंत्रण प्रक्रिया से 1994-95 में मौद्रीकृत घाटे में भारी कमी आई तथा लगभग दो दशकों में पहली बार मुद्रा विस्तार का कारण घाटे का मौद्रीकरण नहीं था। चूंकि वर्ष के बड़े भाग में सरकार ने तदर्थ खज़ाना बिलों का प्रयोग नहीं किया जिससे तदर्थ खज़ाना बिल के माध्यम घाटे के मौद्रीकरण में भारी कमी आई तथा वह मार्च 1994 के अंत में 22.2 प्रतिशत से घटकर मार्च 1995 के अंत में 1.8 प्रतिशत रह गया। परंतु 1995-96 में वाणिज्यिक ऋण उठाव में भारी वृद्धि से केंद्र सरकार के राजकोष घाटे में कमी के

बॉक्स VII.5
स्वत: मौद्रीकरण से अर्थोपाय अग्रिम तक की यात्रा

मौद्रिक नीति को भारत सरकार के तदर्थ खजाना बिलों को समायोजित करते हुए स्वतः मौद्रीकरण की अनिवार्यतः का मार्च 1997 तक सामना करना पड़ा। सरकारी घाटे के इस अनियंत्रित स्वतः मौद्रीकरण पर रोक लगाने के उद्देश्य से, 9 सितंबर, 1994 को रिज़र्व बैंक और भारत सरकार के बीच हुए पहले अनुपूरक करार में तदर्थ खजाना बिलों के सृजन को अप्रैल 1997 से पूरी तरह समाप्त करने से पहले 1996-97 को समाप्त तीन वर्ष के दौरान उसकी सीमा पर रोक लगाने के लिए एक प्रणाली निर्धारित की गई । 1994-95 के दौरान यह सहमति हुई कि वर्ष के अंत तक 6000 करोड़ से अधिक तदर्थ निवल खजाना बिल जारी नहीं किया जाएगा, और वर्ष के दौरान उसकी राशि लगातार 10 दिनों तक 9,000 करोड़ रुपए से अधिक नहीं होगी। यह भी सहमति हुई थी कि यदि तदर्थ निवल खजाना बिल निर्धारित अवधि से अधिक दिन तक 9000 करोड़ रुपए से अधिक रहता है तो रिज़र्व बैंक तदर्थ खजाना बिलों की निर्दिष्ट स्तर से अधिक राशि को खजाना बिलों की नीलामी करके अथवा भारत सरकार की दिनांकित प्रतिभूतियों का विपणन करके स्वतः ही कम कर देगा। जहां वर्ष के अंत में यह सीमा 1995-96 तथा 1996-97 के लिए और कम करके 5000 करोड़ रुपए कर दी गई, वहीं इन दो वर्षों की 'भीतरी अवधि' के लिए यह सीमा 9,000 करोड़ रुपए ही रखी गई थी। यह सहमति हुई थी कि रिज़र्व बैंक द्वारा एक उपयुक्त दैनिक निगरानी प्रणाली लागू की जाएगी ताकि सरकार के समक्ष जारी निवल तदर्थ खजाना बिलों की अद्यतन स्थिति प्रस्तुत की जा सके। तदनुसार रिज़र्व बैंक की यह ज़िम्मेदारी थी कि वह सरकार को यह सूचित करे कि दैनिक आधार पर तदर्थ खजाना बिलों में कितनी निवल वृद्धि हुई है तथा कितने दिन वह निर्धारित स्तर से अधिक था, यह सूचना प्राप्त होने पर सरकार अपने अभिमत से रिज़र्व बैंक को अवगत कराती है तथा उसे नियमित करने या उस सीमा तक बाज़ार से उधार जुटाने के लिए अनुदेश जारी करती है।

रिज़र्व बैंक और भारत सरकार के बीच 6 मार्च 1997 को हुए द्वितीय अनुपूरक करार के अनुसरण मं, तदर्थ खजाना बिलों का निधीयन मार्च 1997 के अंत से पूरी तरह बंद कर दिया गया और उसके स्थान पर अप्रैल 1997 से 4.6 प्रतिशत ब्याज दर पर विशेष अदिनांकित प्रतिभूतियों में निधीयन किया जाने लगा जिसे अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यूएमए) प्रणाली कहते हैं और जिसके शुरुआत के लिए 91 दिवसीय खजाना बिलों की नीलामी का अनुपात बढ़ा दिया गया । अर्थोपाय अग्रिम प्रणाली के अंतर्गत रिज़र्व बैंक छमाही आधार पर पूर्व घोषित सीमा तक, परस्पर सहमत ब्याज दर पर अल्पकालिक अग्रिम प्रदान करता रहा है जिसे तीन महीने के भीतर पूरी तरह से वापस करना होता है। भारत सरकार को ओवरड्राफ़्ट की भी अनुमति दी गई है किंतु उस पर अर्थोपाय अग्रिम ब्याज दर से ऊंची ब्याज दर लगाई जाती है, यह व्यवस्था 1 अप्रैल 1999 से लागू की गई है तथा यह पाबंदी है कि ओवरड्राफ़्ट की स्थिति लगातार अधिकतम 10 दिनों से अधिक नहीं होगी। यह भी सहमति है कि अर्थोपाय अग्रिम की 75 प्रतिशत की सीमा पूरी होने के बाद रिज़र्व बैंक सरकारी प्रतिभूतियों के नए निर्गम जारी करेगा यह भी सहमति है कि रिज़र्व बैंक के पास सहमत स्तर से अधिक सरकारी अधिशेष नकदी रहती है तो उसे वह स्वयं के पत्र (पेपर) में निवेश करेगी। अनुपयोगी कार्यों में इस्तेमाल के फलस्वरूप रिज़र्व बैंक के संविभाग में सरकारी प्रतिभूतियां कम होती गईं और दिनांकित प्रतिभूतियों में केंद्र सरकार की अधिशेष नकदी का निवेश को 10,000 करोड़ रुपए की उच्चतम सीमा (अक्तूबर 2004 में बढ़ाकर यह सीमा 20,000 करोड़ रुपए कर दी गई) की सहायता से आंशिक रूप से बहाल करने से पहले अप्रैल और जून 2004 के बीच स्थगित कर दिया गया था।

बावजूद सरकार के उधार कार्यक्रम को पूरा करने के लिए रिज़र्व बैंक को भारी मात्रा में सरकारी प्रतिभूतियां खरीदनी पड़ीं तथा इससे घाटे के मौद्रीकरण में वृद्धि हुई। परंतु बाद में परिस्थितियां सामान्य हो गई तथा 1996-97 के अंत तक ज़्यादा बाज़ार भागीदारी को परिलक्षित करते हुए तदर्थ खज़ाना बिलों का निवल निर्गम 1996-97 वर्ष के उत्तरार्द्ध के लिए नियत सीमा से काफी कम हो गया।

7.88 सन् 1997-98 में तदर्थ खज़ाना बिल की समाप्ति तथा अर्थोपाय अग्रिम द्वारा उसका स्थान लेना तीन प्रकार से बहुत मूल्यवान सिद्ध हुआ। प्रथम, नियंत्रित ब्याज दर की जगह बाज़ार आधारित ब्याज दर लागू होने से सरकार को ऋण कार्यक्रम की लागत के बारे में ज़्यादा परवाह हुई। जहां इससे ज़्यादा राजकोषीय अनुशासन की आशा हुई, बाँड द्वारा वित्तपोषण से अधिक निजी पूंजी निर्माण के योग्य स्थितियों के निर्माण को बढ़ावा मिला। द्वितीय, इसने मौद्रिक नीति को राजकोषीय नीति की जकड़ से आजाद किया। तीसरे, इसने ब्याज दर को वित्तीय आस्तियों एवं अन्य आस्तियों के रूप में धन निवेश करने के अवसर मूल्य को दर्शाने के लिए उसकी आबंटन दक्षता को बढ़ाया (जालान, 2002)।

राजकोष घाटे के कम मौद्रीकरण के अंतर्गत मौद्रिक नीति की कार्यनीति

7.89 तदर्थ खजाना बिलों की समाप्ति तथा अर्थोपाय अग्रिम द्वारा राजकोष अनुशासन लागू करने की समन्वित रणनीति ने मौद्रिक प्रबंध को राजकोषीय घाटे के अनियंत्रित प्रत्यक्ष मौद्रिकरण की विवशता से मुक्त कर दिया। केंद्रीय सरकार एवं रिज़र्व बैंक के प्रतिनिधियों को मिलाकर अर्थोपाय अग्रिम प्रणाली के प्रबंध के लिए सन् 1997 में स्थापित केंद्र सरकार की नकदी एवं ऋण प्रबंध के लिए निगरानी दल प्रभावी नकदी प्रबंध के लिए समुचित रणनीति बनाने के अलावा मासिक राजकोषीय घाटा, ऋण कार्यक्रम की प्रगति, ऋण के उगाही के साधन

सारणी 7.6 : 91 दिवसीय तदर्थ खजाना बिलों के निवल निर्गम का पाक्षिक औसत

(करोड़ रु.)

राजकोषीय वर्ष	1994-95	1995-96	1996-97
1	2	3	4
अप्रैल-जून	-1,593	10,398	13,654
जुलाई-सितंबर	-4,864	12,445	9,299
अक्तूबर-दिसंबर	-6,013	10,030	5,633
जनवरी-मार्च	-919	8,844	2,861
मार्च अंत	1,750	5,965	4,685
राजकोषीय वर्ष औसत$	-3,249	10,280	7,612

@ भारिबैं अभिलेख के अनुसार $ लेख बंद होने के बाद
स्रोत : भा.रि.बैं. वार्षिक रिपोर्ट

तथा केंद्र सरकार की नकदी की स्थिति की समीक्षा करता था।। निरंतर बिक्री के लिए उपलब्ध 91 दिवसीय खज़ाना बिलों एवं तदर्थ खज़ाना बिलों के अभाव में सरकार के नकदी प्रबंध को आसान बनाने के लिए रिज़र्व बैंक ने सन् 1997-98 में केंद्र सरकार के 14 दिवसीय खज़ाना बिलों की नीलामी शुरू की, परिणामस्वरूप केंद्र सरकार की वित्तीय स्थिति में कुछ परेशानी के बावजूद अर्थोपाय अग्रिम सुविधा के अधीन आहरण निर्धारित सीमा के अंदर था, जिससे यह सिद्ध होता था कि सरकार के बाज़ार ऋण कार्यक्रम को बाज़ार का सशक्त समर्थन था। वास्तव में निरंतर राजकोषीय दबाव के बावजूद केंद्र सरकार को रिज़र्व बैंक ऋण में कमी आई तथा 1997-98 के बाद पहली बार सन 1999-2000 में अधिशेष की स्थिति आ गई।

7.90 सरकार को निवल रिज़र्व बैंक ऋण, की गतिविधियां जो राजकोषीय परिचालन के निवल मौद्रिक प्रभाव को दर्शाती हैं, उत्तरोत्तर रूप से रिज़र्व बैंक के प्राथमिक एवं द्वितीयक बाज़ार परिचालनों तथा सक्रिय सार्वजनिक ऋण प्रबंध की परस्पर अंतर्क्रिया पर निर्भर रहा तथा इससे अर्थोपाय अग्रिम आहरण की कम आवश्यकता पड़ी। इस प्रकार मुक्त बाज़ार परिचालनों माध्यम से रिज़र्व पर आए भार /ऋण के निजी आबंटन द्वारा होने वाले मौद्रीकरण का नियंत्रण किया जा सका। जहां प्राथमिक बाज़ार परिचालनों के लिए ऋण प्रबंध नीति लक्ष्यों यथा कम लागत पर राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण ने उत्प्रेरक कार्य किया, वहीं मुक्त बाज़ार परिचालनों के रूप में द्वितीयक बाज़ार परिचालनों के लिए मुद्रा प्रबंध लक्ष्यों ने उत्प्रेरणा दी।

मौद्रिक नीति परिचालन प्रक्रियाओं का परिष्कार

7.91 प्रत्यक्ष राजकोषीय प्रधानता से मुक्त होने पर, विशेष आर्थिक परिस्थितियों का ध्यान रखने के लिए अपनाए गए अल्पावधिक नीतिगत उपाय करते हुए, मौद्रिक नीति दीर्घावधि संरचनात्मक समस्याओं के समाधान पर ध्यान केंद्रित कर सकती थी। भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण तथा बाज़ार निर्धारित विनिमय दर प्रणाली लागू होने पर राजकोषीय नीति के स्थान पर बाह्य प्रवाह मौद्रीकरण का स्रोत बना। अतः एक और मौद्रिक समग्रों पर मुद्रा प्राधिकारी के नियंत्रण पर पूंजी प्रवाह, विनिमय दर घट बढ़ तथा वित्तीय नवीकरण का प्रभाव बढ़ा तथा दूसरी ओर मुद्रा मांग की ब्याज-दर संवेदनशीलता बढ़ी जिससे मुद्रा, उत्पादन तथा मूल्यों के बीच के संबंध बदले। इन गतिविधियों के कारण मौद्रिकनीति परिचालन प्रक्रियाओं तथा आर्थिक विकास, मुद्रास्फीति एवं वित्तीय स्थिरता की प्राप्ति के लिए आवश्यक मध्यावधि लक्ष्यों के परिष्कार की आवश्यकता पड़ी। तदनुसार रिज़र्व

बैंक ने मौद्रिक लक्ष्य के दृष्टिकोण को त्याग दिया तथा मौद्रिक नीति के बहुसंकेतक दृष्टिकोण से निर्माण के लिए एक जिसमें अनेक संकेतकों यथा मुद्रा, बैंकों एवं वित्तीय संस्थाओं द्वारा प्रदत्त ऋण से राजकोषीय स्थिति, व्यापार, पूंजी प्रवाह, ब्याज दर, मुद्रास्फीति दर, विनिमय दर, पुनर्वित्त तथा विदेशी मुद्रा लेन देन पर सूचनाएं शामिल हैं, की अधिक बारंबारता से निगरानी की जाने लगी।

7.92 समांतर रूप से वित्तीय लागतों के नियंत्रण मुक्त होने से मौद्रिक नीति के संप्रेषण माध्यमों में आए परिवर्तनों से यह आवश्यक हो गया कि मूल्यों एवं चलनिधि की मात्रा की समस्या के समाधान के लिए मौद्रिक नीति उपकरणों का प्रयोग किया जाए। रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक नीति के संचालन में अप्रत्यक्ष उपकरणों का प्रयोग जारी रखा। सन् 1997 से ब्याज दर के मध्यावधि संकेतक के रूप में बैंक दर को पुनःक्रियान्वित किया गया तथा रेपो दर सीमांत चलनिधि प्रबंध उपकरण के रूप में उभरी एवं यह आशा की गई कि मुद्रा बाज़ार दर इन दोनों दरों के बीच में घटती बढ़ती रहेगी। सन् 1990 के बाद के दशक के मध्य से रिज़र्व बैंक ने यह रणनीति लागू की है कि यदि बाज़ार स्थिति अनुकूल न हो तो वह सरकारी प्रतिभूतियों को स्वयं खपा लेता है/निजी बिक्री के माध्यम से स्वयं खरीद लेता है तथा अनुकूल बाज़ार परिस्थितियाँ होने पर उन्हें मुक्त बाज़ार परिचालन के माध्यम से बेच देता है। जहां तक प्रत्यक्ष उपकरणों का प्रश्न है, सांविधिक चलनिधि अनुपात को अक्तूबर 1997 में उसके सांविधिक रूप से निम्नतम स्तर पर यानी निवल मांग एवं मीयादी देयताओं के 25% तक के स्तर पर लाया गया तथा नकदी प्रारक्षित अनुपात को लगातार चरणबद्ध ढंग से कम करने तथा रिज़र्व बैंक की पुनर्वित्त के युक्तिसंगत बनाते जाने की नीतियां, विशिष्ट परिस्थितियों/ आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए, कुछ अस्थायी उभयमार्गी घटबढ़ के अलावा जारी रखी गईं।

7.93 मुक्त बाज़ार परिचालन द्वारा प्राथमिक चलनिधि कठिनाइयों का सामना करने के लिए यह आवश्यक था कि रिज़र्व बैंक के पास अपने खाते में सरकारी प्रतिभूतियों का पर्याप्त संचय हो। सन् 1998-99 से लगातार मौजूद अधिक चलनिधि की स्थिति एवं प्राथमिक बाज़ार ने सरकारी प्रतिभूतियों के निर्गम उत्तरोत्तर बढ़ती सहभागिता तथा अधिक चलनिधि के अवशोषण के लिए मुक्त बाज़ार परिचालन विक्रय रिज़र्व बैंक के अपने खाते में उपलब्ध सरकारी प्रतिभूतियों के परिमाण में भारी कमी आई। सन् 1998-99 से मुक्त बाज़ार परिचालन का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि इसमें विभिन्न परिपक्वता के खज़ाना बिलों का प्रयोग भी किया गया। ज्यों-ज्यों बाह्य पूंजी प्रवाह में वृद्धि हुई त्यों-त्यों इसकी विदेशी मुद्रा आस्तियों में बढ़ोतरी से इसके मौद्रिक प्रभाव को कम करने के लिए रिज़र्व बैंक ने जून 2000 से मु.बा. परिचालन के अनुपूरक के रूप में परिवर्तनीय चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) योजना शुरू की। चलनिधि समायोजन सुविधा योजना, जिसे केवल कुछ सीमा तक चलनिधि के प्रबंध के लिए शुरू किया गया था, दीर्घावधि चलनिधि अधिकता के प्रबंध का उपकरण बनी तथा अल्पावधि उपकरण के रूप में इसकी उपयोगिता का ह्रास हो गया।

खज़ाना बिलों की भूमिका [19]

7.94 खज़ाना बिल, जो केंद्र सरकार[20] का महत्वपूर्ण अल्पावधि उपकरण है तथा बाज़ार के लिए सुविधाजनक जोखिम रहित अल्पावधि निवेश का माध्यम है, ने रिज़र्व के अल्पावधि चलनिधि प्रबंध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। परंतु सन् 1990 के दशक तक खज़ाना बिल का (विशेषकर सन् 1965 से जब हर समय चालू निर्गम प्रणाली का प्रारंभ हुआ) मुक्त बाज़ार परिचालन के माध्यम से नम्य दर उपकरण के रूप में प्रयोग नहीं किया जा सका। बाज़ार सहभागियों में यह प्रवृत्ति देखी गई कि वे अपने शुरुआती निवेश का रिज़र्व बैंक द्वारा पुनर्बट्टाकरण करवा लेते थे तथा इससे इसके सरकार के नकदी शेष के लिए जारी द्वारा धारित तदर्थ खज़ाना बिलों के अलावा रिजर्व बैंक द्वारा निष्क्रय रूप से खज़ाना बिलों का अवशोषण किया जाता था। रिज़र्व बैंक बाहर बाज़ार न होने तथा सन् 1974 से बट्टाकरण की दर में नम्यता के अभाव से मौद्रिक उपकरण या दक्ष मुद्रा बाज़ार उपकरण के रूप में इसकी उपयोगिता सीमित हो गई। इसके अलावा सन् 1980 के दशक में प्रायः आभावी बट्टाकरण दर मुद्रास्फीति दर से नीचे गिर जाती थी तथा इसके कारण ब्याज की दर ऋणात्मक हो जाती थी।

7.95 सन् 1986 में 182 दिन के खज़ाना बिलों की नीलामी की जगह सन् 1990 दशक के प्रारंभ में खज़ाना बिलों का पूरी तरह नीलामी द्वारा बेचने तथा प्राथमिक व्यापारियों द्वारा बाज़ार आधारित दर पर खज़ाना बिलों के बट्टाकरण की प्रणाली शुरू की गई। इससे रिज़र्व बैंक के बाहर खज़ाना बिल बाज़ार के विकास में सहायता मिली तथा इससे मुक्त बाज़ार परिचालनों द्वारा बाज़ार में अल्पावधि चलनिधि के प्रबंध में खज़ाना बिल को मुद्रानीति के उपकरण के रूप

[19] इसमें सरकारी शेष की पूर्ति करने के लिए उन खजाना बिलों पर चर्चा केंद्रित की गई है जो तदर्थ खजाना बिल नहीं हैं। खजाना बिल बाज़ार के विकास के संबंध में विस्तृत चर्चा के लिए कृपया अध्याय VI देखें।

[20] रिज़र्व बैंक ने 1938-1950 की अवधि के दौरान राज्य सरकारों की ओर से खजाना बिलों की बिक्री की है।

में प्रयोग करने में आसानी हुई। इस चरण में खज़ाना बिल उपकरण के विकास का औचित्य यह था कि इससे सरकार को बाज़ार भाव पर अल्पावधि ऋण उपलब्ध होता था तथा इस प्रकार निर्धारित संदर्भ दर से मुद्रा नीति परिचालनों में सुविधा होती थी। एक ओर तदर्थ खज़ाना बिलों की समाप्ति तथा अर्थोपाय अग्रिम प्रणाली के अनुशासन के पालन तथा दूसरी ओर उभरती हुई चलनिधि परिस्थितियों के अनुरूप बाज़ार के लिए समुचित जोखिम रहित अल्पावधि शील्ड कर्व के विकास की आवश्यकता के कारण खज़ाना बिल के निर्गम का नियमित करना जरुरी था। अप्रैल 2004 से पूंजी प्रवाह से उत्पन्न चलनिधि के अवशोषण के लिए भी खज़ाना बिलों का प्रयोग किया जाता है।

राज्य सरकारों के साथ रिज़र्व बैंक के संबंध

7.96 1 अप्रैल 2007 तक रिज़र्व बैंक का प्रांतीय सरकारों के साथ कोई सीधा संबंध नही था क्योंकि केंद्र सरकार राज्यों की अर्थोपाय आवश्यकताओं की पूर्ति करती थी। सन् 1937 में प्रांतीय (x)=(तत्कालीन प्रांतीय सरकारें)। स्वायत्तता तथा 1956 में राज्य पुनर्गठन अधिनियम 1956 के बाद रिज़र्व बैंक ने प्रांतों / राज्यों के साथ उनके बैंकिंग कारोबार के लिए अलग-अलग करार किए। सामान्य एजेंसी एवं बैंकिंग कार्यों के अतिरिक्त रिज़र्व बैंक सरकारों को ऋण उगाही में सहायता, राजस्व एवं खर्चों में अस्थायी असंतुलन के समय अर्थोपाय अग्रिम तथा काफी हद तक उनकी ओवरड्राफ़्ट की प्रवृत्ति का निभाव करता था।

7.97 राज्य सरकारों तथा रिज़र्व बैंक के बीच हुए अनुबंधों के अनुसार रिज़र्व बैंक राज्य सरकारों का सामान्य बैंकिंग कामकाज देखता है जिसके लिए राज्य सरकारें रिज़र्व बैंक के पास एक निर्धारित न्यूनतम राशि[21] जमा रखती हैं। अनुबंध के अधीन राज्य सरकारों का यह उत्तरदायित्व है कि वे न्यूनतम राशि में कमी होने पर अपने खज़ाना बिलों या रिज़र्व बैंक से अर्थोपाय अग्रिम लेकर इस कमी की पूर्ति करे। रिज़र्व बैंक द्वारा राज्य सरकारों को देय अर्थोपाय अग्रिम का परिमाण उनकी न्यूनतम जमाराशि के गुणांक तक सीमित था। रिज़र्व बैंक केंद्रीय प्रतिभूतियों की जमानत पर विशेष अर्थोपाय अग्रिम भी प्रदान करता है। इन सब सुविधाओं के बावजूद कुछ राज्य सरकारें प्रायः अर्थोपाय अग्रिम सीमा का उल्लंघन करके लंबे समय तक ओवरड्राफ़्ट लेती थीं। चूंकि राज्य सरकारें वर्षान्त तक अपने ओवरड्राफ़्ट को चुका नहीं पाती थीं, अतः वर्षांत में केंद्र सरकार राज्य सरकारों के अनधिकृत ओवरड्राफ़्ट स्वयं अंगीकार करती थी। इस प्रकार लिए गए ओवरड्राफ़्ट को केंद्र सरकार उक्त राज्य को देय सहायता राशि में उसी साल या अनेक सालों की अवधि में समायोजन कर लेती थी। कुछ विशेष मामलों में केंद्र सरकार ऐसे राज्यों को ओवरड्राफ़्ट के भुगतान के लिए विशेष ऋण भी प्रदान करती थी। 1960 के दशक के मध्य में राज्य सरकारों के ओवरड्राफ़्ट का दुष्प्रभाव भुगतान असंतुलन के कारण अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष से ऋण लेकर केंद्र सरकार की अपनी वित्तीय स्थिति को सुधारने के प्रयासों पर पड़ा। इसके अलावा चूंकि केंद्र सरकार का अपना बजट घाटे में था, अतः राज्य सरकारों के अनधिकृत ओवरड्राफ़्ट प्रायः तदर्थ खज़ाना बिलों के रूप में केंद्र सरकार के ऋण में जुड़ जाते थे। अतः यद्यपि रिज़र्व बैंक सीधे-सीधे राज्य सरकारों के घाटे का मौद्रीकरण नहीं करता था तथापि अप्रत्यक्ष तौर पर ऐसा मौद्रीकरण हुआ।

7.98 चूँकि ओवरड्राफ़्ट से आरक्षित मुद्रा में वृद्धि होती अतः राज्य सरकारों के वित्तीय आचरण में और सुधार के लिए अर्थोपाय अग्रिम एवं ओवरड्राफ़्ट योजना की समीक्षा के लिए रिज़र्व बैंक ने सन् 1971, 1978 एवं 1985 में तीन कार्यदल स्थापित किए। इन दलों ने रिज़र्व बैंक को यह सलाह दी कि वह अन्य के अतिरिक्त यदि ओवरड्राफ़्ट सात दिन से ज़्यादा समय तक बना रहे तो चेतावनी के बाद भुगतान का निलंबन, यदि ऋणग्रस्तता 45 दिन से ज़्यादा दिन तक, बावजूद इसके कि वह अर्थोपाय सीमा से कम है, जारी रहे तो राज्य सरकार को उपचारात्मक उपाय करने को कहे तथा यदि वह 15 प्रतिशत से बढ़ जाए तो उसे चेतावनी दे। यद्यपि ये सिफ़ारिशें स्वीकार कर ली गई परंतु सन् 1985 तक रिज़र्व बैंक अंतिम दंड यानि भुगतान बंदी सभी राज्यों पर समान रूप से लागू नहीं कर सकता था। परिणामतः सरकारों को दी गई चेतावनी के बावजूद कई राज्यों ने लंबे समय ओवरड्राफ़्ट की सीमा का पालन नहीं किया। 2 अक्तूबर 1985 को ओवरड्राफ़्ट नियमन योजना के लागू होने के बाद ओवरड्राफ़्ट के लिए निर्धारित समय सीमा यानि लगातार सात कार्य दिवस के बाद रिज़र्व बैंक एवं उसकी एजेंसियों ने उन सरकारों की ओर भुगतान बंद कर दिया।

7.99 आय व्यय असंतुलन की समस्या के हल में संरचनात्मक कठिनाइयों तथा राजकोषीय एवं मौद्रिक प्रबंध से संबंधित समस्याओं

[21] अप्रैल 1937 में पहली बार न्यूनतम शेष 195 लाख रुपए रखा गया किंतु 1 अप्रैल 1938 से लागू हुआ। उसके बाद न्यूनतम शेष को बढ़ते क्रम में चार बार संशोधित किया गया -अप्रैल 1953 (4.00 करोड़ रुपए), मार्च 1967 (6.25 करोड़ रुपए), मई 1976 (13.00 करोड़ रुपए) और अप्रैल 1999 (41.04 करोड़ रुपए) । 1999 में रिज़र्व बैंक ने अर्थोपाय अग्रिम की न्यूनतम राशि की सीमा हटा दी है किंतु उसे संशोधित कर दिया है और न्यूनतम शेष को उसी आधार पर सामान्य अर्थोपाय अग्रिम से जोड़ दिया है।

को ध्यान में रखकर अर्थोपायों पर अनौपचारिक सलाहकार समिति की सलाह के अनुसार अप्रैल 1937 से फरवरी 1999 तक अस्तित्व में रही अर्थोपाय योजना में संशोधन किया गया। तदनुसार मार्च 1999 से सामान्य अर्थोपाय सीमा को न्यूनतम जमाराशि की बजाय समग्र राजस्व आय तथा व्यय के गतिमान औसत के आधार पर एक सूत्र के अनुसार नियत किया गया । इस सूत्र का आधारभूत औचित्य यह था कि यह राज्य के नकदी प्रवाह के समान व्यवहार करेगा तथा राज्य के आय में गिरावट के प्रभाव को निरस्त करेगा। नई योजना में विशेष अर्थोपाय अग्रिम की सीमा राज्य सरकार द्वारा धारित केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों एवं खज़ाना बिलों के सीधे अनुपात में बिना किसी सीमा के, नियत की गई। परंतु ओवरड्राफ़्ट नियमन के अनुशासन तंत्र को कठोर बनाया गया तथा यह निर्णय किया गया कि कोई भी राज्य 10 दिन (फरवरी 2001 से 12 दिन) से ज़्यादा ओवरड्राफ़्ट नहीं रखेगा अन्यथा रिज़र्व बैंक उसके भुगतान बंद कर देगा। ओवरड्राफ़्ट की सीमा सारे वर्ष में अनुमत सामान्य अर्थोपाय अग्रिम के बराबर निश्चित की गई तथा प्रथम उल्लंघन के अवसर पर चेतावनी एवं ओवरड्राफ़्ट को सीमा के अंदर लाने के लिए तीन कार्य दिन (फरवरी 2001 से 5 दिन) की छूट तथा उसके बाद भुगतान रोकना का प्रावधान किया गया अर्थोपाय अग्रिम पर बैंक दर से तथा ओवरड्राफ़्ट पर बैंक दर से 2 प्रतिशत ज़्यादा ब्याज वसूला जाता था। बजट लेन - देन की राशि के अनुसार न्यूनतम शेष का परिमाण भी बढ़ाया गया। यह भी निश्चय किया गया कि तीन वर्ष बाद इसकी समीक्षा की जाएगी।

7.100 यद्यपि अर्थोपाय अग्रिम का प्रावधान राज्यों के आय-व्यय में अस्थायी असंतुलन की समस्या से निपटने के लिए किया जाता था परंतु राज्यों द्वारा लंबे समय तक ओवरड्राफ़्ट का प्रयोग करने से अर्थोपाय की स्थिति दो ओवरड्राफ़्ट के बीच सुरक्षा जाल की जैसी हो गई। इसके बावजूद कई राज्यों की बिगड़ती आर्थिक स्थिति (भा.रि.बैंक 2003) के कारण अर्थोपाय सलाहकार समिति ने प्रचलित उदार व्यवस्था को चालू रखा। परंतु समिति ने अर्थोपाय अग्रिम सीमा को सिर्फ एक स्वतंत्र परिवर्तनीय अर्थात् राजस्व से संबंधित करके गणना सूत्र को सरल बनाया क्योंकि पूंजीगत व्यय को शामिल करने से विकृतियां पैदा होती थी। इसके अलावा समिति ने महसूस किया कि राजस्व संख्या एक पारदर्शी संख्या है तथा इससे राज्य की भुगतान क्षमता का सही अनुमान लगता है। तदनुसार रिज़र्व बैंक ने 3 मार्च 2003 को राज्यों की अर्थोपाय अग्रिम योजना में संशोधन किया[22]। विशेष अर्थोपाय अग्रिम सुविधा के प्रयोग को प्रोत्साहित करने के लिए उस पर सामान्य आर्थोपाय अग्रिम सुविधा की अपेक्षा कम ब्याज दर लागू की गई। * उपयोग की अवधि के अनुसार सामान्य अर्थोपाय योजना में भी भिन्न-भिन्न ब्याज दर लागू की कई * अर्थोपाय अक्रिम सुविधा के 90 दिन से ज़्यादा प्रयोग को हतोत्साहित करने के लिए।

7.101 सारांश में, सन् 2002-03 तक के राजकोषीय मुद्रा संबंध की विकास प्रक्रिया का तीन महत्वपूर्ण बिंदुओं के परिप्रेक्ष्य में मूल्यांकन किया जा सकता है। प्रथम, भारत में योजनबद्ध विकास की शुरुआत के कारण हुई संसाधन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सरकार कों प्रायः स्वचालित मौद्रिक निभाव की आवश्यकता हुई तथा बैंक का मुद्रा नीति पर नियंत्रण कम हुआ। 1960 के दशक में बैंकों के राष्ट्रीकरण से सरकार को अपनी बढ़ती आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिक संसाधनों पर नियंत्रण मिल गया। 1970 के दशक से मौद्रिक नीति उपकरणों का प्रयोग राजकोषीय घाटे के मौद्रीकरण से उत्पन्न मुद्रास्फीति को कम करने हेतु रक्षात्मक उपाय के रूप में किया जाता था। दूसरा महत्वपूर्ण बिंदु रिज़र्व बैंक एवं सरकार द्वारा प्रतिसूचना सहित मौद्रिक लक्ष्य दृष्टिकोण के विश्लेषण द्वारा राजकोषीय घाटे के मौद्रीकरण से उत्पन्न प्रभावों की पहचान। इस दृष्टिकोण के अनुसार मूल्य स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए आरक्षित मुद्रा के प्रसार को नियंत्रित करने हेतु सरकार को रिज़र्व बैंक के ऋण पर सीमा निर्धारित करने का प्रयास किया गया। सन् 1991 के आर्थिक संकट के बाद सरकार एवं रिज़र्व बैंक ने राजकोषीय सुदृढ़ीकरण एवं राजकोषीय घाटे के मौद्रीकरण में कमी के लिए संयुक्त मध्यावधि रणनीति अपनाई। सन् 1990 के दशक के प्रारंभ में राजकोषीय सुधारों ने तीसरे महत्वपूर्ण बिंदु के लिए स्थिति तैयार की जिसमें सरकार ने अपने 1994-95 के बजट में कहा 'सरकार को तदर्थ खज़ाना बिलों के माध्यम से रिज़र्व बैंक से असीमित ऋण लेकर नई मुद्रा का सृजन कर अपने घाटे की पूर्ति की छूट नही होनी चाहिए। इस व्यवहार से रिज़र्व बैंक की प्रभावी मौद्रिक नीति चलाने की क्षमता का ह्रास होता है। ' तदनुसार, सरकार एवं रिज़र्व बैंक के बीच सन 1994 में हुए समझौते के अनुसार कालांतर में मार्च 1997 में तदर्थ खज़ाना बिलों के माध्यम से स्वतः मौद्रीकरण की रीति का अंत हुआ। तदर्थ खज़ाना बिलों के विलोपन तथा सक्रिय ऋण प्रबंध नीति के कारण रिज़र्व बैंक मौद्रिक नीति में अधिक नम्यता सामर्थ्य प्राप्त कर सका।

[22] संशोधित सामान्य अर्थोपाय अग्रिम राशि की सीमा की गणना पिछले तीन वर्ष की राजस्व प्राप्तियों के औसत का हिसाब में लेते हुए की गई है तथा गैर विशेष एवं विशेष श्रेणी के राज्यों के लिए क्रमशः 3.19 और 3.84 के उच्च गुणजों का इस्तेमाल किया गया है, ताकि सीमा की पर्याप्तता सुनिश्चित की जा सके।

IV. सार्वजनिक ऋण प्रबंध का विकास

7.102 रिज़र्व बैंक सांविधिक प्रावधानों के अनुसार केंद्र सरकार का ऋण-प्रबंध तथा अलग-अलग अनुबंधों के अनुसार राज्य सरकारों का ऋण प्रबंध करता है। बैंक सरकार के वार्षिक ऋण कार्यक्रम के निर्माण में भी उसको परामर्श देता है। मुद्रा नीति के व्यापक लक्ष्यों के अनुरूप सरकारी ऋण की लागत में कमी करना भी वर्षों से सार्वजनिक ऋण प्रबंध नीति का लक्ष्य रहा है। इसीलिए रिज़र्व बैंक सरकार के साथ विचार विमर्श के बाद ऋण उगाही के समय, लिखतों का प्रकार, परिपक्वता तथा ऋण का मिश्रण आदि का निर्धारण करता है।

7.103 भारत में ऋण प्रबंध विकास का राजकोषीय मौद्रिक संबंधों से घनिष्ठ संबंध रहा है, जहां राजकोषीय नीति से ऋण के आकार का निर्धारण होता है वहीं ऋण प्रबंध नीति इसकी लागत कम रखने के लिए ऋण की संरचना तथा नीति एवं निवेशक आवश्यकताओं एवं चलनिधि स्थिति के आधार इसके परिपक्वता विन्यास का निर्धारण करती है। ऋण का मौद्रिक प्रभाव ऋण धारकों के समूह के मिश्रण पर विशेषतः रिज़र्व बैंक द्वारा धारित ऋण की मात्रा पर निर्भर है (तारापोर, के अनुसार 1999)। सन् 1990 दशक के प्रारंभ तक आवश्यक राजकोषीय नीति के अनुसार सरकारी घाटे के प्रत्यक्ष वित्तपोषण की बाध्यता (तदर्थ खज़ाना बिल के माध्यम से स्वतः तथा रिज़र्व बैंक द्वारा धारित सरकारी प्रतिभूतियां) एवं पूर्वनिश्चित बाज़ारेतर न्यून दरों पर सांविधिक नकदी अनुपात के माध्यम से बैंकों द्वारा आबद्ध क्रय द्वारा ऋणनीति अक्रिय रूप से परिचालित थी। ज्यों-ज्यों सार्वजनिक का स्तर बढ़ा तो राजकोषीय घाटे के भारी मौद्रीकरण, बैंकों के संसाधनों पर सांविधिक पूर्वाधिकार तथा सरकारी प्रतिभूतियों पर कृत्रिम रूप से निम्न ब्याज दरों को ब्याज दरों की आवधिक संरचना की विकृति के कारण निष्क्रिय ऋण प्रबंध को कठिन बनाया। तदनुसार, सन् 1991 के आर्थिक संकट की पृष्ठभूमि में सन् 1990 दशक के शुरू में सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के सुचारु विकास, सांविधिक पूर्वाधिकार में कमी, घाटे के मौद्रीकरण में भारी कमी तथा मुद्रानीति के अप्रत्यक्ष उपकरणों को सक्रिय करके सक्रिय ऋण नीति का एक युग आया। प्राथमिक निर्गम में नीलामी की शुरुआत करके सरकारी ऋण पर ब्याज को बाज़ार संमत बनाया गया जिससे रिज़र्व बैंक राजकोषीय सक्रियता पर बाज़ार अनुशासन लागू करने में सक्षम हुआ। तदर्थ खज़ाना बिलों के विलोपन तथा केंद्र सरकार के लिए अर्थोपाय अग्रिम सुविधा की शुरुआत से स्वतः मौद्रीकरण के आसान विकल्प को समाप्त किया गया। सरकारी प्रतिभूति बाज़ार एवं अन्य वित्तीय बाज़ारों को ज़्यादा समेकित बनाने हेतु नीति का नेतृत्व करने के अलावा रिज़र्व बैंक ने बाज़ारों को और पारदर्शी, दक्ष, न्याय संगत, एवं जोखिम रहित बनाने के लिए उनकी सूक्ष्म संरचना की जांच भी की। मुक्त बाज़ार परिचालन के उपकरण को पुनः सक्रिय बनाने में समर्थ बनाकर रिज़र्व बैंक के मौद्रिक एवं ऋण प्रबंध परिचालन में सहायता की।

निष्क्रिय सार्वजनिक ऋण प्रबंध

7.104 सरकार के ऋण प्रबंधक के रूप में जहां रिज़र्व बैंक को यह सुनिश्चित करना था कि सरकारी सर्वश्रेष्ठ शर्तों पर मिले वहीं उद्योग एवं व्यापार पर उसका दुष्प्रभाव न्यूनतम रहे। द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान परिस्थितियों के अनुसार समय-समय पर सरकारी बांड निर्गम कार्यनीति में परिवर्तन किए गए। विभिन्न प्रतिभूतियों के लिए खरीददारों में रुचि जगाने के लिए ऋणों का सावधानीपूर्वक नामकरण किया गया। सामान्यतया युद्ध के लिए धन जुटाने हेतु उस समय प्रचलित बैंक दर अर्थात् 3 प्रतिशत पर प्रतिभूतियां बेंची गई परंतु ऋण की परिपक्वता अविध के आधार पर मूल्यों में घट-बढ़ की गई। लघु, मध्यम एवं दीर्घावधि के ऋण जारी किए गए। भविष्य में ब्याज दर में भारी कमी की आशंका के कारण बाज़ार में दीर्घावधि प्रतिभूतियों की मांग ज़्यादा थी।

7.105 निजी क्षेत्र की ऋण आवश्यकतों से प्रतियोगिता से बचने के लिए सरकारी ऋण की बिक्री प्राय: मंदी के मौसम में की जाती थी। केंद्रीय प्रतिभूतियों की बिक्री राज्य ऋणों से पहले की जाती थी। सन् 1954 एवं 1963 में दो अवसरों पर रिज़र्व बैंक ने एक समय केंद्र एवं राज्य सरकारों के ऋण एक साथ जारी किए। दोनों ही अवसर पर उल्लेखनीय सफलता नहीं मिली क्योंकि बहुत से राज्यों ने 'उनका अंश केंद्र द्वारा निर्धारित किया जाएगा' इस कारण ऋणों की बिक्री के लिए पर्याप्त प्रयास नहीं किए। अतः रिज़र्व बैंक ने अलग-अलग ऋण जारी करने की रीति सन् 1964 में पुनः प्रारंभ कर दी।

7.106 प्रथम पंचवर्षीय योजनाकाल मे जारी एक मध्यावधि प्रतिभूतियों के बजाय द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल में निवेशकों को व्यापक ऋण अवधि विकल्प उपलब्ध करने तथा असंतुलित पोर्टफोलिया की समस्या से बचने के लिए कई परिपक्वतावधियों की प्रतिभूतियां जारी की। परंतु ज़्यादा घनत्व अल्पावधि प्रतिभूतियां का या जो बाज़ार में ज़्यादा स्वीकार्य थीं। समय के साथ सरकार की प्रतिभूतियों के परिपक्वता विन्यास में निवेश योग्य धन की

प्रकृति, विभिन्न प्रतिभूतियों पर ब्याज दर, स्वामित्व पैटर्न एवं अवमूल्यन के जोखिम के अनुसार परिवर्तन आया। ऋण के एकसाथ भुगतान की समस्या से के कारण सरकार एवं रिज़र्व बैंक ने अधिक लागत के बावजूद प्रतिभूतियों की परिपक्वता अवधि बढ़ाई। प्रथम दीर्घावधि प्रतिभूति 20 वर्ष की परिपक्वतावधि के साथ 1959 में तथा 23 वर्ष की परिपक्वतावधि की प्रतिभूति 1962 में जारी की गई। सन् 1969-70 में परिपक्वता अवधि को बढ़ा कर 30 वर्ष किया गया।

7.107 सन् 1960 एवं सन् 1970 के दशकों में कुल प्रतिभूतियों में अल्पावधि प्रतिभूतियों का अनुपात घटता गया तथा दीर्घावधि प्रतिभूतियों का अनुपात बढ़ा गया। 1970 के दशक के मध्य में अल्पकालिक वृद्धि के अलावा मध्यावधि प्रतिभूतियों के अनुपात में कोई दर्शनीय परिवर्तन नहीं हुआ। सन 1974-75 में मूल्यों में वृद्धि के कारण अवमूल्यन का जोखिम करने के लिए रिज़र्व बैंक ने प्रचलित व्यवहार के विपरीत प्रतिभूतियों की परिपक्वतावधि में कमी की। सन 1984-85 में अधिकतम परिपक्वतावधि 28 वर्ष से बढ़ा कर 30 वर्ष की गई परंतु चक्रवर्ती समिति की सिफारिश के अनुसार इसे सन् 1986-87 में घटाकर 20 वर्ष कर दिया गया।

7.108 सन् 1970 के उत्तरार्ध तक सरकारी प्रतिभूतियों के ब्याज में वार्षिक वृद्धि की दर बहुत कम थी जिससे कूपन दर एवं सरकारी प्रतिभूतियों पर आय तथा अन्य लिखतों पर ब्याज दर में अमेल पैदा हुआ। ऋण प्रबंध से संबंधित समस्याओं के बारे में 1980 में स्थापित एक आंतरिक कार्यदल (अध्यक्ष : डी.सी.राव), सरकारी प्रतिभूतियों को अन्य लिखतों पर ब्याज दर के समान करने के लिए ब्याज दर में एकमुश्त तीन प्रतिशत की वृद्धि करने का सुझाव दिया। अतः रिज़र्व बैंक ने कूपन दर में, विशेष कर दीर्घावधि छोर पर अधिक वृद्धि की। दीर्घावधि प्रतिभूतियों का कूपन दर सन् : 1977-78 में 6.5 प्रतिशत से बढ़ाकर सन् 1985-86 में 11.5 प्रतिशत कर दिया। सरकारी प्रतिभूतियों की ब्याज दरों में इन वृद्धियों के बावजूद उन पर देय ब्याज दर बैंकों द्वारा 5 वर्ष की आवधिक जमा तथा उस तुल्य लिखतों पर देय ब्याज दर से कम थी। अतः सरकारी प्रतिभूतियों पर धनात्मक वास्तविक ब्याज दर सुनिश्चित करने के लिए चक्रवर्ती समिति ने सन् 1985 में अनेक सिफारिशें दीं। इन सिफारिशों के कार्यान्वयन से सन् 1990 दशक के शुरुआत में सरकारी प्रतिभूतियों की ब्याज दर को बाज़ार दरों के समतुल्य बनाने योग्य वातावरण तैयार हुआ।

राज्य सरकार ऋण प्रबंध

7.109 बाज़ार की कम अवशोषण शक्ति के कारण युद्धोत्तर काल में राज्य की प्रतिभूतियों की खपत युद्ध पूर्व काल से कम थी। राज्य सरकारों के ऋण की हामीदारी का प्रथा, जो रिज़र्व बैंक ने 1930 में शुरू की थी, को 1951 में समाप्त किया गया ता रिज़र्व बैंक राज्य सरकारों की प्रतिभूतियों की बिक्री के लिए अनेक उपाय किए जिनमें सन् 1950 के दशक की शुरुआत से राज्य ऋणों की प्राथमिक बाज़ार में सीमित खरीद, राज्य ऋणों के बाज़ार को समतल बनाना तथा ऋणाकार को कम करना शामिल था।

7.110 बड़े योजना व्यय के लिए संसाधन जुटाने हेतु सन् 1950 के दशक के मध्य से राज्य सरकार के ऋणों में वृद्धि हुई। चूंकि राज्य सरकारों की प्रतिभूतियों का ग्राहकवर्ग, जो चलनिधि की अपेक्षा ब्याज दर को अधिक महत्व देता था, सीमित था, अतः राज्य सरकारें अपनी प्रतिभूतियां बलपूर्वक अनिच्छुक खरीदरारों विशेषतः छोटे बैंकों तथा बीमा कंपनियों को बेचती थी जो निर्गम के तुरंत बाद बट्टाकरण द्वारा उन प्रतिभूतियों को बाज़ार में बेच कर सरकारी प्रतिभूति बाज़ार को अस्थिर बनाते थे। रिज़र्व बैंक, विशेषकर 1960 के दशक के प्रारंभ में अनबिके राज्य ऋणों को खरीदता था। सरकार की संकुचनकारी नीतियों के कारण सन् 1965-66 से रिज़र्व बैंक ने राज्यों के अनबिके ऋण को खरीदना बंद कर दिया तथा राज्यों को उसे आपस में बांट न लेने की सलाह दी।

सार्वजनिक ऋण प्रबंध का पुन: सक्रियकरण

7.111 राजकोषीय प्रधानता के युग में सार्वजनिक ऋण प्रबंध की व्यापक समस्या ने दक्ष मुद्रा नीति प्रबंध को कठिन बनाया। सन 1990 के दशक के प्रारंभ में सरकारी ऋण के उत्तरोत्तर बाज़ार अभिमुख बनाने तथा मुद्रा नीति पर राजकोषीय वर्चस्व में कमी के लिए किए गए उपायों से रिज़र्व बैंक को सक्रिय ऋण प्रबंध एवं मुद्रा नीतियां लागू करने का अवसर मिला। सुधारपूर्व युग, जब सरकारी ऋण की लागत कम रखने के लिए प्रशासनिक आदेश द्वारा ब्याज दर को बाज़ार से कम रखा जाता था, के विपरीत नई प्रणाली, जिसमें बाज़ार आधारित दर पर उधार लिया जाता था, के कारण समग्र मुद्रा नीति के अधीन, रोलओवर जोखिम को ध्यान में रखकर सार्वजनिक ऋण की लागत कम रखने की ज़िम्मेदारी रिज़र्व बैंक पर आ गई। रिज़र्व बैंक को, सन् 1990 के दशक के उत्तरार्ध में बढ़ते राजकोष घाटे से सरकारी ऋण में वृद्धि के कारण, सक्रिय ऋण प्रबंध नीति का परिचालन करना पड़ा।

7.112 बढ़ते हुए बाज़ार ऋण के बावजूद सरकारी ऋण की ब्याज लागत कम रखने की चुनौती रिज़र्व बैंक के समक्ष आई। सन 1990 के दशक में ब्याज नियंत्रण के लक्ष्य की प्राप्ति में रिज़र्व बैंक के सामने दो चुनौतियां आई। प्रथम सरकारी प्रतिभूतियों की ब्याज दर को बाज़ार समान बनाने के लिए उनकी ब्याज दर को सुधार पूर्व की बाज़ार से कम दरों की अपेक्षा बढ़ाना पड़ा। दूसरे सरकारी घाटे के वित्तपोषण में सरकारी प्रतिभूतियों का अनुपात सन 1991-92 में 21 प्रतिशत बढ़कर 2004-05 में 80 प्रतिशत हो गया जिससे सरकारी घाटे के वित्तपोषण में प्रतिभूतियों के महत्वपूर्ण योगदान का पता चलता है। इस प्रकार रिज़र्व बैंक पर सरकारी ऋण के उत्तरोत्तर बढ़ते अनुपात का प्रबंध करने का उत्तरदायित्व डाला गया।

7.113 रिज़र्व बैंक ने सार्वजनिक ऋण के प्रबंध में चतुरंगी रणनीति अपनाई। प्रथम, लागत कम करने के लिए इसने प्राथमिक निर्गम के परिपक्वता विन्यास में परिवर्तन किया। दूसरे, ऐसे अवसरों पर जब बाज़ार परिस्थितियाँ समुचित दर पर ऋण निर्गम के अनुकूल नही थीं तो इसने अपने उपर भाग लेने / निजी बिक्री द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों को स्वयं खरीदा तथा बाज़ार में परिस्थितियां अनुकूल होने उनहें बाज़ार में बेच दिया। तीसरे रिज़र्व बैंक ने समय-समय पर निवेश आधार को व्यापक एवं गहन बनाकर तथा बाज़ार मांग के अनुरूप नई लिखते शुरू करके सरकारी प्रतिभूति बाज़ार को व्यापक एवं गहरा बनाने के प्रयास किए। अंततः पारदर्शिता सुनिश्चित करने तथा बाज़ार सहभागियों को अपना निवेश आयोजना सुधारने के लिए रिज़र्व बैंक सन् 2002-03 से केंद्र सरकार के बाज़ार ऋण के महत्वपूर्ण कार्यक्रम का अर्धवार्षिक कैलेंडर प्रकाशित करता है।

सरकारी ऋण के परिपक्वता विन्यास एवं लागत का प्रबंध

7.114 घरेलू सरकारी ऋण के बढ़ते परिमाण से वित्तीय बाज़ार में अनिश्चिता पैदा हुई जिसने एक ओर निवेशकों में अधिक ब्याज दर की आशा जगाई वहीं दूसरी ओर ऋण प्रबंधकों की आर्थिक विकास एवं वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने की क्षमता कम की। सरकारी ऋण के अधिक परिमाण से दीर्घावधि ब्याज दरों को कम करने की क्षमता कम होती थी, इसलिए सन् 1990 के दशक के पूर्वार्ध में रिज़र्व बैंक अल्पावधि बांड निर्गम किए । बाज़ारमत एवं पूर्वघोषित कूपन दर से बाज़ार संमत ब्याज दर संक्रमण के मद्देनज़र एवं आबद्ध निवेशक समूह से परे बाज़ार निर्माण के लिए अधिकतम परिपक्वतावधि को बीस वर्ष से घटा कर दस वर्ष तथा न्यूनतम परिपक्वतावधि को 5 वर्ष से घटाकर 2 वर्ष किया गया। परिणामस्वरूप मार्च 1991 से मार्च 1998 तक शेष प्रतिभूतियों में अल्पावधि प्रतिभूतियों (5 वर्ष से कम) का अनुपात तेजी से बढ़ा एवं दस वर्ष से अधिक परिपक्वतावधि की प्रतिभूतियों का अनुपात घटा। इससे अनिवार्यतः तेजी से भुगतान तारीखों का घनत्व बढ़ने तथा अल्पावधि निर्गमों के रोलओवर से रिज़र्व बैंक को चलनिधि प्रबंध में कठिनाइयाँ आई। भविष्य में भुगतान के ऐसे संकेद्रण से बचने के लिए रिज़र्व बैंक ने सन् 1998 में सरकारी पुनर्वित्तीकरण के खतरे से बचने के लिए दीर्घावधि प्रतिभूतियों के निर्गम द्वारा ऋण के परिपक्वतावधि विन्यास के दीर्घीकरण की सचेतन रणनीति अपनाई (सारणी 7.7)। तदनुसार शेष सरकारी ऋण में दस वर्षीय प्रतिभूतियों का अनुपात सबसे ज़्यादा हो गया। सन् 2002-03 में केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों की अधिकतम परिपक्वतावधि 25 वर्ष से बढ़ाकर 30 वर्ष की गई। शेष केंद्रीय सरकार ऋणों की भारित औसत परिपक्वतावधि सन् 1997-98 में 6.6 वर्ष से बढ़कर मार्चांत 2005 में 13.76 वर्ष हो गई। बाज़ार - संमत ब्याज दर पर परिपक्वतावधि अवधि का सफल दीर्घीकरण सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के विकास एवं हालही के वर्षों में कम मुद्रास्फीति पर्यावरण के कारण संभव हुआ।

7.115 परिपक्वतावधि में वृद्धि से पहले रिज़र्व बैंक को उससे ऋण की लागत पर पड़ने वाले असर पर सावधानीपूर्वक विचार करना पड़ा क्योंकि परिपक्वतावधि बढ़ाने पर ब्याज दर बढ़ने की बहुत ज़्यादा संभावना होती है। परंतु सन् 1990 के दशक के प्रारंभ से जारी निम्न ब्याज दर परिस्थितियों के कारण रिज़र्व बैंक को भारित औसत ब्याज दर में सन् 1997-98 में12 प्रतिशत से 2004-05 में 6 प्रतिशत करने में सफलता मिली। सरकार के भारी ब्याज भुगतान भार, विशेषतः बढ़ती ब्याज दर पर्यावरण में, को कम करने के लिए रिज़र्व बैंक ने अस्थायी ब्याज दर बांड का निर्गम शुरू किया।

सारणी 7.7 केंद्र सरकार की सरकारी प्रतिभूतियों की परिपक्वता स्थिति

(प्रतिशत)

वर्ष(मार्चांत)	बकाया स्टॉक		
	5 वर्ष से कम	5-10 वर्ष	10 वर्ष से अधिक
1	2	3	4
1990-91	9	6	86
1997-98	41	41	18
2004-05	27	30	43

स्रोत : भा.रि.बैं. वार्षिक रिपोर्ट

सरकारी प्रतिभूति बाज़ार का विकास

7.116 सक्रिय ऋण प्रबंध नीति, वित्तीय बाज़ारों के विकास एवं एकीकरण तथा मुद्रानीति के अप्रत्यक्ष उपकरणों के परिचालन में सुगमता के लिए सरकारी प्रतिभूति बाज़ार का विकास बहुत महत्वपूर्ण है (रेड्डी 2002)। सरकारी प्रतिभूतियों के बेहतर बाज़ार ने जहां एक ओर रिज़र्व बैंक को ऋण प्रबंधक के रूप में सार्वजनिक ऋण की परिपक्वतावधि एवं लागत के इष्टतम प्रबंध की ज़्यादा स्वतंत्रता दी वहीं इसने मौद्रिक नीति को सांविधिक पूर्वाधिकार अनुपातों में कमी करने तथा (रंगराजन 1997) मुक्त बाज़ार परिचालन (या रेपो) का प्रयोग करने में समर्थ बनाया। मुद्रा प्रबंध में सन् 1992-93 में दिनांकित प्रतिभूतियों की नीलामी प्रक्रिया की शुरुआत से सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में बाज़ार संमत ब्याज दर के निर्धारण का मार्ग प्रशस्त हुआ। तत्पश्चात, रिज़र्व बैंक ने सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के विकास के लिए अनेक उपाय किए। इनमें नई लिखतों की शुरुआत, सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में समुचित मध्यस्थता के लिए प्राथमिक व्यापारियों के रूप में समुचित आधारभूत संस्था प्रणाली का विकास, निवेशक आधार में वृद्धि से सरकारी प्रतिभूतियों के निपटान जोखिम में कमी के लिए सन् 1995 में अंतरण विरुद्ध भुगतान की प्रणाली की शुरुआत आदि शामिल हैं। और सुधार करते हुए रिज़र्व बैंक ने नए निर्गमों को महत्वपूर्ण परिपक्वतावधियों में एकीकृत करके संदर्भ प्रतिभूतियों का विकास किया तथा वर्तमान ऋणों के पुनर्निगम द्वारा चलनिधि एवं विनिमेयता में वृद्धि की तथा सरकारी प्रतिभूतियों की खुदरा बिक्री को प्रोत्साहन दिया। 1990 के दशक के अंत से विद्यमान सरकारी प्रतिभूतियों के मूल्य आधारित नीलामी द्वारा निर्गम से केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों निष्क्रिय एकीकरण की नीति का पालन कर रहा है[23]।

राज्य सरकारों के बाज़ार उधार का प्रबंध

7.117 बाज़ार ऋण कार्यक्रम के अधीन राज्यों को राशि का आबंटन केंद्र सरकार एवं योजना आयोग द्वारा रिज़र्व बैंक की सलाह से किया जाता है। सन् 1998 तक लागू ''परंपरागत सरणी पद्धति'' में रिज़र्व बैंक पूर्व निर्धारित कूपन दर तथा प्रत्येक राज्य के लिए पूर्व घोषित राशि के अनुसार सारे राज्यों के लिए दो या अधिक किस्तों में बांड निर्गम द्वारा संयुक्त ऋण कार्यक्रम का संपादन करता था। उच्च सांविधिक चलनिधि अनुपात तथा राज्य ऋणों के छोटे आकार के युग में ''परंपरागत सरणी पद्धति'' से राज्य ऋणों के प्राथमिक निर्गम को सफलता पूर्वक पूर्ण किया जाता था। परंतु सांविधिक चलनिधि अनुपात में उत्तरोत्तर कमी से बैंकों की धारण आवश्यकता में आई कमी तथा निवेशक समूह में विभिन्न राज्यों की छवि से 'परम्परागत किस्त विधि' में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की गई। वित्तीय क्षेत्र सुधारों के परिप्रेक्ष्य में तथा बेहतर वित्त प्रबंध वाले राज्यों को बाज़ार दर पर सीधे बाज़ार से ऋण उठाव की सुविधा प्रदान करने हेतु सन् 1998-99 से राज्य सरकारों को नीलामी विधि[24] या (पूर्व घोषित राशि सहित परंतु बिना पूर्व निर्धारित ब्याज दर के) या असीमित बिक्री विधि (पूर्व निर्धारित कूपन दर पर असीमित एवं अघोषित राशि) से ऋण उगाहने का विकल्प दिया गया। जनवरी 1999 से राज्य सरकारों ने अपने बाज़ार ऋण के एक अंश के लिए नीलामी विधि अपनाई है। जिन राज्यों ने नीलामी विधि अपनाई उनके अनुभव से यह संकेत मिलता है कि कुछ राज्य प्रतियोगी दरों पर ऋण ले सकते थे परंतु अन्य को ऊंची ब्याज दर देनी पड़ती थी। निर्गमों के आकार एवं समय के अलावा राज्य की वित्तीय स्थिति की सुदृढ़ता एवं संभावनाएं, बजटेतर ऋण एवं आकस्मिक देयताओं जैसे प्रतिभूतियों सहित उसकी समग्र ऋणग्रस्तता, ऋणग्रस्तता को नियंत्रित करने के प्रयास तथा वचन प्रतिबद्धता का इतिहास आदि ब्याज दर फैलाव को निर्धारित करने वाले संभावित कारक थे। ऐसे कुछ राज्यों, जिन्होंने परिवर्तनीय नीलामी विधि का विकल्प नहीं चुना, के बारे में रिज़र्व बैंक ''परंपरागत सरणी पध्दति'' का प्रयोग करता रहा क्योंकि उसे उन राज्यों के लिए अच्छा एवं कम लागत वाला समझा गया। परंतु चूंकि बैंक और वित्तीय संस्थाएं निवेश संबंधी निर्णयों के लिए राज्य सरकारों के पिछले वित्तीय आचरण, विशेषतः अपने प्रत्याभूत बांडों की चुकौती तथा राज्य सरकार की प्रतिभूतियों की चलनिधि पर विचार करते हैं इसलिए रिज़र्व बैंक ने अंब्रेला ''समग्र उधार राशि जुटाने'' (अंब्रेला) की विधि शुरू की, जिसमें पूर्व घोषित ब्याज दर पूर्वघोषित राशि का ऋण राज्यों के अलग ऋण राशि की घोषणा किए बिना ऋण उगाही की जाती है। राज्य सरकारों की ऋण शोधन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सन् 1999-2000 में 'एकीकृत ऋण शोधन' की स्थापना की गई जिसमें

[23] सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के विकास क्रम पर अध्याय VI में चर्चा की गई है।
[24] नीलामी पद्धति में राजे को स्वविवेक से नीलामी के माध्यम से उन्हें आबंटित एमपीबी के 5-35 प्रतिशत तक राशि जुटाने की अनुमति दी गई है।

प्रत्येक राज्य सरकार अपनी शेष ऋण राशि के 1 से 3 प्रतिशत रकम इस निधि में जमा करते थे तथा उस राशि का निवेश भारत सरकार की प्रतिभूतियों में किया जाता था।

7.118 राज्यों के बाज़ार उधार कार्यक्रम की सफल पूर्ति के लिए प्राथमिक व्यापारियों द्वारा ऋण हामीदारी की संभावनाएं, नमनीय पध्दति द्वारा राज्यों को सीमा से ज़्यादा ऋण लेने की अनुमति, राज्यस्तरीय संस्थाओं के राज्य सरकार द्वारा प्रत्याभूत बांडों की अधिशेष राशि का भुगतान न करने वाले राज्यों को बाज़ार पहुंच में कठिनाई, मौद्रिक नीति प्रबंध एवं ऋण प्रबंध को अलग-अलग करने तथा उसके द्वारा राज्य सरकारों के ऋण के लिए अलग से उधार जुंटाने की प्रणाली का विकास आदि मामलों का समाधान आवश्यक है।

लोक ऋण प्रबंध के लिए रिज़र्व बैंक का सलाहकार दृष्टिकोण

7.119 जैसा पहले संकेत दिया गया है, केंद्र सरकार के नकदी एवं ऋण प्रबंधक पर निगरानी दल केंद्र सरकार की नकदी एवं उधार स्थिति से संबंधित प्रासंगिक परिवर्तियों की आवधिक समीक्षा द्वारा सन 1997 से केंद्र सरकार के अर्थोपाय अग्रिम प्रणाली का प्रबंध कर रहा है। इसके अलावा परामर्श करते हुए सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के विकास हेतु जनवरी 1997 में एक सरकारी प्रतिभूति तकनीकी परामर्शदात्री समिति की स्थापना की गई। यह समिति सरकारी प्रतिभूति बाज़ार से संबंधित नीतिगत मामलों पर सलाह देती रही है।

7.120 सारांश में, मौद्रिक नीति की परिचालन प्रक्रिया में परिवर्तनों एवं वित्तीय बाज़ारों, संस्थाओं एवं लिखतों के विकास ने वर्षों से रिज़र्व बैंक की विकसित होती ऋण प्रबंध कार्यनीति को प्रभावित किया है। सन् 1990 के दशक से पहले रिज़र्व बैंक की निष्क्रिय ऋण प्रबंध नीति से वित्तीय क्षेत्र द्वारा बाज़ार से कम ब्याज दर पर अनिवार्य सरकारी प्रतिभूति धारण से वित्तीय दमन हुआ। परिणामस्वरूप, वित्तीय क्षेत्र द्वारा स्वैच्छिक निवेश के लिए रिज़र्व बैंक ने बाज़ार तंत्र के संस्थानीकरण द्वारा अधिक सक्रिय ऋण प्रबंध नीति अपनाई। इससे अप्रत्यक्ष उपकरणों, जैसे मुक्त बाज़ार परिचालन जिससे मौद्रिक नीति संप्रेषण के ब्याज दर माध्यम को सक्रिय किया गया, के माध्यम से मौद्रिक नीति परिचालन संभव हुआ। परंतु बाज़ार संमत ब्याज दर के अंगीकरण से सरकारी ऋण की लागत बढ़ी जिससे सरकारी ऋण की परिपक्वतावधि को कम करने की नीति अपनाने की आवश्यकता पड़ी। सन् 1990 के बाद के दशक के अंत में भुगतान के सकेंद्रीकरण से उत्पन्न ऋणशोधन दबाव के नरम ब्याज दर एवं न्यून मुद्रास्फीति आशा के कारण परिपक्वतावधि को लंबा करने की नीति अपनाई गई। रिज़र्व बैंक ने सरकारी प्रतिभूतियों की विक्रय-योग्यता को बढ़ाने एवं मूल्य खोज की प्रक्रिया को सुधारने के लिए मूल्य आधारित नीलामी द्वारा महत्वपूर्ण प्रतिभूतियों के पुनर्निर्गम द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गम का एकीकरण प्रारंभ किया। अर्थव्यवस्था के उदारीकरण तथा ज़्यादा सक्रिय ऋण प्रबंध नीति के कारण मौद्रिक नीति की परिचालन प्रक्रिया में क्रमिक बदलाव लाकर सन् 1990 केबाद के दशक के अंत में एकाधिक संकेतक दृष्टिकोण अपनाया गया जिसमें नीति परिदृश्य के निर्माण के लिए राजकोषीय संकेतकों सहित उच्च बारंबारता वाले संकेतकों में मात्रात्मक एवं दरात्मक परिवर्तियों की घटबढ़ पर निगरानी रखी जाती थी। इस संदर्भ मं मुद्रा एवं ऋण प्रबंध मामलों में सरकार एवं रिज़र्व बैंक के बीच तकनीकी समन्वय के लिए केंद्र सरकार की नकदी एवं ऋण प्रबंध की निगरानी के लिए एक दल के रूप में एक तंत्र अप्रैल 1997 में स्थापित किया गया। बाज़ार भावना के स्थिरीकरण के लिए रिज़र्व बैंक ने सन् 2002-03 से सरकारी प्रतिभूतियों की नीलामी की पूर्वघोषणा के संकेतक कैलेंडर के प्रकाशन की प्रणाली शुरू की। परंतु सरकारी ऋण की नीलामी से पहले रिज़र्व बैंक बाज़ार की स्थिति का जायज़ा लेता है। राजकोषीय सुदृढ़ीकरण से उत्पन्न सहायक पर्यावरण से रिज़र्व बैंक की सार्वजनिक ऋण प्रबंध भूमिका को और बल मिला है।

V. राजकोषीय विधि निर्माण मुद्रा एवं ऋण प्रबंध (2003-2005)

नियम आधारित राजकोषीय समेकन का परिचालन

7.121 राजकोषीय स्थिति में गिरावट तथा सरकारी प्रशासन के बढ़ते अधिव्यय अपबचत के कारण, विशेषतः भारत के जी-20 दल का सदस्य बनने के बाद, भारतीय नियमों एवं व्यवहारों को अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप बनाने की आवश्यकता के मद्देनज़र केंद्र एवं राज्य दोनों स्तरों पर लोकवित्त की स्थिति सुधारने पर ध्यान देने की अनिवार्यता बढ़ी (रेड्डी 2000)। तदनुसार सरकार ने राजकोषीय प्रणाली के विभिन्न पहलुओं की समीक्षा एवं राजकोषीय जवाबदेही सुनिश्चित करने हेतु कानून का मसौदा सुझाने के लिए जनवरी 2000 में राजकोषीय जवाबदेही विधायी समिति स्थापित की (अध्यक्ष : ई.ए.एस.शर्मा)। सन् 2000-01 के संघीय बजट में, राजकोष घाटे के मध्यावधि प्रबंध के परिप्रेक्ष्य में राजकोषीय जवाबदेही अधिनियम में निहित एक संस्थागत तंत्र की आवश्यकता को रेखांकित किया गया। रिज़र्व बैंक ने तकनीकी सामग्री उपलब्ध कर राजकोष उत्तरदायित्व विधेयक की तैयारी में सहायता की। दिसंबर 2000 में राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध

(राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध) विधेयक की प्रस्तावना, जिसमें राजकोषीय घाटे के मध्यावधि प्रबंध की शुरुआत के लिए विधि एवं संस्थागत संरचना का प्रस्ताव था से नियम आधारित राजकोषीय समेकन की नीयत झलकती है। अगस्त 2003 में पारित राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध अधिनियम से 2003-04 में राजकोषीय समेकन की शुरुआत हुई। राजस्व वृद्धि एवं खर्च घटाने के उपायों के संयोग तथा विनिवेश प्रक्रिया से अधिक आय से सुधार प्रक्रिया की शुरुआत के बाद पहली बार केंद्रीय सरकार के घाटे के सारे महत्वपूर्ण संकेतक पहली बार बजट अनुमानों से कम हुए। जुलाई 2004 में राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध अधिनियम एवं नियमों की अधिसूचना से राजकोषीय विवेकसंमतता के प्रति निष्ठा का और प्रदर्शन हुआ, जिससे सन् 2004-05 से संघीय बजट को और युक्तियुक्त बनाया गया (बाक्स VII.6)।

7.122 राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध अधिनियम के मार्गदर्शन में सन् 2004-05 वित्तीय वर्ष के दौरान राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध अधिनियम / नियमों में निर्धारित न्यूनतम स्तर से ज़्यादा तेजी से गिरावट आने से केंद्र की वित्तीय स्थिति में सुधार हुआ। उस वर्ष में देयताओं में हुई वृद्धि राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध द्वारा निर्धारित सीमा से कम थीं (सारणी 7.8)। केंद्र सरकार एवं राज्यों के चयनित प्रतिनिधियों के एक अंतरसंस्था कार्यदल (2005) को भी रिज़र्व बैंक ने राज्य सरकारों के लिए एक आदर्श राजकोषीय जवाबदेही विधि के निर्माण में तकनीकी सहायता दी।

बॉक्स VII.6
राजकोषीय जवाबदेही कानून बनाने की दिशा में प्रगति

केंद सरकार के उधार पर उच्चतम सीमा लगाने के लिए संवैधानिक प्रावधान (अनुच्छेद 292) किए जाने की आवश्यकता की शुरुआत काफी समय पहले 1957-58 में हुई थी जब बजट सुधार से संबंधित प्राक्कलन समिति द्वारा ऐसा प्रावधान करने का मत व्यक्त किया गया था। तथापि, सरकारी उधार को सीमित करने के संवैधानिक प्रावधान को कानून के रूप में लागू नहीं किया जा सका क्योंकि सरकार ने इसका विरोध करते हुए दावा किया है कि यह प्रावधान 'आज्ञात्मक' है न कि 'अनिवार्य' । इसके अलावा, सरकार का मत है कि बजट के संसदीय अनुमोदन का आशय उधार तथा घाटे के वित्तपोषण (बजट में स्पष्ट रूप से उल्लिखित) का अनुमोदन है तथा कानूनी सीमाएं अनिवार्य रूप से ऊंची एवं व्यापक होनी चाहिए जो वस्तुतः कोई पाबंदी नहीं लगाती है। रिज़र्व बैंक को सामान्यतया इससे कोई मतभेद नहीं है, यद्यपि 1964 में लोक लेखा समिति की 9वीं रिपोर्ट पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए रिज़र्व बैंक ने सरकार से आग्रह किया था कि वह सरकारी उधार पर खास तौर पर संसदीय प्रभुत्व के सिद्धांत को मान्यता देने के लिए 'सावधानीपूर्वक विचार' करे। प्राक्कलन समिति 1991-92 ने सरकारी उधार पर कानूनी बंदिश लगाने का मामला पुनः उठाया किंतु उसकी आवधिक समीक्षा किए जाने की सिफारिश की जिसका सरकार ने तीन आधारों पर विरोध किया। पहला, संवैधानिक सीमा में केवल बाजार उधार, खजाना बिल तथा बाह्य ऋण आते हैं न कि भारत के लोक लेखा के अंतर्गत लिए गए उधार। दूसरा, भारत की समेकित निधि और भारत के लोक लेखा के अंतर्गत नई देयताओं की जमानत पर सरकारी उधार का जीडीपी की तुलना में अनुपात के रूप में निर्धारण परिचालन की दृष्टि से संभाव्य नहीं है क्योंकि जीडीपी की स्थिति विलंब से उपलब्ध हो ती है। अंतिम, कोई भी सीमा जब निर्धारण से अधिक हो जाए तो उसे यथासमय नियमित किया जाना जरूरी होता है जो अनुदान पर किए गए अत्यधिक व्यय के मामले में संसदीय मतों की वर्तमान प्रणाली में कोई सुधार करने जैसा नहीं होगा। रिज़र्व बैंक ने भी अन्य देयताओं, अनुषंगी देयताओं तथा समग्र लोक क्षेत्र घाटा से संबंधित जानकारी को संसद के समक्ष अनिवार्य रूप से प्रकट करते हुए संवैधानिक सीमा के भीतर लोक ऋण पर सीमा निर्धारित करने का मामला उठाया था (भारिबैं 1997 क)।

राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंधन (एफआरबीएम) विधेयक दिसंबर 2000 में लाया गया था और उसमें कुछ संशोधन के बाद एफआरबीएम अधिनियम 2003 को 26 अगस्त, 2003 को पारित किया गया तथा एफआरबीएम नियमावली, 2004 सहित 5 जुलाई, 2004 को अधिसूचित किया गया। इस अधिनियम में कई पीढ़ियों की समानता की परस्पर भावनाएं निहित हैं और 31 मार्च 2008 तक (वित्त अधिनियम, 2004 द्वारा 31 मार्च 2009 तक अवधि बढ़ाई गई) राजकोषीय घाटे को कम करते हुए तथा राजस्व घाटे को समाप्त करते हुए दीर्घकालिक समष्टिगत आर्थिक स्थिरता का प्रावधान किया गया है। हालांकि ये घाटे, राष्ट्रीय सुरक्षा, राष्ट्रीय आपदा अथवा अन्य अपवादात्मक परिस्थितियों के आधार पर लक्ष्य से अधिक हो सकते हैं। इस अधिनियम में प्राप्तियों तथा भुगतान में अस्थाई असंतुलन को पूरा करने के लिए अर्थोपाय अग्रिम लेना अथवा अपवादात्मक परिस्थितियों को छोडकर केंद्र द्वारा रिज़र्व बैंक से वर्ष 2006-07 से सीधे उधार लेने पर पाबंदी है। तथापि, रिज़र्व बैंक द्वितीयक बाज़ार में प्रतिभूतियों का क्रय-विक्रय कर सकता है। अधिनियम में यह भी निर्दिष्ट किया गया है कि बजट अनुमान की तुलना में केंद्र सरकार के वित्त की स्थिति की तिमाही सूचना दी जाए। एफआरबीएम नियमावली, 2004 में 31 मार्च 2008 तक की अवधि में घाटे के प्रमुख संकेतकों में चरणबद्ध रूप से कमी करने के वार्षिक लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं तथा सरकारी गारंटियों एवं अतिरिक्त देयताओं पर उच्चतम सीमा तय कर दी गई है। एफआरबीएम नियमावली, 2004 के अनुसार संघ के 2004-05 तथा 2005 के बजट में समष्टिगत आर्थिक संरचना वक्तव्य, मध्य कालिक राजकोषीय नीतिगत वक्तव्य तथा राजकोषीय नीति प्रणाली वक्तव्य प्रस्तुत किए गए। राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंधन अधिनियम, 2003 के कार्यान्वयन से संबंधित केंद्र सरकार के कार्यदल (अध्यक्ष : विजय केलकर) ने राजकोषीय नीतियों के लिए मध्यावधि ढांचा तैयार किया है ताकि एफआरबीएम उद्देश्यों को 2008-09 तक प्राप्त किया जा सके।

सारणी 7.8 : केंद्र सरकार के लिए एफआरबीएम नियमावली

पैरामीटर	राजकोषीय जबाबदेही और बजट प्रबंधन (एफआरबीएम) हेतु प्रावधान	2004-05
सकल राजकोषीय घाटा (जीएफडी)	वर्ष 2004-2005 से शुरू करके, प्रत्येक वर्ष सघउ के 0.3 प्रतिशत या उससे अधिक कम करना, ताकि यह मार्च 2008 के अंत तक सघउ के 3 प्रतिशत से अधिक न हों (बाद में इसे मार्च 2009 तक बढ़ा दिया गया है) ।	वर्ष 2003-2004 की तुलना में संशोधित अनुमान (सं.अ.) में सघउ के 0.3 प्रतिशत तक तथा 2003-2004 की तुलना में अनंतिम लेखे में 0.4 प्रतिशत की कमी की गई।
राजस्व घाटा (आरडी)	वर्ष 2004-2005 से शुरू करके, प्रत्येक वर्ष के अंत में सघउ के 0.5 प्रतिशत या उससे अधिक कम करना, ताकि 31 मार्च 2008 तक आरडी को समाप्त कर लिया जाए, जैसा कि एफआरबीएम अधिनियम में निर्धारित किया गया है) बाद में इसे मार्च 2009 के अंत तक बढ़ा दिया गया है।	वर्ष 2003-2004 की तुलना में संशोधित अनुमान (सं.अ.) में सघउ के 0.9 प्रतिशत तक तथा 2003-2004 की तुलना में अनंतिम लेखे में 1.0 प्रतिशत की कमी की गई।
संपार्श्विक देयताएं	केंद्र सरकार वर्ष 2004-2005 के प्रारंभ से किसी भी वित्तीय वर्ष में ऐसी संचित राशि को गारंटी उपलब्ध नहीं कराएगा जो सघउ के 0.5 प्रतिशत से अधिक हो।	संघीय बजट 2005-2006 में गारंटियों के संबंध में प्रस्तुत की गई जानकारी राजकोषीय वर्ष 2003-2004 से संबोधत थी।
अतिरिक्त देयताएं	वर्ष 2004-2005 में अतिरिक्त देयताएं (वर्तमान विनिमय दर पर बाह्य ऋण सहित) सघउ के 9 प्रतिशत से अधिक न हों बाद के प्रत्येक वर्ष में सघउ के 9 प्रतिशत की सीमा को क्रमिक रूप से सघउ के कम से कम एक प्रतिशतता अंक कम किया जाएगा।	प्रारंभिक अनुमान में सघउ का 7.8 प्रतिशत

नियम आधारित राजकोषीय समेकन की संरचना में मौद्रिक नीति

7.123 भले ही मौद्रिक नीति को राजकोषीय प्रधानता से छुटकारा मिला, परंतु उसे भारी पूंजी प्रवाह से उत्पन्न चलनिधि अधिकता से उत्पन्न चुनौती का समाना करना पड़ा। रिज़र्व बैंक ने चलनिधि के अवशोषण, बाह्य ऋण की समयपूर्व चुकौती एवं विदेशी मुद्रा लेन-देन को उदार बनाने की नीतियों से इस चुनौती का सामना किया। इसके अलावा खज़ाना बिलों के अधिक निर्गम एवं ऋण अंतरण योजना के परिचालन से सन् 2003 से केंद्र सरकार के खाते में काफी बड़ी राशि में नकदी शेष एक निरंतर लक्षण बना तथा उसके द्वारा अर्थोपाय ऋण का उपयोग लगभग खत्म हो गया (चार्ट VII.1)।

चार्ट VII.1 : केंद्र का दैनिक औसत नकदी शेष

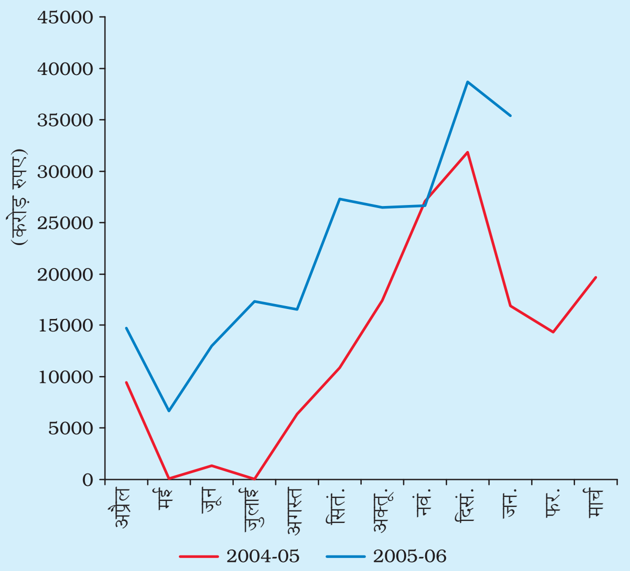

7.124 रिज़र्व बैंक एवं केंद्र सरकार के बीच सन् 1997 में हुए अनुपूरक अनुबंध के अनुसार केंद्र सरकार सन् 1997-98 से अपने अधिक नकदी शेष को रिज़र्व बैंक से अपनी प्रतिभूतियों की खरीद में निवेश करती है। रिज़र्व बैंक ने केंद्र सरकार की 4.6 प्रतिशत विशेष अहस्तांतरणीय प्रतिभूतियों के सारे स्टाक को 2003-04 वर्ष तक बिक्री योग्य प्रतिभूतियों में परिवर्तित करने की नीति चलाई ताकि मुक्त बाज़ार परिचालन के लिए रिज़र्व बैंक के खाते में प्रतिभूतियों की पर्याप्त मात्रा सुनिश्चित की जा सके। परंतु पूंजी अंतर्प्रवाह में भारी वृद्धि एवं उसके मौद्रिक प्रभाव के अवशोषण के मुक्त बाज़ार परिचालन से रिज़र्व बैंक का सरकारी प्रतिभूति भण्डार में भारी कमी आई। इससे पूंजी अंतर्वाह से उत्पन्न अल्पावधि चलनिधि के प्रबंध के लिए चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) के परिचालन की आवश्यकता पड़ी। चलनिधि समायोजन सुविधा के परिचालन के पश्चात् सन् 2003-04 में रिज़र्व बैंक की मुक्त बाज़ार बिक्री और गिल्ट पोर्टफोलियों में वृद्धि का अनुपात औसत 90 प्रतिशत से घटकर लगभग 50 प्रतिशत रह गया (भा.रि.बैंक 2004)।

7.125 निरंतर पूंजी प्रवाह एवं रिज़र्व बैंक के खाते में उपलब्ध प्रतिभूतियों में क्षरण के कारण रिज़र्व बैंक ने अवशोषण के दूसरे उपकरणों की जांच की। इस संदर्भ में रिज़र्व बैंक का अवशोषण के उपकरणों संबंधी

सारणी 7.9 : रिज़र्व बैंक में केंद्र सरकार की प्रतिभूतियों का स्टॉक

(करोड रुपए)

राजकोषीय वर्ष	बकाया दिनांकित प्रतिभूतियां	तदर्थ खजाना बिलों के बदले में जारी विशेष प्रतिभूतियों की बकाया रकम	कुल बकाया
1	2	3	4
1996-97	6,666	1,21,818	1,28,484
1997-98	31,977	1,01,818	1,33,795
1998-99	42,212	1,01,818	1,44,030
1999-2000	35,190	1,01,818	1,37,008
2000-01	41,732	1,01,818	1,43,550
2001-02	40,927	1,01,818	1,42,745
2002-03	55,438	61,818	1,17,256
2003-04	77,397	0	77,397
2004-05	80,770	0	80,770

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक वार्षिक रिपोर्ट 2004-05

चार्ट VII.2 : एलएएफ बनाम एसएसएस परिचालन

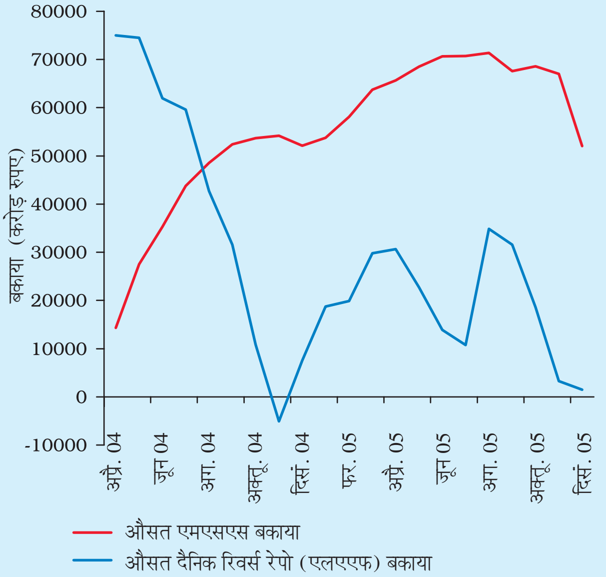

कार्यदल (अध्यक्षा : उषा थोरात) ने सन् 1997 के अनुबंध की समीक्षा करने का प्रस्ताव दिया ताकि रिज़र्व बैंक में सरकार के खाते में अधिशेष का स्वचालित निवेश न किया जाए तथा वह ब्याज रहित जमाराशि के रूप में रिज़र्व बैंक के पास रहे ताकि और अवशोषण के लिए रिज़र्व बैंक के पास प्रतिभूतियां उपलब्ध रहें (भा.रि.बैंक 2003ग)। तदनुसार 8 अप्रैल 2004 से केंद्र सरकार के अधिशेष का स्वतः निवेश अस्थायी तौर पर बंद कर दिया गया। तत्पश्चात् बाज़ार स्थिरीकरण योजना की शुरुआत से केंद्र के अतिरिक्त नकदी शेष का उसकी अपनी प्रतिभूतियों में निवेश की रीति जून 2004 में 10,000 करोड़ रुपए की सीमा में आंशिक रूप से पुनः शुरू की गई (यह सीमा अक्तूबर 2004 में बढ़ाकर 20,000 कर दी गई)।

बाज़ार स्थिरीकरण योजना

7.126 स्थिरीकरण के उपकरण संबंधी कार्यदल की सिफ़ारिशों के अनुसरण में केंद्रीय सरकार एवं रिज़र्व बैंक द्वारा हस्ताक्षरित ज्ञापन के अधीन 1 अप्रैल 2004 को बाज़ार स्थिरीकरण योजना की शुरुआत की गई। इस योजना के अंतर्गत रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी आस्तियों में वृद्धि से उत्पन्न चलनिधि का अवशोषण बाजार स्थिरीकरण योजना के अधीन केंद्रीय सरकार के खज़ाना बिलों एवं दिनांकित प्रतिभूतियों के निर्गम द्वारा किया जाता है। बाज़ार स्थिरीकरण योजना के अंतर्गत प्राप्त धनराशि को केंद्र सरकार के एक अलग नकदी खाते में रखा जाता है जिस धन का प्रयोग बाजार स्थिरीकरण योजना के अधीन निर्गमित प्रतिभूतियों के भुगतान के लिए किया जाता है। रिज़र्व बैंक द्वारा रखे जाने वाला एवं परिचालित इस प्रकार रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी आस्तियों के वृद्धि के बराबर बाज़ार स्थिरीकरण योजना के अधीन सरकारी शेष में वृद्धि हो जाती थी जिससे रिज़र्व बैंक के सरकार को निवल ऋण में कमी होती थी तथा रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी आस्तियों में वृद्धि के मौद्रिक प्रभाव का निराकरण हो जाता था। बाज़ार स्थिरीकरण योजना का परिचालन चलनिधि अवशोषण का महत्वपूर्ण उपकरण बना तथा इससे चलनिधि समायोजन सुविधा योजना के भार में प्रभाव की कमी आई (चार्ट VII.2)।

न्यून मौद्रीकरण के समय सार्वजनिक ऋण का प्रबंध

7.127 राजकोषीय अनुशासन, भारी पूंजी प्रवाह, सुखदायी चलनिधि स्थिति एवं स्थिर मुद्रास्फीति संभावना के युग से रिज़र्व बैंक के सार्वजनिक ऋण प्रबंध से सुविधा हुई। सन् 2003-04 एवं 2004-05 में केंद्र सरकार की कम बाजार उधारी से केंद्र सरकार के ऋण प्रबंध में विशेष मज़बूती आई। इन दो वर्षों में राष्ट्रीय लघु बचत निधि (एनएसएसएफ) द्वारा ऋणान्तरण योजना[25] की राशि के निवेश से केंद्र सरकार के राजकोषीय

[25] डीएसएस के अंतर्गत, जो 2002-03 से 2004-05 तक लागू था, राज्य सरकारों ने केंद्र सरकार को ऋण की ऊंची लागत की अदायगी की है, परिणामस्वरूप, उसने ऐसे आगमों का उपयोग एनएसएसएफ को जारी प्रतिभूतियों के मोचन में कर लिया। एनएसएसएफ ने उसी को और कम ब्याज दर पर केंद्र सरकार की विशेष प्रतिभूतियों में पुनः निवेश कर दिया।

घाटे के वित्तपोषण के कारण बाज़ार उधार पर दबाव घटा। इसके अतिरिक्त केंद्र के पास नकदी की अधिकता से 2004-05 में बाज़ार ऋण कार्यक्रम पर दबाव भी कम हुआ। एक उल्लेखनीय बात यह थी कि केंद्र के अच्छे नकदी शेष के कारण अर्थोपाय अग्रिम ऋण सुविधा का प्रयोग लगभग बंद कर दिया गया। सहायक आर्थिक परिस्थितियों में बेहतर राजकोषीय अनुशासन से रिज़र्व के समय के साथ ऋण की लागत कम करने तथा ऋण की परिपक्वता अवधि बढ़ाने के लक्ष्य युगल की प्राप्ति में बहुत मदद मिली। सन् 2003-04 तक केंद्र एवं राज्यों के बाज़ार ऋण की भारित औसत लागत में लगातार कमी आई तथा भारित औसत परिपक्वता अवधि में वृद्धि हुई। 2004-05 में अंतरराष्ट्रीय तेल कीमतों में भारी वृद्धि, अंतरराष्ट्रीय ब्याज चक्र में उच्चावर्तन एवं घरेलू ब्याज दर में वृद्धि से ब्याज दरों में उछाल के बावजूद भारित औसत लागत में मामूली वृद्धि एवं भारित औसत परिपक्वतावधि में मामूली कमी से सरकारी ऋण का सफल प्रबंध किया गया। सन् 1990 के दशक अंत से सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के विकास के लिए गए उपायों एवं सुधारों से बैंकों, वित्तीय संस्थाओं एवं बीमा कंपनियों के सरकारी प्रतिभूतियों में वर्धमान निवेश में सहायक परिस्थितियां बनी रही।

सार्वजनिक ऋण की पुनर्रचना

7.128 सार्वजनिक ऋण के प्रबंध में उसका आकार एवं ब्याज भुगतान दबाव सबसे बड़े जोखिम हैं। अपुनरक्षणीय ऋण-सकल घरेलू उत्पाद अनुपात एवं वर्धमान ब्याज भुगतान भार से कमी लाना ही सार्वजनिक ऋण की पुनर्रचना द्वारा राजकोषीय समायोजन के लक्ष्य हैं। सरकारी ऋण के भुगतान क्षमता से बड़ा होने की स्थिति के निवारण के लिए ऋण के आकार में प्रत्यक्ष कमी लाना आवश्यक है। ऋण की पुनर्रचना प्राय ऋणान्तरण, ऋण खरीद, पुन: अनुसूचित क्रिया, ऋण राहत एवं रियायती पुनर्वित्त के द्वारा किया जाता है। सन् 1990 के दशक के मध्य से भारतीय अर्थव्यवस्था में सार्वजनिक ऋण में भारी वृद्धि से ब्याज भुगतान का भार बहुत बढ़ गया। इस भार को कम करने के लिए सरकारी प्रतिभूतियों के बाज़ार संमत प्राथमिक निर्गम, भिन्न लिखतों की शरुआत, नए ऋणों की परिपक्वता अवधि को वर्तमान ऋणों के शोधन-विन्यास के अनुकूल बनाने सहित अनेक उपाय पिछले वर्षों में किए गए। सन् 2003-04 के संघ बजट में की गई परिकल्पना के अनुसार राजकोषीय स्थिति में सुधार लाने हेतु सार्वजनिक की पुनर्रचना के लिए सक्रिय प्रयास किए गए। तदनुसार केंद्र सरकार ने 2002-03 एवं 2003-04 में विश्व बैंक एवं एशियाई विकास बैंक की अधिक लागत वाले विदेशी ऋणों का समयपूर्व भुगतान किया। रिज़र्व बैंक ने भी परस्पर स्वैच्छिक वार्तालाप के बाद 19 उच्च ब्याज दर पर सापेक्षतया कुद्रव प्रतिभूतियों की नीलामी द्वारा पुनर्खरीद की तथा वर्तमान चार द्रव प्रतिभूतियों को सममूल्य पर पुनर्निगम किया। इसके अतिरिक्त, डीएसएस के माध्यम से राज्यों के ऋण की पुनर्रचना एवं एकीकरण की नई योजना शुरू की गई जिसके अंतर्गत राज्यों ने 2004-05 तक तीन वर्षों में तत्कालीन ब्याज दर पर ताजा ब्याज ऋण उगाही एवं लघु बचत राशि से अपने उच्च ब्याज दर वाले ऋणों का केंद्र को समय पूर्व भुगतान किया।

राज्यों के ऋण प्रबंधक के रूप में रिज़र्व बैंक द्वारा हाल ही में किए गए उपाय

7.129 हाल ही के वर्षों में एक उललेखनीय बात यह रही कि राज्यों ने अर्थोपाय ऋण एवं ओवरड्राफ़्ट सुविधा का कम लाभ उठाया जिसके लिए, अन्य के अलावा, सन 1990 के दशक के अंत से उच्चतर राजस्व संग्रहण एवं लघु बचत के रूप में संसाधनों का सतत प्रवाह सहित राजकोषीय सुधारों की शृंखला ज़िम्मेदार है। विशिष्ट अनुरोध पर नीलामी विधि द्वारा आधे बाज़ार ऋण उठाव की अनुमति देकर रिज़र्व बैंक ने राज्यों को अधिक नम्यता उपलब्ध कराई।

7.130 रिज़र्व बैंक सन् 1997 से औपचारिक तौर पर राज्यों के वित्त सचिवों का संमेलन आयोजित करता रहा है जिसमें राज्यों के वित्तीय मामलों पर रिज़र्व बैंक, केंद्र सरकार एवं राज्यों की आय सहमति से दृष्टिकोण बनाया जाता है। इस संदर्भ में रिज़र्व बैंक राज्यों को उनके द्वारा राज्यस्तरीय संस्थाओं के लिए दी गई गारंटियों के भारी परिमाण के प्रति संवेदनशील बनाने का प्रयास करता रहा है क्यों इन गारंटियों के न्यागमन से उनके ऋण का भार बहुत बढ़ेगा तथा उनकी समग्र वित्तीय स्थिरता पर बुरा असर पड़ेगा राज्य सरकार की प्रतिभूतियों पर तकनीकी दल की रिपोर्ट की सिफारिशों के अनुसार अब तक नौ राज्यों ने अपने गारंटी निर्गम पर सांविधिक / प्रशासनिक सीमा निश्चित की है (भा.रि.बैंक 1999 एवं 2005डी)। निवेशकों की ओर से आवधिक अंतराल पर राज्य सरकार द्वारा प्रत्याभूत ऋणों एवं बांडों की सूचना एकत्र करने के लिए रिज़र्व बैंक ने सन् 2004 में राज्य सरकारों द्वारा प्रत्याभूत ऋण एवं बांडों की सूचना के बारे में स्थायी समिति का गठन किया। रिज़र्व बैंक ने राज्य सरकारों की पेंशन देयताओं के अध्ययन के लिए एक अध्ययन दल भी बनाया (अध्यक्ष : बी.के.भट्टाचार्य), जिसने अपनी रिपोर्ट में राज्यों की पेंशन समस्या के

समाधान के लिए वैकल्पिक दीर्घावधि संरचनात्मक दल सुझाए (भा.रि.बैंक 2003ए)। राज्यों की विभिन्न प्रकार की ऋण देयताओं के आंकड़े संकलित करने का तरीका सुझाने के लिए रिज़र्व बैंक ने राज्य सरकारों की देयताओं के आंकड़ों के संकलन की विधि पर कार्यदल भी स्थापित किया।

7.131 सारांश में, 2003-04 में सरकार ने 1990 के दशक के अंत में आए राजकोषीय गिरावट के संदर्भ में नए निश्चय का परिचय दिया। रिज़र्व बैंक ने राजकोषीय प्रधानता के दुष्प्रभावों के प्रति सरकार को संवेदनशील बनाया तथा ऋण की सांविधिक सीमा निश्चित करने की आवश्यकता पर बल दिया। अतः सरकार ने नियमाधारित राजकोषीय सुधार प्रक्रिया अपनाने का निश्चय किया तथा अच्छी आर्थिक स्थिति से इसमें सहायता मिली। इस काल में सरकार ने बेहतर नकदी प्रबंध किया तथा रिज़र्व बैंक से अर्थोपाय अग्रिम सुविधा का कम उपयोग किया। इन कारकों ने ऋण एवं मौद्रिक प्रबंध ने मदद की तथा इससे अंतरराष्ट्रीय कच्चे तेल मूल्यों में वृद्धि के बावजूद ब्याज दरों को स्थिर रखने में मदद मिली। राज्य सरकारों के साथ संबधों में रिजर्व बैंक ने वित्तीय क्षेत्र सुधारों की पृष्ठभूमि में विचार विमर्श द्वारा वित्तीय स्थिति को सुधारने का प्रयास किया। इस संदर्भ में रिजर्व बैंक द्वारा आयोजित राज्य वित्त सचिव संमेलन से राज्य सरकार प्रतिभूति सीमा, समेकित डूब खाता योजना एवं बाज़ार उधार दृष्टिकोण सहित सभी महत्वपूर्ण मामलों पर रिज़र्व बैंक, केंद्र सरकार एवं राज्यों के बीच विचारों के आदान प्रदान का पंच उपलब्ध हुआ है।

VI. राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध अधिनियम (2005-09) एवं मुद्रा-राजकोष समन्वय

7.132 राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध अधिनियम 2003 के प्रावधानों के अनुसार सन् 2005-06 से लागू सहकारी राजकोषीय संघ व्यवस्था तथा 2006-07 से रिजर्व बैंक द्वारा प्राथमिक सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में सहभागिता की समाप्ति के परिदृश्य में मुद्रा-राजकोष समन्वय तथा ऋण प्रबंध का नया युग शुरू हुआ है। राज्य स्तर पर भी बारहवें वित्त आयोग (अध्यक्ष : सी. रंगराजन, 2005) द्वारा दी गई ऋण राहत से आंशिक प्रेरणा लेकर 16 राज्यों ने भी राजकोषी उत्तरदायित्व कानून पारित किए है। इन उपायों का उद्देश्य सन् 2008-09 तक राज्यों के बजट घाटे को खत्म करना तथा राजकोषीय घाटे को कम करके राज्यों के ऋण में कमी लाना है। बारहवें वित्त आयोग (टीएफसी) की सिफारिशों को अमल में लाकर केंद्र सरकार ने राज्यों की योजना के लिए केंद्रीय सहायता अंश ही आबंटित करता है तथा करता रहेगा तथा सन 2005-06 से राज्यों को ऋण उठाव के लिए भी सीधे बाज़ार में जाने की अनुमति देगा। वित्तीय रूप से कमजोर राज्यों के अलावा केंद्र द्वारा राज्यों के ऋण उठाव में उत्तरोत्तर घटती मध्यस्थता से बाज़ार ऋण उठाव में रिज़र्व बैंक को ज़्यादा ज़िम्मेदारी उठानी पडेंगी। रिज़र्व बैंक केंद्र एवं राज्य सरकारों से सलाह मशविरा करके सुचारु संक्रमण में मदद करेगा।

7.133 अप्रैल 2006 से प्राथमिक बाज़ार से निष्कासन के कारण रिज़र्व बैंक सरकारी ऋणों के अंतिम हामीदार की भूमिका नहीं निभा सकेगा तथा न ही आवश्यकतानुसार सरकार को वित्त उपलब्ध करवा सकेगा [26]। इससे ऋण प्रबंध लक्ष्यों की प्राप्ति एवं सब स्थितियों से सरकार बाज़ार को अस्थिर किए बगैर ऋण लेने से सक्ष्यम बनी रहे यह सुनिश्चित करने के लिए एक वैकल्पिक संस्थागत प्रणाली की स्थापना की आवश्यकता पड़ेगी। चूंकि रिज़र्व बैंक द्वितीयक बाज़ार में हस्तक्षेप करता रहेगा अतः मुक्त बाज़ार परिचालन मुद्रा एवं ऋण प्रबंध का एक महत्वपूर्ण उपकरण बनेगा जिससे बाज़ार में आए परिवर्तनों के अनुरुप प्रक्रियाओं एवं तकनीकी आधारभूत ढांचे को पुनःअभिमुख करने की आवश्यकता पड़ेगी।

नई व्यवस्था में ऋण प्रबंध रणनीति

7.134 अप्रैल 1, 2006 से सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक बाज़ार से रिज़र्व बैंक के हटाव का चरण प्रभावी बनेगा। सुधारों की शुरुआत के समय से ही रिज़र्व बैंक इसके लिए तैयारी कर रहा है। ऐसी स्थिति पैदा करना कि जहां अनाबद्ध निवेशक द्वितीयक बाज़ार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएट यह सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के विकास के लिए रिजर्व बैंक की रणनीति का अनिवार्य हिस्सा रहा जिससे प्राथमिक व्यापारी सभी नीलामी निर्गमों के हामीदार बन सकें तथा अंतिम निवेशक को ये प्रतिभूतियां उपलब्ध करवा सकें। एक सुविकसित सरकारी प्रतिभूति बाज़ार रिज़र्व बैंक को प्राथमिक निर्गम में निवेश करने से बचने में सहायक होगा तथा वह मुक्त बाज़ार

[26] 1990 के दशक के प्रारंभ में यह पाया गया था कि धीरे-धीरे एक ऐसी प्रणाली का विकास होगा जिसमें प्राथमिक व्यापारियों की सभागिता बढ़ेगी और अंततः एक ऐसी स्थिति पैदा होगी कि प्राथमिक व्यापारियों को संपूर्ण निर्गम लेना पड़ेगा (भारिबैं, 1993)

परिचालन द्वारा सरकारी प्रतिभूतियों की खरीद फ़रोख्त करके चलनिधि प्रबंध कर सकेगा। राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध व्यवस्था के अधीन अप्रैल 2006 से ऋण प्रबंध प्रणाली में अपेक्षित परिवर्तनों को पहचानते हुए रिज़र्व बैंक के केंद्रीय प्रतिभूतियों पर आंतरिक तकनीकी दल ने इस बाज़ार के विकास की समीक्षा की तथा मौद्रिक नीति, सार्वजनिक ऋण प्रबंध एवं सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के पर्यवेक्षी नियमन के परिचालन ढांचे के सुदृढ़ीकरण एवं पुनर्भिमुखीकरण, विशेषकर उभरती हुई आवश्यकताओं की पूति एवं रिज़र्व बैंक तथा बाज़ार सहभागियों को सुसज्जित करने की दृष्टि से मुक्त बाज़ार परिचालन ढांचे को मज़बूत करने, के लिए सुझाव दिए। चूंकि सिफारिशों के अनुसार ऋण निर्गम प्रणाली में मूलभूत परिवर्तन करना आवश्यक है अतः इन सिफारिशों की जांच की जा रही है तथा रिज़र्व बैंक सरकार के साथ विचार विमर्श करके एवं बाज़ार मत लेकर ही अंतिम निर्णय लेगा।

7.135 प्रगति की जांच करके उक्त तकनीकी दल ने यह उल्लेख किया है कि यद्यपि मुक्त बाज़ार परिचालन एवं सरकारी प्रतिभूति बाज़ार में संतोषजनक विकास हुआ है तथापि तीन कारणों से मुक्त बाज़ार परिचालन का पुनः अभिमुखीकरण आवश्यक है। प्रथम, भारत के वित्तीय बाज़ार की समेकन प्रक्रिया अभी भी पूरी नहीं हुई है क्योंकि वह अब भी परिपक्वतावधि, चलनिधि एवं जोखिम संबंधी विखंडन, विषम, समेकन एवं गहनता की कमी आदि समस्याओं वर्तमान से ग्रस्त है। सरकारी प्रतिभूतियों की परिपक्वतावधि में भी समेकन अपूर्ण पाया गया जिसका उदाहरण अधिशेष नकदी स्थितियों में भी आय वक्र की विकृति या उलटपने में देखा जा सकता है। दूसरे, यद्यपि ऋण प्रबंध लगातार परिपक्वतावधि को दीर्घ करता रहा है परंतु कुछ चलनिधि कुछ परिपक्तावधियों तक ही सीमित रही। तृतीय, बैंकिंग विनियमन अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन, जिससे रिज़र्व बैंक को निम्न सांविधि चलनिधि अनुपात नियत करने की क्षमता मिल जाएगी, से उच्च ब्याज दर काल में खरीददारी से बचने की बैंकों की प्रवृति और गंभीर हो जाएगी। अतः दल ने यह सुझाव दिया कि यद्यपि मुक्त बाज़ार परिचालन का प्रयोग मुखतः सरकारी उधार एवं पूंजी प्रवाह से उत्पन्न है, तथापि इसका प्रयोग अप्रत्याशित स्वतंत्र नकदी घटबढ़ के लिए किया जाता रहेगा तथापि रिज़र्व बैंक स्थिति के अनुसार अत्यधिक अस्थिरता से निपटने, व्यवस्थित बाज़ार स्थितियों को प्रोत्साहित करने एवं सरकारी प्रतिभूतियों की चलनिधि में सुधार लाने के लिए द्वितीयक बाज़ार में सहभागिता का विकल्प अपने पास सुरक्षित रख सकता है।

7.136 उक्त दल ने सिफारिश की कि प्राथमिक बाज़ार से रिज़र्व बैंक के हटने से उत्पन्न स्थिति में न्यूनतम वचनबद्धता एवं नीलामी पर आधारित अतिरिक्त वचनबद्धता द्वारा शत प्रतिशत हामीदारी सुनिश्चित कर प्राथमिक व्यापारियों द्वारा ज़्यादा सक्रिय एवं गत्यात्मक भागीदारी के उपाय किए जाएं। इसके बदले में नीलामी उपरांत उत्पन्न किसी अस्थायी नकदी समस्या के समाधान के लिए रेपो के माध्यम से नीलामी में खरीदी प्रतिभूतियों को रिज़र्व बैंक में जमानत के रूप में रखकर अग्रिम देने की सुविधा की संभावना पर विचार किया जाना चाहिए। उक्त दल ने इस बात की सिफारिश की, कि प्राथमिक व्यापारियों द्वारा फ्रन्ट रनिंग के जोखिमों एवं निवेशकों द्वारा प्रतिभूतियों की खरीद की लागत में वृद्धि की आशंकाओं को दरकिनार करते हुए चयनित आधारपर प्राथमिक व्यापारियों को प्राथमिक नीलामी में भाग लेने का अनन्य अधिकार देने की ''नपी तुली नीति'' अपनाई जाए। उक्त दल ने उल्लेख किया कि प्राथमिक व्यापारियों को बाज़ार निर्माण के लिए प्रोत्साहित करने के साथ साथ, बदलते परिदृश्य में रिज़र्व बैंक नए लिखतों की शुरुआत, प्रतिभूतियों के पंजीकृत ब्याज एवं मूलधन की अलग-अलग खरीद बिक्री (STRIPS), अनेक छोटे - छोटे आकार की अंतरल प्रतिभूतियों के बदले कुछ तरल प्रतिभूतियों के विनिमय द्वारा सरकारी ऋण का समेकन, नीलामी प्रक्रिया की पारदर्शिता एवं नम्यता में सुधार, समुचित सुरक्षात्मक उपायों सहित मंदड़िया बिक्री की चरणबद्ध शुरुआत तथा बढ़ती ब्याज दर स्थिति में बाज़ार लेनदेन का परिमाण दुष्प्रभावित न हो इसलिए ''व्हेन इश्युड'' बिक्री का आरंभ, उपायों द्वारा बाज़ार का विकास करता रहे।

लोक ऋण एवं मौद्रिक प्रबंध को अलग-अलग करना : मुद्दे एवं विकल्प

7.137 लोक ऋण प्रबंध लागत एवं परिपक्वतावधि को अभीष्टतम करने, सरकार के लिए आवश्यक धन की उपलब्धता सुनिश्चित करने, तथा सरकारी प्रतिभूति के लिए दक्ष बाज़ार का विकास द्वारा सरकार के ऋण का प्रबंध करने के लिए एक रणनीति का निर्माण एवं कार्यान्वयन की प्रक्रिया है। दूसरी ओर मौद्रिक नीति मूल्य स्थिरीकरण के स्थूल लक्ष्य के अधीन मुद्रापूर्ति एवं ब्याज दरों के विनियमन द्वारा ऋण की लागत एवं उपलब्धता को नियंत्रित करने का माध्यम है। अतः जब मुद्रा प्राधिकारी एक ही समय सरकारी ऋण में कमी लाने तथा मूल्य स्थिरता निश्चित करने का प्रयास करती है तो ऋण प्रबंध एवं मुद्रा प्रबंध कार्यों में टकराव पैदा होता है। प्रायः मुद्रास्फीति दबावों के

उत्पन्न होने पर ब्याज दरों में वृद्धि द्वारा मौद्रिक नीति को कठोर बनाना पड़ता है जिससे लोक ऋण की लागत बढ़ती है। अतः यह माना जाता है कि वित्तीय सुप्रबंध के लिए इन दोनों कार्यों को अलग-अलग करना आवश्यक है (सुंदरराजन एवं अन्य, 1997)। इस अलगाव की पूर्वशर्त यह है कि सरकार केंद्रीय बैंक के निभाव के बिना बाज़ार संमत ब्याज दरों पर लोक ऋण द्वारा अपनी वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करे। तब मौद्रिक नीति मुद्रास्फीति नियंत्रण के अपने प्राथमिक उत्तरदायित्व पर अपना ध्यान केंद्रित कर सकेगी।

अलगाव के पक्ष में तर्क

7.138 विकसित अर्थव्यवस्थाओं में, जहां वित्तीय एवं सरकारी प्रतिभूति बाज़ार सुविकसित हैं, ऋण प्रबंध सरकार के राजकोषीय परिचालनों पर निर्भर करता है तथा मौद्रिक नीति का परिचालन स्वतंत्र रूप से किया जाता है। इससे यह सुनिश्चित करने में सहायता मिलती है कि ऋण प्रबंध एवं ब्याज संबंधी निर्णय स्वतंत्र रूप से लिए जा सके तथा बाज़ार परिचालन में हितों का टकराव टाला जाए। इन देशों में, नीति लक्ष्यों की प्राप्ति बाज़ार शक्तियों की क्रिया से की जाती है तथा वित्तीय बाज़ार दरों का प्रयोग नीति निर्माण में किया जाता है। इसके अलावा मौद्रिक राजकोषीय एवं ऋण प्रबंध नीतियों के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए अलग-अलग संस्थागत आधार है; जो क्रमशः केंद्रीय बैंक, राजकोषीय एवं ऋण प्रबंध प्राधिकारियों के लक्ष्यों एवं उपकरणों में अलगाव रखते हैं। आस्ट्रेलिया, ऐरे एवं यू.के. में ऐसा अलगाव पहले ही व्यवहार में है।

7.139 एक अलग ऋण कार्यालय की स्थापना से स्वतंत्र ऋण प्रबंध नीति का अस्तित्व सुनिश्चित नही होता। ऋण प्रबंध के लिए ठोस एवं संतुलित दृष्टिकोण विकसित करने के लिए ऋण कार्यालय के लिए स्पष्ट लक्ष्यों एवं संगठनात्मक भूमिकाओं का निर्धारण आवश्यक है जबकि मौद्रिक नीति एवं ऋण प्रबंध के अलगाव के लिए वित्तीय बाज़ारों की मुक्ति एवं विकास पूर्वशर्त है। परिणामस्वरूप ऋण प्रबंध संबंधित सभी निर्णय ऋण कार्यालय को सौंप दिए जाते हैं तथा नीतिगत लक्ष्यों में साम्यता के लिए समन्वय की औपचारिक व्यवस्था की जाती है।

अलगाव के विरुद्ध तर्क

7.140 उदीयमान बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में अविकसित वित्तीय बाजारों के कारण मुद्रा एवं ऋण प्रबंध कार्यों को पूरी तरह अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि ऋण परिचालन के लिए केंद्रीय बैंक के हस्तक्षेप की आवश्यकता पड़ सकती है तथा उनसे ब्याज दरों एवं घरेलू वित्त बाज़ारों पर असर पड़ता है। अतः अलगाव के लिए वित्तीय बाज़ार सुधारों को सही प्रकार से क्रमबद्ध करना आवश्यक है। अनेक उदीयमान बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में केंद्रीय बैंक ऋण प्रबंध का कार्य प्रमुखतः इसलिए करता है क्योंकि उसके पास प्रासंगिक सूचना की निगरानी के लिए आवश्यक विशेषज्ञता होती है तथा वह मौद्रिक नीति के परिचालन के भाग के रूप में बाज़ार चलनिधि का विनियमन कर सकता है।

7.141 वित्त बाज़ार सुधारों की प्रारंभिक अवस्था में ऋण लिखतों एवं प्राथमिक निर्गमों का प्रयोग प्रायः मौद्रिक नीति लक्ष्यों के लिए किया जाता है जिससे मुद्रा एवं राजकोष प्राधिकारियों के मध्य घनिष्ठतर दैनंदिन समन्वय की आवश्यकता पड़ती है। इस संदर्भ में वित्त बाज़ार विकास एवं सुसमन्वित मुद्रा एवं ऋण प्रबंध प्रक्रियाएं एक दूसरे की सबल बनाती हैं। बाज़ार आधारित लिखतों के पचलन से, जिसके लिए शुरू में केंद्रीय बैंक द्वारा लक्ष्यों एवं लिखतों में समन्वय की आवश्यकता पड़ती है - केंद्रीय बैंक को सक्रिय चलनिधि प्रबंध के अधिक अवसर प्राप्त होते हैं तथा संस्था विकास की उत्प्रेरणा मिलती है। जिससे बदले में मुद्रा एवं सरकारी प्रतिभूति बाज़ार की गहनता एवं दक्षता में वृद्धि से मुद्रा एवं लोक ऋण नीति के उपकरणों एवं समन्वय प्रक्रियाओं को मजबूत बनाने के अवसर पैदा होते हैं। इस संदर्भ में 'आबद्ध स्रोत' (सांविधिक चलनिधि की आवश्यकता द्वारा) से 'स्वैच्छिक स्रोत' (बाज़ार आधारित व्यवहार के प्रयोग से) को संक्रमणशील देशों में सहायक ऋण प्रबंध संस्थाओं के विकास की आवश्यकता है। ऋण एवं मुद्रा प्रबंध लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए इन भूमिकाओं को लोक ऋण प्रबंध की व्यापक संरचना का भाग बनाना महत्वपूर्ण है।

7.142 यद्यपि पिछले दो दशकों में मुद्रा एवं ऋण प्रबंध संस्थाओं के अलगाव पर सर्वसंमति बनती दिखाई दे रही है, परंतु उदीयमान बाज़ार अर्थव्यवस्थाओं में यह सदा व्यवहार्य नहीं होता। इन अर्थव्यवस्थाओं में, जहां ऋण प्रबंध में केंद्रीय बैंक की सक्रिय भूमिका है, वहीं लोक ऋण एवं मुद्रा प्रबंध भूमिकाओं के अलगाव के लिए उस भूमिका की प्रकृति, सामयिकता, एवं परिचालन की प्रकृति की स्पष्ट परिभाषा करना जरूरी है।

भारतीय मामला

7.143 भारत में, जहां लोकऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति के कार्य रिज़र्व बैंक को सौंपे गए है, ऋण प्रबंध एवं मुद्रा नीति के अलगाव

की चर्चा इसके लिए आवश्यक तीन शर्तों यथा - वित्त बाज़ारों का विकास, राजकोषीय घाटे में पर्याप्त कमी एवं आवश्यक विधायी परिवर्तनों के प्रति पर्याप्त प्रगति पर निर्भर करती है (भा.रि.बैंक, 2002ए)। भारतीय अर्थव्यवस्था में वित्तीय बाज़ारों, विशेषकर सरकारी प्रतिभूति बाज़ार, में काफी विकास हुआ है। इसके अलावा हाल के वर्षों में मुद्रा नीति में राजकोषीय प्रधानता से उत्पन्न बाध्यता में कमी आई है। नियमबद्ध राजकोष सुधार प्रक्रिया की शुरुआत, सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक बाज़ार से रिज़र्व बैंक का प्रस्तावित हटाव तथा सांविधिक न्यूनतम सांविधिक चलनिधि अनुपात में कमी की अनुमति देने वाले प्रस्तावित विधायी परिवर्तनों के कारण भारत में ऋण प्रबंध एवं मुद्रा नीति के अलगाव के अनुकूल परिस्थितियां पहले कभी नहीं थीं। इस संदर्भ में पूंजी खाता परिवर्तनीयता समिति (अध्यक्ष : एस.एस.तारापोर) ने ऋण प्रबंध एवं मुद्रा नीति के पृथक्करण की सिफारिश की (भा.रि.बैंक 1997बी)। मुद्रा एवं वित्तीय नीतियों में पारदर्शिता विषयक परामर्शदाता दल ने ऋण प्रबंध एवं मुद्रा नीति को आवश्यक शर्त माना परंतु राजकोषीय ज़िम्मेदारी का पर्याप्त अंश उसकी पर्याप्त शर्त मानी गई (भा.रि.बैंक, 2000) ।

7.144 मुद्रा एवं लोक ऋण प्रबंध नीतियों की टकराहट के केंद्र में यह तथ्य विद्यमान है कि सरकारी ऋण पर ब्याज लागत कम करने के लक्ष्य से ब्याज दर को कम करने के लिए दबाव पड़ता है परंतु मुद्रास्फीति में वृद्धि की आशंका से ब्याज दर को बढ़ाकर कठोर मुद्रा नीति अपनाने की आवश्यकता पड़ती है। यद्यपि सुधार पूर्व काल में मौद्रिक नीति निश्चेष्ट रूप से मौद्रीकरण के माध्यम से राजकोषीय नीति का निभाव करती थी परंतु सरकार रिज़र्व बैंक के साथ सक्रिय समन्वय सहित नियंत्रित मूल्यों एवं मौद्रिक प्रभाव के आरक्षित नकदी अनुपात में उत्तरोत्तर वृद्धि द्वारा अवशोषण से मुद्रास्फीति दबाव को नियंत्रण में रखा जाता था। सुधारोत्तर काल में यद्यपि राजकोषीय घाटे के मौद्रीकरण में कमी हुई है तथापि लोक ऋण में बेतहाशा वृद्धि हुई है तो भी रिज़र्व बैंक सक्रियता से लोक ऋण प्रबंध करा सका तथा ब्याज लागत में कमी ला सका क्योंकि सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के पर्याप्त विकास एवं सामान्यतः सुखद चलनिधि परिस्थितियों ने बैंकों को सांविधिक चलनिधि अनुपात के प्रावधान से ज़्यादा सरकारी प्रतिभूतियाँ खरीदने को प्रेरित किया। सन 1990 के दशक के मध्य से मुद्रा स्फीति दबाव में भारी कमी आई अतः रिज़र्व बैंक ने ब्याज दरों को तार्किक स्तर पर रखा जिससे इसके आर्थिक विकास के लक्ष्य के साथ सरकारी ब्याज लागत में कमी करने में सहायता मिली।

7.145 ऋण प्रबंध कार्य को मौद्रिक नीति से पृथक करने के पक्ष में दिया गया तर्क लागत लक्ष्य को मौद्रिक नीति का अनन्य एकल लक्ष्य मानकर बैंक के परिचालन में पारदर्शिता सुनिश्चित कर उसकी विश्वसनीयता बढ़ाने पर आधारित है। यद्यपि सिद्धांततः ऋण को मौद्रिक नीति से पृथक करने से मुद्रा नीति निर्माण की दक्षता बढ़ती है, परंतु इस चर्चा में भारतीय संदर्भ में ऋण-मुद्रा संबंधों के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं पर ध्यान देना जरूरी है।

7.146 प्रथम भारतीय संदर्भ में सरकार एवं रिज़र्व बैंक के संयुक्त नीति एवं प्रक्रिया संबंधी प्रयासों से लोक ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति निर्माण में पर्याप्त समन्वय सुनिश्चित किया गया है। जहां एक ओर राजकोषीय अनुशासन, घाटे का कम मौद्रीकरण एवं लोक ऋण प्रबंध के पुनः सक्रिय करण से 1990 केबाद के दशक के मध्य से मौद्रिक नीति परिचालन को पर्याप्त स्वायत्तता दी है वहीं सरकारी प्रतिभूति बाज़ार के दक्ष परिचालन सहित रिज़र्व बैंक द्वारा सक्रिय ऋण प्रबंध से मौद्रिक नीति के, विशेषकर अप्रत्यक्ष उपकरणों के माध्यम से, परिचालन में सुविधा हुई वास्तव में ऋण प्रबंधक के रूप में रिज़र्व बैंक के पास उपलब्ध सरकारी प्रतिभूतियों की सहायता से रिज़र्व बैंक पूंजी प्रवाह से उत्पन्न चलनिधि प्रभाव का अवशोषण करने में समर्थ हुआ।

7.147 नीति स्तर पर समन्वय के साथ-साथ प्रक्रिया के स्तर पर भी नियमित समन्वय का तंत्र स्थापित किया गया है जिसके माध्यम से रिज़र्व बैंक वार्षिक आधार पर दिसंबर/जनवरी में आगामी वर्ष में मौद्रिक नीति के संभावित मार्ग एवं आर्थिक विकास की वांछित दर तथा मुद्रास्फीति के सहनीय स्तर को ध्यान में रखकर मौद्रिक नीति लक्ष्यों के अनुरूप सरकारी ऋण का व्यवहार्य स्तर का संकेत देता है। बदले में तत्पश्चात बजट में घोषित सरकार का उधार कार्यक्रम रिज़र्व बैंक के वार्षिक नीति वक्तव्य में मौद्रिक नीति के रुझान के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है हाल के वर्षों में रिज़र्व बैंक के नीति कार्यों के दैनिक आधार पर मार्गदर्शन के लिए निवल चलनिधि के अनुमान हेतु विकसित 'अल्पावधि चलनिधि पूर्वानुमान प्रतिमान' के माध्यम से दैनंदिन आधार पर अधिक समन्वय की आवश्यकता की पहचान की गई है। सरकार के ऋण प्रबंधक की भूमिका में रिज़र्व बैंक चलनिधि आकलन के प्रतिमान के द्वारा मौद्रिक प्रबंध परिचालन के लिए आवश्यक प्रणालीगत चलनिधि का आकलन करने में भी समर्थ है।

7.148 दूसरे, वर्षों से संचित लोक ऋण प्रबंध अनुभव ने सरकार की आवश्यकताओं एवं बाज़ार परिस्थितियों के अनुरूप निरंतर एवं

समन्वित तरीके से ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति परिचालन के युगल उत्तरदायित्व के निर्वहन हेतु सुसज्जित किया है। उदाहरण के लिए सरकारी ऋण की लागत कम रखने के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक को बाज़ार परिस्थितियों के अनुसार निर्गमों के समय, लिखतों के प्रकार एवं उनके परिपक्वता विन्यास से समायोजन करना पड़ता है। अनुकूल बाज़ार परिस्थितियां न होने पर रिज़र्व बैंक स्वयं सरकारी प्रतिभूतियों को खरीद लेता है तथा अनुकूल परिस्थितियों पैदा होने पर उन्हें बाज़ार में बेच देता है। इसके अलावा हाल के वर्षों में रिज़र्व बैंक ने मौद्रिक नीति के अल्पावधिक दुष्प्रभावों से ऋणों को बचाने के लिए समुचित उपकरण यथा चलनिधि समायोजन सुविधा का विकास किया जिसके फलस्वरूप मौद्रिक नीति के स्वतंत्र परिचालन में भी सहायता मिली। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि भारत में अमेरिका में राजकोष एवं फेडरल रिज़र्व बोर्ड के बीच स्थापित समन्वय प्रक्रिया के समान समन्वय प्रक्रिया स्थापित की गई है। उदाहरणार्थ ट्रेजरी फेडरल रिज़र्व बोर्ड परंपरा से ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति परिचालन के अपने-अपने कार्य क्षेत्रों में स्वायत्तता बनाए हुए है। परंतु फंड एवं ट्रेजरी के बीच समन्वय होता है जहां ट्रेजरी का लक्ष्य वित्तीय बाज़ार में न्यूनतम कठिनाई पैदा करते हुए संघीय ऋण का वित्त पोषण करना है वही फंड ट्रेजरी के एजेंट के रूप में ट्रेजरी की ओर से नीलामी आयोजित करता है, नीलामी से प्राप्त धन एकत्र करता है तथा फेडरल ऋण का लेखा जोखा रखता है (ब्लोमेस्टिन एवं युन्होल्म, 1997)।

7.149 जैसा कि उपरोक्त चर्चा से स्पष्ट होता है, यद्यपि भारत में मुद्रा एवं ऋण प्रबंध नीतियों के समन्वय में सुधार हुआ है तथापि अनेक चुनौतियां अभी शेष हैं। पहले, सरकार के भारी बाजार उधार कार्यक्रम के चलते रिज़र्व बैंक के दक्ष ऋण एवं मुद्रा प्रबंध परिचालन पर दुष्प्रभाव पड़ सकता है। दूसरे, बारहवें वित्त आयोग की सिफारिशों के लागू होने पर केंद्र राज्य सरकारों के लिए ऋण उगाहने वाले मध्यस्थ का कार्य बंद कर देगा तथा राज्यों को स्वयं बाज़ार से ऋण उगाहना पड़ेगा। तीसरे, जहां एक ओर सरकारी क्षेत्र की बाज़ार ऋण मांग में लगातार वृद्धि होती रहेगी वहीं वर्धमान आर्थिक गतिविधि के कारण बैंक ऋण के लिए वाणिज्यिक क्षेत्र की मांग भी बढ़ेगी तथा वे वित्त क्षेत्र में उपलब्ध संसाधनों के लिए होड़ करेंगे। चौथे, 1 अप्रैल 2006 से प्राथमिक ऋण बाज़ार से रिज़र्व बैंक द्वारा हाथ खींच लेने पर ब्याज दर प्रत्याशा प्रबंध पर दुष्प्रभाव पड़ेगा। पांचवे, बैंकों की निवल मांग एवं मीयादी देयताओं के 25% से कम सांविधिक चलनिधि अनुपात की छूट देने वाले प्रस्तावित बैंकिंग विनियमन अधिनियम संशोधन से सरकारी प्रतिभूतियों की आबद्ध खरीद कम होगी। इन सब चुनौतियों के मद्देनज़र यह आवश्यक है कि रिज़र्व बैंक ऋण बाज़ार विकास के समग्र ढांचे के अनुरूप निवेशक आधार के विस्तार हेतु प्रयत्न करता रहे।

7.150 लोक ऋण के भारत में मौद्रिक प्रबंध से अलग होने से प्राप्य के पक्ष एवं विपक्ष में दिए गए तर्कों का सही आकलन करके अलगाव के विषय में व्यवहार्य दृष्टिकोण बनाने की ज़रूरत है। विलगाव के विकल्प सीमित हैं, यथा (क) ऋण प्रबंध कार्य का सरकार को अंतरण, (ख) इस उद्देश्य के लिए अलग ऋण कार्यालय की स्थापना, (ग) ऋण कार्य को रिज़र्व बैंक के पास रखते हुए इसे मौद्रिक नीति से कार्यात्मक रुप में अलग रखना। प्रथम विकल्प में कुछ वैधानिक बाधा है क्योंकि विधि अनुसार रिज़र्व बैंक को ऋण प्रबंध के लिए समर्थ बनाया गया है। इसके अलावा एक ही प्राधिकारी राजकोष एवं ऋण प्रबंध का कार्य करेगी तो राजकोषीय सक्रियता से ऋण प्रबंध कार्य की विश्वसनीयता पर असर पड़ेगा। स्वतंत्र ऋण प्रबंध प्राधिकारी की स्थापना के विकल्प का यह लाभ है कि उसके निर्णय पक्षपात रहित होंगे परंतु यह हानि भी है कि वह अपने कार्यों के मौद्रिक प्रभावों की परवाह किए बगैर सरकारी ऋण की लागत में कमी लाने का प्रयास करेगा। इसके अलावा मुद्रा एवं ऋण प्रबंध कार्यों का अलगाव करने वाले विकल्पों का चयन करते समय रिज़र्व बैंक द्वारा सालों से ऋण प्रबंध करके प्राप्त की गई संस्थागत स्मृति एवं तकनीकी दक्षता एवं मुद्रा, राजकोषीय एवं ऋण प्रबंध नीतियों में कार्यात्मक समन्वय से संबंधित कठिनाइयों के निवारण हेतु विकसित औपचारिक संस्था तंत्र के तुलनात्मक लाभों पर भी विचार करना पड़ेगा। अतः ऋण प्रबंध का कार्य रिज़र्व बैंक के पास रखने के तीसरे विकल्प पर विचार करना आवश्यक है। राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध चरण के अधीन राजकोषीय सुधार में हुई प्रगति से यह दृष्टिकोण उभर रहा है कि रिज़र्व बैंक को सरकारी ऋण परिचालनों का पुनर्भिमुखकरण करने के साथ-साथ मुद्रा परिचालनों को सशक्त बनाना पड़ेगा। इसके लिए रिज़र्व बैंक के ऋण प्रबंध एवं मुद्रा परिचालनों का कार्यात्मक अलगाव आवश्यक है (भा.रि.बैंक 2005-06) इस संदर्भ में मुद्रा एवं ऋण प्रबंध कार्यों के पृथक्कीकरण के उद्देश्य से रिज़र्व बैंक में सन 2005 में वित्तीय बाज़ार विभाग की स्थापना की गई।

VII. मौद्रिक एवं राजकोषीय परस्पर संबंध : एक आकलन

राजकोषीय असंतुलन की प्रवृत्तियां एवं अर्थव्यवस्था पर उसके प्रभाव

7.151 वर्षों से केंद्र सरकार की वित्तीय स्थिति की समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि, 1970 के बाद के दशक के मध्य एवं 1990 के बाद

के दशक के प्रारंभ काल को छोड़कर, 'सकल राजकोषीय घाटे' में लगातार वृद्धि होती रही है। सन् 1970 के बाद के दशक के मध्य से राजस्व खाते में घाटे की शुरुआत से सकल राजकोषीय घाटे में भारी वृद्धि हुई जिसका दुष्प्रभाव बाह्य क्षेत्रपर भी पड़ा तथा जिसकी परिणति सन् 1990 के बाद के दशक की शुरुआत में आए आर्थिक संकट में हुई। (चार्ट VII.3)। सुधारोत्तर अनुभव से यह ज्ञान होता है कि भुगतान संतुलन के चालू एवं पूंजी खातों में भारी अंतर्प्रवाह से भारतीय अर्थव्यवस्था में जारी भारी राजकोषीय घाटे के दुष्प्रभावों का निवारण किया परंतु हाल के वर्षों में नियमबद्ध राजस्व वृद्धि एवं खर्चों को युक्ति संगत बनाने से सकल राजकोषीय घाटे में कुछ कमी आई है।

7.152 1980 के बाद के दशक के शुरुआती वर्षों से प्राथमिक तथा ज़्यादा ब्याज भुगतान, अनुदानों, रक्षा खर्च एवं सार्वजनिक उद्यमों में हानि से केंद्र एवं राज्यों की संयुक्त राजकीय वित्तीय स्थिति में कमजोरी आई। 1990 के बाद के दशक के पूर्वार्ध में प्रमुखतया केंद्रीय सरकार के पूंजीगत व्यय में कमी से राजकोषीय स्थिति में सुधार हुआ। 1990 के बाद के दशक के पूर्वाध में पंचम वेतन आयोग का प्रभाव राज्यों के राजस्व घाटे में स्पष्ट झलकता है जिससे अंततः संयुक्त राजस्व एवं पूंजी खाते में घाटे में वृद्धि हुई। हाल ही के राजकोषीय अधिनियम द्वारा राजकोषीय सुधार पर बल देने से राज्य एवं केंद्रीय स्तरों पर राजस्व एवं राजकोषीय घाटों में गिरावट आई (चार्ट VII.4)।

चार्ट VII.3 : राजकोषीय और बाह्य असंतुलन

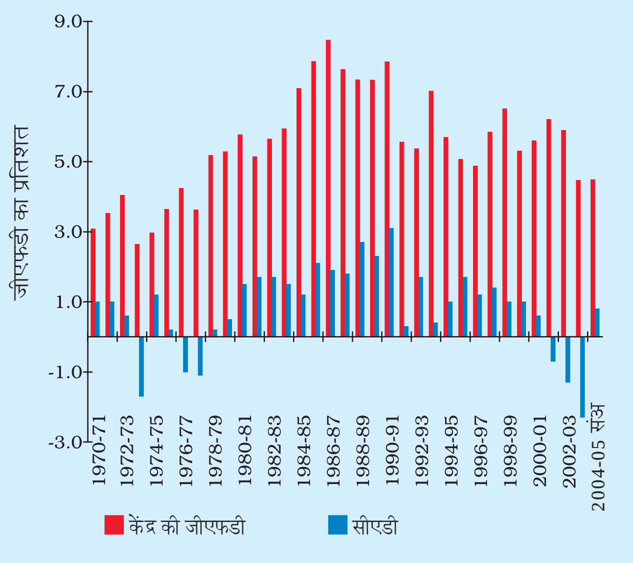

चार्ट VII.4 : केंद्र और राज्य सरकार के राजस्व एवं राजकोषीय घाटे

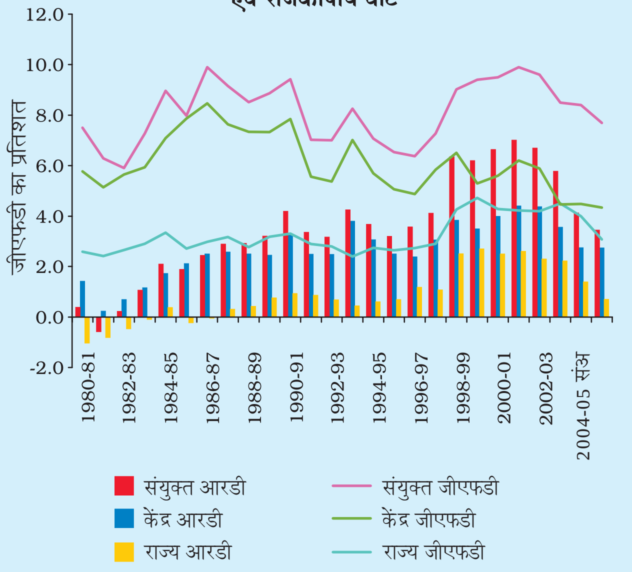

ऋण स्थिति

बढ़ते हुए ऋणभार की समस्याएं

7.153 लोक ऋण की गति, जो 1980 के बाद के दशक में विपरीतगामी हो गई थी, राजकीय राजकोषीय घाटे की भारी दुर्दशा को दर्शाती है। केंद्र सरकार का ऋण/सकल घरेलू उत्पाद अनुपात सन 1980-81 में 41.6% से बढ़कर सन् 1990-91 में 55.3% हो गया। इसके तीन गंभीर दुष्प्रभाव हुए। प्रथम ऋण के साथ ब्याज में हुई वृद्धि से राजस्व प्राप्तियों का उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ अंश खपने लगा जिससे राजस्व घाटा बढ़ा। ब्याज भुगतान/ राजस्व प्राप्ति अनुपात, सन् 1980-81 में 21% से बढ़कर 1993-94 में 48.7% हो गया दूसरे, उधार के बढ़ते स्तर से ब्याज दरों में वृद्धि हुई जिसने ब्याज दर संवेदी अल्पावधि निजी क्षेत्र के निवेशकों को बाजार से बाहर धकेल दिया जिससे आर्थिक विकास पर बुरा असर पड़ा तीसरे, भारी मात्रा में उधार लेने से भुगतान भार में वृद्धि हुई जिसके परिणाम स्वरूप बार-बार ऋण पुनर्निधारण की समस्या पैदा हुई। सन् 1991 में केंद्र सरकार द्वारा प्रारंभ किए गए राजकोषीय संकुचन प्रयासों एवं परिणामस्वरूप निवल बाजार उधार पर नियंत्रण से ऋण/सघउ अनुपात में सन् 1990-91 में 55.3 प्रतिशत से सन् 1996-97 में 49.4 प्रतिशत रह गया। परंतु सन् 1990 के उत्तरार्ध में राजकोषीय सुधार प्रक्रिया के विपरीतीकरण एवं परिणामस्वरूप केंद्र सरकार के बाज़ार उधार में वृद्धि से ऋण/सघउ अनुपात में वृद्धि हुई। परंतु ब्याज भुगतान/राजस्व प्राप्ति अनुपात में गिरावट जारी रही तथा

चार्ट VII.5: केंद्र तथा राज्य को संयुक्त ऋण

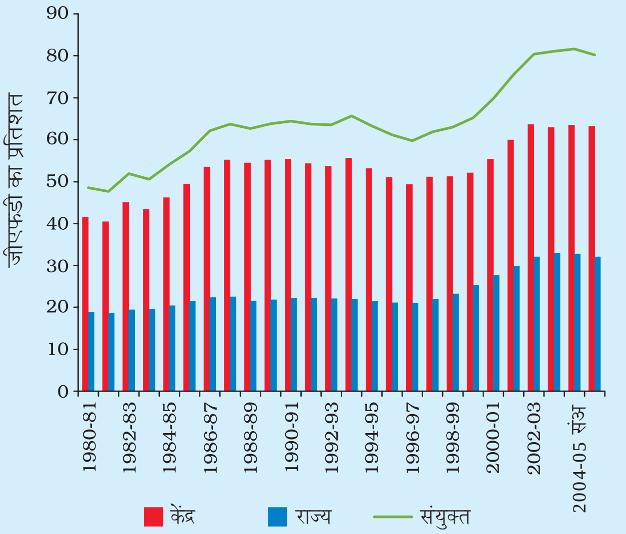

चार्ट VII.6 : केंद्र के जीएफडी को वित्तपोषण

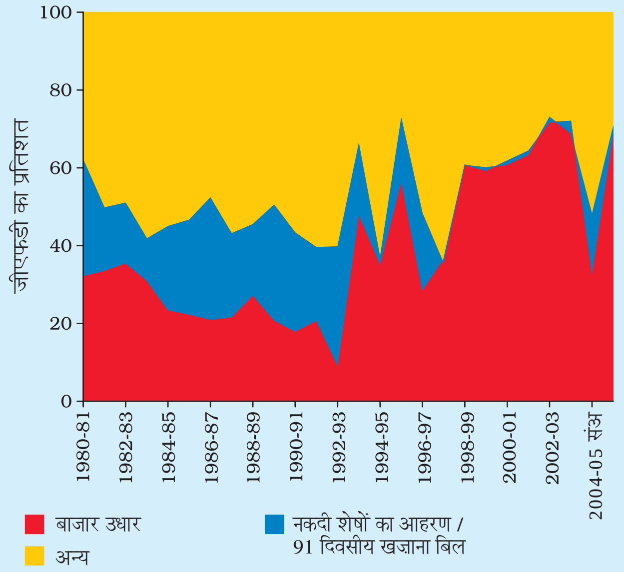

वह 2004-05 में 41.8 प्रतिशत रह गया। राज्य सरकारों का ऋण/सघउ अनुपात सन 1960-81 में 22.5 प्रतिशत से बढ़कर सन् 1990-91 में 22.5 प्रतिशत हो गया तथा सीमित गिरावट के बाद सन 1995-96 में 21.1 प्रतिशत हुआ एवं बाद में पुनः बढ़कर सन 2004-05 में 33.3 प्रतिशत हो गया (चार्ट VII.5)।

राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण

7.154 मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंधो पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालने की वजह से सरकार के राजकोषीय घाटे का वित्तपोषण महत्वपूर्ण है। मौद्रिक नीतिगत लक्ष्यों पर कुल वित्तपोषण में बाजार उधार का अंश एवं रिज़र्व बैंक से सीधे वित्तपोषण का महत्वपूर्ण असर पड़ता है। केंद्र सरकार के संबंध में अप्रैल 1997 से पहले 91 दिन के तदर्थ खज़ाना बिल द्वारा स्वचालित मौद्रीकरण वित्तपोषण का मुख्य साधन था। तदर्थ खज़ाना बिल के लोपन से केंद्र सरकार के सकल राजकोषीय घाटे के वित्तपोषण में मौद्रीकरण का अंश घटा है (चार्ट VII.6)।

7.155 सन 1980 से रिज़र्व बैंक एवं शेष बैंकिंग क्षेत्र द्वारा सरकारी क्षेत्र को दिए गए ऋण के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि सन् 1980 के दशक के मध्य में कूपन दर एवं सांविधिक चलनिधि अनुपात में वृद्धि के कारण शेष बैंकों के योगदान में वृद्धि हुई। सन् 1990 के दशक के प्रारंभ में नीलामी प्रणाली एवं नए लिखतों के विकास से निष्क्रिय से सक्रिय ऋण नीति का प्रचलन हुआ तथा बैंकों द्वारा सरकारी घाटे के वित्तपोषण में वृद्धि तथा रिज़र्व बैंक के भाग में तदनुसार कमी हुई (बाक्स VII.7)। वास्तव में सन् 1999-2000 से बैंकों का योगदान सांविधिक चलनिधि अनुपात की आवश्यकताओं से अधिक रहा है जिससे यह ज्ञात होता है कि बैंक स्वैच्छिक रूप से भी सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश कर रहे हैं (चार्ट VII.7)।

7.156 सन् 1990 के बाद के दशक की शुरुआत में रिज़र्व बैंक का सरकार को निवल उधार आरक्षित मुद्रा वृद्धि का प्राथमिक उत्प्रेरक था (चार्ट VIII.8)। निवल उधार में भारी वृद्धि से प्रायः हमेशा आरक्षित मुद्रा में समान वृद्धि होती है अतः रिज़र्व बैंक को मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि को नियंत्रित करने हेतु नकदी आरक्षित निधि अनुपात में परिवर्तन करना पड़ता था। नकदी आरक्षित निधि अनुपात, जिसकी परिकल्पना एक विवेकसंमत उपाय के रूप में की गई थी, का उत्तरोत्तर वर्धमान प्रयोग राजकोषीय घाटे से उत्पन्न आरक्षित मुद्रा विस्तार के प्रभाव को निरस्त करने हेतु मौद्रिक नीति के उपकरण के रूप में किया जाने लगा।

7.157 आर्थिक सुधारों के प्रारंभ होने पर सन 1990 के दशक के अधिकांश भाग से केंद्र सरकार के उधार कार्यक्रम से रिज़र्व बैंक के योगदान में कमी आई। परंतु 1990 के बाद के दशक के अंत में केंद्र सरकार की वित्तीय स्थिति में खराबी आने तथा उच्च ब्याज दर स्थितियों में तज्जनित उच्चतर बाज़ार उधार आवश्यकताओं से रिज़र्व

बॉक्स VII.7
सकल राजकोषीय घाटा और केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को वित्तपोषण : भारतीय अनुभव

राजकोषीय वर्चस्व का विश्लेषण करने के लिए यह जानना आवश्यक है कि राजकोषीय घाटे की प्रवृत्ति क्या है और सरकार को केंद्रीय बैंक से कितना ऋण मिल रहा है। यह विश्लेषण, मोटे तौर पर इस बात का संकेत करता है कि मौद्रिक और राजकोषीय नीति के बीच कितना समन्वय है। भारत के संदर्भ में केंद्र सरकार का सकल राजकोषीय घाटा (जीएफडी) सामान्य तौर पर 1971-2005 की अवधि के दौरान बढ़ता रहा है, विशेष रूप से 1980 के दशक के पहले आधे के मध्य से लेकर बढ़ता रहा है। तथापि, केंद्र को रिज़र्व बैंक द्वारा दिए गए निवल ऋण (एनआरबीसी) में उतार-चढ़ाव के विशिष्ट चरण हैं (चार्ट क) । इन दो चरों के बीच के संबंधों में तदनुसार, काफी हद तक संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं।

चार्ट क : केंद्र का राजकोषीय घाटा और भारतीय रिज़र्व बैंक का निवल ऋण

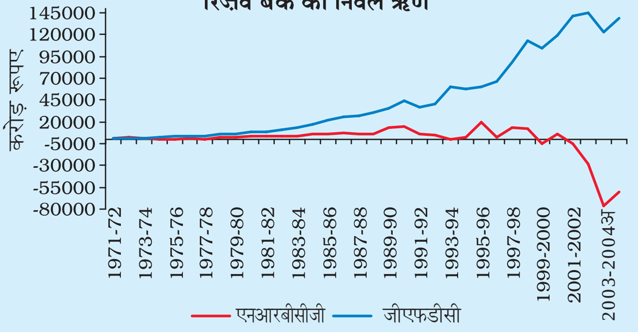

जीएफडीसी और एनआरबीसीजी के बीच सांख्यिकीय संबंध की जांच (1971-2005 के दौरान) के लिए पहले क्रम के ऑटोरिगरेसिव कंपानेंट (एआर 1) के साथ निम्नलिखित रिगरेशन समीकरण का प्राक्कलन किया गया है।

एनआरबीसीजी = 15019.95 + 0.78* जीएफडीसी + [एआर1 =1.11]

(0.54) (0.00) (0.00)

समायोजित आर^2 = 0.75. . . . (1)

(पैरंथिसिस में आंकड़े पी मूल्य के हैं)

जीएफडीसी तथा एनआरबीसीजी में उतार-चढ़ाव के बीच संबंध धनात्मक हैं और सांख्यिकी की दृष्टि से बहुत महत्वपूर्ण हैं। हालांकि, चार्ट क से साबित होता है कि एनआरबीसीजी में कुछ संरचनात्मक परिवर्तन हुआ है, इसलिए दोनों चरों के बीच के संबंध में समान परिवर्तन हुए हैं। इस शृंखला में संरचनागत परिवर्तन लाने वाले दो प्रमुख कारक हैं :

(i) अप्रैल 1997 से संस्थागत और नीतिगत ढांचे में परिवर्तन हुआ है, जिसमें रिज़र्व बैंक ने 91-दिवसीय तदर्थ खजाना बिलों को जारी करना समाप्त कर दिया और अर्थोपाय अग्रिम प्रणाली प्रारंभ की; और (ii) 2001 से लेकर पूंजी अंतर्वाह में होने वाले घटबढ़ से हुई है। दो चरों के बीच के संबंध में प्रत्याशित परिवर्तन के सांख्यिकीय महत्व को परखने के लिए चाओस (1960) ब्रेकप्वाइंट निम्नलिखित परिणामों सहित की गई है :

वर्ष 1997-98 के लिए संरचनागत परिवर्तन जांच

एफ- सांख्यिकी : 6.80; संभाव्यता : 0.00

वर्ष 2001-02 के लिए संरचनागत परिवर्तन जांच

एफ- सांख्यिकी : 25.13; संभाव्यता : 0.00

वर्ष 1997-98 तथा 2001-02 के लिए संरचनागत परिवर्तन जांच

एफ- सांख्यिकी :14.09; संभाव्यता : 0.00

एफ - सांख्यिकी, जो वर्गफल शेष के सीमित तथा असीमित योग की तुलना पर आधारित है, अत्यधिक एवं सांख्यिकी की दृष्टि से महत्वपूर्ण ह और यह इंगित करती है कि 1997-98 तथा 2001-02 में जीएफडीसी तथा एनआरबीसीजी में घट-बढ़ के बीच के संबंध में संरचनागत परिवर्तन हुए हैं। तीनों - नमूनों में गुणांक के स्थायित्व की और अधिक जांच करने के लिए, केनेडी (2003) का अनुसरण करते हुए, चाओस टेस्ट दोनों अवधि को मिलाकर (1998 और 2001) किया गया जो दोनों चरों के बीच के संबंध में संरचनागत परिवर्तन का होना इंगित करता है। चूंकि समष्टिगत आर्थिक स्थितियों का पूंजी अंतर्वाह पर सीधा प्रभाव पड़ता है, रिगरेशन समीकरण (2) में एनएफएआरबी (रिज़र्व बैंक की विदेशी मुद्रा आस्तियों में निवल संचयन (पुनर्मूल्यांक को घटाकर) जो पूंजी अंतर्वाह को इंगित करता है, को शामिल करते हुए (एनआरबीसीजी पर पूंजी अंतर्वाह के प्रभाव की और अधिक जांच की गई। दोनों चरों के गुणांक सांख्यिकीय रूप से महत्वपूर्ण सिद्ध हुए और उनमें अपेक्षित संकेत भी प्राप्त हुए।

एनआरबीसीजी = 1758.63+0.22*जीएफडीसी 0.75*एनएफएआरबी+ [एआर1=0.31]

(0.17) (0.00) (0.00) (0.11)

समायोजित आर^2 = 0.97 . . . . .(2)

(पैरंथिसिस के आंकड़े पी मूल्य में हैं)

उपर्युक्त अभ्यास दर्शाता है कि हाल के वर्षों में सरकारी प्रतिभूति बाजार जिस तेजी से उभरा है और पूंजी बाज़ार में जो वृद्धि हुई है, उसने सरकार के घाटे के वित्तपोषण के स्वरूप को बदल कर रख दिया ह। अंतर्वाहों के विनिमय (स्वैप) से उपलब्ध घरेलू मौद्रिक संसाधन के संचय को बैंकों ने सरकारी प्रतिभूतियों में निवेश करके इस्तेमाल किया। चूंकि रिज़र्व बैंक ने विनिमय किए गए अंतर्वाहों के मौद्रिक प्रभाव को समाप्त करने के लिए खुला बाज़ार परिचालन बिकी क माध्यम से अपनी सरकारी प्रतिभूतियों के स्टॉक को लगा दिया, जिसका परिणाम यह हुआ कि रिज़र्व बैंक द्वारा केंद्र सरकार को दिए जाने वाले निवल ऋण में गिरावट हुई है। अतः, केंद्र सरकार के सकल राजकोषीय घाटे का अधिकांश वित्तपोषण बैंकों ने किया है, बजाय रिज़र्व बैंक ऋण के, जिससे घाटे का मौद्रीकरण कम हुआ है।

बैंक को प्राथमिक बाज़ार में ज़्यादा खरीदारी करनी पड़ी (चार्ट VII.9)। अतः भार आगमन एवं निजी खरीदारी द्वारा रिज़र्व बैंक के हस्तक्षेप से सरकार के बाज़ार उधार की लागत कम रखने में मदद मिली।

चार्ट VII.7 : बैंकिंग क्षेत्र द्वारा राजकोषीय घाटे को संयुक्त रूप से वहन करना

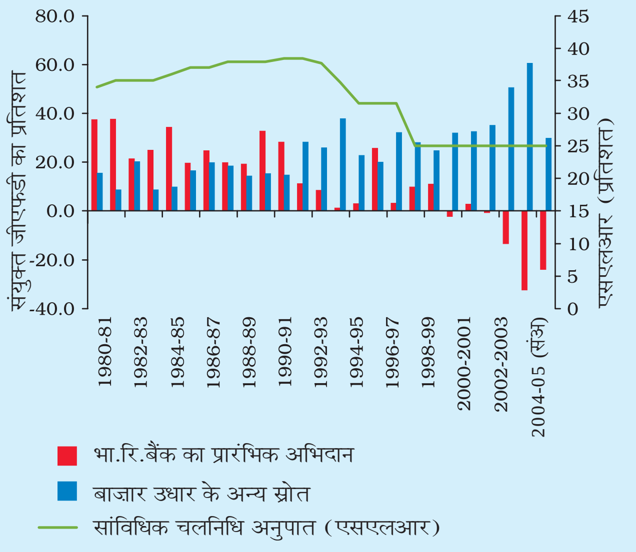

चार्ट VII.9 : केंद्र के सकल बाज़ार उधार में भारिबैंक का प्रारंभिक अभिदान

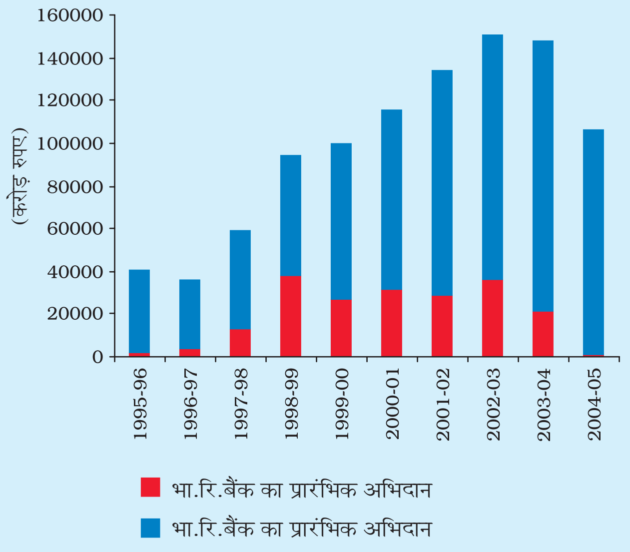

7.158 प्राथमिक बाज़ार में भारी खरीदारी के बावजूद रिज़र्व बैंक द्वारा खुले बाज़ार की बिक्रियों के कारण रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को दिए उधार में सामान्यतः कमी हुई। यह उल्लेखनीय है कि भारी पूंजी अंतर्प्रवाह से उत्पन्न चलनिधि के अवशोषण के लिए खुले बाज़ार की बिक्रियों से सन् 2001-02 से रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को प्रदत्त निवल उधार में कमी आई (चार्ट VII.10)। अतः अर्थव्यवस्था के मुक्त होने से रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी आस्तियाँ आरक्षित मुद्रा विस्तार का महत्वपूर्ण स्रोत बन गईं।

7.159 सन 1990 के दशक में रिज़र्व बैंक के ऋण प्रबंध परिचालन का एक महत्वपूर्ण पहलु यह है कि उसने परिपक्वता विन्यास का समुचित समायोजन करके बाज़ार उधार की लागत को न्यूनतम बनाया। इससे ऋण की औसत परिपक्वतावधि में कमी हुई एवं कुल शेष ऋण में दीर्घावधि ऋण का अनुपात मार्चांत 1992 में 75.8 प्रतिशत से घटकर मार्चान्त 1998 में 18.2 प्रतिशत रह गया। कुल ऋण में अल्पावधि ऋण का बड़ा अंश होने से भुगतान के संकेंद्रण एवं बार-बार रोलओवर की समस्या का संज्ञान लेकर रिज़र्व बैंक ने सन 1998-

चार्ट VII.8 : मौद्रीकृत घाटा और मौद्रिक समुच्चय

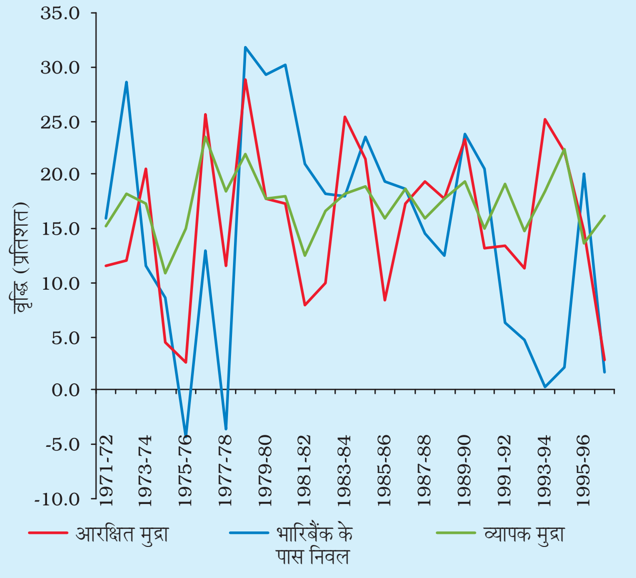

चार्ट VII.10 : रिज़र्व बैंक का खुला बाज़ार परिचालन

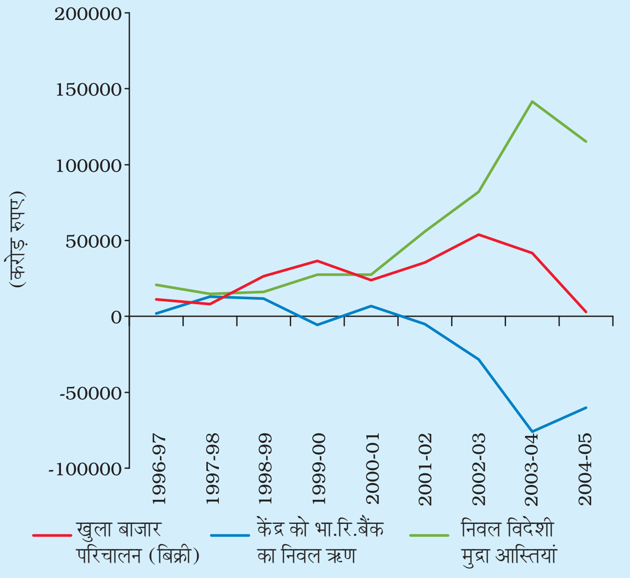

चार्ट VII.11 : केंद्र के प्राथमिक निर्गमों पर आय तथा परिपक्वता

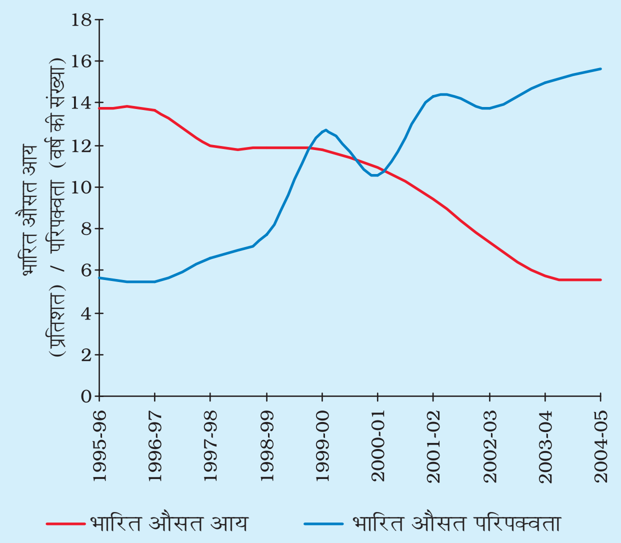

99 में नरम ब्याज दर परिस्थितियों का लाभ लेकर बाज़ार ऋण की परिपक्वतावधि में वृद्धि करने का निर्णय किया ताकि ब्याज लागत एवं रोल ओवर में संतुलन बिठाया जा सके। इस रणनीति से केंद्र सरकार के उधार पर शनै शनैः औसत ब्याज दर में कमी हुई तथा औसत परिपक्वतावधि में बढ़ोतरी हुई।

7.160 मौद्रिक एवं राजकोषीय परस्पर संबंधों के समग्र आकलन से यह ज्ञान होता है कि सन् 1997-98 के पहले रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को उधार के माध्यम से राजकोषीय घाटे के कारण मुद्रा आपूर्ति विस्तार में धनात्मक योगदान रहा। तत्पश्चात, सन 1997 एवं 2001 में राजकोषीय घाटे के स्वतः मौद्रीकरण की समाप्ति तथा पूंजी अंतर्प्रवाह में भारी वृद्धि से रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को ऋण एवं केंद्र के सकल राजकोषीय घाटे के बीच संरचनात्मक संबंधों का विच्छेद हुआ। संरचनात्मक संबंधों के भंग होने से वर्तमान दशक के पूर्वार्ध में मुद्रा सृजन का स्रोत सरकारी क्षेत्र (रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को निवल ऋण) से चलकर बाह्य क्षेत्र (रिज़र्व बैंक की निवल बाह्य आस्तियाँ) में स्थित हो गया है।

VIII. निष्कर्ष

7.161 ऊपरवर्णित भारत में मुद्रा राजकोषीय संबंधों की अवधारणा के परिप्रेक्ष्य में पिछले सात दशकों में रिज़र्व बैंक के अनुभव से कुछ निष्कर्ष निकालना लाभकारी होगा। प्रथम, राजकोषीय निरपेक्षता से राजकोषीय प्रधानता एवं आगे राजकोषीय सुधार इस प्रकार राजकोषीय नीति के परिवर्तनशील चरणों से उत्पन्न कठिनाइयों से रिज़र्व बैंक को जूझना पड़ा जिसके लिए उसने मौद्रिक नीति की परिचालन प्रक्रिया में समुचित परिवर्तन किए तथा मुद्रा एवं वित्तीय स्थिरता के प्रोत्साहन हेतु संस्थागत व्यवस्था की। इस संदर्भ में सन 1991 के आर्थिक संकट से मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंधों में राजकोषीय नीति की प्रधानता से उत्पन्न समस्याओं के समाधान की आकस्मिकता पैदा हुई। रिज़र्व बैंक एवं सरकार के मध्य राजकोषीय घाटे के स्वतः मौद्रीकरण की समाप्ति के लिए हुए समझौते से इसमें सुविधा हुई।

7.162 मौद्रिक, मुद्रा राजकोषीय परस्पर संबंधों में आए तनिक सुधार के बावजूद वर्धमान बाज़ार उधार के कारण राजकोषीय प्रधानता बनी रही जिससे रिज़र्व बैंक को सरकारी ऋण की लागत कम रखने के लिए भार के आगमन/निजी खरीद तथा मुक्त बाज़ार परिचालन की समुचित मिश्रित रणनीति अपनाने की आवश्यकता पड़ी।

7.163 तीसरे, अर्थव्यवस्था के उदारीकरण से मुद्रानीति परिचालन में नई चुनौतियाँ आईं। भारी पूंजी अंतर्प्रवाह से मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंधों में क्रमिक परिवर्तन हुआ तथा निर्धारित/नियंत्रित विनिमय दर (सापेक्ष मूल्य स्थिरता एवं विश्वसनीय आभासी आधार के लिए), एक स्वतंत्र मौद्रिक नीति (उत्पादन स्थिरता के उद्देश्य से) तथा खुला पूंजी खाता (अधिक दक्षता हेतु) की 'असंभव त्रिमूर्ति' की समस्या का चरणबद्ध ढंग से समाधान किया गया। जहाँ अधिक उपकरण स्वायत्तता से रिज़र्व बैंक के सामर्थ्य में वृद्धि हुई वहीं विनिमय दर समायोजन बाज़ार शक्तियों द्वारा ही किया गया तथा इसमें स्वयंफलित सट्टे बाजी की गतिविधियों के प्रतिकार के लिए कभी - कभी हस्तक्षेप की आवश्यकता पड़ी। परंतु, क्रमबद्ध रूप से पूंजी खाते का उदारीकरण, पूर्व एशियाई संकट से सिद्ध, विवेक संमत साबित हुआ मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति एवं विनिमय बाज़ारों का विनियामक होने के कारण रिज़र्व बैंक समुचित बाज़ार हस्तक्षेप एवं ब्याज दर संकेतों से ब्याज दर एवं विनिमय दर स्थिरता संबंधी विभिन्न दृष्टिकोणों को संतुलित कर सका।

7.164 अंततः, रिज़र्व बैंक सावधानीपूर्वक अपनी ऋण प्रबंध नीति का निर्माण कर सका ताकि सरकारी प्रतिभूतियों की परिपक्वतावधि को लं बा करके सरकारी ऋण पर ब्याज लागत कम की जा सके तथा उसका रोलओवर जोखिम घटाया जा सके। अतः इस संदर्भ में रिज़र्व बैंक बाज़ार में स्थिरता सुनिश्चित करते हुए ऋण प्रबंध चुनौतियों का मुकाबला कर सका।

7.165 यद्यपि विभिन्न चुनौतियों का सामना करने से प्राप्त रिज़र्व बैंक के विविधतापूर्ण अनुभव से उसे भविष्य में नीति निर्माण में

सहायता मिलेगी परंतु कुछ ऐसे विषयों का सज्ञान लेना जरूरी है जो भविष्य में मौद्रिक नीति के मार्ग पर प्रभाव डालेंगे। पहला, भारत में अंतरराष्ट्रीय प्रमाण के संदर्भ में मौद्रिक राजकोषीय परस्पर संबंध में की गई प्रगति की समीक्षा करने की आवश्यकता है। यद्यपि अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम संव्यवहारों के सर्वेक्षण से यह ज्ञात होता है कि अधिकांश देशों में केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार के निभाव पर औपचारिक सीमा निर्धारित की गई है, तथापि भारतीय संदर्भ में हाल के वर्षों में उदीयमान आर्थिक प्रवृत्तियों, जिनमें पूंजी प्रवाह का खुले बाज़ार परिचालनों द्वारा अवशोषण किया जाता है, के परिणामस्वरूप लोक ऋण के मौद्रीकरण में कमी आई है।

7.166 दूसरे, अंतरराष्ट्रीय अनुभव से यह सर्वसंमत दृष्टिकोण उभर कर सामने आता है कि केंद्रीय बैंक सरकारी प्रतिभूतियों की प्राथमिक नीलामी में भाग लेने से बचते हैं। भारत में, राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध के प्रावधानों के अनुसार, रिज़र्व बैंक अप्रैल 2006 से प्राथमिक नीलामी में भाग लेना बंद कर देगा। यह इस तर्क के अनुरूप है कि धन व्यय की शक्ति का मुद्रा सृजन शक्ति से अलगाव होना चाहिए (रेड्डी, 2001)। यद्यपि रिज़र्व बैंक के हटने से मौद्रिक नीति में ज़्यादा परिचालन स्वायत्तता आएगी परंतु रिज़र्व बैंक को ब्याज दर अस्थिरता पर नज़र रखनी पड़ेगी तथा सरकार के उधार कार्यक्रम की सफल पूर्ति के लिए वैकल्पिक वित्तपोषण की व्यवस्था करनी पड़ेगी। वित्त बाज़ारों के वर्धमान समेकन से भविष्य में बांड बाज़ार पर दबावों से अर्थव्यवस्था की समस्त ब्याज दर संरचना पर प्रभाव पड़ेगा (मोहन, 2002)।

7.167 तीसरे, भारत में उच्च लोक ऋण स्तर से, मुद्रा एवं ऋण प्रबंध के अलग-अलग होने का मत शक्तिशाली बनता प्रतीत होता है। अंतरराष्ट्रीय अनुभव यह बताता है कि ऋण प्रबंध एवं मुद्रा के पृथक्करण का कार्यान्वयन ऋण प्रबंध को केंद्रीय बैंक से पृथक करके किया गया जिससे संस्थागत स्मृति एवं विशेषज्ञता संसाधनों के सामान्य समूह का लाभ उठाया जा सकता था। उदाहरणार्थ, संयुक्त राज्य अमेरिका में ट्रेजरी एवं फेडरल रिज़र्व बोर्ड परंपरा से क्रमशः ऋण प्रबंध एवं मौद्रिक नीति के अपने-अपने कार्यों में स्वतंत्र हैं, तथापि उनके बीच समन्वय रहता है। इसके विपरीत, अनेक विकासशील देशों में, केंद्रीय बैंक मुद्रा एवं ऋण प्रबंध परिचालनों दोनों का कार्यभार संभालता है। यद्यपि वह सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक बाज़ार में प्रतियोगी बोलीदाता के रूप में भाग नहीं लेता। मुद्रा एवं ऋण प्रबंध के कार्यों के पृथक्कीकरण की जटिलताओं के मद्देनज़र कम से कम यह आवश्यक बनाया जाना चाहिए कि उनके संबंध एवं लेन - देन में यथासंभव पारदर्शिता का पूर्ण प्रचार हो (रेड्डी, 2001)। कार्यात्मक अलगाव की स्थिति में एक साथ विनिमय दर, मुद्रा एवं ऋण प्रबंध करने से उत्पन्न नीति दुविधाओं के समाधान, जिनका रिज़र्व बैंक तीनों कार्यों को करने वाले प्राधिकारी के रूप में समाधान करता रहा है, के लिए मुद्रा एवं ऋण प्राधिकारियों के मध्य अधिक औपचारिक समन्वय की आवश्यकता पड़ेगी।

7.168 चौथे, राजकोषीय अधिकारियों द्वारा इस बात का सज्ञान, कि राजकोशीय घाटे में कमी से मुद्रास्फीति दबाव में कमी आती है तथा मुद्रानीति का परिचलन आसान होता है, सफल मौद्रिक - राजकोषीय परस्पर संबंधों के लिए महत्वपूर्ण है। अतः,यदि मुद्रास्फीति संभावना का स्तर कम रखा जाए तो एक सक्रिय मौद्रिक नीति निम्न ब्याज दर परिस्थितियों का निर्माण कर सकती है जिससे आर्थिक विकास को सहायता के साथ-साथ लोक ऋण प्रबंध में भी मदद मिलती है।

7.169 पांचवे, राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध संरचना के अधीन किए जा रहे राजकोषीय सुधारों के संदर्भ में यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि सरकार राजकोषीय नियमों के अधीन निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए 'सृजनात्मक लेखांकन' से काम न ले इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि सभी राजकोषीय देयताओं का पारदर्शिता से प्रकटीकरण किया जाए ताकि मुद्रा प्राधिकारी सरकार की दीर्घावधि ऋण आवश्यकताओं का सही आंकलन कर सके तथा तदनुसार अपनी मुद्रानीति बना सके।

7.170 अंत में, परिचालन स्वायत्तता सुनिश्चित करते हुए राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों में समन्वय किया जा सकता है यदि (क) परिवर्तनशील समष्टिगत आर्थिक लक्ष्य, (ख)उन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विभिन्न संभावित विकल्पों के प्रभावों की पहचान तथा, (ग) नीतिगत हस्तक्षेप की अनुपस्थिति में अर्थव्यवस्था की अवस्था के अपने-अपने पूर्वानुमानों का आदान प्रदान एवं प्रयोग में विचार विमर्श से काम लिया जाए (रेड्डी, 2001)। इस संदर्भ में, यद्यपि अल्पावधि चलनिधि पूर्वानुमान प्रतिमान के कार्यान्वयन से भविष्य की चलनिधि की आवश्यकता के पूर्वानुमान में पर्याप्त राजकोषीय मौद्रिक परस्पर समन्वय निश्चित किया गया है तथापि उसको दीर्घावधि की भविष्य कालीन प्रासंगिक व्यवस्थाओं, विशेषकर राजकोषीय जवाबदेही और बजट प्रबंध प्रावधानों से उभरते समष्टि आर्थिक परिदृश्य के मद्देनज़र, उसे उसके अनुकूल बनाने के लिए परिष्कार की आवश्यकता है।

VIII रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र

8.1 एक केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र अनेक तरीकों से बैंकों सहित अन्य वाणिज्यिक संगठनों से चारित्रिक रूप से अनुपम और अलग होता है। यह एक अर्थव्यवस्था में इसकी विविध भूमिकाओं और दायित्वों के वित्तीय परिणामों का चित्रण करता है। इस दृष्टिकोण से यदि देखा जाए तो यह लेखा सिद्धांतों और समष्टि नीतियों के संगम को प्रतिबिंबित करता है। मौद्रिक प्राधिकारी होने के नाते एक केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र इसकी मौद्रिक देयताओं के आस्ति सृजन समर्थन परिणामों की अनन्य विशिष्टता को दर्शाता है। एक केंद्रीय बैंक सामान्यतः देश में मात्र मुद्रा जारी करने वाला प्राधिकारी ही नहीं वरन् अर्थव्यवस्था में मूल्य और विदेशी मुद्रा स्थायित्व के प्रति भी उत्तरदायी होता है, और अक्सर उसे वित्तीय स्थिरता के हित में सरकार के बैंकर और वित्तीय व्यवस्था के नियामक के विशिष्ट कार्य भी सौंपे जाते हैं। एक केंद्रीय बैंक के विविध कार्यगत दायित्वों की पारस्परिक क्रिया, समष्टि अर्थतंत्र के विभिन्न पक्षों को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है तथा जिसके, बाहरी राजकोषीय और मौद्रिक क्षेत्रों में निहितार्थ होते हैं। एक केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र का विकासक्रम सामान्यतः एक अर्थव्यवस्था में, केंद्रीय बैंक के मुद्रा प्राधिकारी और बैंकिंग तथा वित्तीय बाजार के नियामक के रूप में भूमिका जो विकास गतिक्रम में गहरे रूप में जुड़ी होती है, को दर्शाती है। इस पृष्ठभूमि में, इस अध्याय में, भारतीय रिज़र्व बैंक के कार्यकलापों के विकास क्रम जैसा कि उसके तुलन पत्र में प्रतिबिंबित होते हैं, का एक विश्लेषणात्मक विवरण प्रस्तुत किया गया है।[1]

8.2 अध्याय का शेष भाग निम्नप्रकार आयोजित किया गया है. भाग I, एक केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र की विहंगात्मक रूपरेखा प्रस्तुत करता है। यह एक केंद्रीय बैंक की मुख्य देयताओं और आस्तियों पर प्रकाश डालता है तथा प्राथमिक मौद्रीकरण जो तुलन पत्र में प्राथमिक मुद्रा सृजन में निहित है, का विश्लेषणात्मक प्रस्तुतीकरण दर्शाता है। इस अनुभाग में, वर्तमान साहित्य का संक्षिप्त सर्वेक्षण भी समाहित है। भाग II में, केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र के संदर्भ में पार देशों के अनुभवों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें, अन्य अनेक मुद्दों, जिसमें केंद्रीय बैंकों के बीच उनकी आस्तियों और दायित्वों के गठन, पूंजी रिज़र्व की स्थिति शामिल हैं, के संदर्भ में अंतर को समाहित किया गया है तथा विभिन्न देशों में केंद्रीय बैंक और सरकार के बीच उत्तर-दायित्वों के विभाजन पर भी प्रकाश डाला गया है। केंद्रीय बैंकों की पूंजी और रिज़र्व स्थिति पर विचार तथा विभिन्न देशों में केंद्रीय बैंक और सरकार के बीच लाभ वितरण क्रिया प्रणाली पर भी इस भाग में प्रकाश डाला गया है। बदलते समष्टि आर्थिक परिवेश के परिप्रेक्ष्य में रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र पर, मौद्रिक नीति के विकास क्रम व्यवस्था अंतरणों के संदर्भ में, विस्तृत चरण-वार विश्लेषण अनुभाग III में प्रस्तुत किया गया है। विचारणीय अवधि के दौरान हो रहे संरचनात्मक परिवर्तनों को दर्शाने की दृष्टि से विकासात्मक चरण (1935-1949), आधार चरण (1950-1964) सामाजिक नियंत्रण चरण (1968-1990) तथा वित्तीय उदारीकरण चरण (1991 से आगे), के लिए अलग-अलग विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। भाग IV रिज़र्व बैंक के लाभ हानि खाते का विश्लेषण करता है। रिज़र्व बैंक के आय और व्यय के घटकों की चर्चा करने के अतिरिक्त, इस भाग में केंद्रीय सरकार को हस्तांतरित किए जानेवाले लाभ पर भी प्रकाश डाला गया है। अध्याय V, इस संबंध में कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों को प्रमुखता से उजागर करता है। खास तौर से तीन विशिष्ट मुद्दों की जांच करता है, यथा (क) केंद्रीय बैंक के खातों में पारदर्शिता (ख) केंद्रीय बैंकों में जोखिम प्रबंध और (ग) आकस्मिकता रिज़र्व/अध्याय छः रिज़र्व बैंक की वित्तीय विवरणियों पर नीतिगत कार्यों से होनेवाले प्रभावों से उपजित मुख्य निष्कर्षों का सारांश प्रस्तुत करता है और उभरते मुद्दों की रूपरेखा भी।

I. केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र का विश्लेषण

8.3 एक केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र, उसके विविध कार्यों, खास तौर से मुद्रा प्राधिकारी के रूप में उसकी भूमिका तथा सरकार और बैंकों के बैंकर के रूप को प्रतिबिंबित करता है। इन भूमिकाओं के निर्वहन में, केंद्रीय बैंक, आम जनता की मांग की आपूर्ति हेतु मुद्रा जारी करता है तथा अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों को ऋण उपलब्ध कराता है, इस प्रकार व्यवस्था में नए रूप में धनराशि लाता है जो बैंकिंग व्यवस्था द्वारा मुद्रा गुणक प्रक्रिया के माध्यम से मुद्रा आपूर्ति सृजन का आधार बनती है।

8.4 एक केंद्रीय बैंक विशिष्ट रूप से दो प्रकार की देयताओं को उपगत करता है, यथा (क) मौद्रिक देयताएं तथा (ख) गैर मौद्रिक देयताएं (सारणी 8.1) एक केंद्रीय बैंक के मौद्रिक देयताओं में मुद्रा और बैंक रिज़र्व शामिल होते हैं। केंद्रीय बैंक के पास बैंकों के रिज़र्व या केंद्रीय बैंक के पास बैंकों की जमाओं के आकार तीन घटकों पर

[1] अध्याय में भारतीय रिज़र्व बैंक के लाभ-हानि खाते पर चर्चा भी सम्मिलित है।

निर्भर करते हैं, नामतः अपेक्षित रिज़र्व, निपटान शेष जमा राशि और आधिक्य रिज़र्व। गैर-मौद्रिक देयताओं में, सरकारें विशिष्ट प्रकार से उनकी नकदी शेष जमाराशियाँ, केंद्रीय बैंक जो कि सामान्यतः उनका एक मात्र बैंकर होता है, के पास रखती हैं। पूंजी खाते में, प्रदत पूंजी, अक्सर पूर्णतः राज्य अभिदत्त और रिज़र्व जो आकस्मिकताओं और विवेकपूर्ण प्रयोजनों के अतिरिक्त पुनर्मूल्यांकन खातों के लिए रखे जाते हैं, शामिल होंगे। विविध देयताओं जैसे देय बिल 'अन्य देयताओं' के अंतर्गत समूहीकृत किए जाते हैं।

8.5 आस्ति की ओर, अधिकांश केंद्रीय बैंक 'मौद्रिक स्वर्ण' दिखाना जारी रखे हुए हैं। राष्ट्रीय मुद्रा के समर्थन में रखी आस्तियों की गुणवत्ता इस तथ्य से और मजबूत होती है कि निवेश जो घरेलू सरकारों या विदेशी सरकारों के राजकीय कागजों तक ही सीमित होते हैं, वे अक्सर विदेशी मुद्रा में रखे जाते हैं। यद्यपि कुछ वाणिज्य कागज स्वीकार करते हैं, अधिकांश केंद्रीय बैंक श्रेष्ठ प्रतिभूतियों में ही लेनदेन को वरीयता देते हैं क्योंकि उसमें चूक जोखिम की सहगामी वस्तु अनुपस्थित होती है। (जेलमर 2001) केंद्रीय बैंक उनकी सरकारों को तथा बैंकों को साख /ऋण सुविधाएं (विशेषकर पुनर्वित्त) भी उनके बैंकर्स होने के नाते या कभी कभी शेष वित्तीय क्षेत्र की चलनिधि समर्थन के रूप में भी उपलब्ध कराते हैं।[2] गैर-वित्तीय आस्तियाँ जैसे भूमि और भवन और प्राप्य बिलों को 'अन्य आस्तियों के अंतर्गत दर्शाया जाता है। तथापि वे केंद्रीय बैंक की वित्तीय आस्तियों के आयामों की तुलना में नगण्य ही होती हैं।

8.6 केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में अंतार्निहित प्राथमिक मुद्रीकरण के विस्तार का आकलन इसकी आस्तियों और देयताओं, रिज़र्व मुद्रा या उच्च चलित मुद्रा, जो मुद्रा स्टाक निश्चयन के मुद्रा गुणक सिद्धांत के लिए केंद्रीय महत्व की है, का एक विश्लेषीकृत सार्थक निर्माण कर पुनर्रचना द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। रिज़र्व मुद्रा की रचना के प्रयोजन के लिए एक केंद्रीय बैंक की मौद्रिक और गैर मौद्रिक देयताओं (और आस्तियों) के बीच एक भिन्नता बनाए रखी जाती है क्योंकि रिज़र्व मुद्रा की आस्तियां और दायित्वों के स्रोतों (आस्तियों) और घटकों (देयताओं) की पहचान के लिए इनकी पुनर्रचना की जाती है। वास्तव में एक केंद्रीय बैंक की अनेक देयताएं चारित्रिक रूप से गैर मौद्रिक होती हैं, क्योंकि ये देयताएं स्वयं की होती हैं (जैसे रिज़र्व) या गैर तरल (जैसे पुनर्मूल्यांकन खाते) सरकार की शेष जमाराशि भी विशेष प्रकार से गैर मौद्रिक मानी जाती है, क्योंकि सरकार आम तौर से, अपनी कागजी मुद्रा सृजन क्षमता के कारण केंद्रीय बैंक के साथ मुद्रा जारी करने वाली मानी जाती है। इस प्रकार, मौद्रिक विश्लेषण 'मौद्रिक देयताओं' जो मुख्यतः केंद्रीय बैंक के साथ मुद्रा और बैंक जमाओं के रूप में होता है जिसे अक्सर रिज़र्व मुद्रा कहा जाता है, पर प्रकाश डालता है। (सारणी 8.2)

8.7 केंद्रीय बैंक का तुलन पत्र, व्यवस्था में प्राथमिक चलनिधि का प्रवाह प्रदर्शित करता है, और इस प्रकार विश्लेषणात्मक चलनिधि प्रबंध की दृष्टि से महत्वपूर्ण माना जाता है। केंद्रीय बैंक के शैलीकृत तुलनपत्र का विश्लेषणात्मक विघटन प्राथमिक चलनिधि जो केंद्रीय बैंक द्वारा स्वत्व और विवेकाधीन चलनिधि को विलग करने के लिए दी जाती है, उपयोगी हो सकती है (बोरियो 1997)। जबकि स्वायत्त चलनिधि बैंकों को उपलब्ध प्राथमिक चलनिधि, जो केंद्रीय बैंक के नियमित

सारणी 8.1: केंद्रीय बैंक का एक शैलीकृत तुलन-पत्र

देयताएं	आस्तियां
1	2
1. प्रदत्त पूंजी 2. प्रारक्षित निधि 3. मुद्रा 4. केंद्रीय बैंक के पास बैंकों की जमा राशियाँ 5. सरकारी जमाएं 6. अन्य देयताएं	1. ऋण और अग्रिम जिसमें से : सरकार बैंक अन्य 2. निवेश जिसमें से : राजकीय प्रतिभूतियाँ विदेशी आस्तियाँ 3. स्वर्ण 4. अन्य आस्तियाँ
कुल देयताएं (1 से 6)	कुल आस्तियाँ (1 से 4)

सारणी 8.2: रिज़र्व मुद्रा का विघटन

घटक	स्रोत
1	2
1. मुद्रा 2. केंद्रीय बैंक के पास बैंकों की जमाएं	1. केंद्रीय बैंक का सरकार को निवल ऋण (ए+बी+सी) ए) सरकार को ऋण और अग्रिम बी) राजकीय प्रतिभूतियों में निवेश सी) केंद्रीय बैंक के पास बैंकों की जमाएं 2. बैंकों एवं अन्य को ऋण एवं अग्रिम 3. केंद्रीय बैंक की निवल विदेशी आस्तियाँ (ए+बी) ए) विदेशी आस्तियों में निवेश (निवल) बी) स्वर्ण 4. निवल गैर-मौद्रिक देयताएं (ए+बी+सी+डी) ए) प्रदत्त पूंजी बी) प्रारक्षित निधि सी) अन्य देयताएं डी) अन्य आस्तियाँ
रिज़र्व मुद्रा (1+2)	रिज़र्व मुद्रा (1+2+3+4)

[2] अधिकांश केंद्रीय बैंक, बैंकिंग व्यवस्था को अंतिम उधारदाता के रूप में कार्य करते हैं।

कार्यकलापों जैसे मुद्रा प्राधिकारी, बैंकों एवं सरकार के बैंक, को समेटे होती है, विवेकाधिकार चलनिधि का आकलन केंद्रीय बैंक के मुद्रा बाज़ार परिचालनों एवं मुद्रा प्राधिकारी की बाजार चलनिधि के प्रति प्रतिक्रिया से आंकी जा सकती है।

8.8 एक केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र की आस्तियों और देयताओं का आकार और गठन, अर्थव्यवस्था में किसी एक दिए गए समय पर वित्तीय वहनता की सामर्थ्य और परिणामित मुद्रीकरण के स्तर पर महत्वपूर्ण रूप से निर्भर करती है। जैसे जैसे किसी देश में बैंकिंग और वित्तीय नेटवर्क का विस्तार होता जाता है, वित्तीय एजेन्टों में बैंकिंग आदतों का अंतर्निवेश होता जाता है जिसका परिणाम नकदी की मांग से बैंक जमाओं की ओर प्रवृत्त होना होता है। जितनी कम नकदी की मांग होगी, बैंकिंग व्यवस्था से उतना ही कम क्षरण होगा, जो मौद्रीकरण के उच्च स्तर की ओर अग्रसर होगा। बैंकिंग गतिविधियों में विस्तार और मौद्रीकरण के उच्च स्तर विशिष्ट रूप में, केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में, बढ़ते बैंक रिज़र्व, जो अंतर बैंक - निपटान आवश्यकताओं और विवेकपूर्ण और नीतिगत कारणों से अनिवार्य हो जाते हैं, के रूप में प्रतिबिंबित होते हैं। तथापि भुगतान और निपटान प्रणाली के और परिपक्व चरण में, एक सुदृढ़ विनियमित समाशोधन नेटवर्क के साथ निपटान प्रयोजनों के लिए अधिक रिज़र्व की वांछनीयता उल्लेखनीय रूप से कम हो जाती है। कम नकदी की मांग के साथ कम बैंक रिज़र्व आवश्यकताएं अक्सर केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के घटते हुए आकार में परिणित होती हैं। दूसरी ओर एक केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र में आस्ति गठन वित्तीय विकास की अवस्था से परिचालित होता है। वित्तीय विकास के प्रारंभिक चरण में, केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को प्रत्यक्ष निभाव से तुलन-पत्र का आकार बढ़ता है और राजकीय कागज की धारिता भी बढ़ती है। वित्तीय बाज़ारों के विकास के साथ ही, आम तौर से मुद्रा प्रबंध के परोक्ष लिखतों की ओर मुडते नजर आते हैं तथा एक केंद्रीय बैंक का तुलन-पत्र, इसके बाजार परिचालनों के प्रभाव को अधिकार रूप से प्रतिबिंबित करता है। जबकि मौद्रिक प्रबंध के प्रत्यक्ष लिखतों के उपयोग द्वारा (अर्थात रिज़र्व आवश्यकताओं) एक केंद्रीय बैंक, वाणिज्य बैंकों के तुलन-पत्रों को सीधे प्रभावित करता है, अप्रत्यक्ष लिखतों (खुले बाज़ार परिचालनों) द्वारा बाज़ार सहभागियों के तुलन-पत्र, केंद्रीय बैंक नीतिगत कार्यों से इसके अपने तुलन-पत्र पर प्रभावों के पश्चात प्रकट होते हैं। इस प्रकार तुलनात्मक रूप से उन्नत व्यवहार दशा के साथ, केंद्रीय बैंक की आस्तियों और देयताओं के गठन और उतार-चढ़ाव संभवतः और ज्यादा प्रकटीपरक होंगे।

केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र पर मौद्रिक परिचालनों का प्रभाव

8.9 इस परिप्रक्ष्य में, इस प्रकार के नीति परिचालनों का केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र पर प्रभाव का विश्लेषण महत्वपूर्ण होगा। (सारणी 8.3)

सारणी 8.3: विभिन्न मौद्रिक नीति लिखतों के अंतर्गत तुलन-पत्र में उतार चढ़ाव

मौद्रिक नीति लिखत	परिचालन	केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में उतार चढ़ाव		
		मौद्रिक आधार	निवल घरेलू आस्तियां	बैंक रिज़र्व
1	2	3	4	5
1. स्थायी सुविधाएं	• पुनर्वित्त सुविधा के माध्यम से उच्च ऋण	-	-	-
	• जमा सुविधा के माध्यम से उच्च जमा	—	—	—
2. खुले बाजार परिचालन	• प्रतिभूतियों या रिपोज की एक मुश्त खरीद	-	-	-
	• प्रतिभूतियों या रिवर्स रिपोज की एक मुश्त बिक्री	—	—	—
3. विदेशी मुद्रा परिचालन	• विदेशी मुद्रा की खरीद	-	अपरिवर्तनशील	-
	• विदेशी मुद्रा अदला-बदली (विदेशी मुद्रा की हाजिर खरीद और अगाऊ बिक्री)	-	अपरिवर्तनशील	-
4. रिजर्व आवश्यकताएं	• रिज़र्व अनुपात में वृद्धि			
	- अल्पकालीन	-	-	-
	- मध्यकालीन	अनिश्चित	अनिश्चित	अनिश्चित
	• रिज़र्व अनुपात में कमी			
	- अल्पकालीन	—	—	—
	- मध्यकालीन	अनिश्चित	अनिश्चित	अनिश्चित

स्रोत : सहचेन्तर ए (2001) 'मौद्रिक नीति का क्रियान्वयन और केंद्रीय बैंक का तुलन-पत्र' आई एम एफ कार्यकारी पेपर, डब्ल्यू पी/01/149

रिज़र्व आवश्यकताओं में बदलाव

8.10 अधिकांश केंद्रीय बैंकों को, बैंकों की पात्र मांग और मीयादी देयाताओं पर नकदी रिज़र्व आवश्यकताएं लगाने की शक्तियाँ प्राप्त हैं। रिजर्व आवश्यकताओं में परिवर्तन, तुलन पत्र तथा बैंक चलनिधि में रिज़र्व मुद्रा, लाभप्रदता के गठन में बदलाव ला देता है। नकदी रिज़र्व अनुपात (सीआरआर) में परिवर्तन, देयताओं की ओर मुद्रा और रिज़र्व के अनुपात को बदल देता है। आस्ति की ओर प्रभाव विशिष्ट मुद्रा परिवेश पर निर्भर करेगा। विशिष्ट रूप से, जब केंद्रीय बैंक, एक विकासशील अर्थव्यवस्था में, सरकारी व्यय का वित्तपोषण करता है तो वह सीआरआर में वृद्धि के द्वारा मौद्रिक प्रभाव को निष्प्रभावी करने की चेष्टा करता है, जिससे, अपना तुलन-पत्र विस्तारित करता है। अगर सीआरआर में वृद्धि पूंजी अंतर्वाह के प्रभाव को निष्क्रिय करने के लिए की जाती है तो विदेशी आस्तियों के पक्ष में परिवर्तन होगा। अगर सीआरआर में वृद्धि पूंजी बहिर्वाह को रोकने के लिए मुद्रा स्थितियों को कड़ा करने के लिए की जाती है तो, उच्च रिज़र्व आवश्यकताओं और उगाही गई विदेशी मुद्रा के मिश्रण से उत्पन्न अंतर को निवल घरेलू आस्तियों में वृद्धि जो या तो रिपोज के माध्यम से होगी या स्थायी सुविधाओं के उच्च संसाधन से, कोषित करने का प्रयास किया जाता है। अंततः सीआरआर में कमी लगभग सदैव घरेलू आस्तियों में कमी के साथ होती है क्योंकि बैंक मुक्त संसाधनों को या तो रिवर्स रेपो में निवेश करते हैं या स्थायी सुविधाओं के भुगतान में। रिज़र्व आवश्यकताओं का, बैंक की लाभप्रदता पर प्रभाव, मुद्रा स्थिति पर निर्भर करता है। प्रथमतः सीआरआर शेषों पर ब्याज का भुगतान आय पर प्रभाव है। इसके अतिरिक्त, घरेलू और विदेशी आस्तियों के अनुपात में परिवर्तन केंद्रीय बैंक की आय को, घरेलू और अंतरराष्ट्रीय ब्याज दरों के बीच के अंतर की सीमा तक प्रभावित करता है।

पुनर्वित्त सुविधाएं

8.11 केंद्रीय बैंक द्वारा बैंकों को स्थायी सुविधाओं में वृद्धि (कटौती) का परिणाम रिजर्व मुद्रा के आकार में परिवर्तन में होता है। विशिष्ट रूप से, एक कम विकसित अर्थव्यवस्था में, जब केंद्रीय बैंक का लक्ष्य क्षेत्र-विशिष्ट पुनर्वित्त सुविधाओं में संवर्धन का होता है, इन क्षेत्रों को बैंकों की उधारी केंद्रीय बैंक द्वारा पुनर्वित्त की जाती है, जो केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र के विस्तार में परिणित होती है।

खुले बाज़ार परिचालन (ओएमओस)

8.12 एक केंद्रीय बैंक का आधारभूत चलनिधि प्रबंध यंत्र सरकारी कागज़ में व्यवहार करना है। खुले बाज़ार परिचालन (रेपो परिचालनों सहित) अपेक्षाकृत परिपक्व चरण के वित्तीय विकास वाली अर्थव्यवस्थाओं में, चलनिधि प्रबंध और अल्पकालिक ब्याज दरों के स्थरीकरण के लिए एक प्रमुख उपाय के रूप में उभरे हैं। केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र (तथा रिज़र्व मुद्रा) पर ओएमओ का प्रभाव मूलतः स्थिति विशिष्ट होता है। अगर ओएमओ, मुद्रा या बैंक रिज़र्व की मांग में परिवर्तन के कारण आवश्यक हो गया है तो तदनुरूप तुलन-पत्र (और रिज़र्व मुद्रा) के आकार में परिवर्तन होगा। अगर, ओएमओ पूंजीगत प्राप्त राशियों से संचालित है, तो तुलन-पत्र के आकार (और रिज़र्व मुद्रा) में परिवर्तन नहीं होगा, यद्यपि मुद्रा बाज़ार दरों और विदेशी विनिमय दरों के संदर्भ में मौद्रिक स्थितियाँ प्रभावित हो सकती हैं। प्रत्येक मामले में, निवल घरेलू और विदेशी आस्तियों के संदर्भ में, तुलन-पत्र (और रिज़र्व मुद्रा) के गठन में परिवर्तन होगा जो अंतर्ग्रस्त परिचालनों पर निर्भर करेगा। लाभप्रदता के संदर्भ में दो प्रभाव होंगे, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष। अगर सरकारी प्रतिभूतियां तत्काल खरीदी जाती हैं तो, केंद्रीय बैंक सरकार से ब्याज आय कमाता है। केंद्रीय बैंक को ओएमओ के परिचालन में लाभ-हानि होती है। रेपो (रिवर्स रेपो) परिचालनों के मामले में, केंद्रीय बैंक ब्याज आय अपने प्रतिपक्षों से (को) प्राप्त (भुगतान) करता है, नामतः वाणिज्यक बैंकों और प्राथमिक व्यापारियों। इसके अतिरिक्त मुद्रास्थितियों को कड़ा करने का परिणाम सरकारी प्रतिभूति संविभाग में मूल्य ह्रास होता है, जिसे चालू आय की बिना पर हिसाब में लिया जाना होगा।

बट्टा / बैंक दर

8.13 बट्टा / बैंक दर वह मानक दर है जिस पर केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को ऋण और स्थायी सुविधाओं के एक हिस्से के रूप में बैंकों और प्राथमिक व्यापारियों को प्रतिफलित किया जाता है। यह अर्थव्यवस्था में खासतौर से मध्यावधि ब्याज दरों के लिए संकेत के रूप में अक्सर प्रमुख नीति के रूप में कार्य करता है। जब कि बैंक दर में वृद्धि, स्थायी सुविधाओं से अधिक आय दिलाती है, सीआरआर पर देय अधिक ब्याज के कारण बाहर जाते धन में वृद्धि होगी, यदि केंद्रीय बैंक नकदी अनुपात शेष जमाराशियों पर देय ब्याज को बैंक दर से जोड़कर दिए जाने की प्रथा का अनुसरण करता है।

केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र पर वर्तमान विचारणा

8.14 हालिया साहित्य में केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र पर पर्याप्त मात्रा में ध्यान दिया गया है। केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र को, मौद्रिक नीति परिचालनों के एक भाग के रूप में बाज़ारी सहभागियों के साथ इसके अंतर्व्यवहार के एक प्रतिबिम्ब के रूप में देखा जाता है, तथा अन्य मुद्दे जैसे सामर्थ्य, शोधक्षमता, पारदर्शिता और जोखिम प्रबंध को भी केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र से जोड़ दिया गया है।

8.15 इस तथ्य के बावजूद कि केंद्रीय बैंक के निष्पादन का आकलन, उसे सौंपे गए उद्देश्यों के संदर्भ में उपलब्धताओं जो नीतिगत प्रभावशीलता पर आधारित हों, किया जाता है, लगभग एक स्वीकृत तथ्य है कि तुलन-पत्र की सामर्थ्य, केंद्रीय बैंक की उसके विविध कार्यगत दायित्वों के निर्वहन में प्रभावशीलता में सुधार लाता है, यह विचार उन गतिविधियों का परिणाम है जो केंद्रीय बैंक को अधिकाधिक स्वतंत्रता का समर्थन करती है तथा जिह्नोंने केंद्रीय बैंक को उनके वित्तीय निष्पादन के संदर्भ में अधिक पारदर्शी और उत्तरदायी बनाया है। (सुलीवन 2003)

8.16 हाल के वर्षों में जब केंद्रीय बैंक ने अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम व्यवहारों की ओर कदम उठाया है, बाज़ारी उतार-चढावों के प्रति केंद्रीय बैंक की बढ़ती हुई संवेदनशीलता के संदर्भ में, पूंजी सहारा (कुशन) की पर्याप्तता एक प्रमुख चिंता रही है। यद्यपि कुछ केंद्रीय बैंक जिनके तुलन-पत्र मजबूत हैं, बहुत निम्न पूंजी धारित हैं, अंतरराष्ट्रीय गतिविधियां इस तर्क का समर्थन करती प्रतीत होती हैं कि एक केंद्रीय बैंक को शोधनक्षम बने रहने के लिए पर्याप्त पूंजी रखनी चाहिए (सुजीवन 2003; स्टेला 1997, 2002, और 2003; मार्टीनेज-रेसानो, 2004)। जब कि केंद्रीय बैंकों के लिए 'पूंजी पर्याप्तता' पर कोई निश्चित विचार नहीं है, पूंजी के उपयुक्त स्तर के निर्धारकों पर केंद्रीय बैंकों की नीति व्यवस्था और नीति उद्देश्यों के दृष्टिकोण से विचार किया गया है। हाल का साहित्य इस बात की आवश्यकता को रेखांकित करता है कि केंद्रीय बैंक की वित्तीय अतिसंवेदनशीलता जो 'जोखिम पर मूल्य' दृष्टिकोण पर आधारित हो, का आकलन, परम्परागत केंद्रीय बैंकिंग परिचालनों तथा इतर तुलन-पत्र स्थितियों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। (ब्लेजर और सेहुमेचर, 1995)। मजबूत पूंजी स्थिति के समर्थन के बारे में प्रकट विचार इतने असरदार हैं कि अनेक केंद्रीय बैंकों ने अपनी पूंजी स्थिति को मजबूत करने के लिए विभिन्न विकल्पों को जांचना शुरु कर दिया है ताकि वे शोधनक्षम और परिचालनगत रूप से स्वतंत्र बने रहें।

8.17 केंद्रीय बैंकों के बीच आस्तियों और देयताओं के गठन के अंतर, गहन रूप से उनके परिचालनगत उत्तरदायित्वों और अन्य देश विशिष्ट प्रथाओं के तुलनात्मक महत्व से जुड़े हुए हैं। गत दिनों में, विभिन्न चरणों में, केंद्रीय बैंक की अर्थव्यवस्था में भूमिका, उनके परिचालनों और उद्देश्यों के संदर्भ में, महत्वपूर्ण परिवर्तन के दौर से गुजरी है। केंद्रीय बैंकों द्वारा विभिन्न चरणों में विभिन्न दायित्व ग्रहण कर लिए हैं जो प्रचलित समष्टि आर्थिक, वित्तीय, राजनैतिक और कानूनी परिवेश, विनिमय दर मतों और सरकार के राजकोषीय एजेन्ट तथा नोट जारी करने वाले प्राधिकारी के रूप में उन्हें सौंपी गई भूमिकाओं के तुलनात्मक महत्व से प्रभावित होते रहे हैं। वर्तमान परिवेश में केंद्रीय बैंकों को विशिष्ट मुद्रा नीति कार्य के साथ आधुनिक संस्थाओं के रूप में देखा जा रहा है। (स्कॉबी और केगलेसी 2000)।

8.18 यह माना जाता है कि आदर्शरूप में एक केंद्रीय बैंक को, किसी भी प्रकार की हानियों को अवशोधित करने, जो उसके कार्य निर्वहन से उत्पन्न हुई हों, तथा गैर नकारात्मक पूंजी स्थिति को बनाए रखने के लिए पर्याप्त पूंजी रखनी चाहिए (सुजीवन 2003)। केंद्रीय बैंक की कमजोर आर्थिक स्थिति उसके सरकार के राजकोषीय एजेन्ट या उसके एक प्रभावी घरेलू भुगतान प्रणाली बनाए रखने के मामले में अवरोधक होती है। केंद्रीय बैंकों के लिए यह उचित होगा कि वे मध्यावधि के दौरान, पूंजी पर्याप्तता का एक जोखिम आधारित स्तर अपनाएं जो केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता, नीति क्षमता, प्रतिष्ठा और राजकोषीय पारदर्शिता के संदर्भ में शून्य पूंजी या गैर नकारात्मक पूंजी स्थिति अनुमत करता है। (स्टेला 1997) यह विचार इस बात की स्वीकारोक्ति के बावजूद भी ध्यान में रखा जाता है कि केंद्रीय बैंकों के लिए जोखिम आधारित पूंजी की स्थापना अक्सर कठिन है। इसी के साथ, जोखिम आधारित पूंजी पर्याप्तता मानदंडों के संदर्भ में पूंजी स्तरों के समायोजन पर अनावश्यक जोर दिया जाना नीति प्रभावकारिता की गुणवत्ता में ह्रास का जनक होगा।

8.19 केंद्रीय बैंकों में आपस में व्यापक उतार-चढ़ावों के बावजूद, इस तथ्य की स्वीकृति प्रतीत होती है कि केंद्रीय बैंकों को, अपनी पूंजी और रिजर्व स्थिति के संदर्भ में मजबूत होना चाहिए ताकि वे वृद्धिशील जोखिम प्रवण ऋण वित्तीय और परिचालनगत के विरुद्ध अपनी रक्षा कर सकें और अपने नीतिगत उत्तरदायित्वों को निभा सकें, सर्वोपरि रूप में, स्वतंत्र रह सकें। 'केंद्रीय बैंक की निवल मालियत का स्तर वह है जो सामान्य परिचालनों के दौरान, बैंक अपने नीति लक्ष्यों की पूर्ती में सक्षम होगा तथा सत्ता से अपनी वित्तीय स्वतंत्रता बनाए रख सकेगा' (स्टेला 2002)

8.20 एक मुद्रा जिस पर साहित्य में विस्तृत रूप से चर्चा हुई है, 'वित्तीय विवरणियों' का प्रस्तुतिकरण है, जो केंद्रीय बैंक के लिए पारदर्शिता और जबाबदेही की बाध्यताजनिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए है (सुजीवन, 2003; अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, 2000; कैपीएटएल,1994)। मूल्यांकन मानदंड और लेखा प्रथाएं अभी भी केंद्रीय बैंकों के मध्य अलग अलग हैं। केंद्रीय बैंक अभी भी अंतरराष्ट्रीय लेखा मानकों जो वाणिज्यिक वित्तीय इकाइयों पर लागू हैं, को कार्यान्वित करने को सहमत नहीं हैं। तथापि कुछ केंद्रीय बैंकों ने अपने स्वयं के लेखांकन और रिपोर्टिंग मानकों को अपना लिया है जो मोटे रूप से अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप हैं। अलावा इस तथ्य के कि कुछ प्रावधानों को संशोधित किया गया है देश विशिष्ट की आवश्यकताओं के अनुरूप अपनाया गया है तथा लाभ सरलता प्रदान करते हैं (मार्टीनेज-रेसेनो, 2004; फोस्टर, 2004)। साहित्य में केंद्रीय बैंक द्वारा निष्फलता परिचालनों और बैंकिंग संकट के समय सर्मथन प्रदान करने पर तहकीकात की गई है। खास तौर से, इस प्रकार के प्रचलन, जो भार मध्यावधि के दौरान केंद्रीय बैंक पर डालेंगे, उसके दृष्टिकोण से इनकी निरंतरता पर। (स्टेला, 2002)। केंद्रीय बैंकरों के लिए जोखिम

प्रबंध, वित्तीय बाज़ारों में अनिश्चित और अस्थिर आर्थिक परिवेश में एक मुश्किल कार्य है, जो उल्लेखनीय रूप से केंद्रीय बैंक के वित्तीय निष्पादन को प्रभावित करते हैं (फोस्टर 2004)। जब कि, केंद्रीय बैंकों के विदेशी भंडारों के जोखिम प्रबंध पर ध्यान केंद्रित है, अन्य वित्तीय और परिचालनगत जोखिमों का अभिनिर्धारण, मापन और प्रबंध कम महत्व का नहीं माना जाता। बड़े केंद्रीय बैंकों द्वारा, जोखिम प्रबंध प्रक्रियाएं विकसित की गई हैं तथा उन्हें उपयुक्त प्रकार से कारपोरेट गवर्नेंस में अंतरित कर लिया गया है।

II. पार-देशों के अनुभव-शैलीगत तथ्य

8.21 जब कि मूलभूत रूप से केंद्रीय बैंकों के तुलन-पत्रों में समानता के तत्व हैं, वे विशिष्ट प्रतिबिंबित अंतरों के संदर्भ में परिचालनों में असहमति भी दर्शाते हैं जैसे मुद्रा या ऋण प्रबंध तथा मौद्रिक नीति के उद्देश्य। वे आकार और गठन में भी अंतर दर्शाते हैं। इसके अलावा, केंद्रीय बैंक और सरकार के बीच संस्थागत व्यवस्थाओं पर निर्भर करते हुए लाभ अंतरण की पद्धति और विस्तार में उतार-चढ़ाव हैं। वित्तीय विवरणियों में भी लेखांकन नीतियों और प्रकटन मानदंडों के संदर्भ में अंतर होता है।

केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र का आकार

8.22 केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र का आकार मुख्य रूप से उसके कार्यकारी दायित्वों जिसमें मौद्रिक नीति उद्देश्यों, परिचालनगत प्रथाओं, तथा अर्थव्यवस्था में वित्तीय बाज़ारों के विकास की दशा को प्रतिबिंबित करता है। अतः तुलन-पत्र का आकार, केंद्रीय बैंकों के बीच अलग-अलग होता है (सारणी 8.4)।

सारणी 8.4 केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र का आकार

केंद्रीय बैंक	संदर्भ तिथि	कुल देयताएं (जीडीपी के प्रतिशत के रूप में)
1	2	3
आस्ट्रेलिया	30 जून 2005	10.1
ब्राजील	31 मई 2005	28.3
कनाडा	31 दिसंबर 2004	3.6
जर्मनी	31 दिसंबर 2004	13.3
भारत	30 जून 2005	21.9
जापान	31 मार्च 2005	29.8
कोरिया	31 दिसंबर 2004	32.5
मलेशिया	31 दिसंबर 2004	63.6
पुर्तगाल	31 दिसंबर 2004	22.8
रुस	31 दिसंबर 2004	17.0
सिंगापुर	31 मार्च 2005	10.3
दक्षिणी अफ्रीका	31 मार्च 2005	9.4
स्वीडन	31 दिसंबर 2004	7.2
संयुक्त राज्य अमेरिका	31 दिसंबर 2004	6.9

स्रोत : संबंधित केंद्रीय बैंकों के तुलन-पत्र

केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र का गठन दायित्व

देयताएं

8.23 केंद्रीय बैंक द्वारा जारी नोट विशिष्ट रूप से प्रमुख देयताएं होती हैं। केंद्रीय बैंक के पास बैंकों की शेष जमाराशि, जो केंद्रीय बैंक की दूसरी सर्वाधिक महत्वपूर्ण मौद्रिक देयता है, 'स्वैच्छिक' या 'अनिवार्य' स्वरूप के बारे में एक आभास प्रदान करती है। न्यूजीलैंड, हांगकांग,मैक्सिको,आस्ट्रेलिया और स्विटजरलैंड बैंकों पर नकदी रिज़र्व अपेक्षाएं नहीं लगाते। कुछ देशों में केंद्रीय बैंक द्वारा रिज़र्व अपेक्षाओं में परिवर्तन के लिए सरकार का अनुमोदन चाहिए, जब कि अन्य में यह प्राधिकार केंद्रीय बैंक के पास है। इसी प्रकार, राजकोषीय जमाएं,केंद्रीय बैंक और सत्ता(राजकोष) के बीच बैंकिंग संबंधों में लाक्षणिक है।[3] राजकोषीय जमाएं अनिवार्य रूप से केंद्रीय बैंक के पास रखा जाना जरूरी नहीं है। इसके अतिरिक्त, अनेक देशों में इन जमाओं को प्रतिफलित करने की कोई एक समान प्रथा प्रचलित नहीं है। जापान, संयुक्त राज्य अमेरिका, दक्षिण अफ्रीका और रुस में जमाओं पर कोई प्रतिफल नहीं दिया जाता। केंद्रीय बैंक द्वारा प्रदान की जाने वाली राजकोषीय एजेन्ट सेवाओं के लिए कुछ भी भुगतान न करने की प्रथा भी है (जर्मनी और नीदरलैंड), संयुक्त राज्य अमरीका में राजकोषीय विभाग, कानूनन अनुमत है, लेकिन इन सेवाओं के लिए भुगतान अपेक्षित नहीं है। इन जमा शेषों के अतिरिक्त, देश विशिष्ट प्रथाओं के उदाहरण हैं, जैसे बैंक ऑफ़ कोरिया के पास भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा स्थिरीकरण कोष जमाएं हैं। कुछ ऐसे भी उदाहरण हैं जहाँ केंद्रीय बैंक सरकार को ऋण उपलब्ध कराने के लिए विदेशी मुद्रा संसाधन जुटाने के लिए मध्यस्थ की भूमिका का निर्वाह करता है (अर्जेन्टिना तथा चिली) (सारणी 8.5)

केंद्रीय बैंक पेपर

8.24 केंद्रीय बैंक की स्वयं की देयताओं का मुद्दा अक्सर बैंकों को संकट के समय प्रदान किए गए उधारी समर्थन के साथ सहचारी है (चिली और इंडोनेशिया) या अधिक पूंजी अंतर्वाह के प्रभाव के विरुद्ध निष्फल पहल से। केंद्रीय बैंक अर्जेन्टिना, एक मौद्रिक अवशोषण उपाय के रूप में अपनी स्वयं की प्रतिभूतियाँ जारी करता है। प्रतिभूतियाँ अर्जेन्टिना

[3] कुछ केंद्रीय बैंकों का सरकारी जमाओं पर नियंत्रण है।बैंक ऑफ़ कानाडा वाणिज्य बैंकों से सरकारी जमाओं को अपने पास अंतरित कर सकता है,सरकारी जमाएं, केंद्रीय बैंक के बाहर केवल प्राधिकृति के बाद ही रखी जा सकती हैं। बेलजियम द्वारा सरकारी जमाओं पर सीमा लगायी गई है,जो सरकार के पूर्व वर्ष के राजस्व से जुड़ी है।

सारणी 8.5: चयनित केंद्रीय बैंकों की प्रमुख देयताएं

(कुल देयताओं का प्रतिशत)

केंद्रीय बैंक	संदर्भ तिथि	मुद्रा	बैंकों और वित्तीय संस्थाओं की जमाएं	सरकारी की जमाएं	केंद्रीय बैंक पेपर	प्रतिभूतियां जो पुनः खरीद संविदा के अंतर्गत बेची गई*
1	2	3	4	5	6	7
अर्जेन्टिना	31 दिसंबर 2004	23.9	9.4	0.1	13.1	0.0
आस्ट्रेलिया	30 जून 2005	41.9	1.5	31.7	0.0	9.7
कनाडा	31 दिसंबर 2004	94.7	1.1	2.3	0.0	0.0
चिली	31 दिसंबर 2003	12.1	1.1	0.8	82.7	0.0
भारत	30 जून 2005	55.4	18.3	10.6	0.0	0.0
इंडोनेशिया	31 दिसंबर 2004	19.5	12.6	7.7	22.1	0.0
जमैयका	24 अगस्त 2005	10.7	9.4	7.8	64.8	0.0
जापान	31 मार्च 2005	49.6	24.0	5.0	0.0	16.2
मलेशिया	31 दिसंबर 2004	11.4	43.8	9.0	5.9	9.8
मैक्सिको	31 दिसंबर 2004	36.0	24.6	11.9	24.6	0.0
रुस	31 दिसंबर 2004	40.8	19.8	21.7	0.2	0.0
सिंगापुर	31 मार्च 2005	8.0	3.9	52.1	0.0	0.0
दक्षिणी अफ्रीका	31 मार्च 2005	38.4	17.7	1.6	10.1	5.6
स्वीडन	31 दिसंबर 2004	59.6	0.3	0.0	0.0	0.0
संयुक्त राज्य अमेरिका	31 दिसंबर 2004	88.7	3.0	0.7	0.0	3.8

* कुछ मामलों में ये विवरण अलग से उपलब्ध नहीं हैं।
स्रोत : संबंधित बैंकों के तुलन-पत्र

पीसोज और अमेरिकी डॉलर में 2002 से जारी की गई हैं। इन प्रतिभूतियों के एक हिस्से को, मई 2004 से मौद्रिक विनियमन यंत्र के रूप में पुनर्खरीद संविदा के रूप में प्रयोग करने की अनुमति प्रदान की गई है। हांगकांग में, केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियां एक न्यूनतम मानदंड प्रतिफल वक्र की स्थापना के विचार से, कारपोरेट ब्रॉइंड बाज़ार को विकसित करने और साथ ही, सरकारी अधिशेष अतिरिक्तता के कारण सरकारी पेपर की उपलब्धता के अभाव में, खुले बाजार परिचालनों के यंत्र के रूप में जारी किए गए (हॉकिन्स, 2004)। केंद्रीय बैंक कागज प्रचालन कोरिया, इंडोनेशिया, अर्जेन्टिना, चिली, थाईलैंड, यू.के., दक्षिणी अफ्रीका और मैक्सिको में महत्वपूर्ण रहा है (सारणी 8.6)।

सारणी 8.6: चयनित केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र में बैंक पेपर

केंद्रीय बैंक	लिखत	कुल देयताओं में केंद्रीय बैंक पेपर का प्रतिशत हिस्सा
1	2	3
अर्जेन्टिना	केंद्रीय बैंक प्रतिभूतियाँ	13.1
ब्राजील	स्वयं द्वारा जारी ऋण प्रतिभूतियाँ	2.4
चिली	केंद्रीय बैंक बांड/सूचक प्रतिज्ञा पत्र/सूचक कुल/जमा प्रमाण पत्र	82.7
भारत	—	–
इंडोनेशिया	बैंक इंडोनेशिया प्रमाण पत्र	22.1
कोरिया	मुद्रा स्थरीकरण बांड	56.4
मलेशिया	बैंक नेगेरा पेपर	5.9
मैक्सिको	मैक्सिको नियमन बांड	24.6
दक्षिणी अफ्रीका	रिजर्व बैंक प्रमाण पत्र (आरक्षित) बाजार को 28 या 56 दिनों के लिए जारी किए गए	10.1
थाईलैंड	बैंक ऑफ़ थाईलैंड बांडस्	25.1@
यूके	ऋण प्रतिभूतियाँ	26.7@

@ बैंकिंग विभाग की कुल देयताओं का प्रतिशत
टिप्पणी : आंकडे 2004 से संबंधितहैं, अलावा ब्राजील और दक्षिणी अफ्रीका के जो 2005 के हैं।

8.25 अनेक मामलों में, केंद्रीय बैंक पेपर जारी किए जाने के माध्यम से, विदेशी मुद्रा निष्फलता हस्तक्षेप के, केंद्रीय बैंक की लाभप्रदता पर प्रभाव के दृष्टिकोण से गंभीर निहितार्थ रहे हैं। (उदाहरण - वेनेजुएला, चिली, उरुगवे और पुर्तगाल) वास्तव में, केंद्रीय बैंक पर ब्याज खर्चों और अनेक मामलों में तत्जनित हानियों से सृजित भार ने केंद्रीय बैंक के ऋण प्रचालन की निरंतरता के बारे में अनेक चिंताएं पैदा की हैं। अनेक लैटिन अमेरिकन देशों में केंद्रीय बैंक पेपर का सरकारी पेपर द्वारा स्थानापन्न किया जाना, प्रतिकारक प्रतिसाद को प्रतिबिंबित करता है। ऊरुगवे में, 1980 के उत्तरार्ध में, केंद्रीय बैंक द्वारा इसके अपने बिलों का खजाना बिलों से खुले बाज़ार परिचालन के संपादन ने बदलना शुरू किया। यह प्रक्रिया 1993 के अंत में पूर्ण हुई जो खुले बाजार परिचालनों की लागत को खज़ाना में अंतरित करने में परिणामित हुई। इसी प्रकार, ब्राजील के राजकोषीय जवाबदेही कानून के अंतर्गत केंद्रीय बैंक द्वारा उसके अपने ऋण जारी करने को मई 2002 से प्रभावित समाप्त करना अपेक्षित था, तथा केवल सरकारी प्रतिभूतियों को ही सभी मुद्रा परिचालनों के लिए प्रयोग में लेना था।

आस्तियां

8.26 आस्तियों का गठन, अंतरराष्ट्रीय तुलना में घरेलू के संदर्भ में, केंद्रीय बैंक की घरेलू मुद्रा के बाह्य मूल्य के नियंत्रण की भूमिका सांकेतिक है या विदेशी मुद्रा विनिमय दर स्थायित्व का प्रबंध।

8.27 संयुक्त राज्य अमेरिका में, विदेशी मुद्रा विभाग मौद्रिक नीति की रचना और निष्पादन के लिए उत्तरदायी है, लेकिन यह यूएस राजकोष और संघीय रिज़र्व प्रणाली के लिए सभी विदेशी मुद्रा व्यापर, फेडरल खुले बाजार समिति और राजकोष के निर्देश पर करता है। इसके अतिरिक्त अमरीकी खजाना, संघीय रिज़र्व प्रणाली के परामर्श से विदेशी मुद्रा दर नीति तैय करता है। इसके विपरीत न्यूजीलैंड और चिली के केंद्रीय बैंकों को स्पष्ट रूप से उनकी मुद्रा के घरेलू और बाहरी मूल्य को बनाए रखने का दायित्व सौंपा गया है।[4] अनेक मामलों में, राजकोष या अन्य सरकारी संगठन, विदेशी मुद्रा आस्तियों को अपने स्वयं के पोर्टफोलियो में रखते हैं (कनाडा, संयुक्त राज्य अमेरिका, न्यूजीलैंड, जापान)। जापान में, बैंक ऑफ़ जापान की कुल रिज़र्व धारिताएं इसकी कुल आस्तियों का केवल 3.3 प्रतिशत थीं। दक्षिणी अफ्रीकन रिज़र्व बैंक अपने तुलन पत्र में स्वर्ण और विदेशी मुद्रा को धारित करता है, लेकिन जोखिम दक्षिणी अफ्रीकी सरकार द्वारा वहन की जाती है।[5] इन विविध प्रथाओं को दर्शाते हुए, इन केंद्रीय बैंकों की अंतरराष्ट्रीय आस्तियों का हिस्सा इनकी कुल आस्तियों से अपेक्षाकृत कम है (उदाहरणार्थ, बैंक ऑफ़ इंग्लैंड, फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ न्यूयार्क (यूएसए), बैंक ऑफ़ जापान, बैंक ऑफ़ कनाडा)। दूसरे चरण बिंदु पर, ऐसे भी केंद्रीय बैंक हैं जो बड़ी मात्रा में अंतरराष्ट्रीय आस्तियाँ धारित करते हैं, जिनमें से कुछ इन भंडारों से उनकी विदेशी मुद्रा निनिमय दर नीति को समर्थन प्रदान करते हैं। (सारणी 8.7)

8.28 खजाना को संस्थागत और कार्यकारी व्यवस्था में वित्तीय समर्थन के विषय में, व्यापक रूप से भिन्नताएं हैं, यद्यपि इन क्षेत्रों में केंद्रीय बैंकों को प्रदान की गई बढ़ती हुई स्वतंत्रता पार देशों में केंद्रीय बैंक निधियन में घटते हिस्से का प्रकटीकरण करती है। सरकार को उधारी (ऋण, ओवर ड्राफ्ट तथा प्राथमिक बाज़ार में बांड खरीद) संवैधानिक रूप से ब्राजील, चिली, पेरू और पोलेंड में अनुमत नहीं है।[6] सरकार

सारणी 8.7 : चयनित केंद्रीय बैंकों की प्रमुख आस्तियाँ

(कुल आस्तियों का प्रतिशत)

देश	स्वर्ण, अंतरराष्ट्रीय भंडार और अन्य विदेशी आस्तियां	बैंकों / अन्य संस्थाओं को ऋण व अग्रिम	सरकार पर दावे	प्रतिभूतियाँ जो पुनर्विक्रय करार के अंतर्गत खरीदी गई*
1	2	3	4	5
अर्जेन्टिना	37.1	13.2	13.7	0.0
आस्ट्रेलिया	73.5	0.0	0.0	0.0
कनाडा	1.1	0.0	92.4	5.4
चिली	60.9	3.1	0.0	4.1
भारत	83.8	0.6	0.1	0.0
इंडोनेशिया	45.3	2.3	42.6	0.0
जैमायका	57.0	0.0	36.1	0.0
जापान	3.3	25.0	65.9	3.5
मलेशिया	89.0	3.7	0.1	6.2
मैक्सिको	73.0	13.5	0.0	0.0
रुस	85.4	0.6	11.6	0.0
सिंगापुर	95.9	0.0	3.5	0.0
दक्षिणी अफ्रीका	76.7	0.0	10.3	10.5
स्वीडन	79.4	0.0	0.0	9.3
संयुक्त राज्य अमेरिका	4.3	0.0	89.5	4.1

* कुछ मामलों में ये विवरण अलग से उपलब्ध नहीं है।

टिप्पणी : संबंधितदेशों के केंद्रीय बैंकों के आंकडों की तिथियाँ वही है जो सारणी 8.4 में दिखाई गई है।

स्रोत : संबंधित बैंकों के तुलन-पत्र

4 हांगकांग में विदेशी भंडार विदेशी मुद्रा कोष में रखे जाते हैं, लेकिन भंडारों का प्रबंध हांगकांग मौद्रिक प्राधिकृति के पास होता है। कनाडा में, अंतरराष्ट्रीय रिज़र्व, सरकार के विदेशी विनिमय फंड खाते में आस्तियों के रूप में रखे जाते हैं। न्यूजीलैंड में, केंद्रीय बैंक विदेशी मुद्रा आस्तियाँ रखता है ताकि विदेशी मुद्रा विनिमय बाज़ार में हस्तक्षेप में समर्थ हो सके।

5 बैंक द्वारा 'स्वर्ण और विदेशी मुद्रा आकस्मिकता रिजर्व खाता' रखा जाता है जिसमें दक्षिणी अफ्रीकी सरकार द्वारा बैंक को देय राशि जो स्वर्ण और विदेशी मुद्रा सौदों पर वसूले गए लाभों और हानियों के बारे में होती है। देय राशि बयाज मुक्त है और भुगतान शर्तें राष्ट्रीय कोष और बैंक के बीच समझौते के अधीन हैं।

को ऋण या तो संविधान अथवा कानून द्वारा, चीन, इंडोनेशिया, मैक्सिको, हंगेरी, रुस, टर्की, यूरो क्षेत्र, यूनाइटेड किंगडम (मास्ट्रिच संधि के अंतर्गत) और संयुक्त राज्य, में प्रतिबंधित है[7] (हाकिन्स 2003)। राजकोषीय अनुशासन की पहल जिनकी चरम परिणिति यूरो क्षेत्र में स्थायित्व और वृद्धि समझौते में न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया तथा अनेक अन्य देशों में राजकोषीय समेकन में, सरकार को केंद्रीय बैंक द्वारा उधारी समर्थ की घटती निर्भरता की ओर इशारा करती है।[8] केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को उधारी पर सीमा लगाने की प्रथा आमतौर से केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता की संस्थागत गारंटी मानी जाती है। यद्यपि कुछ केंद्रीय बैंकों द्वारा इस सीमा में नियमित अंतरालों पर उर्ध्वमुखी संशोधन किया जाता है, यह प्रथा अपने आप में राजकोषीय अनुशासन को विश्वसनीयता प्रदान करती है। केंद्रीय बैंकों के गैर-बैंक निजी क्षेत्र के दावे लगभग नगण्य है। ब्राजील के केंद्रीय बैंक के पास, इसके तुलन पत्र में बड़ी मात्रा में निजी क्षेत्र के दावे धारित हैं।

तुलन पत्र प्रबंध में पूंजी और भंडारों (रिज़र्व) की भूमिका

8.29 अंतरराष्ट्रीय रूप से, केंद्रीय बैंकों के पूंजी और रिजर्व पर्याप्तता के मुद्दे अभी तक तय नही हैं, तथा देशों में व्यापक रूप से अपनाई जा रही विभिन्न प्रथाएं इस क्षेत्र में किसी स्पष्ट दिशा की ओर इंगित नहीं करती। चयनित केंद्रीय बैंकों की पूंजी और रिजर्व स्थिति पर आधारित एक विश्लेषण से पता चलता है कि पूंजी और रिजर्व का कुल देयताओं से अनुपात 0.10 प्रतिशत से 38.0 प्रतिशत के बीच की श्रेणी में रहता है। बड़े उतार-चढ़ावों को न तो विदेशी मुद्रा विनिमय व्यवस्था ओर न ही अन्य आर्थिक कारकों के संदर्भ में स्पष्ट किया जा सकता है, नामतः स्वामित्व ढाँचे, राजकोषीय घाटा, विनिमय दर नीतियों का न्यून/अधिक मूल्यांकन/ रिज़र्व स्तर की पर्यापतता पर केंद्रीय बैंकों के बीच एकमतता की कमी प्रतीत होती है। इसका अनुमान इस तथ्य से भी लगाया जा सकता है कि केंद्रीय बैंकों की पूंजी और रिज़र्व स्थिति पर कोई अंतरराष्ट्रीय मानदंड नहीं हैं। तथापि, केंद्रीय बैंक के भंडारों (रिजर्व) के स्तर के निर्धारकों का अभिनिर्धारण, आस्तियों के गठन, खुलेपन की अवस्था, विदेशी मुद्रा दर व्यवस्था, सहचारी जोखिमों और उपलब्धा बचाव तंत्र, मौद्रिक नीति का प्रकार और प्रयुक्त हस्तक्षेप उपायों, विदेशी मुद्रा विनिमय और ब्याज दरों में उतार-चढ़ाव में गति, आ रहे अन्य परिचालनगत और वित्तीय जोखिम, तथा वित्तीय स्थायित्व चिंताओं के रूप में किया गया है। केंद्रीय बैंक के भंडार (रिजर्व) आम तौर से एक नियत स्तर पर निर्धारित किए जाते हैं जो निरपेक्ष (बैंक ऑफ़ कनाडा) या तुलनात्मक रूप में होते हैं (तुलन पत्र के कुछ अवयवों से जुड़े हुए, नामतः बैंक ऑफ इंडोनेशिया के मामले में मौद्रिक देयताएं) ऐसे भी मामले है जहाँ केंद्रीय बैंक के भंडार (रिज़र्व) समष्टि आर्थिक उतार-चढ़ाव नामतः सकल घरेलू उत्पाद (बैंक ऑफ़ मैक्सिको) अथवा केंद्रीय बैंक की शोध-क्षमता के कुछ मापक के शर्ताधीन होते हैं।

8.30 गत दिनों की गतिविधियाँ केंद्रीय बैंक की वित्तीय दृढ़ता बनाए रखने के लिए पूंजी और भंडारों (रिज़र्व) का पर्याप्त स्तर बनाए रखने की वरीयता दर्शाती हैं। उदाहरण के लिए, बैंक ऑफ़ जापान का विचार है कि इसका पूंजी पर्याप्तता अनुपात (पूंजी आधार जिसमें भंडारों और प्रावधानों, जिसमें जारी किए गए बैंक नोटों के अवधि औसत अनुपात शामिल होंगे) का लगभग 10 प्रतिशत होना चाहिए। तथापि संयुक्त राज्य अमेरिका का संघीय रिज़र्व और बैंक ऑफ़ कनाडा, अभी भी बहुत न्यून पूंजी धारित किए हैं। दोनों ही मामलों में, अंतरराष्ट्रीय भंडार मुख्यतः 'विदेशी मुद्रा स्थरीकरण कोष' अथवा 'विदेशी मुद्रा कोष खाते' में रखे जाते हैं, न कि केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र में। नार्वे में तेल बिक्री की राशि एक अलग सरकार/एजेन्सी द्वारा रखी जाती है। इस स्थिति के मद्देनजर जो विचार उभरकर आता है वह है कि, वे केंद्रीय बैंक जो अपने तुलन-पत्र में रिज़र्व आस्तियाँ धारित नहीं करते, वे विदेशी मुद्रा विनिमय जोखिम के प्रति कम उद्घासित होते हैं, अतः उन्हें तुलनात्क रूप से कम पूंजी और भंडार (रिज़र्व) की आवश्यकता होती है और इससे उलट। इसके विपरीत, उन केंद्रीय बैंकों की पूंजी आवश्यकताएं अधिक होनी अपेक्षित होंगी जिन्हें, अर्ध-राजकोषीय कार्यकलाप सौंपे गए हैं, यह सुनिश्चित करने के लिए कि इस प्रकार की गतिविधियों से उपजित संभावित हानियाँ उनकी मौद्रिक नीति उद्देश्यों में हस्तक्षेप नहीं करती हैं।

8.31 केंद्रीय बैंक व्यवहारों से यह उद्घटित होता है कि अनेक केंद्रीय बैंक, सामान्य रिज़र्व के अतिरिक्त पुनर्मूल्यन रिज़र्व रखते हैं, जैसा कि विधि द्वारा निर्धारित हो अथवा अपने स्वयं के विवेकाधीन (सारणी 8.8)।

8.32 कतिपय देशों में, यद्यपि वे विरल ही हैं, केंद्रीय बैंकों के स्टॉक बाज़ारों में (व्यापार) क्रय-विक्रय होते हैं। इन देशों में, केंद्रीय बैंकों के स्टाक के बारे में बाज़ार की प्रतिक्रिया, रोचक निष्कर्षों का अनावरण करती हैं (बाक्स VIII)।

6 चिली में केंद्रीय बैंक द्वारा द्वितीयक बाज़ार में बांड खरीद भी सांविधिक रूप से निषेधित है, जो इसे उन देशों की श्रेणी में ला देता है जहाँ सरकार को निधियन पर अति कठोर कानूनी प्रतिबंध हैं।

7 यूएस बजट इनफोर्समेन्ट कानून 1990, राजकोषीय अनुशासन की ओर एक प्रयास था। तथापि सरकारी निधिकरण, द्वितीयक बाज़ार से बांड खरीद माध्यम से जारी है तथा राजकोष को वित्तपोषण संघीय रिज़र्व की आस्तियों की ओर एक महत्वपूर्ण मद है।

8 केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को ऋण पर दबाव, ओवरड्राफ्ट पर प्रतिबंध, स्थायी अवधि ऋण और अग्रिम और प्राथमिक बाज़ार से प्रतिभूतियों की खरीद के माध्यम से लाए जाते रहे हैं, जबकि द्वितीयक बाज़ार से प्रतिभूतियों की खरीद, पुनर्खरीद करार और केंद्रीय बैंक में जमाओं को विवेकाधीन अनुमत किया गया है।

सारणी 8.8: केंद्रीय बैंकों का पूंजी खाता

(कुल देयताओं का प्रतिशत)

देश	पूंजी
1	2
आस्ट्रेलिया	11.3
ब्राजील	2.0
कनाडा	0.1
जर्मनी	11.2
भारत	15.0
इंडोनेशिया	16.8
इटली	19.0
जापान	3.5
कोरिया	2.3
मलेशिया	18.1
पुर्तगाल	13.3
रुस	4.6
सिंगापुर	9.2
दक्षिणी अफ्रीका	4.0
स्वीडन	35.7
स्विटजरलैंड	38.0
थाईलैंड	4.9
युके	7.2
यूएसए	2.9

टिप्पणी : आंकडे 2004 से संबंधित है अलावा आस्ट्रेलिया, ब्राजील, भारत और दक्षिणी अफ्रीका के जो 2005 से संबंधित हैं।

लाभ का वितरण

8.33 सरकार को केंद्रीय बैंक के लाभ का वितरण, लगभग सार्वभौम है तथा केंद्रीय बैंक के स्वामित्व ढाँचे से स्वतंत्र भी है। विभिन्न देशों में प्रथाओं में अंतर है, इस सीमा तक कि, कुछ मामलों में सरकार को लाभ का वितरण प्रथम प्रभार है तथा जो पूर्व-निर्धारित दरों पर होता है, जो अधिशेष के हिस्से, कुल आस्तियों। चयनित आस्तियों/देयताओं, प्रदत्त पूंजी या अन्य कोई मानदंड, केंद्रीय बैंक या इसके बोर्ड के पास बिना किसी विवेकाधिकार के, से जुड़ा होता है। जब कि अन्य मामलों में, केंद्रीय बैंक के लाभ का वितरण, इस विषय में केंद्रीय बैंक के विधान के अनुसार, रिज़र्व में अंतरण के पश्चात ही केवल किया जा सकता है अथवा केंद्रीय बैंक /सरकार के विवेकाधीन (अनुबंध VIII-1) उन देशों में भी जहाँ केंद्रीय बैंक के मुनाफे के आबंटन में केंद्रीय बैंक रिज़र्व का प्रथम प्रभार होता है, सरकार को आबंटित लाभ भी काफी बड़ा होता है। दूसरे अंतिम छोर पर, कतिपय केंद्रीय बैंकों द्वारा उनके रिज़र्व / प्रावधानों का उपयोग, नकारात्मक परिचालनगत मुनाफे के वर्षों में, राजकोष को लाभांश वितरण में भी किया गया है (नामतः पुर्तगाल, चेक नेशनल बैंक, कोरिया)[9]

8.34 केंद्रीय बैंकों पर विशिष्ट रूप से, गैर-सरकार जनता को राशि अंतरण पर सांविधिक रोक है। बैंक ऑफ़ जापान द्वारा अपने अंशधारियों को लाभांश भुगतान उनकी अधिशेष आय का 5 प्रतिशत नियत है। बैंक ऑफ़ बेल्जियम, बैंक ऑफ़ ग्रीस, स्विस नैशनल बैंक और सेन्ट्रल बैंक ऑफ़ टर्की में भी शर्तें हैं जो गैर-सरकार अंशधारियों को अधिशेष आबंटन को सीमित करती हैं। नोट जारी करने वाले प्राधिकारी होने के नाते केंद्रीय बैंक अपने मुनाफे को सरकार को प्रेषित करते हैं, चाहे वे निजी क्षेत्र के स्वामित्व में हों (नामतः दक्षिणी अफ्रीका रिज़र्व बैंक)। भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा अपने प्रारंभिक कार्यपरिचालन के वर्षों, अर्थात निजी अंशधारित समय, में निजी अंशधारियों को पूंजी के 3.5 प्रतिशत की दर से लाभांश दिया गया (शेष अधिशेष सरकार को अंतरित किया गया) तथा जो जून 1943 से 4 प्रतिशत कर दिया गया, जो 'जनवरी 1949 तक, जब रिज़र्व बैंक का राष्ट्रीयकरण हुआ अपरिवर्तित रहा। लाभांश पर सीमाएं यह सुनिश्चित करने के लिए इच्छित थी, कि रिज़र्व बैंक के व्यावसायिक कार्यकलाप लाभ के विचार से संचालित नहीं किए जाते हैं।

बाक्स VIII.1
केंद्रीय बैंक स्टाक्स का बाज़ार निष्पादन

केंद्रीय बैंकों की पूंजी विशिष्ट रूप से सरकार द्वारा अभिदत्त होती है (कतिपय मामलों में वाणिज्य बैंकों द्वारा भी) तथा केंद्रीय बैंक के स्टाक आमतौर से व्यापार योग्य नहीं होते। तथापि कुछ देशों के मामले में नामतः बेल्जियम और जापान, के केंद्रीय बैंकों के स्टाकों का क्रमशः ब्रुसेल्स और टोकियो शेयर बाजार में व्यापार होता है, जो इस विरल संभावना को जन्म देता है, जहाँ केंद्रीय बैंक का स्वामित्व जनता के पास हो सकता है तथा पूंजी बाज़ार एक सरकारी एजेन्सी का मात्रात्मक मूल्यांकन भी प्रस्तुत कर सकता है।

केंद्रीय बैंक के स्टाक प्रतिलाभ की प्रयोगसिद्ध जांच, इसके शेयर बाज़ार प्रतिलाभ से रेखीय संबंधों, बैंक विशिष्ट कारकों और समष्टि अर्थशास्त्र कारकों को मानकर बेल्जियम और जापान के केंद्रीय बैंकों के स्टाक का निष्पादन उनके संबंधितशेयर बाज़ार सूचकांको के मुकाबले न्यून निष्पादक रहे हैं। इन दो केंद्रीय बैंकों के स्टाक जोखिम समायोजन आधार पर भी न्यून निष्पादक पाए गए। प्रयोग सिद्ध जांच से पता चलता है कि केंद्रीय बैंक के स्टाक पर प्रतिफल निर्धारण में आंकडागत रूप से महत्वपूर्ण कारक है, वह है, शेयर बाज़ार प्रतिफल। यद्यपि समष्टि अर्थशास्त्र परिवर्तक जैसे बेरोजगारी दर, डॉलर विनिमय दर और औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि एकल परिवर्तक संदर्भ में महत्वपूर्ण संबंध बताते हैं, बहु-परिवर्तक विश्लेषण में न तो केंद्रीय बैंक की आस्तियाँ और न ही समष्टि आर्थिक कारक ही केंद्रीय बैंक स्टाक प्रतिफल के महत्वपूर्ण निर्धारक हैं। बैंक ऑफ़ जापान के स्टाक मूल्य पर कतिपय समष्टि आर्थिक घटनाओं के प्रभाव पर की जांच के लिए किया गया, एक अध्ययन भी आंकडात्मक दृष्टि से नगण्य ही सिद्ध हुआ।

स्रोत :

गोल्डबर्ग एल जी तथा रेजुअल कबीर (2002) : दी स्टॉक मार्केट परफोरमेन्सेज ऑफ़ की सेन्ट्रल बैंक्स एइंड जापान जरनल ऑफ़ इकनामिक्स और बिजनेस वा. 54।

[9] बैंक ऑफ़ थाईलैंड सरकार के देय मुनाफे के स्थिरीकरण के लिए रिज़र्व रखता है।

लेखांकन व्यवहार

8.35 अधिकांश बैंक, लेखांकन और आय और व्यय निर्धारण के लिए उपचय प्रणाली का अनुमान करते हैं।[10] अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार अनेक केंद्रीय बैंकों द्वारा अपनाएं जा रहे परम्परागत आस्ति मूल्यांकन मानकों के विरुद्ध वित्तीय लिखतों के मूल्यांकन के लिए एक उचित मापन आधार अपनाने पर जोर दिया जाता है। आस्तियों और देयताओं की परम्परागत मूल्यांकन प्रथा के अंतर्गत, जो आस्ति के मूल्य और विदेशी आस्तियों और देयताओं के मामले में सौदे की विनिमय दर जो लागत मूल्य पर आंकी जाती हैं, में आस्तियों और देयताओं के मूल्य तथा संबंधित लाभ और हानियों की पहचान आस्ति अथवा देयता के निपटान के समय ही की जाती है। (सुजीवन 2002)। केंद्रीय बैंकों द्वारा बाज़ार से किए जाने वाले मूल्यांकन सिद्धांत को अपनाए जाने के मुद्दे के विचार पर एकमतता नहीं है (अनुबंध VIII.2)। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि केंद्रीय बैंक से यह अपेक्षित है कि वे सार्वजनिक हित में कार्य करें, यह माना जाता है कि बाज़ार से मार्क करने की अनिवार्यता उन पर लागू न की जाए। तथापि, केंद्रीय बैंकों द्वारा बड़े पैमाने पर विदेशी मुद्रा विनिमय हस्तक्षेप से जुड़ी जोखिमों के परिप्रेक्ष्य में यह सुझाया जाता है कि इस मूल्यांकन सिद्धांत को अपनाया जाना उनके स्वयं के हित में है।

8.36 केंद्रीय बैंक के समक्ष उनकी वित्तीय विवरणियों को और अधिक पारदर्शी और विश्वसनीय बनाने तथा पर्याप्त लाभांश वितरण और अपनी पूंजी स्थितियों के बीच समतुलन बनाए रखने की भी चुनौती है। प्राप्त नहीं हुए लाभों को आय विवरणियों में अभिनिर्धारण करना, लाभांश वितरण की दृष्टि से समस्याएं प्रस्तुत करता है, यदि तरल आस्तियां इस प्रकार के लाभों का समर्थन नहीं करती। प्राप्त न हुए लाभों पर आधारित लाभांशों के वितरण की उनको काउन्टर आवर्ती होने के बजाय प्रो-आवर्ती होने संबंधी सीमाएं हैं। यह विचार प्रकट किया जाता है कि बाजार मूल्य आधारित लेखांकन प्रथाएं, केंद्रीय बैंक की अल्पकालिक और मध्यकालिक वित्तीय अतिसंवेदनशीलता के बीच विभाजन को और चौडा करती है (मार्टिनेज रेसेनो 2004)। इन मजबूरियों को ध्यान में रखते हुए, अधिमानित विकल्प, अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानकों(आईएएस) को उचित संशोधनों के साथ बाज़ार मूल्य विनिर्देशनों का अनुपालन करता है। उदाहरण के लिए नोर्गेस बैंक, बाज़ार मूल्य आधारित वित्तीय रिपोर्टिंग ढाँचे का सरलीकरण प्रावधानों के साथ अनुगमन करता है[11]। केंद्रीय बैंकों की यूरोपियन व्यवस्था (ईएससीबी) ने एक संशोधित उचित मूल्य लेखांकन व्यवस्था को अपनाया है जो प्राप्त न हुए लाभों और नुकसानों के आधार के लिए विवेकपूर्ण कारणों से, विषम दृष्टिकोण पर आधारित है। अर्थात अपनी वित्तीय मजबूती को नियन्त्रित करना । जबकि प्रत्येक आस्ति वर्ग की अप्राप्त हानियों को इसके लाभ-हानि विवरणों में न बदले जाने वाले रूप में अंकित किया जाता है, अप्राप्त लाभों को, देयताओं की तरफ एक पुनर्मूल्यांकन खाते में ले लिया जाता है। अनेक केंद्रीय बैंकों द्वारा यह प्रथा, जवाबदेही स्वतंत्रता सामंजस्य का एक स्वीकार्य समाधान माना जाता है। यह इसलिए भी उपयुक्त मानी जाती है कि आईएएस पद्धति के अंतर्गत प्रावधनन पद्धति में बैंकिंग रिज़र्व सृजित किया जाना प्रतिबन्धित है जो,विदेशी विनिमय उतार-चढावों की विपरीत परिस्थितियों में अतिरिक्त भंडार के रूप में काम में लिए जा सकते हैं। तथापि संघीय रिज़र्व सिस्टम और बैंक ऑफ इंगलैंड द्वारा स्वामित्व लेखांकन सिद्धांत जो भुगतानित लागत दृष्टिकोण पर आधारित है, का अपनाना जारी रखे हुए है जिसमें स्वनिर्मित सहज विशिष्टताएं हैं।

रिपोर्टिंग और प्रकटन व्यवहार

8.37 हाल के दिनों में तुलन-पत्र प्रकटन में बढ़ती हुई पारदर्शिता की प्रवृत्ति नजर आ रही है। बैंक ऑफ़ कनाडा द्वारा विभिन्न कार्यकलापों जैसे मौद्रिक नीति, मुद्रा, वित्तीय व्यवस्था, निधि प्रबंध तथा खुदरा ऋण सेवाओं द्वारा खर्चों का विवरण प्रदान किया जाता है। बैंक इंडोनेशिया अपने कार्यकलापों जैसे मौद्रिक परिचालन (विदेशी मुद्रा रिज़र्व प्रबंध, मौद्रिक बाज़ार गतिविधियाँ और ऋण वित्तपोषण) भुगतान व्यवस्था सेवाओं, बैंकिंग सेवाएं और आय, के बारे में आय और व्यय के विवरण प्रकाशित करता है। न्यूजीलैंड का रिज़र्व बैंक भी अपने कार्यकलापों के अनुसार वित्तीय विवरणियों में आय और व्यय का विवरण रिपोर्ट करता है। जबकि कुछ बैंक, आय और व्यय का गतिविधि-वार विवरण प्रदान करते हैं, बैंक ऑफ़ इंगलैंड का विचार है कि व्यवसाय इकाई का गैर-समेकित विश्लेषण अथवा भौगोलिक खंड, वित्तीय रिपोर्टिंग प्रयोजनों के लिए उपयुक्त नहीं समझा जाता है।

8.38 केंद्रीय बैंकों द्वारा उनकी वित्तीय विवरणियों में इतर तुलन-पत्र लिखतों जैसे, प्राप्त सम्पार्श्विक, अग्रिम विदेशी मुद्रा विनिमय और ब्याज दर सौदों, अभिरक्षा में रखी प्रतिभूतियों और अन्य मदों को प्रसारित करना शुरु कर दिया है (पुर्तगाल)। इतर तुलन-पत्र लिखतें जो सकारात्मक निवल बाज़ार मूलय वाली हों वे आस्तियों के रूप में तथा जो नकारात्मक मूल्य वाली हों वे स्वीडन के केंद्रीय बैंक के तुलन-पत्र में देयताओं के रूप में रिपोर्ट की जाती है (रिक्सो बैंक)। दक्षिणी अफ्रीका के केंद्रीय बैंक द्वारा अग्रिम विदेशी मुद्रा संविदा दायित्वों को कुल देयताओं के एक घटक के रूप में रिपोर्ट किया जाता है। इतर तुलन-पत्र लिखत पुनर्मूलयांकन अंतरों को 'अन्य देयताओं' में दिखाया जाता है (नामतः जर्मनी)।

[10] बैंक ऑफ़ रशिया लाभ और हानि खाते में आय और व्यय को नकदी आधार पर शामिल करते हैं।

[11] राजकोष को लाभ वितरण में उतार-चढाव से, पर्याप्त पूंजी और रिज़र्व रखने से जो कुल खुले विदेशी मुद्रा स्थिति तथा घरेलू प्रतिभूतियों की धारिताओं तथा विगत तीन सालों में धारिता खाते में अंतरित राशि के औसत वितरण से जुड़े हों, बचा जा सकता।

8.39 दी बैंक ऑफ़ इंगलैंड, दी बैंक ऑफ़ थाईलैंड और भारतीय रिज़र्व बैंक, बैंकिंग और निर्गम विभागों के लिए अलग अलग खाते बनाते हैं । बैंक ऑफ़ थाईलैंड विदेशी विनिमय उतार-चढ़ाव कोष और वित्तीय संस्थाएं विकास कोष के खातों को भी विलग करता है। दक्षिणी अफ्रीका रिज़र्व बैंक समूह (अर्थात केंद्रीय बैंक और इसकी सहायक कंपनियां) बैंक के वित्तीय विवरण अलग से प्रदान करता है, जबकि रिज़र्व बैंक ऑफ़ आस्ट्रेलिया इसकी सहायक और नियन्त्रित इकाई को समाहित करते हुए समेकित वित्तीय विवरणियाँ बनाता और प्रसारित करता है।

8.40 तथापि कार्यकलापों के अनुसार आय को रिपोर्ट करना, केंद्रीय बैंकों द्वारा वित्तीय परिणाम प्रसारित करना आम प्रचलन में नहीं है। इस प्रकार के विवरणों के अभाव में केंद्रीय बैंक के राजस्व, जो इसके एकाधिकार कार्यों से उपजित होता हो तथा नोट जारी करने से अर्जित होता है में अंतर करना संभव नहीं है। अनेक केंद्रीय बैंक, मूल्यांकन आधार को अपनाने में रूढ़िवादी बने हुए हैं और अपनी वित्तीय विवरणियों में सूचना जारी करने में कम पारदर्शी हैं। अनेक मामलों में, प्रकटन के बारे में रुढ़िवादी दृष्टिकोण को केंद्रीय बैंकों की नीतिगत प्रभावशीलता को सुनिश्चित करने की आवश्यकता के आधार पर समर्थित किया जाता है। तथापि, केंद्रीय बैंकों की बढ़ती स्वतंत्रता की प्रवृत्ति ने उन्हें सूचना के प्रसारण में जबाबदार और पारदर्शी बना दिया है, जो उनकी नीति की प्रभावकारिता तथा वित्तीय क्षेत्र स्थायित्व दृष्टिकोण के आकलन के संदर्भ में अनिवार्य मानी जाती है। अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक अब 'आर्थिक मूल्य' पर ज्यादा जोर देते हैं अपेक्षा, इकाई के परिचालनगत 'नकदी प्रवाह' के प्रभाव के। इस तथ्य के बावजूद कि केंद्रीय बैंक के पास आदेश है जो उन्हें वाणिज्यिक संगठनों से अलग करती है, उनके वित्तीय जोखिमों को देखते हुए, उनके लिए यह उचित समझा जाता है कि वे वाणज्यिक इकाईयों जैसा ढांचा ही अपनाएं। हाल की गतिविधियाँ इस बात की सूचक हैं कि केंद्रीय बैंक, वाणिज्यक वित्तीय इकाईयों पर लागू अंतरराष्ट्रीय मानकों को अपनाए जाने के पक्ष में हैं। यह इस तथ्य के बावजूद है कि केंद्रीय बैंक मुनाफा बढ़ाने वाली इकाइयां नहीं है और उनके शेयरों आमतौर से 'बाजार' मूल्य पर विनिमय नहीं किए जाते हैं।

III. भारत में केंद्रीय बैंकिंग का विकास और रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र

8.41 भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना एक निजी शेयरधारकों के बैंक के रूप में अप्रैल 1, 1935 को 'बैंक नोटों के निर्गम को विनियमित करने और भारत में मौद्रिक स्थिरता बनाए रखने की दृष्टि से आरक्षित राशियां रखना तथा आमतौर पर देश के हित में करेंसी और ऋण प्रणाली का संचालन करने' के लिए हुई (भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की प्रस्तावना)। रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार से निर्गम विभाग का नियंत्रण लिया गया तथा भूतपूर्व इम्पीरियल बैंक से लोक ऋण और सरकारी खातों का प्रबंध अपने हाथ में लिया।

8.42 रिज़र्व बैंक के प्रारंभ से ही उसकी वित्तीय स्थिति की एक स्पष्ट विशेषता रही है, (दो तुलन पत्र तैयार करना - एक निर्गम विभाग के लिए तथा दूसरा बैंकिंग विभाग के लिए। इस प्रथा का आरंभ हिल्टन यंग कमीशन (1926) की सिफारिशों से हुआ जो बैंक ऑफ़ इंगलैंड के संव्यवहार के अनुसरण में था (बॉक्स VIII.2)। तथापि बैंक, एक

बॉक्स VIII.2
हिल्टन यंग कमीशन और रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र

निर्गम और बैंकिंग विभाग का विलगीकरण, 'स्थायी न्यासी निर्गम व्यवस्था' में देखा जा सकता है, जो यूके में इसके बैंक चार्टर अधिनियम 1844 के अंतर्गत अपनाई गई। 1844 के अधिनियम में चाहा गया था कि नोट निर्गम और बैंकिंग व्यवसाय का कार्य दो अलग विभागों, निर्गम विभाग और बैंकिंग विभाग में हो। निर्गम विभाग नोटों के निर्गम और शोधन को एकमेव रूप से देखे। अधिनियम के अंतर्गत जारी किए गए और पात्र सभी नोटों के समर्थन स्वरूप इसके पास स्वर्ण रिज़र्व और राजकीय ऋण की निर्धारित राशि प्रतिभूति के रूप में रहेगा। सृजित और जनता को निर्गमित नोट, सक्रिय संचलन के घटक रहे, जबकि निर्गमित नोटों का शेष जो जनता द्वारा धारित नहीं है, बैंकिंग विभाग के रिज़र्व का हिस्सा बने। बैंकिंग विभाग को बट्टा, क्रेडिट और बैंकिंग व्यवसाय के लिए उत्तरदायी बनाया गया।

भारतीय मुद्रा और वित्त पर रॉयल कमीशन (अध्यक्ष : हिल्टन यंग) द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा अपनाए जाने के लिए एक समानुपातिक रिज़र्व व्यवस्था भी प्रस्तावित की। जबकि, अपने आप में, इस प्रकार की व्यवस्था, के लिए रिज़र्व बैंक के बैंकिंग और नोट निर्गम विभाग को अलग किया जाना जरूरी नहीं था, तुलन-पत्र का यह द्विविभाजीकरण कमीशन की टिप्पणी से प्रेरित था कि :

रिज़र्व बैंक के खाते सरलतम रूप में प्रस्तुत किए जाने चाहिए और इस विचार से यह अनिवार्य है कि नोट निर्गम के बारे में आस्तियों और देयताओं के लिए एक अलग विवरणी बनाई जाए। हमारा विचार है कि इस प्रकार का विलगीकरण नए नोट में अधिक विश्वास जागृत करेगा। यद्यपि यह मामले के निपटान का अनुपम तरीका है, ऐसा कोई सशक्त कारण नज़र नहीं आता कि इसे क्यों नहीं अपनाया जाए।

स्रोत:
दि रिपोर्ट ऑफ दि रॉयल कमीशन ऑन इंडियन करेंसी एंड फाइनान्स (चेयरमॅन : हिल्टन यंग),1926।

[12] यह नोट किया जाए कि, राष्ट्रीय लेखांकन प्रयोजन से, रिज़र्व बैंक के निर्गम और बैंकिंग विभाग अलग अलग माने जाते हैं। जबकि निर्गम विभाग 'लोक प्रशासन' का एक भाग माना जाता है, बैंकिंग विभाग 'बैंकिंग और बीमा' का घटक माना जाता है।

एकल समेकित लाभ-हानि खाता बनाता है[12]। इसके अतिरिक्त, एक अनुपम प्रथा रही है, धारा 53(1) के अंतर्गत इन दो विभागों के लिए अलग अलग, साप्ताहिक आवर्तन पर लेखा परीक्षित, खाते तैयार करना तथा उन्हें सरकार को भेजना। वार्षिक लेखा समीक्षित खाते पुनः द्विविभाजित रूप में जून के अंत में तैयार किए जाते हैं, जिसके बाद सरकार को लाभों का अंतरण किया जाता है।

8.43 हिल्टन यंग कमीशन की सिफ़ारिशों के अनुसरण में, रिज़र्व बैंक के निर्गम विभाग का तुलन-पत्र देयताओं का समर्थन 'चलन में नोट' जो मुख्य रूप से स्वर्ण सिक्के और सोना-चांदी, रुपए सिक्के, रुपए प्रतिभूतियाँ और विदेशी प्रतिभूतियों के रूप में होता है, द्वारा दिखाता है। बैंकिंग विभाग की देयताओं में शामिल हैं, प्रदत्त पूंजी, रिज़र्व कोष, राष्ट्रीय औद्योगिक क्रेडिट कोष और राष्ट्रीय आवास क्रेडिट कोष, सरकार बैंकों तथा अन्य द्वारा धारित जमाएं, भुगतान योग्य बिल तथा 'अन्य देयताएं' जिनमें रिज़र्व तथा प्रावधान शामिल हैं। बैंकिंग विभाग की आस्तियों में नकदी शेष (नोट, रुपए सिक्के और छोटे सिक्के), खरीदे गए और बट्टाकृत बिल (खजाना बिल और वाणिज्यक व्यापार बिल, घरेलू और विदेशी दोनों), विदेशों में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय इकाईयों तथा विदेशी केंद्रीय बैंकों के साथ विदेशों में रखी गई शेष जमा राशि, भारत सरकार की प्रतिभूतियों में निवेश, विदेशी प्रतिभूतियाँ, सहायक और सहयोगी संस्थाओं में शेयर तथा ऋण और अग्रिम, मूलतः नाबार्ड को सामान्य सीमा क्रेडिट (जीएलसी)I के अंतर्गत उसके द्वारा मौसमी कृषि परिचालनों हेतु वाणिज्य और राज्य सहकारी बैंकों को प्रदान किए गए ऋण के विरुद्ध, तथा जीएलसी II अन्य अनुमोदित अल्पकालीन प्रयोजनों हेतु।

8.44 बैंक के तुलन-पत्र पर वित्तीय गहनता के प्रभाव का एक महत्वपूर्ण सूचक है निर्गम से बैंकिंग विभाग तुलन-पत्र का अनुपात (चार्ट VIII.1)। निर्गम से बैंकिंग विभाग के तुलन-पत्र आकार का अनुपात जो 1970 के पूर्व में काफी गिरा, 1980 से लगभग समान बना हुआ है। जबकि बैंक के संयुक्त तुलन-पत्र का जारी नोटों का अनुपात, 1950 में सीमांत रूप से उच्च था, बैंकों के राष्ट्रीकरण के पश्चात् के चरण के दौरान इसमें निरंतर कमी दृष्टिगोचर हुई, जो बैंकिंग व्यवस्था के विस्तार को प्रतिबिंबित करता था, परिणामतः रिज़र्व बैंक के पास बैंकों के रिज़र्व में वृद्धि भी (सारणी 8.9)।

8.45 शेष भाग रिज़र्व बैंक की उभरती भूमिका और प्रमुख कार्यकलापों नामतः नोट निर्गम प्राधिकारी, सरकार के बैंकर, अन्य बैंकों के बैंकर, विकासात्मक भूमिका तथा विनिमय दर और विदेशी मुद्रा रिजर्व प्रबंध के संदर्भ में तुलन-पत्र के लिए प्रशाखन का विश्लेषण प्रस्तुत करता है। इसके इतिहास के मार्ग के दौरान रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र की बदलती रूपरेखा विभिन्न चरणों में इसके विकास को प्रतिबिंबित करती है अर्थात (1) निर्माणकारी वर्ष (1935-1949); (2) आधार चरण (1950-1967); (3) सामाजिक नियंत्रण का चरण (1968-1990 और (4) वित्तीय उदारीकरण का चरण (1991से आगे)। ये चरण रिज़र्व बैंक की भूमिका तथा इसकी सरकार तथा शेष वित्तीय व्यवस्था के साथ कार्यगत संबंधों के संदर्भ काफी विशिष्ट रहे हैं। भारत में केंद्रीय बैंकिंग की बदलती भूमिका रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र के आकार में, इसके गठन (घरेलू की तुलना में अंतरराष्ट्रीय आस्तियाँ) सरकार को समर्थन, वित्तीय व्यवस्था को वित्तपोषण की मात्रा और शर्तें, विदेशी मुद्रा भंडार का निर्माण और अंततः बैंक के आय रेखाचित्र प्रतिबिंबित होते रहे हैं। वैश्विक स्तर पर पारदर्शिता और प्रकटीकरण के क्षेत्र में हो रहे परिवर्तनों के अनुरूप रिज़र्व बैंक का तुलन-पत्र प्रकटतः लेखांकन और प्रकटीकरण की अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम प्रथाओं को अपनाने की ओर परिवर्तन प्रतिबिंबित कर रहा है। इस पृष्ठिभूमि में, इस अनुभाग में प्रत्येक चरण की अधिक विवरण सहित जांच की जाएगी।

चार्ट VIII.1: निर्गम से बैंकिंग विभाग तुलन-पत्र का अनुपात

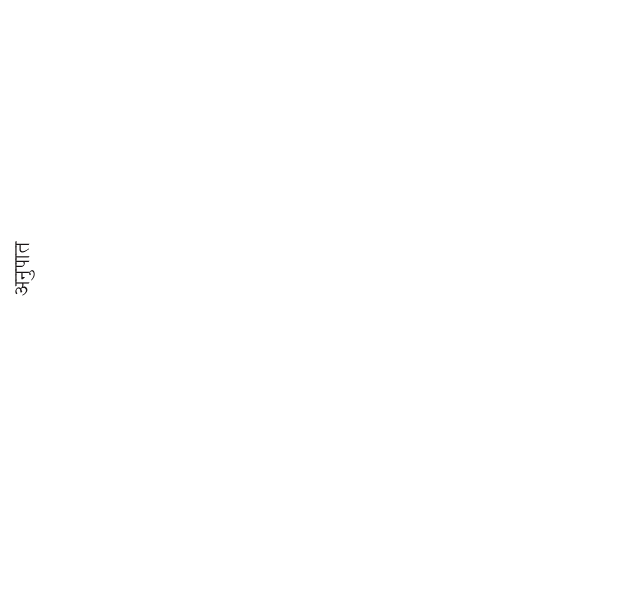

सारणी 8.9: नोट निर्गम

	नोट प्रतिशत के रूप में जारी किए गए	
चरण	रिज़र्व बैंक की कुल देयताएं	जीडीपी
1	2	3
1935-50	80.2	–
1951-60	81.5	12.1
1961-70	78.7	10.5
1971-80	64.2	9.6
1981-90	48.8	9.9
1991-00	51.5	10.4
2001-04	55.8	11.7

(i) निर्माण कारी वर्ष (1935-1949)

8.46 अपने प्रारंभ 1935 से ही रिज़र्व बैंक देश में नोट निर्गम प्राधिकारी था।[13] रिज़र्व बैंक रुपए की स्टर्लिंग के साथ विनिमय साम्यता बनाए रखने के प्रति भी उत्तरदायी था। शुरुआती चरण में सरकार की वित्तीय नीति बजटीय घाटों के विरुद्ध थी। वास्तव में, बजटीय संतुलन की प्राप्ति रिज़र्व बैंक की स्थापना की पूर्व शर्त थी। तथापि युद्ध अवधि के दौरान याने 1940-46 ऊँचे अनुपात में घाटा वित्तपोषित हुआ, जिसका परिणाम बड़ी मात्रा में मौद्रिक विस्तार हुआ जिससे मुद्रास्फीतीय दबाव बने।

नोट निर्गम प्राधिकारी

8.47 नोट निर्गम व्यवस्था की स्थापना समानुपातिक रिज़र्व व्यवस्था पर आधारित थी, जिसे रुपए 400 करोड़ की विदेशी प्रतिभूतियों तथा 115 करोड़ रुपए के स्वर्ण सिक्का और सोना-चांदी या कुल रुपए 515 करोड़ की न्यूनतम धारिताओं की व्यवस्था से 1956 में बदल दिया गया। रिज़र्व बैंक (द्वितीय संशोधन) 1957 के अंतर्गत स्वर्ण सिक्का, स्वर्ण, सोना-चांदी और विदेशी प्रतिभूतियों का समुच्च्य मूल्य निर्गम विभाग में किसी भी समय में 200 करोड़ रुपए से कम न हो, निर्धारित किया गया, जिसमें से स्वर्ण सिक्कों और सोने-चांदी का मूल्य किसी भी समय 115 करोड़ रुपए से कम नहीं होना चाहिए। ये शर्तें तब से संशोधित नहीं की गई हैं।

सरकार का बैंकर

8.48 रिज़र्व बैंक, सरकार के बैंकर के रूप में अर्थोपाय अग्रिम (डब्ल्यूएमए) 1935 से ही प्रदान करता रहा है जो सरकार की प्राप्तियों और भुगतान में अस्थायी अनमेलताओं को पाटने के उद्देश्य से था। अल्पकालिक निभाव स्वीकार करने के अतिरिक्त, रिज़र्व बैंक अपने निर्माणकारी चरण में केंद्रीय और स्थानीय सरकारों की किसी भी परिपक्वता की प्रतिभूतियों को बैंक की समुच्चय चुकता पूंजी, रिज़र्व कोष और बैंकिंग विभाग के जमाओं के पांच तिहाई तक खरीद सकता था। यह व्यवस्था 1954 तक चलती रही जब इसे बजट घाटे के स्वचालित मौद्रीकरण की व्यवस्था से, जो तदर्थ खजाना बिलों के निर्गम के माध्यम से थी, बंद किया गया।

विनिमय दर और विदेशी मुद्रा प्रबंध

8.49 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम द्वारा बैंक पर रुपए की स्टर्लिंग के मुकाबले विनिमय दर 1एस, 6 डी, प्रचलित विनिमय समतुल्य को बनाए रखने का दायित्व डाला गया। प्रारंभिक वर्षों के दौरान (1935-1945, रिज़र्व बैंक द्वारा भारी स्टर्लिंग शेष, निर्यात अधिशेष के कारण तथा शुद्ध व्यय के वित्तपोषण के अनुसारण में बनाए गए। स्टर्लिंग शेषों के निरंतर संचय के फलस्वरूप, व्यवस्था में मुद्रा स्फीतिकारी दबाव बन गए। बैंक से सरकार की उधारी का उपयोग 1943-44 के दौरान, अधिशेष व्यय अधिकार को निष्क्रिय करने में किया गया ताकि मूल्य वृद्धि की ऊर्ध्वमुखी प्रवृत्ति को रोका जा सके। तथापि, इसका परिणाम, रिज़र्व बैंक के पास सरकार की नकदी शेष जमाराशि में तीव्र वृद्धि में हुआ। मुद्रा स्फीतिकारी दबावों का प्रतिवाद करने के लिए सरकार की ओर से मौद्रिक स्वर्ण की बिक्री की गई। बीच-बीच में अंतरालों पर सट्टेबाजी की शक्तियों के कारण होने वाली विनिमय दरों में अस्थिरता का प्रबंध मुद्रा दरों में यथोचित समायोजन करके किया गया ताकि विनिमय दर को समर्थन प्रदान किया जा सके।

8.50 1935 में, निर्गम विभाग में धारित स्वर्ण, जो नोट संचालन को समर्थन प्रदान करता था दोनों जगह, भारत में (रुपए 41.55 करोड़) और विदेश में (रुपए 2.87 करोड़) रखा गया। तथापि 1940-41 के दौरान विदेशों मे ं रखा गया स्वर्ण भारत में अंतरित किया गया जिससे निर्गम विभाग की आस्तियों में रुपए 44.41 करोड़ की वृद्धि हुई। इसे ब्रिटिश सरकार द्वारा रिज़र्व बैंक के पास भारत में रखे गए स्वर्ण को ब्रिटिश सरकार द्वारा रिज़र्व बैंक की ओर से लंदन में रखे स्वर्ण के विनिमय के माध्यम से प्रभावित किया गया। वर्तमान में निर्गम विभाग का सारा स्वर्ण भारत में धारित है, यद्यपि अधिनियम इस बात के लिए अनुमत करता है कि निर्गम विभाग द्वारा धारित कुल स्वर्ण का 15 प्रतिशत विदेशों में रखा जा सकता है[14]।

8.51 ब्रिटिश सरकार के साथ हुए स्टर्लिंग करार (जुलाई 1948 से जून 1951) की समाप्ति पर, एक नया दीर्घावधि करार किया गया जो भारत के स्टर्लिंग शेषों में से पाउंड 35 मिलियन तक जुलाई 1, 1951 से प्रारंभ होने वाले प्रत्येक छह सालों में आहरण अनुमत करता था और साथ ही यदि किसी वर्ष में कम आहरण किया गया तो किसी वर्ष विशेष में आहरण न की गई राशि को आगामी वर्षों में आहरित करने को भी अनुमत करता था[15]। खुले बाजार परिचालन खजाना अपेक्षाओं से संचालित होते थे। बैंक से यह अपेक्षित था कि वह सरकार की लंदन हेतु प्रेषण

[13] भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 22 के अंतर्गत, बैंक द्वारा सरकार के करेंसी नोट निर्गम करना जारी रहा जब तक कि इसके अपने विशिष्ट नोट प्रयोग हेतु तैयार हुए। बैंक द्वारा अपने प्रथम करेंसी नोटों का निर्गम पांच रुपए और दस रुपए मूल्यवर्ग का किया।

[14] बैंकिंग विभाग की समस्त स्वर्ण धारिता जो 65.5 टन है विदेशों में रखी है।

[15] करार के अंतर्गत 160 मिलियन पौंड (भारत के न एक खाते में 80 मिलियन पौंड सहित) तीन वर्ष की समय अवधि के दौरान खर्चे के लिए विमोचित किए जाने थे। इसमें से अधिकतम 15 मिलियन पौंड नकद करेंसी में, करार के प्रथम वर्ष के दौरान प्रदान किए जाने थे।

आवश्यकताओं तथा स्टर्लिंग दायित्वों को निभाएगा। 1949 में रुपए का अवमूल्यन 30.5 प्रतिशत किया गया। यह स्टर्लिंग क्षेत्र सदस्य देशों तथा यूरोप, मध्य पूर्व और सुदूर पूर्व के अनेक अन्य देशों की मुद्राओं के अवमूल्यन के अनुरूप था। 1 जनवरी 1949 को रिज़र्व बैंक अधिनियम में संशोधन किया गया ताकि स्टर्लिंग के अतिरिक्त अन्य विदेशी प्रतिभूतियाँ धारित करना संभव हो सके जो भारत द्वारा अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष के सदस्य होने के नाते दायित्व ग्रहण करने के अनुसरण में था।

अन्य प्रमुख घटनाएं

रिज़र्व बैंक का राष्ट्रीकरण

8.52 1 जनवरी 1949 को रिज़र्व बैंक के राष्ट्रीकरण के पश्चात, निजी शेयर धारिता सरकार द्वारा अभिगृहित कर ली गई, जो अंशतः सरकारी प्रामिसरी नोट, 3 प्रतिशत वाले प्रथम विकास ऋण 1970-75, जो सममूल्य पर देय थे तथा अंशतः नकदी के रूप में स्थायी दरों पर मुआवजे के रूप में थे। 2200 शेयरों की पूर्वधारिता सम मूलय पर अभिगृहीत की गई।

भारत-पाक बंटवारा और रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र

8.53 भारत और पाकिस्तान के बंटवारे के पश्चात, स्टेट बैंक ऑफ़ पाकिस्तान द्वारा, अप्रैल 1948 से जून 1949 की अवधि के दौरान भारतीय रिज़र्व बैंक के निर्गम विभाग से लगभग 134 करोड़ रुपए की देयताओं (समतुल्य आस्तियों संहित) का प्रभार ग्रहण किया गया। इसके अतिरिक्त, बैंकिंग विभाग की आस्तियाँ (लगभग 101 करोड़ रुपए) भी 1 जुलाई 1948 को स्टेट बैंक ऑफ़ पाकिस्तान को समतुल्य राशि की देयताओं पर जो पाकिस्तान की केंद्रीय और प्रादेशिक सरकारों तथा पाकिस्तान में अनुसूचित बैंकों की जमाओं में थी, भी अंतरित की गई। मई 1950 में 12.19 करोड़ रुपए की अतिरिक्त स्टर्लिंग प्रतिभूतियां भी स्टेट बैंक ऑफ़ पाकिस्तान को, समतुल्य मूल्य की रुपए प्रतिभूतियों के लौटाए जाने की बिना पर अंतरित की गई। इनके अतिरिक्त भारत सरकार द्वारा एक राशि (बैंक से 1947-48 में प्राप्त अतिरिक्त मुनाफे में से) 30 जून 1948 को पाकिस्तान में संचलित, पाकिस्तानी नोटों के कुल मूल्य से संबंधित तथा 1 जुलाई 1948 से पाकिस्तान में संचालित वापिस हुए भारतीय नोटों के कुल मूल्य तथा भारत और पाकिस्तान में 30 जून 1948 को संचालित भारतीय और पाकिस्तानी नोटों के कुल मूल्य से संबंधित थी।

(ii) आधार चरण (1950-67)

8.54 आयोजना के प्रारंभिक चरण में रिज़र्व बैंक द्वारा न केवल आवश्यक विधि तंत्र विकसित करने पर जोर दिया गया वरन् इसने भारत में संस्थागत नेटवर्क स्थापित करने के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका भी अदा की है, जिसे भारत में वित्तीय संस्थाओं के पुनर्गठन और समेकन के लिए वित्तीय समर्थन प्रदान करके किया गया। आयोजना के प्रारंभिक वर्षों में रिज़र्व बैंक की भूमिका की प्रक्रिया की रूपरेखा प्रथम पंचवर्षीय योजना में तैयार की गई (भारत सरकार 1951) :

> "...एक नियोजित अर्थव्यवस्था में केंद्रीय बैंकिंग केवल क्रेडिट की समग्र आपूर्ती तक अथवा कुछ हद तक, बैंक ऋण प्रवाह के नकारात्मक विनिमयन तक सीमित नहीं रखी जा सकती। इसे प्रत्यक्ष और सक्रिय भूमिका निभानी होगी, प्रथमतः समस्त देश में विकासात्मक गतिविधियों के वित्तपोषण के लिए आवश्यक मशीनरी का सृजन करना या सृजन में मदद करना, द्वितीयतः यह सुनिश्चित करना कि उपलबध वित्त इच्छित दिशा में प्रवाहित होते हैं ..."

विकासात्मक भूमिका

8.55 विकासात्मक केंद्रीय बैंकिंग" की संकल्पना निम्नलिखित तीन-मुखी कार्यनीति को समाहित करती है:

- औद्योगिक वित्तपोषण जिसमें विकास वित्त संस्थाओं का संवर्धन शामिल हो, का एक संस्थागत ढाँचा सृजित करना
- बैंकों को रियायती दर पर वित्त उपलब्धा कराना, खास तौर से पुनर्वित्त के माध्यम से तथा राष्ट्रीय औद्योगिक ऋण (दीर्घकालिक परिचालन) कोष जिसकी स्थापना 1964 में की गई, के माध्यम से विकास वित्त संस्थाओं को पुनर्वित्त तथा
- राष्ट्रीय कृषि ऋण (दीर्घ कालीन परिचालन) कोष और राष्ट्रीय कृषि ऋण (स्थरीकरण) कोष जो 1956 में सहकारी साख तंत्र को मजबूत करने के लिए स्थापित किए गए, के माध्यम से निधियां उपलब्धा कराके ग्रामीण साख संवर्धन।

8.56 एक बड़ा कार्यनीति कदम, जुलाई 1955 में इंम्पीरियल बैंक ऑफ़ इंडिया का भारतीय स्टेट बैंक के रूप में परिवर्तन (जिसमें रिज़र्व बैंक एक बड़ा नीति धारक था), जिससे एक बड़ा बैंकिंग नेटवर्क सरकार तथा केंद्रीय बैंक के अधिकार में आ गया।

8.57 रिज़र्व बैंक की विकासात्मक गतिविधियां इसके तुलन-पत्र में, अनेक विकासात्मक वित्तीय संस्थाओं की हिस्सा पूंजी के अभिदान के रूप में तथा विभिन्न क्षेत्र विशिष्ट समर्पित विकास कोषों के माध्यम से योगदान में प्रतिबिंबित होती हैं। औद्योगिक वित्त की अपेक्षाओं की पूर्ति की दृष्टि से, बैंक ने भारतीय औद्योगिक वित्त निगम की स्थापना में सक्रिया भूमिका निभाई तथा इसकी हिस्सा पूंजी तथा बांड में योगदान दिया। बैंक द्वारा प्रदान किये गए वित्त, राज्य वित्तीय निगमों, केंद्रीय

भूमि बंधक बैंकों द्वारा जारी डिबेंचरों में निवेश के रूप में थे (सरकार द्वारा गारंटी के शर्ताधीन)[16]।

8.58 भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का महत्व शुरुआती चरण में ही स्वीकार कर लिया गया था, जब कि भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 54 द्वारा रिज़र्व बैंक पर एक विशिष्ट कृषि साख विभाग के सृजन का दायित्व डाला। रिज़र्व बैंक (संशोधन) अधिनियम, 1955 के प्रावधानों के संदर्भ में राष्ट्रीय कृषि साख (दीर्घकालीन परिचालन) कोष तथा राष्ट्रीय कृषि साख (स्थरीकरण) कोष की स्थापना और इन कोषों में वार्षिक अभिदान, बैंक द्वारा की गई अन्य बड़ी महत्वपूर्ण विकासात्मक पहल थी[17]। एनएसी (दीर्घकालीन परिचालन) कोष 3 फरवरी, 1956 को, 10 करोड़ रुपए के प्रारंभिक योगदान से गठित किया गया जबकि एनएसी (स्थरीकरण) 30 जून 1956 को एक करोड़ रुपए के प्रारंभिक योगदान से गठित किया गया। एनएसी (दीर्घकालीन परिचालन) कोष में पांच करोड़ रुपए का पहला अंशदान बैंक की वर्ष के अंत में जून 30, 1956 की आय में से किया गया। बैंक ने 1958 में 'रिफायनेन्स कारपोरेशन फोर इंडस्ट्री लि' की स्थापना में भी सहभागिता की जो मार्च 28, 1961 से एक सार्वजनिक लि. कम्पनी बन गई। 1 जुलाई 1964 को भारतीय औद्योगिक विकास बैंक की स्थापना के साथ ही, पुनर्वित्त निगम, 1 सितम्बर 1964 को आईडीबीआई द्वारा अधिग्रहीत कर ली गई। दूसरा घटनाक्रम था नई धारा 46 सी की अंत-स्थापना, जिसने राष्ट्रीय औद्योगिक साख (दीर्घ कालीन परिचालन) कोष की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया, जिसमें दस करोड़ रुपए का प्रारंभिक योगदान जमा किया गया।

विदेशी मुद्रा दर और विदेशी विनिमय प्रबंध

8.59 1950 के प्रारंभिक वर्षों में भुगतान संतुलन स्थिति में काफी गिरावट दृष्टिगोचर हुई (विकास योजनाएं चालू रखने के लिए आवश्यक समझा गया)। जबकि चलनिधि विकास, सुदृढ़ रही। अवमूल्यन एवं कोरियन युद्ध अवधि के पश्चात् इंडो-यूके स्टर्लिंग शेष करार के अंतर्गत आश्वासनों (35 मिलियन स्टर्लिंग पौंड के वार्षिक आहरण के) के अलावा रिज़र्व बैंक के संचित विदेशी मुद्रा रिजर्वों से भुगतान संतुलन वित्त पोषित किया गया।

बैंकों के बैंकर

8.60 1950 में स्फीतिकारक दबावों के उभारों ने रिज़र्व बैंक के लिए यह आवश्यक कर दिया कि वह 16 वर्षों बाद 1951 में बैंक दर बढ़ाकर तथा सरकारी पेपर की खुले बाज़ार में बैंकों की खरीद बंद कर मौद्रिक कड़ापन अपनाए। इस नीति द्वारा, इस प्रकार, बैंकों में व्यस्त सीजन के दौरान सरकारी पेपर में विनिवेश करने की प्रथा को हतोत्साहित किया गया, जिसके द्वारा रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र के माध्यम से प्राथमिक मौद्रीकरण की सीमा पर रोक लगाई गई।

(iii) सामाजिक नियंत्रण का चरण (1958-1990)

8.61 तीन बड़े तेल कीमत आघातों (1973-74, 1979-80 और 1983-84) जो इस अवधि के दौरान हुए, से समष्टि आर्थिक परिवेश न्यून अनुकूल रहा, जिसने पूर्व में ही देश की शोचनीय बाहरी संसाधन स्थिति को और तीव्रता प्रदान की। 1960 में देरी से प्रारंभ किए बैंकों पर सामाजिक नियंत्रण ने बैंकिंग व्यवस्था के संसाधनों को 'प्राथमिकता' प्राप्त क्षेत्रों की ओर मोड़ने जो रिज़र्व बैंक की पुनर्वित्त सुविधाओं से समर्थित थे, की नीति प्रेरित शुरुआत हुई। इस चरण की अन्य विशेषता थी राजकोषीय असंतुलनों का उभार और सरकार द्वारा बिना रोकटोक के रिज़र्व बैंक से वित्तीय घाटे के वित्तपोषण का आश्रय लेना। घाटे के मौद्रीकरण की इस स्वचालित प्रक्रिया ने सांविधिक अग्रक्रय जो नकदी आरक्षित अनुपात (सी आर आर) और सांविधिक चलनिधि अनुपात के रूप में थे, की बारम्बारिता में वृद्धि आवश्यक बना दी, जो बढ़े हुए मौद्रीकरण से जनित मुद्रास्फीतिकरण प्रभावों को निष्प्रभावी करने का एक प्रयास था। रिज़र्व बैंक का तुलन-पत्र विकासात्मक गतिविधियों में इसकी भूमिका को प्रतिबिंबित करता रहा।

[16] भारतीय औद्योगिक विकास निगम (1948) सहित, मध्य और दीर्घकालीन वित्त के लिए भारतीय पुनर्वित्त निगम (1958), औद्योगिक ऋणों के विरुद्ध पुनर्वित्त प्रदान करने के लिए, भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (1964),शीर्ष आवधिक ऋण संस्था (जिसने पुनर्वित्त निगम का भी अधिग्रहण किया) की स्थापना की गई। 1950 के शुरुआत में, भारतीय रिज़र्व बैंक ने राज्य वित्तीय निगमों की स्थापना में, स्थानीय मध्यम और लधु उद्योगों की ऋण आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए, सक्रिय भूमिका निभाई। रिज़र्व बैंक द्वारा यूनिट ट्रस्ट ऑफ़ इंडिया (1964) की प्रारंभिक पूंजी में भी 50 प्रतिशत का योगदान दिया।

[17] अखिल भारतीय साख सर्वेक्षण समिति की सिफारिशों के संदर्भ में रिज़र्व बैंक से यह अपेक्षा की गई थी कि वह एनएसी (दीर्घकालीन परिचालन) कोष में प्रारंभिक राशि 10 करोड़ रुपए तथा वर्षांत 30 जून 1956 के शुरु होनेवाले पांच वर्षों में प्रति वर्ष 5 करोड़ रुपए से कम नहीं जमा करे (एनएसी स्थरीकरण) कोष के मामले में शर्त थी, 'इस कोष में बैंक द्वारा ऐसी (इतनी) राशियां जमा की जाएंगी जो बैंक प्रतिवर्ष दे सके बशर्ते कि वर्ष के अंत में जून 30, 1956 से प्रारंभ होने वाले प्रत्येक पांच वर्ष के दौरान एक करोड़ रुपए से कम नहीं होगी। दोनों ही कोषों के मामले में केंद्र सरकार, अगर आवश्यक समझे, बैंक को किसी भी वर्ष में इसका योगदान कम या अधिक करने को अधिकृत कर सकता है।ट एनएसी (दीर्घकालीन परिचालन) कोष में योगदान 5 करोड़ रुपए बढ़ाकर वर्ष के अंत में 30 जून 1962 को 11 करोड़ और वर्ष 1962-63 के दौरान 12 करोड़ रुपए कर दिया गया। सामाजिक नियंत्रण चरण के दौरान इन दो कोषों में वार्षिक योगदान काफी बढ़ा दिए गए थे तथा अंततः ये दो कोष 12 जुलाई 1982 को नाबार्ड को अंतरित कर दिए गए।

सरकार का बैंकर

8.62 रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को बड़ी मात्रा में निभाव प्रदान किया जाना जारी रहा। किसी संस्थागत व्यवस्था के अभाव में जो सरकार पर प्रतिभूतियाँ जारी करने और इस तरह बैंकों से सरकार को ऋण प्राप्त करने पर सीमा लगाए, तदर्थ खजाना बिलों को जारी रहने से इस चरण के दौरान गंभीर स्वचालित मौद्रीकरण हुआ जिसने मौद्रिक प्रबंध के लिए गंभीर समस्याएं पैदा की। बड़ी मात्रा में घाटे के वित्तपोषण ने रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र पर दबाव बनाया जो रिज़र्व मुद्रा के प्रसार में सबसे महत्वपूर्ण एकल चालक सिद्ध हुआ। सरकार को रिज़र्व बैंक निभाव तेजी से ऊपर चढ़ा, जो 1980 में रिज़र्व बैंक द्वारा सरकार को प्रदान की गई निवल ऋण के साथ रिज़र्व मुद्रा का 90 प्रतिशत था (जाधव 1994)।

बैंकों का बैंकर

8.63 1970 के मध्य से घाटे के वित्तपोषण के मौद्रिक प्रभाव को आस्तियों पर देयताओं की तरफ उच्चतर नकदी रिज़र्व अपेक्षाओं के माध्यम से निष्प्रभावी करने की नीति ने रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र को सकल देसी उत्पाद के अनुपात में विस्तृत करना शुरु कर दिया था। प्रतिबंधात्मक उपाय, सीआरआर और एसएलआर ने प्रगामी वृद्धि के साथ तथा समय समय पर बैंकों को विवेकाधीन पुनर्वित्त में कटौती के साथ ही अधिकाधिक कड़े होते गए[18]। बैंकों की मांग और मीयादी देयताओं पर 3.0 प्रतिशत के वांछित अनिवार्य न्यूनतम से ऊपर के रिज़र्व पर ब्याज दर धीरे-धीरे जून 1973 के 4.75 प्रतिशत से जून 1978 को 6.5 प्रतिशत बढ़ा दी गई जो सीआरआर में वृद्धि के प्रभाव को हल्का करने के उद्देश्य से था, जो रिज़र्व बैंक की लाभप्रदता को दुष्प्रभावित कर रहा था। बैंकों के लिए सांविधिक चलनिधि अनुपात में प्रगामी वृद्धि की शर्तों की इस प्रक्रिया से इसे और भी मदद मिली जिससे राजकीय प्रतिभूतियों के लिए अतिरिक्त मांग का सृजन हुआ। यह अवधि साख प्रतिबंधन की समग्र नीति के रूप में चिह्नित की गई, जो रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को पुनर्वित्त में आई भारी कमी में परिलक्षित थी। वास्तव में सांविधिक चलनिधि अनुपात को दैनिक आधार पर प्रभावी रूप से रखे जाने पर भी विशेष जोर दिया जा रहा था। यह इस संदर्भ में था कि मौद्रिक व्यवस्था के कार्य पर समीक्षा समिति (अध्यक्ष सुखमय चक्रवर्ती 1985) ने इस बात की आवश्यकता सुनिश्चित करने पर बल दिया कि घाटे का वित्तपोषण आ 'सुरक्षित सीमाओं' को न लांघे।

विकासात्मक भूमिका

8.64 राष्ट्रीय प्राथमिकताओं के अनुरूप, कृषि और उद्योग क्षेत्रों को पर्याप्त ऋण प्रवाह उपलब्धा कराने के लिए तीन राष्ट्रीय कोषों में योगदान भारी मात्रा में बढ़ा। इस चरण के दौरान रिज़र्व बैंक ने एक समर्पित आवास क्रेडिट कोष में भी योगदान प्रारंभ कर दिया। रिज़र्व बैंक ने राष्ट्रीय कोषों में अपना आबंटन बढ़ा दिया, जो 1971-75 के दौरान तुलन-पत्र का औसत 7.1 प्रतिशत था, 1975-80 में तुलन-पत्र का औसतन 10 प्रतिशत हो गया। 1984-85 में, इन कोषों में योगदान 675 करोड़ रुपए था जो बाद में बढ़कर 1990-91 में 995 करोड़ रुपए हो गया। अपनी विकासात्मक भूमिका को आगे बढ़ाते हुए, रिज़र्व बैंक ने केंद्रीय सरकार के साथ, कृषि और ग्रामीण विकास के लिए राष्ट्रीय बैंक (नाबार्ड) जिसने जुलाई 12, 1982 से कार्यारंभ किया, की हिस्सा पूंजी में 100 करोड़ रुपए के समान अनुपात में योगदान दिया। 9 जुलाई 1988 को, 100 करोड़ रुपए की प्रारंभिक पूंजी के साथ, जो पूर्णतः रिज़र्व बैंक द्वारा प्रदान की गई, राष्ट्रीय आवास बैंक की स्थापना हुई। भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के अंतर्गत, जनवरी 1989 में 50 करोड़ रुपए की आधारभूत प्रारंभिक निधि के साथ राष्ट्रीय आवास क्रेडिट /दीर्घकालीन परिचालन/कोष की स्थापना की गई, इस मंशा के साथ कि कोष में हर साल, जितनी आवश्यक समझी जाए उतनी राशि जमा की जाए[19]। इसके पश्चात, केंद्रीय सरकार द्वारा 1992-93 के केंद्रीय बजट में लिए गए निर्णय के पश्चात, उक्त कोष में बड़ी मात्रा में जमा करने की प्रथा बंद कर दी और तब से कोष में केवल एक करोड़ रुपए की नाम मात्र की राशि, प्रतिवर्ष अंतरित की जा रही है।

विदेशी मुद्रा और विनिमय दर प्रबंध

8.65 इस चरण में भुगतान संतुलनों में हालत बिगड़ती नजर आई, बावजूद 1970 में कुछ अंतरालों पर सुधार के। आवक प्रेषणों में, बैंकों द्वारा नवम्बर 1975 में चालू की गई विदेशी मुद्रा अनिवासी (खाता) एफसीएनआर (ए) योजना के अंतर्गत आवक प्रेषणों में अस्थायी उछाल आया। तथापि बाहरी स्थिति 1980 के शुरु में, तेल आयात बिल में वृद्धि तथा व्यापार शर्तों में गिरावट के परिणाम स्वरूप बिगडी तथा केंद्रीय सरकार के द्वारा नवम्बर 1981 में अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष से 5 बिलियन के तैयशुदा विशेष आहरण अधिकार (एसडीआर) कर्ज के

[18] बैंकों को, खाद्यान्न क्रेडिट, निर्यात क्रेडिट, स्टैंड बाई, विवेकाधीन और 182 दिवसीय खजाना वित्त पुनर्वित्त के रूप में पुनर्वित्त सुविधाएं उपलब्ध थीं।

[19] कोष में वार्षिक योगदान रिज़र्व बैंक के मुनाफे में से दिया जाता है। कोष में से राशि रिज़र्व बैंक द्वारा केवल (i) राष्ट्रीय आवास बैंक को अपने व्यवसाय के लिए ऋण और अग्रिम तथा (ii) राष्ट्रीय आवास बैंक द्वारा जारी बांड और डिबेंचरों की खरीद।

जो विस्तारित कोष सुविधा (इएफएफ) के अंतर्गत था, रिज़र्व बैंक की विदेशी मुद्रा आस्तियों में कमी आई।

8.66 इसके अतिरिक्त, 6 जून 1966 को रुपए का तीव्र अवमूल्यन 36.5 प्रतिशत तक किया गया तथा उसके पश्चात रुपए-पौंड स्टर्लिंग विनिमय दर प्रमुख अंतरराष्ट्रीय मुद्राओं की घटती-बढ़ती विनिमय दरों के आगे-पीछे संशोधित की गई। पौंड-स्टर्लिंग में चल रही निरंतर कमजोरी के बावजूद, रिज़र्व बैंक द्वारा वर्तमान स्टर्लिंग व्यवस्था के साथ 24 सितम्बर, 1975 तक बने रहने को वरीयता दी गई, जब इसने अंततः रुपए को पौंड स्टर्लिंग खूँटे से बांधना छोडने का निर्णय लेकर इसे मुद्राओं की एक टोकरी (बास्केट) से जोड़ दिया[20]। स्टर्लिंग का अवमूल्यन रिज़र्व बैंक के विदेशी मुद्रा रिज़र्व में घाटे का कारण बना, जब कि रुपए में भुगतान दायित्वों के संदर्भ में लाभ में परिणित हुआ। स्टर्लिंग में बड़ी मात्रा में अस्थिरता को देखते हुए ब्रिटिश सरकार ने, सभी स्टर्लिंग देशों को उनकी स्टर्लिंग धारिताओं के लिए डॉलर के रूप में गारंटी देने का प्रस्ताव रखा यदि ये धारिताएं इनके कुल स्वर्ण और विदेशी मुद्रा रिज़र्व के 20 प्रतिशत से ज्यादा है। समझौते की प्रक्रिया में, भारत के स्वर्ण और विदेशी मुद्रा रिज़र्व के 10 प्रतिशत से अधिक की स्टर्लिंग धारिताएं गारंटी की पात्र मानी गई और करार की अवधि समझौते से तीन वर्ष निर्धारित की गई। विनिमय दर के मोर्चे पर दर्शाती गतिविधियों में प्रत्येक तिमाही में रिज़र्व धारिताओं के पुनर्मूल्यन में बाज़ार दरों के संदर्भ में (पूर्व में प्रयुक्त केंद्रीय दर नहीं) अस्थायी परिवर्तन हुआ, पुनर्मूल्यन लाभों को अप्राप्त अधिमूल्यन के रूप में निर्गम विभाग में शामिल करना अनुमत हुआ। दूसरे शब्दों में, लाभ किसी प्रकार के गुप्त रिज़र्व के रूप में माने गए। तथापि, लाभों को गुप्त रिज़र्व के रूप में अंतरण संबंधी निर्णय उलट दिया गया और 26.4 करोड़ रुपए के संपूर्ण पुनर्मूल्यन लाभ को विदेशी मुद्रा घट बढ भंडार (ईएफआर) में अंतरित कर दिया गया और 'अन्य देयताओं' में दर्शाया गया।

8.67 इस अवधि के दौरान भी रिज़र्व बैंक की नीति में, केंद्रीय बैंक के पास निवेश रखने के स्थान पर अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआईएस) के पास जमाएं रखने (ड्यूशमार्क और फ्रांसीसी फ्रान्क) की नीति में परिवर्तन हुआ जिससे बढ़ती ब्याज दरों का लाभ तथा भंडारों के विविधिकरण के अवसर प्राप्त हुए। विविधिकरण कदम से रिज़र्व बैंक के विदेशी मुद्रा भंडार जो स्टर्लिंग और डॉलर से बाहर थे, स्टर्लिंग और डॉलर से अधिक हो गए। इस समस्त अभ्यास से 43.4 करोड़ रुपए का अधिमूल्यन लाभ मिला लेकिन तब सतर्कतापूर्ण रूझान अपनाया, यह ध्यान में रखते हुए कि यूरो-करेंसी बाजार में कोई अंतिम उधारदाता नहीं था। 1973 के उत्तरार्ध में, डॉलर के मजबूत हो जाने के साथ ही स्टर्लिंग से डॉलर धारिता की ओर पुनः पदांतरण हो गया। रिज़र्व संचय प्रक्रिया जैसे जैसे गति पकडती गई, रिज़र्व विनियोजन संबंधी सांविधिक प्रावधान विस्तारित कर दिए गए जिनमें यूरोबांड में निवेश और वाणिज्य बैंकों में जमाएं तथा केंद्रीय बैंकों में स्वर्ण खाते खोलना अनुमत किया गया (आरबीआई 2005)।

8.68 1980 के दौरान राजकोषीय घाटे में बेतहाशा वृद्धि के फलस्वरूप हुए समष्टि आर्थिक असंतुलनों, 1991 तक एक घोर भुगतान संतुलन संकट साबित हुए। ऋण-सेवा अनुपात जो पूरे 1980 में धीरे धीरे बढ़ रहा था, 1991 में 35.3 प्रतिशत के उच्च पर पहुँच गया, जिसने, विश्व बैंक मानदंडों के संदर्भ में भारत को 'घोर ऋण ग्रस्त देश' की श्रेणी में ला दिया। रिज़र्व बैंक की निवल विदेशी मुद्रा आस्तियाँ, रिज़र्व मुद्रा के प्रतिशत के रूप में तेजी से, मार्च 1987 के 10.3 प्रतिशत से सितंबर 1990 तक 5.5 प्रतिशत तक गिरी, बावजूद सुदृढ़ निर्यात वृद्धि के। ऐसा विस्तारित कोष सुविधा के अंतर्गत उधार राशियों की चुकौती के दबाव के कारण हुआ। (चार्ट VIII.2)।

(iv) आर्थिक उदारीकरण का चरण (1991 से आगे)

8.69 समष्टि आर्थिक संकट का मुकाबला, सरकार और रिज़र्व बैंक के समन्वित नीतिगत प्रतिसाद से किया गया और 1991 से आगे का समय अनेक महत्वपूर्ण नीतिगत पहलों जैसे, सरकारी उधार, बाज़ार दरों पर, अर्द्ध राजकोषीय गतिविधियों को सुप्रवाही करना और दीर्घावधि

चार्ट VIII.2: एन एफ ए - रिज़र्व मुद्रा अनुपात में गति

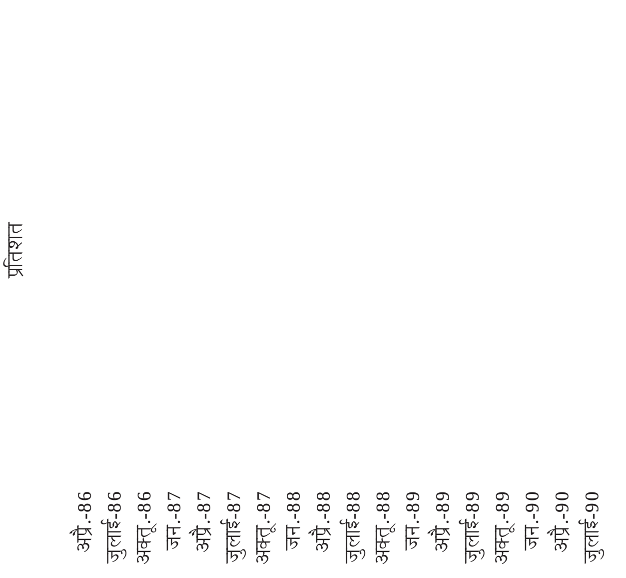

[20] रुपए को पौंड-स्टर्लिंग से 1931 में बांध दिया गया था। यह व्यवस्था सितंबर 1971 में तीन माह की अल्पावधि को छोड़कर, जब तक रुपए को मुद्राओं की टोकरी सें सितंबर 1975 में जोड़ने का निर्णय लिया गया चलती रही।

कोषों में योगदान बंद करना, अग्रक्रय में कमी, मौद्रिक नीति के अप्रत्यक्ष लिखतों का अधिकाधिक प्रयोग तथा रिज़र्व बैंक की सहायक कंपनियों में शेयर धारिता का विनिवेश, को चिह्नित करता है। इन सबके रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र पर गंभीर निहितार्थ रहे।

सरकार का बैंकर

8.70 अप्रैल 1997 तक तदर्थ खजाना बिलों को बाहर कर देने के माध्यम से राजकीय घाटे के स्वचलित मौद्रिकरण को बंद करने के साथ ही, रिज़र्व बैंक के केंद्रीय सरकार को बैंकर की भूमिका में आधार भूत परिवर्तन आया है। समग्र मौद्रिक लक्ष्यों के अनुरूप सरकार को निवल बैंक क्रेडिट निर्धारित करने के साथ ही, रिज़र्व बैंक द्वारा घरेलू आस्तियों के अभिग्रहण करने में सीमित विवेक का अभ्यास करना शुरू किया जो घरेलू आस्तियों के स्वचालित अभिग्रहण की पूर्व व्यवस्था के विपरीत था। तदनुसार, रिज़र्व बैंक की केंद्रीय सरकार को सहायता उचित निम्न स्तर पर आ चुकी है, जो पूंजीगत प्राप्त राशियों, खुले बाज़ार और रेपो परिचालनों के माध्यम से परिणामित निष्प्रभावी परिचालनों में वृद्धि तथा नवीनतम लागू किए गए लिखतों जैसे बाज़ार स्थिरीकरण कोष के कारण सुविधाजनक चलनिधि परिस्थितियों द्वारा समर्थित है। केंद्रीय सरकार की प्रतिभूतियों के प्राथमिक निर्गम में रिज़र्व बैंक का अभिदान 1998-99 में, दिनांकित प्रतिभूतियों के जरिए एकत्रित सकल राशि का लगभग 46.0 प्रतिशत था, उसके बाद तेजी से गिरा। बदले हुए परिदृश्य में सरकार को रिज़र्व बैंक की निवल क्रेडिट, प्रत्यक्ष मौद्रीकरण की सीमा नहीं दर्शाती वरन् रिज़र्व बैंक के मुद्रा, सरकारी प्रतिभूतियों और विदेशी मुद्रा विनिमय बाज़ारों में परिचालनों के संयुक्त प्रभाव का चित्रण करती है।

बैंकों का बैंकर

8.71 रिज़र्व बैंक द्वारा पात्र नकदी आरक्षित अनुपात शेष जमाराशि पर ब्याज भुगतान प्रणाली को युक्तिसंगत करने के साथ ही नकदी आरक्षित अनुपात को धीरे धीरे कम कर दिया गया है। यौक्तीकरण प्रक्रिया का आरंभ, नकदी आरक्षित अनुपात शेष जमाराशि के लिए पारिश्रमिक के लिए द्विस्तरीय विभेदक फार्मूले का एक समान दर में बदलाव तथा पात्र नकदी आरक्षित अनुपात शेष जमाराशि पर पारिश्रमिक को बैंक दर से 3 नवंबर 2001 से जोड़ने से हुआ[21]। सांविधिक चलनिधि अनुपात भी चरण बद्ध रूप में घटाकर फरवरी 1992 के 38.5 प्रतिशत से अक्तूबर 1997 में 25 प्रतिशत कर दिया गया। साथ ही रिज़र्व बैंक द्वारा बैंकों को स्थायी पुर्नवित्त सुविधाओं, निर्यात हेतु क्रेडिट पुनर्वित्त को छोडकर, को बंद कर दिया गया है। तदनुसार, रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र को देयताओं की तरफ कुछ सीमा तक, केंद्रीय बैंक के पास बैंकों के रिज़र्व को कम करके तथा आस्ति की तरफ बैंकों को स्थायी पुनर्वित्त समर्थन पर नियंत्रण लगाकर कुछ सीमा तक प्रतिबन्धित कर दिया गया है। इस चरण के दौरान, अर्थव्यवस्था में बड़ी मात्रा में पूंजी अंतर्वाह हुआ है, रिज़र्व बैंक इन्हें अपने तुलन-पत्र में अवशोषित करने में सक्रिय है, जब कि साथ ही साथ निष्प्रभावीकरण के एक उपाय के रूप में सरकारी पेपर को अधिकांशतः निकाल रहा है जिससे अपने आस्ति संविभाग के पुनर्वितरण को अपने तुलन-पत्र और रिज़र्व मुद्रा के बिना किसी उल्लेखनीय विस्तार के, प्रेरित कर रहा है।

8.72 विदेशी मुद्रा के सुदृढ़ और निरंतर अंतर्वाह की पृष्ठभूमि में और रिज़र्व बैंक के पास सरकारी प्रतिभूतियों के सीमित स्टाक की उपलब्धता के देखते हुए, सरकार और रिज़र्व बैंक के बीच हुए सहमति ज्ञापन के अनुसरण में अप्रैल 2004 में बाज़ार स्थिरीकरण योजना (एमएसएस) लागू की गई, जिसके द्वारा सरकार द्वारा विशेष रूप से निष्प्रभावीकरण परिचालनों के प्रयोजन से प्रतिभूतियां जारी की जाती हैं। एमएसएस के अंतर्गत सरकारी कागज जारी किए जाने का उद्देश्य टिकाऊ स्वरूप की पूंजीगत प्राप्तियों से सृजित रूपया चलनिधि को अवशोषित करने के लिए किया जाता है। इस लिखत के मौद्रिक और बजटीय प्रभाव को तटस्थ बनाने के लिए, एमएसएस के अंतर्गत आगमों को अभिनिर्धारण योग्य एक अलग खाते में रखा जाता है जो सरकार द्वारा रिज़र्व बैंक के साथ रखा जाता है, जिसका विनियोजन केवल एमएसएस के अंतर्गत जारी पेपर के विमोचन तथा/अथवा पुनःक्रय के प्रयोजन में ही किया जा सकता है। रिज़र्व बैंक भी सरकार को निवल क्रेडिट में परिणामत: कमी पूंजीगत प्राप्तियों के कारण रिज़र्व बैंक की विदेशी आस्तियों में अभिवृद्धि के विस्तारमुखी प्रभाव को तटस्थ बना देती है। एमएसएस के अंतर्गत जारी पेपर, एक निवेशक के दृष्टिकोण से सामान्य गिल्ट जारी करने से भिन्न नहीं होता, इसका जारी किया जाना गैर मौद्रिक प्रकृति का होता हैं, क्योंकि एमएसएस, रिज़र्व बैंक के पास सरकार की जमाराशि है। फिर भी, इसका रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र पर विस्तारमुखी प्रभाव होता है। जून 2005 के अंत में एमएसएस के अंतर्गत जमा राशि 71,681 करोड़ रुपए थी या रिज़र्व बैंक की कुल देयताओं का 10.5 प्रतिशत। तथापि 24 फरवरी 2006 को यह राशि घटकर 31,258 करोड़ रुपए अथवा रिज़र्व बैंक की कुल देयताओं के 5 प्रतिशत से नीचे आ गई। एमएसएस योजना के अंतर्गत पूंजीगत प्राप्तियों को निष्प्रभावी करने के परिचालन से एक चरण की शुरुआत हुई निष्प्रभावीकरण की लागत पारदर्शी रूप से रिज़र्व बैंक की बजाय सरकार द्वारा वहन की जाती है।

[21] इसे 18 सितंबर 2004 से प्रारंभ पाक्षिक से बंद कर दिया गया है, जब सी आरआर शेषों पर दिए जाने वाली ब्याज दर को घटाकर 3.5 प्रतिशत प्रति वर्ष कर दिया गया।

8.73 इसके अतिरिक्त रिज़र्व बैंक की अर्द्ध राजकोषीय गतिविधियों में पर्यात मात्रा में कमी आई है[22]। एक महत्वपूर्ण रिज़र्व बैंक अर्द्ध राजकोषीय गतिविधि गैर निवासियों विदेशी मुद्रा खातों (एफसीएनआरए) के अंतर्गत जमाओं के लिए, बैंकों को विनिमय गारंटी देने का भार रिज़र्व बैंक पर आया जिससे इन जमाओं के लिए विनिमय गारंटी के विरूद्ध प्रावधानीकरण की जरूरतों में वृद्धि हुई। रिज़र्व बैंक द्वारा विनिमय जोखिम न केवल एफसीएनआरए जमाओं के लिए ही वहन की जा रही थी वरन् भारत विकास बांडों (आईडीबीज) और वित्तीय संस्थाओं द्वारा रिज़र्व बैंक के पास रखी विदेशी मुद्रा अधिशेष के लिए भी। जब कि वित्तीय संस्थाओं द्वारा विदेशी मुद्रा अधिशेष राशि रखे जाने की प्रथा को बंद कर दिया गया, आईडीबीज को 1997 के पूर्वार्ध में विमोचित कर दिया गया। अधिक महत्व की बात जो हुई, एफसीएनआरए जमाओं के वार्षिक बहिर्वाह से संबंधित विनिमय दर जोखिम दायित्व 'जुलाई 1993 से सरकार द्वारा ग्रहण कर लिए गए, इस समझ के साथ कि रिज़र्व बैंक सरकार को सामान्य अंतरण से ऊपर लाभराशि, एफसीएनआर विनिमय हानियों की पूर्ती के लिए, अंतरित करेगा। 14 अगस्त 1994, से इस जमा योजना को बंद किए जाने के साथ ही, विनिमय गारंटी का अस्तित्व 17 अगस्त 1997 से समाप्त हो गया। 15 मई 1993 से लागू की गई विदेशी मुद्रा (गैर-निकासी) खाते (बैंक्स) योजना के अंतर्गत जोखिम बैंकों द्वारा स्वयं वहन की जाती है। इसके अतिरिक्त, रिसर्जेंट भारत बांड (1998) तथा भारत मिलेनियम जमाराशियों (2000) के अंतर्गत प्राप्त विदेशी मुद्रा राशियों में रिज़र्व बैंक की विनिमय दर गारंटी में कोई लिप्तता नहीं है।

विकासात्मक भूमिका

8.74 उदारीकरण के बाद के चरण में भारतीय रिज़र्व बैंक ने अपनी विकासात्मक भूमिका आचरण को महत्वपूण्र रूप से बदल दिया है। उदारीकरण से पूर्व के चरण में, विकासात्मक गतिविधियों के प्रयास संस्थाओं के निर्माण पर केह्रित थे, जो विकास के लिए प्रत्यक्ष वित्त उपलब्धा कराने में संलग्न थी। दूसरी ओर, उदारीकरण पश्चात् के चरण के दौरान रिज़र्व बैंक द्वारा ऐसी संस्थाओं का निर्माण प्रारंभ किया गया जिह्नोंने वित्तीय बाज़ारों के विभिन्न खंडों के विकास में अग्रणी भूमिका निभाई। 1988 में रिज़र्व बैंक द्वारा भारतीय बट्टा और वित्त गृह (डीएफएचआई) का प्रवर्तन किया गया और 1994 में भारतीय प्रतिभूतियाँ और ट्रेडिंग निगम (एसटीसी) का जिनका उद्देश्य सरकारी प्रतिभूति बाज़ार और मुद्रा बाज़ार को सधन और सक्रिय बनाना था[23]। विभिन्न अन्य विकासात्मक संस्थाओं को भी निधियों का योगदान प्रदान किया गया जैसे इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास वित्त कम्पनी लि. (आईडीएससी) नाबार्ड, एनएचबी, भारतीय रिज़र्व बैंक नोट मुद्रण लि. इसी प्रकार की अन्य[24]।

8.75 मार्च 2002 में, विकास वित्त संस्थाओं (डीएफआईज) जैसे, भूतपूर्व आईडीबीआई, एग्जिम बैंक, आईआईबीआई और सिडबी की समस्त बकाया शेष, एनआईसी (एलटीओ) कोष (रुपए 3791.75 करोड़) सरकार को सम राशि के 10.25 प्रतिशत के सरकारी स्टॉक 2021 के बदले में अंतरित कर दी गई। 2004-05 में, बैंक द्वारा इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास वित्त कंपनी लि. में अपनी शेयर धारिता केंद्रीय सरकार को तत्कालीन बहीमूल्य 150 करोड़ रुपए पर अंतरित कर दिया। जून 2005 के अंत में, बैंक का सहायक/सहबद्ध कंपनियों नामतः निक्षेप बीमा और ऋण गारंटी निगम, नाबार्ड, स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया, राष्ट्रीय आवास बैंक और भारतीय रिज़र्व बैंक नोट मुद्रण (प्रायवेट) लि. में कुल निवेश 3973 करोड़ रुपए था।

8.76 उदारीकरण चरण के दौरान सांविधिक निधियों में बड़ी मात्रा में आबंटन बंद कर दिए गए। 1991-92 से सांविधिक निधियों में कोई नियोजन नहीं था। 1992-93 से केवल एक करोड़ रुपया प्रति वर्ष प्रत्येक कोष में आबंटित किया जा रहा है। 1997-98 में यह निश्चित किया गया कि एनआईसी (एलटीओ) कोष में, पूर्ववर्ती ऋणों के भुगतान से आई राशि के उपयोग में न लिए गए शेष को आकस्मिकता भंडार में साल-दर-साल के आधार पर अंतरित कर दिया जाए। तदनुसार, एनआईसी (एलटीओ) कोष तथा एम एच सी (एलटीओ) कोष के अंतर्गत संयुक्त शेष जो जून 1992 के अंत में बैंक की कुल आस्तियों का 4.1 प्रतिशत था, जून 2005 तक घटकर 0.03 प्रतिशत के निम्न पर आ गया।

[22] केंद्रीय बैंक की अर्ध राजकोषीय गतिविधियों में विदेशी मुद्रा बाज़ारों में हस्तक्षेप, विदेशी मुद्रा भंडार बनाने के लिए केंद्रीय बैंक की प्रतिभूतियां जारी करना और बैंकिंग व्यवस्था का पुनर्गठन शामिल है (हाकिन्स 2004)। अन्य अर्ध राजकोषीय परिचालन जो विदेशी विनिमय से संबद्ध हैं वे हैं अनेक विदेशी विनिमय दर प्रथाएं, विनिमय दर गारंटी और केंद्रीय बैंक द्वारा विनिमय दर जोखिम इत्यादि।

[23] बाद में, रिज़र्व बैंक के नियामक और स्वामित्व की दोहरी भूमिका के रूप में कार्य करने के फलस्वरूप होने वाले हितों का टकराव के परिप्रेक्ष्य में, रिज़र्व बैंक ने स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया में अपना स्वामित्व हल्का कर दिया और डीएफएचआई में अपनी संपूर्ण शेयरधारिता छोड़ दी।

[24] रज़र्व बैंक इन्फ्रास्ट्रक्चर विकास वित्त कंपनी लि. (आईडीएफसी), जो 1996-97 में मूलतंत्र विकास के वित्तपोषण हेतु स्थापित की गई थी, की हिस्सापूंजी में 150 करोड़ रुपए का योगदान किया (20.30 करोड़ रुपए 1996-97 मे तथा 129.70 करोड़ रुपए 1997-98 में। इसके अतिरिक्त 1997-98 के दौरान रिज़र्व बैंक द्वारा आईडीएफसी के गौण ऋण के प्रति 350 करोड़ रुपए का भुगतान किया। रिज़र्व बैंक द्वारा 1997-98 के दौरान नाबार्ड की अतिरिक्त हिस्सा पूंजी के लिए 400 करोड़ रुपए का योगदान किया गया। 1997-98 में ही एनएचबी की वृद्धिशील प्राधिकृत पूंजी 300 करोड़ रुपए से 350 करोड़ का भी भुगतान किया गया। एक 700 करोड़ रुपए का कर्जा भी एनएचबी को एनएचसी (एलटीओ) कोष, से स्वीकार किया गया जो रिज़र्व बैंक के सीआर से आहरित किया गया, जो अंततः एनएचबी द्वारा जनवरी 2002 में वापिस लौटा दिया गया। 1997-98 में भारतीय रिज़र्व बैंक नोट मुद्रण लि. की सम्पूर्ण हिस्सा पूंजी जो 800 करोड़ रुपए थी रिज़र्व बैंक को आबंटित की गई।

विनिमय दर और विदेशी मुद्रा भंडार का प्रबंध

8.77 अगस्त 1990 के खाड़ी संकट के पश्चात आया बाहरी संकट, 1991-92 के पूर्वार्ध में चालू खाते के घाटे को पाटने के लिए अल्पकालीन और दीर्घकालीन वित्त के सूखने के साथ बहुत गहरा हो गया। भारत के कोष में एसडीआर 487 मिलियन की रिजर्व हिस्सा स्थिति नीचे की ओर चली गई, उसके बाद आईएमएफ की वित्तीय सुविधाओं के अंतर्गत एसडीआर 1.27 बिलियन की 1990-91 में खरीद की गई[25]। जुलाई 1 और जुलाई 3 को, प्रमुख मुद्राओं के विरुद्ध रुपए की विनिमय दर के द्विकदमी अधोमुखी समायोजन के साथ नीतिगत पहल का आरंभ हुआ, जिसका उद्देश्य निर्यातों की प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार लाना, सट्टेबाजी दबावों का भय दूर करना तथा पूंजी खाते का स्थरीकरण था। इसे कठोर मौद्रिक नीति से अनुपूरित किया गया, जिसका उद्देश्य मांग को शांत करना और आयात को संकुचित करना था जिससे विनिमय दर समायोजन की प्रभावकारिता को सुनिश्चित किया जा सके। इन स्थरीकरण उपायों के साथ ही, वास्तविक राजकोषीय और वित्तीय क्षेत्रों में, ढांचागत सुधारों की एक विस्तृत श्रेणी के उपाय किए जाने के लिए आधार भूमि तैयार हो गई थी। राजकोषीय समायोजन को समग्र संरचनागत समायोजन प्रक्रिया के अभिन्न अंग के रूप में अभिनिर्धारित किया गया, जो राजकोषीय और मुद्रा नीति के बीच राजकोषीय समेकन और बेहतर समन्वय के मध्यकालीन लक्ष्यों पर केंद्रित थे (अध्याय VII देखें)।

8.78 इस पृष्ठभूमि में, इस बात को रेखांकित करते हुए कि उसे सुधारों की प्रक्रिया के इस संक्रमणकालीन चरण में चुनौतियों को स्वीकार करने के लिए अपने आपको तैयार करना है, रिज़र्व बैंक पर बढ़े हुए दायित्व डाले गए। इस परिवेश में, जो एक केंद्रीय बैंक के आदर्श तुलन-पत्र के मार्गदर्शी सिद्धांतों से चालित थे, बैंक के तुलन-पत्र का सुदृढ़ीकरण एक महत्व का विषय हो गया (तारापोर, 1996)। वित्तीय उदारीकरण के चरण में, इन सिद्धांतों को वास्तविक व्यवहार में परिणित करने के लिए ठोस नीतिगत उपाय किए गए हैं। इन आधारभूत सिद्धांतों से सहमति व्यक्त करते हुए कि एक केंद्रीय बैंक को विविध प्रकार की विनिमय दर जोखिम को स्वीकार नहीं करना चाहिए, जबकि घरेलू ब्याज वहनीय दायित्वों से बच रहा हो (जैसे बैंकों के नकदी जमा शेष राशि पर ब्याज का भुगतान), एफसीएनआर(ए) योजना बंद कर दी गई और नकदी आरक्षित अनुपात (सीआरआर) पर ब्याज भुगतान की प्रथा को बड़े रूप में तर्कसंगत बनाया गया। 1990 के घटनाक्रम ने रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र में, विदेशी आस्तियों की क्रमिक वृद्धि का समर्थन किया (चार्ट VIII.3)।

चार्ट VIII.3: विदेशी मुद्रा आस्तियों (स्वर्ण सहित) का संयुक्त तुलन-पत्र

प्रतिशत

8.79 रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र के गठन में गुणात्मक परिवर्तन जो विदेशी मुद्रा आस्तियों के पक्ष में था, उच्च महत्व का है। 1991 में 2383 करोड़ रुपए की विदेशी मुद्रा आस्तियाँ (एफसीए) कुल आस्तियों का 1.9 प्रतिशत थी। एफसीए का हिस्सा क्रमशः धीरे धीरे ऊपर बढ़ता गया जो जून 2005 के अंत में कुल आस्तियों का 87.2 प्रतिशत था। 1991 में, एफसीए का जारी किए गए नोटों से प्रतिशत, एक तुच्छ 0.4 प्रतिशत था लेकिन यह जून 2005 के अंत में 157.3 प्रतिशत रहा। सहगामी रूप से, रुपए प्रतिभूतियों के जारी नोटों से प्रतिशत हिस्से में तीव्र गिरावट दर्ज की गई जो 1991 के 86.7 प्रतिशत से जून 2005 के अंत में 0.4 प्रतिशत रही। यह एक सकारात्मक घटनाक्रम है लेकिन इसने रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र की बढ़ती जा रही ब्याज और विनिमय दर संवेदनशीलता के कारण जोखिमों को नए आयाम दिए हैं।

8.80 1990 के दौरान भारत में बड़े पैमाने पर विदेशी मुद्रा का अंतर्वाह हुआ। उदारीकरण की प्रक्रिया ने, विदेशी मुद्रा संचय की प्रक्रिया को अनेक प्रकार से प्रभावित किया है।

- विगत के विपरीत, जब केंद्रीय बैंक, भारतीय बैंक क्षेत्र पर, शेष विश्व के दावों का संग्रह स्थल माना जाताा था, उदारीकरण के पश्चात के चरण में रिज़र्व बैंक ने बैंकों को विदेशी मुद्रा में मुक्त रूप से लेन-देन करने की शक्ति प्रदान की है।

[25] सरकार द्वारा भारतीय स्टेट बैंक को 20 टन स्वर्ण लीज पर दिया गया, जिसके बदले में अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में, पुनर्खरीद विकल्प के साथ बिक्री व्यवस्था की। इस सौदे से यूएस डॉलर 200 मिलियन या 400 करोड़ रुपए की प्राप्ति हुई। इसके अतिरिक्त, रिज़र्व बैंक द्वारा बैंक ऑफ़ इंग्लैंड और बैंक जापान से जुलाई 1991 में स्वर्ण के विरूद्ध (46.9 टन की कुल मात्रा अर्थात 15 प्रतिशत की अनुमत सीमा जो विदेशों में रखी जा सकती है) जो पूर्व के पास जमा कराया 405 मिलियन यूएस डॉलर या 1037.35 करोड़ रुपए उठाए। स्वर्ण एसबीआई द्वारा नवम्बर/दिसंबर 1991 में पुनःखरीद कर लिया गया। कुल मात्रा में से 18.41 टन सरकार द्वारा भारतीय रिज़र्व बैंक को बेचा गया। दोनों सौदों लिप्त स्वर्ण धारिताएं जो 65.31 टन थी विदेशों में रखी गई।

- 1991-2005 के दौरान विदेशी मुद्रा भंडार में वृद्धि अतिरिक्त बाहरी, ऋण प्राप्तियों की तीन गुना थी जो यह सुझाती है कि अंतर्निहित पूंजीगत प्राप्त राशियों का बड़ा भाग, गैर ऋण सृजन प्रकृति का था जो चयनित नीति के अनुरूप था।
- यद्यपि 1990 के दशक के दौरान रिज़र्व बैंक द्वारा विदेशी मुद्रा संग्रहण में संवर्द्धन जारी रखा गया, पूर्ववर्ती योजनाओं में प्रदान की गई विनिमय गारंटी, जैसे एफसीएनआर (ए) योजना और भारत विकास बांड (1990) बाद की योजनाओं जैसे एफसीएनआर (बी) योजना, रिसर्जेन्ट इंडिया बांड (1988) और इंडिया मिलेनियम जमाएं (2000) में वापिस ले ली गई [26]।

8.81 अति संक्षेप में, इस प्रकार, रिज़र्व बैंक के इसके तुलन-पत्र पर कार्यकलापों के विकास को सारांश में सारणी 8.10 में दर्शाया गया है।

IV. रिज़र्व बैंक का लाभ हानि लेखा

8.82 रिज़र्व बैंक का लाभ-हानि लेखा, अधिनियम की धारा 58 के अंतर्गत, भारतीय रिज़र्व बैंक सामान्य विनियमावली, 1949 में निर्धारित रूप में तैयार किया जाता है। आमतौर से लेखांकन की ऐतिहासिक लागत आधार का प्रयोग किया जाता है, अलावा जहाँ इसमें पुनर्मूल्यन को प्रतिबिंबित करने के लिए संशोधन किया गया है।

8.83 1935 से 1940 की अवधि के दौरान रिज़र्व बैंक के वार्षिक लेखा कैलेंडर वर्ष के आधार पर तैयार किये जाते थे तथा उसके बाद जुलाई - जून को खातों के वर्ष के रूप में अपना लिया गया। राष्ट्रीकरण के पूर्व के चरण में तुलन-पत्र तथा वार्षिक रिपोर्ट बैंक के अंशधारियों को प्रस्तुत की जाती थी, लेकिन यह प्रथा 1949 में स्वामित्व में परिवर्तन के अनुसरण में, एक व्यवस्था के द्वारा इन विवरणियों को भारत के राष्ट्रपति को प्रस्तुत किया जाना अपेक्षित हो गया। प्रथम वार्षिक लेखा में जो 1 अप्रैल 1935 से दिसंबर 31, 1935 की अवधि के लिए बनाए गए, में लगभग 56 लाख रुपए की अधिशेष आय थी जिसमें से साढ़े तीन प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से अंशधारियों को लाभांश वितरित किया गया जब कि शेष भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 47 के अंतर्गत सरकार को भुगतान किया गया।

8.84 भारतीय रिज़र्व बैंक के पिछले कुछ वर्षों के आय और व्यय लेखा का एक विश्लेषण कुछ दिलचस्प विशेषताएं दर्शाता है। आय के मुख्य स्रोत हैं, घरेलू और विदेशी प्रतिभूतियों तथा विदेशी जमाओं पर ब्याज, बट्टा और पुनर्बट्टा प्रभार तथा लोक ऋण के प्रबंध पर कमीशन।

सारणी 8.10: रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र पर, रिज़र्व बैंक के चुने हुए कार्यकलापों के विकास का प्रभाव : एक शैलीगत विकास ढाँचा

चरण	नोट निर्गम	सरकार का बैंकर	बैंकों का बैंकर	विनिमय दर और विदेशी मुद्रा प्रबंध	विकासात्मक भूमिका
1	2	3	4	5	6
निर्माणात्मक वर्ष (1935-1949)	मुद्रा जारी करने वाला एकल बना रहा और विभिन्न चरणों के दौरान कार्यकलाप भी आमतौर से एक जैसे रहे	घटना आधारित आघात जैसे युद्धचालित	–	विदेशी मुद्रा भंडारों का संचयन	–
आधार चरण (1950-1967)		स्वचालित मौद्रिकरण की पहल - तुलन-पत्र पर विस्तारकारी प्रभाव	बढ़ती हुई रिजर्व आवश्यकताएं - क्षेत्र विशिष्ट को पुनर्वित्त तुलन-पत्र पर विस्तारकारी प्रभाव	तुलन-पत्र निवल घरेलू आस्तियों संचलित भुगतान संतुलन में गिरावट	विकास वित्त संस्थाओं को तुलन-पत्र समर्थन लागू किया
सामाजिक नियंत्रण का चरण (1968-1990)		मौद्रीकरण भारी स्वचालित - सरकार को भारी क्रेडिट			बहुत सुदृढ़ और परिणाम स्वरूप बड़ी मात्रा में एलटओ कोषों में अंतरण
वित्तीय उदारीकरण (1991 से आगे)		तदर्थ खजाना बिलों की रोक के साथ सरकार को क्रेडिट कम होना - बढ़ता हुआ निष्प्रभावीकरण और एमएसएस लागू किया जाना	रिजर्व अपेक्षाओं में कमी - बैंकों की जमाएं नीचे आना	तुलन-पत्र निवल विदेशी आस्तियों संचालित - विदेशी मुद्रा विनिमय का विशाल स्टॉक - रिज़र्व संचयन - गैर ऋण सृजन प्रकृति का	विकासात्मक संस्थाओं व बाज़ार के प्रति भूमिका में परिवर्तन - लेकिन एलटीओ कोष में अंतरण नाममात्र के हो गए

[26] विनिमय दर उतार-चढ़ावों के मामलें में, रिजर्व बैंक आस्ति की तरफ विदेशी मुद्रा का पुनर्मूल्यांकन करता है और लाभों/हानियों को देयताओं की तरफ इसके मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यांकन खाते में रखता है।

ब्याज दर परिवेश रिज़र्व बैंक के 'बट्टा' और 'ब्याज अर्जन' पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है, जब कि बैंक के निवेश खाते द्वारा ब्याज दर उतार-चढ़ावों में उलटा संबंध दर्शाया। निर्माणकारी वर्षों में अंतरराष्ट्रीय ब्याज दर परिवेश, तुलन-पत्र में विदेशी मुद्रा आस्तियों के बड़े हिस्से के कारण, बैंक की ब्याज आय एक महत्वपूर्ण निर्धारक के रूप में उभर कर आया। उदाहरण के लिए 1945-46 की 15.6 करोड़ रुपए की आय से कम होकर 1946-47 में 10.01 करोड़ हो जाना मुख्यतः उस साल स्टर्लिंग धारिताओं पर कम प्रतिफल प्राप्त होने का परिणाम था। 1954 में सरकार के नकदी शेष जमाराशि के पुनर्भरण के प्रयोजन के लिए तदर्थ खजाना बिलों के सृजन के साथ, आय के 'बट्टा' अवयव ने बैंक के तुलन-पत्र में इन बिलों के बढ़ते आकार को दर्शाना शुरू कर दिया। 'सामाजिक नियंत्रण' चरण, सरकार को वित्तीय समर्थन प्रदान करने में विस्तार का चरण था अतः वित्तीय समर्थन की शर्तें, बैंक की ब्याज और आय के महत्वपूर्ण निर्धारक बन गए। 1980 के दशक के मध्य सरकारी प्रतिभूतियों पर कूपन दरों में वृद्धि का बैंक के ब्याज अर्जन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा।

8.85 सुधार चरण के पश्चात बैंक के आय रेखा चित्र में उल्लेखनीय रूप से परिवर्तन आया है। अपेक्षाकृत उच्च प्रतिफल देने वाली घरेलू आस्तियों को कम आय देने वाली विदेशी मुद्रा आस्तियों द्वारा स्थापना करने से रिज़र्व बैंक की वार्षिक आय में संकुचन हुआ है। इसके अतिरिक्त, बोर्ड के परे घरेलू और अंतरराष्ट्रीय ब्याज दरों में भी कमी आई है। बैंकिंग व्यवस्था की रिजर्व बैंक पर घटी निर्भरता जो दोनों तत्वों, निर्यात पुनर्वित्त को छोड़कर पुनर्वित्त सुविधाओं की वापसी सुविधाजनक चलनिधि परिस्थितियों से चालित रही, ने भी बैंक के आय अर्जन में कमी लाई। इन सभी कारकों को एक साथ लें, तो इन्होंने रिज़र्व बैंक के लाभों पर दबाव बनाया है।

8.86 व्यय के गठन का विश्लेषण, कुल व्यय में स्थापना व्यय के हिस्से में वृद्धि दर्शाता है, विशेष रूप से 1950 से 1967 की अवधि

सारणी 8.11: कुल व्यय का गठन (ब्याज व्यय को छोड़कर)

(प्रतिशत)

चरण	स्थापना व्यय	गैर स्थापना व्यय
1	2	3
निर्माण चरण (1935-1949)	38.6	61.4
आधार चरण (1950-1967)	51.1	48.9
सामाजिक नियंत्रण चरण (1968-1990)	40.5	59.5
उदारीकरण चरण (1991 से आगे)	31.0	69.0

के दौरान जो रिज़र्व बैंक के भौगोलिक और कार्यगत विस्तार को प्रतिबिंबित करता है। 1950 से 1967 के दौरान, बैंक के कार्यालयों की संख्या 8 से 16 हो गई, जबकि कर्मचारियों की संख्या 6046 से 17,717 हो गई। उदारीकरण के अगले चरण में स्थापना व्यय का कुल व्यय में हिस्सा कम हुआ (सारणी 8.11) गैर स्थापना खर्चों का एक मुख्य अवयन 'एजेन्सी प्रभार' हैं, जिसमें, एजेन्सी बैंकों को कमीशन भुगतान में हुए संशोधन के कारण आवधिक वृद्धि हुई, जबकि इन अंतरों का वर्ष दर वर्ष सरकारी पण्यावर्त पर प्रभाव भी दर्शाता है। बैंक की वाणिज्य बैंकों पर, इसके प्रतिनिधि के रूप में विभिन्न कार्यों के निष्पादन जो मुद्रा वितरण, प्रेषणों और अन्य बैंकिंग अपेक्षाओं से संबंधित थे, बढ़ती निर्भरता ने भी व्यय के इस अवयव की वृद्धि में योगदान दिया है। ब्याज व्यय के विवरण जो 1988 से आगे के उपलब्ध हैं, दर्शाते हैं कि ब्याज व्यय, 1988 से 1990 की अवधि के दौरान, कुल व्यय का सबसे बड़ा घटक था, तथा मुख्य रूप से, बैंकों को पात्र नकदी आरक्षित अनुपात शेष जमाराशि (सीआरआर) पर ब्याज भुगतान के रूप में था। तथापि, उदारीकरण चरण के दौरान, बैंकों के सीआरआर में क्रमिक कटौती के माध्यम से, तथा इन शेषों पर दिए जाने वाले पारिश्रमिक के यौक्तीकरण (और इसे बैंक दर से जोड़ने) के साथ स्थापित किए गए सुधारात्मक तंत्र के परिणाम स्वरूप ब्याज भुगतान में बड़ी गिरावट आई (चार्ट VIII.4)। हाल के वर्षों में, सीआरआर शेषों पर पारिश्रमिक बैंक दर से कम हो

चार्ट VIII.4: ब्याज व्यय

ब्याज व्यय, कुल व्यय के प्रतिशत के रूप में

प्रतिशत

सीआरआर पर ब्याज भुगतान बैंक की जमाओं के प्रतिशत के रूप में

प्रतिशत

गया है तथा 3.5 प्रतिशत निर्धारित है (बैंक दर से कम) जिसके द्वारा बैंकों के सीआरआर शेषों पर ब्याज व्यय में और कमी।

8.87 हाल के वर्षों में, जबकि रिज़र्व बैंक का कुल व्यय, एजेंसी प्रभारों, और प्रतिभूति मुद्रण व्ययों, स्थापना व्यय के कारण बढ़ रहा है, सामान्यतः एक ह्रासमान प्रवृत्ति को प्रदर्शित किया है। तथापि, रिज़र्व बैंक द्वारा लागू की गई समयपूर्व स्वैच्छिक सेवा निवृत्ति योजना (ओईआरएस) के अंतर्गत बड़े पैमाने पर सेवानिवृत्ति तथा घटती जा रही बट्टा दर के परिदृश्य में, बीमांकक मूल्यांकनों द्वारा अनुमानित देयताओं में वृद्धि के कारण 2002-03 के वर्ष से, उपदान और अधिवर्षिता कोष का समग्र स्थापना व्यय में हिस्सा एक वृद्धिशील प्रवृत्ति दर्शा रहा है[27]। ओईआरएस (जो 31 दिसंबर, 2003 को बंद हो गई) के कारण कार्य बल में 4.468 की कमी आई जो 30 जून 2003 को कार्यबल के 15.8 प्रतिशत को चित्रित करती थी (आरबीआई 2004) जबकि, घटती जा रही ब्याज दरों की पृष्ठभूमि में वृहत पेंशन देयताओं के लिए व्यवस्था करना चुनौतीपूर्ण है, रिज़र्व बैंक ने उपदान और अधिवर्षिता कोष में योगदान करने में बीमांकक मूल्यांकनों का अनुपालन किया है (सारणी 8.12)।

8.88 बैंक की आय और व्यय में घटनाक्रम को प्रतिबिंबित करते हुए, अधिशेष की दर जिसमें सांविधिक कोष में योगदान शामिल हैं, किंतु प्रावधानों नामतः आकस्मिकता रिज़र्व को आबंटन को निकाल कर, में 1940 के पूर्व दशक में वृद्धि दर्ज की गई, उसके बाद 1940 दशक के उत्तरार्ध से 1950 तक कमी की अवधि रही। तथा 1971-75 के दौरान फिर वृद्धि (चार्ट VIII.5)। अधिशेष की दर में 1970 दशक के मध्य से 1995 तक घटत की प्रवृत्ति बनी रही, जो घरेलू प्रतिभूतियों संभाग में, तदर्थ खजाना बिलों के बड़े हिस्से को दर्शाता था, जिनपर 4.6 प्रतिशत की दर से बट्टा दर लागू की, तथा रिज़र्व अपेक्षाओं में निरंतर वृद्धि तथा रिज़र्व बैंक के पास इस प्रकार की जमाओं पर पारिश्रमिक में बढ़ोतरी के बाद था।

8.89 1975-1982 और 1985-1991 की अवधि, राष्ट्रीय कृषि और औद्योगिक क्रेडिट कोषों में बढ़ते हुए योगदान को चित्रित करता है जो कृषि और उद्योग को जो अंततः इन क्षेत्रों की विकास संभावनाओं में संवर्धन के उद्देश्य से था, उच्च क्रेडिट प्रवाह संभव बनाने के लिए था। इन कोषों में, लाभ में से योगदान बैंक के विवेकाधीन रहा, लेकिन बैंक का सांविधिक कोषों में अधिक आबंटन समर्थन के निर्णय में सरकार को लाभ अंतरण में तदनुसार कमी सापेक्ष संदर्भ में अंतर्निहित था। वर्ष के अंत में 1991-92 के दौरान, इन कोषों के लिए कोई आबंटन नहीं किया गया, इसके बाद 1992-93 से आगे प्रत्येक चार सांविधिक कोषों में प्रतिवर्ष एक करोड़ रुपए का योगदान करने की प्रथा का अनुसरण किया गया (चार्ट VIII.6)। राष्ट्रीय कोषों में अंतरण को कम किया जाने का प्रत्यक्ष परिणाम सरकार को 1993-94 से 2002-2003 की अवधि के दौरान अधिक लाभ अंतरण में हुआ।

8.90 रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र में 1982 में कई वर्षों तक बड़ी राशि की अदिनांकित प्रतिभूतियाँ दिखाई जाती रही हैं, जो तदर्थ खजाना बिलों के परिवर्तन से जनित थी और 4.6 प्रतिशत की कूपन दर से थी। खुले बाज़ार परिचालनों को प्रभावी रूप में संचालित करने के लिए

सारणी 8.12: रिज़र्व बैंक उपदान और अधिवर्षिता कोष

(रुपए करोड़ में)

वर्ष	स्थापना व्यय	उपदान और अधिवर्षता कोष	उपदान और अधिवर्षता कोष, स्थापना व्यय के प्रतिशत के रूप में (प्रतिशत)
1	2	3	4
1980-81	71	1	1.4
1990-91	244	9	3.7
2000-01	871	38	4.4
2001-02	1304	525	40.3
2002-03	1489	684	45.9
2003-04	2233	1025*	45.9
2004-05	1647	756	45.9

* समयपूर्व सेवानिवृत्ति योजना (ओईआरएस) का विकल्प देने वालों को भुगतान की गई अनुग्रह राशि शामिल हैं।

चार्ट VIII.5: तुलन-पत्र आकार में अधिशेष (प्रावधानों को निकालकर) का प्रतिशत

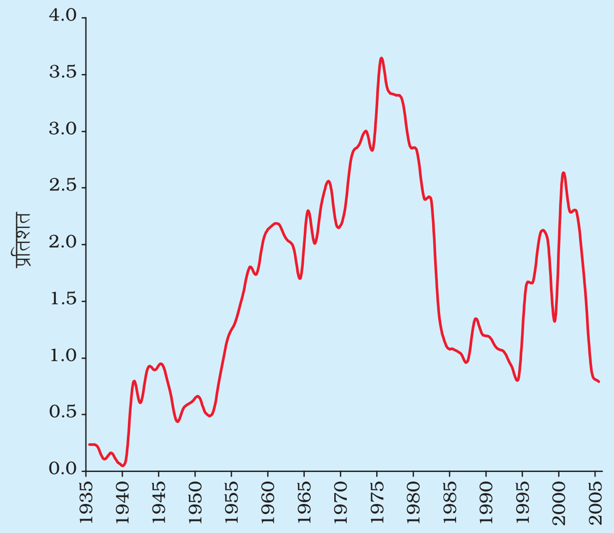

[27] उपदान और अधिवर्षता कोष में शामिल है, क) पेंशन कोष, ख) उपदान कोष और ग) अवकाश नकदीकरण (सेवानिवृत्त कर्मचारी) कोष।

चार्ट VIII.6: दीर्घकालीन कोष : ऋण और अग्रिमों का बकाया शेष

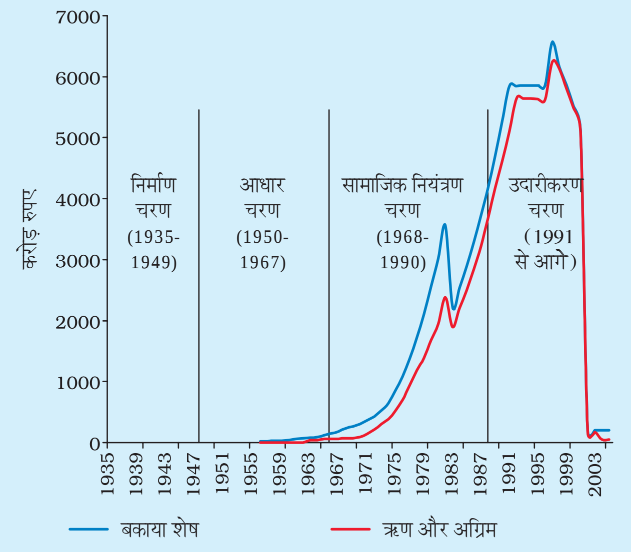

सरकारी पेपर के अपर्याप्त स्टाक को देखते हुए, रिज़र्व बैंक द्वारा, गैर अंतरणीय 4.6 प्रतिशत की अदिनांकित विशेष प्रतिभूतियों के सम्पूर्ण स्टॉक को, 2002-03 तक विपणन योग्य प्रतिभूतियों में परिवर्तित करना प्रारंभ कर दिया था। तबसे, सरकार को बढ़े हुए लाभ अंतरण में, नियमित लाभ अंतरण के अतिरिक्त, इस प्रकार के परिवर्तनों के फलस्वरूप होने वाले ब्याज विभेदन के लिए क्षतिपूर्ति भुगतान भी शामिल है। (चार्ट VIII.7)

चार्ट VIII.7: कुल अधिशेष का वितरण

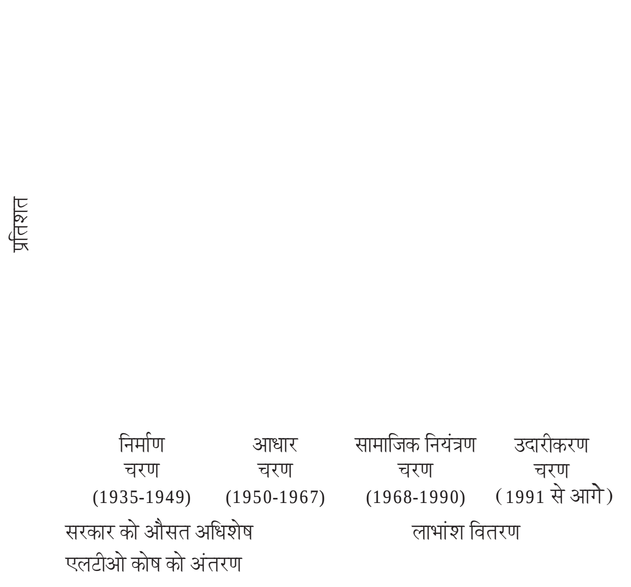

V. कुछ हाल के मुद्दे

8.91 गत दिनों से केंद्रीय बैंकों के तुलन-पत्र की ओर वर्धमान रूप से ध्यान दिया जाने लगा है। अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संगठन और व्यक्तिगत केंद्रीय बैंकों द्वारा महत्वपूर्ण भूमिका अदा की गई है। इस भाग में भारत के लिए तीन महत्वपूर्ण मुद्दों को हाल के घटनाक्रम की पृष्ठभूमि में, जिनके भविष्य में महत्वपूर्ण प्रशाखन होंगे, को प्रमुखता से उजागर किया गया है।

लेखांकन मानक और पारदर्शिता[28]

8.92 वर्तमान में आधारभूत लेखांकन मानक नामतः अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक (आईएएस), अमेरिकी सामान्यतः स्वीकृत लेखांकन सिद्धांत (यूएसजीएएपी) और यूरोपियन केंद्रीय बैंक जीएएपी, केंद्रीय बैंकों द्वारा प्रयोग में लिए जा रहे हैं। आइएएस को अपनाए जाने में जोखिम प्रबंध प्रथाओं जिनमें केंद्रीय बैंक की, परिचालनगत निर्णय लेना और जोखिम कार्यनीति शामिल हैं, के लिए निहितार्थ हैं (बॉक्स VIII.3)।

8.93 भारतीय परिप्रेक्ष्य में, रिज़र्व बैंक, उपचय आधार पर आय अभिनिर्धारण, निवेश संविभाग का आवधिक पुनर्मूल्यन और बाहरी लेखा परीक्षा की आधारभूत अपेक्षाओं जैसा कि आई एएस द्वारा निर्धारित हैं, की पूर्ती करता है। कतिपय मामलों में, रिज़र्व बैंक, वास्तव में, आई ए एस द्वारा निर्धारित से भी सख्त मानदंडों का अनुपालन करता है। उदाहरण के लिए, रिज़र्व बैंक अपने निवेशों को बही मूल्य या बाज़ार मूल्य के निचले स्तर पर चिह्नित करता है, जिसके द्वारा अप्राप्त हानियों को आय के विरुद्ध बिना अप्राप्त लाभों को अभिनिर्धारित किए समायोजित करता है। विदेशी मुद्रा आस्तियों के मामले में, विनिमय दर परिवर्तनों से पैदा होने वाले पुनर्मूल्यनों को संतुलित रूप से एक समायोजन खाते में अंतरित करता है, जिसे मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाते का नाम दिया गया है (जाधव व अन्य 2003) (बॉक्स VIII.4)।

8.94 भारत में सुधार चरण, रिज़र्व बैंक की वित्तीय विवरणियों की बढ़ती हुई पारदर्शिता की दिशा में बड़े परिवर्तन को चिह्नित करते हैं, खास तौर से 1990 के उत्तरार्ध दशक में। यद्यपि 1980 के दशक के उत्तरार्ध में बैंक खातों की पारदर्शिता में वृद्धि के लिए कुछ प्रयास किए गए थे, रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र में आय और व्यय के अंतर्गत विभिन्न मदों के विवरण उपलब्धा नहीं थे; उदाहरण के लिए आय, ब्याज भुगतानों और आंतरिक भंडारों के लिए आबंटन के पश्चात दिखाई जाती थी। आंतरिक भंडार साफ साफ उद्घाटित नहीं किए जाते थे और उन्हें अन्य देयताओं के अंतर्गत मिला दिया जाता था (तारापोर, 1996)।

[28] केंद्रीय बैंकिंग के लेखांकन सिद्धांतों तथा साथ ही पारदर्शिता पर पारदेशीय प्रवृत्तियों को पूर्व में ही उक्त खंड II में विश्लेषित किया जा चुका है।

बॉक्स VIII.3
अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक और केंद्रीय बैंक

अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानक (आइएएस) सुरक्षित की गई आस्तियों और संबंधितसुरक्षाकरण लिखतों के प्रलेखीकरण, केंद्रीय बैंकों के तुलन-पत्र में सरकारी ऋण यंत्रों का उचित मूल्यांकन जो, यदि बाजार मूल्य उपलबध नहीं हो और स्वर्ण का अभिनिर्धारण (एक गैर वित्तीय आस्ति) लागत या ऋण योग्य मूल्य में से निम्नतर, जो बट्टाकृत नकदी प्रवाह तकनीकों पर आधारित, के मानदंड निर्धारित करते हैं। जबकि सुरक्षाकरण पर आईएएस के मानदंड विद्यमान जोखिम प्रबंध कार्यनीतियों में सुधार चाहते हैं जिनसे अतिरिक्त लागत और परिचालनगत अक्षमताएं होगी, अप्राप्त लाभों का आय के रूप में प्रस्तावित प्रतिपादन उनका लाभांश के रूप में सरकार को वितरण, केंद्रीय बैंकों को, उनके मुद्रा आपूर्ति और मुद्रास्फिति पर संभावित प्रभाव की दृष्टि से स्वीकार योग्य नहीं है। यह भी आशंका है कि आईएएस का कार्यान्वयन, केंद्रीय बैंकों की मुद्रा नीति भूमिका के हिस्से के रूप में वित्तीय बाज़ारों से सांख्यकी आंकड़ों के एकत्रीकरण की आवश्यकता के कारण उन पर अतिरिक्त भार पड़ेगा।

आईएएस 39 के अंतर्गत उचित मूल्यांकन प्रणाली (वित्तीय लिखत : अभिनिर्धारण और मापन) 1 जनवरी 2001 से प्रभावी, अधिकांश आस्तियों और देयताओं के बाज़ार मूल्य (न कि ऐतिहासिक लागत) पर आवधिय मूल्यांकन की मांग करता है अभिनिर्धारित लेकिन अप्राप्त लाभों को निवल लाभ गणना में शामिल किए जाने की थी। यह मूल्यांकन ऋण पारदर्शिता के उच्चस्तर और जबाबदारी के कारणों से सुझाई गई है। तथापि, उचित मूल्य प्रकटनों का अपनाया जाना पार देशों के केंद्रीय बैंकों में एक समान नहीं है (अनुबंध VIII.3)। अनेक मामलों में मूल्यांकन परिवर्तन सीधे ही पुनर्मूल्यन रिजर्व में बिना आय विवरणी में दर्शाए, अंतरित कर दिया जाता है। जब कि संशोधित आईएएस 21 यह अपेक्षा करता है कि मौद्रिक आस्तियों पर सभी लाभों और हानियों (वसूली गई या न वसूली गई) को आय विवरण में अभिनिर्धारित किया जाए (और-मौद्रिक आस्तियों का पुनर्मूल्यन किया जाना अपेक्षित नहीं है), आईएएस 39 ने आस्तियों और देयताओं के उचित मूल्य के वृहत्तर उपयोग की शुरुआत की है, इस प्रावधान के साथ कि सभी संबंधित लाभों और हानियों (प्राप्त हुई और प्राप्त नही हुई दोनों) को आय विवरणी में रिपोर्ट किया जाना चाहिए। लेखांकन मानक 'ऋणों' और प्राप्तियों तथा आस्तियों जिन्हें 'परिपक्वता वाली' श्रेणी में वर्गीकृत किया गया हो, चुकता कृत लागत पर हो, का मूल्यांकन लचीले रूप में अनुमत करता है। इसके अतिरिक्त, अवशिष्ट वित्तीय आस्तियों (बिक्री को उपलब्धा) के मामले में अप्राप्त मूल्यांकन अवयव को सीधे ही पुनर्मूल्यन रिजर्व में अंतरित किया जा सकता है। आईएएस 39, में सभी व्युत्पन्नों का उचित मूल्यन किया जाना और तुलन-पत्र में ले जाया जाना अपेक्षित है। उचित मूल्यांकन लेखांकन मापदंड, सूचित की गई अर्जन के लिए संभाव्य अस्थिरता हेतु एक निर्मित पक्षपात रखते हैं, अतः अप्राप्त लाभों को लाभांशों के रूप में बांटने से संलग्न जोखिम के बारे में आधारभूत मुद्दा उठाते हैं । आईएएस 32 (पूंजी की परिभाषा) के मामले में, यह आशंका है कि इसे कठोरता से लागू किए जाने से कुछ विद्यमान पूंजी लिखतों को देयताओं (ईक्विटी नहीं) की श्रेणी में बदलना होगा। गुणवत्ता ह्रास और प्रावधानन पर भी कडे नियम हैं, जो अप्रत्याशित परिस्थितियों के लिए सामान्य बैंकिंग रिजर्व सृजन को भी निषिद्ध करते हैं (फोस्टर 2004)। पार देशों के अनुभव बताते हैं कि केंद्रीय बैंकों में विविध प्रकार की लेखांकन प्रथाएं प्रचलित हैं । (सारणी)

सारणी : चयनित केंद्रीय बैंकों की लेखांकन नीतियां

देश	लेखांकन प्रथाएं
आस्ट्रेलिया	आस्ट्रेलिया लेखांकन मानक बोर्ड द्वारा जारी, लेखांकन मानकों और लेखांकन व्याख्याओं का अनुसरण करता है तथापि यह पहली बार 30 जून 2006 को वर्ष के अंत में के लिए अंतरराष्ट्रीय वित्तीय रिपोर्टिंग मानकों (एआईएफआरएस) के आस्ट्रेलिया समतुल्यों के अंतर्गत अपनी वित्तीय विवरणियाँ अपनाएगा और प्रकाशित करेगा। नए लेखांकन मानकों के कार्यान्वयन में, नए प्रकटीकरण की दृष्टि से निहितार्थ हैं।
सिंगापुर	1 जनवरी 2003 से लागू सिंगापुर वित्तीय रिपोर्टिंग मानकों का अनुसरण करता है। वित्तीय विवरणियाँ कम सूचना प्रकट करती हैं, उससे जो लेखांकन मानकों के अंतर्गत वांछित होगी, इस विचार को ध्यान में रखते हुए कि सिंगापुर की मौद्रिक नीति के प्रभावी प्रबंधन के लिए, यह उचित होगा कि, कुछ मामलों में लेखांकन मानकों को न अपनाया जाए। लेखे, ऐतिहासिक लागत परंपरा के अनुसार तथा उपचय सिद्धांत पर तैयार किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त, ब्याज आय सीधी कटौती प्रणाली पर अभिनिर्धारित की जाती है बजाए एफआरएस 18 के अंतर्गत प्रभावी प्रतिफल आधार की अपेक्षाओं के। निवेश आस्तियां लागत और बाज़ार मूल्य के निम्नतर पर दिखाई जाती हैं। उदत बोली, मध्य या अंतिम लेन-देन की कीमत बाजार मूल्य के मापन के रूप में प्रयुक्त की जाती हैं जो परे आस्ति वर्गों पर निरंतरता के आधार पर होती हैं।
कनाडा	वित्तीय विवरण केनेडियन सामान्यतः स्वीकृत लेखांकन सिद्धांतों (जीएएपी) के अनुसार बनाए जाते हैं।
इटली	ईसीबी द्वारा जारी लेखांकन नियम और सिफारिशों को पूर्णतः लागू करता है।
संयुक्त राज्य अमरीका	संघीय रिजर्व अपने वित्तीय विवरण वित्तीय लेखांकन मैन्युअल के अनुसार बनाता है, जो एक केंद्रीय बैंक की प्रकृति और कार्यकलापों के लिए जीएएपी की अपेक्षा अधिक उपयुक्त मानी जाती है।
यूरोसिस्टम	युरोपियन केंद्रीय बैंक ने अपने स्वयं के लेखांकन मानक बनाएं है जो यूरोपियन व्यवस्था के केंद्रीय बैंकों (ईएससीबी) द्वारा अपनाए जाते हैं। तथापि, वे मोटे रूप से अंतरराष्ट्रीय लेखांकन मानकों (आईएएस) के अनुरूप हैं, इस अपवाद के साथ कि अप्राप्त मूल्यांकन परिवर्तनों के लिए अलग लेखांकन निरूपण है।

8.95 सर्वोत्तम लेखांकन/विवेकपूर्ण मानदंडों को क्रमिक रूप से अपनाएं जाने के साथ ही, बैंक के 'वार्षिक लेखें' के प्रस्तुतिकरण में पारदर्शिता और प्रकटीकरण के संदर्भ में, उदारीकरण चरण के दौरान विशिष्ट सुधार प्रतिबिंबित हुआ है। भंडारों के आबंटन और सरकार को लाभ अंतरण की एक पारदर्शी व्यवस्था पूर्व में ही स्थापित कर दी गई है। 1997-98 के वर्ष के अंत में बैंक लेखों में 'लेखों पर टिप्पणी' वर्ष के दौरान लेखांकन नीतियों और प्रक्रियाओं में हुए परिवर्तनों को समाहित किया गया है तथा 'अन्य देयताओं' और 'अन्य आस्तियों' के अवयवों से संबंधित सूचना को भी प्रकट किया गया है। बैंक के अंतिम खाते अब तुलन-पत्र के गठन, मूल्यांकन प्रथाओं, लेखांकन प्रथाओं में परिवर्तन और आय तथा व्यय के विभिन्न स्रोतों से संबंधित विस्तृत सूचना का प्रसार करते हैं (सारणी 8.13)।

बॉक्स VIII.4
भारत में स्वर्ण मूल्यांकन

- स्वर्ण सिक्के और सोना चांदी, मूल्यांकन की सांविधिक दर 44.41 करोड़ पर अपरिवर्तित रहे, जो धारा 33(4) के अनुसार 1935 से 1955 के दौरान सरकारी साम्यता पर 8.47512 ग्रेन प्रति रुपए अथवा 21 रुपए 3 आना और दस पैसे प्रति दस तोला थी।
- रिज़र्व बैंक (संशोधन) अधिनियम 1956 के अंतर्गत, आनुपातिक रिज़र्व प्रणाली में परिवर्तन के साथ, जिसमें, निर्गम विभाग की 40 प्रतिशत आस्तियों (तथा 40 करोड़ रुपए के न्यूनतम स्वर्ण सिक्के और सोना चांदी) से, विदेशी प्रतिभूतियों में न्यूनतम 400 करोड़ रुपए की धारिताएं तथा स्वर्ण सिक्कों और सोना चांदी में 115 करोड़ रुपए थे, स्वर्ण का, आईएमएफ द्वारा सहमत, सरकारी साम्यता मूल्य पर, सितम्बर 1949 में, रुपए के अवमूल्यन के साथ पुनर्मूल्यन किया जाना तय किया गया नामतः 2.88 ग्रेंस (पूर्व में 8.47512 ग्रेंस) जो परिष्कृत स्वर्ण के 0.186621 ग्राम प्रति रुपए बराबर था या 62.8 रुपए प्रति तोला (अर्थात यू एस डॉलर 35 प्रति औंस के समतुल्य, जैसा आईएमएफ द्वारा सहमत हुआ) स्वर्ण का पुनर्मूल्यन 6 अक्तूबर 1956 को हुआ जिससे निर्गम विभाग में रखे स्वर्ण का मूल्य 117.76 करोड़ रुपए हो गया। 77.74 करोड़ रुपए का कुल पुनर्मूल्यन मुनाफे में से 75 करोड़ रुपए रिज़र्व कोष में अंतरित किए गए और शेष 274 करोड़ रुपए सरकार को देय अधिशेष लाभ में शामिल किए गए।
- जून 1966 में रुपए के अवमूल्यन के साथ ही निर्गम विभाग में रखे स्वर्ण का पुनर्मूल्यन, बैंकिंग कानून (संशोधन) अधिनियम 1968 की धारा 26 तथा रिज़र्व बैंक अधिनियम में संशोधन के माध्यम से तत्कालीन प्रचलित साम्यता दर (आईएमएफ) जो परिष्कृत स्वर्ण की 0.118489 ग्राम प्रति रुपए अथवा 98.44 रुपए तोला (84.39 रुपए प्रति दस ग्राम) के संदर्भ में 1 फरवरी 1969 को किया गया। पुनर्मूल्यन के बाद, वर्ष के अंत में 30 जून 1969 को, निर्गम विभाग में रखे गए स्वर्ण का मूल्य बढ़कर 182.53 करोड़ रुपए (115.89 करोड़ रुपए से) हो गया। स्वर्ण के पुनर्मूल्यन पर हुआ मुनाफा रिज़र्व कोष में अंतरित कर दिया गया।
- अक्तूबर 1990 में रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 की धारा 33(4) में एक संशोधन द्वारा, 17 अक्तूबर 1990 से स्वर्ण सिक्कों/सोनाचांदी का पुनर्मूल्यन 'अंतरराष्ट्रीय कीमतों से अधिक नहीं' किए जाने का प्रावधान किया गया। तदनुसार, अक्तूबर 17, 1990 को स्वर्ण का पुनर्मूल्यन 1,991.64 रुपए ग्राम पर किया गया तथा स्वर्ण के मूल्य में अधिमूल्यन की राशि रिज़र्व कोष में जमा कर दी गई जो बढ़कर 6500 करोड़ रुपए हो गई। तथापि अब स्वर्ण की कीमतों में बदलाव के कारण होने वाले सभी पुनर्मूल्यन लाभों/हानियों को सीजीआरए में बुक किया जाता है।

स्रोत : भारतीय रिज़र्व बैंक की वार्षिक रिपोर्टें - विभिन्न वर्ष

जोखिम प्रबंध

8.96 चालू वैश्विक आर्थिक व्यवस्था की पृष्ठभूमि में किसी भी केंद्रीय बैंक के लिए प्रभावी जोखिम प्रबंध सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है, जो इसके तुलन-पत्र को सुदृढ़ बनाने और वित्तीय बाजार में इसकी विश्वसनीयता को बनाने में योगदान देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। केंद्रीय बैंकों की जोखिम प्रबंध कार्यनीति, प्रणालीगत जोखिमों के अवसर को कम करने के माध्यम से वित्तीय स्वामित्व को बनाए रखने की उनकी समग्र कार्यनीति का महत्वपूर्ण अवयव है। हाल के घटनाक्रम इस ओर इशारा करते हैं, कि केंद्रीय बैंकों की ओर से जोखिम जागरूकता और तैयारियों में जोखिम प्रबंध कार्यनीतियों के संदर्भ में, वृद्धि हुई है, यद्यपि यह संतोषजनक नहीं मानी जा रही[29]। बावजूद इसके कि जोखिम प्रबंध कार्यनीतियों

सारणी 8.13: रिज़र्व बैंक की वार्षिक वित्तीय विवरणियों में बढ़ती हुई पारदर्शिता और प्रकटीकरण

मद	शुरु करने का वर्ष	मद	शुरु करने का वर्ष
1	2	1	2
ब्याज प्राप्ति का विवरण	1979-80 से	विदेशी मुद्रा आस्तियों मे अप्राप्त लाभ	1994-95
बैंकों को उनके रिज़र्व बैंक के पास रहे सीआरआर अधिशेषों पर भुगतान किया ब्याज तथा सांविधिक कोषों में योगदान	1984-85	घरेलू निवेशों (अन्य) से प्राप्त आय का विवरण	1995-96
ब्याज भुगतान व्यय की एक मद के रूप में तथा सांविधिक कोषों में योगदान	1987-88	आस्तियां/देयताएं, विनिमय घट-बढ़ रिज़र्व विनिमय समानीकरण खाता और सीआर	1995-96
आय प्राप्तियों का विवरण नामतः ब्याज, बट्टा, विनिमय कमीशन	1990-91	सहायक /सहयोगी संस्थाओं के शेयरों में निवेश	1995-96
		लेखांकन नीतियों और प्रक्रियाओं में परिवर्तन	1997-98
महतवपूर्ण लेखांकन नीतियां और खातों पर टिप्पणी	1991-92	खुले बाजार परिचालनों से आय	1999-2000
विदेशी मुद्रा जमा योजना के लिए विनिमय कवच के लिए प्रावधानों का विवरण	1991-92	सरकार को, विशिष्ट प्रतिभूतियों को विपणनयोग्य प्रतिभूतियों में बदलने के कारण अधिशेष का अंतरण	1999-2000
वार्षिक रिपोर्ट में सारणी जो आय और व्यय में प्रवृत्ति दर्शाती है	1991-92	राष्ट्रीय आवास क्रेडिट (दीर्घकालीन परिचालन) कोष विवरण	2001-02
ब्याज भुगतान विवरण	1991-92	विदेशी और घरेलू स्रोतों से निरपेक्ष और प्रतिशत रूप में निवल प्राप्तियां (विदेशी प्रतिभूतियों के मामले में पूंजीगत लाभ/हानि तथा घरेलू प्रतिभूतियों की बिक्री पर लाभ को हटाकर).	2002-03
घरेलू और विदेशी स्रोतों से व्यय का विघटन	1994-95	विदेशी मुद्रा और घरेलू आस्तियों में प्रवृत्ति	2002-03
आकस्मिकता रिज़र्व में अंतरण	1994-95		
वितरण योग्य आय का समायोजन	1994-95		
एफसीएनआरए हानियों के लिए सरकार को अंतरण	1994-95		
आकस्मिकता रिज़र्व शेष	1994-95		

[29] 1999 में केंद्रीय बैंकिंग सर्वेक्षण मे यह उद्घटित हुआ कि, सर्वेक्षण किए गए केंद्रीय बैंकों में से केवल 15 प्रतिशत में ही स्वतंत्र जोखिम प्रबंध इकाइयाँ थी।

को अपनाने के प्रति समर्थन के दृष्टिकोण में परिवर्तन है, कभी कभी एक सक्रिय जोखिम प्रबंध दृष्टिकोण अपनाने से बचा जाने की चेष्टा की जाती है यदि यह केंद्रीय बैंक, वित्तीय व्यवस्था और विनिमय दर स्थायित्व के बारे में सांविधिक उद्देश्यों से सामंजस्यपूर्वक नहीं है। (बॉक्स VIII.5)।

बॉक्स VIII.5
केंद्रीय बैंकिंग में जोखिम प्रबंध

केंद्रीय बैंक के प्रमुख कार्यों नामतः मौद्रिक और विनिमय दर नीति, भुगतान प्रणाली में चूक, पर्यवेक्षण और संकट प्रबंध में अनेक वित्तीय और गैर वित्तीय जोखिम जैसे रिजर्व प्रबंध जोखिम, परिचालनगत जोखिम, भुगतान और निपटान प्रणाली से जुड़ी जोखिम, प्रतिष्ठात्मक जोखिम, विनियामक जोखिम, प्रौद्योगिकीय जोखिम और उधारी का आखरी सहारा होने से जुड़ी जोखिम, शामिल होती हैं।

केंद्रीय बैंकों के लिए जोखिम प्रबंध का एक प्रमुख क्षेत्र, विदेशी विनिमय रिजर्व के कार्यनीतिक प्रबंध से संबंधित है। केंद्रीय बैंक के निवेश संबंधी निर्णय अक्सर, उद्देश्य कार्यों, आस्तियों के प्रकार, निवेश लिखत और अन्य विस्तृत निवेश दिशा निर्देशों जो आदेशित होते हैं से मजबूर होते हैं। अंतर्निहित विचार यह है कि केंद्रीय बैंकों को उनके निवेश में विभाग की बाजारी ऋण और चलनिधि जोखिमों से रक्षा करनी चाहिए। इन मजबूरियों के रहते केंद्रीय बैंकों की विदेशी मुद्रा रिजर्व प्रबंध कार्यनीति, चलनिधि, सुरक्षा और उचित प्रतिलाभ विचारों से आमतौर से अंतर्निहित होती है। तथापि रिजर्व आस्तियों पर प्रतिलाभ में सुधार की वित्तीय मजबूरियों ने हाल के समय में, जोखिम नियंत्रण नीति से एक अनुसक्रिय जोखिम प्रबंध दृष्टिकोण बदलने की ओर प्रोत्साहित किया है। यह निजी रिजर्व प्रबंध कार्यनीतियों और प्रणालियों, जो आक्रमक और अधिक जोखिमपूर्ण जाने जाते हैं के बढ़ते हुए प्रयोग में प्रतिबिंबित होता है। जोखिम दृष्टिकोण में आ रहे एक स्पष्ट दिखाई दे रहे परिवर्तन के साथ, अनेक केंद्रीय बैंकों द्वारा जोखिम प्रबंध की एक केह्नित नीति अपनाई गई है। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत, बल न केवल विदेशी मुद्रा रिजर्व के दक्ष आबंटन और प्रबंध पर है, वरन् एक सुदृढ़ गवर्नेंस ढाँचे के विकास पर भी है जो जोखिम जागरुकता ला सके तथा स्वनिर्मित जबाबदारी धाराओं के माध्यम से एक अनुशासन का तत्व लाने को भी प्रेरित कर सके। इसके अतिरिक्त, अच्छे निगमित शासन सिद्धांतों को समाहित करते हुए एक तीन टायर वाले गवर्नेंस ढाँचे, जिसमें कार्यनीतिक आस्ति आबंटन, योजनापूर्ण आस्ति आबंटन और वास्तविक संविभाग प्रबंध दायित्वों को संस्थागत बना दिया गया है, जो एक यथोचित संगठनात्मक रुपरेखा के हिस्से के रूप में, दैनिक रिजर्व जोखिम प्रबंध के सुगम कार्यान्वयन को सुनिश्चित करने के लिए है।

जोखिम प्रबंध का अन्य क्षेत्र परिचालनगत जोखिमों का न्यूनीकरण करने से संबंधित है, जो अपर्याप्त आंतरिक प्रक्रियाओं अथवा अप्रत्याशित बाहरी घटनाओं से उपजित होती हों, जो आज के केंद्रीय बैंकिंग परिवेश में नाजुक मानी जाती हैं। परिचालनगत जोखिमों को सामान्यतः, संकटमोचन संकट प्रबंध और दैनंदिन परिचालगत जोखिम प्रबंध के जरिए उपयुक्त प्रावधानों के माध्यम से सुलझा लिया जाता है, जबकि एक उचित रिपोर्टिंग प्रणाली और नियंत्रण भी लागू किया जाता है। सर्वोत्तम व्यवहारों और मानकों को अपनाना भी, केंद्रीय बैंक के गवर्नेंस ढाँचे में जोखिम नियंत्रण की भूमिका की मजबूती के लिए एक कदम है।

एक दक्ष भुगतान और निपटान प्रणाली की स्थापना, जोखिम प्रबंध नीति का एक अभिन्न अंग रही है। इसका उद्देश्य, जितना संभव हो सके उतना, वास्तविक समय लेन-देन तथा समाशोधन और निपटान प्रणाली से समीपता स्थापित करना है जो वित्तीय फ्लोर और भुगतान प्रणाली में व्यवधान की जोखिम को कम करने को लक्ष्यित है।

इस पृष्ठभूमि में, केंद्रीय बैंक संविभागों की ऋणशोधन क्षमता और अतिसंवेदनशीलता विश्लेषण महत्व की हो गई हैं। जोखिम पर मूल्य (वीएआर) पद्धति का प्रयोग केंद्रीय बैंक की ऋण-शोधन क्षमता और अति संवेदनशीलता की मात्रा निर्धारित करने में किया जाता है। सेन्ट्रल बैंक संविभागों के लिए (वीएआर) दृष्टिकोण का अनुप्रयोग आर्थिक सिद्धांतों पर आधारित है न कि आस्तियों और देयताओं के 'ऐतिहासिकट मूल्य पर जिसमें इतर तुलन-पत्र लेन देन और वित्तीय प्रणाली के स्थायित्व के गारन्टर तथा प्रणालीगत बैंकिंग संकट के टालक के रूप में केंद्रीय बैंक की भूमिका के वादे जुड़े हुए हैं। बादवाले में एक अंतर्निहित अथवा स्पष्ट जमा बीमा लिप्त हो सकती है। (वीएआर) पर आधारित ऋणशोधन क्षमता विश्लेषण में जोखिमों के मापन और मात्रीकरण में इस प्रकार की आकस्मिक देयताओं का संभावित प्रभाव समाहित होता है। आस्तियों और देयताओं को ब्याज दर (घरेलू और विदेशी) और विनिमय दर स्थितियों तथा केंद्रीय बैंक के संविभाग के आर्थिक मूल्य में खंडित किया जाता है अर्थात केंद्रीय बैंक की निवल इक्विटी को (वीएआर) पर आधारित मूल्य पर निकाला जाता है। यह कुछ नहीं है केवल 'इक्विटी जो, केंद्रीय बैंक की स्थितियों के जोखिम कारकों के प्रकटीकरण के संदर्भ में है और इसलिए यह एक प्रत्यक्ष अनुमान अनुमत करती है कि कैसे नीति परिवर्तनीय और बहिर्जात कीमतें, केंद्रीय बैंक की ऋणशोधन क्षमता को बनाए रखने में प्रत्यक्षतः मदद करती है (ब्लेजर और सुमुचर 1998)। इसके होते हुए केंद्रीय बैंक (वीएआर) को सबसे बड़ी हानि के रूप में परिभाषित किया गया है जो केंद्रीय बैंक संविभाग संबंधित मूल्य और स्थितियों के परिवर्तन के कारण, एक निर्धारित परिधि में निश्चित प्रसंभाव्यता के साथ सहन कर सकता है।

(वीएआर) पर आधारित मात्रात्मक जोखिमों को केंद्रीय बैंकों द्वारा बढ़ते हुए रूप में स्वीकार किया जा रहा है। न्यूजीलैंड का रिजर्व बैंक अपने विदेशी आस्ति संविभाग के बारे मे (वीएआर) मॉडल सीमाओं और हानि-रोक सीमाओं का प्रयोग करता है। तथापि, मौद्रिक नीति प्रयोजन से रखी गई घरेलू प्रतिभूतियाँ (वीएआर) के अंतर्गत शामिल नहीं है। बैंक ऑफ़ इग्लैंड, तुलन-पत्र पर बाज़ार जोखिम की निगरानी और नियंत्रण के लिए (वीएआर) का प्रयोग करता है। जबकि सेन्ट्रल बैंक ऑफ़ इटली विदेशी मुद्रा स्थितियों और प्रतिभूति संविभाग के जोखिमपन का मूल्यांकन (वीएआर) आधार पर करता है। अनेक केंद्रीय बैंकों द्वारा पूर्व में ही, स्वतंत्र जोखिम प्रबंध इकाइयों की स्थापना के माध्यम से, उनके द्वारा सामना की जा रही जोखिमों के उचित आकलन, नियमित पर्यवेक्षण और प्रबंध के लिए एक संस्थागत ढाँचे की स्थापना कर चुके हैं (कोलम्बिया, सिंगापुर, कोरिया, थाईलैंड, कनाडा इत्यादि)। जोखिम प्रबंध ढाँचे का पर्यवेक्षण विशिष्ट रूप से बैंक की उच्चतम प्रबंध कमेटी, लेखापरीक्षा समिति तथा निदेशक मंडल को सौंपा जाता है, जो इस बात के महत्व को प्रदर्शित करता है जो कि अधिकांश केंद्रीय बैंक आज उनके जोखिम प्रबंध परिचालनों को देते हैं।

स्रोत :

1. ब्लेजर मेरियो 1. और लीलीना सुमुचर (1998), केंद्रीय बैंकों अतिसंवेदनशीलता और वादों की विश्वसनीयता : मुद्रा संकटों पर मूल्य-जोखिम पर, एक दृष्टिकोण, आईएमएफ, मई।
2. यूरोपियन केंद्रीय बैंक (2004) 'केंद्रीय बैंक विदेशी रिजर्वस् के लिए जोखिम प्रबंध' मई।

रिज़र्व पर्याप्तता और लाभ अंतरण

8.97 केंद्रीय बैंक उनके लाभों को सरकार को अंतरित करते हैं यद्यपि यह उनके लाभों पर प्रथम प्रभार नहीं होता। तथापि, केंद्रीय बैंक द्वारा सरकार को लाभ आबंटन से पूर्व रिज़र्व निर्माण पर फोकस अलग-अलग देशों में बदलता रहता हैं। जहाँ कहीं भी संपूर्ण लाभ सरकार को अंतरित किया जाना अपेक्षित हैं, वहां अनुमानतः एक अंतर्निहित गारंटी होती है कि सरकार केंद्रीय बैंक की किसी भी भावी हानियों की पूर्ति करेगी। इस आश्वासन के बावजूद भी केंद्रीय बैंक भविष्य की किसी भी अप्रत्याशित आकस्मिकताओं का सामना करने के लिए अपने स्वयं के आंतरिक रिज़र्व बनाने को विवेकसम्मत मानते हैं ।

8.98 भारतीय परिप्रेक्ष्य में, विगत में आकस्मिकता आरक्षित निधि (सीआर) में नियमित आधार पर आबंटन करने की कोई प्रणाली नहीं थी। तथापि, इस प्रकार का रिज़र्व बनाने की आवश्यकता, 1993 में आई कठिन परिस्थितियों की पृष्ठभूमि में जब सीआर 859 करोड़ रुपए तक या बैंक की कुल आस्तियों के 0.5 प्रतिशत तक, एफसीएनआर (ए) योजना से हुए विनिमय हानियों के वादे की पूर्ति के लिए बड़ी राशि (4800 करोड़ रुपए) का आहरण किया गया, गिरा महसूस किया गया।

8.99 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, धारा 4 के अंतर्गत बैंक की हिस्सा पूंजी 5 करोड़ रुपए निर्धारित करता है। रिज़र्व बैंक अधिनियम में, सरकार और रिज़र्व बैंक के बीच अधिशेष आबंटन से संबंधित कोई विशिष्ट संदर्भ नहीं है। अधिनियम की धारा 46 के अंतर्गत, सरकार रिज़र्व बैंक को 5 करोड़ रुपए मूल्य की रुपया प्रतिभूतियाँ अंतरित करेगा जो रिज़र्व बैंक द्वारा रिज़र्व कोष को आबंटित की जाएंगी[30]। इस धारा में यह भी बताया गया है कि बैंक द्वारा राष्ट्रीय कोषों, नामतः राष्ट्रीय ग्रामीण क्रेडिट (दीर्घावधि पचालन) कोष, राष्ट्रीय ग्रामीण क्रेडिट (स्थिरीकरण) कोष, राष्ट्रीय औद्योगिक (दीर्घावधि परिचालन) कोष तथा राष्ट्रीय आवास क्रेडिट (दीर्घावधि परिचालन) कोष की स्थापना, प्रारंभिक राशि जमा करने के जरिए की जाएगी तथा अन्य राशि जो रिज़र्व बैंक प्रति वर्ष आगे योगदान करें। अधिनियम की धारा 47 में यह आदेशित है कि, अशोध्य और संदिग्ध ऋणों के लिए प्रावधान, आस्तियों में मूल्य ह्रास, स्टाफ और अधिवर्षिता कोषों में योगदान तथा अन्य सभी मामलों में जिनमें अधिनियम द्वारा और अंतर्गत प्रावधान किया जाना है या जो आम तौर पर बैंकरों द्वारा प्रावधानित किए जाते हैं, करने के बाद लाभ का अधिशेष सरकार को अंतरित किया जाए। इस प्रकार, कानून, विवेकपूर्ण बैंकिंग प्रथाओं के अनुसार प्रावधानों के सृजन की व्यवस्था करता है। यहाँ तक कि किसी सांविधिक समर्थन के अभाव में, रिज़र्व बैंक ने रिज़र्व बैंक अधिनियम की धारा 47 के शक्तिदायी अनुबंधों का प्रयोग अनेक रिज़र्व सृजित करने और उन्हें अंतरराष्ट्रीय प्रथाओं के अनुरूप सुदृढ़ बनाने में किया है। (बॉक्स VIII.6)।

8.100 उपरोक्त पृष्ठभूमि में, घरेलू और विदेशी आस्तियों के मूल्य में परिवर्तन, नीतिगत दखलों के कारण संभावित हानियों, बाहरी आघातों और अन्य अप्रत्याशित प्रणालीगत जोखिमों के विरुद्ध बचाव के लिए, सांविधिक लेखापरीक्षकों के सुझाव के अनुरूप, रिज़र्व बैंक द्वारा, तुलन-पत्र को सुदृढ़ बनाने के लिए एक अनुकूल तर्कवाली सक्रिय नीति का अनुगमन किया जा रहा है और तदनुसार अपनी कुल आस्तियों को

बॉक्स VIII.6
रिज़र्व बैंक द्वारा रखे गए रिज़र्व खाते

आकस्मिकता रिज़र्व खाता (सीआर)

भारतीय रिजर्व बैंक अधिनियम 1934 की धारा 47 में वर्णित प्रावधानों के संदर्भ में, रिजर्व बैंक द्वारा सीआर खाता रखा जाता है। यह रिजर्व बैंक के रोके गए मुनाफों में से, अप्रत्याशित हानियों और आकस्मिकताओं, जो विदेशी मुद्रा लेनदेनों, विदेशी मुद्रा आस्तियों के पुनर्मूल्यन (सीजीआरए में शेष के पार), घरेलू और विदेशी प्रतिभूतियों में मूल्य ह्रास, विनिमय गारंटी, मौद्रिक/विनिमय दर परिचालन, प्रणालीगत जोखिम, आंतरिक धोखाधडी इत्यादि के कारण हो सकती हैं, का सामना करने के लिए रखा जाता है।

आस्ति विकास रिज़र्व (एडीआर)

यह 1997-98 में रिजर्व बैंक के पूंजीगत व्ययों की पूर्ति के लिए तथा इसकी सहायक और सहयोगी संस्थाओं में निवेश के लिए, रिजर्व बैंक की कुल आस्तियों के सीआर के 12 प्रतिशत के समग्र लक्ष्य के अंतर्गत जून 2005 के अंत तक एक प्रतिशत के एडीआर स्तर को प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया।

मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाता (सीजीआरए)

विनिमय दरों और स्वर्ण मूल्यों में परिवर्तन के कारण सभी पुनर्मूल्यन लाभों/हानियों को सीजीआरए में बुक किया जाता है। रुपए में मूल्यवृद्धि, विदेशी मुद्रा आस्तियों का रुपए में कम मूल्य अंतर्निहित है और तदनुसार सीजीआरए में शेष का कम होना या उलट। यह पूर्व में 'विदेशी मुद्रा उतार-चढ़ाव रिजर्व' के नाम से जाना जाता था अर्थात विनिमय दरों और स्वर्ण के मूल्य परिवर्तन के लिए एक लेखांकन शीर्ष / कोष अन्य मुद्राओं और स्वर्ण कीमत गतियों की तुलना में यूएस डॉलर की विनिमय दर की गति, की अनुक्रिया में परिवर्तनशील है।

स्रोत :

भारतीय रिजर्व बैंक वार्षिक रिपोर्ट : विभिन्न अंक

[30] समय समय पर किए गए स्वर्ण के पुनर्मूल्यन के कारण हुए मूल्यवृद्धि लाभ इस कोष में जमा किए गए। अक्तूबर 1990 तक संचयित मूल्य वृद्धि लाभ जो कोष में जमा किए गए वे 6,495 करोड़ रुपए थे।

सीआर के अंतर्गत (एडीआर के एक प्रतिशत सहित) 12 प्रतिशत रखे जाने का सांकेतिक लक्ष्य रखा गया है जिसे जून 2005 के अंत तक चरणों में प्राप्त किया जाना है (आरबीआई 1997-98)। इस लक्ष्य के प्रति, रिज़र्व बैंक द्वारा सीआर और एडीआर दोनों को साथ मिलाकर जून 2003 के अंत तक 60,840 करोड़ रुपए का जमाशेष संचित कर लिया गया जो कुल आस्तियों का 11.7 प्रतिशत था। तथापि, एमएसएस के लागू किए जाने और तदुपरांत रिज़र्व बैंक के तुलनपत्र में हुए विस्तार के परिणाम स्वरूप, सीआर और एडीआर में संयुक्त रूप से संचित 68,811 करोड़ रुपए की राशि जून 2005 के अंत में 10.1 प्रतिशत के निम्न स्तर पर रही।

VI. निष्कर्ष

8.101 रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र के अंतिम सात दशकों का विश्लेषण, इसके नीति व्यवस्था में बदलाव और इसके विकास में सहसंबंध तथा समष्टि आर्थिक परिवेश में परिवर्तन को प्रकट करता है। विभिन्न चरणों में रिज़र्व बैंक के कार्यगत विकास के अनुरूप बैंक का तुलन-पत्र महत्वपूर्ण परिवर्तनों से गुजरा है। निर्माणकारी वर्षों के दौरान नोट निर्गम कार्य की प्रमुखता से, आयोजना चरण के प्रारंभिक वर्षों के दौरान एक धीमे किन्तु निरंतर राजकोषीय उदीयमान तक जो राजकोषीय के दबदबे की उत्कर्ष अवधि (और बैंकिंग व्यवस्था के संसाधनों के उच्चतर पूर्वक्रय) तक सुदृढ़ विकासात्मक भूमिका के साथ, रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र, 1990 के दशक के दौरान संरचनागत कायापलट के दौर से गुजरा है जिसमें विदेशी आस्तियों, लोक ऋण का बाज़ार निश्चयन और रिज़र्व अपेक्षाओं में कमी का दबदबा रहा।

8.102 पार देशों के अनुभव बताते हैं कि, केंद्रीय बैंक उनके तुलन-पत्र के गठन पर निर्भर करते हुए, स्थूल रूप से दो श्रेणियों में आते हैं। उनमें से कुछ अपनी अधिकांश आस्तियाँ सरकारी प्रतिभूतियों में रखते हैं, जब कि अन्य अपनी आस्तियां विदेशी मुद्रा रिज़र्व और स्वर्ण में रखते हैं। इनमें से पूर्ववर्ती एक राजकोषीय दबदबे के मामले को व्यक्त करते हैं, इनका केंद्रीय बैंक के राजस्व पर प्रभाव वित्तपोषण शर्तों से जुड़ जाता है, जो कड़े रूप में बाज़ार सिद्धांतों से जुड़ जाती हैं। दूसरे वर्ग का जोखिम प्रोफाइल अर्थात केंद्रीय बैंक जिसके पास बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा आस्तियां हैं, बड़ी मात्रा में अलग होता है, क्योंकि इसका तुलन-पत्र निरंतर, ब्याज और विनिमय दर जोखिमों के लिए मूल्यांकन परिवर्तनों और इसके प्रतिकूल प्रभावों के साथ जुड़े निहितार्थों सहित अनावृत्त रहता है। गत दिनों में रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र में हुए, विदेशी मुद्रा आस्तियों के प्रति परिवर्तन और बैंक के जोखिम प्रतिलाभ प्रोफाइल के प्रति हुए गठनात्मक परिवर्तन के साथ, इस प्रकार की चिन्ताएं, भारतीय परिप्रेक्ष्य में अधिक महत्व की हो जाती हैं। रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र में आस्ति गठन में परिवर्तन के साथ, विदेशी मुद्रा आस्तियों पर अपेक्षाकृत कम प्रतिलाभ, वैश्विक बाज़ारों में विनिमय और ब्याज दरों में अस्थिरता तथा दैनिक आधार पर प्रतिभूतियों का बाज़ार मूल्य मानदंड थे। अधिमूल्यन लाभों और अन्य जोखिमों को विषम व्यवहार के साथ अपनाना, जैसे बाज़ार जोखिम, क्रेडिट जोखिम, चलनिधि जोखिम, हस्तक्षेप परिचालनों से पैदा हुई जोखिम, परिचालनगत जोखिम और अंतिम उधार प्रदाता जोखिम, रिज़र्व बैंक तुलन-पत्र के स्वास्थ्य के परिप्रेक्ष्य में अधिकतर महत्व के हो गए हैं और उन्होंने प्रभावी और पर्याप्त जोखिम प्रबंध उपायों को अपनाने की आवश्यकता की तीव्रता प्रतिपादित की है। अविनिमय चरण के दौरान वित्तीय आस्तियों की अस्थिरता ने रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र पर, इस सीमा तक कि, यह इसकी आस्तियों और देयताओं के संदर्भ में विषम है, प्रभाव डाला है। इन घटनाक्रमों की सक्रियता के संदर्भ में, बैंक द्वारा घरेलू और विदेशी आस्तियों दोनों के ही पुनर्मूल्यन को विवेकपूर्ण आधार पर सुनिश्चित करने तथा आकस्मिकता रिज़र्व के रूप में पर्याप्त सहारा निर्माण के अनेक उपायों की पहल की है ताकि एक उदारीकृत परिवेश में नीतिगत लचीलापन प्रदान किया जा सके।

8.103 वैश्विक रूप में, वित्तीय आस्तियों के मूल्य में समष्टि आर्थिक असंतुलनों के संभावित प्रभाव के बारे में काफी अनिश्चितता है। यह केंद्रीय बैंकरों के कार्य को उनके संभाग प्रबंध निर्णयों के संबंध में और भी कठिन बना देता है क्योंकि अंतरराष्ट्रीय बाज़ारों में, विनिमय दर में कोई भी प्रतिकूल उतार चढाव उनके विदेशी मुद्रा संविभाग में बड़ी हानियों को ला सकता है। यह मुद्दा विशेष रूप से उन देशों के लिए महत्वपूर्ण है, जहाँ केंद्रीय बैंकों द्वारा विदेशी मुद्रा आस्तियों का निर्माण अल्पकालीन देयता लिखत या केंद्रीय बैंक पेपर को ब्याज की बाज़ार दरों पर जारी किया है तथा उन मामलों में जहाँ पुनर्मूल्यन जोखिमों को केंद्रीय बैंकों द्वारा वहन किया जाता है। यह रिज़र्व बैंक के लिए भी सच है, क्योंकि यह विदेशी मुद्रा विनिमय रिज़र्व का प्रबंध करता है तथा अंतरराष्ट्रीय बाज़ार में विनिमय और ब्याज दर उतार-चढावों मूल्यांकन प्रभावों को आत्मसात करता है।

8.104 इस परिप्रेक्ष्य में एक संगत मुद्दा जो है वह निष्क्रिय हस्तक्षेप का है। जबकि निष्क्रिय हस्तक्षेप अपने आप में, रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र की आस्तियों के अंतर्गत समायोजन समाहित करते हैं, (घरेलू आस्तियों का विदेशी आस्तियों से स्थानापन्न करने के संदर्भ में), हाल के लिखत जैसे, बाज़ार स्थिरीकरण बांड, यद्यपि नवोन्मेषी हैं, तुलन-पत्र के विस्तार का कारण बनते हैं। तुलन पत्र का इस प्रकार का विस्तार, तदनुरूप आकस्मिकता रिज़र्वों में वृद्धि आवश्यक बना देता है। इस प्रकार, आने वाले दिनों में, रिज़र्व की ओर से, समुचित जोखिम प्रबंध नीति के उदय के कारण, आकस्मिकता भंडारों को अंतरित अधिशेषों और प्रावधानों का एक प्रासंगिक विश्लेषण आवश्यक होगा।

8.105 दूसरा महत्व का मुद्दा जो इस तथ्य से जुड़ा हुआ है कि केंद्रीय बैंकों को अब निजी क्षेत्र को प्रदान की जा रही विविध वित्तीय सेवाओं

के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धात्मक परिस्थितियों का सामना करना पड़ रहा है। उनकी आय पर बढ़ते निरंतर दबाव ने, समेकन उपायों के लिए प्रोत्साहित किया है, कम लागत पर सेवाएं प्रदान करना है, जो नई प्रौद्योगिकी से समर्थित हो। कतिपय केंद्रीय बैंकों द्वारा मूल्यकृत सेवा परिचालनों और अन्य प्रणाली व्यापक गतिविधियों की आवधिक समीक्षा करना शुरू कर दिया गया है ताकि इन सेवाओं के प्रावधान और मूल्य निर्धारण पर विचार बनाया जा सके।

8.106 जब कि रिज़र्व बैंक सरकार का बैंकिंग करोबार संचालित करना जारी रखे हुए है, विचार जो प्रमुखता पाता जा रहा है वह है कि, रिज़र्व बैंक को सरकार का खुदरा बैंकिंग व्यवसाय एजेन्सी बैंकों के पक्ष में सौंप देना चाहिए, इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए कि दीर्घावधि में यह सुनिश्चित किया जा सके कि बैंक, सरकार के केवल प्रमुख खातों को ही रखेगा, व रोजमर्रा के फुटकर बैंकिंग व्यवसाय को वाणिज्य बैंकों के लिए छोड़ देगा जो इसके प्रतिनिधि के रूप में कार्य कर रहे है (रेड्डी 2002)। दूसरा मुद्दा जो विचाराधीन है, सरकारी व्यवसाय के संपादन की लागत से संबंधित है। मौजूदा, व्यवस्था के अंतर्गत, बैंक सरकार के सामान्य व्यवसाय के सम्पादन के लिए किसी भी प्रकार का पारिश्रमिक पाने का हकदार नहीं है, अलावा इसके कि इसे नकदी शेष जमा राशि की धारिता पर जो बिना किसी ब्याज भुगतान दायित्व के इसके पास होती है पर जो लाभ उपचित होता है। इसके अतिरिक्त, रिज़र्व बैंक, एजेंसी बैंकों को उनके द्वारा संपादित सरकारी व्यवसाय को संचालित करने में आई लागत का पुनर्भरण करता है। देशों की प्रथाओं से विदित होता है कि अधिकांश देशों में सरकार का व्यवसाय करने की लागत संबंधित सरकार द्वारा वहन की जाती है, न कि केंद्रीय बैंक द्वारा। एजेंसी बैंकों को पारिश्रमिक भुगतान के संबंध में एक यौक्तीकरण उपाय पर विचार किया जा रहा है जिसमें वर्तमान लागत आधारित व्यवस्था का, एजेंसी बैंकों द्वारा सरकारी व्यवसाय के लिए बोली व्यवस्था में बदलाव होगा।

8.107 अंततः दोहराने के लिए केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र, वाणिज्यक संगठनों से भिन्न होते हैं। एक वृहत्तर केंद्रीय बैंक का तुलन-पत्र, अनिवार्य रूप से सुदृढ़ समष्टि अर्थव्यवस्था का संकेत नहीं देते। उदाहरण के लिए, विकसित देशों के अनेक केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र उनके देशों की अर्थव्यवस्था के आकार के मुकाबले छोटे होते हैं। केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र को जहाँ एक ओर केंद्रीय बैंकिंग के सुदृढ़ सिद्धांतों जो मूल्य और वित्तीय स्थायित्व सुनिश्चित करें के अनुपालन की आवश्यकता होती है, वहीं दूसरी ओर इसकी विकासात्मक भूमिका की। इस विषय में पारदर्शिता एक अनिवार्य पूर्वशर्त है। केंद्रीय बैंक का पारदर्शित तुलन-पत्र, केंद्रीय बैंक की विश्वसनीयता में वृद्धि और मौद्रिक नीति की दक्षता में अभिवृद्धि के लिए लंबी दूरी का उपाय सिद्ध होगा। रिज़र्व बैंक के तुलन-पत्र का गत लगभग सात दशकों से ऊपर का विकास, इन सिद्धांतों के प्रति साक्षी प्रदान करता है।

अनुबंध VIII.1 : लाभ वितरण से संबंधित चयनित देशों की प्रथाएं

देश	लाभ का वितरण
युरो प्रणाली	ईएससीबी विधान के अंतर्गत, प्रत्येक वर्ष में इसके लाभों का 20 प्रतिशत तक सामान्य रिज़र्व कोष में अंतरित किया जा सकता है जो इसी बीज की पूंजी के समान सीमा के शर्ताधीन है। शेष बचा निवल लाभ केंद्रीय बैंक और ईसीबी के अंशधारियों को उनकी प्रदत्त पूंजी के अनुपात में वितरित किया जाना होता है। तथापि, प्रबंध निकाय, किसी भी वर्ष में सामान्य रिज़र्व में निवल लाभ अंतरित न करने का फैसला ले सकती है।
जापान	बैंक ऑफ़ जापान कानून के अनुच्छेद 53 के अंतर्गत, राजकोषीय साल के लिए निवल आय का 5 प्रतिशत, कानूनी भंडारों (वास्तविक आबंटन अधिक हो सकता है) में अंतरित किया जाना अपेक्षित है, जबकि अंशधारियों को उनकी हिस्सा राशि के अंकित मूल्य पर 5 प्रतिशत की दर से लाभांश का भुगतान किया जाता है तथा आय का शेष बचा सरकार को भुगतान किया जाता है।
आस्ट्रेलिया	रिज़र्व बैंक अधिनियम 1959 की धारा 30 के अंतर्गत निवल लाभ जिनमें अप्राप्त लाभ रिज़र्व को / से अंतरण शामिल है जो वितरण हेतु उपलब्ध हों, रिज़र्व बैंक निदेशक के परामर्श से, खजांची द्वारा निश्चित किए गए अनुसार रिज़र्व बैंक, रिज़र्व कोष में अंतरण और आकस्मिकताओं के लिए राशियाँ निकाल कर, सरकार को देय होते हैं। तथापि, वास्तविक लाभ वितरण को चरणबद्ध किया जाता है और एक से ज्यादा भागों में, जो एक से ज्यादा वित्तीय वर्ष में विस्तारित हो अंतरित किया जाता है।
सिंगापुर	वर्ष के लिए निवल लाभ, जिसमें मुद्रा फइंड से रिज़र्व का अंतरण शामिल है, सांविधिक निगम (समेकित कोष में योगदान) अधिनियम के अनुरूप वर्ष 2005 में हुए मुनाफे के 20 प्रतिशत की दर से तथा मुनाफे पर प्रतिलाभ को सरकार को समेकित कोष में योगदान के द्वारा भुगतान किया जाता है।
कोरिया	स्वैच्छिक रिज़र्व में से अंतरण, निवल हानियों, यदि कोई हों तो, की पूर्ती की जाती है। इसके अतिरिक्त, हानि की स्थिति में, उदाहरण के लिए 2004 में पूर्व अवधि का अवितरित लाभ अधिशेष, सरकार के सामान्य राजस्व खाते में अंतरित किया गया।
जर्मनी	सांविधिक रिज़र्वों के लिए रखकर निवल लाभ संघीय सरकार को अंतरित किया जाता है। सांविधिक रिज़र्व यदि उनकी निर्धारित उच्च सीमा पर हों तो सम्पूर्ण अधिशेष को सरकार को वितरित कर दिया जाता है।
कनाडा	बैंक का निवल राजस्व, कनाडा के महा प्राप्तक को भेज दिया जाता है क्योंकि सांविधिक रिज़र्व 1955 से ही अपनी निर्धारित उच्च सीमा पर हैं।
पुर्तगाल	वर्ष के निवल लाभों को रिज़र्व व राज्य के बीच बराबर आबंटन के लिए वितरित किया जाता है।
यू.के.	निर्गम (संपूर्ण) और बैंकिंग (कुछ राशि रिज़र्व को आबंटित की जाती है) विभागों, दोनों के ही, लाभ खजाने को देय होते हैं।
स्वीडन	2004 में नकारात्मक स्थिति के बावजूद भी केंद्रीय बैंक ने खजाने को लाभांश भुगतान किया जिसका वित्तपोषण इसने मुद्रा नीति देयों में घटोतरी लाकर किया।
दक्षिणी अफ्रीका	दक्षिणी अफ्रीका रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1989 की धारा 24 के अनुसार, आमतौर पर रखे जाने वाले प्रावधानों के पश्चात् तथा लाभांश भुगतान (प्रति शेयर 10 सेन्ट की दर से) अधिशेष का दस में से नौ हिस्सा सरकार को दिया जाता है, तथा दस में से एक हिस्सा सांविधिक रिज़र्व कोष में जमा किया जाना होता है।
ब्राजील	रिजर्वों के गठन और उत्क्रमण के पश्चात निवल लाभ को राष्ट्रीय खजाना में अंतरित किया जाता है। नकारात्मक परिणाम अर्थात् केंद्रीय बैंक के सभी परिचालनों से संबंधित राजस्व से ऊपर व्यय, केंद्रीय बैंक को खजाने का दायित्व बनाते हैं।
इटली	वर्ष का निवल लाभ, सामान्य रिज़र्व और विशेष रिज़र्व खातों में आबंटित किए जाने तथा अंशधारियों को लाभांश वितरण के पश्चात, राज्य को अंतरित कर दिया जाता है।
नार्वे	अंतरण कोष, जिसे प्रावधानों के पश्चात् कोई अधिशेष हों से बनाया जाता है अथवा समायोजन कोष से अंतरण करके, में एक तिहाई पूंजी को खजाने को प्रतिवर्ष अंतरित कर दिया जाता है।
रूस	फेडरल बजट कानून 2005 के अनुच्छेद 23 के अंतर्गत, बैंक ऑफ़ रशिया को, फेडरल बजट में अपने मुनाफे का 80 प्रतिशत (पूर्व में 50 प्रतिशत तक) जो रशियन फेडरेशन के अनुसार कर और उतपाद करों के भुगतान के पश्चात् 2004 के लिए शेष बचते हों, को फेडरल बजट को अंतरित करना होगा।
चिली	कानून 18,840 के अनुच्छेद 77 के अनुसार किसी भी वर्ष में होने वाला घाटा गठित रिज़र्व को प्रभारित कर अवशोषित किया जाएगा। जब कोई रिज़र्व न हों और यदि वे अपर्याप्त हों, एक निर्धारित अवधि में होने वाला घाटा, प्रदत्त पूंजी को प्रभारित करके अवशोषित किया जायेगा। तथापि, दिसंबर 2003 के अंत में, विदेशी मुद्रा आस्तियों में विनिमय दर उतार-चढाव के प्रभाव के कारण अंशधारियों की इक्विटी भी हानियों को अवशोषत करने के लिए पर्याप्त नहीं थी, परिणामतः शेयर धारकों की इक्विटी घाटे में रही।
संयुक्त राज्य अमरीका	फेडरल रिज़र्व अधिनियम की धारा 16 के अंतर्गत, बोर्ड ऑफ़ गवर्नरों से रिज़र्व बैंकों के लिए यह अपेक्षित है कि वे यू एस खजाने को, फेडरल रिज़र्व नोटों पर अधिक आय को ब्याज के रूप में परिचालनों की लागत, लाभांशों का भुगतान और अधिशेष को पूंजीगत भुगतानों से समरूप करने के लिए आवश्यक राशि के लिए रिज़र्व रखने, के पश्चात अंतरित करें।

स्रोत : केंद्रीय बैंकों के तुलन पत्र

अनुबंध VIII.2 : सरकारी प्रतिभूतियों के चयनित केंद्रीय बैंकों के विदेशी मुद्रा नामित बांडस् के मूल्यांकन मापदंड

आस्ट्रेलिया	घरेलू प्रतिभूतियों और विपणन योग्य सरकारी प्रतिभूतियों का मूल्यन, जून के आखरी व्यवसाय दिवस को बाज़ार मूल्यों पर किया जाता है, अलावा जब वे पुनर्खरीद करार के अंतर्गत बिक्री के लिए सांविदा की जाती है।
कनाडा	विदेशी मुद्रा की आस्तियां और देयताओं का, तुलन-पत्र की तारीख को प्रचलित विनिमय दरों पर मूल्यांकन किया जाता है। खजाना बिलों और बांडों में निवेश लागत दर पर दर्ज किया जाता है, तथा खरीद बट्टों और प्रीमियम परिशोधन के लिए, खजाना बिलों और बैंक की स्वीकृतियों के लिए निरंतर प्रतिफल पद्धति और बांडस् के लिए सीधी कटौती प्रणाली का प्रयोग करते हुए समायोजित किया जाता है।
यूरो प्रणाली	यूरो प्रणाली समीकृत लेखांकन नियमों का अनुसरण करता है, जिसके अंतर्गत स्वर्ण, विदेशी मुद्रा, प्रतिभूति धारिताएं और वित्तीय लिखतों का मूल्यांकन बाज़ार दरों और प्रति तिमाही के अंत में कीमतों पर किया जाता है। पुनर्मूल्यांकन, प्रतिभूतियों, ब्याज दर, अदला बदली, भावी सौदों, वायदा दर करार और अन्य ब्याज दर लिखतों के लिए एक मद से दूसरे मद के आधार पर किया जाता है।
जर्मनी	स्वर्ण, विदेशी मुद्रा लिखतों और वित्तीय लिखतों का मूल्यांकन मध्य बाज़ार दरों और तुलन-पत्र की तिथि पर किया जाता है।
भारत	रिजर्व बैंक की विदेशी आस्तियों को, सप्ताह के अंतिम व्यावसायिक दिवस को प्रचलित दरों तथा मास के अंतिम व्यावसायिक दिवस को भी प्रचलित विनिमय दरों पर अंतरित किया जाता है। विदेशी प्रतिभूतियों, खजाना बिलों को छोड़कर, का मूल्यांकन वही मूल्य अथवा बाज़ार कीमत के निम्नतर स्तर पर, प्रचलित विनिमय दरों पर किया जाता है[31]। खजाना बिलों का मूल्यांकन लागत पर होता है। स्वर्ण का मूल्यांकन माह के अंत में, लंदन में उद्धृत, उसी माह के लिए, दैनिक औसत कीमत, के 90 प्रतिशत पर किया जाता है। एसडीआर और आरटीपी का मूल्यांकन आईएमएफ की सरकारी दरों पर किया जाता है। रुपए प्रतिभूतियों का मूल्यांकन बही मूल्य या बाज़ार मूल्य के निम्नतर स्तर पर किया जाता है। जहाँ इस प्रकार की प्रतिभूतियों के लिए बाज़ार मूल्य उपलब्ध न हो, माह के अंतिम कारोबारी दिवस को प्रचलित प्रतिफल वक्र के आधार पर दरें निकाली जाती हैं।
जापान	राजकोषीय 2004 से प्रभावित प्रतिभूतियों का मूल्यन ऋण परिशोधन लागत पर जो चल औसत प्रणाली द्वारा निश्चित की जाती है, पर किया जाता है जब कि विदेशी मुद्रा मूल्यांकित बांडों का बाजार मूल्य पर, मूल्यन किया जाता है।
मलेशिया	स्वर्ण, प्रतिभूतियां और निवेश लागत पर दिखाए जाते हैं। विदेशी मुद्रा में आस्तियों और दायित्वों का, घरेलू मुद्रा में पुनर्मूल्यन तुलन-पत्र की तारीख को चल रही विनिमय दरों पर किया जाता है।
पुर्तगाल	आस्तियों, देयताओं और इतर तुलन-पत्र लिखतों जो विदेशी मुद्रा में मूल्यांकित हैं, को तुलन-पत्र की तारीख को, प्रचलित विनिमय दरों पर यूरो में बदल लिया जाता है, जब कि विदेशी मुद्रा में लेनदेन के संबंध में हुए विदेशी विनिमय लाभों या हानियों को, संबंधित भारित औसत लागत के संदर्भ में मद-दर-मद आधार पर निकाला जाता है। विपणन योग्य प्रतिभूतियाँ बाज़ार मूल्य पर मूल्यांकित की जाती हैं जब कि गैर विपणन योग्य प्रतिभूतियाँ ऐतिहासिक मूल्य पर दर्ज की जाती हैं।
रुस	कीमती धातुओं को उनके अंतिम ह्रास मूल्य पर हिसाब में लिया जाता है, जबकि विदेशी मुद्रा आस्तियों और देयताओं का पुनर्मूल्यन सरकारी विनिमय दरों पर किया जाता है। निवेश संविभाग की सरकारी प्रतिभूतियों को उनके अभिग्रहण मूल्य पर हिसाब में लिया जाता है जबकि जो व्यापार संविभाग में हों बाजार दरों पर (अगर उपलब्ध हों) अन्यथा उनके अभिग्रहण मूल्य पर।
सिंगापुर	स्वर्ण, विदेशी आस्तियां और सरकारी खजाना बिल तथा बांडस् , लागत पर दिखाए जाते हैं। तथापि मूल्य ह्रास यदि कोई हो, के लिए प्रावधान किया जाता है जो व्यक्तिगत निवेश आधारित लागत या बाज़ार मूल्य के न्यूनतर पर आधारित होता है। विदेशी मुद्रा में आस्तियाँ और देयताओं को, कुछ अपवादों के साथ, तुलन-पत्र की तिथि पर प्रचलित विनिमय दरों पर घरेलू आस्तियों में अंतरित किया जाता है।
दक्षिणी अफ्रीका	वित्तीय लिखतों को शुरु लागत पर, जिसमें लेन-देन लागतें भी शामिल होती हैं, लागत पर आंका जाता है। इस के पश्चात के वित्तीय आस्तियों के मापकों को 'व्यापार के लिए रखी' और 'बिक्री के लिए उपलब्ध' को उचित मूल्य पर वर्गीकृत किया जाता है (बाज़ार में उद्धृत वित्तीय लिखतों के लिए उद्धृत बाज़ार मूल्य तथा उद्धृत वित्तीय लिखतों के लिए स्वीकृत मूल्यांकन तकनीकें) तथापि, वित्तीय आस्तियाँ जो 'परिपक्वता तक धारित' वर्गीकृत हैं, मूल ऋण और प्राप्तियां और गैर-व्यापार योग्य देयताओं का मापन, परिशोधन लागत पर किया जाता है तथा गुणवत्ता ह्रास के लिए पुनर्मापन किया जाता है। विदेशी मुद्रा सौदों और स्वर्ण लेन देनों पर पुनर्मूल्यांकन लाभों और हानियों (वायदा विनिमय सौदों सहित) का बैंक की विवरणियों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता क्योंकि ये दक्षिणी अफ्रीकी सरकार के खाते में अंतरित कर दिए जाते हैं।
थाईलैंड	घरेलू प्रतिभूतियों का मूल्यांकन, प्रीमियम अथवा बट्टों के परिशोधन के पश्चात लागत पर किया जाता है जबकि विदेशी प्रतिभूतियाँ लागत पर दिखाई जाती हैं।
यूके	सरकारी प्रतिभूतियाँ और अन्य स्टर्लिंग ऋण प्रतिभूतियाँ निवेश प्रतिभूतियों के रूप में रखी जाती हैं तथा प्रीमियम या बट्टे के परिशोधन के लिए, समय के दौरान परिपक्वता अवधि तक सीधी कटौती प्रणाली आधारित, लागत समायोजित मूल्य पर आंकी जाती है। गैर स्टर्लिंग निवेश प्रतिभूतियां, मुद्रा के मूल्यवर्ग में लागत पर दर्ज की जाती हैं, प्रीमियम या बट्टे के, परिपक्वता अवधि तक, सीधी कटौती प्रणाली के आधार पर परिशोधन के लिए समायोजित की जाती हैं।

[31] विदेशी मुद्रा आस्तियों पर लाभ/हानि बही मूल्य के संदर्भ में निकाली जाती है।

अनुबंध VIII.3 : चयनित केंद्रीय बैंकों द्वारा अप्राप्त लाभों/हानियों का संसाधन

देश	अप्राप्त लाभों / हानियों का संसाधन
यूरो प्रणाली	तिमाही पुनर्मूल्यन से किए गए विदेशी मुद्रा आस्तियों और स्वर्ण पर अप्राप्त विनिमय दर और बाज़ार कीमत मूल्यांकन लाभों, को आय के रूप में अभिनिर्धारित नहीं किया जाता, लेकिन पुनर्मूल्यन खातें मे जमा कर दिया जाता है। अप्राप्त हानियों को वर्ष के अंत में लाभ-हानि खाते में ले जाया जाता है, अगर वे पिछले पुनर्मूल्यन लाभों, जो देयताओं की ओर पुनर्मूल्यन खातों में पंजीकृत है को पार कर गया है । ऐसी हानियाँ, बाद में होने वाली संदर्भित आस्तियों या देयताओं की प्राप्ति पर प्रतिवर्ती योग्य हैं, न कि अन्य भावी अप्राप्त लाभों के विरूद्ध / किसी दी गई प्रतिभूति, या कोई विदेशी मुद्रा अथवा स्वर्ण धारिता के पुनर्मूल्यांकन से होने वाली हानियों को अन्य प्रतिभूतियों या मुद्राओं के अप्राप्त लाभों के विरूद्ध निवल नहीं किया जाता।
फ्रांस	अप्राप्त विदेशी विनिमय हानियों को लाभ-हानि खाते में ले जाया जाता है तथा बाद में 'पुनर्मूल्यांकन रिज़र्व ऑफ़ स्टेट रिज़र्व' में आहरण करके कवर किया जाता है।
यू.के.	जबकि कोई भी निवल अवशिष्ट अप्राप्त लाभ जो गैर स्टर्लिंग निवेश प्रतिभूतियों पर विनिमय दर उतार-चढावों से होता हो, एक निवेश पुनर्मूल्यन रिजर्व में किसी अन्य अप्राप्त लाभ के साथ जो लाभ हानि खाते में ले जाया जाता है, सभी विनिमय लाभ और हानियाँ जो गैर स्टर्लिंग प्रतिभूतियों जो सक्रिय प्रबंध के लिए उपलब्धा हों, में विनिमय दर उतार-चढावों के कारण हों लाभ-हानि खाते में ले जाए जाते हैं।
स्वीडन	अप्राप्त कीमत और विनिमय लाभ और हानियाँ अलग से सूचित की जाती हैं। अप्राप्त लाभ और हानियों को विशेष पुनर्मूल्यन खातों में अंतरित किया जाता है। अगर, वर्ष के अंत में तदनुरूप पुनर्मूल्यन खाते में अप्राप्त हानियां, अप्राप्त लाभों से अधिक होती हैं, तो अंतर लाभ हानि खाते में अंतरित किया जाता है। किसी एक विशिष्ट प्रतिभूति, एक विशिष्ट मुद्रा अथवा स्वर्ण में, अप्राप्त हानियों को अन्य प्रतिभूतियों, मुद्राओं अथवा स्वर्ण के विरुद्ध नेटिंग नहीं किया जाता है।
थाईलैंड	विदेशी मुद्रा के पुनर्मूल्यन (कीमत) से अप्राप्त लाभों और हानियों को पूंजी के एक अलग अवयव के रूप में दिखाया जाता है और निपटान पर लाभ-हानि खाते में अभिनिर्धारित किया जाता है। विदेशी आस्तियों और देयताओं के वर्ष के अंत की विनिमय दरों में परिवर्तन के अप्राप्त लाभों और हानियों को लाभ हानि खाते में दर्ज किया जाता है।
आस्ट्रेलिया	विदेशी मुद्रा और विपणन योग्य विदेशी सरकारी प्रतिभूतियों और आस्ट्रेलियाई डॉलर प्रतिभूतियों में परिवर्तन से उपजित अप्राप्त लाभों और हानियों को तुरंत लाभ में शामिल किया जाता है लेकिन केवल प्राप्त लाभ ही वितरण हेतु उपलब्धा होते हैं।
जर्मनी	अप्राप्त लाभों को आय के रूप में अभिनिर्धारित नहीं किया जाता वरन् सीधे ही पुनर्मूल्यन खाते में अंतरित कर दिया जाता है। अप्राप्त हानियों को लाभ-हानि खाते में ले जाया जाता है अगर वे तदनुरूपी पुनर्मूल्यन खाते में, पंजीकृत पिछले पुनर्मूल्यन लाभों को पार कर गए हैं। किसी भी दी गई प्रतिभूति, किसी मुद्रा और स्वर्ण धारिताओं की अप्राप्त हानियों को अन्य प्रतिभूतियों, मुद्राओं और स्वर्ण के विरुद्ध नेटिंग किया जाना अनुमत नहीं हैं।
पुर्तगाल	वित्तीय परिचालनों से उपजित प्राप्त लाभों और हानियों को निपटान तारीख पर लाभ-हानि खाते में ले जाया जाता है, जबकि बाजार मूल्य और भारित औसत लागत के बीच पुनर्मूल्यन अंतरों को वर्ष के दौरान, प्रत्येक प्रकार की आस्ति के लिए एक विशिष्ट पुनर्मूल्यन खाते में अंतरित कर दिया जाता है। वर्ष के अंत में, नकारात्मक पुनर्मूल्यन अंतरों को लाभ-हानि खाते में वित्तीय आस्तियों और स्थितियों पर 'अवलिखत' के रूप में अभिनिर्धारित किया जाता है। किसी एक प्रतिभूति या मुद्रा में पुनर्मूल्यन अंतरों को एक दूसरे के विरुद्ध नेटिंग नहीं किया जाता है।
दक्षिणी अफ्रीका	बिक्री के लिए उपलब्ध आस्तियों के उचित मूल्य में होने वाले परिवर्तन से उपजित लाभों और हानियों को सीधे ही रिजर्व में अभिनिर्धारित किया जाता है, तथा इन आस्तियों की बिक्री पर, संचित लाभ या हानि को इक्विटी (रिजर्व खाता) में अभिनिर्धारित किया जाता है तथा जिस अवधि में यह होता है, उस अवधि की आय को विवरणी में अंतरित किया जाता है। ट्रेडिंग यंत्रों के उचित मूल्य में परिवर्तन से उपजित लाभों और हानियों, तथा वित्तीय लिखतों के प्रिमियम या बट्टों के परिशोधन पर, परिशोधित लागत पर आय विवरणी में, जिस अवधि में उपजित होते हैं, ले जाया जाता है।
भारत	केवल प्राप्त लाभों को ही अभिनिर्धारित किया जाता है। स्वर्ण के मूल्यन और विदेशी मुद्रा आस्तियों और देयताओं पर हुए अप्राप्त लाभों/हानियों को लाभ-हानि खाते में नही ले जाया जाताा वरन् मुद्रा और स्वर्ण पुनर्मूल्यन खाते में बुक किया जाता है।
रूस	अप्राप्त विनिमय दर अंतरों को 'उपचित विनिमय दर अंतरों' के रूप में हिसाब में लिया जाता है और लाभ हानि खाते में शामिल नहीं किया जाता है। तथापि, अगर 'उपचित विनिमय दर अंतरों' में शेष राशि पर्याप्त नहीं है, नकारात्मक अप्राप्त विनिमय दर अंतरों को, बैंक ऑफ़ रशिया के परिचालनगत खर्चों में हिसाब में लिया जाता है।
संयुक्त राज्य अमरीका	अमेरिकी सरकार की प्रतिभूतियों और निवेश जो विदेशी मुद्राओं में मूल्यांकित हों, निपटान तारीख आधार पर, लागत पर दर्ज किए जाते हैं, तथा प्रीमियम या बट्टों की अभिवृद्धि को सीधी / कटौती आधार पर परिशोधन के लिए समायोजित किया जाता है। विदेशी मुद्राओं में मूल्यांकित निवेशों पर प्राप्त और अप्राप्त लाभों और हानियों जो, दैनिक आधार पर चालू बाजार विनिमय दरों के पुनर्मूल्यन से उपजित हों, 'विदेशी मुद्रा लाभों (हानियों), निवल' के रूप में रिपोर्ट किया जाता है।

IX संगठनात्मक विकास और कार्यनीतिपरक आयोजना

9.1 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 यह निर्दिष्ट करता है कि रिज़र्व बैंक राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिए स्थापित विशेष शक्तियों एवं दायित्वों से मुक्त एक निगमित निकाय है। चूंकि निर्गम और बैंकिंग विभाग की स्थापना करना रिज़र्व बैंक का सांविधिक दायित्व था अत: रिज़र्व बैंक ने प्रारंभ में ही बैंक ऑफ इंग्लैंड का अनुकरण करते हुए इन विभागों की स्थापना की। कालांतर में विभिन्न अवसरों पर रिज़र्व बैंक को सौंपे गए विभिन्न दायित्वों का वहन करने के लिए अन्य विभागों की स्थापना की गई। रिज़र्व बैंक के संगठनात्मक कायाकल्प में, विशेषतः स्वातंत्र्योत्तर काल में, एक ओर घरेलू ज़रूरतों और मजबूरियों की पूर्ति एवं दूसरी और उभरते सर्वोत्तम अंतरराष्ट्रीय व्यवहारों के बीच तारतम्य बनाने की आवश्यकता के मद्देनजर, लचीलापन अपेक्षित होता है। समय के साथ एवं बदलती हुई आर्थिक एवं वित्तीय परिस्थितियों में रिज़र्व बैंक ने सफलतापूर्वक अपना रूपांतरण किया है ।

9.2 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के प्राक्कथन के अनुसार, 'भारत में मौद्रिक स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए बैंक नोटों का निर्गम करने तथा आरक्षित निधियों के रखरखाव और सामान्यत: देश के लाभार्थ उसके मुद्रा एवं ऋण प्रणालियों का परिचालन' करने के लिए भारतीय रिज़र्व बैंक की स्थापना की गई है । असाधारण परिस्थितियों से निपटने में सक्षम बनाने के लिए अधिनियम में बैंक को अतिरिक्त शक्तियां एवं परिचालन क्षमता प्रदान करने का प्रावधान किया गया है । इस अध्याय में रिज़र्व बैंक की मूल्य स्थिरता के साथ साथ आर्थिक विकास की मूलभूत चिंता की पृष्ठभूमि में उभरती हुई चुनौतियों से निपटने के लिए बैंक के संगठनात्मक ढांचे में आए परिवर्तनों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है। इसमें कार्यात्मक परिवर्तनों की अनुक्रिया से संगठनात्मक ढांचे में आए बदलावों का यथासंभव क्रमिक वर्णन किया गया है (परिशिष्ट 9.1)

I. गठन और संचालन (1920 से 1940 का दशक)

9.3 जन आकांक्षाओं के अनुरूप मुद्रा और विदेशी मुद्रा दर का प्रबंध करने में असफल होने के कारण हुए घोर लोकापवाद के बाद भारतीय मुद्रा एवं वित्त पर रायल कमीशन, 1926 ने मुद्रा एवं ऋण नियंत्रण का कार्य सरकार के कार्यक्षेत्र से निकाल कर इन कार्यों का संपादन करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक नामक एक केंद्रीय बैंक की स्थापना की सिफारिश की । परंतु तत्कालीन राजनैतिक परिस्थितियों में यह चर्चा दब कर रह गई । आयोग ने यह सुझाव भी दिया था कि केंद्रीय बैंक बैंकों के बैंक की जिम्मेदारी भी निभाए। भारतीय केंद्रीय बैंकिंग जांच समिति (सन् 1931) तथा संवैधानिक सुधारों पर श्वेतपत्र (सन् 1933) ने राजनैतिक प्रभावों से मुक्त रिजर्व बैंक स्थापित करने के प्रस्ताव के कार्यान्वयन का मार्ग प्रशस्त किया ।

9.4 भारत कार्यालय समिति रिपोर्ट (भाकास, 1933) ने राजनैतिक दखल के भय के निराकरण हेतु अंशधारकों के बैंक की स्थापना करने का सुझाव दिया । समिति ने महसूस किया कि राज्य द्वारा पूंजी निवेश से राजनैतिक दबदबे को प्रत्यक्ष बल मिलेगा । उसने व्यक्तिगत उत्तरदायित्व पर जोर देने के लिए सुझाव दिया कि बोर्ड का आकार छोटा रखा जाए। केंद्रीय बैंकिंग संरचना क्षेत्र में तत्कालीन अंतरराष्ट्रीय घटनाओं ने भी बैंक की अंशधारक स्वामित्व संरचना पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाला। कालांतर में रिज़र्व बैंक विधेयक का मसौदा बनाने के लिए गठित लंदन समिति ने भारत कार्यालय समिति रिपोर्ट की सिफारिशों का अनुमोदन किया। रिज़र्व बैंक विधेयक (1933), ने मुद्रा एवं ऋण नियंत्रण का कार्य एक स्वतंत्र प्राधिकारी, जो निरंतरता के साथ कार्य कर सके, के सुपुर्द करने की आवश्यकता को रेखांकित किया । विधेयक के पारित होने पर सन् 1934 में भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम अस्तित्व में आया जिसके प्रावधानों के अनुसार रिजर्व बैंक ने अप्रैल 1934 में अपना कारोबार शुरू किया । मुद्रा एवं विदेशी मुद्रा विनिमय दर का प्रबंधन नवनिर्मित केंद्रीय बैंक की मुख्य जिम्मेदारियां थीं। इन पर बैंकिंग प्रबंधन की अपेक्षा बहुत ज्यादा ध्यान दिया जाता था। इस मंशा के अनुरूप दैनंदिन कार्यव्यवहार में सरकार के हस्तक्षेप से स्वतंत्र बैंक के संचालनतंत्र का विशेष पहलू था ।

9.5 सामान्य अधीक्षण एवं बैंक के मामलों एवं कारोबार को निदेशित करने के लिए अधिनियम में एक केंद्रीय निदेशक मंडल के गठन का प्रावधान किया गया है । एक गवर्नर , दो उप गवर्नरों (परिषद में गवर्नर जनरल द्वारा नियुक्त), चार निदेशक (परिषद में गवर्नर जनरल द्वारा नामित), आठ निदेशक (अंशधारकों द्वारा चुने गए) , और एक सरकारी अधिकारी (परिषद में गवर्नर जनरल द्वारा नामित परंतु मताधिकाररहित) को मिलाकर केंद्रीय निदेशक मंडल का गठन किया गया । उस समय केंद्रीय निदेशक मंडल में वाणिज्यिक निकायों के प्रतिनिधित्व की जरूरत

महसूस नहीं की गई । हालांकि विभिन्न आर्थिक हितों के लिए कोई सांविधिक प्रावधान नहीं थे, तथापि यह आशा की जाती थी कि परिषद में गवर्नर जनरल के निर्णयों से समाज के मुख्य घटकों के अल्प प्रतिनिधित्व या अप्रतिनिधित्व से उत्पन्न दोष का निवारण किया जाएगा। इसका उद्देश्य नियंत्रक निकाय को विशेष हितप्रतिनिधियों के अनुभव एवं विशेषज्ञता का लाभ उपलब्ध करवाना था (भारतीय रिज़र्व बैंक , 1970)। गवर्नर और उप गवर्नरों की नियुक्ति करने वाली प्राधिकारी भारत सरकार में केंद्रीय निदेशक मंडल को सौंपे गए उत्तरदायित्वों को पूरा करने में असफल होने की स्थिति में उसे बर्खास्त करने की शक्ति भी निहित थी। हालांकि अधिनियम में ऐसे विशिष्ट प्रावधान हैं जिनके तहत गवर्नर और उप गवर्नरों को बर्खास्त किया जा सकता हैं तो भी केंद्रीय सरकार ने उन्हें अकारण तथा बिना कोई औचित्य बताए बर्खास्त करने की शक्ति अपने पास रखी है। अधिनियम ने क्षेत्रीय या आर्थिक हितों के पर्याप्त रूप से संवर्धन करने की दृष्टि से भौगोलिक अंचलों का प्रतिनिधित्व करने के लिए पांच आंचलिक मंडलों की स्थापना का समर्थन किया [भारतीय रिज़र्व बैंक संशोधन अधिनियम संख्या 1947 का 11 द्वारा पांच के स्थान पर चार किया गया]. स्थानीय बोर्ड (जिसके सदस्यों की नियुक्ति केंद्रीय निदेशक मण्डल द्वारा की जाती है) केंद्रीय निदेशक मंडल द्वारा दिए गए उत्तरदायित्व का भली प्रकार निर्वाह एवं उनको संदर्भित मामलों पर केंद्रीय निदेशक मंडल को उचित सलाह दें सकें, इसके लिए उनमें दुतरफा संवाद की आवश्यकता महसूस की गई। केंद्रीय निदेशक मंडल का यह उत्तरदायित्व है कि वह साल में कम से कम छ: तथा प्रत्येक तिमाही में एक बैठक करे । गवर्नर इन बैठकों की अध्यक्षता करता है तथा उसमें निर्णायक मत देने की शक्ति भी समाहित है ।

9.6 केंद्रीय निदेशक मंडल की पहली बैठक जनवरी 14 , 1935 को कलकत्ता में संपन्न हुई थी। संगठन संबंधी प्रारंभिक औपचारिकताओं को बोर्ड की दूसरी बैठक में पूरा किया गया। इम्पीरियल बैंक से रिजर्व बैंक को सरकारी खातों का स्थानांतरण प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से राजकोषीय वर्ष (अप्रैल 1 , 1935) के पहले दिन किया गया ।

9.7 बैंक के संगठनात्मक ढांचे में - क) केंद्रीय कार्यालय जिसमें, सचिव अनुभाग , गवर्नर और केंद्रीय बोर्ड की सचिवीय आवश्यकताओं की पूर्ति भी जिसमें शामिल थी, सार्वजनिक ऋण प्रबंध, केंद्रीय एवं प्रांतीय सरकारों के अर्थोपाय आवश्यकताओं की पूर्ति एवं बैंक की नीतियों को प्रभावित करने वाले मामलों के लिये उत्तरदायी था, एवं मुख्य लेखाकार का अनुभाग स्टाफ़ प्रबंध, कार्मिक और परिसर संबंधी मामलों के अतिरिक्त निर्गम एवं बैंकिंग विभागों के खातों का रख-रखाव और निगरानी, व्यय संबंधी मामलों के निपटान, कोष का संप्रेषण, नोट और सिक्कों के मांगपत्र तथा आबंटन आदि के लिए जिम्मेदार था , और ख) कृषि ऋण विभाग, कृषि ऋणसंबंधी समस्याओं की जांच-पड़ताल करने, कृषि ऋण प्रदान करने वाली संस्थाओं के साथ समन्वय करने का कार्य करता था। शुरू में बैंक का केंद्रीय कार्यालय कलकत्ता में था, जिसे दिसंबर 1937 में बंबई स्थानांतरित किया गया ।

9.8 प्रारंभ से ही विधायिका ने ग्रामीण वित्त के मामले को काफी महत्व दिया है। संयुक्त प्रवर समिति (संप्रस, 1933) ने देशी साहूकारों पर एक सांविधिक रिपोर्ट तैयार करने का सुझाव दिया ताकि कृषि वित्त के असंगठित ढांचे में सुधार लाने के लिए उनका रिज़र्व बैंक के साथ संबंध संस्थापित करके कालांतर में उन्हें अनौपचारिक आधुनिक बैंकिंग प्रणाली में शामिल किया जा सके। इसे अत्यावश्यक समझा गया क्योंकि अन्यथा रिज़र्व बैंक द्वारा मुद्रा और ऋण प्रणाली पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित करना तथा ग्रामीण जनता को उचित शर्तों पर उसका लाभ मुहैया करवाना असंभव था (भारतीय रिज़र्व बैंक, 1970)। अनुसूचित अथवा सहकारी बैंकों द्वारा मौसमी कृषि कार्यों का वित्तपोषण, फसलों के विपणन हेतु जारी विनिमय बिलों एवं वचनपत्रों का पुनर्बट्टीकरण और इन उद्देश्यों के लिए ऋणाबंटन भारतीय रिज़र्व बैंक विधेयक 1933 के आवश्यक प्रावधान थे। संयुक्त प्रवर समिति की सिफारिशों के अनुसार संशोधित विधेयक ने एक अलग ग्रामीण ऋण विभाग --- कृषि ऋण विभाग (कृऋवि, 1935) की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया। यह भलीभांति महसूस किया गया कि कृषकों की ऋणावश्यकताओं की पूर्ति के लिए सहकारी आंदोलन सबसे अच्छा समाधान है तथा सहकारी संस्थाएं ऋणोपलब्धता के अलावा उससे भी आगे जाकर कृषक जीवन के अन्य पहलुओं जैसे कम कीमत पर उत्तम बीजों एवं खाद का प्रयोग आदि तथा बेहतर कृषि एवं जीवनस्तर को प्रोत्साहन दे सकती हैं। फरवरी 1937 में कृषि ऋण विभाग में एक सांख्यिकीय अनुभाग की स्थापना की गई जिसका उत्तरदायित्व घरेलू मुद्रा एवं वित्त बाजारों पर आवधिक रिपोर्ट बनाने के अलावा अनुसूचित बैंकों से संबंधित आंकड़े

[1] कोषपाल (निर्गम एवं विनिमय शाखाओं में विभाजित) एवं सामान्य विभाग (पंजीकरण शाखा, निरस्त नोट सत्यापन शाखा, दावा शाखा, संसाधन शाखा एवं लेखा शाखा में उपविभाजित) में विभाजित जहां रिजर्व बैंक के बैंकिंग या निर्गम विभाग के कार्यालय विद्यमान नहीं थे, ऐसी जगहों पर इम्पीरियल बैंक की शाखाओं में मुद्रा कोष एवं छोटे सिक्कों के डिपो की स्थापना / रखरखाव की व्यवस्था रिज़र्व बैंक द्वारा की गई।

[2] पांच विभागों यथा लोक लेखा विभाग, जमा लेखा विभाग, लोक ऋण कार्यालय, प्रतिभूति विभाग एवं शेयर स्थानान्तरण विभाग में विभाजित।

एकत्र कर उनका विश्लेषण करना भी था। अप्रैल 1937 से इस अनुभाग ने मासिक सांख्यिकीय सारांश को प्रकाशित करने का काम लेखा कार्यालय कलकत्ता से ले लिया। अनुभाग को 1935-36 एवं 1936-37 वर्षों से संबंधित वार्षिक रिपोर्ट, जिसने अक्तूबर 1937 में समाप्त किए गए मुद्रा नियंत्रक के कार्यालय द्वारा प्रकाशित वार्षिक रिपोर्ट का स्थान लिया, के प्रथम संस्करण के प्रकाशन का श्रेय भी मिला। कृषि ऋण विभाग का विस्तार करके जनवरी 1938 में अनुसूचित बैंकों के कार्यनिष्पादन की निगरानी के लिए एक अलग अनुभाग की स्थापना की गई। अप्रैल 1937 से इस अनुभाग ने 'मासिक सांख्यिकी सारांश' को प्रकाशित करने का उत्तरदायित्व लेखा कार्यालय, कलकत्ता से ले लिया। उक्त अनुमांग को 1935-36 एवं 1936-37 वर्षों से संबधित मुद्रा एवं वित्त की रिपोर्ट का प्रथम संस्करण, जिसने अक्तूबर 1937 में समाप्त किए गए मुद्रा नियंत्रक के कार्यालय की वार्षिक रिपोर्ट का स्थान लिया, प्रकाशित करने का श्रेय भी है। अनुसूचित बैंकों की देखरेख के लिए जनवरी 1938 में एक अलग बैंकिंग अनुभाग की स्थापना करके कृषि ऋण विभाग का और विस्तार किया गया।

9.9 रिज़र्व बैंक के उत्तरदायित्वों में संभावित बढ़ोतरी का पूर्वानुमान करके आंतरिक नियंत्रण और प्रक्रियाओं को सशक्त बनाने के लिए सन् 1935 में ही निरीक्षण विभाग की स्थापना की गई। स्वयं आकलन सुनिश्चित करने की प्रणाली के अनुरूप यह विभाग केंद्रीय कार्यालय विभागों एवं क्षेत्रीय कार्यालय विभागों की उपलब्धियों एवं कार्यनिष्पादन का आकलन करता था। कार्यभार में वृद्धि के आधार पर स्टाफ आवश्यकता का आलोचनात्मक विश्लेषण करके समग्र कार्य-निष्पादन में सुधार लाने के लिए यह विभाग समय-समय पर बैंक के शीर्ष प्रबंध-तंत्र को सुझाव देता था।

9.10 इस समय तक बैंकों से संबधित कानूनों में, बैंकिंग क्षेत्र में कार्यरत कंपनियों को नियंत्रित करने से संबंधि कंपनी अधिनियम, 1913 के छोटे-2 उपबंधों के अलावा, अनुसूचित बैंकों के कारोबार के विस्तृत विनियमन का प्रावधान नहीं था। उससे संबंधित विशिष्ट कानूनों एवं तंत्र का जैसे बिल्कुल अस्तित्व नहीं था। भारतीय कंपनी (संशोधन) अधिनियम, 1936 का परित होना बैंकिंग विधि निर्माण में प्रथम प्रयास था। अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों के विकास के लिए उनको ऋण उपलब्ध करवाने की आवश्यकता के मद्देनजर देश में बैंकिंग नेटवर्क के भौगोलिक विस्तार को एक महत्वपूर्ण उपलब्धि माना गया। 1913-14 के बैंकिंग संकट, जिस दौरान कई संयुक्त स्टाफ बैंक असफल हो गए थे, के बाद के दशकों में बैंकों की असफलता काफी हद तक स्थानीय कमजोरियों एवं कमियों के कारण हुई, जिनसे अनियंत्रित बैंकिंग के दिनों मे कई बैंकिंग कंपनियां ग्रस्त थीं (भारिबै. 1970)।1938 के मध्य में त्रावणकोर नेशनल एवं क्विलोन बैंक की असफलता ने ब्रांच नेटवर्क के अस्वस्थ विस्तार तथा बैंकिंग संस्थाओं के परिचालन में जांच के प्रावधानों में कमियों को उजागर किया। संकट के बाद बैंकों के निरीक्षण के लिए रिज़र्व बैंक ने विशेष अधिकारी प्रतिनियुक्त किए तथा सूचना प्राप्त करके नियंत्रण करने की शक्ति प्राप्त की। परंतु विस्तृत नियामक प्रावधान तैयार करने में रिज़र्व बैंक और सरकार ने एक दशक का समय लिया तथा 1949 में बैंकिंग कंपनी अधिनियम बनाया गया । सन 1966 में जिसका नाम बदलकर बैंककारी विनियमन अधिनियम, बी आर एक्ट, 1949 कर दिया गया।

9.11 द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान देश को भारी आर्थिक एवं वित्तीय समस्याओं का सामना करना पड़ा, जिससे विदेशी मुद्रा लेन-देन पर नियंत्रण के लिए विशेष विभाग की स्थापना करना आवश्यक हो गया। परिणामतः सन् 1939 में विदेशी मुद्रा नियंत्रण विभाग गठित किया गया। संगठनात्मक सुविधा की दृष्टि से विनिमय नियंत्रण का कार्य, जो अब तक केंद्र सरकार के कार्य-क्षेत्र का विषय था, रिज़र्व बैंक को दे दिया गया। उत्तरवर्ती समय में विनिमय नियंत्रण के क्षेत्र में बैंक के कार्यों एवं उत्तरदायित्वों में वृद्धि हुई। विनिमय विभाग का केंद्रीय कार्यालय बंबई में था, परंतु कारोबार में वृद्धि के फलस्वरूप अन्य केंद्रों जैसे कलकत्ता, लाहौर, कानपुर, रंगून एवं बाद में कराची में भी विभाग की शाखाएं खोली गईं।

9.12 सरकार के बैंकर एवं सलाहकार की भूमिका का निर्वहन करते हुए रिज़र्व बैंक ने विदेशी मुद्रा नियंत्रण, मुद्रा विप्रेषण, परिचालन, लोक ऋण प्रबंध एवं नए ऋणों के निर्गम आदि कार्य भी किए। केंद्र सरकार अपना नकद शेष बिना ब्याज के रिज़र्व बैंक में जमा करती थी। इन कार्यों के संपादन से संबंधित शर्तों का निर्धारण आपसी सहमति से किया गया। सार्वजनिक निधि की सुरक्षा, ब्रांच नेटवर्क की पर्याप्तता तथा स्टाफ की विश्वसनीयता की दृष्टि से, जहाँ रिज़र्व बैंक के कार्यालय नहीं थे, ऐसे स्थानों पर ये कार्य इम्पीरियल बैंक की शाखाओं को दिया गया। आगे, जिन स्थानों पर इम्पीरियल बैंक की शाखाएं नहीं थीं, वहां सरकार के अनुरोध पर सरकारी कामकाज किसी अन्य बैंक को दिया गया, हालांकि निधि संबंधी उत्तदायित्व रिज़र्व बैंक पर ही रहा।

9.13 इन विभिन्न उत्तरदायित्वों के निर्वहन के लिए रिज़र्व बैंक को अधिकांश स्टाफ मुद्रा नियंत्रण के कार्यालय, भारत सरकार और इसी बैंक से विरासत मिला। प्रारंभिक वर्षों में इन कार्यों को अंजाम देने की आवश्यक क्षमताओं का विकास संभव हुआ। व्यवहारिक प्रशिक्षण से ही परिचालन के दौरान मुद्रा प्रबंधन में इन्वेंटरी एवं लोजिस्टिकल जैसे

कार्य करने पड़ते थे तथा इनको करने के लिए ऐसे लोगों की आवश्यकता थी जो इन कामों को आसानी से कर सकते थे। ऐसे कार्यों में निष्ठा, ईमानदारी एवं विश्वसनीयता जैसे गुणों का बहुत महत्व है। अतः सामान्य तथा नकदी विभागों के लिए - 2 अलग - अलग 2 भर्ती नीतियां बनाई गईं। परंतु बैंकिंग कार्य अधिक औपचारिक बनाए गए एवं इनमें लेखा प्रक्रिया के ज्ञान को वांछनीय क्षमता माना गया। जबकि - नीति निर्माण का कार्य उच्च पदाधिकारियों के लिए सुरक्षित रखा गया।

9.14 11 अगस्त, 1943 के प्रथम भारतीय गवर्नर के रूप में श्री. सी.डी. देशमुख की नियुक्ति रिज़र्व बैंक की एक ऐतिहासिक घटना है। राजनैतिक शक्ति का बँटवारा, स्थानांतरण, निराशाजनक वृद्धि की संभावना, देश के बँटवारे से उत्पन्न परिस्थिति, सामाजिक हितों की पूर्ति सुनिश्चित करने के लिए कराधान नीतियों में बदलाव, एवं मुद्रास्फीति का निराकरण तथा उत्पादन को प्रोत्साहन देने की नीति की पृष्ठभूमि में स्थायित्व सुनिश्चित करने वाली एक बात यह थी कि जून 1949 तक बैंक के गवर्नर कों नहीं बदला गया जिससे राजकोषीय एवं मौद्रिक नीतियों में निरंतरता बनी रही (भा.रि.बैं.1970)। युद्धोत्तर काल में बढ़ते हुए कार्य दबाव से निपटने के लिए वर्तमान विभागों का पुनर्गठन किया गया।

9.15 युद्ध के वर्षों एवं बँटवारे से उत्पन्न जटिल समस्याओं की पृष्ठभूमि में आर्थिक आसूचना एवं अनुसंधान का महत्व बढ़ा। बैंक का कार्य सामान्य रूप से चलाने के लिए मुद्रा, वित्त, बैंकिंग, विदेशी मुद्रा एवं अन्य समष्टिगत आर्थिक मामलों से संबंधित आंकड़ों का संग्रहण, संगठन एवं विश्लेषण द्वारा इन काठिनाइयों का समाधान किया गया। अतः अनेक प्रकाशनों,एवं पत्रिकाओं एवं रिपोर्टों जैसे मासिक सांख्यिकीय सारांश, अंश धारकों को प्रस्तुत केंद्रीय मंडल की रिपोर्ट, केंद्रीय मंडल की समिति को वित्तीय स्थिति संबंधी साप्ताहिक रिपोर्ट, भारत में सहकारी आंदोलन की समीक्षा आदि का प्रकाशन शुरू किया गया। इसके अलावा, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय वित्त, भारत में स्टर्लिंग निवेश, आदि विषयों पर विशेष अध्ययन आरंभ किए गए। स्फीतिकारक दबावों के मद्देनज़र अगस्त 1945 में बड़े संगठनात्मक सुधार किए गए। कृषिऋण विभाग का तीन विभागों यथा - i) कृषि ऋण अनुभाग ii) मुद्रा एवं राजकोषीय क्षेत्रों में विभिन्न अध्ययनों के लिए सांख्यिकी एवं अनुसंधान iii) बैंकिंग अनुभाग - जिसको अनुसूचित बैंकों के दैनिक शेष के अभिलेख का रखरखाव, सांविधिक शेष राशि में न्यूनता के कारण दंडात्मक ब्याज की उगाही तथा केंद्रीय कार्यालय से प्राप्त ऋण आवेदनों का निपटान करने का काम दिया गया। बैंक के कृषि ऋण, बैंकिंग परिचालन एवं आर्थिक अनुसंधान से संबंधित कार्यों के साथ न्याय करने के लिए सन् 1945 के उत्तरार्ध में पुनर्गठन के दूसरे दौर में सांख्यिकी एवं अनुसंधान अनुभाग को बढ़ाकर सांख्यिकी विश्लेषण एवं अनुसंधान विभाग का गठन किया गया तथा डाटा संग्रहण उनका विश्लेषण करने, अनुसंधान लेखों के प्रकाशन, नीति निर्माण के लिए आधारभूत सूचनाएं उपलब्ध कराने, तथा आर्थिक मुद्दों पर सरकार को सलाह देने , प्रयोजन के लिए इसी विभाग में आर्थिक आसूचना तथा आर्थिक अनुसंधान नाम के दो अलग प्रभाग भी बनाए गए। बैंकिग अनुभाग के बैंकिंग परिचालन विभाग में मिला दिया गया, जबकि कृषि ऋण विभाग एक अलग विभाग बना रहा। इस पुनर्गठन का उद्देश्य मौद्रिक और लोक ऋण नीतियों के बनाने, बैंकिंग के विनियमन तथा वित्तीय संस्थाओं को संवर्धन में, तथा युद्धोत्तर अवधि में सरकार के आर्थिक और वित्तीय सलाहकार के रूप में सक्रिय भूमिका निभाना था। अनुसंधान और सांख्यिकी विभाग की स्थापना का बहुत कुछ श्रेय गवर्नर सर सी. डी. देशमुख द्वारा की गई पहलों को जाता है (भा. रि. बैंक 1970)।

9.16 वर्ष 1945 में विश्व मुद्रा कोष (आइएमएफ) एवं अंतरराष्ट्रीय पुनर्निर्माण एवं विकास बैंक (आइबीआरडी) की स्थापना के लिए हुई चर्चा एवं विचार में भागीदारी एक महत्वपूर्ण घटना थी। इन पहलों ने भारत के लिए इन संस्थाओं का सदस्य बनने का मार्ग सरल बना दिया। भारत सरकार रिज़र्व बैंक के साथ मशविरा करके इन दोनों संस्थाओं में एक कार्यनिदेशक की नियुक्ति करती है। भारत के लिए भुगतान संतुलन के आंकड़ों का महत्व समझ कर अनुसंधान एवं सांख्यिकी विभाग में सन 1948 में भुगतान संतुलन प्रभाग का सृजन किया गया। इससे अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष को भुगतान संतुलन के आंकड़े भेजने के भारतीय रिजर्व बैंक के उत्तरदायित्व का अनुपालन हुआ। पहली बार बैंक ने 30 जून 1948 की स्थिति के अनुसार भारत की विदेशी आस्तियों एवं देनदारियों का सर्वेक्षण किया तथा भारत के अंतरराष्ट्रीय निवेश संबंधी आंकड़े 1950 में प्रकाशित किए गए।

9.17 स्वतंत्रता के पहले दो दशकों में देश के बैंकिंग क्षेत्र में भारी बदलाव आए। इन दो दशकों में सुदृढ़ीकरण किया गया तथा संस्था निर्माण की दिशा में रिज़र्व बैंक ने अथक प्रयास किए। इन प्रयासों के फलस्वरूप कई विशेष संस्थाओं के विकास को बल मिला। इससे रिज़र्व बैंक के कार्य-क्षेत्र का विस्तार हो कर विकास परक कार्यों पर उसका ध्यान केंद्रित हुआ।

9.18 वर्ष 1949 में देश के बैंकिंग इतिहास में दो महत्वपूर्ण घटनाएं हुई यथा - रिज़र्व बैंक का राष्ट्रीकरण एवं बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 का परित होना। पहली घटना के परिणामस्वरूप स्वतंत्र भारत

की आशाओं की पूर्ति के लिए बैंकों के परिचालनों का पुनर्गठन करने के लिए प्रयास शुरू किए गए तथा दूसरी के कारण इसे समग्र बैंकिंग प्रणाली का व्यापक नियंत्रण एवं विनियमन करने की शक्तियाँ मिलीं। अधिनियम के प्रावधानों में बैंकों की ऋण नीति पर नियंत्रण; शाखा लाइसेंसिंग प्रणाली; बैंकों द्वारा आवधिक विवरणियों का प्रेषण; बहियों एवं खातों की जांच के आधार पर निरीक्षण रिपोर्ट बनाने की व्यवस्था शामिल थी। उल्लेखनीय है कि अधिनियम ने यह व्यवस्था भी की कि रिज़र्व बैंक ''भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति एवं प्रगति'' विषय पर एक वार्षिक सांविधिक रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत करेगा। इस समय तक बैंकिंग परिचालन विभाग उक्त अधिनियम के अधीन उसको सौंपी गई जिम्मेदारियों को निभाने में भली भांति सक्षम हो गया था।

II. कार्यात्मक एवं संगठनात्मक विकास (1950 से 1970 का दशक)

9.19 1950 से 1970 के बाद के दशकों में कई महत्वपूर्ण घटनाएं घटीं। बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 बनने के बाद सहकारी संस्थाओं को ऋण आबंटन में रिज़र्व बैंक ने काफी उदारीकरण किया। ग्रामीण बैंकिंग जांच समिति (1949) की स्थापना ग्रामीण वित्त के क्षेत्र में एक मील का पत्थर थी। समिति की सिफारिशों के अनुसार, कृषि ऋण विभाग को सुदृढ़ बनाया गया तथा सन् 1950 में बैंकिंग विकास विभाग की स्थापना की गई जिसने रिज़र्व बैंक के विकास प्रयासों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा उद्योग ऋण संबंधी मामलों का निपटान किया। कृषि ऋण के संबंध में समेकित नीति के निर्माण के लिए बैंक के तत्वाधान में अखिल भारत ग्रामीण ऋण सर्वेक्षण संपन्न हुआ (1951)। इन उपायों का उद्देश्य अर्धशहरी क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का विस्तार; ग्रामीण वित्त की समस्या का समाधान; मझौले एवं लघु उद्योगों के वित्त पोषण की समस्याओं का निपटारा (इस उद्देश्य के लिए राज्य औद्योगिक वित्त निगमों की स्थापना की गई) तथा ग्रामीण बचतों का संग्रहण था। निरीक्षण कार्यालय एवं बैंकिंग संस्थाओं के बीच लगातार संपर्क सुनिश्चित करने के लिए देश के महत्वपूर्ण स्थानों पर रिज़र्व बैंक के कार्यालय स्थापित कर निरीक्षण कार्य का विकेंद्रीकरण किया गया।

9.20 द्वितीय पंचवर्षीय योजना में निहित औद्योगिक विकास के महत्वाकांक्षी लक्ष्यों की पृष्ठभूमि में उद्योग क्षेत्र को संगठित वित्त उपलब्ध करवाने की आवश्यकता ने आधारभूत वित्तीय ढांचे के विकास की ओर बैंक की नीतियों का ध्यान खींचा। भारतीय औद्योगिक वित्त निगम (1948) की स्थापना भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा इस दिशा में उठाया गया पहला प्रयास था। इसके बाद राज्य स्तर पर उसी प्रकार के निकाय स्थापित करने के लिए राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 पारित किया गया। भारतीय औद्योगिक एवं निवेश निगम (आइसीआइसीआइ,1951) ने निजी क्षेत्र के वित्तपोषण पर ध्यान केंद्रित करके औद्योगिक क्षेत्र में ऋण सुविधाओं का विस्तार किया। इसके अलावा इस दौर में इम्पीरियल बैंक आफ इंडिया का भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआई 1955) तथा इसके सहयोगी बैंकों का सहायक कंपनियों के रूप मे पुनर्गठन किया गया। अतः अब तक बैंकिंग सेवाओं से वंचित अर्धशहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सेवाओं के विस्तार के लिए उल्लेखनीय प्रयास किए गए। इन प्रयासों से प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों के वित्तपोषण को भी प्रोत्साहन मिलने की आशा की गई। रिज़र्व बैंक की शक्तियों में विस्तार करने के लिए बैंकिंग कंपनी (संशोधन) अधिनियम 1950 द्वारा भारत के बाहर बैंक शाखाओं की स्थापना के लिए लाइसेंस प्रदान करने संबंधी प्रावधान किए गए। इसके अलावा सन् 1959 में अधिनियम में एक और संशोधन द्वारा विदेशी शाखाओं के निरीक्षण की शक्ति भी रिज़र्व बैंक को देकर उसकी निरीक्षण शक्तियों का विस्तार किया गया (भा.स.1972)। इसके अतिरिक्त जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा के लिए गैर बैंकिंग गतिविधियों को रिजर्व बैंक के विनियमन के दायरे में लाने हेतु मार्च 1966 में गैर बैंकिंग कंपनी विभाग की स्थापना हुई।

9.21 संबंधित क्षेत्रों में स्थित करेंसी चेस्टों उनकी सेवाओं से संबंधित समस्याओं का निराकरण करने के लिए देश के बँटवारे के बाद दिल्ली में निर्गम विभाग का स्वतंत्र कार्यालय एवं गुवाहाटी में उप कार्यालय खोला गया। बैंकिंग कंपनी अधिनियम, 1949 के पारित होने के बाद बैंक को अत्यधिक विधिक कार्य अपने हाथ में लेना पड़ा। बैंक के सांविधिक उत्तरदायित्वों के निपटान में आने वाली बढ़ती हुई विधिक जटिल समस्याओं को निपटाने के लिए एक विधि प्रभाग (1950) की स्थापना की गई। इसके अतिरिक्त भारतीय संघ के राज्यों में भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम का विस्तार होने पर राज्य सरकारों के सार्वजनिक ऋण से संबंधित बड़ी कठिनाइयाँ सामने आईं। इस पृष्ठभूमि में विधि प्रभाग का दर्जा बढ़ा कर उसे विधि प्रभाग बनाया गया (1960)। इसके अलावा पर्याप्त आधारभूत सुविधाएं सुनिश्चित करने के लिए पूर्ववर्ती मुख्य लेखाकार कार्यालय में परिसर अनुभाग का विस्तार करके सन् 1965 में परिसर विभाग की स्थापना की गई।

9.22 पारंपरिक केंद्रीय बैंकिंग कामकाज में आवश्यक क्षमता विकसित करने तथा ग्रामीण एवं औद्योगिक वित्त का विस्तार करने में सफलता प्राप्त करने के बाद विशेष संस्थाओं का विकास तथा कुछ कार्यों को अलग करके मुख्य केंद्रीय बैंकिंग पर ध्यान केंद्रित करने की जरूरत महसूस की गई। बुलियन एवं शेयर बाजार के साथ घनिष्ठ

संबंध होने के कारण तत्संबंधी व्यापार के बारे में रिज़र्व बैंक की सलाह मांगी जाती थी, अतः बुलियन एवं शेयर व्यापार संघों के गवर्निंग बोर्ड में अधिकारी प्रतिनियुक्त करने की व्यवस्था की गई। रिज़र्व बैंक के साथ घनिष्ठ समन्वय करके भारत सरकार ने 1956 वर्ष में प्रतिभूति व्यापार का विनियमन करने हेतु कानून बनाए (भा.रि. बैं.1970)। बाद में ईस्ट इंडिया कॉटन एसोसिएशन एवं बंबई ऑयल सीड एक्सचेंज के बोर्डों मे बैंक अधिकारी भी नामित किए गए।

9.23 संस्थागत मशीनरी में निरंतर सुधार करने के लिए बैंक ने निक्षेप बीमा निगम (1962); बैंक की अनुषंगी के रूप में कृषि पुनर्वित्त निगम (1963); भारतीय औद्योगिक विकास बैंक (1964) एवं यूनिट ट्रस्ट आफ इंडिया (1964) की स्थापना की। भारतीय ऋण प्रतिभूति निगम लिमिटेड (1971) की स्थापना रिज़र्व बैंक द्वारा की गई जिसके बोर्ड में बैंक ने अपने दो अधिकारी नियुक्त किए।

9.24 युद्ध के वर्षों में लेखों का ऊपरी दिखाना, कम आंतरिक शक्ति वाले बैंकों का खुलना, जमाराशि आकर्षित करने के लिए अस्वस्थ तरीकों का प्रयोग, बैंकों, बीमा कंपनियों एवं औद्योगिक घरानों में गैर कानूनी रूप से आपसी संबंध आदि प्रवृतियों से जमाकर्ताओं के हितों को नुकसान होता था। युद्धोत्तर काल में इन समस्याओं के समाधान हेतु व्यापक बैंकिंग कानून की आवश्यकता महसूस हुई । इसके बाद, निरंतर बलवती होती हुई इस भावना कि बिना हस्तक्षेप के रिज़र्व बैंक समाज के प्रति अपने कर्त्तव्यों को पूरा करने में समर्थ नहीं है, 'सामाजिक नियंत्रण' के सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ। आर्थिक वृद्धि एवं अर्थव्यवस्था के उत्पादक क्षेत्रों को ऋण प्रवाह सुनिश्चित करने के लिए सरकार ने बैंकों पर कुछ नियंत्रण स्थापित करने की जरूरत समझी। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारत सरकार ने सन् 1969 में 14 बड़े निजी बैंकों का राष्ट्रीकरण किया ताकि तुलनात्मक रूप से बहुत कम बैंकिंग सुविधाओंवाले क्षेत्रों में शाखाओं का विस्तार किया जा सके। इस अवधि में रिज़र्व बैंक ऋण आयोजना पर ध्यान केंद्रित करने तथा वाणिज्यिक बैंकों को ऋतुवार तथा क्षेत्रवार आदि ऋण की मात्रा का आकलन करने में सहायता करने का प्रयास कर रहा था। ऋण आयोजना का एक कार्यात्मक लक्षण यह था कि ऋण नीति का निर्माण बैंकरों के साथ विचार-विमर्श के बाद किया जाता था तथा मौद्रिक नीति को ऋण नीति की सहायक का दर्जा दिया गया। ऋण निपटान को एक महत्वपूर्ण विषय माना गया तथा कुछ प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्रों को ऋण प्रवाह की सावधानी से निगरानी की जाती थी। ऋण नीति के निर्माण एवं 1969 में आरंभ की गई अग्रणी बैंक योजना की निगरानी के लिए अप्रैल 1970 में ऋण आयोजना एवं बैंकिंग विकास कक्ष की स्थापना की गई। अग्रणी बैंक योजना की निगरानी का कार्य बाद में बैंकिंग परिचालन एवं विकास विभाग को स्थानांतरित किया गया। यह कक्ष जो कि सचिव विभाग के एक भाग के रूप में काम करता था, सन् 1975 में स्वतंत्र ऋण आयोजना कक्ष के रूप में परिवर्तित कर दिया गया।

III. संरचनात्मक पुनर्गठन (1980 का दशक)

9.25 अब तक विभिन्न संकट पूर्ण परिस्थितियों ने नीति निर्माताओं को नीतियों में प्रयोग करने, समय-समय पर सांस्थनिक संरचना का पुनर्गठन करने तथा आवश्यकतानुसार प्राथमिकताओं में परिवर्तन करने को प्रेरित किया, विशेषकर बैंकिंग, विनिमय दर प्रबंध तथा मुद्रा नियंत्रण के क्षेत्रों में। परंतु समाज की आर्थिक आवश्यकताएं पूरी करने के लिए रिज़र्व बैंक ने अपनी समयानुरूप व्यवस्था करने की शक्ति का प्रयोग वांछनीय पेशेवर तरीके के साथ किया। यह तथ्य है कि इस अवधि में सामाजिक हितों से समर्थित राजकोषीय विस्तार की नीति से रिज़र्व बैंक के नीतिगत प्रयासों को मुद्रास्फीति संभावनओं एवं दबावों के प्रभाव को कम करने पर केंद्रित किया।

9.26 इस खंड के शेष भाग में आर्थिक परिस्थितियों में आए परिवर्तनों के फलस्वरूप बदलती हुई जरूरतों के कारण विभागों के सृजन एवं लोप से रिज़र्व बैंक के संरचनात्मक ढांचे में आए बदलावों का वर्णन किया गया है।

9.27 बढ़ती हुई जिम्मेदारियों की पृष्ठभूमि में बैंक के प्रशासनिक तंत्र में विस्तार किया गया। मुख्य लेखापाल कार्यालय (अप्रैल 1965) का पुनर्गठन किया गया जिसने नए विभागों का सृजन हुआ। इनमें प्रशासन एवं कार्मिक विभाग प्रथम था। उत्तरदायित्वों में कई गुना वृद्धि के कारण विशेषज्ञता का लाभ लेने, कार्यों में अतिव्याप्ति से बचने तथा जिम्मेदारियों को पुनर्परिभाषित करने के लिए सन् 1981 में प्रशासन एवं कार्मिक विभाग का विभाजन करके प्रशासन विभाग एवं कार्मिक नीति विभाग का निर्माण किया गया। इस प्रकार अस्तित्व में आया लेखा एवं व्यय विभाग दूसरा था जो बैंक के आंतरिक लेखा, सरकारी कामकाज एवं सार्वजनिक ऋण प्रबंध, नोट निर्गम एवं विदेशी मुद्रा भंडार पर नियंत्रण का कामकाज देखता था। लेखा एवं व्यय विभाग को विभाजित करके तीन अलग-अलग इकाइयां बनाई गयीं। जिनमें मुद्रा प्रबंध विभाग पहली है, तथा यह नोट निर्गम, मुद्रा प्रबंध तथा करेंसी चेस्ट एवं छोटे सिक्कों का डिपो स्थापित करना जैसे मुख्य केंद्रीय बैंकिंग कार्यों के प्रबंध हेतु नीति उपाय करने का कार्य करता है। यह विभाग देश में पर्याप्त संख्या में अच्छी क्वालिटी के नोट एवं देश में सिक्कों की उपलब्धता सुनिश्चित करने का प्रयास करता है। यह विभाग सरकार

एवं नोट मुद्रण प्रेसों के साथ घनिष्ठ निकटता से काम करता है। यह लगातार बैंक नोटों के सुरक्षा लक्षणों की समीक्षा करके समय-समय पर जालसाजी निवारक उपाय करता है। दूसरी इकाई व्यय एवं बजट नियंत्रण विभाग है जो वार्षिक बजट का निर्माण तथा व्यय एवं बजट आबंटन की समीक्षा, भविष्य निधि, पेंशन निधि एवं कर्मचारी गृह ऋण योजना से संबंधित कामकाज देखता है। तीसरी इकाई यानी सरकार एवं बैंक खाता विभाग जिसे सरकार का बैंकर, केंद्र एवं राज्य सरकारों के लोक ऋण का प्रबंध, बैंक के आंतरिक खातों का रखरखाव, वार्षिक लाभ-हानि लेखा तथा बैंक का तुलन पत्र बनाने की जिम्मेदारियां दी गईं।

9.28 पूर्ववर्ती लेखा एवं व्यय विभाग के विदेशी लेखा प्रभाग को अलग करके सन 1986 में बाह्य निवेश एवं परिचालन विभाग की स्थापना की गई। इस विभाग के कार्यों में विदेशी मुद्रा आस्तियों एवं स्वर्ण का प्रबंध एवं निवेश, बैंक की तसंबंधी नीति के अनुसार रुपए की विनिमय दर का प्रबंधन, विदेशी मुद्रा कोष, विश्व बैंक एशियाई विकास बैंक सहित भारत सरकार के विदेशी लेन-देन का कार्य आदि, स्वर्ण नीति संबंधी मामले तथा भारत एवं रूस के मध्य बैंकिंग व्यवस्था का समन्वय आदि शामिल थे।

9.29 बैंक के कामकाज में आई भारी वृद्धि के कारण जनवरी 1982 में विभागों के पुनर्गठन पर पुनः ध्यान केंद्रित किया गया। तदनुसार सन् 1959 में स्वतंत्र विभाग के रूप में स्थापित अर्थशास्त्र विभाग को, समुचित आकार सुनिश्चित करते हुए आर्थिक मामलों पर बेहतर ध्यान केंद्रित करने के लिए आर्थिक विश्लेषण एवं नीति विभाग के रूप में पुनर्गठित किया गया। नीतिगत, विशेषकर भारतीय एवं अंतरराष्ट्रीय आर्थिक एवं वित्तीय घटनाओं से संबंधित, मामलों पर बैंक को सलाह एवं सहायता देना इस विभाग का प्राथमिक कर्त्तव्य है। विभाग नीति परक आर्थिक अनुसंधान करता है तथा समुच्चयगत मौद्रिक, भुगतान संतुलन, देशी/ धर्मवष्टिक वित्तीय बचत, राज्य वित्त तथा पूंजी बाजार से संबंधित आंकड़ों का प्राथमिक स्रोत है। केंद्रीय बोर्ड की समिति के समक्ष प्रस्तुत करने के लिए यह विभाग आर्थिक एवं वित्तीय रिपार्टें तैयार करता है तथा शीर्ष प्रबंध तंत्र एवं अन्य परिचालन विभागों के प्रयोगार्थ प्रबंध सूचना प्रणाली का रखरखाव करता है। वास्तविक क्षेत्र के अलावा वित्तीय प्रणाली की सभी गतिविधियों के संबंध मे लगातार नीति परक अनुसंधान द्वारा इस लक्ष्य की पूर्ति की जाती है।

9.30 यह विभाग, जो बैंक के आर्थिक थिंक टैंक के रूप में कार्य करता है, को पांच बड़ी इकाइयों यथा आंतरिक वित्त; अंतरराष्ट्रीय वित्त; मूल्य; उत्पादन, पूंजी बाजार एवं राष्ट्रीय आर्थिक मानदंड; एवं एक सामान्य इकाई में विभाजित किया गया। बदलते आर्थिक पर्यावरण एवं वैश्विक परिदृश्य में भारतीय अर्थव्यवस्था के बढ़ते महत्व के कारण विभाग में कई परिवर्तन किए गए। अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान के लिए विशेष अनुसंधान इकाई का सृजन किया गया। अर्थव्यवस्था के विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान करने के लिए 1986 में एक विशेष अध्ययन इकाई का गठन किया गया। सन् 1991 में नीतिगत महत्व के सामयिक विषयों का अध्ययन करने के लिए बाहरी विशेषज्ञों, विशेष कर शिक्षा क्षेत्र के विद्वानों, के साथ संयुक्त अध्ययन हेतु विकास अनुसंधान दल का गठन किया गया। सन् 1997 में पूंजी बाजार के संसाधन संग्रहण स्रोतों के अध्ययन पर ध्यान केंद्रित करने तथा निवेश के पर्यावरण, पूंजी बाजार एवं संस्थागत निवेशकों पर विश्लेषणात्मक अनुसंधान के लिए पूंजी बाजार प्रभाग की स्थापना की गई। विभाग के पंद्रह क्षेत्रीय कार्यालयों की गतिविधियों का समन्वय करने एवं क्षेत्रीय कार्यालयों से प्राप्त सूचना सहित बाजार आसूचना के केंद्रीय एकक के रूप में कार्य करने के लिए सन् 2001 में वित्तीय बाजार निगरानी इकाई का गठन किया गया। ग्यारहवें वित्तआयोग की सिफारिशों तथा स्थानीय निकायों को आर्थिक रूप से मजबूत एवं निर्वहनीय बनाने के लिए किए गए तथा 73 वें और 74 वें संवैधानिक संशोधनों के प्रावधानों की सिफारिशों के अनुरूप राजकोषीय विश्लेषण प्रभाग से अलग करके राज्य एवं स्थानीय निकाय प्रभाग का सृजन किया गया तथा साथ ही राजकोषीय विश्लेषण प्रभाग का नाम बदल कर केंद्रीय वित्त प्रभाग किया गया।

9.31 बैंक सात मुख्य आवधिक प्रकाशनों यथा - वार्षिक रिपोर्ट, भारत में बैंकिंग की प्रवृत्ति एवं प्रगति रिपोर्ट, मुद्रा एवं वित्त रिपोर्ट, भारतीय अर्थव्यवस्था एवं राज्य वित्त सांख्यिकी पुस्तकें पाँच वार्षिक; साप्ताहिक सांख्यिकीय अनुपूरक सहित मासिक बुलेटिन एवं वर्ष में तीन अनुसंधान जर्नल भारतीय रिज़र्व बैंक आकेजनल पेपर्स का प्रकाशन करता है। यह नोट करना उल्लेखनीय होगा कि अपने समकालीन केंद्रीय बैंकों के बीच अपनी अग्रणी स्थिति का रेखांकन करते हुए जनवरी 1947 में एक मासिक आर्थिक एवं वित्तीय जर्नल रिज़र्व बैंक आफ इंडिया बुलेटिन का प्रकाशन शुरू किया। विश्लेषणात्मक उत्तमता, विस्तार एवं सामयिकता से इन प्रकाशनों ने बाजार - सहभागियों, विश्लेषकों, शिक्षा क्षेत्र के विशेषज्ञों तथा अंतरराष्ट्रीय जगत में संदर्भ-दस्तावेजों के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त की। इस दिशा में विभाग के प्रायासों को सुदृढ़ किया गया तथा वर्ष 1998-99 से मुख्य संकल्पना पर आधारित मुद्रा एवं वित्त रिपोर्ट का प्रकाशन करने, सन् 2005 से समष्टि अर्थव्यवस्था एवं मौद्रिक घटनाओं की त्रैमासिक समीक्षा के प्रकाशन तथा विषयाधारित वार्षिक हैंडबुक आफ स्टेटिस्टिक्स के प्रकाशन के लिए कदम उठाए गए।

9.32 इसके अतिरिक्त, विभाग अंतरराष्ट्रीय सहयोग सर्वेक्षण एवं सरकारी रुपया प्रतिभूति स्वामित्व की रूपरेखा का सर्वेक्षण करता है। समय के साथ-साथ बैंक की सरकार के सलाहकार की भूमिका में उल्लेखनीय विस्तार हुआ है। सन् 1989 में अपने प्रकार के पहले प्रयास में, विभाग के अर्थशास्त्रियों ने केंद्रीय सरकार के सकल राजकोषीय घाटे का आकलन किया। सन् 1991 के वित्तीय क्षेत्र सुधारों में विभाग ने विशेष सहयोग दिया, विशेष कर बैंकिंग एवं भुगतान संतुलन सहित राजकोषीय एवं वित्तीय क्षेत्रों में मुद्रा आपूर्ति के विषय पर गठित तीन कार्यदलों की रिपोर्टों की तैयारी में विभाग ने महत्वपर्णू भूमिका निभाई। सन् 1997 में सार्वजनिक ऋण सीमा तथा राजकोषीय घाटे के स्वत: मौद्रीकरण से संबंधित राजकोषीय मुद्दों पर तकनीकी पेपर्स की तैयारी में विभाग ने सक्रिय भूमिका निभाई। विभाग ने सरकारी गारंटियों को बढ़ाने के मुद्दे पर जोखिमों के मूल्यांकन पर तकनीकी रिपोर्ट के रूप में अंतर्दृष्टि प्रदान की है।

9.33 परिचालन विभागों के अलावा भारत सरकार (वित्त मंत्रालय) तथा अन्य राष्ट्रीय संस्थाओं, अंतरराष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं (अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष, अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक आदि) तथा विदेशी केंद्रीय बैंकों ने विभाग के अधिकारियों की सेवाओं का निरंतर लाभ लिया। अधिकांश अंतरराष्ट्रीय संस्थाओं एवं विशेषज्ञ दलों जैसे आइ एम एफ, बी आइ एस, जी-20 तथा अन्य साख निर्धारण संस्थाओं के साथ विचार-विमर्श का काम प्रायः यह विभाग करता है।

9.34 अखिल भारतीय सर्वेक्षण, निगमों के वित्तीय लेखा की समीक्षा, प्रतिभूति मूल्य सूचकांकों का समेकन, निधि प्रवाह के आकड़ों का समेकन आदि महत्त्वपूर्ण कार्यों के निष्पादन एवं आर्थिक अध्ययन करने के लिए सन् 1959 में पूर्ववर्ती अनुसंधान एवं सांख्यिकी विभाग से निकालकर एक अलग सांख्यिकी विभाग का सृजन किया गया।पूर्ववर्ती आर्थिक विभाग के साथ कुछ कार्य क्षेत्रों का आदान-प्रदान कर सन् 1984 में विभाग का पुनर्गठन करके एक अलग सांख्यिकी विश्लेषण एवं कम्प्यूटर सेवा विभाग का गठन दिया गया। केंद्रीय कार्यालय की सहायता करने के लिए 1985-86 वर्ष में चेन्नई, कोलकता एवं नई दिल्ली में इसके तीन क्षेत्रीय कार्यालय खोले गए। सूचना प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना के साथ सन् 1995 में एक और संरचनात्मक परिवर्तन किया गया। समय के साथ डीसेक्स ने बैंकिंग, कंपनी वित्त एवं भुगतान संतुलन; विश्लेषणात्मक अनुसंधान तथा बैंक के लिए लाभकारी सांख्यिकीय पद्धतियों के प्रयोग के क्षेत्र में बृहत् सांख्यिकीय प्रणालियों की आयोजना एवं विकास में दक्षता विकसित की है।

9.35 बैंकिंग, निगम एवं बाह्य क्षेत्रों से संबंधित आँकड़ों का संग्रहण, प्रसंस्करण एवं प्रसार; नमूना सर्वेक्षणों की आयोजना, रूपरेखा निर्माण एवं आयोजन; नीति निर्माण में सहायता हेतु सांख्यिकीय अनुसंधान एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन; तथा शीर्ष-तंत्र को फैसले करने में सहायता करना आदि विभाग के मुख्य कार्य हैं। यह विभाग भारत सरकार से संबंधित आंकड़े एकत्र करने वाले राष्ट्रीय लेखा, उद्योग एवं मूल्य सूचकांकों आदि सांख्यिकीय कार्यालयों के साथ सहयोग करता है। यह विभाग भारत में बैंकिंग क्षेत्र के शाखास्तरीय विस्तृत आकड़ों तथा ऋण एवं जमा के आंकड़ों का संपूर्णता के आधार पर तथा जमा एवं निवेश के स्वामित्व पैटर्न आदि के प्रतिनिधिक आँकड़ों का एक मात्र भंडार है। इन आँकड़ों का प्रयोग पारिवारिक क्षेत्र की वित्तीय बचतों की गणना एवं केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन, भारत सरकार द्वारा बचत अनुमान तैयार करने में किया जाता है। डीसेक्स निर्यात, आयात, बाह्य ऋण तथा बाह्य वाणिज्यिक ऋण से संबंधित बाह्य क्षेत्र के आंकड़े एकत्रित एवं व्यवस्थित करता है जिससे भुगतान संतुलन एवं विदेशी ऋण के आँकड़ों की गणना में मदद मिलती है, रिजर्व बैंक का यह एक मात्र प्राथमिक स्रोत है। देश की अंतरराष्ट्रीय निवेश स्थिति के लिए विदेशी ऋण एवं आस्तियों के आँकड़े एकत्र करने के लिए आवधिक सर्वेक्षण एवं गणना की जाती है। निजी निगम क्षेत्र से सम्बंधित एक त्रैमासिक ''औद्योगिक स्थिति सर्वे'' का आयोजन किया जाता है। डीसेक्स केंद्रीय सांख्यिकीय संगठन द्वारा निजी निगम व्यापार क्षेत्र की बचत एवं निवेश के अनुमान के लिए सूचना उपलब्ध करवाता है।

9.36 हाल के वर्षों में विभाग ने नए कार्य जैसे अंतरराष्ट्रीय बैंकिंग स्टेटिस्टिक्स का संग्रहण, साफ्टवेयर निर्यात का सर्वे तथा विशेष आँकड़े प्रसारण मानकों के रखरखाव शुरू किए हैं। सेंट्रल डाटा बेस मैनेजमेंट सीस्टम (सीडीबीएमएस 1998), जो अनुसंधान के लिए व्यापक आंकडे उपलब्ध करता है, का सृजन एक महत्वपूर्ण घटना है। नवंबर 2004 में रिज़र्व बैंक के वेब पेज के माध्यम से यह डाटाबेस सार्वजनिक उपयोग के लिए उपलब्ध कराया गया है। मुद्रास्फीति का अनुमान लगाने तथा क्षमता उपयोग आदि के लिए सर्वे का आयोजन, विकास संकेतकों का विकास, व्यापक आर्थिक संकेतकों के पूर्वानुमान के लिए उपयोग की जाने वाली प्रक्रिया में सुधार तथा बैंकिंग क्षेत्र द्वारा सांविधिक व अन्य आंकड़ों के प्रेषण के लिए ऑन लाइन रिटर्न फाइलिंग सिस्टम (ओआरएफएस) की स्थापना के लिए भी कदम उठाए गए हैं। बैंक के अन्य विभागों को अपने अधिकारियों की सेवा उपलब्ध करवाने के अलावा डीसेक्स सूचना प्रौद्योगिकी; डाटा संग्रहण, संस्करण तथा सांख्यिकीय विश्लेषण से संबंधित कार्यों में सहायता करता है।

9.37 भारत में कार्यरत बैंकों से संबंधित सांख्यिकीय सारणियों; भारत के वाणिज्यिक बैंकों से संबंधित मूल सांख्यिकीय विवरणियों, वाणिज्यिक बैंक कार्यालय निदेशिका तथा अनुसूचित वाणिज्यिक बैंकों की त्रैमासिक सांख्यिकी की हैण्डबुक का प्रकाशन करता है। यह विभाग बैंकिंग, निगम सांख्यिकी आदि पर रिज़र्व बैंक मासिक बुलेटिन में लेखों का योगदान करता है। इसके अलावा विभाग छपाई एवं इलेक्ट्रोनिक माध्यमों द्वारा विभिन्न तदर्थ रिपोर्ट एवं ऐतिहासिक आंकड़े प्रकाशित करता है। तीन क्षेत्रीय कार्यालय सरकार एवं गैर सरकारी संगठनों तथा बैंकों के साथ संपर्क बनाए रखते हैं।

9.38 ग्रामीण क्षेत्रों में ऋण आबंटन की मल्टी-एजेन्सी नीति के समुचित क्रियान्वयन के लिए सन् 1979 में ग्रामीण आयोजना एवं ऋण कक्ष की स्थापना की गई। कक्ष ने स्टीयरिंग कमिटी आन रीजनल रूरल बैंक्स एण्ड कमेटी टु रिव्यू एरेंजमेंट्स फार एग्रीकल्चर एण्ड रूरल डेवलपमेंट (क्रेफीकार्ड, 1979) के सचिवालय का काम किया। 1982 में आरपीसी एवं एसीडी का नाबार्ड में विलय किया गया। ग्रामीण ऋण के पर्यवेक्षण एवं निगरानी का कार्य नाबार्ड को स्थानांतरित करने के बाद रिज़र्व बैंक में सन 1982 में ग्रामीण आयोजना एवं ऋण विभाग की स्थापना की गई। आरपीसीडी की जिला ऋण योजना का निर्माण, प्राथमिकता प्राप्त को क्षेत्र ऋण, कमजोर वर्गों को ऋण, ग्रामीण विकास योजनाओं सहित अग्रणी बैंक योजना, राज्य सहकारी बैंक, केंद्रीय सहकारी बैंक, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक संबंधी मामलों एवं नाबार्ड के साथ समन्वय का कार्य देखता था। शहरी बैंक कक्ष, जो अब तक कृषि ऋण विभाग का भाग था, को बैंकिंग परिचालन एवं विकास विभाग में स्थानांतरण शहरी बैंक प्रभाग का निर्माण किया गया। शहरी सहकारी बैंकों से संबंधित बढ़ते हुए सांविधिक एवं विकास कार्यों के निपटान के लिए बाद में फरवरी 1984 में स्वतंत्र शहरी बैंक विभाग स्थापित किया गया ।

9.39 राज्य वित्तीय निगमों एवं लघु उद्योग क्षेत्र की समस्याओं के समाधान के लिए केंद्र सरकार के प्रतिनिधि के रूप में ऋण गारंटी योजना के प्रशासन के लिए सन 1957 में औद्योगिक वित्त विभाग की स्थापना की गई। 1962 में डी आइ. सी. जी. सी. एवं सन् 1964 में आइ डी. बी. आइ. की स्थापना के बाद इनमें से कुछ कार्यों को हटाकर सन् 1981 में औद्योगिक ऋण विभाग के रूप में पुनर्गठित किया गया। औद्योगिक ऋण विभाग को उद्योगों को ऋण प्रवाह, रुग्ण इकाइयों, निर्यात ऋण से सम्बधित मामलों की देखरेख तथा ऋण प्राधिकरण योजना के प्रशासन के कार्य दिए गए। लघु उद्योग ऋण संबंधी कार्यों के निपटान तथा निर्यात ऋण एवं जिला उद्योग केंद्रों की निगरानी के लिए इसका विस्तार करके औद्योगिक एवं निर्यात ऋण विभाग का गठन किया गया। एक विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों के अनुरूप जुलाई 2004 में आइ. ई. सी. डी. के कार्यों को डी. बी. ओ. डी., डी. बी. एस. एवं एम. पी. डी. में शामिल किया गया।

9.40 सन् 1986 में, रिज़र्व बैंक द्वारा बनाए गए एकरूप विनियमों एवं नियमों के अधीन, केंद्रीय समाशोधन परिचालन की शुरूआत हुई। सभी समाशोधन केंद्रों पर समान रूप से लागू एक रूप विनियमों एवं नियमों में स्थानीय व्यवहारों से मेल खाने का अंतः निर्मित लचीलापन था।

IV. हाल की घटनाएं (1990 के पश्चात)

9.41 हाल ही की विगत घटनाओं (1990) के पश्चात सरकार तथा कुछ अनुमोदित संस्थाओं जैसे विदेशी बैंकों तथा भविष्य निधियों की ओर से सरकारी प्रतिभूतियों के क्रय विक्रय का काम प्रतिभूति विभाग (बैंक की शुरूआत में बैंकिंग विभाग की एक इकाईं) को सौंपा गया। यह विभाग बैंक द्वारा निर्गम एवं बैंकिंग विभागों में धारित तथा बीमा अधिनियम के अधीन बीमा कंपनियों द्वारा धारित प्रतिभूतियों के संरक्षक के रूप में कार्य करता है। भारत में कार्यरत विदेशी बैंकों द्वारा सांविधिक जमा के रूप में रखी गई, तथा अन्य बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा ऋण प्रतिभूति के तौर पर जमा सरकारी प्रतिभूतियों का रखरखाव भी इस विभाग की जिम्मेदारी है। परंतु कालांतर में विभाग के कार्यों का सार्वजनिक ऋण कार्यालय, जमा लेखा विभाग तथा लोक लेखा विभाग को स्थानांतरण के कारण सन् 1990 तक इस विभाग ने अलग निकाय के रूप में काम करना बंद कर दिया ।

9.42 वित्तीय संस्था समिति (अध्यक्षः एम नरसिंहम, 1991) की सिफारिशों की पृष्ठभूमि में एकीकृत निगरानी तंत्र की स्थापना के लिए में बैंक के पर्यवेक्षी तथा केंद्रीय बैंकिंग भूमिकाओं को अलग-अलग किया गया। इसके परिणामस्वरूप भारतीय रिज़र्व बैंक (विनियमन, 1994 के अंतर्गत बी.एफ एस.) वित्तीय पर्यवेक्षी बोर्ड की स्थापना की गई। वित्तीय पर्यवेक्षी बोर्ड, जिसमें केंद्रीय निदेशक मंडल से नामित चार सदस्य होते हैं, की अध्यक्षता गवर्नर करता है। बैंक के उपगवर्नर पदेन इस बोर्ड के सदस्य होते हैं तथा उनमें से एक (नियमन एवं पर्यवेक्षण का प्रभार धारण करने वाले) उपगवर्नर को बोर्ड का उपाध्यक्ष नियुक्त किया जाता है। बोर्ड को वित्तीय प्रणाली के सभी घटकों यथा बैंकों, गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, विकास वित्त संस्थाओं (एन.बी.पी.सी.), शहरी सहकारी बैंकों तथा प्राथमिक व्यापारियों के

पर्यवेक्षण एवं निरीक्षण की शक्तियाँ दी गई हैं। 1993 में स्थापित पर्यवेक्षण विभाग को बैंक की कार्यकारी शाखा की भूमिका दी गई। विभिन्न प्रभागों को भिन्न-भिन्न वित्तीय संस्थाओं का पर्यवेक्षण करने जिम्मेदारी दी गई। बैंकिंग परिचालन एवं विकास विभाग को वाणिज्यिक एवं समानांतर बैंकिंग संस्थाओं के सांविधिक कार्यों की निगरानी का काम दिया गया। इनमें, अन्य के अतिरिक्त, बैंक नीतियों का निर्माण एवं कार्यान्वयन; दिशा निदेश जारी करना; शाखाओं एवं विस्तार काउंटरों के लाइसेंस प्रदान करना; विधायी कार्य; सांविधिक विवरणियों की प्राप्ति एवं समीक्षा करना; शिकायत निवारण तथा बैंक पुनर्निर्माण आदि शामिल हैं। ग्रामीण आयोजना एवं ऋण विभाग राज्य एवं केंद्रीय सहकारी बैंकों तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों एवं शहरी बैंक विभाग ने शहरी सहकारी बैंकों की निगरानी जारी रखी है।

9.43 बैंककारी विनियमन अधिनियम, 1949 के अनुसार पर्यवेक्षण विभाग को विस्तृत शक्तियां प्रदान की गईं। बैंकिंग क्षेत्र की बढ़ती हुई गतिविधियों एवं उसमें आ रहे प्रौद्योगिकीय बदलाव के कारण निरीक्षण प्रक्रियाओं में समयानुसार परिवर्तन की आवश्यकता के मद्देनजर पर्यवेक्षण विभाग बनाया गया तथा गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों से संबंधित सांविधिक प्रावधानों में किए गए व्यापक बदलावों के परिणामस्वरूप गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों की निगरानी की आवश्यकता के मद्देनजर वित्तीय कंपनी विभाग को सन् 1997 में गैर बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग में परिवर्तित कर दिया गया। इससे वित्तीय कंपनी विभाग का अस्तित्व समाप्त हो गया। वित्तीय एवं निवेश संस्थाओं के परिचालन की निगरानी के सन् 1990 में स्थापित वित्तीय संस्था कक्ष को, समन्वित एवं प्रभावी विनियमन तथा पर्यवेक्षण के लिए वित्तीय संस्था प्रभाग में परिवर्तित किया गया। बाद में प्रभाग के निगरानी कार्य का बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग के साथ तथा विनियमन कार्य का बैंकिंग परिचालन एवं विकास विभाग के साथ विलय कर दिया गया। संगठनात्मक युक्तियों से समन्वित पर्यवेक्षण का विकास संभव हुआ।

9.44 समय के साथ केंद्रीय बैंक कार्यों के निष्पादन में मानव संसाधन का महत्व महसूस किया गया। परिणामस्वरूप परवर्ती प्रशासन विभाग एवं कार्मिक नीति विभाग का पुनर्गठन करके मानव संसाधन विकास विभाग तथा प्रशासन एवं कार्मिक प्रबंध विभाग बनाए गए। पेशेवर आधार एवं बहुविषयक मानव संसाधनों से सुसज्जित मानव संसाधन विकास विभाग रिज़र्व बैंक की मानव संसाधन नीतियों के अधिष्ठान निर्माण एवं परिचालन का कार्य करता है तथा कार्मिक प्रबंधन में कर्मचारी हितों के प्रतिनिधित्व करता है तथा जनता की शिकायतों के समाधान सुनिश्चित करता था। एच.आर.डी.डी के प्रयासों के फलस्वरूप संगठन पुनर्जागरण, शक्ति का विकेंद्रीकरण, युक्ति सम्मत बनाने के लिए बैंक के परिचालन का नियंत्रण करने वाले मैन्युअलों एवं अधिनियमों की जाँच, प्रशासन, स्थापना एवं आंतरिक रखरखाव आदि से संबंधित नियमों एवं प्रक्रियाओं की जाँच आदि के सुसुप्त विषयों का पुनर्जागरण करके उन्हें जांच के लिए समितियों को सौंपा गया। ग्राहक सेवा के बढ़ते महत्व के कारण बैंक के विभिन्न विभागों द्वारा प्रदत्त सेवाओं में कमियों के बारे में सामान्य जनता से प्राप्त शिकायतों को दूर करने हेतु शिकायत निवारण कक्ष (अगस्त 1996) की स्थापना की गई। बाद में क्षेत्रीय कार्यालयों में भी ऐसे कक्ष बनाए गए। स्टाफ में अपनेपन की भावना एवं निष्ठा विकसित करने के लिए विभाग एक त्रैमासिक गृहपत्रिका प्रकाशित करता है।

9.45 मुख्य केंद्रीय बैंकिंग के कार्यों पर पुनः ध्यान केंद्रित करने से कई घटनाएं घटीं। बदलते परिवेश के अनुसार मौद्रिक नीति के निर्माण एवं अन्य नीतिगत प्रयासों का उत्तरदायित्व संभालने वाले ऋण आयोजना कक्ष का 1 जनवरी, 1998 को नाम बदल कर मौद्रिक नीति विभाग कर दिया गया। मुद्रा, विदेशी मुद्रा एवं अन्य वित्तीय बाजारों के बढ़ते एकीकरण के मद्देनजर यह आवश्यक हो गया था। इसके बाद मूल्य स्थिरता, पर्याप्त चलनिधि से उपलब्धता तथा वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने की दृष्टि से बाजार विश्लेषण, नीति मूल्यन एवं कार्यान्वयन तकनीकों पर जोर दिया जाने लगा। सन 2005 में औद्योगिक एवं निर्यात ऋण विभाग के कुछ कार्यों का विलय होने से खाद्य ऋण सहित ऋण का क्षेत्रीय प्रवाह सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी मौद्रिक नीति विभाग के कार्य क्षेत्र में आई। वित्तीय बाजार विभाग की स्थापना के बाद मौद्रिक नीति विभाग की कुछ जिम्मेदारियां उसे दी गईं (ब्यौरे के लिए पैरा 9.51 देखें) संप्रेषण एवं मुद्रा नीति के संप्रेषण उपकरणों की प्रभाव शीलता बढ़ाने के लिए 2005-06 से छमाही नीति संबंधी वक्तव्य के स्थान पर वार्षिक नीति की तिमाही समीक्षा की शुरुआत की गई। नीति बनाने की प्रक्रिया को व्यापक आधार प्रदान करने की दृष्टि से मौद्रिक नीति पर तकनीकी सलाहकार समिति गठित की गई।

9.46 सन् 1970 में एक स्वतंत्र सचिव विभाग ने सचिव अनुभाग का कार्यभार संभाला। प्रेस एवं जनता के साथ व्यवहार करने के अतिरिक्त यह विभाग मुक्त बाजार परिचालनों, ऋण उगाही एवं अन्य सार्वजनिक ऋण संबंधी मामलों से जुड़े कार्य करता था। बाज़ार की गतिविधियों एवं बैंक के लिए महत्वपूर्ण क्षेत्रों की निगरानी के लिए विभाग में सन् 1992 में, बाजार आसूचना कक्ष स्थापित किया गया, जिसका अब बैंकिंग

पर्यवेक्षण विभाग में कार्यरत विनियमन संस्था दल में विलय कर दिया गया। संरचनात्मक विकास के अनुरूप बैंक की नीति निर्माण संस्कृति में रूपांतरण में सचिव विभाग महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। विभाग की सहायता से उपगवर्नरों की उप-समिति की स्थापना एक महत्वपूर्ण प्रयास है। हाल की में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत के विषय में बढ़ती रुचि के कारण सरकारी एवं बहुमुखी वित्तीय संस्थाओं के विदेशी प्रतिनिधि मंडलों से शीर्ष प्रबंध के साथ वार्तालाप के अनुरोधों से वृद्धि हुई है तथा सचिव विभाग इन बैठकों के आयोजन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सरकारी प्रतिभूति बाजार के सुदृढ़ीकरण एवं विस्तार के प्रयासों के मद्देनजर सार्वजनिक ऋण प्रबंध का कार्य 1992 में सृजित आंतरिक ऋण प्रबंध कक्ष को दिया गया। अब यह कक्ष एक स्वतंत्र विभाग के रूप में कार्य करता है। (अधिक ब्यौरे के लिए पैरा 9.48 देखें)।

9.47 सन 1969 में जन एवं प्रेस संपर्क मामलों की देखरेख के लिए अर्थशास्त्र विभाग में स्थापित प्रेस संपर्क प्रभाग को 1970 में सचिव विभाग में स्थानांतरित कर दिया गया। यह प्रभाग समय के साथ-साथ केंद्रीय बैंकिंग विषयों पर जन सामान्य को शिक्षित करने, बैंक की वेबसाइट का प्रबंध, शीर्ष पदाधिकारियों के संवाददाता सम्मेलन आयोजित करना तथा एक पक्षिक पत्रिका का प्रकाशन और बैंकों एवं जनता में सूचना के प्रसार हेतु मौद्रिक एवं ऋण सूचना समीक्षा नामक मासिक पत्र का प्रकाशन जैसे भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य संपन्न करता है। प्रभाग सामान्यतः बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्र से संबंधित तथा विशेषकर रिज़र्व से संबंधित प्रासंगिक विषयों पर प्रकाशित होने वाली मीडिया रिपोर्ट की निगरानी करता है। प्रभाग को पारदर्शिता, सामयिकता एवं विश्वसनीयता के मूल्यों को प्रोत्साहित करने वाली पारदर्शी एवं उभयमार्गी संप्रेषण नीति विकसित करने की जिम्मेदारी दी गई है।

9.48 सचिव विभाग में कार्यरत सार्वजनिक ऋण, मुक्त बाजार परिचालन एवं अर्थोपाय से संबंधित अनुभागों का विलय करके आंतरिक ऋण प्रबंध कक्ष का सृजन किया गया। पूर्ववर्ती कार्यों एवं ''सरकारी प्रतिभूतियों के लिए सक्रिय एवं दक्ष बाजार के विकास को प्रोत्साहन'' देने के अपने उद्देश्यों को जारी रखने के साथ-साथ मौद्रिक नीति के भाग के रूप में आंतरिक ऋण प्रबंध से संबंधित नीतियों का विकास करने के लिए बहु विषयक इकाई के रूप में कक्ष का सृजन किया गया। मौद्रिक नीति के सक्रिय उपकरण के रूप में मुक्त बाजार परिचालनों की बढ़ती हुई जिम्मेदारियों के कारण तथा इसकी गतिविधियों के महत्व को दर्शाने के लिए आई.डी.एम.सी. का विस्तार तथा नाम परिवर्तन करके 7 मई 2003 को आंतरिक ऋण प्रबंध विभाग का गठन किया गया।

9.49 परिवर्तनशील वैश्विक परिवेश की प्रक्रियाओं के कारण प्रौद्योगिकी विकास तथा विकसित होते अंतरराष्ट्रीय मानकों के साथ कदम मिलाकर चलने की आवश्यकता महसूस की गई। सूचना प्रौद्योगिकी से संबंधित नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन तथा अन्य विभागों को केंद्रीकृत तकनीकी सहायता उपलब्ध करवाने के लिए जनवरी 1995 में सूचना प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना की गई। यह विभाग सरकार एवं बैंकिंग प्रौद्योगिकी विकास एवं अनुसंधान संस्थान, हैदराबाद, पूर्णतया रिज़र्व बैंक से वित्त सहायता प्राप्त एवं रिज़र्व बैंक द्वारा 1996 में स्थापित, के साथ व्यवहार का केंद्र है। सूचना प्रौद्योगिकी विभाग एवं मानव संसाधन विकास विभाग के सृजन के बाद सन् 1979 में स्थापित तथा संगठनात्मक विश्लेषण, प्रणाली अध्ययन एवं विकास, कार्य-प्रक्रिया अध्ययन एवं कूटबद्ध करना, मानव शक्ति आयोजना आदि कार्य करने वाले प्रबंधन सेवा विभाग का लोप हो गया।

9.50 उदारीकृत ढांचे में बाह्य क्षेत्र प्रबंध नीति में मौलिक बदलाव आए। चालू खाते में पूर्ण परिवर्तनीयता तथा पूंजी खाते में परिवर्तनीयता की क्रमिक वृद्धि नई नीति के मुख्य अंश थे तथा विदेशी मुद्रा विनिमय अधिनियम (1947 एवं 1973) को समाप्त कर विदेशी मुद्रा प्रबंध अधिनियम (फेमा) (जून 2000) लागू किया गया। लक्ष्यों एवं नीति में आये परिवर्तन को लक्षित करते हुए सन 1991 के बाद विनिमय नियंत्रण विभाग (1939) का आकार घटाया गया तथा 31 जनवरी 2004 को इसका नाम बदल कर विदेशी मुद्रा विभाग किया गया।

9.51 वित्तीय क्षेत्र की गतिविधियों में हुए घटनाक्रम की दृष्टि से 2005 का वर्ष महत्वपूर्ण था। इस वर्ष में रिज़र्व बैंक के क्रिया कलाप पर आगामी वर्षों में महत्वपूर्ण प्रभाव डालने वाले दो विभागों की स्थापना हुई। सार्वजनिक ऋण प्रबंधन कार्यों में बदलाव लाने तथा रिज़र्व बैंक में मौद्रिक परिचालनों को सुदृढ़ करने की दृष्टि से तथा ऋण प्रबंधन एवं मौद्रिक परिचालनों के विभाजन के लिए वित्तीय बाजार विभाग ने जुलाई 2005 में काम करना शुरू किया। इस विभाग ने मुद्रा नीति विभाग के मुद्रा परिचालन एवं चलनिधि का पूर्वानुमान लगाने संबंधी कार्य तथा सरकारी प्रतिभूति एवं विनिमय बाजार में घरेलू परिचालन के कार्य संभाले। इसके अतिरिक्त बाजार स्थिरीकरण योजना की निगरानी, मौद्रिक नीति तथा वित्तीय स्थायित्व पर प्रभाव डालने वाले बाजार निगरानी कार्य तथा नीतियों का समन्वय का कार्य भी विभाग ने संभाला।

9.52 वित्तीय क्षेत्र के आधार के रूप में कार्य करने वाली भुगतान एवं निपटान प्रणाली के विनियमन एवं पर्यवेक्षण संबंधी संस्थागत ढांचे को सुदृढ़ करने के लिए सेंट्रल बोर्ड की समिति के समिति रूप में कार्य

करने के लिए भुगतान एवं निपटान प्रणाली बोर्ड की स्थापना की गई जिसने फरवरी 2005 में अपना कार्य आरंभ किया। यह बोर्ड भुगतान एवं निपटान संबंधी नीतियों का निर्माण करता है तथा इन प्रणालियों की सदस्यता को चालू रखने, खत्म करने तथा अस्वीकार करने के संबंध में मानदंड निर्धारित करता है। उपरोक्त लक्ष्यों की पूर्ति तथा इनके लिए आधारभूत सहायता देने के लिए एक भुगतान एवं निपटान प्रणाली विभाग की स्थापना की गई जिसने सूचना प्रौद्योगिकी विभाग के कार्य लेकर मार्च 7, 2005 को कार्य आरंभ किया। भुगतान एवं निपटान प्रणाली संबंधी (DPSS) नीति निर्माण; प्रणाली परिचालन का नियमन पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण; प्रमुख सिद्धान्तों एवं मानकों का क्रियान्वयन; बी.पी.एस.एस. का सचिवालय; राष्ट्रीय भुगतान परिषद, भुगतान प्रणाली सलाहकार समिति से संबंधित कार्य; प्रणाली गत महत्व की भुगतान प्रणाली योजनाओं की रूपरेखा निर्माण, विकास एवं समेकन तथा अंततः इन विषयों पर सरकार के साथ परस्परिक व्यवहार का कार्य देखता है। परंतु प्रणाली में भागीदार संस्थाओं के पर्यवेक्षण का कार्य संबंधित कार्यकारी विभागों जैसे बैंकिंग पर्यवेक्षण विभाग द्वारा वाणिज्यिक बैंकों का, सहकारी ऋण क्षेत्र का नाबार्ड द्वारा, शहरी सहकारी बैंकों का शहरी बैंक विभाग द्वारा एवं भारतीय समाशोधन निगम लिमिटेड (सी.सी.आइ.एल.) और प्राथमिक व्यापारियों का आंतरिक ऋण प्रबंध विभाग द्वारा किया जाता रहेगा।

9.53 मुद्रा प्रबंध के क्षेत्र में, मुद्रा प्रबंध विभाग ने महत्वपूर्ण प्रयास किए हैं। हाल के वर्षों में सत्यापन के स्वचालन तथा नोटों के प्रसंस्करण, छंटाई तथा पर्यावरण की दृष्टि से अनुकूल ब्रिकेटिंग विधि द्वारा नष्ट करने पर अधिक ध्यान दिया गया है। इस परिदृश्य में मैसूर (कर्नाटक) तथा सालबनी (पश्चिम बंगाल) में स्थिति एवं रिज़र्व बैंक के पूर्ण स्वामीत्व वाली दोनों नोटमुद्रण प्रेसों के प्रबंध के लिए सन् 1995 में भारतीय रिज़र्व बैंक नोट मुद्रण लिमिटेड कंपनी (कंपनी एक्ट 1956 के अधीन पंजीकृत) की स्थापना की गई। कंपनी ने पहले से नासिक एवं देवास में कार्यरत नोट प्रिंटिंग प्रेसों के आधुनिकीकरण के लिए साधन जुटाने की पहल शुरू कर दी है। बैंक के लिए एक अन्य महत्वपूर्ण घटना देश में अपनी प्रकार के सर्वप्रथम मुद्रा संग्रहालय की स्थापना है, जिसे जनवरी 1, 2005 को जनता के लिए खोला गया। मुद्रा संग्रहालय में नवपाषाण युग के मानव निर्मित एवं प्रदर्शन योग्य वस्तुओं से लेकर आधुनिक समय के मूल्य संग्रह कार्ड प्रदर्शित किए गए हैं तथा यह कम्प्यूटर खोखे पर ई-मुद्रा एवं मुद्रा-खेलों के माध्यम से सूचना प्रदान कर जन सामान्य की प्रसन्नता का कारण बना है।

9.54 इसके अतिरिक्त बैंक ने स्थानीय एवं पड़ोसी क्षेत्रों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 22 क्षेत्रीय कार्यालयों का नेटवर्क स्थापित किया है। ये कार्यालय स्थानिक प्रकार की बहुत सारी आवश्यकताओं को पूरा करते हैं।

V. मानव शक्ति प्रबंध

9.55 भर्ती एवं पदोन्नति के क्षेत्रों में बैंक ने अपने अनुभव से ज्ञान अर्जित कर अपनी बढ़ती हुई आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नीतियां बनाई (भा. रि. बैंक, 1970) परिचालन के प्रारंभिक वर्षों में उच्च पदों पर इम्पीरियल बैंक आफ इंडिया एवं भारत सरकार से लिए गए अधिकारियों की नियुक्ति की गई। बैंक ने मुद्रा नियंत्रक कार्यालय के स्टाफ को स्थायी तौर पर तथा इम्पीरियल बैंक के स्टाफ को अस्थायी तौर नियोजित करने का प्रयास किया। अस्थायी स्टाफ को भी धीरे-धीरे बैंक में शामिल कर लिया गया। अभिलेखों से यह पुष्टि होती है कि गवर्नर ने विशेष योग्यताधारी अधिकारियों को विभिन्न सेवाओं से उधार लेने या करार आधार पर नियुक्त करने एवं योग्यता पर आधारित सेवा शर्तें नियत करने की सिफारिश की। यूरोपीय अधिकारियों का समुचित अनुपात सुनिश्चित करने का प्रयास भी आवश्यक समझा गया। इन वर्गों के अलावा वर्तमान श्रेणियों एवं संवर्गों को ही पदोन्नति में वरीयता दी गई। इस समय प्रक्रिया गत विवरण की समझ एवं परिश्रम करने की तत्परता को शैक्षिक श्रेष्ठता पर वरीयता दी गई। बाद में समय-समय पर भर्ती प्रक्रिया को सरल बनाया गया तथा स्टाफ का पुनर्वर्गीकरण किया गया। उच्च योग्यता धारी कार्मिक भर्ती करने के लिए निरंतर प्रयास किए गए तथा प्रतिभा सरंक्षण के लिए सुविचारित रणनीतियों का प्रयोग किया गया।

9.56 तत्कालीन आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों से मेल खाते भर्ती तरीकों को अपनाने के लिए गवर्नर ने कई बार अपने विवेकाधिकार का प्रयोग किया। जैसे-जैसे बैंक के कार्यों में विविधता आई, विशेषतः कृषि ऋण के क्षेत्रों में, तो मौजूदा कार्मिक गुणवत्ता की दृष्टि से अपर्याप्त सिद्ध हुए, अतः विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए नए संवर्ग बनाए गए। इसके साथ गवर्नर ने प्रशिक्षु अधिकारियों की वार्षिक भर्ती की आवश्यकता महसूस की तथा इसके अलावा बैंक परिचालन में विस्तार से उठने वाली आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अच्छी शैक्षिक पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों को प्रशिक्षु सहायकों के रूप में भर्ती किया गया। अतः एव गवर्नर के आदेशों के अनुरूप यह निर्णय किया गया कि भविष्य की सक्षमता आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपेक्षतया

बाक्स IX 1
भारतीय रिज़र्व बैंक में संचालन संरचना - वर्तमान व्यवस्थाएं

भारतीय रिजर्व बैंक के कार्य एवं उत्तरदायित्वों का स्रोत भारतीय रिज़र्व बैंक का अधिनियम, 1934 है। बैंक के मामलों एवं कारोबार के सामान्य अधीक्षण एवं निदेशन की शक्तियाँ केंद्रीय निदेशक मंडल में निहित हैं तथा अधिकतम केंद्रीय निदेशक मंडल में गवर्नर, केंद्र सरकार द्वारा, धारा 8 (1) (क) के अधीन नियुक्त अनधिक चार-उप गवर्नर, धारा 8 (1)(ख) के अधीन, केंद्र सरकार द्वारा, प्रत्येक स्थानीय मंडल से एक, चार नामित निदेशक, धारा 8 (1)(ग) के अधीन भारत सरकार द्वारा नामित दस निदेशक एवं धारा 8 (1)(घ) के अधीन नामित एक सरकारी अधिकारी शामिल हैं। गर्वनर एवं उप गवर्नर का कार्यकाल, अधिकतम पांच वर्ष, केंद्र सरकार द्वारा नियत किया जाता है तथा वे पुनर्नियुक्ति के पात्र समझे जाते हैं। गवर्नर की अनुपस्थिति में, उनके द्वारा नामित उप गवर्नर केंद्रीय मंडल की अध्यक्षता करता है।

केंद्रीय मंडल की हरेक तिमाही में कम से कम एक एवं वर्षभर में कम से कम छः बैठकें आयोजित करना आवश्यक है। बोर्ड वित्तमंत्री के साथ संघीय बजट पर चर्चा कर सके इसलिए मार्च की बैठक प्रतिवर्ष सामान्यतः नई दिल्ली में आयोजित की जाती है। रिज़र्व बैंक की वार्षिक रिपोर्ट एवं लेखा पारित करने में सुविधा की दृष्टि से अगस्त की बैठक सामान्यतः मुंबई में आयोजित की जाती है। व्यवहारिक सुविधा के कारण बोर्ड ने धारा 58 (2)(i) के अधीन सांविधिक नियमों द्वारा अपने कुछ उत्तरदायित्व केंद्रीय बोर्ड समिति, जिसमें गवर्नर, उप गवर्नर एवं जिस क्षेत्र में बैठक आयोजित की जाती है उसके स्थानीय बोर्ड के निदेशक शामिल हैं, को सौप दिए हैं। केंद्रीय बोर्ड समिति के अलावा दो अन्य समितियां, यथा - वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड तथा भुगतान एवं निपटान प्रणाली बोर्ड - अपने कार्य क्षेत्र के नियंत्रण में केंद्रीय बोर्ड की सहायता करती हैं। संबंधित मामलों में बोर्ड की सहायता करने हेतु तीन उप-समितियां भी बनाई गई हैं यथा - I) निरीक्षण एवं , लेखा परीक्षण उप समिति, ii) स्टाफ उप समिति एवं iii) भवन उप समिति

सभी प्रकार के दृष्टिकोणों का लाभ उठाने के लिए बैंक के फैसले प्राय: सर्वसम्मति से किए जाते हैं। वरिष्ठ प्रबंध-तंत्र की बैठकों, जिसमें गवर्नर, उप गवर्नर, कार्यकारी निदेशक एवं बारी-बारी से चुने गए मुख्य महाप्रबंधक एवं क्षेत्रीय निदेशक भाग लेते हैं, में महत्वपूर्ण विषयों पर विचार विमर्श एवं निर्णय किए जाते हैं (वरिष्ठ प्रबंध-तंत्र की बैठक की कोई निश्चित अवधि नहीं है)। उप गवर्नरों की समिति साप्ताहिक अंतराल पर बैठक करती है तथा उसको सौंपे गए मामलों का निपटान करती है। समुचित अनुवर्ती कार्यवाही सुनिश्चित करने के लिए कार्यालयों, शाखाओं एवं केंद्रीय कार्यालय के विभागों की निरीक्षण रिपोर्टों पर कार्यपालक निदेशकों की एक समिति में चर्चा की जाती है। व्यय नियम - 2005 के अधीन वित्तीय शक्तियों का प्रयोग कार्यपालक निदेशकों की समिति द्वारा किया जाता है। विशिष्ट तकनीकी मामलों के निपटान के लिए चुने हुए मुख्य महाप्रबंधकों की समितियां बनाई गई हैं। प्रमुख नीतिगत फैसले केंद्रीय बोर्ड, बोर्ड समिति, गवर्नर या उपगवर्नर के स्तर पर लिए जाते हैं। अन्य मामलों में निर्णयाधिकार कार्यपालक निदेशक या केंद्रीय कार्यालय विभागों के प्रभारी मुख्य महाप्रबंधकों में निहित है। महत्वपूर्ण मामलों के विचार विमर्श एवं निर्णयों के लिए वार्षिक क्षेत्रीय निदेशक सम्मेलन एक अन्य मंच है।

बैंक के रोजमर्रा के प्रशासन एवं कार्यों में, मामले या कार्य की प्रकृति / महत्व को देखते विभागाध्यक्ष (प्रभारी मुख्य महाप्रबंधक / मुख्य महाप्रबंधक / महाप्रबंधक) से लेकर कनिष्ठतम अधिकारी यानी सहायक प्रबंधक द्वारा निर्णय लिया जा सकता है। कुछ कार्य क्षेत्रों जैसे बिलों का भुगतान आदि में संबंधित परिपत्रों, अनुदेश पुस्तकों, नियम पुस्तकों आदि में शक्तियों का स्पष्ट वर्णन किया गया है। निर्णय प्रक्रिया में देरी को कम करने तथा निर्णय स्तरों की संख्या में कमी करने के लिए यथा संभव लेवल अंतरण (लेवल जंपिंग) को लागू किया गया है।

कम उम्र कार्मिकों का पर्याप्त समूह बनाया जाएगा तथा स्टाफ के प्रशिक्षण हेतु समुचित प्रशिक्षण व्यवस्था की जाएगी। वरिष्ठ पदों पर नियुक्ति के लिए आवश्यक कौशल विकसित करने के लिए 1942 से 1949 तक सघन प्रशिक्षण अभियान चलाया गया। इसी बीच भारतीय रिज़र्व बैंक स्टाफ (सहायक) नियम, 1944 बनाए गए तथा बाद में सहायक वर्ग से अधिकारियों के चयन हेतु उनका स्टाफ विनियमों में समावेश किया गया। चयन का काम, उप गवर्नरों की सलाह से, गवर्नर करता था जिसको केंद्रीय बोर्ड की समिति की स्वीकृति की आवश्यकता थी। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान बढ़ते हुए कार्य भार का निपटान के लिए श्रेष्ठ शैक्षिक योग्यता धारक स्टाफ को अग्रिम वेतन वृद्धि प्रदान की गई। सन 1946 एवं 1948 में यह नीति ज्यादा स्टाफ सदस्यों पर लागू की गई।

9.57 ग्रामीण ऋण को प्रोत्साहित करने में कृषि ऋण विभाग एक महत्वपूर्ण नीतिगत माध्यम था। भर्ती नीति में भी इसके महत्व का असर दिखाई देता था। बैंक ने कृषि महाविद्यालयों से ग्रामीण ऋण अधिकारियों की भर्ती के लिए अलग नीति अपनाई एवं कुछ को प्रतिनियुक्ति के आधार पर नियोजित किया। दूसरी ओर योजना-बद्ध विकास की राह पर अग्रसर अर्थव्यवस्था की दीर्घावधि ऋण आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए औद्योगिक वित्त विभाग स्थापित किया। इसके कारण विकास के लक्ष्यों की प्राप्ति एवं चुनौतियों के समाधान के लिए बैंक कार्मिक संख्या के भारी विस्तार की आवश्यकता हुई।

9.58 सन् 1947 में केंद्रीय भर्ती बोर्ड की स्थापना के बाद सुनियोजित एवं केंद्रीय भर्ती प्रक्रिया अपनाई गई। वेतनमानों का व्यापक संशोधन

किया गया तथा सन् 1948 में अपनाए गए वर्गीकरण के फलस्वरूप स्टाफ को चार श्रेणियों में विभाजित किया गया - यथा श्रेणी एक (अधिकारी संवर्ग) श्रेणी दो जिसमें सहायक, अधीक्षक, उप एवं सहायक कोषपाल आदि शामिल थे, श्रेणी तीन जिसमें क्लर्क एवं नकदी विभाग का स्टाफ सम्मिलित था तथा श्रेणी चार-अधीनस्थ स्टाफ। भर्ती नीति का एक उल्लेखनीय पहलू अल्पसंख्याकों को प्रतिनिधित्व देना भी था। विभाजन के बाद आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़े वर्गों की विशेष आवश्यकताओं को पूरा करने पर ध्यान केंद्रित किया गया। विकलांगों, भूतपूर्व सैनिकों, शरणार्थियों, स्वतंत्रता सेनानियों तथा इम्पीरियल बैंक के बर्खास्त कर्मचारियों को भी बैंक के आश्रय में लेने का प्रयास किया गया।

9.59 अनुसंधान की बढ़ती हुई विशेषज्ञता के कारण इसका प्रबंध एक सक्षम अर्थशास्त्री को सौंपा गया तथा इसके लिए सन् 1941 में अनुसंधान निदेशक के पद का सृजन किया गया। सन् 1945 में स्वतंत्र अनुसंधान एवं सांख्यिकी विभाग की स्थापना के बाद प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों एवं सांख्यिकी विदों का एक दल गठित करने के लिए विशेष अधिकारियों के नियोजन की जरूरत पड़ी। विभागाध्यक्ष लगातार प्रांतीय सरकारों के साथ संपर्क रखता था। वर्ष 1941 के मध्य में पंजाब सरकार के तत्कालीन आर्थिक सलाहकार डा. बी. के. मदान को प्रथम निदेशक के रूप में नियुक्त किया गया। आर्थिक सलाहकार एवं कार्यकारी निदेशक के पदों पर काम करने के बाद सन् 1964 में डा. मदान बैंक के उप गवर्नर बने। मुद्रा एवं केंद्रीय बैंकिंग सहित आर्थिक मामलों में बैंक को सलाह देने के अलावा अर्थिक आसूचना के संग्रहण एवं समन्वय संबंधी वर्तमान तंत्र में सुधार सुझाने के लिए सन् 1943 में भारत सरकार के आर्थिक उप सलाहकार श्री एस.वी. जोशी की सेवाएं उधार ली गईं और उन्हें वरिष्ठ अर्थशास्त्री के पद पर नियुक्त किया गया। एक दशक से अधिक समय तक बैंक की सेवा करने के बाद जनवरी 1955 में श्री जोशी, कार्यपालक निदेशक के रूप में निवृत्त हुए (भा.रि.बैंक, 1970)

9.60 युद्धोत्तर काल की आर्थिक परिस्थितियों में बैंकों के निरीक्षण, नीति निर्माण में विश्लेषण तथा अन्वेषणात्मक दृष्टिकोण - की आवश्यकता से ज्यादा विविध प्रकार की क्षमताओं की जरूरत पड़ी। किसी भी समय बैंकिंग कंपनियों के निरीक्षण की शक्ति रिज़र्व बैंक को दी गई शक्तियों में सबसे प्रभावकारी पर्यवेक्षण अधिकार था। बैंकों के निरीक्षणार्थ एक सक्षम तंत्र के विकास के विकट कार्य को पूरा करने के लिए सुदृढ़ रणनीति के विकास की आवश्यकता हुई तथा परिणामस्वरूप सन् 1945 में बैंकिंग परिचालन विभाग का सृजन हुआ। बैंकिंग परिचालन विभाग के स्टाफ में समय-समय पर वृद्धि की गई। बाहर से, विशेष कर बैंकिंग में व्यवहारिक अनुभव वाले व्यक्तियों की, भर्ती के लिए भी प्रबंध किए गए।

9.61 जनवरी 1, 1949 को भारतीय रिज़र्व बैंक के राष्ट्रीकरण के बाद स्वामित्व के स्थानांतरण एवं तदुपरान्त बैंक के केंद्रीय एवं स्थानीय निदेशक मंडलों के पुनर्गठन के हेतु भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम में आवश्यक संशोधन किए गए। केंद्रीय एवं स्थानीय निदेशक मंडलों (चार) का पुनर्गठन किया गया। नये बोर्डों के गठन के समय सरकार ने गवर्नर से अनौपचारिक सलाह मांगी एवं कम से कम परिवर्तन किए गए।

9.62 स्वतंत्रता के बाद आने वाले चुनौतीपूर्ण कार्यों के निष्पादन के लिए विशेषज्ञ कर्मियों की नियुक्ति हेतु एक सावधानी पूर्ण प्रक्रिया अपनाई गई। कुछ बड़े एवं सुस्थापित वाणिज्यिक बैंकों के योग्य एवं अनुभवी अधिकारियों को नियुक्त एवं प्रशिक्षित किया गया। विशेष कौशल की जरूरत के मद्देनजर न केवल रिज़र्व बैंक, बल्कि, संपूर्ण बैंकिंग क्षेत्र में क्षमता निर्माण की चुनौती पेश आई। इन प्रयासों के अनुरूप बैंकिंग क्षेत्र के वरिष्ठ बैंकरों के कौशलवर्द्धन के लिए रामनाथ समिति ने बैंकर प्रशिक्षण महाविद्यालय की स्थापना की अनुशंसा की। अतः एव कोलंबो योजना की सहायता से वाणिज्यिक एवं सहकारी बैंक कर्मियों के प्रशिक्षणार्थ सन् 1954 में मुंबई में उपरोक्त महाविद्यालय की स्थापना की गई। रिज़र्व बैंक के मध्यक्रम एवं कनिष्ठ अधिकारी संवर्गों की प्रशिक्षण आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अगस्त 1963 में रिज़र्व बैंक स्टाफ महाविद्यालय की स्थापना हुई। कृषि ऋण संबंधी कार्यों के प्रभावी निपटान में सक्षम स्टाफ उपलब्ध करवाने हेतु पहले पहल सहकारी बैंकों तथा बाद में वाणिज्यिक बैंकों के लाभार्थ सन् 1969 में पुणे में कृषि बैंकिंग महाविद्यालय की स्थापना की गई। प्राथमिक तौर पर वाणिज्यिक एवं सहकारी बैंकों के स्टाफ के लिए आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रमों में रिज़र्व बैंक अधिकारियों को शामिल करने के अलावा ये दोनों महाविद्यालय रिज़र्व बैंक अधिकारियों के लिए विशेष कार्यक्रम भी संचालित करते थे। बैंकिंग क्षेत्र में प्रशिक्षण एवं अनुसंधान केंद्रीय बिंदु बने इस दृष्टि से सन् 1969 में पुणे में राष्ट्रीय बैंक प्रबंध संस्थान की स्थापना की गई। समय के साथ प्राथमिक रूप से बैंक के गैर कार्यकारी कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने के लिए मुंबई, कोलकता, नई दिल्ली एवं चेन्नई में आंचलिक प्रशिक्षण केंद्र खोले गए। आर्थिक वृद्धि से संबंधित राष्ट्रीय एवं वैश्विक मुद्दों पर अनुसंधान को प्रोत्साहित करने के लिए

बैंक ने दिसंबर 1987 में मुंबई में इंदिरा गांधी विकास अनुसंधान संस्थान (आइ.जी.आइ.डी.आर) स्थापित किया जिसे बाद में सन् 1995 में डीम्ड युनिवर्सिटी का दर्जा प्राप्त हुआ।

9.63 बैंक 'रोजगार के समान अवसर' सिद्धांत का पालन करने वाला नियोक्ता है एवं एक उचित एवं न्यायपूर्ण चयन प्रक्रिया की स्थापना के लिए सन् 1968 में रिज़र्व बैंक सेवा बोर्ड स्थापित किया गया। बोर्ड अखिल भारतीय स्तर पर अधिकारियों के चयन के लिए स्थापित स्वनियंत्रित संस्था है जो चयन नीति एवं प्रक्रियाओं के मामलों में रिज़र्व बैंक से दूरी बनाकर कार्य करता है। समय के साथ-साथ बैंक को आंतरिक चयन एवं पदोन्नति प्रक्रियाओं में सहायता करने के लिए बोर्ड में बदलाव किए गए। अनुसंधान एवं सांख्यिकी विभाग के विस्तार के बाद अखिल भारतीय स्तर पर प्रतियोगिता परीक्षाओं एवं साक्षात्कार द्वारा विशिष्ट अधिकारियों के चयन की प्रक्रिया आरंभ की गई।

9.64 वर्तमान में, सक्षमता में वृद्धि के लिए सहायक परिवेश के निर्माण एवं कार्यस्थल तथा व्यक्तिगत तौर पर संतोषप्रद परिस्थितियों के निर्माण के लिए मानव संसाधन विकास विभाग सक्रिय प्रयास कर रहा है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अपनी स्थापना के थोड़े ही समय में विभाग निम्नलिखित क्षेत्रों में प्रयास किए हैं - (क) कार्यनिष्पादन मूल्यांकन एवं प्रबंध प्रणाली, (ख) - पदोन्नति नीति (ग) कर्मचारियों के वेतन एवं भत्ते (घ) स्थानानतरण एवं नियोजन नीति (ङ) क्षमता विकास (च) मानव संसाधन सूचना प्रबंध प्रणाली (छ) अन्यत्र अस्थायी विशेष नियुकित/प्रतिनियुक्ति (ज) स्टाफ सुझाव योजना (झ) सलाह देना (ञ) संगठनात्मक माहौल का सर्वे (त) प्रतिष्ठित संस्थानों के विद्यार्थियों का समर प्लेसमेंट आदि। संगठन के आकार को घटाने के लिए अगस्त 2003 में स्वैच्छिक समयपूर्व सेवानिवृत्ति योजना (ओ.इ.आर.एस.) कार्यान्वित की गई। इससे संबंधित आवेदन पत्रों की स्वीकृति या अस्वीकृति का अधिकार सुरक्षित रखते हुए सभी संवर्गों के कर्मचारियों[3] को इस योजना का लाभ उठाने के योग्य माना गया।

9.65 इन प्रयासों के फलस्वरूप न सिर्फ जटिल प्रक्रियाओं में कमी आई, बल्कि लेनदेन खर्चे भी घटे। इसके अतिरिक्त विभाग की नीतियों से संगठन, संस्कृति एवं कार्य पर्यावरण को पुनर्जीवन मिला। बदले में इसके कारण प्रक्रियाओं और व्यवहारों की व्यष्टिगत निगरानी से ध्यान हटाकर, प्रभावी अनुपालनीय एवं समझने योग्य प्रक्रियाओं के निर्माण की क्षमता विकसित एवं निरंतर स्वनियंत्रित योजनाएं बनाने पर ध्यान केंद्रित किया गया है।

VI. रणनीतिगत आयोजना

9.66 उपनिवेश काल से स्वतंत्रता के संक्रमण काल में अर्थव्यवस्था के विकास के साथ इसको दिए गए उत्तरदायित्वों की अनुक्रिया में बैंक के कार्यों एवं संरचना में बदलाव आए हैं। इसके अतिरिक्त सजग रणनीति आयोजना के परे भी परिवर्तनशील आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक माहौल की वजह से इसकी जबाबदारी में निरंत परिष्कार हुआ है। परंतु हाल के वर्षों में रणनीतिगत आयोजना ने लगातार केंद्रीय बैंकरों का ध्यान आकर्षित किया है। इन विषयों पर और प्रकाश डालने तथा समुचित रणनीतिगत आयोजना प्रतिमान का चयन करने में बैंक आफ इंटरनेशनल सेटलमेंट ने बैंक की सहायता करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

9.67 नए कार्यभार संभालने तथा नई भूमिका निभाने और संकट पूर्ण स्थितियों का सामना करने में तत्पर रहने के लिए केंद्रीय बैंकों को अपना सतत रूपांतरण करना पड़ता है। वित्तीय बाजारों का तेज घटनाक्रम उन्हें निष्क्रिय रहने का अवसर नहीं देता। इसके अतिरिक्त गवर्नर, बोर्ड एवं प्रबंधकों से मिलकर बने प्रशासन तंत्र को लगातार अपने नीति लक्ष्यों की प्राप्ति सुनिश्चित करनी पड़ती है। चुनौतीपूर्ण परिवेश में सफलता के लिए प्रबंध कौशल का लगातार विकास आवश्यक है।

9.68 इन परिस्थितियों में सांविधिक आदेश की स्पष्टता; सुदृढ़ आन्तरिक प्रक्रियाओं; प्राधिकारी की स्पष्ट स्थापना तथा केंद्रीय बैंक के लक्ष्यों एवं रणनीतिगत योजनाओं की उसकी जिम्मेदारियों के साथ तालमेल, कुमेल होने की महत्ता बढ़ जाती है। इसके लिए गवर्नरों एवं केंद्रीय बैंक बोर्ड को एक निश्चित सोच तथा उसे व्यवहार में लाने के लिए सुदृढ़ एवं गतिशील सांगठनिक ढाँचे की आवश्यकता पड़ती है। रणनीतिगत आयोजना के सांविधिक उपकरण आर्थिक पृष्ठभूमि से मेल खाती हुई संगठन संरचनाओं, संस्कृति, सूचना प्रेषण संबंधों, कैरियर पथ तथा कार्य विषयों को सुसज्जित करते हैं।

9.69 सांविधिक प्रावधानों द्वारा सृजित एवं शक्ति संपन्न केंद्रीय बैंक पहले अपने अस्तित्व एवं सफलता के लिए रणनीति निर्माण को आवश्यक नहीं समझते थे। विश्व आर्थिक परिवेश में आए बदलाव तथा वित्तीय प्रणालियों की बढ़ती हुई जटिलताओं के कारण केंद्रीय बैंक रणनीतिगत आयोजना को एक महत्वपूर्ण प्रबंध उपकरण के रूप में अपनाने को बाध्य हुए हैं। इसके अलावा उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं

[3] अगस्त 1, 2003 को 25 वर्ष पूर्णकालिक नियमित सेवा तथा पचास वर्ष की आयु पूरा करने वाले कर्मचारी इसके योग्य थे। योजना 31 दिसंबर 2003 को बंद की गई, अधिकारी एवं गैर कार्यकारी वर्गों के कुल 4,468 कर्मचारियों ने स्वेच्छा सेवानिवृत्ति का लाभ लिया।

में उनसे जो अपेक्षाएं की जाती हैं उनके कारण केंद्रीय बैंकों के लिए रणनीति आयोजना का महत्व बढ़ा है (बी. आइ.एस. 2004)।

9.70 विविध प्रकार के श्रोता समूहों, जिनके साथ केंद्रीय बैंकों को संप्रेषण करना पड़ता है, की उपस्थिति में संप्रेषण के उद्देश्य एवं दिशा की स्पष्टता रणनीति आयोजना का महत्वपूर्ण भाग है। केंद्रीय बैंकों का उनकी सार्वजनिक छवि के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है तथा निकट भूतकाल में केंद्रीय बैंक लगातार पारदर्शी बनते गए हैं। इस विषय में आर्थिक स्थिति एवं मौद्रिक नीति पर उसके प्रभाव के बारे में केंद्रीय बैंकों के दृष्टिकोण के संप्रेषण के लिए बैंकों द्वारा किए प्रयास एक महत्वपूर्ण घटना है। ब्याज दर परिवर्तन का आर्थिक औचित्य, संसदीय सुनवाई एवं मुद्रानीति रिपोर्ट मुद्रानीति संप्रेषण के मुख्य माध्यम हैं। अपनी असाधारणता के कारण कभी-कभी होने वाली घटनाएं जैसे अनपेक्षित ब्याज दर परिवर्तन बाजार पर बहुत प्रभाव डालती हैं। परंतु ज्यादा प्रयोग में आने वाले साधन केंद्रीय बैंकों को सूचना के क्रमिक संप्रेषण में समर्थ बनाते हैं, जैसे इनसे उनको मौद्रिक नीति की वर्तमान एवं प्रत्याशित परिस्थितियों का ज्ञान होता है, (कोनोली एण्ड कोहलेर, 2004)।

9.71 रणनीतिगत आयोजन से बैंक अपने लक्ष्यों, उद्देश्यों एवं कार्य योजनाओं का अपने प्राथमिक कार्यों के साथ सुमेल सुनिश्चित कर सकता है। निगमित क्षेत्र की तरह केंद्रीय बैंकों का भी अपना मिशन होता है यथा मूल्य स्थायित्व सुनिश्चित करके समष्टि अर्थव्यवस्था के विकास का दीर्घकालिक लक्ष्य एवं एतद्द्वारा वित्तीय स्थायित्व की रक्षा इस परिदृश्य में रणनीतिगत आयोजना बैंक को अपने सभी संसाधन एकत्र करके प्रभावकारी तरीके से वांछित लक्ष्यों की पूर्ति में सक्षम बनाती है। परंतु रणनीति योजना का सफल क्रियान्वयन अनेक कारकों जैसे केंद्रीय बैंक को नियंत्रित करने वाला सांविधिक ढांचा, इसकी स्वतंत्रता, इसकी जवाबसेही एवं पारदर्शिता की सीमा पर निर्भर करता है।

9.72 स्न 1997 के दक्षिण-पूर्व एशियाई आर्थिक संकट की पृष्ठभूमि में कई उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं ने अपने केंद्रीय बैंकों का नियंत्रण करने वाले कानूनों में बदलाव किए। सांविधिक स्वतंत्रता से केंद्रीय बैंक की जोखिम धारकों को यह विश्वास दिलाने के लिए कि वे अपना कार्य निष्ठापूर्वक एवं प्रभावी ढंग से कर रहे हैं, जिम्मेदारी बढ़ जाती है। परंतु इसके लिए व्यापक आधार पर यह समझने की आवश्यकता है कि विभागीय लक्ष्य रणनीतिगत लक्ष्यों के अनुरूप हों। इस सारी प्रक्रिया में वरिष्ठ प्रबंध का समर्थन आवश्यक है। केंद्रीय बैंकों के कार्यक्रमों में परिवर्तन लाने के जिम्मेदार कारकों में पारदर्शिता के लिए राजनैतिक दबाव से मुक्तता एवं स्पष्ट और मापनीय परिणाम शामिल हैं। संस्थागत बदलावों, जो प्राय: त्रासदायी होते हैं, से कुछ केंद्रीय बैंकिंग कार्यों में परिवर्तन आता है तथा वे वरिष्ठ प्रबंध से अधिक अंशों में अनुकूलन शीलता एवं नम्यता की मांग करते हैं। हाल के वर्षों में कई केंद्रीय बैंकों ने इन उठापटकों से निपटने की आश्चर्यजनक क्षमता का प्रदर्शन किया है।

भारतीय रिज़र्व बैंक में रणनीतिपूरक आयोजना

9.73 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 उत्तमता, पारदर्शिता एवं परिचालन में पारदर्शिता के प्रति निष्ठा को रेखांकित करता है। अधिनियम के प्रावधान एक सुदृढ़ विनियमन के ढांचे एवं बाजार माध्यमों के प्रभावी कार्य-निष्पादन की हिमायत करते हैं। बैंक की कार्यकारी भूमिकाओं का मौद्रिक नीति, वित्तीय क्षेत्र के विकास, वित्तीय स्थायित्व सुनिश्चित करने, विनियमन एवं पर्यवेक्षण, मुद्रा निर्गम तथा सरकार एवं बैंकों के बैंकर के रूप में कार्य करने आदि के रूप में वर्गीकरण किया जा सकता है। 1980 के बाद के दशक के मध्य तक रिज़र्व बैंक ने रणनीतिपरक आयोजना को नहीं अपनाया था, परंतु रणनीतिपरक आयोजना के बिना भी बैंक समय-समय पर अद्वितीय नमनीयता के साथ संगठन का पुनर्गठन करने में सक्षम रहा।

9.74 हालांकि बैंक ने अपनी संगठन संरचना को युक्तियुक्त बनाने के लिए सन् 1982 में कुछ प्रयास किए थे तथापि सन् 1992 में एक बाह्य एजेंसी की सहायता से एक व्यापक रणनीतिपरक आयोजना निर्माण का कार्य हाथ में लिया गया। इसका उद्देश्य अपनी भूमिका को पुनः परिभाषित करना तथा आंतरिक संगठनात्मक एवं प्रबंध क्षमताओं की समीक्षा करना था। बाह्य रूप से इस अभ्यास का उद्देश्य उदारीकृत बाह्य पर्यावरण में बदलती हुई प्रत्याशाओं से उभरती चुनौतियों का समाधान करना एवं वैश्विक परिप्रेक्ष्य में बैंक को पुर्नस्थापित करना था। समग्र रणनीति योजना में सहायता के लिए विभागीय स्थिति पत्र एवं विशिष्ट विषयों यथा प्रौद्योगिकी, मानव संसाधन, पर्यावरणीय प्रवृत्तियों पर स्थिति पत्र तैयार किए गए। अंतिम योजना में चार अनुभाग थे - यथा - संस्था का मिशन, लक्ष्य एवं नीति पर वक्तव्य; संगठनात्मक मजबूती एवं कमजोरियों की समीक्षा; बैंकिंग कार्यों की सहगामी रणनैतिक क्रियाएं; और कार्यान्वयन रणनीति।

9.75 सलाहकार एजेंसी की रिपोर्ट के कार्यान्वयन से बैंक की संगठन संरचना में दूरगामी परिवर्तन हुए (परिशिष्ट 9.2)। इन परिवर्तनों में

सारणी 9.1: रणनीतिगत आयोजना प्रक्रिया के चुने हुए लक्षण

निम्नलिखित/ केंद्रीय बैंक/मौद्रिक प्राधिकारी	आयोजना प्रक्रिया की अनुमानित बारंबारता[4]	आयोजना प्रक्रिया की समयावधि	प्राथमिक समय अवधि[5]	रणनीतिगत आयोजना प्रक्रिया शुरूआत में मुख्य योगदान रहता है उस संस्था का नाम
आस्ट्रियाः				
प्रमुख रणनीति प्रक्रिया	प्रति तीन वर्ष में	1 वर्ष	4 वर्ष	कार्यपालक मंडल
गौण रणनीति प्रक्रिया	वार्षिक	3 मास	1 वर्ष	आयोजना एवं नियंत्रण प्रभाग
ब्राजील			परिकल्पना - 5 वर्ष स्थूल-उद्देश्य - 2 वर्ष	
कनाडा	प्रत्येक तृतीय वर्ष में		3 वर्ष	परिवेशगत छानबीन, बोर्ड निदेशक
चिली	वार्षिक		2 वर्ष	मंडल
फिनलैंड	वार्षिक	1 वर्ष	4 वर्ष	कार्यपालक मंडल
हांगकांग एसएआर	वार्षिक	2-3 मास	3 वर्ष	विभाग
जापान	वार्षिक	5-6 मास	1 वर्ष	कार्यकारी स्तर पर विशेष समिति
न्यूजीलैण्ड	वार्षिक	3 मास	स्थूल प्रवृत्तियां / पर्यावरणीय मुद्दे - 5-10 वर्ष रणनैतिक लक्ष्य : 5 वर्ष प्राथमिक लक्ष्य : 1 वर्ष	बाह्य विशेषज्ञों के नेतृत्व में आयोजना पूर्व सम्मेलन
पोलैंड	वार्षिक	3 मास	3 वर्ष	प्रबंध बोर्ड
सिंगापुर	वार्षिक	4 मास	1 वर्ष	परिवेशगत छानबीन एवं समीक्षा
स्वीडन	वार्षिक	कुछ मास	1 वर्ष	कार्यपालक मंडल
थाईलैण्ड	वार्षिक	पांच मास	1 वर्ष	शीर्ष प्रबंध समिति
युनाइटेड किंगडम	वार्षिक		1 वर्ष[6]	कार्यकारी दल एवं वरिष्ठ प्रबंध का अवे दिवस
युनाइटेड स्टेटस (बोर्ड आफ गवर्नर्स)	प्रति दो वर्ष में		4 वर्ष	बोर्ड के सदस्य एवं वरिष्ठ अधिकारी
परिशिष्ट : बी आइएस	वार्षिक	*चार मास*	*स्थूल प्रवृत्तियां / रणनीतिगत लक्ष्य : 3-5 वर्ष प्राथमिक लक्ष्य - 1 वर्ष*	*कार्यपालक समिति*

[4] इसे स्थूल संकेतक के रूप में प्रयोग किया जाए। कुछ संस्थाओं ने निश्चित अवधि को अंगीकार नहीं किया है तथा औरों में रणनीतिगत आयोजना प्रयास का परिणाम प्रति वर्ष बदलता रहता है।

[5] विशेषकर इसका मतलब योजना के नाम में वर्णित समयावधि होती है। वार्षिक योजनाओं में प्राय मध्यावधि मुद्दे शामिल किए जाते हैं।

[6] बैंक आफ इंग्लैण्ड में वर्तमान रणनीतिगत आयोजना प्रक्रिया समीक्षाधीन है तथा एक-वर्ष आगे केंद्रबिंदु दृष्टिकोण को त्याग कर बैंक की मध्यावधि 3 से 5 वर्ष रणनीति विकसित करने की इच्छा है।

स्रोत : सीकेन एस्को सम्मेलन, कोलंबो श्रीलंका (जनवरी 2004) में बी आई एस की प्रस्तुति

प्रबंध सेवा विभाग को समाप्त कर सूचना प्रौद्योगिकी विभाग एवं मानव संसाधन विकास विभाग का सृजन एवं सचिव विभाग का पुनर्गठन करके आंतरिक ऋण प्रबंध कक्ष, जिसे बाद स्वतंत्र आंतरिक ऋण विभाग बनाया गया, की स्थापना शामिल है।

9.76 इसके अलावा, समग्र दक्षता में सुधार हेतु प्रबंधन ने समय-समय पर कई गुणात्मक उपाय किए। कई पहले की गईं जैसे स्वच्छ नोट नीति का क्रियान्वयन; सेंट्रल डाटा बेस प्रबंध प्रणाली की रूपरेखा का निर्माण कारोबार प्रक्रिया सुधार के लिए समेकित स्थापना प्रणाली का विकास; वित्तीय बाजार समिति का गठन (दैनिक बैठक); विनियामक अंर्तव्यवहार दल (पाक्षिक बैठक); निकट भूतकाल में पारदर्शिता के प्रति निष्ठा में वृद्धि के लिए सूचना अधिकार अधिनियम (अक्तूबर 2005) का पालन। सुधारोत्तर काल में महत्वपूर्ण गुणात्मक एवं

मात्रात्मक निष्पादन संकेतक क्रमशः परिशिष्ट 9.3 एवं परिशिष्ट 9.4 में प्रस्तुत हैं।

9.77 परामर्श अभ्यास से शुरू अपनी कार्य योजना को पुनर्परिभाषित करते हुए एक नई रणनीतिगत कार्य योजना (एस.ए.पी.) बनाई गई जो अगले तीन से पांच वर्षों के दौरान बैंक परिचालनों एवं सहायक सेवाओं को निदेशित करने हेतु रणनीतिपरक दिशा एवं समन्वित ढांचा उपलब्ध करवाने का प्रयास करती है। इस योजना पर आजकल बैंक सक्रिय रूप से विचार कर रहा है। परामर्श पत्र (2005)[7] रणनीतिपरक कार्य योजना (एस.ए.पी.) का मध्यावधि दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है जिसकी वार्षिक समीक्षा की जाती है ताकि आवश्यक समायोजन किया जा सके। रणनीतिपरक कार्ययोजना का उद्देश्य प्रभावकारी नीतिगत हस्तक्षेप करना एवं भारत की नव अर्जित छवि को सुदृढ़ करने के लिए परिवर्तनशील आर्थिक परिदृश्य में केंद्रीय बैंक की अनुक्रिया परिभाषित करना है।

मिशन एवं विज़न

9.78 भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934 के अंतर्गत बैंक को दिए आदेश से उद्धरण लेकर बनाए गए मिशन वक्तव्य का पाठ नीचे वर्णित है - 'वित्तीय एवं भुगतान प्रणालियों की ईमानदारी, दक्षता एवं स्थायित्व सुनिश्चित करते हुए रोजगार लक्ष्यों की पूर्ति में सहायक उत्पादकता जनित आर्थिक वृद्धि सहित मूल्य स्थायित्व को प्रोत्साहित करना'। मिशन वक्तव्य के आधार-भूत मूल्यों में भारतीय संसद भारत सरकार एवं जनसामान्य के प्रति जवाबदेही में परिलक्षित जनहित; ईमानदारी (परिचालन एवं व्यवहार में पेशेवर मूल्यों एवं मानकों के पालन का समर्थन करती); उत्तमता (परिचालन में पारदर्शिता एवं जवाबदेही के अतिरिक्त उत्प्रेरणा, विशेषज्ञता एवं पेशेवरता को प्रोत्साहन देने के लिए); दृष्टिकोण की स्वतंत्रता (स्वतंत्र पेशेवर निर्णय को महत्व देना एवं विचार विमर्श द्वारा नीति निर्माण को प्रोत्साहित करना); और अंततः संवेदनशीलता एवं गत्यात्मकता (बदलती हुई मांगों के प्रति अनुकूलन शीलता एवं बदलाव को उत्प्रेरण) गंतव्य पर पहुंचने के लिए मिशन वक्तव्य घोषणा करता है कि बैंक विश्वसनीय, पारदर्शी, जागरूक एवं समसामयिक नीतियों का पालन करके अग्रणी केंद्रीय बैंक बनने की आकांक्षा रखता है तथा देशवासियों को उत्तम जीवन स्तर प्राप्त करने में सहायक विश्वस्तरीय वित्तीय प्रणाली के विकास में उत्प्रेरक की भूमिका निभाना चाहता है।

9.79 मिशन वक्तव्य एवं संगठन मूल्य दीर्घकालिक सिद्धान्त है, जबकि बैंक को प्रभावित करने वाले बाह्य एवं आंतरिक परिवर्तनों की अनुक्रिया में भविष्य का दृष्टिकोण, रणनैतिक लक्ष्य एवं मार्गदर्शक सिद्धान्तों की, नियमित समीक्षा की जाती है। ऐसे परिवर्तनों से भविष्यकामी दृष्टिकोण में परिवर्तन एवं वैश्विक विकास के साथ कदम मिला कर चलने के लिए क्षमता निर्माण की आवश्यकता को बल मिलता है। रणनीतिगत आयोजना को अपनाने से अब तक सुसुप्त संगठित निर्णय प्रक्रिया से संबधित मुद्दे केंद्र बिंदु पर आ गए हैं।

दृष्टिकोण

9.80 बैंक के लिए तैयार की गई (रणनीतिगत कार्ययोजना) में उर्ध्वमुखी एवं अधोमुखी दोनों दृष्टिकोणों का लाभ लेने के लिए दोनों का मिश्रण किया गया है। इनमें संगठन लक्ष्यों के नजरिए से बाह्य पर्यावरण में आने वाले परिवर्तनों के पूर्वानुमान का पुनर्उल्लेख; शक्तियों एवं दुर्बलताओं की पुनर्समीक्षा (क्षमताओं का मूल्यांकन); जनहित की सर्वोत्तम उपलब्धि के लिए परिचालन दक्षता में वृद्धि हेतु अनावश्यक कार्यों का त्याग करना शामिल है। इन प्रयासों के परिणाम प्रत्यक्ष फोकस, श्रेष्ठतर प्रवीणता, लक्ष्यों की सांझी सोच, संसाधनों का समुचित प्रयोग एवं लक्ष्य प्राप्ति में गतिसंचय के रूप में परिलक्षित होंगे।

रणनीतिगत लक्ष्य

9.81 रणनीतिगत कार्य योजना रिज़र्व बैंक को एक बहमुखी संस्था मानती है एवं समुचित आधारभूत संरचना और मानवसंसाधन की आवश्यकता पर बल देती है। केंद्रीय एवं क्षेत्रीय कार्यालयों पर आधारित जटिल एवं विस्तृत संगठन संरचना इस मान्यता को बल प्रदान करते हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था के विस्तृत आंकड़ों की उपलब्धता (प्रकाशनों एवं वेबसाइट के माध्यम से प्रसारित); पेशेवर प्रशिक्षण संस्थाएं; सक्षम मानवशक्ति; पर्याप्त वित्तीय साधनों की उपलब्धता इसमें अनुपूरक की भूमिका निभाते हैं।

9.82 रिजर्व बैंक के रणनीतिगत लक्ष्यों में अन्य बाहों के अतिरिक्त, मौद्रिक स्थायित्व, वित्तीय स्थायित्व, भुगतान एवं निपटान प्रणालियों की दक्षता, विश्वसनीय मुद्रा प्रबंध, कुशल सार्वजनिक ऋण प्रबंध तथा आर्थिक नीतियों के बारे में भारत सरकार के सलाहकार की भूमिका आदि शामिल हैं। उपरोक्त के अलावा न्याय पूर्ण एवं संतुलित वृद्धि में सहायक परिस्थितियां उत्पन्न करने में उत्प्रेरक की भूमिका का निर्वाह;

[7] रणनीतिगत कार्य योजना - एक परामर्श पत्र, भारतीय रिज़र्व बैंक, मानव संसाधन विकास विभाग, 2005।

बैंक की निवेश आस्तियों का प्रबंध; जमाकर्ताओं के हितों की रक्षा; तथा विनियामक अंतरपणन की रोकथाम के लिए अन्य विनियामकों जैसे बीमा विनियामक एवं विकास प्राधिकारी (इर्डा) एवं भारतीय प्रतिभूति और विनिमय बोर्ड (सेबी) के साथ मिलकर समन्वित नियामक व्यवस्था सुनिश्चित करना भी बैंक के प्रमुख लक्ष्य हैं।

रणनीतिगत आयोजना की संरचना एवं उसका क्रियान्वयन :

9.83 परिवर्तनशील वैश्विक पर्यावरण में बैंक को पुनर्स्थापित करने के लिए कार्यों की प्राथमिकताओं का निर्धारण करने, आंतरिक क्षमताओं का सुदृढ़ीकरण तथा परिचालन में आनेवाली क्षमता आवश्यकताओं की भर्ती, पाश्र्विक प्रवेश, सघन प्रशिक्षण एवं संशोधित नियोजन नीतियों द्वारा पूर्ति करके इसके मूल कार्यो पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है। रिज़र्व बैंक के सामर्थ्यों के साथ-साथ उसकी संरचनात्मक अनमनीयताएं, धीमी निर्णय-प्रक्रिया, उत्तरदायित्व का अभाव, बाजार-सम्मत पारिश्रमिक, अपर्याप्त आंतरिक संप्रेषण तंत्र, मानव संसाधन की उपेक्षा, इष्टतमेतर नियोजन, अपर्याप्त प्रौद्योगिकी अवशोषण, अपर्याप्त ज्ञान प्रबंध तथा अपेक्षाकृत निम्न प्रेरणास्तर आदि अंतर्निहित कमजोरियां भी हैं।

9.84 इन चिंताओं का व्यवहारिक निवारण करने में सक्षम बनने के लिए मूल सिद्धान्तों के अनुरूप हित टकराव का समाधान कर मूल केंद्रीय बैंक कार्यों पर ध्यान केंद्रित करने की आवश्यकता है। इसके अलावा परिचालन में सक्षमता मानदंड लागू करने, पदानुक्रम पर जोर घटाने, कार्य प्रक्रियाओं में सुधार एवं निगम-संप्रेषण को प्रोत्साहन देने की अत्यावश्यकता है।

9.85 रिज़र्व बैंक की रणनीतिपरक आयोजना-संरचना वर्तमान क्षमताओं के इष्टतम उपयोग के अनुरूप बाह्य वातावरण के साथ आंतरिक रणनीतियों की अंतर्क्रिया की पूर्वापेक्षा के तौर पर यह सोचा गया कि एक पूर्णत: समर्पित रणनीतिगत आयोजना अनुभाग का सृजन किया जाए। बाह्य विशेषज्ञता के नियोजन के लिए केंद्रीय निदेशक मंडल ही मुख्य मंच रहेगा। आवश्यकता के अनुसार संबंधित क्षेत्रों के विशेषज्ञों के साथ भी विचार विमर्श किया जा सकता है। समय के साथ-साथ रणनीतिगत काय-योजना में आवश्यक तालमेल करने के लिए मौद्रिक नीति की तिमाही समीक्षा से देश के आर्थिक पर्यावरण, विश्व अर्थव्यवस्था, उभरती हुई मंडियों की परिस्थितियों एवं सरकारी नीतियों के बारे में सूचना मिलती रहेगी।

VII. निष्कर्ष

9.86 केंद्रीय बैंकों की संरचना एवं विकास का कोई सार्वभौमिक प्रतिमान नहीं है। अधिकांश देशों में समसामयिक आर्थिक, राजनैतिक एवं वित्तीय परिस्थितियों की अनुक्रिया में केंद्रीय बैंकों की संरचना का विकास हुआ। अपने घटना पूर्ण अस्तित्व में बैंक का सफलता पूर्वक रूपांतरण हुआ है। रणनीतिपरक कार्य योजना के लागू होने से, जो आजकल विचारधीन है, परिवर्तनशील परिस्थितियों में अनमनीयता से उत्पन्न खतरों में वृद्धि एवं प्रश्नों का जन्म होता है। परंतु इस प्रक्रिया में बैंक द्वारा अब तक अपनाई गई, कार्यनीति, जिसमें अंतर्निहित लचीलापन था तथा जिसने समय की चुनौतियों का सफलता पूर्वक सामना किया, की बलि नहीं चढ़नी चाहिए। अतः दुविधा यह है कि या तो आयोजना के एक निश्चित प्रतिमान से आबद्ध हुआ जाए या तीव्र गतिवाले आर्थिक बदलावों की पृष्ठभूमि में शीघ्र अनुक्रिया सुनिश्चित करने के लिए परिवर्तनों के साथ तालमेल किया जाए।

परिशिष्ट 9.1 : भारतीय रिज़र्व बैंक का संगठनात्मक विकास

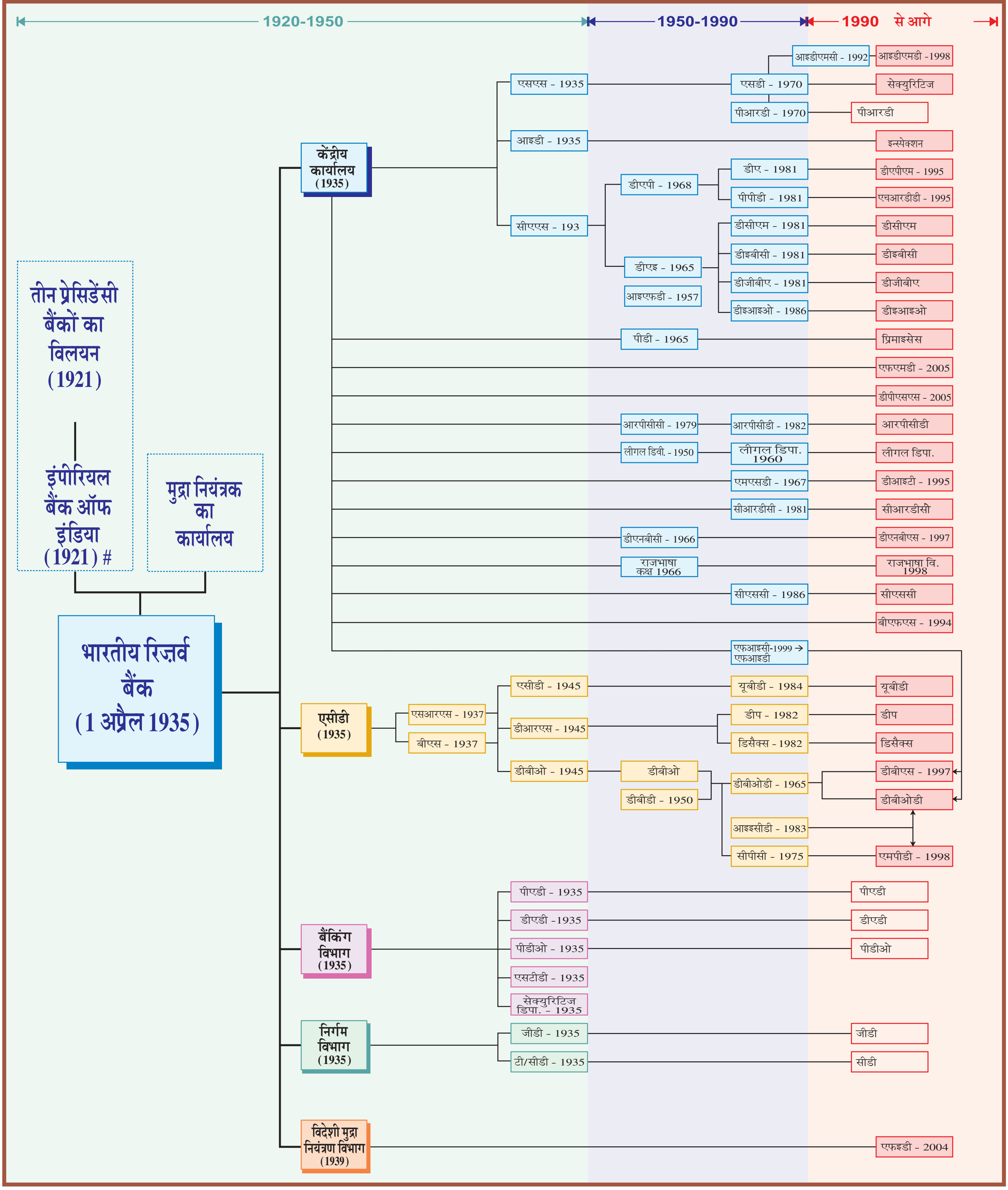

केंद्रीय बैंक के कुछ कार्य किए और 1955 में इसे भारतीय स्टेट बैंक के रूप में परिवर्तित किया गया।

विभाग के पूर्ण नामों के लिए संकेताक्षरों की सूची देखें।

परिशिष्ट 9.2

भारतीय रिज़र्व बैंक की रणनीति कार्य योजना (1993-2002) रिपोर्ट के मसौदे का सारांश

I. परिचय :

बैंक की भूमिका पुनर्परिभाषित करने और संगठनात्मक एवं प्रबंध प्रभावकारिता की समीक्षा हेतु 1993-2002 अवधि के लिए रिज़र्व बैंक के लिए रणनीतिगत योजना निर्माण का कार्य एक परामर्शदात्री एजेंसी (1992) को दिया गया। कार्यकारी योजना को तीन चरणों में विभाजित किया गया : 1993-95; 1995-98; एवं 1998-02

II. मिशन :

भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम के अनुरूप मिशन वक्तव्य ''रिज़र्व बैंक मूल्य स्थायीत्व सहित भारतीय अर्थव्यवस्था की संतुलित एवं निरंतर वृद्धि में सहायक सुदृढ़ एवं दक्ष वित्तीय प्रणाली विकसित करना चाहता है''। मिशन वक्तव्य : परिचालन में पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व सहित दक्षता, गत्यात्मकता, पेशेवरता, नैतिक मानदंड, उच्च स्तरीय उत्प्रेरण को प्रोत्साहन, कौशल एवं दक्षता, दक्ष बाजार तंत्र का समर्थक सुदृढ़ नियमन तंत्र, परिचालन एवं निर्णय प्रक्रिया में आधुनिक तकनीक का अंगीकार, सभी संबंधों में उन्मुक्तता एवं आदर पर जोर देता है।

III. लक्ष्य

मौद्रिक नीति के लक्ष्य

मुद्रा स्फीति का नियंत्रण एवं आर्थिक विकास को प्रोत्साहन; घाटे के वित्त पोषण एवं लोक ऋण प्रबंध पर सरकार को परामर्श देना; भुगतान संतुलन एवं विदेशी मुद्रा भंडार का प्रबंध; वित्तीय क्षेत्र का विकास; मुद्रा की गुणवत्ता, डिजाइन एवं उपलब्धता में सुधार सहित भुगतान के गैर मुद्रा माध्यमों को प्रोत्साहन।.

वित्तीय क्षेत्र की गतिविधियां

प्रणालियों एवं सूचना पहुंच का प्रभावी विवेक-सम्मत पर्यवेक्षण, प्रणालीय जोखिमों के निवारण के लिए बाजार आसूचना एवं संकटकालीन आयोजना तथा बैंकिंग एवं वित्तीय संस्थाओं को विश्वस्तर पर स्पर्धा के लायक बनने में सहायता।

संगठनात्मक गतिविधियाँ

अनुषंगियों एवं उनके प्रबंधन में बैंक की हिस्सेदारी से संबधित नीति का विकास; निर्णय प्रक्रिया में जागरूक दृष्टिकोण अपनाने हेतु रणनीतिगत सूचना प्रणाली का विकास; निर्णय प्रक्रिया को बल देने के लिए आर्थिक अनुसंधान की उच्च गुणवत्ता एवं सामयिकता; बैंक के आंतरिक वित्तीय संसाधनों का दक्ष एवं पेशेवर प्रबंध; सुस्पष्ट छवि निर्माण में इसके महत्व एवं रणनीतिगत भूमिका की देखते हुए जनसंपर्क; पारस्परिक लाभ हेतु श्रेष्ठता को मान्यता देना; गुणवत्ता को प्रोत्साहन एवं प्रत्येक कर्मचारी की समस्त संभावना का दोहन।

IV. संगठनात्मक सामर्थ्यों एवं दुर्बलताओं की समीक्षा

सामर्थ्य

सक्षम अधिकारियों एवं कर्मचारियों का बड़ा समुच्चय; अर्थव्यवस्था के प्रमुख आँकड़ों की उपलब्धता; 22 क्षेत्रीय कार्यालयों सहित विस्तृत संगठन नेटवर्क; प्रतिभाकर्षण की क्षमता एवं वित्तीय आत्मनिर्भरता।

दुर्बलताएं

संरचनात्मक अनमनीयता, उत्तरदायित्व का अभाव एवं धीमी निर्णय प्रक्रिया; विशेषज्ञ सूचना में छीजन; दुरूह औद्योगिक संबंध दृष्टिकोण वाली समर्थ कर्मचारी यूनियनें; फालतू स्टाफ; कमजोर बाजार आसूचना

V. रणनीतिगत कार्य

मिशन एवं लक्ष्यों से आहरित रणनीति कार्यों का उद्देश्य कतिपय धारणाओं के आधार पर परिवर्तनशील पर्यावरण का सफल प्रबंधन।

धारणाएं

सरकार की उदारीकरण एवं निजीकरण की नीतियां जारी रहेंगी; सकल घरेलू उत्पाद के अनुपात में राजकोषीय घाटे को बढ़ने नहीं दिया जाएगा तथा इसमें क्रमिक रूप से कमी लाई जाएगी; चालू खाता में रुपए की पूर्ण परिवर्तनीयता एवं दीर्घकालिक परिप्रेक्ष्य में पूंजी खाते में पूर्ण परिवर्तनीयता की ओर प्रयास; वित्तीय बाजार सुधार की निरंतरता; नए भारतीय निजी क्षेत्र भागीदारों एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रवेश द्वारा वित्तीय उत्पादों का विविधीकरण एवं वित्तीय क्षेत्र का अमध्यस्थीकरण; मौद्रिक नीति का परिचालन - परोक्ष उपकरणों द्वारा किया जाएगा; एवं ब्याज दरों पर से नियंत्रण हटाया जाएगा।

रणनीतिगत कार्य - चरणों में

रणनीतिगत कार्यों को निम्नलिखित शीर्षों के अधीन तीन चरणों में कार्यान्वित करने हेतु क्रमबद्ध किया गया है : ''मौद्रिक नीति एवं वित्तीय क्षेत्र'' जिसे मुख्य क्षेत्र के रूप में माना गया है। समुचित विधि सहायता हेतु; ''सांविधिक ढांचा'', नए युग में सकारात्मक संबंधों के लिए ''ग्राहक सेवा'' तथा ''संगठनात्मक समर्थन'' पहलुओं, जैसे संरचना, प्रणालियों, मानव संसाधन विकास एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी का उपयोग जैसे पहलुओं की देखरेख के लिए संगठनात्मक सहायता।

मौद्रिक नीति - चरण-I

आर्थिक विश्लेषण एवं नीति विभाग की सहायता लेकर; मौद्रिक नीति निर्माण की पूरी जिम्मेदारी मौद्रिक नीति विभाग की है; आंतरिक ऋण प्रबंध कक्ष (अब आंतरिक ऋण प्रबंध विभाग) को सरकारी प्रतिभूतियों में मुक्त बाजार परिचालन सहित प्राथमिक एवं द्वितीयक बाजार का विकास करने; नए लिखतों का विकास करने एवं सरकारी प्रतिभूति बाजार में सहभागिता की गुंजाइश में बढ़ोतरी तथा प्रणाली में समग्र चलनिधि (तरलता) सुनिश्चित करते हुए सांविधिक चलनिधि अनुपात में कटौती; दक्षता एवं प्रतियोगिता स्तर में वृद्धि के लिए औसत जमा ब्याज दरो एवं औसत उधार ब्याज दरों में गिरावट के साथ जमा ब्याज दरों एवं उधार ब्याज दर के अंतर में कमी लाना; सभी योग्य आस्तियों को मुक्त बाजार परिचालन के लिए उपलब्ध करवाने के लिए तंत्र; दीर्घावधि मौद्रिक नीति निर्माण एवं चलनिधि पूर्वानुमान कार्य हाथ में लेना एवं लक्षित मुद्रास्फीति दर की सार्वजनिक घोषणा करना; निम्न मूल्य मुद्रा का सिक्काकरण, उच्चतर मूल्य मुद्रा का प्रारंभ एवं इलेक्ट्रॉनिक अंतरण जैसी गैर नकदी मुद्रा को प्रोत्साहन; मुद्रा आपूर्ति विस्तार हेतु मुद्रा संक्रमण क्षेत्रों की स्थापना तथा सक्षम बैंकों को करेंसी चेस्ट परिचालन की अनुमति।

सहायक प्रणालियां

विस्तारित संप्रेषण नेटवर्क एवं समेकित आन लाइन बैंकिंग प्रणाली; डीप (डीइएपी) में मौद्रिक नीति निर्माण में विश्लेषणात्मक सहायता हेतु अलग प्रभाग की स्थापना, विदेशी मुद्रा आंकड़ों के लिए बैंक नेट या निकनेट का प्रयोग ताकि दक्षतापूर्वक पूर्वानुमान एवं विश्लेषण किया जा सके।

मौद्रिकनीति - चरण II

ऋण एवं ज्यादा ब्याज दरों का नियंत्रण समाप्त करना एवं चालू खाते में पूर्ण परिवर्तनीयता; मौद्रिक नीति उत्तरदायित्व के बारे में संसद के प्रति जवाबदेही; सरकार की ओर से विदेशी मुद्रा प्रवाह के विषय में देनदारी प्रबंध विषय में सरकार से बातचीत।

वित्तीय क्षेत्र - प्रथम चरण

एकल निकाय पर्यवेक्षण एवं वित्तीय प्रणाली के निरीक्षण हेतु पर्यवेक्षण बोर्ड की स्थापना; एक अलग वित्तीय प्रणाली विनियमन विभाग के अधीन समग्र वित्तीय प्रणाली के लिए समेकित नीति निर्माण के उद्देश्य से बैंकिंग परिचालन एवं विकास विभाग, वित्तीय संस्था कक्ष, औद्योगिक एवं निर्यात ऋण विभाग तथा शहरी बैंक विभाग[8] को एक पर्यवेक्षण विभाग के अधीन लाना।

विनियमन एवं पर्यवेक्षण संबंधी नीतियाँ

प्रवेश मापदंडों, पूँजी पर्याप्तता, लाईसेंसिंग, ब्याज दर, चलनिधि (तरलता) आदि के निर्धारण हेतु प्रयास। विवेकसम्मत मार्गदर्शी सिद्धान्तों के उल्लंघन पर दंडात्मक कार्यवाही। समुचित पर्यवेक्षण (प्रत्यक्ष या परोक्ष) को परिभाषित करना। समान कार्य क्षेत्र वाले विनियामकों यथा भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड (सेबी) के साथ बेहतर तालमेल बैंक एवं वित्तीय संस्थाओं के विलय के लिए मार्गदर्शी सिद्धान्तों का निर्माण। राज्य वित्तीय निगमों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, वित्तीय संस्थाओं आदि के बोर्डों में रिजर्व बैंक अधिकारियों के नामन की प्रथा की समाप्ति। बैंकिंग के वाणिज्यिक एवं प्रबंधकीय पक्षों पर नियंत्रण की समाप्ति। नवीन वित्तीय उत्पादों एवं सेवाओं को प्रोत्साहन। लेखा परीक्षा में बाह्य एजेंसियों की सेवा का उपयोग, बैंकिंग क्षेत्र के विभिन्न निकायों की एक समान निरीक्षण पद्धति, निश्चित अवधि में संपूर्ण प्रक्रिया की अपेक्षा विशिष्ट क्षेत्रों पर केंद्रित नवीन निरीक्षण प्रक्रिया। निरीक्षण शुल्क वसूल करने संबंधी मामले की पुनरीक्षा।

बाजार आसूचना

सभी क्षेत्रीय कार्यालयों एवं केंद्रीय कार्यालय के परिचालन विभागों में अनुसंधान एवं आसूचना स्कंधों की स्थापना।

समर्थनकारी विधि व्यवस्था

बैंक अपने कार्यक्षेत्र में परिवर्तन हेतु एक सशक्त मामला बनाकर कार्यवाही हेतु सरकार के समक्ष रखे।

ग्राहक सेवा - चरण I

जनसंपर्क एवं प्रकाशन (आर्थिक विश्लेषण एवं नीति विभाग) कार्यों को मिलाकर निगम संप्रेषण विभाग; एवं भुगतान एवं प्रणाली विभाग, आंकड़ों के संग्रहण हेतु एकल खिड़की दृष्टिकोण, विदेशी मुद्रा परिचालन संबंधी विवरणी को युक्तिसंगत बनाना तथा स्वचालित नोट कांउटिंग और चेक रीडर / सोर्टर प्रणालियों का अंगीकार करना ।

ग्राहक सेवा - चरण II

बैंकिंग क्षेत्र में उन्नत इलेक्ट्रोनिक फंड ट्रांसफर (ईएफटी) प्रणाली की स्थापना; उन्नत प्रणालियों को लागू करने के लिए सांविधिक संरचना स्थापित करना।

संगठनात्मक समर्थन

कार्यनीतिगत कार्यान्वयन हेतु संगठनात्मक समर्थन की जरूरत पड़ती है, जिसके लिए संगठन की पुर्नसंरचना एवं अन्य कार्यों से प्रक्रियाओं, प्रणालियों एवं मानव संसाधन की प्रभावशीलता में सुधार लाना पड़ता है।

[8] क्रमशः बैंकिंग परिचालन एवं विकास विभाग, वित्तीय संस्था कक्ष, वित्तीय कंपनी विभाग, औद्योगिक एवं निर्यात ऋण विभाग एवं शहरी बैंक विभाग।

संगठनात्मक पुनर्संरचना

कार्यनीतिगत कार्यान्वयन हेतु संगठनात्मक समर्थन की जरूरत पड़ती है, जिसके लिए संगठन की पुर्नसंरचना एवं अन्य कार्यों से प्रक्रियाओं, प्रणालियों एवं मानव संसाधन की प्रभावशीलता में सुधार लाना पड़ता है।

नए विभागों की स्थापना[9] : डीएफएसआर, डीओएस, डीओपीएस एवं डीआइओ; नए विभागों का संगठन : डीएचआरएम, डीआइटीएस, डीओएफ, डीओपीआर निगम संप्रेषण विभाग; वित्तीय कंपनी विभाग का मुंबई स्थानांतरण; तीन स्तरीय संगठन संरचना की स्थापना; केंद्रीय कार्यालय नीति निर्माण हेतु, आंचलिक कार्यालय नीति निर्माण में सहायक सूचना / सामग्री उपलब्ध करने एवं क्षेत्रीय कार्यालय नीति कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी।

प्रौद्योगिकी

सारी कम्प्यूटर प्रणाली को समेकित करने के लिए सूचना प्रौद्योगिकी सेवा विभाग का निर्माण; प्रबंध सेवा विभाग एवं सांख्यिकी एवं कम्प्यूटर सेवा विभाग के प्रभाग; इन्ट्रा कम्प्यूटर संप्रेषण हेतु लोकल एरिया नेटवर्क / वाइड एरिया नेटवर्क की स्थापना; कार्यालय स्वचालन; दक्ष एवं विश्वसनीय भुगतान प्रणालियां।

मानव संसाधन विकास

प्रशासन विभाग एवं कार्मिक नीति विभाग को मिलाकर मानव संसाधन विकास विभाग की स्थापना करना; कार्य रूपरेखा प्रणाली की स्थापना; जल्दी सेवा निवृत्ति योजना, गोल्डन हैण्डशेक एवं पुनर्नियोजन पर यूनियनों के साथ विचार विमर्श; स्वचालित एवं संगणकीकृत माहौल में प्रशिक्षण एवं नई निपुणता विकास; कार्मिक एवं कौशल संबंधी सूचना के डाटा बेस का निर्माण ।

अनुसंधान सहायता

आर्थिक विश्लेषण एवं नीति विभाग तथा सांख्यिकी एवं कम्प्यूटर सेवा विभाग के संबंधित प्रभागों को मिलाकर नीति अनुसंधान विभाग का सृजन । विभिन्न नीति निर्माता विभागों के लिए डाटाबेस बनाने के लिए अनुसंधान एवं आसूचना स्कंधों की स्थापना ।

प्रणालियां एवं प्रक्रियाएं

परिचालन मैन्युअलों का आधुनिकीकरण; लागत एवं बजट केंद्रों तथा विभागवार एवं कार्यमदवार लागत रिपोर्ट प्रणालियों की स्थापना; विभागाध्यक्षों द्वारा त्रैमासिक आधार पर औपचारिक प्रस्तुति प्रणाली; विभागों की वार्षिक कार्य योजना का वार्षिक बजट के साथ समेकन; सभी परिचालन विभागों के अनुरूप आपदा आयोजना तंत्र; निधि आयोजना एवं निधियों के अवसर मूल्य की अवधारणाएं लागू करना; एवं रिज़र्व बैंक के एकीकृत तुलन पत्र की आवश्यकता की समीक्षा करना।

चरण III :

रिज़र्व बैंक की नवीन छवि के निर्माणार्थ पूर्ववर्ती चरणों की समीक्षा तथा पहले दो चरणों में उठाए गए प्रयासों का उद्देश्य, रणनीति आयोजना के लक्ष्यों के आधार पर, नई छवि का निर्माण करना है।

VI. संगठनात्मक योजना :

विभागीय संरचना, क्षेत्रीय संरचना एवं शीर्ष प्रबंध संरचना के लिए लागू

लक्ष्य : आंतरिक संसाधनों का बेहतर प्रबंध, परिचालन पर्यावरण में परिवर्तनों के प्रति संवेदनशीलता एवं अनुकूलन शीलता हेतु नमनीयता, पुनर्गठन द्वारा परिचालनों की सहक्रिया, निर्णय प्रक्रिया के विकेंद्रीकरण का प्रबंध योग्य स्तर, शीर्ष स्तर पर निर्णय क्षेत्र में कटौती, ग्राहक सेवा, प्रेस संपर्क आदि उपेक्षित क्षेत्रों पर अधिक ध्यान एवं उनका सशक्तीकरण प्रथम चरण की समाप्ति तक पुनर्गठन द्वारा 25 की जगह 11 विभाग बनाए जाएंगे।

VII. कार्यान्वयन रणनीति

विशेषताएं : 1) 'रणनीति योजना कार्य पर जोर' के अधीन प्रभावी कार्यान्वयन एवं निष्ठा सुनिश्चित करने के लिए रणनीति कार्य योजना का संप्रेषण 2) समुचित कार्यान्वयन एवं अनुवर्ती कार्यवाही हेतु उत्तरदायित्व को पूर्वशर्त बनाना एवं प्रभावी कार्यान्वय में आने वाली कठिनाईयों एवं रुकावटों को उजागर करने वाली त्रैमासिक रिपोर्टों का शीर्ष प्रबंध को प्रस्तुतीकरण।

[9] क्रमशः वित्तीय प्रणाली नियमन विभाग; पर्यवेक्षण विभाग, भुगतान प्रणाली विभाग, अंतरराष्ट्रीय परिचालन विभाग, मानव संसाधन प्रबंध विभाग, सूचना प्रौद्योगिकी सेवा विभाग, वित्त विभाग, नीति अनुसंधान विभाग ।

परिशिष्ट 9.3
सुधारोत्तर काल में रिज़र्व बैंक के कार्य निष्पादन में गुणात्मक सुधार@

विनियमन एवं पर्यवेक्षण

1. देश भर में ऋण वसूली प्राधिकरणों (डेट रिकवरी ट्रिब्यूनल्स) की स्थापना के लिए पहल,
2. बैंकिंग क्षेत्र के पर्यवेक्षण के लिए वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड (बीएफएस) एवं अनन्य विभागों की स्थापना,
3. नई संस्थाओं जैसे शहरी सहकारी बैंक, गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, विकास वित्त संस्थाओं, एवं प्राथमिक व्यापारियों को रिज़र्व बैंक के अंतर्गत स्थापित वित्तीय पर्यवेक्षण बोर्ड (बीएफएस) के अधीन लाना ;
4. केमल (सीएएमइएलएस) प्रारूप पर आधारित प्रत्यक्ष निरीक्षण प्रक्रिया को सुदृढ़ करके आकार निरपेक्ष तथा अनिवार्य रूप से वार्षिक बनाया जाना;
5. वाणिज्यिक बैंकों जैसी निरीक्षण प्रक्रिया गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों, विकास वित्त संस्थाओं, प्राथमिक व्यापारियों एवं नागरी सहकारी बैंकों पर लागू करना;
6. कारोबार के सभी पहलुओं को छूनेवाले एवं समर्पित अधिकारियों द्वारा आनलाइन विवरणियों के माध्यम से कार्यान्वित परोक्ष निगरानी प्रणाली का प्रारंभ;
7. रिज़र्व बैंक के समग्र मार्गदर्शन एवं पर्यवेक्षण में उपरोक्त संस्थाओं के लिए अनुशंसित एक अंतर्निहित आस्ति-देयता एवं जोखिम प्रबंध प्रणाली की स्थापना की;
8. अन्य पर्यवेक्षण संस्थाओं के साथ समन्वय के लिए वित्तीय समूह कक्ष की स्थापना की गई है। समेकित पर्यवेक्षण सुनिश्चित करने की दिशा में समेकित लेखांकन संरचना को लागू किया गया।
9. तुरंत उपचारात्मक कार्यवाही (पीसीए), साख सूचना केंद्र (सीआइबी) एवं बैंकिंग ओम्बडस मेन योजना की शुरूआत;
10. वित्तीय क्षेत्र में ग्राहक सेवा में सुधार हेतु मौलिक प्रयास किए गए;
11. मनी लॉडरिंग प्रथम एवं आतंकवाद के वित्तपोषण की रोकथाम के लिए सख्त उपाय किए गए;
12. स्थूल विवेक सम्मत संकेतक प्रणाली की स्थापना भी की गई ;
13. निगम-शासन विषय पर बैंकों के लिए व्यापक मार्गदर्शी सिद्धान्त जारी किए गए;
14. रिज़र्व बैंक बैंकिंग क्षेत्र को बासेल-द्वितीय के नार्म्स को लागू करने के लिए तैयार कर रहा है तथा मात्रात्मक प्रभाव के अध्ययन के लिए कुछ बैंकों का पहले ही चयन किया गया है।

वित्तीय बाजार, पारदर्शिता एवं संप्रेषण :

15. भुगतान एवं निपटान प्रणाली में गुणवत्ता मानकों में सुधार में आधारभूत सहायता के लिए रिज़र्व बैंक ने एक अलग भुगतान एवं निपटान प्रणाली बोर्ड एवं अलग विभाग यानी भुगतान एवं निपटान प्रणाली विभाग की स्थापना की।
16. इलैक्ट्रोनिक लेनदेन एवं साइबर संबधित धोखाघड़ी की रोकथाम के लिए आवश्यक सांविधिक प्रावधान करने के उपाय किए जा रहे हैं।
17. सभी महत्वपूर्ण अधिसूचनाएं, परिपत्र; वेबसाइट पर प्रकाशित मसौदों पर दी गई राय के आधार पर जारी किए जाते हैं।
18. भारतीय अर्थव्यवस्था पर व्यापक (डाटाबेस प्रबंध प्रणाली को बैंक की वेबसाइट पर रखा गया है जिसे नियमित रूप से अद्यतन बनाया जाता है।
19. उन्मुक्त पहुंच के लिए सभी प्रकाशनों को वेबसाइट पर उपलब्ध कराया जाता है। रिज़र्व बैंक की सूचना संप्रेषण प्रणाली अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष की विशेष डाटा प्रसारण मानकों की आवश्यकताओं से कहीं अधिक विकसित है।
20. रिज़र्व बैंक आवश्यक संस्थागत परिवर्तन एवं बाजार व्यष्टि संरचना में गत्यात्मक सुधारों द्वारा बाजारों के विकास को सतत सुगम बना रहा है।
21. समुचित विधिक, संस्थागत, प्रौद्योगिक एवं नियामक संरचनाओं की स्थापना से सरकारी प्रतिभूतियों के प्राथमिक एवं द्वितीयक बाजारों में व्यापार परिमाण एवं पारदर्शिता में वृद्धि में सहायता मिली है।
22. जमा प्रमाण पत्र (सीडी) वाणिज्यिक पत्र (सीपी) रेपो, रुपया व्युतपनी लिखतों यथा ब्याज दर विनिमय (आइआरएस) / वायदा सौदे (एफआरए) सम्पार्श्विक उधार एवं ऋण संबंधी दायित्व आदि नवीन मुद्रा बाजार लिखतों का चलन शुरू किया गया।

@ उल्लिखित उपाय सम्पूर्ण नहीं हैं।

मौद्रिक प्रबंध :

23. पूंजी प्रवाह में भारी वृद्धि के कारण विनिमय दर प्रबंध बैंक के समक्ष एक प्रमुख चुनौती के रूप में उभरा एवं इससे मुद्रा एवं बाह्य क्षेत्र प्रबंध में घनिष्ठ समन्वय की आवश्यकता पड़ी तथा बैंक ने इसका सफलता पूर्वक सामना किया।

24. रिज़र्व बैंक के संयुक्त प्रयासों से, समय के साथ, मुद्रा नीति के संप्रेषण माध्यमों की प्रभावकारिता में जबरदस्त सुधार हुआ है।

25. भारतीय अर्थव्यवस्था के उदारीकरण से भारतीय रिज़र्व बैंक के तुलन पत्र एवं बैंकिंग प्रणाली मे चलनिधि के स्रोतों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आए हैं जिससे रिज़र्व बैंक द्वारा अवशोषण के माध्यम से बार-बार नीति हस्तक्षेप की आवश्यकता पड़ी।

26. बैंकिंग क्षेत्र से परे जाकर समस्त वित्तीय क्षेत्र को शामिल करने वाले नए समुच्चयों की गणना की गई जिनको नियमित रूप से प्रकाशित किया जाता है।

27. सन् 2000 से एक दस्तावेज 'स्थूल आर्थिक एवं मौद्रिक गतिविधियों' के रूप में भारतीय अर्थव्यवस्था की समीक्षा प्रकाशित की जाती है जिसका विमोचन बैंक के वार्षिक मौद्रिक नीति वक्तव्यों के साथ अप्रैल / मई में किया जाता है। मध्यावधि समीक्षा के साथ भी अर्धवार्षिक अवधि में इसका प्रकाशन किया जाता था। अप्रैल 2005 से समीक्षा का विमोचन त्रैमासिक आधार किया जाता है।

ऋण प्रबंध क्षेत्र

28. राज्यों के बाजार ऋणों की चुकौती के लिए वर्ष 1999-2000 से बैंक ने एक एकीकृत ऋण निक्षेप निधि की स्थापना की।

29. उनकी प्रतिभूतियों के बढ़ते परिमाण से आने वाली कठिनाइयों एवं जोखिम प्रतिभूतियों पर उपयोगकर्ता शुल्क के वस्तुनिष्ठ मानदंडों पर आधारित युक्तिकरण की आवश्यकता के बारे में राज्यों को संवेदनशील बनाने के निरंतर प्रयास कर रहा है।

30. मुक्त बाजार परिचालन में सक्षम होने के लिए रिज़र्व बैंक पोर्टफोलियों में पर्याप्त प्रतिभूतियों की उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए केंद्र सरकार की अहस्तांतरणीय 4.6 प्रतिशत विशेष प्रतिभूतियों के सारे स्टाक को वर्ष 2003-04 तक बेचने लायक प्रतिभूतियों में परिवर्तित करने की नीति पर अमल किया।

31. चलनिधि समायोजन सुविधा (एलएएफ) को अवशोषण परिचालन के भार से मुक्त रखने के लिए रिज़र्व बैंक को एक अतिरिक्त उपकरण मुहैया कराने की दृष्टि से बाजार स्थायीकरण योजना (एमएसएस) शुरू की गई।

मुद्रा प्रबंध

32. भुगतान एवं निपटान प्रणाली के मशीनीकरण एवं संगणकीकरण से समग्र कार्यनिष्पादन गुणवत्ता में सुधार हुआ है।

33. मुद्रा प्रबंध के क्षेत्र में बैंक ने अपने 18 निर्गम कार्यालयों में 48 मुद्रा सत्यापन एवं प्रसंस्करण प्रणालियाँ (सीवीपीएस) एव 27 श्रेडिंग एवं ब्रिकेटिंग सिस्टम (एसबीएस) की स्थापना करके सारी नोट प्रसंस्करण प्रक्रिया का स्वचालन किया। इससे पहले यह प्रक्रिया बड़ी संख्या में स्टाफ का नियोजन करके हाथ से की जाती थी।

34. जनता को अच्छी गुणवत्ता के नोट एवं सिक्कों की आपूर्ति के लिए स्वच्छ नोट नीति का कार्यान्वयन

35. आपूर्ति तंत्र पर बढ़ते हुए दबाव के कारण सिक्कों के वितरण का कार्य निजी परिवहन संचालकों को दे दिया गया तथा सिक्का प्रेषण के साथ रिज़र्व बैंक स्टाफ एवं पुलिस कर्मी भेजने की प्रथा समाप्त की गई।

36. इस क्षेत्र में उपलब्ध अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकी लाभ उठाने एवं जालसाजी से सुरक्षा एवं संरक्षण निश्चित करने के लिए बैक नोटों के सुरक्षा लक्षणों की लगातार समीक्षा की जाती है एवं उन्हें अद्यतन बनाया जाता है।

37. हाल के वर्षों में पर्यावरण के लिए हानि रहित ब्रिकेटिंग प्रक्रिया अपना कर गंदे नोटों के सत्यापन, प्रसंस्करण, छँटाई एवं उन्हें नष्ट करने के कार्य बनाने को स्वचालित पर जोर दिया गया है।

38. मैसूर (कर्नाटक) एवं सालबनी (पश्चिम बंगाल) में स्थित नई नोट छापने वाली प्रेसों के प्रबंध के लिए रिज़र्व बैंक के पूर्ण स्वामित्वाधिकार में 'भारतीय रिज़र्व बैंक नोट मुद्रण लिमिटेड' (कंपनी अधिनियम, 1956 के अधीन पंजीकृत) की स्थापना की गई।

39. रिज़र्व बैंक के लिए एक अन्य उल्लेखनीय उपलब्धि मौद्रिक म्यूजियम की स्थापना करना रही है।

मानव संसाधन प्रबंध :

40. मानव संसाधन विकास विभाग बैंक की दक्षता में वृद्धि एवं कार्यस्थल तथा व्यक्तिगत स्तर पर जीवन की सर्वांगीण गुणवत्ता के लिए परिस्थितियों के निर्माण के लिए उत्प्रेरित करने में सक्रिय प्रयास कर रहा है।

41. इन प्रयासों से न सिर्फ जटिल प्रक्रियाओं में कमी आई है, बल्कि लेन देन की लागत (ट्रांजैक्शन कॉस्ट) भी घटी है।

विदेशी मुद्रा प्रबंध :

42. मुद्रा नियंत्रण से जोर हटकर मुद्रा प्रबंध पर स्थिर होने के कारण पूर्ववर्ती विदेशी मुद्रा नियंत्रण विभाग के नियंत्रण तंत्रों से संबधित एक विस्तृत कार्य क्षेत्र का लोप हो गया तथा परिणाम स्वरूप विभाग के आकार में कमी आई एवं उसका नाम बदल कर विदेशी मुद्रा विभाग रखा गया।

सरकार का बैंकर :

43. समय के साथ केंद्र एव राज्य सरकारों के बैंकिग एवं लेखा परिचालन में सुधार के लिए किए प्रयासों में प्रौद्योगिकी के अंगीकरण से गुणात्मक वृद्धि हुई।

44. अब केंद्रीय एवं राज्य सरकारें केंद्रीय लेखानुभाग, नागपुर की सुरक्षित वेबसाइट पर अपने जमाशेष की प्रतिपल नवीनतम स्थिति की जानकारी पा सकती हैं।

45. प्रत्यक्ष करों की आन लाइन कर लेखांकन प्रणाली परियोजना अप्रैल 2004 से काम कर रही है। परियोजना में 33 बैंक एवं उनकी 12,800 शाखाएं शामिल है तथा करदाता आंकड़ों का बैंकों से सीधे सरकारी खातों में संप्रेषण इसका उद्देश्य है। रिज़र्व बैंक इस प्रणाली की लगातार निगरानी करता है।

   i) भारतीय रिज़र्व बैंक निगरानी में निम्नलिखित महत्वपूर्ण प्रणालियों की परिकल्पना की गई है : उत्पाद एवं सेवा कर की इलेक्ट्रोनिक लेखांकन प्रणाली (इसीएस्ट) परियोजना जिसमें व्यापक ई-भुगतान मोड्यूल की अवधाराणा की गई है;

   ii) एम सी ए - 21 (एमसीए 21) कंपनी मामलों के मंत्रालय की एक प्रतिष्ठित, मिशन स्तर की, ई-गवर्नेंस परियोजना है जिसमें कंपनी मामलों का मंत्रालय के राष्ट्रव्यापी कार्यालय नेटवर्क द्वारा प्रदत्त सभी सेवाओं से संबधित सुरक्षित इलेक्ट्रोनिक फाइलिंग (ई फाइलिंग) माध्यम से सूचना का आदान-प्रदान करने की आवधारणा की गई है :

अनुसंधान एवं प्रकाशन

46. बैंकिंग एवं वित्तीय क्षेत्र के समग्र परिचालनों को शामिल करते हुए एवं भारतीय अर्थव्यवस्था के बारे में सूचना प्रसारण हेतु, समय के साथ, सांख्यिकीय, आर्थिक एवं नीति संबंधित नए प्रकाशनों की शुरुआत की गई। ये प्रकाशन प्रिंट एवं सीडी रोम माध्यमों के अतिरिक्त बैंक की वेबसाइट पर उपलब्ध किए जाते हैं। इन प्रकाशनों ने घरेलू एवं अंतरराष्ट्रीय क्षेत्रों में महती प्रशंसा अर्जित की है।

47. वर्ष 1998-99 से मुद्रा एवं वित्त रिपोर्ट के लिए विषयाधारित दृष्टिकोण का कार्यान्वयन एक महत्वपूर्ण निर्णय है। ये रिज़र्व बैंक को समसामयिक महत्व के विषयों को संबोधित करने में समर्थ बनाते हैं

48. भारतीय रिज़र्व बैंक प्रकाशनों के व्यापकतर प्रचलन के लिए सभी क्षेत्रीय कार्यालयों में विक्रय एवं प्रसार कक्ष खोले गए हैं।

परिशिष्ट 9.4
रिज़र्व बैंक की तुलनपत्र कार्यात्मक संरचना

	1990-91	1991-92	1992-93	1993-94	1994-95	1995-96	1996-97	1997-98
1	2	3	4	5	6	7	8	9
भारतीय रिज़र्व बैंक तुलन पत्र (सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात)	**11.65**	**21.83**	**21.62**	**21.09**	**21.54**	**19.82**	**18.29**	**19.26**
मुद्रा का प्रबंध								
कुल जारी नोट (करोड रु.)	53,807	62,290	69,795	83,832	1,02,342	1,20,107	1,34,907	1,48,550
करेंसी चेस्टों की संख्या	3864	3902	3976	4059	4099	4101	4128	4157
कुल रिपोजिटरी एवं छोटे सिक्कों के डिपो	3422	3590	3670	3762	3806	3898	3957	4030
वाणिज्यिक बैंकों का नियमन और पर्यवेक्षण								
बैंकों की संख्या	272	272	272	272	281	281	287	300
शाखाओं की संख्या	60220	60570	61169	63755	64234	64937	65562	66408
शहरी सहकारी बैंक								
बैंकों की संख्या	1397	1401	1339	1400	1431	1501	1653	1502
विकास वित्त संस्थाओं								
सं.	8	8	10	10	10	10	9	10
गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों								
सं.	10127	11278	11010	11270	10725	12530	-	1420
ऋण प्रबंध								
बाजार उधार (केंद्र एवं राज्य) करोड़ रुपए	11,558	12,284	17,690	54,533	43,231	46,783	42,688	67,386
सकल नीलामी								
1. 14 दिवसीय खजाना बिल	-	-	-	-	-	-	-	69,236.6
2. 91 दिवसीय खजाना बिल	-	-	1,350	15,012	12,450	24,050	25,200	13,200
3. 182 दिवसीय खजाना बिल	3,425	7,318	245	-	-	-	-	-
4. 364 दिवसीय खजाना बिल	-	-	8,797	20,303	16,857	1,875	8,240	16,246.6
द्वितीयक बाजार - परिमाण (अरब रुपए)	-	-	-	-	-	-	1,229	1,857
रेपो (% अंश)	-	-	-	-	-	-	23.6	13.26
एकमुश्त (% अंश)	-	-	-	-	-	-	76.4	86.74
विदेशी मुद्रा परिचालन								
विदेशी मुद्रा भंडार (मिलियन अमरिकी डालर)	5,834	9,220	9,832	19,254	25,186	21,687	26,423	29,367
भुगतान एवं निपटान								
समाशोधित चेक (भा.रि.बैं.) लाखों में सं.	3518	4132	4618	4736	4854	4398	4715	5040
कारोबार राशि का परिमाण (भा.रि.बैंक) रुपए करोड़	18,39,460	29,22,990	32,37,473	31,98,789	35,14,402	38,02,485	45,68,598	55,62,533

	1998-99	1999-00	2000-01	2001-02	2002-03	2003-04	2004-05
1	10	11	12	13	14	15	16
भारतीय रिज़र्व बैंक तुलन पत्र (सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात)	19.33	18.59	19.50	19.96	21.10	22.09	21.99
मुद्रा प्रबंध							
कुल जारी नोट (करोड़ रु.)	1,72,573	1,92,535	2,12,936	2,44,655	2,75,444	3,19,761	3,61,229
करेंसी चेस्टों की संख्या	4181	4242	4386	4422	4486	4454	4451
कुल रिपोजिटरी एवं छोटे सिक्कों के डिपो	4046	4058	3970	3962	4076	4103	4083
वाणिज्यिक बैंकों का नियमन और पर्यवेक्षण							
बैंकों की संख्या	301	298	300	297	292	290	284
शाखाओं की संख्या	67157	67868	67937	68195	68500	69170	70324
शहरी सहकारी बैंक							
बैंकों की संख्या	1748	2050	1942	1937	1941	1926	1872
विकास वित्त संस्थाओं							
सं.	11	11	11	10	10	8	8
गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों							
सं.	1536	1005	981	910	875	777	573
ऋण प्रबंध							
बाजार उधार (केंद्र एवं राज्य) करोड़ रुपए	1,06,067	1,13,336	1,28,483	1,52,508	1,81,979	1,98,157	1,45,602
सकल नीलामी							
1. 14 दिवसीय खजाना बिल	18,150	16,453	10,480	1,100		-	-
2. 91 दिवसीय खजाना बिल	16,697	8,155	7,255	20,216	26,402	36,789	1,00,592
3. 182 दिवसीय खजाना बिल	-	2,900	2,600	300		-	-
4. 364 दिवसीय खजाना बिल	10,200	13,000	15,000	19,588	26,126	26,136	47,132
द्वितीयक बाजार - परिमाण (अरब रुपए)	2,272	5,393	6,981	15,739	19,557	24,334	21,894
रेपो (% अंश)	17.47	15.34	18.05	23	28.8	36.31	58.91
एकमुश्त (% अंश)	82.53	84.66	81.95	77	71.2	63.69	41.09
विदेशी मुद्रा परिचालन							
विदेशी मुद्रा भंडार (मिलियन अमरिकी डालर)	32,490	38,036	42,281	54,106	76,100	1,12,959	1,41,514
भुगतान एवं निपटान							
समाशोधित चेक (भा.रि.बैं.) लाखों में सं.	4891	5167	5270	5377	5980	6241	7130
कारोबार राशि का परिमाण (भा.रि.बैं.) रुपए करोड़	62,09,523	78,95,492	91,89,683	1,09,47,391	1,09,78,762	91,78,751	83,54,830

X समापन टिप्पणियां

10.1 इस रिपोर्ट में सन् 1935 में भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना के पश्चात् भारत में केंद्रीय बैंकिंग के बदलते हुए लक्षणों का वर्णन करने का प्रयास किया गया है। बैंक द्वारा संपादित कार्यों का प्रतिपादन बैंक को सौंपी गई विभिन्न जिम्मेदारियों से हुआ है और बैंक द्वारा किए जाने वाले मुख्य कार्य यथा- नियमन और पर्यवेक्षण, वित्त बाजार मौद्रिक एवं राजकोषीय अंतरापृष्ठ तथा तुलनपत्र की गत्यात्मकता का इस रिपोर्ट में विशेष रूप से वर्णन किया गया है। मुद्रा एवं वित्त रिपोर्ट के पिछले संस्करण (भारतीय रिजर्व बैंक 2005) में मौद्रिक नीति के बदलते आयामों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया था। अन्य केंद्रीय बैंकों की तरह रिजर्व बैंक के संगठनात्मक एवं परिचालन विकास में कार्यात्मक उत्तरदायित्वों की झलक मिलती है जिनकी उत्पत्ति बदलती हुई सामाजिक-आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों में इसके इतिहास के साथ हुई।

10.2 पिछली शताब्दी में सारे विश्व में केंद्रीय बैंकों नें समष्टिगत आर्थिक नीति के निर्माण में उत्तरोत्तर महती भूमिका निभाई तथा वे अपने समक्ष आनेवाली नवीन चुनौतियों से जूझने के लिए लगातार अपनी नीतियों में अभिसंस्कार करते रहे हैं। विशेषत: सन 1997 के दक्षिण-पूर्व एशियाई आर्थिक संकट के बाद मौद्रिक नीति के प्रेषण माध्यमों को सशक्त बनाने के लिए वित्त बाजार तथा उससे संबंधित संस्थाओं के विकास में केंद्रीय बेंकों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। विकासमान देशों के केंद्रीय बैंक नीति निर्माण की विधा में अत्यधिक परिपक्व हो गए हैं तथा भुगतान प्रणाली और बैंकिंग तकनीक के क्षेत्रों में सर्वश्रेष्ठ कार्यप्रणालियां अपना कर अग्रणी बन गए हैं। वास्तव में अनेक केंद्रीय बैंक विभिन्न प्रकार के उत्तरदायित्व लेकर ऐसी बहुकार्यक्षम संस्था बन गए हैं जो मौद्रिक नीति का संचालन, बैंकिंग प्रणाली का विनियमन एवं पर्यवेक्षण तथा भुगतान एवं निपटान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के साथ-साथ अर्थव्यवस्था में वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने का प्रयास करती हैं। यह जानना रुचिकर होगा कि आरंभकाल में केंद्रीय बैंकिंग अनेक अनौपचारिक नियमों, परंपराओं एवं स्वाधिरोपित आचरणसंहिता के अनुसार अपना कार्य करते थे। इन नियमों, परंपराओं तथा संहिताओं को बाद में कानून के रूप में कूटबद्ध किया गया जिनपर आधुनिक केंद्रीय बैंकिंग का कार्यव्यवहार आधारित है।

10.3 केंद्रीय बैंकों के कार्यों का विकास उनकी अपनी-अपनी वित्तप्रणालियों के समानांतर हुआ तथा उन्होंने मौद्रिक नीति के प्रत्यक्ष साधनों से परोक्ष साधनों के प्रयोग की यात्रा सफलतापूर्वक पूरी की। लेकिन यह अत्यधिक महत्वपूर्ण है कि 1990 की दशक की शुरुआत से मौद्रिक नीति के लक्ष्य उत्तरोत्तर केंद्रीभूत, सुस्पष्ट तथा केंद्रीय बैंकों के मूल्य एवं वित्तीय स्थिरता सुनिश्चितता के लक्ष्यों के अनुरूप होते गए हैं।

10.4 हाल के वर्षों में ज्यों-ज्यों नियमन एवं पर्यवेक्षण पर जोर बढ़ता गया है त्यों-त्यों केंद्रीय बैंक वित्तीय स्थिरता पर उत्तरोत्तर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। वाणिज्यिक बैंक, सामान्यत: वित्तीय प्रणाली का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा हैं, अत: उनका नियमन गैर वित्तीय फर्मों की अपेक्षा ज्यादा कठोर होता है। क्योंकि जनता से जमाराशि उगाहने में वे अन्य फर्मों की तुलना में बेहतर स्थिति में रहते हैं। तीव्र गति से जारी भूमंडलीकरण, वित्तबाजारों के समेकन एवं पूंजी की अबाध गतिशीलता के कारण नियमन का कार्य जोखिम केंद्रित बनता जा रहा है। अनेक केंद्रीय बैंकों द्वारा बासल नियमों, विशेषकर बासल द्वितीय, को अपनाने से नियमन एवं जोखिम प्रबंधन पर न केवल सबका ध्यान केंद्रित हुआ है बल्कि इससे विभिन्न देशों के बैंकों में एकसमान मानकों के प्रसार में मदद मिली है।

10.5 केंद्रीय बैंक विशेषज्ञता के अधिष्ठान बन गए हैं तथा राष्ट्रीय एवं विदेशी सरकारें एवं संस्थाएं उनपर सामान्यत: विशेषज्ञ सलाह के लिए निर्भर करते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में केंद्रीय बैंकों की कार्यात्मक भूमिका निधारित करने में आर्थिक अनुसंधान का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अपने कायक्षेत्र में हो रहे निरंतर परिवर्तनों के बावजूद केंद्रीय बैंक वित्तीय प्रणाली में केंद्रीय भूमिका निभा रहे हैं तथा हम यह आशा कर सकते हैं कि वे नीति निर्माण और वित्तीय स्थिरता बनाए रखने में महत्वपूर्ण योगदान देते रहेंगे।

I. भारत में केंद्रीय बैंकिंग का विकास

10.6 केंद्रीय बैंक के विकास का कोई सार्वभौम प्रतिमान नहीं है। इसके पर्यावरण में हो रहे लगातार परिवर्तनों के कारण भारतीय रिजर्व बैंक का अनवरत कायापलट होता रहा है तथा स्पष्टत: भिन्न सरकारों के साथ बैंक ने सफलतापूर्वक अपने उत्तरदायित्व को निभाया है। स्थापना के बाद से ही बैंक की विकास यात्रा में परिवर्तन ही एक मात्र स्थिर वस्तु रही है। हालांकि बैंक की स्थापना औपनिवेशिक सरकार द्वारा पारित एक अधिनियम के अधीन की गई थी तथा बैंक औपनिवेशिक सरकार के नियंत्रण के काम करता था तथापि अपने प्रारंभिक काल में बैंक एक निजी संस्था था। प्रारंभ में बैंक का केंद्रीय कार्यालय कलकत्ता में स्थापित

किया गया था जिसे दिसंबर 1937 में स्थायी रूप से आर्थिक राजधानी बंबई स्थानांतरित की गई। निर्गम और बैंकिंग विभागों की स्थापना करना बैंक का विधिक उत्तरदायित्व था अत: इन विभागों की स्थापना बैंक की स्थापना के साथ ही की गई। विभिन्न आर्थिक परिस्थितियों एवं राजनैतिक हालात में बैंक को सौंपे गए उत्तरदायित्वों के निर्वाह हेतु समय-समय पर अन्य विभागों की स्थापना की गई।

10.7 स्वतंत्रता के बाद बैंक की विकास यात्रा का महत्वपूर्ण लक्षण घरेलू आवश्यकताओं तथा अनिवार्यताओं की पूर्ति करने तथा सर्वोत्तम अंतरराष्ट्रीय व्यवहारों को लागू करने के बीच के विरोधाभासों को पाटने में दिखाई गई लोच है। दशकों के दौरान केंद्रीय बैंकिंग कार्यों में आए परिवर्तन को विभिन्न चरणों में दर्शाया जा सकता है। शुरुआती वर्षों में नोट निर्गम तथा सरकार का बैंकर होना बैंक के मुख्य कार्य थे। बैंक सरकार को बहुत सी सेवाएं प्रदान करता था, युद्ध के लिए धन उपलब्ध कराता था, मुद्रा विनिमय का नियंत्रण करता था। बैंक ने औपनिवेशिक सरकार से स्वतंत्र भारत के मुद्रा प्रबंधन का सुचारु संक्रमण सुनिश्चित किया। प्रारंभिक दौर में बैंक अर्थव्यवस्था में केवल ऋण की मांग एवं आपूर्ति का नियमन करता था तथा औपचारिक मौद्रिक नीति की घोषणा नहीं करता था। बैंक दर, मुक्तबाजार परिचालन और आरक्षी अनुपात ऋण उपलब्ध्ता को नियंत्रित करने के मुख्य साधन थे। सन 1949 में अनेक बैंकों के असफल होने के परिप्रेक्ष्य में बनाए गए बैंकिंग नियमन अधिनियम और भारतीय रिजर्व बैंक के राष्ट्रीकरण के बाद बैंक की नियामक एवं पर्यवेक्षी भूमिका पर ध्यान केंद्रित किया गया।

10.8 एक विकासशील देश के केंद्रीय बैंक के रूप में रिजर्व बैंक के कार्यक्षेत्र पर सदियों से जारी औपनिवेशिक शासन के कारण लगे नियंत्रण समाप्त हो गए तथा पंचवर्षीय योजनाओं की शुरुआत से, योजना के वित्तपोषण एवं बचत और निवेश को प्रोत्साहन देने वाली संस्थाओं के संस्थापन में बैंक की भूमिका से, बैंक के कार्य अधिक विविधतापूर्ण बन गए। रिजर्व बैंक से यह अपेक्षा की जाती थी कि वह अर्थव्यवस्था को वृद्धि की राह पर अग्रसर करने का प्रयास कर रही सरकार के समक्ष आनेवाले संसाधनाभाव का वित्तपोषण करे। राजकोषीय घाटे के स्वत:मुद्रीकरण की नीति, जिसके प्रभाव से मौद्रिक नीति का असर कम हो जाता है, सन् 1955 में शुरु की गई तथा सन् 1994 तक इसका खूब प्रयोग किया गया। 1960 तथा 1970 के दशकों में, कमजोर वित्तीय प्रणाली तथा अविकसित वाणिज्यिक बैंक नेटवर्क के परिप्रेक्ष्य में संस्थाविकास का कार्य बहुत महत्वपूर्ण बन गया। अर्थव्यवस्था के क्षेत्रविशेष के विकास के लिए विशेष विकास संस्थाओं की स्थापना की गई। इसके उत्तरवर्ती विकासकाल की मुख्य घटनाओं में बैंकों का राष्ट्रीकरण एवं निदेशित प्राथमिक क्षेत्र उधार शामिल है तथा इस काल में अर्थव्यवस्था में अनेक नियंत्रणों एवं नियमनों का बोलबाला था।

10.9 1980 के दशक में मौद्रिक नीति पर विशेष ध्यान दिया गया। अर्थक्षम स्थानों सहित बैंकिंग नेटवर्क के भौगोलिक विस्तार, ऋण का क्षेत्रीय आबंटन, उच्च आरक्षी अनुपात तथा कुछ क्षेत्रों में रियायती ब्याज दरों के के कारण बैंक की आस्तियों की गुणवत्ता एवं लाभप्रदता पर बुरा प्रभाव पड़ा। राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण के उच्चस्तर, सरकार द्वारा बाजार से गैर बाजार दरों पर उधार लेने तथा प्रशासित ब्याज दरों के कारण वित्तास्तियों के बाजार का विकास धीमा रहा। वित्तबाजार की कमविकसित अवस्था से नीतिसंकेतों के संप्रेषण पर बुरा असर पड़ा।

10.10 1990 के दशक में अर्थव्यवस्था के उदारीकरण की प्रक्रिया के दौरान रिजर्व बैंक के कार्यों में कई नए आयाम जुड़ गए। वित्तबाजार में लाए गए सुधारों के परिप्रेक्ष्य में मौद्रिक नीति के ढ़ांचे में समायोजन किया गया एवं पारंपरिक केंद्रीय बैंक कार्यों को पुनर्नवीकृत किया गया तथा उनका भूमंडलीय व्यवहार, तकनीकी विकास तथा घरेलू आवश्यकताओं के साथ सामंजस्य किया गया। सुधारों के प्रथम चरण में बैंकिंग उद्योग की मुक्ति, प्रूडेंशियल नोर्म्स को लागू करके बैंकिंग, गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियों एवं वित्तीय संस्थाओं के ढ़ांचे के सुदृढ़ीकरण तथा भुगतान और निपटान प्रणाली में सुधार पर ध्यान दिया गया। दूसरे चरण में चरणबध्द तरीके से वित्तप्रणाली में प्रूडेंशियल नोर्म्स को अपनाकर अंतरराष्ट्रीय मानकों को प्राप्त करने पर जोर दिया गया।

10.11 सुधारों के प्रारंभिक वर्षों में वित्तीय प्रणाली में आमूलचूल परिवर्तन लाने के लिए रिज़र्व बैंक ने कई नवोन्मेषी उपाय किए। ब्याजदरों की मुक्ति, आरक्षी अनुपातों में कमी एवं उनको युक्तिसंगत बनाना, राजकोषीय घाटे के स्वत:मुद्रीकरण की समाप्ति, बैंक दर को सक्रिय करना, तथा मौद्रिक नीति के अप्रत्यक्ष साधनों, विशेषत: दैनंदिन तौर पर लिक्विड़िटी को नियंत्रण करने के लिए लिक्विडिटी एडजस्टमेंट फेसिलिटी इनमें प्रमुख हैं। हालांकि एक दिवसीय ब्याजदरों का कोई औपचारिक लक्ष्यांक नहीं है तथापि लिक्विड़िटी एडजस्टमेंट फेसिलिटी की सहायता से रिज़र्व बैंक बैंक आरक्षी अनुपातों का लक्ष्य रखने की आवश्यकता को कम करके ब्याजदर की घटबढ़ सीमा सुनिश्चित करने पर अधिक ध्यान देने में सक्षम हुआ है। सुधारों को सामान्यत: क्रमिक रूप से तथा विभिन्न तकनीकी समितियों तथा उपदलों के माध्यम से बाजार भागीदारों, नीति-निर्माताओं, अंतरराष्ट्रीय विशेषज्ञों और शिक्षा क्षेत्र के विद्वानों के साथ व्यापक विचारविमर्श के बाद लागू किया गया है।

10.12 मुद्रा नीति की संरचना के परिप्रेक्ष्य में चलनिधि प्रबंध के क्षेत्र में अधिक क्रियाशीलता रही है तथा लघु अवधि बाजार पर अधिक ध्यान केंद्रित किया गया। उन्मुक्त ढांचे में बाजार शक्तियों के महत्व में वृद्धि होने के साथ-साथ मौद्रिक नीति के आधारभूत संप्रेषण ढांचे में बदलाव आए हैं उदाहरणार्थ मात्रात्मक परिवर्तनीय कारकों के मुकाबले ब्याज

दरों एवं विदेशीमुद्रा दरों का महत्व बढ़ा है। बाह्य क्षेत्र के खुलने तथा पूंजी प्रवाह से मुद्राप्रसार लक्ष्यबेधन ढ़ांचे पर दबाव बढ़ा। इन घटनाओं के परिप्रेक्ष्य में मुद्रा नीति ढ़ांचे की समीक्षा की जरूरत महसूस की गई तथा इससे निकले निष्कषों के अनुरूप रिजर्व बैंक ने मुद्रा नीति निर्माण हेतु सन 1998 में "बहुविध संकेतक दृष्टिकोण" को अपनाया।

II. विनियमन और पर्यवेक्षण

10.13 स्वतंत्रता के बाद रिज़र्व बैंक की नियामक और पर्यवेक्षी भूमिका महत्वपूर्ण बन गई तथा सन 1969 में वाणिज्यिक बैंकों के राष्ट्रीकरण के उपरांत यह भूमिका निरंतर केंद्र बिंदु में रही है। वर्तमान में देश की जटिल वित्तीय प्रणाली, वाणिज्यिक एवं सहकारी बैंक, वित्तीय संस्थाएं तथा गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां जिसका एक महत्वपूर्ण भाग हैं, का नियमन एवं पर्यवेक्षण भिन्न-भिन्न प्राधिकारियों द्वारा किया जाता है। रिज़र्व बैंक वित्तीय प्रणाली के एक बड़े भाग, जिसमें वाणिज्यिक एवं सहकारी बैंक, कुछ अन्य वित्तीय संस्थाएं तथा जमाराशि उगाहने वाली गैर बैंकिंग वित्तीय कंपनियां शामिल हैं, का नियमन और पर्यवेक्षण करता है। प्रारंभिक वर्षों में विकासशील अर्थव्यवस्था की ऋण मांग की पूर्ति करना ही नियमन का उद्देश्य था तथा इस दौर में बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ बनाने हेतु कई सफल उपाय किए गए। तदुपरांत अनिवार्य विलयन एवं समाप्ति द्वारा बैंको के परिचालन को मजबूत करना एवं जमा बीमा योजना के माध्यम से छोटे जमाकर्त्ताओं के धन की सुरक्षा सुनिश्चित करना बैंक के विनियामक और पर्यवेक्षी कार्य का प्राथमिक उद्देश्य बना। सामाजिक नियंत्रण के प्रादुर्भाव के बाद रिजर्व बैंक की विनियामक और पर्यवेक्षी भूमिका में नए युग का सूत्रपात हुआ जिसके फलस्वरूप राष्ट्रीकरण, प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र को निदेशित ऋण उपलब्धता तथा प्रशासित ब्याज दर व्यवस्था अस्तित्व में आए। सन 1951 के बाद बैंकिंग प्रणाली में आई उल्लेखनीय प्रगति एवं भौगोलिक विस्तार के बावजूद यह देखा गया कि कई ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र तथा अर्थव्यस्था के कई उच्च प्राथमिकता प्राप्त क्षेत्र बैंकिंग प्रणाली की सेवाओं से वंचित रह गए जिससे बैंकिंग क्षेत्र को सामाजिक नियंत्रण में लाने की आवश्यकता महसूस की गई। राष्ट्रीकरण के फलस्वरूप ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग नेटवर्क का विस्तार हुआ तथा निजी बचत को समेटना संभव हुआ। परंतु इस प्रकार एकत्रित निजी जमाराशि का प्रयोग मुख्यत: सरकार को उधार देने के लिए किया गया तथापि कुछ सीमा तक अबतक उपेक्षित वास्तविक ऋणावस्यकताओं की पूर्ति भी की गई। सामाजिक नियंत्रण के उद्देश्यों की पूति के लिए रिजर्व बैंक ने बैंकों के राष्ट्रीकरण का समर्थन किया। इसके कारण संस्थागत प्रबंधन में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए तथा बैंकिंग प्रणाली के विनियमन और पर्यवेक्षण को सशक्त बनाया गया।

10.14 वित्तीय क्षेत्र के अत्यधिक नियमन एवं दमन से 1970 एवं 1980 के दशकों में वित्तीय प्रणाली में बड़े पैमाने पर अर्थक्षमता एवं अमान्यताओं का जन्म हुआ।1990 के दशक मे लाए गए सुधारों के फलस्वरूप व्यष्टि स्तर उपायों के स्थान पर विवेकपूर्ण नियमन हेतु समष्टि स्तर उपायों का प्रयोग, सांविधिक पूर्वाधिकरण में कटौती, प्रवेश स्तर मानदंडों में ढिलाई तथा बासल नियमों के मद्देनजर जोखिम उन्मुखी पर्यवेक्षण तथा अंतरराष्ट्रीय लेखा मानकों को लागू किया गया।

10.15 वित्तीय प्रणाली का समेकन सुनिश्चित करने और आर्थिक गतिविधि के स्तर को बनाए रखने के लिए नियंत्रण की द्वैधता के कारण युक्तिचालन की सीमित शक्ति के बावजूद रिज़र्व बैंक ने सहकारी बैंकों, विशेषत: शहरी सहकारी बैंकों में सुधार लाने के लिये कदम उठाए हैं। इस दिशा में किए गए विनियामक और पर्यवेक्षी उपायों का उद्देश्य शहरी सहकारी बैंकों को वित्तीय प्रणाली की मुख्यधारा में लाना है। द्विविध नियंत्रण से उत्पन्न होने वाली जटिलताओं के मद्देनजर रिज़र्व बैंक को संकटकाल की स्थितियों में कार्यवाही करने तथा विशेष संस्थापरक विकास कार्ययोजना निर्माण की शक्ति देने के लिए रिज़र्व बैंक और कुछ राज्य सरकारों में समझौते किए गए हैं।

10.16 मार्ग में आनेवाली कठिनाइयों के बावजूद भारत का बैंकिंग क्षेत्र स्वयं को अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुसार ढालने का प्रयास कर रहा है। विश्वस्तरीय श्रेष्ठता हासिल करने के लिए रिजर्व बैंक सुरक्षा और सुदृढ़ता का संवर्द्धन करने के साथ-साथ बैंकिंग क्षेत्र को नवीन प्रौद्योगिकी, संशोधित ऋण जोखिम आगणन, लगातार वित्तीय नवीकरण, बेहतर आंतरिक नियंत्रण और समुचित विधि प्रणाली द्वारा नवीकरण एवं प्रतिस्पर्धा की स्वच्छंदता दी है।

10.17 इस क्षेत्र में विदेशी अनुभव के विपरीत, जहां वित्तीय क्षेत्र सुधारों के परिणामस्वरूप पूर्ववर्त्ती सार्वजनिक वित्तीय मध्यस्थ संस्थाओं का निजीकरण हुआ, भारत में बैंकिंग क्षेत्र सुधार चरणबद्ध तरीके से लागू किए गए। बाजार अनुशासन, जो निजीकरण का एक महत्वपूर्ण लक्ष्य है, को लागू करने के लिए सार्वजनकि बैंकों को चरणबध्द तरीके से बाजार से पूंजी उगाहने तथा पूंजी बाजार मे सूचीबद्ध होने की अनुमति दी गई। वाणिज्यिक बैंकों पर मार्च 2007 से बासल द्वितीय समझौते के लागू होने के परिप्रेक्ष्य में पूंजी अभाव को पहचानने तथा उसका मात्रात्मक आकलन करने हेतु पर्यवेक्षी क्षमता का निर्माण करने के लिये उपाय करने आरंभ कर दिए हैं। अंतत:, बैंकिंग क्षेत्र के भविष्य के लिए समेकन, प्रतिस्पर्धा एवं जोखिम प्रबंध के महत्व को ध्यान मे रख कर रिजर्व बैंक लगातार निगम सुशासन एवं वित्तीय समावेषन पर बल दे रहा है।

10.18 भुगतान और निपटान प्रणाली के महत्व को समझ कर सुचारु अंतरबैंक लेनदेन सुनिश्चित करने हेतु मार्च 2004 में तत्काल सकल भुगतान प्रणाली (आरटीजीएस) शुरू की गई। रिज़र्व बैंक द्वारा किए गए उपायों के प्रति वित्तीय क्षेत्र के सकारात्मक प्रतिसाद एवं बैंकिंग प्रणाली की परिपक्वता के मद्देनज़र रिज़र्व बैंक ने खुदरा भुगतान और निपटान प्रणाली से अपना हाथ खींच लिया है तथा तत्संबंधी क्रियाकलापों पर केवल नियामक निगरानी रखने का नीतिगत निर्णय किया है।

10.19 बेहतर रखरखाव, उत्तम ग्राहकसेवा तथा सर्वांगीण प्रणालीगत निपुणता प्राप्त करने में सूचना प्रौद्योगिकी आधारित उपायों की क्षमता के मद्देनजर रिज़र्व बैंक ने बैंकिंग क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी के कार्यान्वयन में प्राचेतस् की भूमिका निभाई है और बैंकों एवं अन्य वित्तीय मध्यस्थों द्वारा अंगीकृत कई नवीन प्रक्रियाएं तथा उनके द्वारा प्रदत्त नए उत्पाद एवं सेवाएं सूचना प्रौद्योगिकी पर निर्भर हैं।

III. वित्तीय बाज़ार की गतिविधियां

10.20 संचरण तंत्र और मौद्रिक नीति के परिचालन में उनकी महत्वपूर्ण भूमिका के कारण अन्य केंद्रीय बैंकों की भांति रिज़र्व बैंक ने भी वित्तीय बाज़ारों विशेषतः मुद्रा, सरकारी प्रतिभूति और विदेशी मुद्रा बाज़ारों पर विशेष ध्यान दिया है। रिज़र्व बैंक अल्पावधि ऋणप्रवाह को संतुलित करने के लिए मुद्रा बाज़ार में एवं शेष विश्व के साथ अनुबद्धताओं के कारण विदेशी मुद्रा बाज़ार में हस्तक्षेप करता है। इसी प्रकार संपूर्ण ऋण बाजार में बाज़ार लिखतों के मूल्यन में मानक के रूप में प्रयोग किए जाने के कारण राजकीय प्रतिभूति बाज़ार महत्वपूर्ण बन गया है।

10.21 भूतकाल में सांविधिक प्रावधानों, विनियमन और नीतियों द्वारा बहुविध नियंत्रित एवं दमित वित्तीय बाज़ारों में दक्षता, स्थिरता और स्वास्थ्य का विकास करने के लिए रिज़र्व बैंक द्वारा सजग प्रयास किए जाने की आवश्यकता बढ़ी।अनेक कारण, जिनमें प्रशासित ब्याजदर, निदेशित ऋणप्रवाह, कमजोर बैंकिंग ढांचा और समुचित लेखांकन एवं जोखिम प्रबंध प्रणालियों का अभाव प्रमुख हैं, सन 1990 तक बाज़ार विकास में बाधा बने रहे। सुधार प्रक्रिया के शुरुआती दौर में ही यह स्पष्ट हो गया कि प्रतिबंधों के निराकरण मात्र से सक्षम वित्तीय बाज़ारों का स्वत: विकास नहीं होगा। इसको लक्षित करके रिजर्व बैंक ने आवश्यक संस्थागत परिवर्तन एवं बाजार की व्यष्टिगत संरचना में परिवर्तन लाकर बाजारों के विकास की प्रक्रिया को सुगम बनाया। तत्संबंधी कठिनाइयों का निराकरण करने तथा बाजार विकास में सहायक पर्यावरण बनाने के लिये रिजर्व बैंक ने कई कदम उठाए। समुचित प्रणालियों और प्रक्रियाओं के विकास, प्रौद्योगिकी एवं बाजार व्यवहार ने सुधारों की गति का निर्धारण किया। भारत के अनुभव से इस बात का संकेत मिलता है कि वित्तीय बाज़ार का विकास एक जटिल प्रक्रिया है तथा यह सुदृढ़ वित्तीय संस्थाँओं की उपस्थिति, अनुकूल कानूनी ढांचे, तकनीकी सहायता के स्तर एवं मैत्रीपूर्ण पर्यावरण जैसे कई कारकों पर निर्भर करती है।

10.22 भारत में रिज़र्व बैंक ने बाज़ार सुधार की एक नपी-तुली एवं सुअनुकूल नीति का पालन किया। आज बाजार का आकार, गहराई एवं क्रियाशीलता बहुत विकसित हो गए हैं जिससे मौद्रिक प्राधिकारी द्वारा मौद्रिक नीति के अप्रत्यक्ष उपायों क़े लचीले प्रयोग की राह आसान हुई है। इससे रिज़र्व बैंक का भारत सरकार एवं वित्तबाजार के अन्य नियामकों के साथ सामंजस्य बढ़ा है तथा भारत में वित्तीय बाज़ारों के सुचारु विकास में सहायता मिली है। हालांकि अब तक किए गए उपायों से गहन, व्यापक एवं द्रव मुद्रा एवं राजकीय प्रतिभूति बाजारों का विकास हुआ है तथापि सुधार की प्रक्रिया अभी जारी है। भारतीय वित्तीय बाज़ारों एवं वैश्विक बाज़ारों में आए एकीकरण के परिप्रेक्ष्य मे डोमिनो प्रभाव का असर कम करने के लिए अंतरराष्ट्रीय सर्वोत्तम व्यवहार के साथ सामंजस्य बनाने हेतु रिजर्व बैंक परिचालन प्रक्रियाओं और उपकरणों तथा वित्तीय संस्थाँओं, बाज़ारों और वित्तीय इंफ्रास्ट्रक्चर में लगतार परिष्कार कर रहा है।

10.23 पिछले सात दशकों के दौरान बाजार की गतिविधियों की समीक्षा से यह स्पष्ट होता है कि बैंकिंग क्षेत्र , मौद्रिक नीति और वित्तीय बाज़ारों के सुधारों में घनिष्ठ संबंध है तथा सुधार प्रक्रिया का पूरा लाभ उठाने व विध्वंसात्मक रुकावटों से बचने के लिए यह आवश्यक है कि इनका साथ-साथ विकास किया जाए। वित्तीय बाज़ारों ने बैंकों को और वित्तीय संस्थाओं को अपने चलनिधि और खजाना परिचालनों का अच्छा प्रबंध करने में सक्षम बनाया। वित्तीय बाजारों के विकास से न सिर्फ मौद्रिक नीति संचरण प्रणाली सुदृढ़ बनी है बल्कि इससे मौद्रिक नीति के केंद्रबिंदु को क्रमश: ऋण आबंटन से मुद्रास्फीति लक्ष्य तथा अंत में बहुसंकेतक दृष्टिकोण पर स्थानांतरित किया है।

IV. मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों का पारस्परिक प्रभाव

10.24 स्वतंत्रता के बाद, जैसा कि विकासशील देशों की विशिष्टता है, मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की पारस्परिक अंतरक्रिया में विशिष्ट पड़ाव आए तथा मौद्रिक नीति से अपेक्षा की गई कि वह विस्तारमुखी राजकोषीय नीति के साथ सामंजस्य बनाए। भारी सार्वजनिक निवेश की आवश्यकता वाले योजनाबध्द विकास के युग की शुरुआत के बाद 1980 के दशक के अंत तक राजकोषीय घाटे, मौद्रिक नीति एवं मुद्रास्फीति का आपसी संबंध स्पष्ट हो गया तथा यह ज्ञात हुआ कि राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण से उत्पन्न अत्यधिक मुद्राविस्तार से मुद्रास्फीति को बल मिलता है।

10.25 मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की पारस्परिक अंतरक्रिया का इतिहास एवं रिजर्व बैंक के तत्संबंधी अनुभव से कई उपयोगी निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। रिजर्व बैंक को राजकोषीय नीति के विकास में आए विभिन्न चरणों जैसे राजकोषीय तटस्थता से राजकोषीय दबदबा एवं अंततः राजकोषीय समेकन तक की यात्रा के दौरान रिजर्व बैंक के समक्ष कई चुनौतियां आईं तथा उसने मूल्य एवं वित्तीय स्थिरता बनाए रखने के लिए अपने उपकरणों एवं परिचालन प्रक्रियाओं में समुचित परिमार्जन किया। सन् 1991 के आर्थिक संकट ने मौद्रिक नीति पर राजकोषीय नीति की प्रधानता से उत्पन्न समस्याओं के शीघ्र समाधान की आवश्यकता पर प्रकाश डाला। अतः मौद्रिक एवं राजकोषीय प्राधिकारियों में आपसी समझ बढ़ाने वाला एक ऐतिहासिक समझौता हुआ जिसके अनुसार भारत सरकार एवं रिजर्व बैंक के बीच राजकोषीय घाटे के स्वतः मुद्रीकरण की रीति को समाप्त करने पर सहमति बनी।

10.26 भारत में सार्वजनिक ऋण के ऊंचे स्तर , भारी राजकोषीय घाटे की निरंतरता एवं राजकोषीय नीति की प्रधानता के परिदृश्य में मौद्रिक नीति और ऋण प्रबंध संबंधी उत्तरदायित्वों के बंटवारे पर चर्चा को जन्म हुआ। सैध्दांतिक दृष्टिकोण से विचार करें तो यह प्रतीत होता है कि इन दो उत्तरदायित्वों के बंटवारे से मौद्रिक नीति निर्माण एवं ऋण प्रबंध की दक्षताओं में वृद्धि होगी तथापि भारतीय परिस्थितियों में मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की पारस्परिक अंतरक्रिया के कुछ महत्वपूर्ण पहलुओं को ध्यान में रखना आवश्यक है। प्रथम, भारत में रिजर्व बैंक एवं भारत सरकार की संयुक्त नीति पहल से मौद्रिक नीति निर्माण एवं ऋण प्रबंध के कार्यों मे उल्लेखनीय समन्वय संभव हुआ है। एक ओर राजकोषीय अनुशासन एवं कम होते हुए राजकोषीय घाटे के स्वतः मुद्रीकरण से मौद्रिक नीति को पर्याप्त स्वायत्तताः मिली है वहीं दूसरी ओर प्राचेतस ऋण प्रबंध तकनीकों से मौद्रिक नीति का परिचालन, विशेषतः परोक्ष तरीकों के प्रयोग द्वारा, सुकर बना है। वास्तव में रिजर्व बैंक के पोर्टफोलियो मे उपलब्ध प्रतिभूतियों के बड़े हिस्से का प्रयोग पूंजी प्रवाह के मौद्रिक प्रभावों को निरस्त करने में किया जाता है। दूसरे, लंबे समय तक राजकीय ऋण प्रबंधन से प्राप्त अनुभव से रिजर्व बैंक ने ऐसी दक्षताएं प्राप्त कीं जिनसे वह मौद्रिक नीति निर्माण एवं ऋण प्रबंध के दोहरे दायित्व को सफलतापूर्वक निभा सका तथा साथ ही सरकार एवं बाजारों की प्रत्याशा पर खरा उतरा। तृतीयतः, आगामी कुछ वर्षों में भारत की राजकोषीय प्रणाली में निम्नलिखित महत्वपूर्ण बदलाव आएंगे- क) केंद्रीय सरकार राज्यों के लिए संसाधन जुटाने के मध्यस्थ का कार्य करना बंद कर देगी तथा राज्यों को स्वयं प्रत्यक्ष तौर पर बाजार से पूंजी जुटानी पडेगी (बारहवें वित्तायोग की अनुशंसाओं के अनुसार); ख) अप्रैल 1, 2006 से रिजर्व बैंक प्राथमिक बाजार से राजकीय प्रतिभूतियों की खरीददारी बंद कर देगा जिससे ब्याज दर अपेक्षाओं पर असर पड़ेगा; ग) बैंकिंग विनियमन अधिनियम में प्रस्तावित संशोधन के प्रभाव में आने पर आरक्षित अनुपातों में लचीलापन लाया जा सकेगा तथा इससे बैंको द्वारा राजकीय प्रतिभूतियों में किए जाने वाले आबद्ध निवेश में कमी आएगी। उपर्युक्त चिंताओं के मद्देनज़र इस बात की आवश्यकता है इस विषय में व्यावहारिक दृष्टिकोण उभर कर सामने आए ताकि वित्तबाजारों का सुचारु संचालन सुनिश्चित किया जा सके।

10.27 मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों की पारस्परिक अंतरक्रिया के एक महत्वपूर्ण पहलू का संबंध केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता से है। संसार भर में जहां विकासप्रक्रिया के दौरान केंद्रीय बैंकों के कार्यकलाप का दायरा विस्तृत हुआ है वहीं केंद्रीय बैंकों की स्वायत्तता के प्रति रुझान में कई रुचिकर मोड़ आए है। भारतीय संदर्भ में केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता के दो संबंधित पहलुओं पर जोर दिया गया है। पहले का संबंध मौद्रिक नीति पर राजकोषीय नीति की प्रधानता एवं सांविधिक प्रावधानों, जिनके अनुसार रिजर्व बैंक के शीर्ष पदाधिकारियों की नियुक्ति सहित निदेशन की शक्तियां भारत सरकार में निहित हैं, से है। विकास चरण में सरकार के बढ़े हुए बाजार ऋण एवं रिजर्व बैंक द्वारा उसके मुद्रीकरण से मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों के पारस्परिक संबंधों पर प्रश्न उठे। मौद्रिक नीति को, विशेषतः 1980 के दशक में, लगातार बढ़ते हुए राजकोषीय घाटे के मुद्रीकरण से उत्पन्न रिजर्व मुद्रा के मुद्रास्फीतिजनक प्रभावों को कम करने के लिए बाजार से रिज़र्व मुद्रा को सोखना पड़ा। तथापि हाल के वर्षों में सन् 1997 में राजकोषीय घाटे के स्वतः मुद्रीकरण की सुविधा की समाप्ति तथा सन् 2003 में राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंध अधिनियम को पारित करना मौद्रिक नीति को राजकोषीय नीति के मुद्रास्फीतिकारी प्रभावों से रक्षा करने तथा स्वस्थ मौद्रिक एवं राजकोषीय संबंध सुनिश्चित करने की दिशा में उठाए गए दो महत्वपूर्ण कदम हैं।

10.28 मौद्रिक एवं राजकोषीय संबंधों को भविष्य में नई दिशा देने की क्षमता रखने वाले एक महत्वपूर्ण मुद्दे का संज्ञान लेना आवश्यक है। राजकोषीय उत्तरदायित्व एवं बजट प्रबंध अधिनियम 2003 के प्रावधानों के अनुसार अप्रैल 1, 2006 से रिजर्व बैंक प्राथमिक बाजार से राजकीय प्रतिभूतियों की खरीददारी बंद कर देगा। इस कदम से जहां मौद्रिक प्राधिकारी को अधिक कार्यकारी स्वायत्तता प्राप्त होगी वहीं ब्याजदरों की सख्त निगरानी एवं बाजार में मौद्रिक नीति के संकेतों के संचरण हेतु अन्य उपकरणों को अधिक प्रभावी बनाने की उसकी जिम्मेदारी में वृद्धि होगी।

V. रिज़र्व बैंक का तुलन पत्र

10.29 रिजर्व बैंक के तुलनपत्र की प्रकृति कई मायनों मे अद्वितीय है और उसमें एक केंद्रीय बैंक के तुलनपत्र में मिलने वाली सारी

विचित्रताएं वर्तमान हैं तथा यह परिवर्तनशील परिस्थितियों में बैंक द्वारा निभाई गई विभिन्न जिम्मेदारियों के वित्तीय परिणामों को परिलक्षित करता है। पिछले सात दशकों में भारतीय अर्थव्यवस्था में आए परिवर्तनों के साथ-साथ रिजर्व बैंक के तुलनपत्र में भी मूलभूत बदलाव आए हैं। शुरुआती वर्षों में नोट निर्गम की प्रधानता के बाद योजनाबध्द विकास के युग के प्रारंभ में राजकोषीय प्रबंध पर अधिक बल एवं अंत में विकासपरक भूमिका सहित राजकोषीय प्रबंध की सर्वोच्चता इत्यादि विभिन्न सोपानों को पार करके 1990 के दशक में बैंक के तुलनपत्र में अंतरराष्ट्रीय आस्तियों की प्रधानता, राजकीय प्रतिभूतियों में निवेश में भारी गिरावट तथा आरक्षी अनुपातों मे कमी जैसे परिवर्तन देखे गए। रिजर्व बैंक के तुलनपत्र में संरचनात्मक बदलावों, विशेषकर विदेशी मुद्रा आस्तियों से होने वाली आय में सापेक्ष कमी, विश्वबाजार में विदेशी मुद्रा विनिमय एवं ब्याज दरों की अस्थिरता, मूल्यांकन की मार्क टु मार्केट पध्दति का प्रयोग तथा अभिमूल्यन लाभ का विषम ट्रीटमेंट, से जोखिम प्रोफाइल का महत्व बढ़ा है। ऐसी अवस्था में प्रभावी और पर्याप्त जोखिम प्रबंध उपाय करने की आवश्यकता है। अत:एव रिजर्व बैंक ने न केवल घरेलू और विदेशी आस्तियों के विवेकपूर्ण पुनर्मूल्यन हेतु अनेक से उपाय किए बल्कि नीति का लचीलापन बनाए रखने की शक्ति अर्जित करने और जनता का विश्वास बनाए रखने के लिए आपदाकोष के रूप में पर्याप्त कुशन का निर्माण किया।

10.30 एक केंद्रीय बैंक के तुलन पत्र के आकार की बृहद्ता सुदृढ़ समष्टि अर्थव्यवस्था की सूचक नहीं है। इसके विपरीत पारदर्शी तुलन पत्र केंद्रीय बैंक की साख बढ़ाता है और मौद्रिक नीति के परिचालन में प्रभावकारिता में वृद्धि करता है। शुरुआत से ही रिजर्व बैंक की विशेषता रही है कि निर्गम विभाग को और बैंकिंग विभाग के लिए अलग-अलग तुलन पत्र बनाए जाते हैं जिससे मौद्रिक नीति के परिचालन में पारदर्शिता आती है। तुलन पत्र के आंकड़े नियमित रूप से साप्ताहिक अंतराल पर सार्वजनिक रुप से प्रकाशित किए जाते हैं। उसी प्रकार से, कुछ अग्रणी केंद्रीय बैंकों की तरह रिज़र्व बैंक भी स्थूल मुद्रा के आंकड़े पाक्षिक अंतराल पर एवं विदेशी मुद्रा भंडार के आंकडे साप्ताहिक अंतरालों पर समेकित एवं प्रकाशित करता है।

VI. संप्रेषण नीति

10.31 बदलती घरेलू और बाह्य आवश्यकताओं के मद्देनजर यथोचित नीतिगत अनुक्रियाओं द्वारा समय के साथ-साथ रिजर्व बैंक में कार्यात्मक एवं संरचनात्मक बदलाव आए हैं।बैंक की स्पष्ट संप्रेषण नीति के मद्देनजर पारदर्शिता पर पुन: ध्यान केंद्रित किया गया है जो इसे विभिन्न प्रकार की सूचनाएं नियमित रूप से जनता को देने में सक्षम बनाती हैं। सन् 1991 तक संप्रेषण नीति का जोर प्रेस के साथ स्वस्थ वार्ता के माध्यम से केंद्रीय बैंकिंग से जुड़े अपने उत्तरदायित्वों की पारदर्शी तरीके से पूर्ति का प्रचार करने पर था। हाल के वर्षों में बैंक ऐसी सुविचारित संप्रेषण नीति पर जोर दे रहा है जिसमें पारदर्शिता , सामयिकता और विश्वसनीयता के गुण हैं। बैंक की संप्रेषण नीति के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बैंक अपनी नीतियों और उनके निर्माण के तौरतरीकों का व्यापक प्रचार करता है। सूचना के संप्रेषण के लिए रिजर्व बैंक अपनी वेबसाइट का खूब प्रयोग करता है। रिजर्व बैंक के प्रकाशन, जो वेबसाइट पर भी उपलब्ध होते हैं, आंकड़ों, अनुसांधान अध्ययनों एवं रिजर्व बैंक के शीर्ष पदाधिकारियों के उद्बोधनों की मदद से नीतिगत निर्णयों के औचित्य पर प्रकाश डालते हैं। यह एक दिलचस्प बात है कि हाल के वर्षों में रिजर्व बैंक महत्वपूर्ण विषयों पर नियमित रूप से अभिमत आमंत्रित करता है।

VII. मूल्यांकन

10.32 न केवल भारत बल्कि सारे संसार में केंद्रीय बैंकिंग के विकास से यह बात परिलक्षित होती है कि केंद्रीय बैंक बदलते आर्थिक पर्यावरण के साथ लगातार सफलतापूर्वक सामंजस्य बनाते रहे हैं। केंद्रीय बैंकों एवं वित्तीय मध्यस्थ संस्थाओं के पारस्परिक व्यवहार से यह स्पष्ट होता है सामान्य जन का कल्याण ही इसका एकमात्र लक्ष्य है। केंद्रीय बैंक सावधानीपूर्वक घरेलू और वैश्विक अर्थव्यवस्थाओं में बाजार प्रवृत्तियों तथा अन्य परिवर्तनशीलों में मात्रात्मक परिवर्तन एवं उसकी गति पर के उतार-चढ़ाव पर निगरानी बनाए रखते है। इन संकेतकों में निहित सूचना एवं बाज़ार सहभागियों की प्रत्यक्ष प्रतिक्रिया से मूल्य एवं वित्तीय सुरक्षा करने के लिए यथोचित मौद्रिक नीति के निर्माण एवं परिमार्जन में सहायता मिलती है। पिछले सौ वषों मे, जिस अवधि में अधिकांश केंद्रीय बैंको की स्थापना हुई, बाजार, मौद्रिक नीति के उद्देश्यों एवं साधनों मे बदलाव आया है।इन बदलावों के बावजूद केंद्रीय बैंकों ने स्वयं को वित्तीय प्रणाली के महत्वपूर्ण और स्थायी घटक के रूप में स्थापित किया है।

10.33 रिज़र्व बैंक, जो अपने अस्तित्व के सत्तर साल पूरे कर रहा है, ने स्थायित्व के साथ वृद्धि के अपने उद्देश्य युगल को काफी हद तक, विशेषत सुधारोत्तर काल में, पूरा करने में सफल रहा है। मौद्रिक नीति के परिचालन में क्रमिक बदलाव की नपी तुली रणनीति, पूंजी प्रवाह का प्रबंध, प्रतिस्पर्धात्मक बाजार के विकास तथा स्वस्थ वित्तीय प्रणाली का अस्तित्व सुनिश्चित करने के साथ-साथ विकासपरक भूमिका के निर्वहन के स्पष्ट परिणाम आए हैं। अपनी प्रभावकारी नीतियों से वैश्वीकरण से उत्पन्न चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामना करके रिज़र्व बैंक नें अंतरराष्ट्रीय सम्मान अर्जित किया है। रिज़र्व

बैंक नें अपने परिचालन को पारदर्शी बनाया तथा व्यापक परास की श्रोता श्रेणी को ध्यान में रखकर एक संप्रेषण नीति का निर्माण किया। सारांश में यह कहा जा सकता है कि भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में उत्पन्न चुनौतियों के बावजूद रिज़र्व बैंक स्थायित्वपूर्ण समष्टि आर्थिक प्रबंधन एवं वित्तीय स्थायित्व सुनिश्चित करते हुए निरंतर प्रगति के पथ पर गतिशील है। ज्यों-ज्यों अर्थव्यवस्था उत्तरोत्तर अधिक मुक्त एवं वैश्वीकृत होती जाएगी त्यों-त्यों रिजर्व बैंक की भूमिका में और बदलाव आएगा तथा बैंक को स्वयं को इन उभरती हुई चुौतियों का सामना करने के लिये लगातार सुसज्जित करना पड़ेगा।

चुने गए संदर्भ

I. रिपोर्ट का सार

बालचंद्रन, जी. 1988 *दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया 1951-1967ः* ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस।

बीन, चार्ल्स. 1999 ''डिस्कशन ऑफ़ चार्ल्स गुडहर्ट लेक्चरः सेंट्रल बैंकर और अनिआचितता". बैंक ऑफ़ इंग्लैंड तिमाही बुलेटिन, फ़रवरी।

बीन चार्ल्स 2004 ``ग्लोबल डेमोग्राफिक चेंज : सम इंप्लीकेशनंस फ़ॉर सेंट्रल बैंक्स" ओवर व्यू पैनल, एफआरबी कंपास सिटी ऐनुअल सिंपोज़ियम, जैकसन होल, व्योमिंग, अगस्त।

बर्जर, एच., जेकोब डे एंड इजफिंगर सी. डब्ल्यू सिलवेस्टर, 2001. ''सेंट्रल बैंक इंडिपेंडेंस : एन अपडेट ऑफ़ थ्योरी एंड इवीडेंस" जर्नल ऑफ़ इकॉनॉमी सर्वे, (15 (1)।

ब्रोज, जेलारेंस, 1988. ''रिओरिजिंस ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग : सोल्यूशन टू दि फ्री राइडर प्रोबल" इंटरनैशनल आर्गेनाइज़ेशन, स्प्रिंग 52 (2)।

इजफिंगर, सी. डब्ल्यू सिलवेस्टर एंड एम. जेत्रा जेरात्स. 2005 ''हाउ ट्रांस्परंट आर सेंट्रल बैंक्स" वर्किंग पेपर्स इन इकॉनॉमिक्स, नं.0411, डिपार्टमेंट ऑफ़ एप्लाइड इकॉनॉमिक्स, युनिवर्सिर्टी ऑफ़ कैंब्रिज।

फ़िशर, स्टेनली, 1996 ''सेंट्रल बैंक : दि चैलेंजेज़ अहेड - मेंटेनिंग प्राइस स्टेबिलिटी". फाइनेंस एंड डिवेल्पमेंट, दिसंबर।

फ्रिडमेन, चार्ल्स. 1999 ''डिस्कशन ऑफ़ प्रोफ़ेसर गुडहर्ट्स लेक्चर : सेंट्रल बैंकर्स एंड अनसेर्टेटी" बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टर्ली बुलेटिन, फ़रवरी

जॉर्ज, एडवर्ड 2000. ''फ़्युचर्स ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग'', स्पीच टू दि एसोसिएशन ऑफ़ प्रोफ़ेशनल बैंकर्स श्रीलंका, ट्वेल्थ एनिवर्सरी कनवेंशन, अगस्त।

गुडहर्ट, चार्ल्स, 1999. ''सेंट्रल बैंकर्स एंड अनसर्टेंटी''.। बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टर्ली बुलेटिन, फ़रवरी।

मसियांदरो, डोनॅटो, 2004. ''सेंट्रल बैंक्स ओर सिंगल फाइनेंशियल ऑथिरिटीज ?'' ए पॉलिटिकल इकनॉमी एप्रोचड, युनिवर्सिटी ऑफ़ लीस, वर्किंग पेपर नं.47/25

मीग्स, ए जेम्स ऐण्ड वोल्मन विलियम, 1971. ''सेंट्रल बैंक्स एंड दि मनी सप्लाई।'' फेडरल रिज़र्व ऑफ़ सेंट लुइस, अगस्त।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया. 1970. हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (1935-51)। प्यारेलाल शाह, टाइम्स ऑफ़ इंडिया प्रेस; मुंबई।

सेनगुप्ता, इन्द्रनील, इन्द्रनील भट्टाचार्य, सत्यानंद साहू एंड सिद्धार्थ सन्याल 2000. ''एनॉटमी ऑफ़ लिक्विडिटी मैनेजमेंट'' आरबीआई ओकेजनल पेपर्स

III. फंक्शनल इवेल्युएशन ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग

एलेसिना, ए., ए प्राति एंड जी. टेबेलिनी, 1990 ''पब्लिक कॉन्फीडेंस एंड डेट मैनेजमेंट : ए मॉडेल एंड ए केस स्टडी ऑफ़ इटली'' इन आर. डॉर्नबुश एंड एम. द्राधी, (इडीएस), पब्लिक डेट मैनेजमेंट : थ्योरी एंड हिस्ट्री, केंब्रीज. युनिवर्सिटी प्रेस।

एलेसिना, ए एंड एल, समर्स, 1993. ''सेंट्रल बैंक इंडिपेंडेंस एंड मैक्रोइकोनॉमिक परफॉर्मेंस : सम कंपरेटिव इवीडेंस।'' जर्नल ऑफ़ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग, वोल्युम.25(2); 151-162 मई

बेगहॉट, डब्ल्यू. 1873 लेंबर्ड स्ट्रीट : ए डिस्क्रीप्शन ऑफ़ दि मनी मार्केट, रीप्रिंट, होमवुड इलिनॉइस, रिचर्ड इरविन।

बैंक फ़ॉर इंटरनैशनल सेटलमेंट्स 2001. ''इंटरनैशनल बैंकिंग एंड मार्केट डिवेल्पमेंट्स''। क्वाटर्ली रिव्यू, सितंबर

बैंक ऑफ़ इंग्लैंड 1997. ''मेमोरेंडम ऑफ़ अंडरस्टेंडिंग बिटविन एचएम ट्रेजरी, दि बैंक ऑफ़ इंग्लैंड एंड दि एफ एस ए।" http://www.bankofengalnd.co.uk.

बेटिंग, एफ.1979 आर्ब्वेशंस ऑन दि इस्टेब्लीशमेंट ऑन दि बैंक ऑफ़ इंग्लैंड एंड दि पेपर सर्क्युलेशन ऑफ़ दि कंट्री। रीप्रिंट। न्यूयॉर्क अगस्टस केली।

बोरो. आर. 1994. ''इन्फ्लेशन एंड इकॉनॉमी ग्रोथ।'' बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टर्ली बुलेटिन, वोल्युम. 35; 166.76. मई।

ब्लाइंडर, ए.सी. गुडहर्ट, पी हिल्डर ब्रांड, डी. लिप्टन एंडसी विप्लोज 2001 ''हाउ डू सेंट्रल बैंक्स टाक?'' जिनीवा रिपोर्ट ऑन दी वर्ल्ड इकॉनॉमी नं.3 सीइपीआर, लंडन।

बोरिओ, सी, एंड पी. लोवे. 2002. ''एसेट प्राइज़ेस, फाइनेंशियल एंड मोनिटरी स्टेबिलिटीः एक्सप्लोरिंग दि नेक्सास.'' बीआइएस वर्किंग पेपर. जुलाई।

ब्राश, डी. 1999. ''इन्फ्लेशन तारगेटिंग : इज़ न्यूजीलैंड्स एक्सपीरियंस रिलिवेंट टू डेवलपिंग कंट्रीज?'' दि सिक्स्थ एल.के.झा मेमोरियल लेक्चर. मुंबई।

ब्रियाल्ट, सी.ए. हल्डेन एंड एम.किंग 1996, ''इंडिपेंडेंस एंड आकउंटेबिलिटी''. पेपर प्रेसेंटेड एट दि सेवेंथ इंटरनैशनल कॉन्फरेंस ऑफ़ दि इंस्टिट्यूट फ़ॉर मोनिटरी एंड इकॉनॉमिक स्टडीज़, बैंक ऑफ़ जापान, टोकियो. बीओइ वर्किंग पेपर सिरीज. 49 एप्रिल।

ब्रीमर, ए. 1971 ''सेंट्रल बैंकिंग एंड इकॉनॉमिक डिवेल्पमेंट.'' जर्नल ऑफ़ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग. वाल्युम. III; 780-792.

ब्रुनर, के. 1981, ''दि आर्ट ऑफ़ सेंट्र बैंकिंग''। सेंटर फ़ॉर रिसर्च इन गवर्नमेंट पॉलिसी एंड बिज़नेस वर्किंग पेपर. जीपीबी: 81-6, युनिवर्सिटी ऑफ़ गेचेस्टर जून.

ब्रियांट, जे.एंड एन. वालेस.1980. ''ओपेन मार्केट ऑपरेंशस इन ऐ मॉडेल ऑफ़ रेगुलेटे'', इंश्योर्ड इंटरमीजिएटरीज़.'' जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल इकॉनॉमी.88; 146.173

बुइटर, डब्ल्यू. 1998. ''सेट्रल बैंक एंड दि जॉय ऑफ़ एकाउंटेबिलिटी" http://www.nber.org.

केलोमरीस, सी एंड जी. गोर्टन.1991.डदि ओरिजिन ऑफ़ बैंकिंग पेनिक्सः मॉडेल्स, फैक्ट्स एंड बैंक रेग्यूलेशन'' इन आर.ग्लेन हब्वर्टु (इडिएस). फ़ाइनेंशियल मार्केट्स एंड फ़ाइ नेंशियल क्राइसेस. 109-173, युनिवर्सिटी ऑफ़ शिकागो प्रेस.

काल्बों, जी.1978. ''ऑन दि टाइम कंसिस्टेंसी ऑफ़ ऑप्टीमल पॉलिसी इन दि मॉनेटरी इकनॉमी.'' इकनूमेट्रिक्स., 45(6); 1411-28.

काल्वो, जी.एंड नेरहर्ट, सी.2000. ''फ़ीयर ऑफ़ फ्लोटिंग,'' एनबीइआर वर्किंग पेपर. 8087.

कैपी.एफ़.1997. दि इवोल्यूशन ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग. रिफ़ॉर्मिंग दि फ़िनेंशियल सिस्टिम; सम लेसंस फ्रॉम हिस्ट्री, कैंब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, कैंब्रिज. इंग्लैंड

फैसर्ड, एम.एंड डी. फ़ॉल्कर्ट्स - लेंडाउ.1997 'रिस्क मैनेजमेंट ऑफ़ सावरिन एसेट्स एंड लाइबिलिटीज़.' वर्किंग पेपर.166, आइएमएफ़.

चंदावरकर. ए.1996. सेंट्रल बैंकिंग इन डिवल्पिंग कंट्रीज़. मैकमिलन लि.

चेंग, आर.1998. ''पॉलिसी क्रेडिबिलिटी एंड दि डिज़ाइन ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स.'' फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ अटलांटा-इकॉनॉमिक रिव्यू. फ़स्ट क्वार्टर., 4-15.

चेंग आर. एंड ए. वेलास्का.1999. ''लिक्विडिटी क्राइसिस इन इमर्जिंग मार्केट्स; थ्योरी एंड पॉलिसी. एनबीइआर वर्किंग पेपर.7272 जुलाई.''

यो. वाई.1986. ''इनइफ़िशियंसी फ्रॉम फ़ाइनेंशियल लिबरलाइज़ेशन इन दि एब्सेंस ऑफ़ वेल फ़क्शनिंग कैपिटल मार्केट्स.'' जर्नल ऑफ़ मनी क्रेडिट एंड बैंकिंग; 191-99.

कोट्स, डब्ल्यू एंड डी. खटखटे (इडीएस) 1980. ''मनी एंड मॉनेटरी पॉलिसी इन लेस डेवलप्ड कंट्रीज़.'' परगॅमन. ऑक्सफ़ोर्ड.

कॉलिंस. सी.1982. ''अल्टरनेटिव्स टू दि सेंट्रल बैंक इन दि डेवलप्ड वर्ल्ड'' आइएमएफ़ वर्किंग पेपर.20 जुलाई .

कॉरिगन. जी.1996. रिमार्क्स एट दि सिंपोज़ियम ऑन रिस्क रिडक्शन इन पेमेंट्स क्लियरेंस एंड सेटलमेंट सिस्टिम्स. गोल्डमेंन, सेच्स एंड कं. न्यू यार्क.

कौंसिल ऑफ़ इकॉनॉमिक एडवाइज़र. 1999 - इकॉनॉमिक रिपोर्ट ऑफ़ दि प्रेसिडेंट. वाशिंगटन डी.सी., यू.एस. गवर्नमेंट प्रिंटिंग ऑफ़िस.

कुकियन मन, ए.1992. सेंट्रल बैंक स्ट्रेटेजीज़, क्रेडिबिलिटी एंड उंडिपेंडेंस; थ्योंरी एंड इविडेंस कैंब्रिज, एम ए. एमआइटी प्रेस.

- 1996. ''दि इकोनॉमिक्स ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग.'' वर्किंग पेपर 36-96. तेल अवीव युनिवर्सिटी.

कुकियमन, ए. एंड एस. जरलेच. 2003. ''दि इनफ्लेशन बायस रिविज़िटेड; थ्योरी एंड सम इंटरनैशलन इविडेंस.'' दि मानचेस्टर स्कूल.71(5).;541- 565. सितंबर.

कुरी. ई.,जे. डेथियर एंड ई. टोगो(2003); इंस्टीट्यूशनल एरेंजमेंट्स फ़ॉर पब्लिक डेट मैनेजमेंट, पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर 3021, वर्ल्ड बैंक.

डे हान. जे.1997. ''दि युरोपियन सेंट्रल बैंकः इंडिपेंडेंस, अकाउंटेबिलिटी एंड स्ट्रेटेजी.'' पब्लिक चॉइस.93; 395-426.

डे कॉक, एम.1974. सेंट्रल बैंकिंग. सेंट मार्टिन्स प्रेस. न्यू यार्क.

डेमिस्त्री, इ एंड एफ़. गुनेरो.2003. ''दि रेशनेल फ़ॉर इंटिग्रेटिंग फाइनेंशियल सुपरविज़न इन लेटिन अमेरिका एंड दि केरिबियन.''

सस्टेनेबल डिवेल्पमेंट डिपार्टमेंट टेक्निकल पेपर सेरीज़, इंटर अमेरिकन डिवेल्पमेंट बैंक. वाशिंगटन डी.सी.

डायमंड, डी.एंड पी डिबविग.1993. ''बैंक एंस. डिपॉज़िट इंश्योरेंस एंड लिक्विडिटी.'' जर्नल ऑफ़ पालिटिकल इकॉनॉमी, 91; 401-419

इजफिंगर, एस.एंड जे. डे हान. 1996. ''दि पॉलिटिकन इकनॉमी ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग.'' प्रिसटोन स्पेशल पेपर्स इन इंटरनैशलन इकनॉमिक्स.19.

इनॉच, सी.एंड गुल्डे.ए.1998. ''आर करेंसी बोर्ड्स ए कयोर फ़ॉर आल मॉनेटरी प्रॉब्लेम्स?'' फ़ाइनेंस एंड डिवेल्पमेंट.35(4)

फ़ारगुशन, आर.2005. ''मॉनेटरी क्रेडिबिलिटी, इनफ्लेशन एंड इकोनॉमिक ग्रोथ.'' स्पीच एट दि केटो इंस्टीट्यूट 23र्ड एन्युअल मॉनेटरी कॉन्फ़रेंस ऑन मॉनेटरी इंस्टीट्यूट एंड इकॉनॉमिक डिवेल्पमेंट वाशिंगटन डी.सी. http:// Federal reserve.gov.

फ़िशर, एस.1994. ''दि फ्यूचर ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग - मॉडर्न सेंट्रल बैंकिंग.'' दि टर्सेंटिनरी सिंपोज़ियम ऑफ़ दि बैंक ऑफ़ इंग्लैंड केम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस; 262-308.

- 1996. ''सेंट्रल बैंकिंग; दि चैलेंजेज़ अहेड; मेंटेनिंग प्राइज स्टेबिलिटी.'' फ़ाइनेंस एंड डिवेल्पमेंट. दिसंबर.

- 2005. ''दि रोल ऑफ़ दि सेंट्रल बैंक.'' एड्रेस बाय दि गवर्नर ऑफ़ दि बैंक ऑफ़ इज़राइल एट ए स्टडी इवनिंग टू कॉमेमोरेट दि 10थ एनिवर्सरी ऑफ़ दि डेथ ऑफ़ डेन पेटिनकिन, http://www.bankisrael.gov.i//publeng/

फ्ढलड, आर. एंड पी गर्बर.1984. ''कोलॅप्सिंग एक्सचेजरेट रेजिम्सः सम लीनियर एक्जाम्पल्स.'' जर्नल ऑफ़ इंटरनैशनल इकनॉमिक्स.17; 1-13.

फ्रेज़र, डब्ल्यू.2000. सेंट्रल बैंक, क्राइसिस एंड ग्लोबल इकॉनॉमी, प्रीजर पब्लीशर, लंडन.

फ्रीडमेंन, एम. एंड ए. श्वाड्स. 1963. ए मॉनेटरी हिस्ट्री ऑफ़ दि युनाइटेड स्टेट्स 1867-1960. प्रिंस्टन युनिवर्सिटी प्रेस, प्रिंस्टन.

फ्रीडमेन, एम.1968. ''दि रोल ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी.'' अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू.,58(1); 1-17.

फ्राय, एम.1995. ''मनी, इंटरेस्ट एंड बैंकिंग.'' इकॉनॉमिक डिवेल्पमेंट. जॉन होपकिंस युनिवर्सिटी प्रेस बाल्टीमोर.

-, 1999. ''सेंट्रल बैंकिंग एंड इकॉनॉमिक डिवेल्पमेंट'' इन ब्लेजर, एम. एंड एम. स्कर्व (इडीएस), सेंट्रल बैंकिंग, मॉनिटरी पालिसी एंड दि इंप्लीकेशंस फ़ॉर ट्रांजीशन इकोनॉमीज़. यूएसए.

फ्राय, एम डी. जुलियस, एल. महादेवा, एस रॉबर एंड जी स्टर्न.2000. ''की इश्युज़ इन दि चॉइस ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क.'' इन एल. महादेवा एंड जी स्टर्न (इडीएस), मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क इन ए ग्लोबल कॉन्टेक्स्ट, लंडन. रूटलेज: 1-216.

गैगनन, जे.ऐड जे. इहरिंग,2004. ''मॉनेटरी पॉलिसी एंड एक्सचेंज रेट पास थ्रू.'' इंटरनैशनल जर्नल ऑफ़ फ़ाइनेंस एंड इकॉनॉमिक्स. 9:315-338.

जेमसोमिनी, सी.1999. ''दि बैंक ऑफ़ इटेली फ्रॉम इट्स फ़ाउंडेशन टू दि 1950 ज़.'' इन हॉल्टफ्रेरिच. सी.,जे. रीस एंड जी. टोनिमोलो (इडीएस), दि इमर्जेंस ऑफ़ मॉडर्न सेंट्रल बैंकिंग फ्रॉम 1978 टू दि प्रेज़ेंट. अशगेट अल्डरशॉट. इंग्लैंड

गैरिसन.आर.1996. ''सेंट्रल बैंकिंग, फ्री बैंकिंग एंड फ़ाइनेंशियल क्राइसेस.'' दि रिव्यू ऑफ़ आस्ट्रीयन इकॉनॉमिक्स.9(2):169-27.

गुडफ्रेंड, एम.1985.''मॉनेटरी मिस्टिक : सीक्रेसी एंड सेंट्रल बैंकिंग.'' एनबीइआर वर्किंग पेपर.85(7)

गुडफ्रेंड, एम.एंड आर किंग.1988. ''फ़िइनेंशियल मॉनेटरी पॉलिसी एंड सेंट्रल बैंकिंग.'' इन हरफ़ डब्ल्यू ऐड आर. कुरामीदर (इडीएस). रीस्ट्रक्चरिंग बैंकिंग एंड फ़ानेंशियल सर्विसेस इन अमेरिका एइआई स्टड़ीज़. 481, लेनहेम एमडी. यूएसए.

गुडफ्रेंड, एम.,आर. कोनिग एंड आर. रेपुलो, 2004. ''एक्सटर्नल इवेल्युएशन ऑफ़ दि इकॉनोमिक रिसर्च एक्टीविटीज़ ऑफ़ दि युरोपियन सेंट्रल बैंक.'' <u>http;www.ecb.unt.</u>

गुडहर्ट,सी.,पी. हर्टमैन, डी. लेबेलिन.एन.रोजस - सुअरेज़ एंड एस. विसब्रांड, 1998. फ़िनेंशियल रेगुलेशन - व्हाय, हाउ एंड व्हेयर नाउ? रुटलेज पब्लीकेशन. लंडन एंड न्यूयार्क.

गुडहर्ट, सी. 1988. दि इवोलूशन ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स., एमआइटी प्रेस.

गे.एस.1996. ''दि मैनेजमेंट ऑफ़ गवर्नमेंट डेट.'' हैंडबुक इन सेंट्रल बैंकिंग, सेंटर फ़ॉर सेंट्रल स्टडीज़.5. मे.

ग्रीनस्पॅन, ए.1996 ''दि चैंलेजेस ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग इन ऐ डेमोक्रेटिक सोसायटी.'' स्वीच ऍट अमेरिकन एंटरप्राइजेस इंस्टीट्यूटट फ़ॉर पब्लिक पॉलिसी रिसर्च ऍट वाशिंगटन डी.सी. <u>http://www.federalreserve.gov.</u>

ग्रिल्ली. वी., डी. मेसियान्द्रो एंड जी. टेबेलिनी. 1991. ''पॉलिटिकल एंड मॉनेटरी इंस्टीट्यूशन एंड पब्लिक फ़िनेंशियल पॉलिसीज़ इन दि इंडस्ट्रीयल कंट्रीज़.'' इकोनॉमिक पालिसी : ए युरोपियन फ़ोरम. 6(2); 341-92 अक्तूबर.

हैंक, एस., एल. जोनुंग एंड के. शुलर.1993. रशियन करेंसी एंड फ़ाइनेंसः ए करेंसी बोर्ड एप्रोच टू रिफ़ॉर्म. न्यूयार्क. रूटलेज.

हैंक. एस.2000.''दि डिसरिगार्ड फ़ॉर करेंसी बोर्ट रियलिटीज़.'' दि कैटो जर्नल. स्प्रिंग समर.20(1);49-59.

हायो,बी. एंड सी. हेफेकट.2002. ‘‘डू वी रियली नीट सेंट्रल बैंक इंडिपेंडेंस? ए क्रिटिकल रीइग्क्ज़ामिनेशन.’’ युरोपियन जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल इकॉनॉमी.18;853-674.

हेसन.एस.2005. ‘‘डॉलराइज़ेशन.’’ फ़ाइनेंस एंड डिवेल्पमेंट. 44-45. मार्च.

हिक्स, जे.1967. क्रिटिकल एस्सेज इन मॉनेटरी थ्योरी. क्लेरेंडन प्रेस. ऑक्सफ़ोर्ड.

-, 1989. ए मार्केट थ्योरी ऑफ़ मनी. क्लरेंडन प्रेस. ऑक्सफ़ोर्ड.

हिर्शलीफ़र, जे.1971. ‘‘दि प्राइवेट एंड सोशियल वेल्यू ऑफ़ इनफ़ॉरमेशन एंड दि रिवार्ड टू इनवेंटिव ऐक्टिविटी.’’ अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू. 61(4);561-74.

-, 1975 ‘‘स्पेक्युलेशन एंड इक्विलीब्रियमः इनफ़ॉरमेशन, रिस्क, एंड मार्केट्स.’’ क्वार्टरली जर्नल ऑफ़ इकॉनॉमिक्स.89(4);519-42.

होगार्थ, जी.1996. इंट्रोडक्शन ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी, हैंडबुक इन सेंट्रल बैंकिंग, सेंटर फ़ॉर सेंट्रल बैंकिंग स्टडीज़ 1 मई.

होल्टफ्रीच, सी.एंड जे. रीज़ 1999. ‘‘इंट्रोडक्शन’’ इन होल्टफ्रेरिच. सी., एंड जी टोनियोलो (इडीएस.), दि इमर्जेंस ऑफ़ मॉडर्न सेंट्रल बैंकिंग फ्रॉम 1918 टू दि प्रज़ेंट, एशगेट, अल्डरशॉट, इग्लैंड.

हम्फ्री, टी.1975. ‘‘दि क्लासिकल कॉन्सेप्ट ऑफ़ दि लेंडर ऑफ़ लास्ट रिसोर्ट.’’ फ़ेडरल रिजर्व बैंक ऑफ़ रिचमंड इकोनॉमिक रिव्यू. 61; 2-9.

हम्फ्री, टी. एंड आर. केलेहर. 1984. ठदि लेंडर ऑफ़ लास्ट रिसोर्टः ए हिस्टॉरिकल पर्सपेक्टिव.ड दि केटो जर्नल. 4;275-318.

हम्फ्री, टी.1986. एप्सेज़ ऑन इन्फ्द्धलेशन. फ़िफ़्थ एडिशन, फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ रिचमंड, विर्जिनीया.

आईएमएफ़.1998. ‘‘करेंसी क्राइसेसः दि रोल ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी.’’ फ़ाइनेंस एंड डिवेल्पमेंट. 46-48. मार्च.

- 2001 गाइडलाइंस फ़ॉर पब्लिक डेट मैनेजमेंट. वर्ल्ड बैंक, http;//www/imf.org.

——. 2004, डेट रिलेटेड वल्नरेबिलिटीज एंड फ़ाइनेंशियल क्राइसेस - ऐन एप्लीकेशन ऑफ़ दि बैलेंस शीट एप्रोच टू एमर्जिंग मार्केट कंट्रीज़. पॉलिसी डेवलपमेंट एंड रिव्यू डिपार्टमेंट. http;//www/imf.org.

इसिंग, ओ.2005. ‘‘कम्युनिकेशन, ट्रांसपरेंसी; अकाउंटेबिलिटी; मॉनेटरी पॉलिसी इन दि ट्वेंटी-फ़स्ट सेंचुरी. फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ सेंट लुइस रिव्यू. पार्ट 1; 65-83. मार्च-अप्रैल.’’

इजे, ए.2005. ‘‘कैपिटलाइजिंग सेंट्रल बैंक्स. ए नेटवर्थ एप्रोच.’’ आइएमएफ़ स्टाफ़ पेपर्स.52(2).

जाधव, एन.2003. ‘‘सेंट्रल बैंक स्ट्रेटेजी, क्रेडिबिलिटी एंड इंडिपेंडेंस; ग्लोबल इवोल्युशन एंड इंडियन एक्सपीरियंस.’’ भारबीआई ओकेज़नल पेपर्स.24 (1 एंड 2).

——. 2005 मॉनेटरी पॉलिसी, फ़ाइनेंशियल स्टेबिलिटी एंड सेंट्रल बैंकिंग इन इंडिया, मेकमिलन इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली.

जनक राज, 2005. ‘‘इज़ देयर ए केस फ़ॉर ए सूपर रेगुलेशन इन इंडिया? इश्यूज़ एंड ऑप्शंस.’’ इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. अगस्त.

कल्डरेन, एल.1997 ‘‘डेट मैनेजमेंट फंक्शंस एंड रेयर लोकेशन.’’ इन सुंदरराजन, वी., पी. डटेल्स एंड एच. ब्लोमेस्टियन (इडीएस), कॉरडिनेटिंग पब्लिक डेट एंड मैनेजमेंट; इंस्टिटयुशनल एंड ऑपरेशन एरेंजमेंट्स. आइएमएफ़.

कमिंस्की, जी. एंड सी. रेनहर्ट. 1999. ‘‘दि ट्विन क्राइसेसः दि काज़ेस ऑफ़ बैंकिंग एंड बैलेंस ऑफ़ पेमेंट्स प्रोब्लेम्स.’’ अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू.89(3); 473-500.

केरेकडेग, सी., वी. सुंदरराजन एंड जे. ईलियट. 2003. ''मैनेजिंग रिस्क इन फ़ाइनेंशियल मार्केट डिवेल्पमेंट : दि रोल ऑफ़ सिग्वेंसिंग.'' आइ एम एफ़ वर्किंग पेपर.03 (116).

कीनेस, जे.1930 ए ट्रीटीज़ ऑन मनी न्यू यॉर्क : हारकोर्ट, क्रास.

——.1936. जनरल थ्योरी ऑफ़ एम्प्लॉयमेंट, इंटरेस्ट एंड मनी. मैकमिलन. लंडन.

नाइट, एम.2005. ''फ़ीचर्स ऑफ़ एन इफेक्टिव सेंट्रल बैंक : सम लेसन ऑफ़ दि पास्ट डेकेड'' की नोट स्पीच एट दि 40 यथ एनिवर्सरी सेलीब्रेशन ऑफ़ दि सेंट्रल बैंक ऑफ़ ब्राज़िल, मार्च 30.

क्रुगमन, पी.1979. ''ए मॉडेल ऑफ़ बेलेंस ऑफ़ पेमेंट्स क्राइसेस.'' जनर्लल ऑफ़ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग. 1:311-25.

किडलैंड एफ़. एंड इ. प्रेसकोट.1977. '' रुल्स रादर दैन डिस्क्रीशनः दि इन कंसिस्टेंसी ऑफ़ ऑप्टीमल प्लांस.'' जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल इकॉनॉमी; 473-490.

लेक्सटन, डी. एंड एन डाटो, पी.2002. ''मॉनेटरी पॉलिसी क्रेडिबिलिटी एंड दि अन एम्प्लॉयमेंट - इन्फ्लेशन ट्रेड-ऑफ़ :सम इवीडेंस फ्रॉम 17 इंडस्ट्रीयल कंट्रीज,'' आइएमएफ़ वर्किंग पेपर.02(220).

लीलाधर, वी.2005. ''टेकिंग बैंकिंग सर्विसेस टू दि कॉमन मैन - फ़िनेंशियल इनक्लूज़न'', कॉमेकामेरेटिव लेक्चर एट दि फ़ेड बैंक हॉर्मिस मेमोरियल फ़ाउंडेशन. एर्नाकुलम.http://www.rbi.org.in.

लेवी-येयाती, इ एंड एफ़ स्टुरजेनेज़र.2001. ''एक्सचेंज रेट रेजिम्स एंड इकानोमिक पर्फ़ोमेंस.'' आइ एम एफ़ स्टाफ़ पेपर्स,. 47 स्पेशल इश्यू.

ली बेक, टी.2004. ''सेंट्रल बैंक ऑटोनोमी. अकाउंटेबिलिटी एंड गवर्नेंस; कंसेप्चुअल फ्रेमवर्क.'' प्रजेंटेशन एट एलइजी 2004 सेमिनार. http: //wwwimt.org.

महादेव, एल. एंड जी. स्टर्न 2000. ''दि डेविल इन दि डिटेल ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क(2)ः इंटरप्रिटिंग मीज़र्स ऑफ़ फ्रेमवर्कड केरेक्टरस्टिक्स.'' मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क इन ए ग्लोबल कॉन्टेक्स्ट. रूटलेज. लंडन.

मैंगनो, जी.1990. ''बीज़रिंग सेंट्रल बैंक इंडिपेंडेंस इन ट्रांजिशन इकॉनॉमीज़.'' इकॉनॉमिक्स ऑफ़ ट्रांजिशन.8(3)#ग़749-789.

मोवेनी,टी.2000. ''सेंट्रल बैंक इंडिपेंडेंस.'' स्पीच डिलीवर्ड एट रियुटर्स फ़ोरम. बीआइएस रिव्यू88/2000 अक्तूबर.

मैकनिन्नन. आर. 1993. दि ऑर्डर आफ़ इकोनॉमिक लिबरलाइज़ेशन; फ़िनेंशियल कंट्रोल इन दि ट्रांजिशन टू ए मार्केट इकॉनॉमी. सेकंड एडिशन. जॉनस हॉपकिंस युनिवर्सिटी प्रेस.

मीक. पी. 1991. ''सेंट्रल बैंक लिक्विडिटी मैनेजमेंट एंड मनी मार्केट.'' इन केप्रियोजी. एंड पी. होनोहन (इडीएसडी) मॉनेटरी पॉलिसी इंस्ट्रूमेंट्स फ़ॉर डेवलपिंग कंट्रीज. वल्ड बैंक सिंपोयिम. वाशिंगटन डी.सी.

मेयर, एम.2000. ''दि.पालिटिक्स ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसीः बैलेंसिंग इंडिपेंडेंस एंड अकाउंटेबिलिटी.'' स्पीच डिलीवर्ड एट युनिवर्सिटी ऑफ़ मिस्कोनसिन. http: //www.Federalreserve.gov.

--,2001. ''फ़िनेंशियल स्टेबिलिटी इन इमर्जिंग मार्केट्सः व्हाट हैव वी एकंप्लीश्ड एंड व्हाट रिमेंस टू बी डन?'' रिमार्क्स एट सेंटर फ़ार स्ट्रेटेजिक एंड इंटरनैशनल स्टडीज़. वाशिंगटन, डी.सी. http://www.federalreserve. gov.

मिश्किन, एफ़.1991. ''एनॅटॉमी ऑफ़ फ़िनेंशियल क्राइसिस.'' एनबीइआर वर्किंग पेपर.3934.

मोहन, आर. 2005. ''कम्युनिकेशन इन सेंट्रल बैंक्सः ए पर्सपेक्टिव.'' एड्रेस एट दि सार्कफ़ाइनेंस गवर्नर्स सिंपोजियम. आरबीआई बुलेटिन. अक्तूबर.

मिरडल. जी.1950. ''डिवेल्पमेंट एंड अंडरडिवेल्पमेंट.'' 50यथ एनिवर्सरी लेक्चर. नैशनल बैंक ऑफ़ इजिप्ट. कैरो.

——.1965. डिवेल्पमेंट एंड अंडरडिवेल्पमेंट रिजंस. डकवर्थ.लंडन.

नाचाने= डी.2005. ''सम रिफ्लेक्शंस ऑन दि मॉनेटरी पॉलिसी इन दि लीडेन एज.'' इकॉनॉमिक एंड पालिटिकल वीकली. XL(28).

नोलन, सी. एंड इस्केलिंग.1996 मॉनेटरी पॉलिसी अनसरटेंटी एंड सेंट्रल बैंक अकाउंटेबिलिटी, बैंक ऑफ़ इंग्लैंड वर्किंग पेपर सिरीज़.54.

पियानाल्टो. एस.2005. ''एस्पेरेशंस। कम्युनिकेशंस एंड मॉनेटरी पालिसी.'' फ़ेडरल रिजर्व बैंक ऑफ़ सेंट लुइस रिव्यू. मार्च/अप्रैल. पार्ट 1.83-85.

प्रसाद, इ., के रोगोफ़, जे. शांग ऐंड एम कोस.2003. ''इफ़ेक्ट्स ऑन फ़ाइनेंशियल ग्लोबलाइजेशन ऑन डेवलपिंग कंट्रीज - सम इंपीरिकल इवीडेंस.'' आइएमएफ़.

रेड्डी वाई. वी.2000. ''चेंजिंग रोल ऑफ़ आरबीआईः एजेंडा फ़ॉर एटेंशन.'' 18थ बी.एफ़. मदान मेमोरियल लेक्चर डिलीवर्ड.http:www rbi.org.in.

——.2001. ''ऑटोनीमी ऑफ़ दि सेंट्रल बैंक : चेंजिंग कंटूर्स इन इंडिया.'' स्पीच डेलीवड एट आइआइएम. इंदौर. http://www.rbi.org.in.

——.2004. ''फ़ाइनेंशियल स्टेबिलिटी : इंडियन एक्सपीरियंस''. स्पीच एट जुरिक युनिवर्सिटी, जुरिक. स्विट्ज़रलैंड http:// www.rbi.org.in

——.2005. ''मॉनेटरी कोऑपरेशन इन एशिया. स्पीच एट दि आइएफ़एफ़ - एमएएस हाइ लेवल सेमिनार ऑन एशियन इंटीग्रेशन. सिंगापुर. http: www.rbi.org.in''

रीस, जे.1999. ''दि बैंक ऑफ़ पोर्तुगाल्स फ़स्ट सेंचुरी : फ्रॉम 1846 टू दि सेकंड वर्ल्ड वार'' इन हॉल्टफ्रेरिच सी., जे.रीस एंड जी. टोनीयोलो (इडीएस). दि इमर्जेंस ऑफ़ मॉडर्न सेंट्रल बैंकिंग फ्रॉम 1978 टू दि प्रज़ेंट. एशगेट. अल्डरशॉट. इग्लैंड

सरेल. एम.1996. ''नॉन लाइनियर इफेक्ट्स ऑफ़ इनफ्लेशन ऑन इकनोमिक ग्रोथ.'' आइएमएफ़ स्टाफ़ पेपर्स. 43ः 199-215.

सेयर्स, आर.1961. ''दि रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंक इन ए डिवेल्पिंग इकॉनॉमी.'' प्रोब्लेम्स ऑफ़ डिवेल्पमेंट ऑग्रनाइज़ेशन फ़ॉर युरोपियन इकॉनॉमिक कोऑपरेटिव, युरोपियन प्रोडक्टिविटी एजेंसी, पेरिस.

——. शेंग ए. 1991. ''रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंक इन बैंकिंग क्राइसिसः एन आवेरव्यू.'' इन डाउन्स. पी. एंड आर. विज़ादेह (इडीएस). दि इवॉल्विंग रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स. आइएमएफ़. वाशिंग्टन.

सिंह सी. 2005. ''पब्लिक डेट इन इंछिया: दि नीड टू सेपरेट डेट फ्रॉम मॉनेटरी मैनेजमेंट.'' स्टेनफ़ोर्ड सेंटर फ़ॉर इंटरनैशनल डिवेल्पमेंट वर्किंग पेपर.240. फ़रवरी.

सोडरस्टन, बी. एंड जी. रीड1994. इंटरनैशनल इकोनॉमिक्स. थर्ड एडीशन. मैकमिलन. ग्रेट ब्रिटेन.

स्वेनसन. एल.2002.''मॉनेटरी पॉलिसी एंड रियल स्टेबिलाइज़ेशन'' प्रज़ेंटेड एट ए सिंपोज़ियम स्पोंसर्ड बाइ दि फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ केंसार सिटी. व्योमिंग.

टेलर, जे.1997. इकोनॉमिक्स एआइटीबीएस. नई दिल्ली.

थोर्नटर्न, एच.1802. एन इनक्वायरी इनटू दि नेचर एंड इफेक्ट्स ऑफ़ दि पेपर क्रेडिट ऑफ़ ग्रेट ब्रिटेन (इडीएस) विथ एन इंट्रोडक्शन बाय एफ़.ए. वॉन हेक. लंडन, जॉर्ज एलन एंड अनविन.

ट्यूमा, ज़ेड 2005. ''दि इंटररिलेशनशिप बिटविन मॉनेटरी पॉलिसी, प्राइज़ स्टेबिलिटी एंड फ़ानेंशियल स्टेबिलिटी.'' बीआइएस रिव्यू. 20.http: //www.bis.org.

टर्नर, पी.एंड जे. टी डैक.1996. ''चेंजिंग फ़ाइनेंशियल सिस्टिम्स इन ओपेन इकॉनॉमीजः एन ओवरव्यू.'' बीआइएस पॉलिसी पेपर, 1:5-61.

उदेशी, के.2004. ''रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंकर्स इन इमर्जिंग इकॉनॉमी लाइक इंडिया.'' एड्रेस एट दि विलिंगकार इंस्टिट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट. http: //www.rbi.org.in.

——.2005. ''दि परसूट ऑफ़ फ़िनेंशियल स्टेबिलिटी.'' स्पीच एट दि सेवंथ मनी एंड फ़ाइनेंस कॉन्फ़रेंस एट आइजीआइडीआर. बीआईएस रिव्यू g.http://www.rbi.org.in

वासुदेवन, ए. (2003): सेंट्रल बैंकिंग इन इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमीज, एकेडेमिक फ़ाउंडेशन.

वारे, डी.1996. बेसिक प्रिंसीपल्स इन बैंकिंग सुपरविज़न. हैंड बुक इन सेंट्रल बैंकिंग नं.7. सेंटर फ़ॉर सेंट्रल बैंकिंग स्टडीज़, बैंक ऑफ़ इंग्लैंड

व्हीलॉक, डी. 2002. ''कंडक्टिंग मॉनेटरी पॉलिसी विदाउट गवर्नमेंट डेटः दि फ़ेड्स अर्ली इयर्स.'' दि फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ सेंट लुइस रिव्यू.84(3); 1-14.

IV. सेंट्रल बैंकिंग इन इंडिया

बालचंद्रन. जी.1998, दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया, 1951-67 ऑक्सफ़ोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस. दिल्ली.

देशमुख, सी.डी. 1997. ''सेंट्रल बेंकिंग इन इंडिया- ए स्ट्रोस्पेक्ट.'' इन 50 इयर्स ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग : गवर्नर्स स्पीक, रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया. मुंबई.

फ्राय, एम., डी. जुलियस, एल. महादेवा, एम.रोजर एंड नी. स्टर्न.2000. ''की इस्यूज़ इन दि चॉइस ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क.'' इन मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क इन ए. ग्लोबल कॉन्टेक्स्ट. एल. महादेवा एंड जी. स्टर्न.(इडीएस) रुटलेज. लंडन; 1-216.

जाधव, नरेन्द्र.2003. ''सेंट्रल बैंकिंग स्ट्रेटेजीज़, क्रेडिबिलिटी एंड इंडिपेंडेंस.'' आरबीआई आकेज़नल पेपर्स, 24(1 एंड 2).

——. 2005. ''मॉनेटरी पॉलिसी, फ़ाइनेंशियल स्टेबिलिटी एंड सेंट्रल बैंकिंग इन इंडिया.'' मैकमिलन इंडिया लि.; नई दिल्ली.

मेहता, वी.पी. 1985, ''फ़ेरा; एक्सचेंज कंट्रोल इन इंडिया.'' एशिया पब्लिशिंग हाउस : बॉम्बे.

मोहन, राकेश.2003. ''ग्लोबलाज़ेशन; दि रोल ऑफ़ इंस्टीट्यूशन बिल्डिंग इन दि फ़ाइनेंशियल सेक्टर : दि इंडियन केस.'' आर बी आई बुलेटिन. फ़रवरी.

——. 2004. "भारत के वित्तीय क्षेत्र सुधार : नीतियां तथा कार्यनिष्पादन विश्लेषण.'' भारिबैंक बुलेटिन, अक्तूबर.

——. 2004. ''ए डेकेड ऑफ़ रिफ़ार्म्स इन गवर्नमेंट सेक्युरिटीज़ मार्केट इन इंडिया एंड दि रोड अहेड'' आरबीआई बुलेटिन. नवंबर.

नाचाने, एम.2005. ''सम रिफ्लेक्शंस मॉनेटरी पॉलिसी इन दि लीडिंग एज'' इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल रंगराजन., सी. 1993. ''ऑटोनोमी ऑफ़ वीकली., सेंट्रल बैंक्स. जुलै 9'' टेंथ एम जी. कुट्टी मेमोरियल लेक्चर डेलीवर्ड एट कोलकत्ता. सप्टेंबर 17, आरबीआई. रिप्रिंटेड इन 50 इयर्स ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग : गवनर्स स्पीक.

रेड्डी, वाइ.वी. 2000. ऑपरेशनलाइजिंग कैपिटल लिबरलाइज़ेशन; इंडियन एक्सपीरियंस प्रज़ेंटेशन एट दि सेमिनार ऑन कैपिटल एकाउंट लिबरलाइज़ेशनः दि डेवलपिंग कंट्री पर्सपेक्टिव, एट ओवसीज डिवेल्पमेंट इंस्टीट्यूट लंडन ऑन जून 21.

——. 2001. ''ऑटोनॉमी ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स : चेंजिंग कंटूर्स इन इंडिया.'' सेकंड फ़ाउंडेशन डे लेक्चर एट दि इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ़ मैनेजमेंट, इन्दौर, ऑक्टोबर 3, आरबीआई.

रिजर्व बैंक ऑफ़ इंडिया 1955, दि जनरल रिपोर्ट ऑफ़ दि कमिटी ऑफ़ डायरेक्शन : ऑल इंडिया रूरल क्रेडिट सर्वे (एब्रिज्ड एडीशन): बॉम्बे.

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया.1970. दि हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडियाः 1935-51 : बॉम्बे.

——. 1985. रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडियाः फ़िफ़्टी इयर्स (1935-85): बॉम्बे.

——. 1977. ''रिपोर्ट ऑफ़ दि ग्रुप ऑन कैपिटल एकाउंट कनवरिबिलिटी (चेयरमैन. श्री एस.एस. तारापोर).'' मुंबई.

——. 1998. पेमेंट सिस्टम्स इन इंडियाः मुंबई.

——. 2000. रिपोर्ट ऑफ़ दि एडवाइज़री ग्रुप ऑम ट्रांसपरेंसी इन मॉनिटरी एंड फिनेंशियल पॉलिसीज़. (चेयरमैनः एम. नरसिंहम). सितंबर.

——.2005. रिपोर्ट ऑन ट्रेंड एंड प्रोग्रेस ऑफ़ बैंकिंग इन इंडिया. 2004-05

——. 2005 ए. दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया, 1967-1981 मुंबई (फोर्थ कमिंग)

रॉड्रिक, शनी, ए. सुब्रमणियन एंड एफ ट्रेब्बी.2004. ''इंस्टिटयूशंस रूल : दि प्राइमेसी ऑफ़ इंस्टीट्यूशंस ओवर ज्योग्राफी एंड इंटीग्रेशन इन इकॉनॉमिक डिवेल्पमेंट." जर्नल ऑफ़ इकॉनॉमिक ग्रोथ, 9.131-165.

वासुदेवन, ए.2003. ''सेंट्रल बैंकिंग फ़ॉर इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमीज़." एकेडेमिक फाउंडेशन : नई दिल्ली।

V. फिनेंशियल रेगुलेशन एंड सुपरविज़न

एलेन, फ्रेंकलिन एंड रिचड् हेरिंग. 2001. ''बैंकिंग रेगुलेशन वर्सेस सेक्युरिटीज़ मार्केट रेगुलेशन." फिनेंशियल इस्टिटयूशंस सेंटर, व्हार्टन स्कूल, युनिवर्सिटी ऑफ़ पेनसिलवेनिया, वर्किंग पेपर 01-29.

एरो.के. 1974. दि लिमिट्स ऑफ़ ऑर्गेनाइज़ेशन, वेस्ट व्यू. न्यू यार्क.

आस्ट्रेलिया प्रुडेंशियल रेगुलेशन ऑथरिटी 1999. ''प्रुडेंशियल सुपरविज़न ऑफ़ कोंग्लोमिरेट्स." पॉलिसी डिस्कशन पेपर, नवंबर.

बैंक ऑफ़ इंटरनैशनल सेटलमैट.2004. ''बासेल 11:इंटरनैशनल कनवर्जेंस ऑफ़ कैपिटल मीज़रमेंट एंड कैपिटल स्टैंडर्ड्स-ए. रिवाइस्ड फ्रेमवर्क." बासल कमिटी पब्लिकेशन नं. 107. जुलाई।

——. 2000. ''इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग ग्रुप इनिशिएटिव एंड व्हाइट पेपर्स." बासल कमिटी ऑन बैंकिंग सुपरविज़न, अक्तूबर।

——. 2003 ए. ''मैनेजमेंट एंड सुपरविज़न ऑफ़ क्रॉस-बॉर्डर इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग एक्टिविटीज." बासल कमिटी ऑन बैंकिंग सुपरविज़न, जुलाई।

——. 2003 बी. ''रिस्क मैनेजमेंट प्रिंसिपल्स फ़ॉर इलेक्ट्रॉनिक बैंकिंग." बासल कमिटी ऑन बैंकिंग सुपरविज़न, जुलाई।

——. 2003 सी. ''थर्ड कंसल्टेटिव पेपर." बासेल।

——. 1955. ''सुपरविज़न ऑफ़ फाइनेंशियल कोंग्लोमिरेट्सः ए - रिपोर्ट बाय दि ट्रायपार्टाइट ग्रुप ऑफ़ बैंक, सेक्युरिटीज़ एंड इंश्युरेंस रेगुलेटर्स." जुलाई।

बैंक ऑफ़ इंग्लैंड 1988. ''रिस्क बेस्ड एप्रोच टू सुपरविज़न ऑफ़ बैंक्स." जून।

बार्थ, जेम्स आर. केपिरो, जेरार्ड आर., एंड लेविन रॉस. 2001 ''दि रेगुलेशन एंड सुपरविज़न ऑफ़ अराउंड दि वर्ल्ड, ए न्यू डाटाबेस." वर्ल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च वर्किंग पेपर नं.2588।

बार्थ. जेम्स आर., डोमिको, लुइसजी., नोले, डेनियल इ. एंड जेम्स विल्कॉक्स। 2001 ‘‘एन इंटरनैशलन कंपेरीज़न एंड एसेसमेंट ऑफ़ दि स्ट्रक्चर ऑफ़ बैंक सुपरविज़न." पेपर डिस्कस्ड इन दि कॉन्फरेंस. दि फ्यूचर आूफ फिनेंशियल रेगुलेशन इन तैवान. तायपी. तैवान.जुलै 6

बार्थ. जेम्स आर., काप्रियो, गेराई और लेविन रॉस. 2003. ‘‘बैंक रेग्युलेशन एंड सुपरवीज़न : लेसन फ्रॉम न्यू डेटाबेस.’’ ऑथर्स मिल्कन इन्स्टीटयूट, वर्ल्ड बैंक, यूनिवर्सिटी ऑफ मिनेसोटा, क्रमश:

93 मोल, डब्ल्यू. जे. पांज़र, जे सी., एंड विल्लिग, आर.डी. 1983. ‘‘कॉन्टेस्टेबल मार्केट्स एंड दि थ्योरी ऑफ़ इंडस्ट्री स्ट्रक्चर." हर्स्कोर्ट जेस जानोविच : सॅन डिगो।

बरनें के, बेन एस.2005. ‘‘इनफ्लेशन लेटिन अमेरिका - ए न्यू एरा?" रिमार्कस मेड एट दि स्टेन फ्वोर्ड इंस्टिटयूट फ़ॉर इकॉनॉमिक पॉलिसी रिसर्च इकॉनॉमिक समिट : स्टेनफोर्ड, केलीफोर्नियो, फ़रवरी।

बोरियो, क्लाडियो. 2002. ‘‘टुवर्डस ए मैक्रो - प्रुडेंशियल फ्रेमवर्क फ़ॉर फिनेंशियल सुपरविज़न एंड रेगुलेशन." सीइएस आइएफओ इकॉनॉमिक स्टडीज 49, 2/2003, इंस्टिट्यूट फ़ॉर इकॉनॉमिक रिसर्च : म्युनिक।

क्यूरी. केरालिन. 2003. टुवड्स ए. जनरल थ्योरी ऑफ़ फिनेंशियल रेगुलेशनः प्रिडिक्टिंग, मीज़रिंग एंड प्रिवेंटिंग फिनेंशियल क्राइसिस. युनिवर्सिटी ऑफ़ टेक्नोलॉज : सिडनी।

डिमेस्ट्री, एडगार्डो एंड गुरेरो फेडरिको. 2005 दि रेशनल फ़ॉर इंटिग्रेटिंग फ़िनेंशियल सुपरविज़न इन लेटिन अमेरिका एंड दि केरिबियन।

डिमेस्ट्री, एडगार्डो एंड गुरेरो फेडरिको. 2005 दि रेशनल फर इंटिग्रेशन फिनेंशियल सुपरविज़न इन लेटिन अमेरिका एंड दि केरिबियन. लेखक क्रमशः अंतर अमेरिका डिवेल्पमेंट बैंक और युनिवर्सिटी ऑफ़ नेवडा से हैं।

डायमंउ, डी. डब्ल्यू एंड रघुराम जी. राजन. 2005. ‘‘लिक्विडिटी शार्टेजेस एंड बैंकिंग क्राइसेस." रि जर्नल ऑफ़ फ़ाइनेंस.60(2)।

इ-स्टैंडर्ड्स फ़ोरम वेबसाइट. http://www.estandardsforum.com.

फ़ीबिग, माइकेल.2001. प्रुडेंशियल रेगुलेशन एंड सुपरविज़न फ़ॉर एग्रीकल्चरल फ़ाइनेंस. फूड एंड एग्रीकल्चरल आर्गेनाइज़ेशन, रोम।

फ्रेंकेल, ए.बी. एंड मोंटगोमेरी. जे.डी.1991. ‘‘फ़िनेंशियल स्ट्रक्चरः एन इंटरनेशनल पर्सपेक्टिव इन ब्रेनार्ड." डब्ल्यू. सी. पेरी. जी.एल (इडीएस). ब्रूकिंग पेपर्स ऑन इकॉनोमिक एक्टिविटी, दि ब्रूकिंग इंस्टिट्यूट, वांशिगटन।

जॉर्जेस, डियोन्ने.2003. ‘‘दि फ़ाउंडेशन ऑफ़ बैंक्स रिस्क रेगुलेशनः ए रिव्यू ऑफ़ दि लिटरेचर." पेपर प्रज़ेंटेड इन दि बैंक ऑफ़ केनडा कॉन्फ़रेंस में दि इवोल्विंग फ़िनेंशियल सिस्टिम एंड पब्लिक पॉलिसी पर पढ़ा गया पेपर ओटावा. दिसंबर 4।

जॉर्ज, इ.ए.जे 1994. ‘‘दि बैंक ऑफ़ इंग्लैंड - ऑब्जेक्टिव एंड एक्टिविटीज़." दिसंबर 5, 1994 को दि कैपिटल मार्केट रिसर्च इंस्टिट्यूट ऑफ़ फ्रेंकफ़र्ट युनिवर्सिटी में दिया गया व्याख्यान।

जियोर्जियो, जियार्जियो डी.2001. ‘‘फ़िनेंशियल रेगुलेशन एंड सुपरविज़न इन दि युरो एरा: ए फ़ोर-पीक प्रोपोज़ल." फ़िनेंशियल इंस्टिट्यूशंस सेंटर. व्हार्टन पेपर, 01-02

गुडहार्ट, सी. पी., हार्टमन, लेल्विन, डी.टी., रोजस-सुरेज, एल, एंड एस. वेइसब्राड. 1998. फिनान्शियल रेग्युलेशन, व्हाई, हाऊ एंड व्हेअर नाऊ? राल्टेज, लंडन.

गुडहार्ट, सी.ए.इ.2000. ‘‘दि ऑर्गेनाइज़ेशनल स्ट्रक्चर ऑफ़ बैंकिंग सिस्टिम." एफ़एसआई ओकेज़नल पेपर्स, 1:10-25, नवंबर।

ग्रीनस्पॅन. एलन. 1997. ‘‘सुपरविज़न ऑफ़ बैंकिंग आर्गेनाइज़ेशंस." टेस्टिमनी टू दि कमेटी ऑन बैंकिंग एंड फ़िनेंशियल सर्विसेस. यू.एस हाउस ऑफ़ रिप्रज़ेंटेटिव्स, मार्च 19.

ग्रीनस्पॅन, एलन, 1999. ‘‘रिमार्क्स बिफ़ोर दि अमेरिकन बैंकर्स एसोसिएशन." फ़ोनिक्स, एरिज़ोना ऑन अक्तूबर 11.

ग्रीन स्पैन, एलन. 2005. ‘‘रिमार्क्स बिफ़ोर दि इंडिपेंडेंट कम्युनिटी बैंकर्स ऑफ़ अमेरिका नैशनल कनवेंशन. सैन एंटोनियो, टेक्सास ऑन मार्च 11.

केन, इ.जे. 1981. ‘‘एक्सीलरेटिंग इनफ़्लेशन, टेक्नोलॉजिकल इनोवेशन एंड दि डिक्रीज़िंग इफ़ेक्टिवेनेस ऑफ़ बैंकिंग रेगुलेशन." जर्नल ऑफ़ फ़ाइनेंस, 36-355-67.

लीलाधर, वी.2005. ‘‘बासल II एकॉर्ड एंड दि इंप्लीकेशंस." आरबीआई बुलेटिन, अप्रैल।

लेवेललिन, डी.टी.1996. ‘‘बैंकिंग इन दि ट्वेंटीफ़स्ट सेंचूरीः दि ट्रांसफ़ोर्मेशन ऑफ़ इन इंडस्ट्री." इन दि फ्द्ध्यूचर ऑफ़ दि फ़िनेंशियल सिस्टिम, इन इडे, एम (एड), प्रोसिडिंग्स ऑफ़ ए कॉन्फ़रेंस. इकॉनोमिक ग्रुप, रिज़र्व बैंक ऑफ़ आस्ट्रलिया, अल्केन प्रेसः आस्ट्रेलिया।

मल्होत्रा, आर.एन.1990. दि इवोल्युशन ऑफ़ फ़िनेंशियल सिस्टम, 19 वाँ फ्रेंक मोरिस मेमोरियल लेक्चर, चेन्नै, सितंबर।

मार्टिनेज़, जोज़ डे लूना एंड रोज़ थामस ए. 2003. ‘‘इंटरनैशनल सर्वे ऑफ़ इंटिग्रेटेड फ़िनेंशियल सेक्टर सुपरविज़न." वल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च. वर्किंग पेपर 3096।

मिस्त्री, पर्सी. 2003. ट्रेंड्स इन इंटरनैशनल फ़िनेंशियल सिस्टिम रेगुलेशन एंड सुपरविज़न. कॉमनवेल्थ सेक्रेट्रिएट।

मोहन, राकेश.2003. ‘‘ट्रासफ़ॉर्मिंग इंडियन बैंकिंगःइन सर्च ऑफ़ ए बेटर टुमारो." आरबीआई बुलेटिन, जनवरी।

मोहन, राकेश, 2004 ए. ‘‘एग्रिकल्चरल क्रेडिट इन इंडिया : स्टेटस, इश्यूज़ एंड फ़्यूचर एजेंडा." आरबीआई बुलेटिन, नवंबर।

मोहन, राकेश. 2004 बी. ‘‘ओनरशिप एंड गवर्नेंस इन प्राइवेट सेक्टर बैंक्स इन इंडिया." आरबीआर बुलेटिन, अक्तूबर।

मोहन, राकेश. 2004 सी. ‘‘इंडियन बैंकिंग एंड इ - सेक्युरिटी." आरबीआई बुलेटिन, नवंबर।

मोहन, राकेश.2005. ‘‘फ़िनेंशियल सेक्टर रिफ़ोर्म्स इन इंडियाः पॉलिसिज़ एंड परफ़ोर्मेंस एनलिसिस." इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली. मार्च 19.

पीक, जो एरिक, एस. रोसेंग्रेन, एंड जी.एम.बी. टूटेल. 1999. इज़ बैंक सुपरविज़न सेंट्रल टू सेंट्रल बैंकिंग। फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ बोस्टन.

रामा, रऊ बेनेगल. 1960. ‘‘कंट्रोल ऑफ़ कमर्शियल बैंकिंग एंड एक्सटेंशन ऑफ़ बैंकिंग फ़ैसिलिटीज." सर अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर शास्तीयाब्दीपूर्ति एंडोमेंट लेक्चर फ़ॉर दि इयर 1959-60 डेलिवर्ड ऑन अप्रैल 18.

राज, जनक.2005. ‘‘इज़ देयर ए केस फ़ॉर ए सुपर रेगुलेशन इन इंडिया? इश्युज़ एंड ऑपशंस." इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, वॉल्यूम XL(35). अगस्त 27।

रेड्डी, वाइ.वी. 1998. ‘‘बैंकिंग साउंडनेस, मॉनेटरी पॉलिसी एंड मैक्रो-इकॉनॉमिक मैनेजमेंटः रैंडम थॉट्स." आरबीआई बुलेटिन, फ़रवरी.

रेड्डी वाइ.वी.2000. ‘‘चेंजिंग रोल ऑफ़ आरबीआईः एजेंडा फ़ॉर एटेंशन." आरबीआई बुलेटिन, जुलाई।

रेड्डी, वाइ.वी. 2001 ए. ‘‘इंप्लीमेंटेशन ऑफ़ फ़िनेंशियल स्टैंडर्ड्स एंड कोड्सः इंडियन पर्सपेक्टिव एंड एप्रोच." आरबीआई. बुलेटिन, अप्रैल।

रेड्डी वाइ.वी. 2001 बी. ''इश्यूज़ इन चूज़िंग बिटविन सिंगल एंड मल्टीपल रेगुलेशन ऑफ़ फ़िनेशियल सिस्टम. आरबीआई बुलेटिन जून।

रेड्डी, वाइ.वी. 2005.''बैंक्स एंड कार्पोरेट्स एज़ पार्टनर्स इन प्रोगेस." आरबीआई बुलेटिन. नवंबर।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया, एन्युअल रिपोर्ट. वेरियस इश्यूज़।

——. 1999. ''कोर प्रिंसिपल्स ऑफ़ इफ़ेक्टिव बैंकिंग सुपरविज़न." अक्तूबर।

——. 2003. (डीबीएस) सर्क्युलर. ''गाइडलाइंस फ़ॉर कंसालीड़ेटेड एकाउंटिंग एंड कंसोलीडेटेड सुपरविज़न." अगस्त।

——. हिस्ट्री ऑफ़ दि रिजर्व बैंक ऑफ़ इंडिया. 1935-1951.

——. हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया, 1951-1967.

——. हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया, 1967-1981.

——. 2004. रिपोर्ट ऑफ़ दि वर्किंग ग्रुप ऑन मॉनिटरिंग ऑफ़ सिस्टमिकली इंपोर्टेंट फ़िनेंशियल इंटरमीजियरिज़ (फ़िनेंशियल कोंग्लोमिरेट्स)।

——. रिपोर्ट ऑन ट्रेंड एंड प्रोग्रेस ऑफ़ बैंकिंग इन इंडिया, वेरियस इश्यूज़।

——. 2001. रिपोर्ट ऑफ़ दि वर्किंग ग्रुप ऑन कंसोलीडेटेड अकाउंटिंग एंड अदर क्वांटिटेटिव मेथड्स टू फेसिलिटेट कंसोलीडेटेउ सुपरविज़न. दिसंबर.

——. 2001 ए. रिपोर्ट ऑन इंटरनेट बैंकिंग.

——.2002. रिपोर्ट ऑफ़ दि वर्किंग ग्रुप ऑन इलेक्ट्रॉनिक मनी

——. 2003, रिस्क-बेस्ड सुपरविज़न मैन्युअल।

चिनासी, गेरी जे. 2003. ''रिस्पोंसिबीलिटी ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स फ़ॉर स्टेबिलिटी इन फ़िनेंशियल मार्केट्स." वर्किंग पेपर 03/12. आईएमएफ़ वाशिंग्टन.

सिंकलेयर, पी.जे.एन.2000. ''सेंट्रल बैंक्स एंड फ़िनेंशियल स्टेबिलिटी." बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टर्ली बुलेटिन, नवंबर।

सिंकी जूनियर. जे.एफ़. 1992. कमर्शियल बैंक फ़िनेंशियल मैनेजमेंट. मैक्सवेल मैकमिलन।

स्टॅलिंग्स, बारबरा एंड स्टुडार्ट रोजेरियो.2003. फ़िनेंशियल रेगुलेशन एंड सुपराज़िन इन इमर्जिंग मार्केट्स. दि एक्सपीरियंस ऑफ़ लेटिन अमेरि सिंस दि तेक्विला क्रासिस, युनाइटेड नेंशस युनिवर्सिटी, वल्ड इंस्टिट्यूट फ़ॉर डिवेल्पमेंट इकॉनोमिक्स।

स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया. दि. इबोल्युशन ऑफ़ दि स्टेट बैंक ऑफ़ इंडियाः दि रुट्स 1806-1876. पार्ट I एंड II.

स्टेफ़नो. सी. 2005. ''सुपरविज़न ऑफ़ फ़िनेंशियल कोंग्लोमिरेट्सः दि केस ऑफ़ चिले." वल्ड बैंक पॉलिसी रिसर्च, वर्किंग पेपर 3535 मार्च।

दि रॉयल बैंक ऑफ़ स्कॉटलैंड ग्रुप. दि स्टोरी ऑफ़ बैंकिंग - ए हिस्ट्री ऑफ़ ब्रिटिश बैंकिंग. की वेबसाइट पर उपलब्ध आरबीएस ग्रुप।

VI. फ़िनेंशियल मार्केट इवोल्युशन एंड ग्लोबलाइज़ेशन

गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया.1972. बैंकिंग कमेटी रिपोर्ट

——. 1998, कमेटी ऑन बैंकिंग सेक्टर रिफ़ोर्म्स (चेयरमैनः एम नरसिंहम)

गोपीनाथ, एस.2005. ''रीसेंट डिवेल्पमेंट इन फ़ॉरेक्स. मनी एंड गवर्नमेंट सेक्युरिटीज मार्केट्सः अकाउंट एंड आउटलुक, आरबीआई बुलेटिन, अगस्त।

ग्रीनस्पॅन, ए.1997. ''सेंट्रल बैंकिंग एंड ग्लोबल फ़ाइनेंस." रिमार्क्स एट केथोलिक युनिवर्सिटी में प्रस्तुत टिप्पणी। जनवरी।

——. 2005. ''रिफ्लेक्शन ऑन सेंट्रल बैंकिंग". दि फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ कंसास सिटी. जैक्सन होल व्योमिंग द्वारा प्रायोजित सम्मेलन में प्रस्तुत टिप्पणी। अगस्त।

——. 2005, दि फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ कंसास सिटी. जैक्सन होल. व्योमिंग. द्वारा प्रायोजित सम्मेलन के समापन पर दिया गया व्याख्यान।

हक, नदीम 3m 2002. ''डेवलपिंग फ़िनेंशियल मार्केट्स इन डेवलपिंग इकॉनॉमीज़'' वित्तीय सुधार सम्मेलन कॉन्फ़रेंस, आइएमएफ़ मे दिया गया व्याख्यान।

इंटरनैशनल मॉनेटरी फंड 2005. ''ग्लोबल फ़िनेंशियल स्टेबिलिटी रिपोर्ट.''

इंग्वेस, स्टीफ़न.2004. ''मॉनेटरी पॉलिसी इंप्लीमेंटेशन एट डिफ़रंट स्टेजेस ऑफ़ मार्केट डिवेल्पमेंट. आइएमएफ़ पॉलिसी पेपर।

जाधव, नरेन्द्र. 2005.''मॉनेटरी पॉलिसी, फ़ाईनेंशियल स्टेबिलिटी एंड सेंट्रल बैंकिंग इन इंडिया.'' मैकमिलन इंडिया लिमिटेड नई दिल्ली।

जालान, बिमल 2001. ''डिवेल्पमेंट एंड मैनेजमेंट ऑफ़ फ़ॉरेक्स मार्केट्सः ए सेंट्रल बैंकिंग पर्सपेक्टिव.'' आरबीआई बुलेटिन, फ़रवरी।

कामेसम, वेपा.2001. ''फ़ॉरेक्स मार्केट इन इंडिया.'' आरबीआई बुलेटिन. दिसंबर।

कारकेडेग, सी.वी. सुदरराजन एंड जे. इलियट. 2003.''मैनेजिंग रिस्क इन फ़ाईनेंशियल मार्केट डिवेल्पमेंट्स. दि रोल ऑफ़ सिक्वेंसिंग.'' आई एम एफ़ वर्किंग पेपर।

कोन, डोनाल्ड, एल.2005. ''मॉनेटरी पॉलिसी पर्सपेक्टिव ऑन रिस्क प्रिमियम्स इन फ़ाईनेंशियल मार्केट्स.'' जुलाई।

मैक डोनफ़, विलियम जे. 1998. ''दि रोल ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स इन दि ग्लोबल फ़ाईनेंशियल मार्केट्स.'' विचार। इकॉनोमिक क्लब, न्यू यार्क में व्यक्त। मोहन, राकेश. 2004. ''ए डेकेड ऑफ़ रिफ़ार्म्स इन गवर्नमेंट सेक्युरिटीज मार्केट इन इंडिया एंड दि रोड अहेङ'' आरबीआई बुलेटिन, मार्च

मुजुमदार, एन.ए.2002. ''फ़िनेंशियल सेक्टर रिफ़ोर्म्स.'' इंडियाज़ इकॉनोमिक डिवेल्पमेंट वॉल्यूम.1. एकेडेमिक फ़ाउंडेशन.

रंगराजन, सी.2000.''स्ट्रक्चरल रिफ़ोर्म्स इन इंडस्ट्री, बैंकिंग एंड फ़ाइनेंसः ए केस स्टडी ऑफ़ इंडिया.'' सिंगापुर।

रेड्डी, वाय्.वी. 1998. ''डिवेल्पमेंट ऑफ़ डेट मार्केट्स इन इंडियाः'' आरबीआई बुलेटिन, नवंबर.

——. 1999. ''डिवेल्पमेंट ऑफ़ फ़ॉरेक्स मार्केट्सः इंडियन एक्सपीरियंस.'' आरबीआई बुलेटिन, सितंबर.

——. 2000. ''मैनेजिंग पब्लिक डेट एंड प्रोमोटिंग डेट मार्केट्स इन इंडिया.'' आरबीआई बुलेटिन, जून।

——. 2001, 'डिवेल्पमेंट इन मॉनेटरी पॉलिसी एंड फ़ाइनेंशियल मार्केट्स.'' आरबीआई बुलेटिन, मई।

——. 2002. ''डायमेंशन ऑफ़ फ़ाइनेंशियल डिवेल्पमेंट, मार्केट रिफ़ॉर्म्स एंड इंटीग्रेशनः दि इंडियन एक्सपीरियंस.'' पब्लीश्ड इन मैक्रोइकॉनोमिक्स एंड मॉनेटरी पॉलिसी : इश्युज़ फ़ॉर ए रिफ़ॉर्मिंग इकॉनॉमी. एडिटेड बाय मोंटेक सिंह आहलुवालिया, वाइ.वी. रेड्डी एंड एस.एस. तारापोर. ऑक्सफ़ोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस.

——. 2002. ''डेवलपिंग बॉंड मार्केट्स इन इमर्जिंग इकॉनॉमीजः इश्यूज़ एंड इंडियन एक्सपीरियंस.'' आर बी आई बुलेटिन, मार्च.

——. 2005ए. ''दि रोड मैप फ़ॉर फ़िक्स्ड इनकम एंड डेरीवेटिव्स मार्केट्स.'' आरबीआई बुलेटिन, मार्च.

——. 2005 बी. ग्लोबलाइज़ेशन ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी एंड इंडियन एक्सपीरियंस.'' आरबीआई बुलेटिन, जून.

——. 2005 सी. ''मॉनेटरी को-ऑपरेशन इन एशिया.'' आरबीआई बुलेटिन, अक्तूबर।

——. 2005 डी. ''इंप्लीकेशंस ऑफ़ गलोबल फ़िनेंशियल इम्बैलेंसेस फ़ॉर दि इमर्जिंग मार्केट इकॉनॉमीज़.'' आरबीआई बुलेटिन, नवंबर।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया. दि हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया. 1935-51, बॉम्बे.

——. 1941. फंक्शंस एंड वर्किंग ऑफ़ आरबीआई, फ़र्स्ट एडीशन, मुंबई.

——. 1951-52. रिपोर्ट ऑफ़ दि आल इंडिया रूरल क्रेडिट रिव्यू कमेटी. (चेयरमैन; बी. वेंकटापय्या).

——. 1958. फंक्शंस एंड वर्किंग ऑफ़ आरबीआई, सेंकड एडीशन, मुंबई.

——. 1977. रिपोर्ट ऑफ़ दि कमेटी ऑन कैपिटल अकाउंट कनवर्टिबिलिटी, (चेयरमैनः एस.एस. तारापोर)

——. 1983. फंक्शंस एंड वर्किंग ऑफ़ आरबीआई, फ़ोर्थ एडीशन, मुंबई.

——. 1985. रिपोर्ट ऑफ़ दि कमेटी टू रिव्यू दि वर्किंग ऑफ़ दि मॉनेटरी सिस्टिम इन इंडिया (चेयरमैनःसुखमय चक्रवर्ती) मुंबई.

——. 1987. दि वर्किंग ग्रुप ऑन दि मनी मार्केट, (चेयरमैनः एन. वाघुल) मुंबई.

——. 1991. रिपोर्ट ऑफ़ दि कमेटी ऑन फ़िनेंशियल सिस्टिम, (चेयरमैनः एम. नरसिंहम).

——. 1992. कमेटी टू इनक्वायर इन टू दि इर्रेग्युलरिटीज़ इन सेक्युरिटीज़ ट्रांजेक्शंस ऑफ़ बैंक्स एंड फ़िनेंशियल इंस्टीट्यूशंस, (चेयरमैनः आर. जानकीरामन).

——. 1993. रिपोर्ट ऑफ़ दि हाइ लेवल कमेटी ऑन बैलेंस ऑफ़ पेमेंट्स, (चेयरमैनः सी. रंगराजन).

——. 1995. दि एक्सपोर्ट ग्रुप ऑन फ़ॉरिन एक्सचेंज मार्केट इन इंडिया, (चेयरमैन : ओ.पी. सोढानी) मुंबई.

——. 1999. रिपोर्ट ऑन रिपर्चेज़ एग्रीमेंट (रेपो)

——. 2005. रिपोर्ट ऑफ़ दि इंटरनल टेक्नीकल ग्रुप ऑन फ़ारेक्स मार्केट.

——. 2005. रिपोर्ट ऑफ़ दि इंटरनल टेक्नीकल ग्रुप ऑन सेंट्रल गवर्नमेंट सेक्यूरिटीज़ मार्केट.

——. 2005. रिपोर्ट ऑफ़ दि टेक्नीकल ग्रुप ऑन मनी मार्केट. मई।

——. एन्युअल रिपोर्ट्स वेरियस इश्यूज.

स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया. 2003. इवोल्यूशन ऑफ़ स्टेट बैंक ऑफ़ इंडिया. वाल्युम 3.

तारापोर, एस.एस. 2000. ''इंडियास मॉनिटरी पॉलिसी इन दि क्रूसीबल ऑफ़ रिफोर्म.'' कलेक्टेड स्पीचेज़ ऑफ़ एस.एस. तारापोर (1992-96) विज़न बुक्स.

दि सेंट्रल बैंकिंग इनक्वायरी कमेटी, 1931 (चेयरमैनः सर भूपेन्द्रनाथ मित्रा).

थोरात, यू.2002. ''डिवलिपंग बांड मार्केट्स टू डायवर्सिटी लांग टर्म डिवेल्पमेंट फाइनेंसः कंट्री स्टडी ऑफ़ इंडिया.'' एशिया पेसिफिक डिवेल्पमेंट जर्नल, जून.

टर्नर एंड टी डैक.1996 ''चेंजिंग फिनेंशियल सिस्टिम्स इन ओपन इकॉनॉमीज़ः एन ओवरव्यू.'' बीआइए एस पॉलिसी पेपर नं.1.

VII. इश्यूज़ इन मॉनेटरी एंड फ़िस्कल इंटरफ़ेस

एलेसिना, ए.1988. ''मैक्रोइकॉनोमिक्स एंड पॉलिटिक्स.'' इन ए-फिशच (इडी), एनबीइआर मैक्रोइकॉनोमिक्स एन्युअल. एमआइटी प्रेस : कैम्ब्रीज, मासः17-52.

बालचंद्रन, जी.1998 दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया - 1951-1967, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली।

बारो, आर जे. 1974. ''आर गवर्नमेंट बॉन्ड्स नेट वेल्थ.'' जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल इकॉनॉमी, 82(6)ः1095-1117.

बोरो, आर.जे एंड डी.बी. गॉर्डन. 1983. ''ए पॉज़िटिव थ्योरी ऑफ़ मॉनिटरी पॉलिसी इन ए नैच्युरल - रेट मॉडेल.'' जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल इकॉनॉमी. 91-589. 610.

ब्लाइंडर ए.एस.1982. ''इश्यूज़ इन दि कॉरडिनेशन ऑफ़ मॉनिटीरी एंड फिस्कल पॉलिसी.'' एनबीइआर वर्किंग पेपर 980.

व्लॉमेस्टियन एच.जे. एंड इ.सी. युनहोलन, 1997. ''इंस्टिटयूशनल एंड ऑपरेशनल एरेंजमेंट्स फ़ॉर कोरैडिनेटिंग मॉनिटरी, फिस्कल एंड पब्लिक डेट मेनेजमेंट इन ओइसीडी कंट्रीज्.'' इन कॉरडिनेटिंग पब्लिक डेट एंड मॉनिटरी मैनेजमेंट (इडीएस). वी. सुंदरराजन एंड पी. डेंटल्स एंड एच. जे. ब्लॉमेस्टियन, आइएमएफ.

चाउ, ग्रेगरी सी.1960. ''टेस्ट्स ऑफ़ इक्वेलिटी बिटविन सेट्स ऑफ़ कोइफिशियंट्स इन टू लाइनियर रिग्रेसंस.'' इकनोमेट्रिका.28.

को हेन, डी.एंड ओ. ''लॉइसेल.2001. ''व्हाय वाज दि यूरो वीक?'' मार्केट्स एंड पॉलिटिक्स, युरोपियन इकॉनॉमिक रिव्यू, 45 : 988ः94.

कॉटरेली सी.1993. ''लिमिटिंग सेंट्रल बैंक क्रेडिट टू दि गवर्नमेंट - थ्योरी एंड प्रैक्टिस.'' आइएमएफ आकेज़नल पेपर (110), दिसंबर।

डा, कोस्टा इ.पी. डब्ल्यू. 1985. रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया - फिफ्द्धटी इयर्स 1935-85. रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया.

डेल्टन जे. एंड सी.डी ज़ियोवेक.1999. ''सेंट्रल बैंक लॉसेस एंड एक्सपीरियंस इन सिलेक्टेड कंट्रीज़.'' टेक्निकल नोट, आइएमएफ।

देशमुख. सी.डी.1948. ''सेंट्रल बैंकिंग इन इंडिया - ए रिट्रोस्पेक्ट.'' एड्रेस डेलीवर्ड ऑन दि फ़ाउंडर्स डे ऑफ़ दि गोखले इंस्टिटयूट ऑफ़ पॉलिटिक्स एंड इकनोमिक्स, पुणे, मार्च।

दिक्षित, ए. एंड एल लेंबर टिनी.2003. ''इंटरेक्शन ऑफ़ कमिटमेंट एंड डिस्क्रीशन इन मॉनिटरी एंड फिस्कल पॉलिसीज़.'' अमेरिकन इकॉनॉमिक रिव्यू. 93(5)ः1522-1542।

डॉर्नबुश्च, आर. एंड एस. फ़िशच.1990. मैक्रोइकॉनोमिक्स फ़िफ्द्धथ एडीशन. मैकग्रॉ-हिल।

फ़िशर, एस.1977. ''लॉग-टर्म कॉन्ट्रेक्ट्स रेशन एक्सपेक्टेशंस एंड दि ऑप्टीमल मनी सप्लाय रुल.'' जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल इकॉनॉमी, 85.

फ्द्धलेमिंग, जे.एम.1962. ''डोमेस्टिक पॉलिसीज़ अंडर फ़िक्स्ड एंड अंडर फ्द्धलोरिंग एक्सचेंज रेट्स.'' आइएमएफ़ स्टाफ़ पेपर्स,9(3)ः369-79.

फ्राय, एम., डे एनी जुलियस, एल. महादेवा. एस. राजर्स, एंड जी. स्टर्न.1999। मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क इन ए ग्लोबल कॉन्टेक्स्ट. सेंटर फ़ॉर सेंट्रल बैंकिंग स्टडीज़।

घोष. ए.बी.1974. प्राइज़ ट्रेंड्स एंड पॉलिसीज़ इन इंडिया. विकास पब्लिशिंग हाउस.118-150.

गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया (जीओआइ).1951. फ़स्ट फ़ाइव इयर प्लान,. प्लानिंग कमीशन.

——. 1990 इकॉनोमिक सर्वे - 1989-90.

——. 1994. यूनियन बजट 1994-95 मिनिस्ट्री ऑफ़ फ़ाइनेंस.

——. 2004. रिपोर्ट ऑफ़ दि टास्क फ़ोर्स ऑन इंप्लीमेंटेशन ऑफ़ दि फ़िस्कल रिस्पोंसिबिलिटी एंड बजेट मैनेजमेंट ऍक्ट, 2003.

——. इकॉनोमिक सर्वे, वेरियस इश्यूज़.

——. 2004. *रिपोर्ट ऑफ दि ट्वेल्थ फाइनान्स कमीशन*, नवंबर.

2004 रिपोर्ट फंड (आइएमएफ़). 2002. गाइडलांइस फ़ॉर पब्लिक डेट मैनेजमेंट, आइएमएफ़-वर्ल्ड बैंक.

जाधव, एन.डी. 2003. ''सेंट्रल बैंक स्ट्रेटेजीज़, क्रेडिबिलिटी एंड इंडिपेंडेंसः ग्लोबल इवोल्यूशन एंड दि इंडियन एक्सपीरियंस.'' आरबीआई ओकेज़नल पेपर्स, समर एंड मानसूनः2-99.

जाधव, पी. रे, डी बोस एंड आइ सेन गुप्ता, 2003 ''रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडियाज़ बैलेंस शीट : एनलिटिकस एंड डायनामिक्स ऑफ़ इवोल्यूशन.'' आरबीआइ ओकेज़नल पेपर्स.24(3)ः विंटर।

जालान, बिमल.1996. इंडियाज़ इकॉनोमिक पॉलिसी- प्रिपेयरिंग फ़ॉर दि ट्वेंटी फ़स्ट सेंचुरी.

——. 2002. ''रिसर्च एंड पॉलिसी डिवेल्पमेंट इन मनी, फ़ाइनेंस एंड एक्स्टर्नल सेक्टर इन इंडिया.'' इन मैक्रोइकॉनोमिक्स एंड मॉनेटरी पॉलिसी - इश्यूज़ फ़ॉर ए रिफ़ॉर्मिंग इकॉनॉमी (इडीएस.) मॉन्टेक ए. आहलुवालिया, वाइ.वी. रेड्डी एंड एस.एस. तारापोर ः 162-182.

कनगसभापति, के., आर.के. पट्टनायक एंड के.ए. जयंती, 1997. ''प्लेसिंग ए स्टेयूटरी. लिमिट ऑन पब्लिक डेट.'' आरबीआई बुलेटिन, डिसेंबर ः 983-985.

केनेडी, पीटर, 2003. ए गाइड टू इकॉनोमेट्रिक्स, ब्लैकवेल पब्लीशिंग लि. यूएसए.

कीनेज़, जे.एम.1938. दि जनरल थ्योरी ऑफ़ एम्प्लॉयमेंट इंटरेस्ट एंड मनी, मैकमिलन कैम्ब्रीज युनिवर्सिटी प्रेस।

कुट्टनर, के.एन.2002. ''दि मॉनेटरी फ़िस्कल पॉलिसी मिक्सः पर्सपेक्टिव फ्रॉम दि यू.एस.'' दि नैशनल बैंक ऑफ़ पोलैंड, द्वारा प्रायोजित संरचनागत परिवर्तनों के वातावरण में मौद्रिक नीतिगत मिश्रण पर सम्मेलन के लिए तैयार किया गया अक्तूबर 24-25।

महादेवा, एल एंड जी. स्टर्न (इडी). 2000. मॉनेटरी पॉलिसी फ्रेमवर्क इन ए ग्लोबल कॉन्टेक्स्ट, रुटलेज.

मल्होत्र, आर.एन. 1985. ''मॉनेटरी पॉलिसी फ़ॉर डायनेमिक ग्रोथ.'' स्पीच डेलीवर्ड एट सेमिनार ऑर्गेनाइज्ड बाय इंडियन चेंबर्स ऑफ़ कॉमर्स, कोलकाता दिसंबर।

मोहन राकेश, 2002. ''फ़िस्कल इश्यूज एंड सेंट्रल बैंक्स इन इंजीनियरिंग मार्केट्सः एन इंडियन पर्सपेक्वि.'' बीआइएस पेपर्स नं.20.

मुंडेल, आर.ए. 1960. ''दि मॉनेटरी डायनेमिक्स ऑफ़ इंटरनैशनल एडजस्टमेंट अंडर फ़िक्स्ड एंड फ्ल्लेक्ज़िबल रेट्स.'' क्वार्टर्ली जर्नल ऑफ़ इकॉनोमिक्स, 24-227-57.

मुंडले सुदिप्त एंड एम. गोविंद राव. 1992. ''इश्यूज इन फ़िस्कल पॉलिसी.'' इन दि इंडियन इकॉनॉमी - प्रोब्लेम्स एंड पर्सपेक्टिव, (इडीएस). बिमल जालान, वाइकिंग पेंग्विन इंडिया।

एनसीएइआर 2001. इकॉनोमिक एंड पॉलिसी रिफ़ॉर्म्स इन इंडिया, अगस्त।

नॉर्डह्रास, विलियम डी. 1994. ''पॉलिसी गेम्सः कॉर्डिनेशन एंड इंडिपेंडेंस इन मॉनेटरी एंड फ़िक्स्ड पॉलिसीज़.'' ब्रूकिंग्स पेपर्स ऑन इकॉनोमिक एक्टीविटी. 2/139-199.

पटेल, आई.जी.1979. ''सम थॉट्स ऑन मॉनेटरी एंड क्रेडिट पॉलिसी.'' इन एड्रेस एट दि सेवेंटीफ़स्ट एन्युअल जनरल मीटिंग ऑफ़ दि इंडियन मर्चेंट्स चेंबर्स, मुंबई, फ़रवरी।

फ़र्सन, एम., पर्सन, टी. एंड एल. स्वेंसन.1987. ''टाइम कंसिस्टेंसी ऑफ़ मॉनेटरी एंड फ़िस्कल पॉलिसी.'' इकॅनोमेट्रिका.55ः1419-32.

फेल्प्स, इ, एंड जे.बी. टेलर.1977. ‘‘स्टेबिलाइजिंग पॉवर ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी अंडर रेशनल एक्सपेक्टेशंस.’’ जर्नल ऑफ़ पॉलिटिकल इक्नॉमी. 85.

प्रिगल, आर.एंड एन. कर्टीस.1999. ‘‘ऑब्जेक्टिव्स, गवर्नेंस एंड प्रोफ़िट्स ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग पब्लिकेशंसः लंडन.’’

रामाराउ बी. 1960. ‘‘इनफ्द्धलेशन एंड मॉनेटरी पॉलिसी. सर अल्लारी कृष्णास्वामी अय्यर शहस्तीयाब्दीपूर्ति एंडोमेंट लेक्चर्स मद्रास, अप्रैल।

रंगराजन, सी.1988. ‘‘इश्यूज़ इन मॉनेटरी मैनेजमेंट.’’ दि इंडियन इक्नॉनोमिक कॉन्फ़रेंस, कोलकाता में दिसंबर में दिया गया अध्यक्षीय भाषण।

——. ए.बासु एंड नरेन्द्र जाधव, 1989. ‘‘डायनेमिक्स ऑफ़ इंटरएक्शन बिट्विन गवर्नमेंट डिफ़िशिट एंड डॉमेस्टिक डेट इन इंडिया.’’ आरबीआइ ऑकेज़नल पेपर्स, 10(3)ः सितंबर.

——. 1993 ‘‘ऑटोनोमी ऑफ़ सेंट्रल बैंक्स.’’ टेंथ कुट्टी मेमोरियल लेक्चर, कोलकाता, सितंबर.

——. 1997 ए. ‘‘एक्टिवेटिंग डेट मार्केट्स इन इंडिया.’’ दि एसबीआइ कैप डेट मार्केट सेमिनार में दिया गया प्रमुख भाषण आरबीआइ बुलेटिन, अक्तूबर।

——. 1997 बी. ‘‘डायमेंशंस ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी.’’ अनंतरामा कृष्णन मेमोरियल लेक्चर, चेन्नै, फ़रवरी।

——. 2001. ‘‘सम क्रिटिकल इश्यूज़ इन मॉनेटरी पॉलिसी.’’ इक्नॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, जून 16.

रेड्डी वाई. वी. 2000 ए. ‘‘फ़िस्कल एंड मॉनेटरी पॉलिसी इंटरफेस रिसेंट डिवेल्पमेंट्स.’’ सार्वजनिक क्षेत्र में बजेटिंग और वित्तीय प्रबंध पर कार्यशाला में प्रस्तुति हारवर्ड युनिवर्सिटी. अगस्त।

——. 2000 बी. ‘‘लेजीस्लेशन ऑन फ़िस्कल रिस्पोंसिबिलिटी एंड रिज़र्व बैंक्स रोल : सम इश्यूज़’’ नैशनल इंस्टीट्यूट ऑफ़ फ़ाइनेंशियल मैनेजमेंट, हरियाणा, द्वारा आयोजित सरकार का राजकोषीय उत्तरदायित्व पर कार्यशाला में दिया गया भाषण।

——. 2001. ‘‘ऑटोनोमी ऑफ़ दि सेंट्रल बैंक : चेंजिंग कंटूर्स इन इंडिया.’’ सेंकंड फ़ाउंडेशन लेक्चर, इंडियन इंस्टिटयूट ऑफ़ मैनेजमेंट, इंदौर, अक्तूबर।

——. 2002 ‘‘डेवलपिंग बॉंड मार्केटस इन इमर्जिंग इक्नॉमीज़ः इश्यूज़ एंड इंडियन एक्सपीरियंस.’’ फ़िम्मडा, पीडीएआइ और थाइ बीडीसी द्वारा संयुक्त रूप से मार्च में बैंकॉक में आयोजित एशियन कॉन्फरेंस में दिया गया प्रमुख भाषण।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (आरबीआई). 1983 रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडियाःफंक्शंस एंड वर्किंग।

——. 1985. *दि रिपोर्ट ऑफ़ दि कमिटी टू रिव्यू दि वर्किंग ऑफ़ दि मॉनेटरी सिस्टम (चेयरमॅन : सुखामॉय चक्रवर्ती)*

——. 1992. एन्युअल रिपोर्ट 1991-92. अगस्त.

——. 1993. एन्युअल रिपोर्ट 1992-93. अगस्त.

——. 1994. एन्युअल रिपोर्ट 1993-94. अगस्त.

——. 1997. एन्युअल रिपोर्ट 1996-97. अगस्त.

——. 1997 बी. रिपोर्ट ऑफ़ दि कमेटी ऑन कैपिटल अकाउंट कनवर्टिबिलिटी (चेयरमैनः एस.एस. तारापोर)।

——. 1998. रिपोर्ट ऑफ़ दि इनफ़ार्मल एडवाइज़री कमेटी ऑन वेज़ एंड मीन्स एवांसेस टू स्टेट गवर्नमेंट्स, (चेयरमैनः बीपीआर. विठ्ठल)।

——. 1999, रिपोर्ट ऑफ़ दि टेक्नीकल कमेटी ऑन स्टेट गवर्नमेंट गारंटीज़ (चेयरपर्सन : उषा थोरात), मई।

——. 2000. रिपोर्ट ऑफ़ दि एडवाइजरी ग्रुप ऑन ट्रांसपरेंसी इन मॉनेटरी एंड फ़ाइनेंशियल पॉलिसीज़. (चेयरमैनः एम. नरसिंहम)।

——. 2002 ए. एन्युअल रिपोर्ट 2001-02 अगस्त।

——. 2002 बी. ए शॉर्ट टर्म लिक्विडिटी फ़ॉरकास्टिंग मॉडेल फ़ॉर इंडिया, जून।

——. 2003 ए. रिपोर्ट ऑफ़ दि ग्रुप टू स्टडी दि पेंशन लाइबिलिटीज़ ऑफ़ दि स्टेट गवर्नमेंट्स (चेयरमैनः बी.के. भट्टाचार्य)।

——. 2003 बी. रिपोर्ट ऑफ़ दि एडवायजरी कमेटी ऑन वेज़ एंड मीन्स एडवांसेस टू स्टेट गवर्नमेंट (चेयरमैनः सी. रामचंद्रन)।

——. 2003 सी. रिपोर्ट ऑफ़ दि वर्किंग ग्रुप ऑन इंस्ट्रूमेंट्स ऑफ़ स्टरलाइज़ेशन (चेयरमैनः श्रीमती ऊषा थोरात)।

——. 2004 एन्युअल रिपोर्ट 2003-04, अगस्त।

——. 2005 ए. एन्युअल रिपोर्ट 2004-05, अगस्त।

——. 2005 बी. एन्युअल पॉलिसी स्टेटमेंट फ़ॉर 2005-06 अप्रैल।

——. 2005 सी. रिपोर्ट ऑफ़ दि इंटर्नल टेक्निकल ग्रुप ऑन सेंट्रल गवर्नमेंट सेक्युरिटीज़ मार्केट, जुलाई।

——. 2005 डी. स्टेट फ़ाइनेंसः ए स्टडी ऑफ़ बजेट्स ऑफ़ 2005-06, दिसंबर।

——. एन्युअल रिपोर्ट, वेरियस इश्यूज़।

——. रिपोर्ट ऑन करेंसी एंड फ़ाइनेंस, वेरियस इश्यूज़।

रोमर, डी. 2000, ''कीनेसियन मैक्रोइकॉनोमिक्स विदाउट दि एल.एम. कर्व.'' जर्नल ऑफ़ इकॉनोमिक पर्सपेक्टिव,14(2)ड 149-69.

सार्जेंट, टी जे. एंड एन. वालेस.1981. ''सम अनप्लीज़ेंट मॉनेटरिस्ट एरिथमेटिक.'' क्वार्टर्ली रिव्यू ऑफ़ दि फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ मिन्नीपोलिस. 14ः328 50।

सिन्हा एस.एल एन.1970 हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (1935-51) रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया

सिंह, मनमोहन.1982. ''क्रेडिट पॉलिसी ऑफ़ रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया.'' द्वारा आयोजित सेमिनार में उद्घाटन भाषण इकॉनोमिक डिवेल्पमेंट काउंसिलः मुंबई, नवंबर।

सुंदरराजन. वी.पी डाटेल्स एंड एच जे. ब्लामस्टियन, 1977. ''इंट्रोडक्शन'' इन कॉर्डीनेटिंग पब्लिक डेट एंड मॉनेटरी मैनेजमेंट (इडीएस). वी. सुंदरराजन. पी. डाटेल्स एंड एच.जे. ब्लामस्टियन, आइएमएफ़।

तारापोर, एस.एस. 1990. ''डॉमेस्टिक डेट मैनेजमेंट पॉलिसी एंड मॉनेटरी कंट्रोल.'' 18 वाँ सींज़ा सेंट्रल बैंकिंग कोर्स लेक्चर, रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया : मुंबई।

——. 1992. ''टुवर्ड्स एन एक्टिव इंटर्नल डेट मैनेजमेंट पॉलिसी.'' मैनेजमेंट ऑफ़ गवर्नमेंट सेक्युरिटीज पर यूटीआई इंस्टीट्यूट ऑफ़ केपिटल मार्केट्स में दिया गया भाषण। अक्तूबर।

——. 1994. ''दि रोल ऑफ़ एन एक्टिव डेट मैनेजमेंट पॉलिसी इन दि इकॉनोमिक रिफ़ॉर्म्स प्रोसेस.'' लेक्चर एट दि डिपार्टमेंट ऑफ़ इकॉनोमिक्स, मेंगलोर युनिवर्सिटी में दिया गया व्याख्यान। सितंबर।

——. 1994. ''आपेन मार्केट ऑपरेशंस - ऑब्जेक्टिव्स एंड टेनिक.'' बैंकर्स ट्रेनिंग कॉलेज में स्ट्रेटेजीज़ फ़ॉर डिवेल्पमेंट ऑफ़ दि सेकंडरी मार्केट इन गवर्नमेंट सेक्युरिटीज़ एंड पब्लिक सेक्टर बॉंड पर सेमिनार दिया गया उद्घाटन भाषण। दिसंबर।

——. 1996. ''दि गवर्नमेंट सेक्युरिटीज़ मार्केट - दि नेक्स्ट स्टेज ऑफ़ रिफ़ॉर्म्स.'' सेक्युरिटीज़ ट्रेडिंग कॉर्पोरेशन ऑफ़ इंडिया में गवर्नमेंट सेक्युरिटीज़ मार्केट पर सेमिनार में दिया गया समापन भाषण।

——. 2002, ''मॉनेटरी पॉलिसी, इंटरनल डेट एंड ऑटोनॉमी ऑफ़ दि सेंट्रल बैंक.'' मैक्रोइकॉनोमिक्स ऐंड मौनिटरी पॉलिसी इश्यूज़ फ़ॉर ए. रिफ़ॉर्मिंग इकॉनॉमी (इडीएस.) मॉन्टेक एस. आहलुवालिया, वाई वी. रेड्डी एंड एस.एस. तारापोर: 267-281.

टेलर, जे.बी. 1995, ''मॉनेटरी पॉलिसी इंप्लीकेशंस ऑफ़ ग्रेटर फ़िस्कल डिसिप्लीन.'' इन बजेट डिफ़िसिट एंड डेट : इश्यूज़ एंड ऑप्शंसट, दि फ़ेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ कंसास सिटी द्वारा प्रायोजित सिंपोजियम का कार्यवृत्त। 151-70।

टिनबर्जेन, जे. 1952. ऑन दि थ्योरी ऑफ़ इकॉनोमिक पॉलिसी, नॉर्थ हॉलैंड : अम्स्टर्डम।

उगोलिनी, पी. ''नैशनल बैंक ऑफ़ पोलैंड : दि रोड टू इनडायरेक्ट इन्ट्रूमेंट्स'' आइएमएफ़ ऑकेजनल पेपर (144).

वेंकिटारमणन. एस् 1992. ''करेंट स्टेटस ऑफ़ इकॉनोमिक रिफ़ोर्म्स इन इंडिया.'' दि एशिया सोसायटी, न्यू यार्क में दिया गया भाषण। सिंतबर।

वुडफ़ोर्ड, माइकेल.2001. ''फ़िस्कल रिक्वायरमेंट्स फ़ॉर प्राइज़ स्टेबिलिटी.'' जर्नल ऑफ़ मनी, क्रेडिट एंड बैंकिंग, 33-669-728.

VIII. बैलेंस शीट ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक

बेनडिल, कार्लोस, पियरे कार्डन, जोचिम कोचे, फ्रांसिस एक्स, डीबोल्ड एंड सायमन मेंगनेली, 2004 रिस्क मैनेजमेंट फ़ॉर सेंट्रल बैंक फ़ॉरेन एक्सचेंज रिर्व्स, युरोपियन सेंट्रल बैंक.

ब्लेजर, मारियो आइ एंड लिबियाना शुमाचेर, 1998. सेंट्रल बैंक वलनरेबिलिटी एंड दि क्रेडिबिलिटी ऑफ़ कमीटमेंट्स : ए - वेल्यू-एट-रिस्क एप्रोच टू करेंसी क्राइसिस.ड आइएमएफ़, मई।

बोरियो, सी.1997. ''दि इंप्लीमेंटेशन ऑफ़ मॉनेटरी पोलिसी इन इंडस्ट्रियल कंट्रीज़.'' बीआइएस इकोनॉमिक पेपर्स, जुलाई।

कोहारेल्ली, कारलो.1993. ''लिमिटिंग सेंट्रल बैंक क्रेडिट टू दि गवर्नमेंटः थ्योरी एंड प्रेक्टिस.'' आइएमएफ़.

देशमुख, सी डी. 1948. ''सेंट्रल बैंकिंग इन इंडिया - ए रिट्रोस्पेक्ट. कार्ल मेमोरियल लेक्चर.'' पुणे, मार्च.

युरोपियन सेंट्रल बैंक 2004. रिस्क मैनेजमेंट फ़ॉर सेंट्रल बैंक फ़ॉरिन रिज़र्व्स. मई।

——. 2000. रिस्क मैनेजमेंट फ़ॉर सेंट्रल बैंकर्स सेंट्रल बैंकिंग पब्लिकेशन. नवंबर.

फ़ोस्टर, जेरेमी. 2004. ''सेंट्रल बैंक रिस्क मैनेजमेंट एंड इंटरनैशनल स्टेंडर्ड्स.'' सेंट्रल बैंकिंग पब्लीकेशंस. लंडन.

गोल्डबर्ग, एलज़ी., एंड रिज़ाल कबीर 2002. ''दि स्टॉक मार्केट परफ़ोर्मेंस ऑफ़ दि सेंट्रल बैंक्स ऑफ़ बेल्जियम एंड जापान.'' जर्नल ऑफ़ इकॉनोमिज एंड बिज़नेस.

ग्रीनस्पॅन, एलन.1996. ''दि चैलेंजेज़ ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग इन ए डायनेमिक सोसायटी.'' इंस्टीट्यूट ऑफ़ पब्लिक पॉलिसी रिसर्च, वाशिंगटन, दिसंबर।

हाकिंस, जॉन. 2003. ''सेंट्रल बैंक बैलेंस शीट्स एंड फ़िस्कल ऑपरेशंस.'' बीआइएस इकॉनोमिक पेपर्स. 20.

जाधव, नरेन्द्र. पार्थ रे. डी बोस एंड इंद्राणी सेन गुप्ता. 2003. ''रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडियाज़ बैलेंस शीट : एनलिटिक एंड डायनेमिक्स ऑफ़ इवोल्यूशन.'' आर बीआइ ऑकेजनल पेपर्स।

जाधव, नरेन्द्र.2003. ''सेंट्रल बैंक स्ट्रेटेजीज़.ड क्रेडिबिलिटी एंड इंडिपेंडेंस : ग्लोबल इवोल्यूशन एंड दि इंडियन एक्सपीरियंस.'' आरबीआई ओकेज़नल पेपर्स.

कोपके, रिचर्ड डब्ल्यू. 2002. ''दि प्रेक्टिस ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग इन अदर इंडिस्ट्रियलाइज्ड कंट्रीज़.'' न्यू इंग्लैंड इकॉनोमिक रिव्य. सेकंड क्वार्टर.

मार्टिनेज़, रिसानो रेमन जे. आर. 2004. ''सेंट्रल बैंक फ़ाइनेंशियल इंडिपेंडेंस.'' सेंट्रल बैंक ऑफ़ स्पेन ओकेज़नल पेपर. 401.

नोयर, क्रिस्चियन. 2000. रिस्क मैनेजमेंट फ़ॉर सेंट्रल बैंकर्स, युरोपियन सेंट्रल बैंक.

प्रिंगल, रॉबर्ट एंड नील कर्टिस, 1999. ''ओब्जेक्टिव्स, गवर्नेंस एंड प्रोफ़िट्स ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग.'' सेंट्रल बैंकिंग पब्लिकेशंस, लंडन।

रेड्डी, वाई वी. 1997. ''फ़ाइनेंशियल सेक्टर रिफ़ॉर्म्स एंड आरबीआईज बैलेंस शीट मैनेजमेंट.'' आरबीआई बुलेटिन, दिसंबर।

——. 2002. ''इकॉनोमिक रिफ़ॉर्म्स एंड इवोल्विंग रोल ऑफ़ आरबीआई एज़ बैंकर टू दि गवर्नमेंट.'' आरबीआई.

रिपोर्ट ऑफ़ दि रॉयल कमीशन ऑन इंडियन करेंसी एंड फ़ाइनेंस.1926. (चेयरमैनःई. हिल्टन यंग).

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (1935-2004-05), एन्युअल रिपोर्ट

——.फंक्शंस एंड वर्किंग ऑफ़ दि आरबीआई, वेरियस इश्यूज़.

——. 2005, हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (वोल्युम III). नई दिल्ली।

एंड्रिया. 2001. ''इंप्लिमेंटेशन ऑफ़ मॉनेटरी पॉलिसी एंड दि सेंट्रल बैंक्स बैलेंस शीट.'' आइएमएफ़ वर्किंग पेपर. अक्तूबर।

स्कोबी, एच. एम. एंड जी. केगलीसी. 2000. ''रिज़र्व मैनेजमेंट.'' युरोपियन इकॉनॉमीज़ एंड फ़ाइनेंशियल सेंटर, लंडन।

सेनगुप्ता, इंद्रनिल, इंद्राणी भट्टाचार्य, सत्यानंद साहू एंड सिद्धार्थ सन्याल. 2000। ''एनाटॉमी ऑफ़ लिक्विडिटी मैनेजमेंट.'' आरबीआई ओकेज़नल पेपर्स.

स्लीपर। रॉबर्ट डी. 2005. ''हाउ सेंट्रल बैंक मैनेज देयर फ़ाइनेंसेस.'' बी आइएस स्पीच, फ़रवरी।

स्टेला, पीटर. 1997. डू सेंट्रल बैंक्स नीड कैपिटल? आइएम एफ़ वर्किंग पेपर, जुलाई.

——. 2002, ''सेंट्रल बैंक फ़ाइनेंशियल स्ट्रेंग्थ, ट्रांसपरेंसी एंड पॉलिसी क्रेडिबिलिटी.'' आइएमएफ़ वर्किंग पेपर. अगस्त।

सुललीवन केन्नेथ, 2003. ''प्रोफ़िटस, डिविडेंड्स ऐंड कैपिटल कंसीडरेशन फ़ॉर सेंट्रल बैंक्स.'' एलइजी सेमिनार फ़ार सेंट्रल बैंक लॉयर्स.

तारापोर. एस.एस. 1996. ''दि ह्युमिलिटी ऑफ़ सेंट्रल बैंकर्स एंड दि एरोगेंस ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग.'' दि आरबीआई ऑडिटोरियम में व्याख्यान। सितंबर। सितंबर.

——. "एनलाइज़िग आरबीआईज़ बैलेंस शीट'' इश्यूज़ इन फ़ाइनेंशियल सेक्टर रिफ़ॉर्म्स. यूबीएस पब्लीशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स लिमिटेड.

जीमर, मार्क. 2001. ''मॉनेटरी ऑपरेशंस एंड सेंट्रल बैंक बैलेंस शीट्स, इन ए वर्ल्ड ऑफ़ लिमिटेड गवर्नमेंट सेक्युरिटीज़.'' आइएमएफ़ डिस्कशन-पेपर, दिसंबर.

IX. आर्गेजाइज़ेशनल इवोल्यूशन एंड स्ट्रेटेजिक प्लानिंग

बालचन्द्रन, जी. 1998. दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया 1951-1967. ऑक्सफ़ोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस.

बैंक ऑफ़ इंडोनेशिया ''इंटर्नल मैनेजमेंट.'' www.bi. go.id/web/eh/ Tenteng+B1/Sektoral/Management+ Intern/ पर उपलब्ध।

बैंक फ़ॉर इंटरनैशनल सेटलमेंट, 75 वीं रिपोर्ट.

——. 2003. पोर्टफ़ोलियो ऑफ़ दि बीआइएस - ऑर्गेनाइज़ेशन एंड गवर्नेंस, अप्रैल.

——. 2004. ''इंटरनैशनल कनवरजेंस ऑफ़ केपिटल मीज़रमेंट एंड कैपिटल स्टैडर्ड्सः ए रिवाइज़्ड़ फ्रेवर्क.'' बासेल कमेटी ऑन बेंकिंग सुपरविज़न, जून.

बैंक ऑफ़ केनडा. कैरियर्स : ए ग्रेट प्लेस ऑफ़ वर्क, अवेलेबल एट http:/www.bank of Canada.ca/enlhr/great.htm/

बैंक ऑफ़ इंग्लैंड. 2003. प्रोग्राम ऑन स्ट्रेटेजिक ह्यूमन रिसोर्सेस मैनेजमेंट सेंटर फ़ॉर बैंकिंग स्टडीज़. नवंबर।

ब्रैट एडगर. 2001. बैंक्स पोंडर ह्यूमन पोटेंशियल. अगस्त। www.Namibian.com.na/2001/August/marketplace/017F8.ceb1.htm1 पर उपलब्ध।

बीन, चार्ल्स.1999.''डिस्कशन ऑफ़ चार्ल्स गुड हर्ट्स लेक्चरः सेंट्रल बैंकर्स ऐंड अनसर्टेंटी.'' बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टर्ली बुलेटिन, फ़रवरी।

बीन, चार्ल्स.2004. ''ग्लोबल डेमोग्राफ़िक चेंज : सम इंप्लीकेशंस फ़ॉर सेंट्रल बैंक्स.'' ओवरव्यू पैनल, एफ़आरबी केनसास सिटी एन्युअल सिंपोज़ियम, जैकसन होल. व्योमिंग, अगस्त।

बर्जर, एच., हान जेकब डे एंड इजफिंगर, सिलवेस्टर सी. डब्लयू 2001. ''सेंट्रल बैक इंडिपेंडेंस : एन अपडेट ऑफ़ थ्योरी एंड इवीडेंस.'' जर्नल ऑफ़ इकॉनोमिक सर्वेज़, 15(1).

फ्रोज़, जे. लारेंस. 1998. ''दि ओरीजिन ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग : सोल्युशंस टू दि फ्री-राइडर प्रोब्लेम.'' इंटरनैशनल ऑर्गेनाइजेशन 52(2): स्प्रिंग।

सेंट्रो, डे इस्टूडियोज मॉनेटरीयस लैटिनो अमेरिक नोज (सीइएमएलए). 2000. ''कंक्लूशंस एंड रिकमेंडेशंस.'' सेंट्रल बैंक ह्यूमन रिसोर्सेस मैनेजमेंट, पर पांचवी बैठक कोस्टा रिका, जून।

क्लर्क, विलियम. 2002. ''ह्यूमन रिसोर्सेस प्लानिंग एंड परफ़ॉर्मेंस मीज़रमेंट।'' 2002. कॉन्फ़रेंस सीरीज, सेंट्रल बैंकिंग पब्लीकेशंस, सितंबर।

क्लेमेंटो, डेविड. 2000 ''दि बैंक ऑफ़ इंग्लैड - ए सेंट्रल बैंक पोस्ट इंडिपेंडेंस.'' स्पीच एट दि एन्युअल लियोनार्ड सेनर लेक्चर, स्टेशनर्स हाल : लंडन, नवंबर।

कोनोली, एलीस एंड कोहलर मेरियन. 2004, ''न्यूज़ एंड इंटरेस्ट रेट एक्सपेक्टेशंस : ए स्टडी ऑफ़ सिक्स सेंट्रल बैंक्स.'' आरबीए रिसर्च डिस्कशन पेपर्स, 2004-10 इकॉनोमिक ग्रुप, रिज़र्व बैंक ऑफ़ आस्ट्रेलिया, नवंबर.

कूपर, आर.एन.2005. ''आलमोस्ट ए सेंचुरी ऑफ़ सेंट्रल बैंक कोऑपरेशन.'' हारवर्ड वर्किंग पेपर सीरीज़ : 04-05.

ड्राफ्ड्ट ऑफ़ बैंक सेंट्रल ह्यूमन रिसोर्सेस मैनेजमेंट कमीटी बायलाज़। www.cemla.org/pdf.rh-estatutos-en-pdf पर उपलब्ध।

ईजफिंगर, सिलवेस्टर सी. डब्ल्यू. एंड जेरात्स, एम. पेत्रा 2005. ''हाउ ट्रांस्परेंट आर सेंट्रल बैंक्स'' केम्ब्रीज वर्किंग पेपर्स इन इकॉनोमिक्स, 0411. डिपार्टमेंट ऑफ़ अप्लाइड इकॉनोमिक्स, युनिवर्सिटी ऑफ़ केम्ब्रीज, जनवरी।

फ़ेडरल रिजर्व बैंक ऑफ़ केनसास सिटी. ''कैरियर डिवेल्पमेंट.'' एफ़आरबी केनसास सिटी, ओकलाहोमा सिटी।

——. कैरियर ऑपोर्चुनिटीज. wttp://www/ke.frb.org./hum gneves/ careerlinks.htm पर उपलब्ध।

फ़िशर, स्टेंली 1996. ''सेंट्रल बैंक : दि चॅलैंजेस अहेड : मेंटेनिंग प्राइज स्टेबिलिटी.'' फाइनेंस एंड डिवेल्पमेंट, दिसंबर।

फ्रीडमैन, चार्ल्स. 1999. ''डिस्कशन ऑफ़ प्रोफ़ेसर गुडहर्ट्स लेक्चर : सेंट्रल बैंकर्स एंड अनसर्टेंटी.'' बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टर्ली बुलेटिन, फरवरी.

जॉर्ज, एडी. 2000. ''फ्द्ध्यूचर ऑफ़ सेंट्रल बैंकिंग.'' स्पीच टू दि एसोसिएशन ऑफ़ प्रोफ़ेशनल बैंकर्स श्रीलंका, ट्वेल्थ एनिवर्सरी कनवेंशन, अगस्त।

गुडहर्ट, चार्ल्स. 1999. ''सेंट्रल बैंकर्स एंड अनसर्टेंटी.'' बैंक ऑफ़ इंग्लैंड क्वार्टी बुलेटिन, फ़रवरी।

हक, महबूब उल. 1992. ''ह्यूमन डिवेल्पमेंट इन ए चेंजिंग वल्ड.'' ओकेज़नल पेपर 1, युनाइटेड नेशंस डिवेल्पमेंट प्रोग्राम.

हेरिस, रॉबर्ट. 1998. ''डिसीज़न मेकिंग टेकनिक्स.'' वर्जन डेट जुलाई 3, http://www.vlrtualsalt.com./crebook6.htm. पर उपलब्ध।

हिकी, डी. एंड जी. मॉर्ट लॉक.2002।'' मैनेजिंग ह्यूमन रिर्सोसेस - ए सेंट्रल बैंक पर्सपेक्टिव।'' रिज़र्व बैंक ऑफ़ न्यूज़ीलैंड बुलेटिन 65 (1) मार्च।

जालान, बिमल, 2002 ''स्ट्रेंग्थनिंग इंडियन बैंकिंग एंड फाइनेंस - प्रोग्रेस एंड प्रोस्पेक्ट्स.'' बेंगलोर में दि बैंक इक्नॉनोमिस्ट्स कॉन्फरेंस में दिया गया व्याख्यान। दिंसबर 27।

कामेसम, वेपा. 2003 ''दि रोल ऑफ़ क्वालिटी ह्यूमन रिसोर्स इन तारगेट सेटिंग फ़ॉर इकॉनॉमिक ग्रोथ.'' दि टेक्नोलॉजी इनफॉर्मेशन, फोरकास्टिंग एंड ऐसेसमेंट काउंसिल (टी आइ एफ एसी), सेंटर ऑफ़ रिलिवेंस एंड एक्सीलेंस (कोर), नई दिल्ली द्वारा आयोजित बैठक में दिया गया व्याख्यान। जुलाई।

किंग मर्विन. 2005. ''रिमार्क्स एट जेकसन होल कॉनफरेंस टू दि सेंट्रल गवर्नर्स पैनल.'' बीआइएस रिव्यू 56.

नाइट, मलकॉम डी. 2005. ''एक्टीविटीज़ ऑफ़ दि बैंक : दि इयर 2004-05 इन रिव्यू.'' दि बैंक्स एन्युअल जनरल मीटिंग, बीआईएस, बासल में दिया गया भाषण। जून।

लीलाधर, वी.2005. ''मैनेजिंग टेलेंट्स इन बैंक्स-ए फ्द्ध्यू थॉट्स.'' कार्पोरेशन बैंक, बेंगलोर के शताब्दी वर्ष समारोह के अवसर पर दिया गया भाषण। मार्च।

मेसियांदरो, डोनेसे. 2004. ''सेंट्रल बैंक्स ओर सिंगल फाइनेंशियल ऑथरिटीज़.'' ए पॉलिटिकल इकॉनॉमी एप्रोच.'' युनिवर्सिटी ऑफ़ लीस वर्किंग पेपर 47/25.

मीग्स, ए. जेम्स एंड वोल्मन, विलियम. 1971. ''सेंट्रल बैंक्स एंड दि मनी सप्लाई.'' फेडरल रिज़र्व ऑफ़ सेंट लुइस, अगस्त।

मेंडिस, सुनील.2005. ''सेंट्रल बैंक गवर्नेंस एंड हाउ सच गवर्नेंस इज़ रिलेटेड टू स्ट्रेटेजिक प्लानिंग इन सेंट्रल बैंक्स.'' ओपनिंग रिमार्क्स एट दि थर्ड सीसेन एक्सको सेमिनार एंड मीटिंग, कोलंबो, 28-29 जनवरी।

मोहन, राकेश 2005. ''ह्यूमन डिवेल्पमेंट एंड स्टेट फाइनेंस.'' आर बी आई बुलेटिन, दिसंबर।

मॉनिटरी ऑथरिटी ऑफ़ सिंगापुर. ''एचआर फिलोसोफी.'' http://www.mas.gov.sg/masmcm/bin/ptHR philisophy.htm. पर उपलब्ध।

नियोनी, सी.जे. 2002. ''ह्यूमन रिसोर्सेस मैनेजमेंट एंड दि डिवेल्पमेंट इन सेंट्रल बैंक्स.'' समरी ऑफ़ दि प्रज़ेंटेशन डेलीवर्ड एट दि तंज़ानिया इंस्टीट्यूट ऑफ़ बैंकर्स, में की गई प्रस्तुति का सारांश। जुलाई।

ओबेंडो, सी. एमिलियो. ''इंप्लीकेशंस ऑफ़ पर्मनेंट एजूकेशन एंड ट्रेनिंग ऑफ़ पर्सनेल एट दि प्लेस ऑफ़ वर्क.'' बेस डॉक्यूमेंट फ़ॉर दि सिक्स्थ मीटिंग ऑफ़ ह्यूमन रिसोर्सेस मैनेजमेंट, बैंको सेंट्रल डेकोस्टारिका।

गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया, 1972. रिपोर्ट ऑफ़ दि बैंकिंग कमीशन.

रिज़र्व बैंक ऑफ़ आस्ट्रेलिया. 2005. ''इक्विटी एंड डायवर्सिटी.'' एन्युअल रिपोर्ट.

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया. 1970. हिस्ट्री ऑफ़ दि रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया (1935-511). प्यारेलाल शाह, टाइम्स ऑफ़ इंडिया प्रेस, बॉम्बे.

सायमन, एच.ए. एंड एसोसिएट्स. 1986. ''डिसीज़न मेकिंग एंड प्रोब्लेम सोल्विंग.'' रिपोर्ट ऑफ़ दि रिसर्च ब्रीफिंग पैनल ऑन डिसीज़न मेकिंग एंड प्रोब्लेम सोल्विंग, नैशनल एकेडेमी ऑफ़ साईंसेस, नैशनल एकेडेमी प्रेस, वाशिंगटन, डी.सी.

सेन गुप्ता आई एंड आई. भट्टाचार्य, एस साहू एंड एस. सन्याल 2000. ''एनाटोमी ऑफ़ लिक्विडिटी मैनेजमेंट.'' आरबीआई ओकेज़नल पेपर्स, 21(2 एंड 3). मानसून एंड विंटर.

तुलाघर, अमिता. 2005. ''गवर्नेंस स्ट्रक्चर एंड डिसीज़न मेकिंग रोल्स इन इनफ्ढ्लेशन तारगेटिंग सेंट्रल बैंक्स.'' आइएफएफ वर्किंग पेपर 05/183.

यूएनसीटीएडी. ''ग्लोबल गवर्नेंस फार ह्यूमन डिवेल्पमेंट.'' ओकेज़नल पेपर 4, युनाइटेड नेशंस डिवेल्पमेंट प्रोग्राम.

यूएनसीटीएडी. ''टुवर्ड्स ए ह्यूमन डिवेल्पमेंट स्ट्रेटेजी.'' ओकेज़नल पेपर 6, युनाइटेड नेशंस डिवेल्पमेंट प्रोग्राम.

सूएस एशियन बिज़नेस काउंसिल. 2004. ''पब्लिक-प्राइवेट सेक्टर पार्टनरशिप इन डॉमेस्टिक फाइनेंशियल पॉलिसी फॉर्मुलेशन एंड इंप्लीमेंटेशन.'' यूएस स्टडी टूर फ़ॉर एशियन सेंट्रल बैंक ऑफिशियल्स, वाशिंगटन, डीसी / न्यू यॉर्क, जुलाई 26-30.

विल्लामेयर, आर. 2004. ''मैनेज़मेंट बाय कंपीटेंसीज़ : एन एप्रोच टू इट्स नीड्स.'' सिक्स्थ मीटिंग ऑन सेंट्रल बैंक्स ह्यूमन रिसोर्सेस मैनेजमेंट एट सेंटर फ़ॉर लैटिन अमेरिकन मॉनिटरी स्टडीज़, सेंट्रल बैंक ऑफ़ दि अर्जेंटिन रिपब्लिक व्यूनोज़ एयर्स, मई।

वाल्श, कार्ल ई. 2003. ''इंप्लीकेशंस ऑफ़ ए चेंजिंग इकॉनॉमिक स्ट्रक्चर फ़ॉर दि स्ट्रेटेजी ऑफ़ मॉनिटरी पॉलिसी.'' प्रोसीडिंग्स, फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ़ केंसास सिटी।

इंटरनैशन मॉनिटरी फंड. 2005. वर्ल्ड इकॉनॉमिक आउटलुक, सितंबर।

रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया 2001. ''रिज़र्व बैंक ऑफ़ इंडिया : फंक्शंस एंड वर्किंग.'' रिज़र्व बैंक स्टाफ कॉलेज, चेन्नै.

——. (1935-2005), वार्षिक रिपोर्ट. वेरियस इश्यूज़।